सत्यमेव जयते

आर्थिक समीक्षा 2016-17

पुनः अनुदित

भारत सरकार
वित्त मंत्रालय
आर्थिक कार्य विभाग
आर्थिक प्रभाग
जुलाई, 2017

विषय सूची

अध्याय सं॰		अध्याय का नाम	पृष्ठ सं॰
		आभार	v
		प्राक्कथन	vii
		शब्द संक्षेप कोष	ix
		भारत : आठ रोचक तथ्य	xi

भाग-I : परिप्रेक्ष्य

1	**आर्थिक परिदृश्य और नीतिगत चुनौतियां**		
	I.	विषय प्रवेश	1
	II.	वैश्विक परिप्रेक्ष्य	7
	III.	वर्ष 2016-17 के घटनाक्रम की समीक्षा	9
	IV.	वर्ष 2016-17 की संभावनाएं	13
	V.	वर्ष 2017-18 की आशाएं	20
	VI.	अन्य मुद्दे	23
2.	**विलक्षण विचार-भेद ग्रस्त भारत के लिए एक आर्थिक दृष्टिबोध**		
	I.	विषय प्रवेश	38
	II.	अभी जिस राह पर चलना है	42
	III.	संभव व्याख्या	47
	IV.	निष्कर्ष	51

भाग II : सन्निकट

3.	**विमुद्रीकरण : स्तुति करें या भर्त्सना?**		
	I.	विषय प्रवेश	53
	II.	पृष्ठभूमि के तथ्य	55
	III.	विश्लेषण विधि	59
	IV.	हितलाभ	59
	V.	संभावित दीर्घकालिक हितलाभ के प्रारंभिक साक्ष्य	62
	VI.	अल्पकालीन प्रभाव	65
	VII.	जीडीपी पर प्रभाव	67
	VIII.	सरकार के पक्ष में पुन: वितरण	74
	IX.	सफलता के कुछ चिन्ह	75
	X.	दीर्घकालिक लाभों को अधिकतम एवं अल्पकालिक लागतों को न्यूनतम करना	76
4.	**दोहरी तुलन पत्र समस्या का नासूर**		
	I.	विषय प्रवेश	82
	II.	क्या यह युक्ति धारणीय है?	89

	III.	क्या करना आवश्यक है?	94
	IV.	निष्कर्ष	98
5.	**राजकोषीय रूपरेखा : विश्व बदल रहा है! क्या भारत को भी बदलना चाहिए?**		
	I.	विषय प्रवेश	105
	II.	भारत और विश्व : प्रवाह	106
	III.	भारत और विश्व : स्टॉक	108
	IV.	निष्कर्ष	111
6.	**राजकोषीय नियम : राज्यों से सीख**		
	I.	विषय प्रवेश	113
	II.	राजकोषीय उत्तरदायित्व विधेयनों का सारांश	115
	III.	मूल्यांकन की कार्यविधि	115
	IV.	घाटे पर प्रभाव	117
	V.	बजट से इतर व्यय	119
	VI.	बजट प्रक्रिया	120
	VII.	मूल्यांकन	121
	VIII.	भविष्य में राजकोषीय नियम रचना के लिए सीखें	121
7.	**परिधान और पदत्राण (जूते) : क्या भारत निम्न कौशल विनिर्माण पर पुनः अधिकार कर सकता है?**		
	I.	विषय प्रवेश	128
	II.	परिधान और पदत्राण ही क्यों?	128
	III.	चुनौतियां	132
	IV.	नीतिगत प्रतिक्रिया और निष्कर्ष	136
8.	**आर्थिक घटनाक्रम की समीक्षा**		
	I.	विषय प्रवेश	140
	II.	राजकोषीय घटनाक्रम	142
	III.	कीमतें	144
	IV.	मौद्रिक प्रबंधन और वित्तीय मध्यस्थी	146
	V.	भारत का वस्तु व्यापार	150
	VI.	भुगतान शेष	152
	VII.	बाह्य ऋण	153
	VIII.	वर्ष 2017-18 में अर्थव्यवस्था की संभावनाएं	154
	IX.	कृषि और खाद्य प्रबंधन	155
	X.	औद्योगिक, निगम और संरचना क्षेत्रक	157
	XI.	सेवाओं का क्षेत्र	158
	XII.	सामाजिक उपरि संरचना, रोजगार और मानवीय विकास	159
	XIII.	जलवायु (मौसम चक्र) परिवर्तन	164
9.	**सार्वलौकिक आधारिक आय : महात्मा से चिन्तन मनन**		
	I.	विषय प्रवेश	173

II.	UBI : सैद्धांतिक और दार्शनिक आधार	173
III.	UBI के विरूद्ध संकल्पनागत तर्क	174
IV.	एक UBI इन समस्याओं पर किस प्रकार पार पा सकता है?	182
V.	जोखिम के विरूद्ध बीमा और मनोवैज्ञानिक लाभ	183
VI.	बेहतर वित्तीय समाहन	183
VII.	प्रलोभक पदार्थ : क्या UBI से दुराचार को प्रोत्साहन मिलेगा?	187
VIII.	नैतिक द्वन्द्व : क्या UBI से श्रम की आपूर्ति कम होगी?	187
IX.	आगे का रास्ता	187
X.	निष्कर्ष	195

भाग III : चिरंतन

10. आय, स्वास्थ्य और प्रसवन दर : अभिसृति की पहेलियां

I.	विषय प्रवेश	213
II.	निष्कर्ष-I.: आय/उपभोग का (भारत में) परिव्यापन	216
III.	निष्कर्ष-II : भारत में स्वास्थ्य आयाम में अभिसृति हुई है किन्तु शेष विश्व के मानकों की तुलना में यहां अभी और सुधार की गुंजाइश है।	219
IV.	निष्कर्ष-IV प्रसवनता : असाधारण निष्पादन	222
V.	निष्कर्ष	223

11. भारत एक है : वस्तुओं के लिए भी और संविधान की दृष्टि से भी

भाग 1 : एक भारत : वस्तुओं का आंतरिक व्यापार

I.	क्या भारत अन्य देशों की अपेक्षा अधिक व्यापार करता है?	233
II.	अन्तर्राज्यीय व्यापार और विनिर्माण के बीच संबंध	235
III.	अंतर्राज्यीय व्यापार के स्वरूप : विभिन्न फर्मों के बीच व्यापार	235
IV.	अन्तर्राज्यीय व्यापार के स्वरूप : अन्त:फर्म व्यापार	237
V.	क्या भारतीय अन्तर्राज्यीय व्यापार असमान्य है? एक गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान से प्राप्त औपचारिक प्रमाण	239
VI.	पहेली की व्याख्या : भारत इतना अधिक व्यापार क्यों करता है?	240
VII.	निष्कर्ष	242

भाग 2 : एक भारत : कानून के समक्ष

I.	विषय प्रवेश	243
II.	भारतीय संवैधानिक प्रावधान और न्यायशास्त्र	243
III.	अन्य देशों में वैधानिक प्रावधान	245
IV.	तुल्य विश्व व्यापार संगठन कानून	247
V.	निष्कर्ष	248

12. गतिशील एवं मंथनशील भारत : नए साक्ष्य

I.	विषय प्रवेश : मुख्य परिणाम	264
II.	आधारिक जनगणना आंकड़े : प्रवसन के स्तर और संवृद्धि	266
III.	प्रवसन का पुन: आंकलन : दो समय अवधियां, दो आंकड़ा स्रोत और दो नई विधयां	267
IV.	निष्कर्ष	277

13. **'दो अलग-अलग भारत'' : राज्यों के विकास की दो विश्लेषणात्मक वर्णन पद्धतियां (पुनः वितरणात्मक और प्राकृतिक संसाधन आधारित)**

I.	विषय प्रवेश	285
II.	पुन:वितरणीय संसाधनों का प्रभाव	286
III.	पुन:वितरणात्मक संसाधन अंतरण : भारतीय राज्यों से साक्ष्य	287
IV.	प्राकृतिक संसाधनों का प्रभाव	290
V.	प्राकृतिक संसाधन और भारतीय राज्यों से प्राप्त साक्ष्य	292
VI.	निष्कर्ष	295

14. **स्पर्धी संघवाद से स्पर्धी अनुसंघवाद नगर : ऊर्जाकेन्द्रों के रूप में**

I.	विषय प्रवेश	300
II.	पृष्ठभूमी	301
III.	प्रमुख चुनौतियां	302
IV.	देश भर से प्राप्त सीखें	306
V.	संसाधन जुटाना	309
VI.	निष्कर्ष	314

टिप्पणियां

आर्थिक समीक्षा में निम्नलिखित सांख्यिकी/इकाइयों का प्रयोग किया गया है:

बी सी एम	बिलियन क्यूबिक मीटर	कि. ग्रा.	किलोग्राम
बी यू	बिलियन यूनिट	हे.	हेक्टेयर
एम टी	मिलियन टन	बी बी एल	बिलियन बैरल प्रति लीटर
लाख	1,00,000	बिलियन	1,000 मिलियन/100 करोड़
मिलियन	10 लाख	ट्रिलियन	1,000 बिलियन/100,000 करोड़
करोड़	10 मिलियन		

आभार

आर्थिक समीक्षा अनेक स्तरों पर सांझे प्रयासों का परिणाम है। समीक्षा में आर्थिक प्रभाग और मुख्य आर्थिक सलाहकार के कार्यालय से इन सभी के योगदान प्राप्त हुए हैं : अर्चना माथुर, एच.ए.सी. प्रसाद, ए.एस.सचदेव, रोहित के.परमार, जी.एस.नेगी, राजश्री रॉय, एंथनी साइरिएक, आर.सतीश, पी.के.अब्दुल करीम, आशुतोष रा रविकर, निखिला मेनन, श्वेता मृत्युंजय झा, आकांक्षा अरोड़ा, रबी रंजन, दीपक कुमार दास, विजय कुमार, एम. राहुल, अभिषेक आनंद, गौरव झा, कनिका वाधवान, सोनल रमेश, विजय कुमार मान, रियाज अहमद खान, शोबेंदर अक्काय, सलाम श्यामशंदर सिंह, मोहम्मद आफताब आलम, प्रद्युत कुमार पाइन, नरेंद्र जेना, संजय कुमार दास, परवीन जैन, सुभाष चंद, राजेश शर्मा, अमित कुमार केसरवानी, मृत्युंजय कुमार, गायत्री गणेश, तेजस्वी वेलायुद्ध, रंजीत घोष, जोश फेलमैन, जस्टिन सैन्डीफर, देव पटेल, रोहित लांबा, सिद्धार्थ ईपेन जॉर्ज, सुतिर्था रॉय, सौमित्रो चटर्जी, सिड रविनुतला, अमृत अमीरपु, एम आर शरण, पार्थ खीरे, बोबन पॉल, अनन्या कोटा, नवनीराज शर्मा, कपिल पाटीदार और सैयद जुबैर हुसैन नकबी।

समीक्षा माननीय वित्तमंत्री, श्री अरूण जेटली की टिप्पणियों और अंतर्दृष्टियों से बहुत लाभान्वित हुई है। संभवत: पहली बार देश के किसी वित्त मंत्री ने स्वयं समीक्षा के एक भाग की रचना का योगदान भी दिया है। समीक्षा अन्य केन्द्रीय मंत्रियों की टिप्पणियों और सुझावों के लिए भी अपना आभार व्यक्त करती हैं। इनमें सम्मिलित हैं : श्री एम. वैंकेइया नायडू, श्री सुरेश प्रभु, श्री रामविलास पासवान, श्री अनंत कुमार, श्री जगत प्रकार नड्डा, श्री राधा मोहन सिंह, श्रीमती स्मृति जुबीन ईरानी, श्री धर्मेन्द्र प्रधान, श्री पीयूष गोयल, श्रीमती निर्मला सीतारमन, श्री जयंत सिन्हा और वित्त राज्य मंत्रीगण, श्री संतोष कुमार गंगवार और श्री अर्जुन राम मेघवाल।

समीक्षा अन्यान्य अधिकारियों की टिप्पणियों और उनके सुझावों/आदानों से भी बहुत समृद्ध हुई है। इनमें उल्लेखनीय नाम ये हैं : अरविन्द पानागडिया, नृपेन्द्र मिश्रा, जी के मिश्रा, रघुराम जी राजन, उर्जित पटेल, अशोक लवासा, शक्तिकांत दास, हसमुख अधिया, अंजुली चिब दुग्गल, नीरज कुमार गुप्ता, एस जयशंकर, अमिताभ कांत, टी सी अनंत, विजय केलकर, वाई वी रेड्डी, रमेश चंद, ए पी होटा, रीता टिओटिया, कपिल देव त्रिपाठी, रश्मी वर्मा, एम. सत्यावती, सीमांदाश, संगीता वर्मा, अमरजीत सिन्हा, सुशील चंद्र, मोहन जोसेफ, अजय त्यागी, दिनेश शर्मा, नजीब शाह, सुशील चंद्र, रानी सिंह नायर, नागेश सिंह, एम आर आनंद, टी वी सोमनाथन, तरुण बजाज, ब्रजेंद्र नवनीत, अनुराग जैन, सौरभ गर्ग, प्रशांत गोयल, आनंद झा, डॉ कुमार वी प्रताप, बी वी एल नारायण, अरविंद मेहता, अरबिंद मोदी, आशुतोष जिंदल, आलोक शुक्ला, अमिताभ कुमार, हनीश यादव, नवीन विद्यार्थी, सत्य श्रीनिवास, माइकल पात्रा, दीपक मोहंती, बिपीन मेनन, नंद समीर दवे, अविनीश कपूर, वीरेंद्र सिंह, अनुराग सहगल, दीपशिखा अरोड़ा, राजन कुमार, अक्षय जोशी, दीपक कुमार, डीपीएस नेगी, राम रेड्डी, कंचन द्युति मैती, आर.बी. वर्मा, सास्वत रथ, श्वेता तोमर, वरुण दत्त, निशा थॉम्पसन, थेजेश जी एन, जोर्ज कोरासा, शीना छाबड़ा, ओवेन के. स्मिथ, श्रीनिवास कोडली, अविनाश सेलेस्टीन, अमन गुप्ता, पवन बक्षी, मनोज अलगराजन, रेणाना झाबवाला, सरथ दावला, नवीन थॉमस, राजेश बंसल, अर्ध्य सेनगुप्ता, राहुल बसु, के पी कृष्णन, निर्मल कुमार, प्रशांत कुमार, लविश भंडारी, तिलोत्तमा घोष, भारतेन्दु पांडे, तिशा सहदेव, सेरेन वैद, रंजीत सिन्हा, कल्पना भारद्वाज, प्रवीण कुमार, प्रकाश कुमार, संजय सिन्हा, योगेश, टॉड मॉस, कैरोलीन फ्रींड, सामंत दास, शिशिर बैजल, सुमित शेखर और सावित्री देवी, जीएसटीएन टीम, डाटा मीट टीम और पूरी टीम वित्त पुस्तकालय में और अभिजीत वी बनर्जी, दानी रोद्रीक, देवेश कपूर, प्रताप सहित कई बाहरी सहयोगी प्रताप भानू मेहता, पार्थ मुखोपाध्याय, नंदन नीलेकणी, सुरजीत भल्ला, हिमांशु, चिन्मय तम्बे, इरुदया राजन, देवेश रॉय, हरीश दामोदरन, गाय स्टैंडिंग, एस सुनीता, मनोज अलगराजन, संजय कुमार, अशोक मोदी, शेखर अय्यर, राममनोहर रेड्डी, सुदीपतो मुंडले, सुयश रॉय, रिंकु मुर्गई, दीपा सिन्हा, मिलन वैष्णव, मनीष सभरवाल, जेरेमी शापिरो, एंड्रयूस बाउर, सौरभ शॉम, पॉल कैशिन, हर्षवर्धन सिंह, श्याम सिंह नेगी, आई एस नेगी, रफीक अहमद, संजय कुमार, आंचल गुप्ता, हरीश आहूजा, वी रंगराजन, रोहित वोहरा, तुलसीप्रिया राजकुमारी, सिद्धार्थ हरि, सत्य पोद्दार, तरंग कपूर, साजिद चिनॉय, नीलकंठ मिश्रा, प्रांजुल भंडारी, पेटिया टोपालोवा, फ्रेडरिको गिल सैंडर्स, कार्तिकेय सुब्रमण्यम, सेहर गुप्ता, साहिल कीनी, आशीष गुप्ता, कुश शाह, श्रीकांत विश्वनाथन, अनिल नायर, हरि मेनन, संध्या वेंकटेश्वरन, मधु .ष्ण, यामिनी आत्मविलास, अकाली मुथु, अखिल शिवदास, सोमनाथ सेन, अंजली चिकरसल, स्वप्निल शेखर, राजीव मल्होत्रा, मनोरंजन पटनायक, रणेन बनर्जी, दिलीप असबे और भागेश व्यास।

इन सबसे अतिरिक्त भी भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों, विभागों और संगठनों ने अपने विषय से संबंधित जानकारियां हमें सुलभ कराई हैं। प्रशासकीय स्तर पर आर्थिक प्रभाग और मुख्य आर्थिक सलाहकार के कार्यालयों के इन सदस्यों ने अपने-अपने कौशल का विशेष रूप से योगदान दिया है : एस. सेल्वकुमार, आ.पी. पुरी, आर.के. सिन्हा, एन श्रीनिवासन, वी के प्रेमकुमारन, गुरुमीत भारद्वाज, प्रदीप राणा, साधना शर्मा, ज्योति बहल, सुशील शर्मा, मनीष पवार, सुषमा, मुना साह, सुरेश कुमार, अनिकेत सिंह, जोध सिंह, पुनीत, ओमबीर, आर आर मीणा, सुभाष चंद, राज कुमार और आर्थिक प्रभाग के सदस्य। इस संस्करण का हिन्दी अनुवाद प्रो. बी.एस. बागला ने किया है, उनके टंकण सहायक श्री संतोष कुमार हैं। समीक्षा के मुख्यपृष्ठ की रचना जॉर्ज डिजाइन, कोची के जैकब जॉर्ज ने विनीत कुमार के सहयोग से की है।

अन्त में, आर्थिक समीक्षा, इसकी रचना से जुड़े सभी सहकर्मियों के परिजनों के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त कर रही है। इन सभी ने हमारे सहभोगियों को बड़े धैर्य और संयम के साथ इस कार्य को संपूर्ति तक पहुँचाने में अथक परिश्रम करने का संबल प्रदान किया है।

अरविन्द सुब्रमण्यम

(मुख्य आर्थिक सलाकार/परामर्शदाता)

वित्त मंत्रालय, भारत सरकार

प्राक्कथन

पिछल वर्ष वित्तमंत्रालय के आर्थिक कार्य प्रभाग ने बहुत खेद के साथ नोट किया कि चापलूसी का नकल करने से भी उच्चतर स्वरूप विद्यमान है। और वह भी विश्व के सर्वाधिक सार्वजनिक मंच, एमेजोन पर, यह स्वरूप है साहित्यिक चोरी! किन्तु हमारे बौद्धिक संपदा अधिकारों के इस हनन पर हुए कष्ट का कहीं न कहीं इस संतोष से परिमार्जन हो गया कि चलो, ऐसे ही सही, हमारी समीक्षा विश्व में कहीं बड़े स्तर पर सुपाठकों तक पहुँच तो गई! इस बार हम अपनी रचना को और बेहतर बनाने का प्रयास कर रहे हैं। साथ ही एक बड़ी जोखिम भी उठा रहे हैं। कहीं इसे लोकप्रिय रचनाशीलता का परिणाम नहीं मान लिया जाए।

इस वर्ष की समीक्षा एक बड़े अंतर्राष्ट्रीय उथल-पुथल के परिप्रेक्ष्य में प्रकाशित हो रही है। ब्रेक्जिट और उन्नत देशों की अर्थव्यवस्थाओं में बदलावों के साथ-साथ देश के आंतरिक आर्थिक पटल पर भी दो बड़े क्रांतिकारी कदम उठाए गए हैं : जीएसटी और विमुद्रीकरण।

स्पष्टत: समीक्षा को इन सभी अल्पकालिक घटनाचक्रों के साथ भी पूरा न्याय करना होगा। अन्यथा यह ''दूल्हे बिना बारात'' बन कर रह जाएगी। विमुद्रीकरण की स्तुति करें या भर्त्सना? ये एक ऐसा कठिन प्रश्न है जिसे सारी दुनिया उठा रही है। समीक्षा इस पर भी चर्चा कर रही है। यह समीक्षा विश्लेषण, परिमाणात्मक जानकारियों और संभावित प्रभावों की दूरूह संरचनाओं के बीच से गुजरते हुए विमुद्रीकरण को ठीक से समझने-समझाने का एक अच्छा अवसर प्रदान कर रही है।

यह एक अभूतपूर्व निर्णय है और स्वभाविक ही है कि इतिहास हमें इसके आंकलन एवं नीर-क्षीर विवेक के लिए कोई दिशा-निर्देश नहीं दे पाएगा। वैसे भी विमुद्रीकरण जैसे संरचनात्मक संक्षोभों के समक्ष आर्थिक प्रतिमान बहुत भंगुर सिद्ध होते हैं। हमारा अपना आंकलन जैसा भी हो, हम उन निष्कर्षों तक पहुँचने के लिए प्रयुक्त अतिस्मृद्ध एवं जटिल कार्यविधि को पूरी ईमानदारी के साथ अपने पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। हम एक बात निश्चित रूप से कह सकते हैं : इस कदम की कुछ अल्पकालिक लागतें रही हैं, किन्तु इससे दीर्घकालिक लाभ भी संभावित हैं और हम उन पर भी विस्तार से चर्चा करेंगे। उचित नीतिगत प्रयास लागतों को न्यूनतम और संभावित हितलाभों को अधिकतम करने में सहायक हो सकते हैं।

किन्तु ये तात्कालिक घटनाएं महत्वपूर्ण होते हुए भी हमें मध्यकालिक आर्थिक मुद्दों से मुंह मोड़ने की अनुमति नहीं दे पाएंगी। हमें एक प्रकार से विमुद्रीकरण और अत्यधिक ऋणग्रस्त तुलनपत्रों के 'ईर्षालू देवों' तथा भारत के मध्यकालिक आर्थिक भविष्य के बीच एक संतुलन बिठाना होगा। यह वर्तमान समीक्षा (और समीक्षक) के समक्ष एक विशेष चुनौती है।

हमने संरचना की दृष्टि से समीक्षा के तीन विभाग बनाए हैं : परिप्रेक्ष्य, सन्निकट और चिरंतन। पाठक को आकृष्ट करने के लिए एक उपभाग 'भारत : आठ रोचक तथ्य'' भी जोड़ा है। पहले भाग में परिचयात्मक अध्याय में हाल ही के घटनाक्रम और निकट भविष्य की संभावनाओं का एक विहंगम चित्रांकन किया गया है। अगले अध्याय में एक दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण करते हुए यह जानने का प्रयास किया गया है कि भारत अपनी आर्थिक जीवन दृष्टि के पटल पर किस मुकाम पर खड़ा है? हमारा तर्क है कि कुछ अतिविशाल स्तरीय चुनौतियों पर पार पाने के लिए हमारे समाज को अपने चिन्तन में भी बड़े परिवर्तन अवश्य करने होंगे। आर्थिक सुधार केवल किन्हीं निहित स्वार्थों का निर्मूलन नहीं हैं, वे तो समस्याओं और उनके समाधानों के प्रति सांझे विमर्श और जीवन दर्शन का रूप धारण करते जा रहे हैं।

भाग 2 चार निकटकालिक प्रश्नों पर केन्द्रित हैं : विमुद्रीकरण, दोहरी तुलनपत्र की निरंतर गहराती हुई समस्या और उनसे निपटने की विधियां, केन्द्र और राज्यों की राजकोषीय नीतियां तथा श्रमसघन रोजगार सृजन। इसी भाग में वर्ष के पूवार्द्ध में विभिन्न क्षेत्रकों के घटनाक्रमों की भी समीक्षा की गई है।

भाग 3 में और मध्यकालिक मुद्दों पर चर्चा की गई है। इस भाग की चर्चा दो मुख्य धाराओं में विभाजित है : राज्य (और नगर), तथा बृहत आंकड़ा आधार। ''सहकारी एवं स्पर्धी संघवाद'' केवल एक सुहाना लगने वाला मंत्र वाक्य नहीं है। यह तो भारत का अपरिहार्य भविष्य है। इसी कारण से देश के प्रांतों एवं उनके संघ के रूप में भारत पर अधिक गहन विचार आवश्यक हो रहा है।

इसी क्रम में हम विभिन्न राज्यों के बीच आय और स्वस्थता के परिणामों की अभिसृति, राज्यों के वित्त और उनके बीच चल रहे वस्तुओं और व्यक्तियों के आवागमन की प्रवृत्तियों पर विचार कर रहे है। यहीं हम उस ''दूसरे भारत'' के निष्पादन की विश्लेषण कला और तत्संबंधी विमर्श पर भी चर्चा करेंगे। यहां एक भारत प्राकृतिक संसाधन संपन्न होते हुए भी दूसरे पर पुन:वितरण रूपी धन अन्तरण के लिए निर्भर दिखाई देता है, जबकि प्राय:द्वीपीय राज्यों की सफल विकास यात्रा में तो ऐसे अंतरणों का शोध और विश्लेषण के लिए भी महत्व समाप्त प्राय: हो चला है। नगरों पर अध्याय स्पष्टत: राज्यों के बीच चल रही गत्यात्मकतापूर्ण स्पर्धा की परिधि में नगरों को भी स्थान प्रदान कर रहा है : भारत को केवल स्पर्धी संधवाद नहीं चाहिए, यहां तो स्पर्धी अनुसंघवाद की भी आवश्यकता हो रही है।

आर्थिक समीक्षा ने पहली बार बृहत आंकड़ा आधारों को अंगिकार किया है। हम देश के भीतर वस्तुओं और सेवाओं के प्रवाहों पर, इन आकड़ों के माध्यम से एक नई रोशनी डाल रहे हैं। किन्वित गर्वानुभूति के साथ हम यह दावा कर रहे हैं कि यह समीक्षा भारत के राज्यों के बीच वस्तुओं के प्रवाहों का सर्वप्रथम अनुमान प्रस्तुत कर रही है। यह वस्तु एवं सेवा कर प्रणाली द्वारा सुलभ कराए

गए लेनदेन (बीजक) स्तरीय आंकड़ों के विश्लेषण पर आधारित अनुमान है। हम यह भी दावा कर रहे हैं कि समीक्षा देश में प्रवसन प्रवाहों पर नवीन एवं उत्साहवर्धन जानकारी प्रस्तुत कर रही है। यह रेल मंत्रालय के यात्रियों के उद्‌गम एवं गन्तव्य स्थानों की जानकारी पर आधारित है। जनगणना से प्राप्य जानकारी के विश्लेषण के विषय में भी एक नई कार्यविधि का प्रयोग किया जा रहा है।

एक शानदार तथ्य उभर कर आया है : भारत का आंतरिक एकीकरण सशक्त है। यह तथाकथित परंपरागत ज्ञानवानों के चिन्तन से तो बहुत ही सशक्त है। उदाहरण के लिए हम जान पा रहे हैं कि 8 से 9 मिलियन भारतीय रोजी रोटी कमाने के लिए अन्य प्रदेशों/स्थानों की ओर प्रतिवर्ष प्रस्थान कर जाते है। यह प्रवाह अन्य परंपरागत विद्वानों के अनुमानों से तो लगभग दुगुना है। साथ ही भारत का आंतरिक व्यापार प्रवाह भी अन्य बड़े देशों जितना ही व्यापक एवं विशाल है।

किन्तु ये परिणाम एक बहुत बड़े विरोधाभास की ओर भी इंगित कर रहे हैं। भारत के भीतर तो वस्तुओं, व्यक्तियों और पूंजी के प्रवाह निर्बन्ध रूप से चलते दिखाई पड़ रहे हैं। फिर भी आय एवं स्वस्थता उपलब्धियों में विभिन्न राज्यों/क्षेत्रों के बीच अभिसृति के स्पष्ट प्रमाण क्यों नहीं मिल पा रहे? अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं के आरपार तो अभिसृति के प्रमाण बहुत सशक्त प्रतीत होते हैं- गरीब, अपेक्षाकृत कम धनी देश (तेजी से) आगे बढ़कर कम गरीब और अधिक स्वस्थ देशों के अधिक निकट होते जा रहे हैं। भारतीय विरोधाभास इस कारण अधिक विचलित कर रहा है कि कहीं अधिक प्रबल अंतर्राष्ट्रीय सीमा बाधाओं के आरपार तो उत्पादक संसाधनों के आवागमन का क्रम अपेक्षाकृत आसानी से चल रहा है और अभिसृति का कारण बन रहा है तो फिर भारत की अन्तर्प्रान्तीय सीमा रेखाएं छिद्रशील और नम्य होते हुए भी विभिन्न क्षेत्रों के बीच विषमताओं को क्यों बनाए हुए हैं?

समीक्षा अभी चल रहे प्रमुख कार्यक्रमों की लक्षिता की प्रभावोत्पादकता के नए अनुमान प्रस्तुत कर रही है। यह विभिन्न जनपदों में बसी गरीब जनसंख्या और उन जनपदों को मिल रही राशियों के बीच एक बड़ी खाई की ओर इंगित कर रहे हैं। इससे स्वाभाविक रूप से सार्वलौकिक आधारिक आय के उस नूतन विचार की ओर देखने की प्रेरणा मिलती है जो विकसित देशों सहित भारत में भी आजकल चर्चा का एक मुख्य विषय बन चुका है। हम इस विचार को ''महात्मा गांधी के स्वयं के साथ एक संवाद'' के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। हमारा निष्कर्ष यही है कि यह एक ऐसा विचार है जिसका समय आ गया है।

पिछले वर्ष की समीक्षा में कहा गया था कि भारत के लिए और भारत को और बेहतर बनाने के विचारों का महत्व है। यह बात गौण है कि वह विचार किसने दिया था और कहां सिद्ध किया था। यह विचार आज और भी अधिक अहम हो गया है। हमने इस बार देश विदेश से, सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र से, शैक्षिक विशेषज्ञों में से, और सभ्य समाज से कहीं अधिक लेखकों विचारकों के चिन्तन को अपनी चर्चाओं का आधार बनाया है। यह भी एक गौरव का विषय है कि इस वर्ष की समीक्षा में माननीय वित्तमंत्री ने स्वयं अपनी लेखनी से एक योगदान दिया है। और इस बार हमें यह आशंका भी नहीं है कि समीक्षा का मूल्यांकन कहीं उसके मुखपृष्ठ से ही नहीं हो जाए, अब उसे भी एक रचनात्मक स्वरूप मिल गया है।

इस वर्ष की समीक्षा की केवल एक खंड में प्रस्तुति भी एक नवीनता है। सहयोगी खंड में प्राय: प्रस्तुत होता रहा गत वर्ष की गतिविधियों का विस्तृत सिंहावलोकन अब एक अलग प्रकाशन के रूप में आएगा।

पिछले कुछ समय से आर्थिक समीक्षा की भूमिका और इसकी विषय वस्तुअ को लेकर काफी विचार मंथन चला है। समीक्षा को क्या करने की आकांक्षा लेकर चलना चाहिए? यहां उत्तर बहुत स्पष्ट है, वस्तुत: वर्षों पहले पिछली शती के महानतम अर्थशास्त्री जॉन मेनार्ड केंज ही वह उत्तर दे गए थे। उन्होंने स्वामी-अर्थशास्त्री संबंध के जो आवश्यक तत्व बताए थे, वही स्वामी-समीक्षा संबंध के लिए भी मान्य हैं।

तोकेंज के ही शब्दों में, 'इसमें विभिन्न विलक्षणताओं का एक अनूठा संयोग होना चाहिए, इसे गणित, इतिहास, राजनीति और किसी सीमा तक दर्शनशास्त्र से भी कुछ न कुछ ग्रहण करना चाहिए। इसे चिन्हों-संकेतों को समझना, किन्तु शब्दों में अभिव्यक्ति करना आना चाहिए। इसे सामान्य की दृष्टि से ही विशिष्ट का चिन्तन करना चाहिए और अर्मूत एवं स्थूल का एक ही विचार प्रवाह में स्पर्श करते हुए चलना चाहिए। इसे अतीत के आलोक में भविष्य के लिए वर्तमान का अध्ययन करना चाहिए। मनुष्य की प्रकृति और उसकी संस्था व्यवस्था का कोई भाग इसकी परिधी से पूरी तरह मुक्त नहीं रहना चाहिए। यह एक साथ ही सौद्देश्य और निर्लिप्त भावों का संगम होना चाहिए। इसके लेखक एक कलाकार की भांति अनुत्कोच्य और निष्पृह होने चाहिए किन्तु उन्हें कभी-कभी उतना ही वास्तविकता के धरातल के निकट भी होना चाहिए जितना राजनीतिज्ञ होते हैं'।

पिछले तीन वर्षों में समीक्षा संभवत: उन उच्च मानकों का अनुपालन तो सदैव नहीं कर पायी है, फिर भी, वे मान्य हैं और वर्तमान एवं भावी समीक्षा संस्करणों के लिए मान्य होने भी चाहिए।

अरविंद सुब्रमण्यम
(मुख्य आर्थिक सलाहकार)
वित्त मंत्रालय
भारत सरकार

शब्द संक्षेप कोष

AMD	अहमदाबाद	Ahmedabad
AMRUT	अटल शहरी पुनःर्जीवन एवं पुनःनिर्माण	Atal Mission for Rejuvenation and Urban Transformation
ARV	वार्षिक किराया मूल्य	Annual Rateable Value
ASICS	भारत की नगर प्रणालियों का वार्षिक सर्वेक्षण	Annual Survey of India's City-Systems
BBMP	ब्रुहाट बैंगलोर महानगरपालिका	Bruhat Bangalore Mahanagara Palike
BBR	भुवनेश्वर	Bhubaneswar
BLR	बैंगलुरू	Bengaluru
BPL	भोपाल	Bhopal
CDR	चंडीगढ़	Chandigarh
CFPI	उपभोक्ता खाद्य कीमत सूचकांक	Consumer Food Price Index
CHN	चेन्नई	Chennai
CMM	प्रसमूह आधारित प्रवसन मापक	Cohort-based Migration Metric
CPI	उपभोक्ता कीमत सूचकांक	Consumer Price Index
CPI- IW	उपभोक्ता कीमत सूचकांक–औद्योगिक कर्मियों के लिए	Consumer Price Index for Industrial Workers
CPI-AL	उपभोक्ता कीमत सूचकांक–कृषि श्रमिकों के लिए	Consumer Price Index for Agricultural Labour
CRIS	रेल सूचना व्यवस्था केन्द्र	Centre for Railway Information System
CSO	केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन	Central Statistics Office
CSS	केन्द्र प्रायोजित योजना/प्रकल्प	Centrally Sponsored Schemes
DCRF	ऋण समेकन एवं पुनः रचना सुविधा	Debt Consolidation and Reconstruction Facility
DDN	देहरादून	Dehradun
DEM	डिजिटल उच्यता प्रतिमान	Digital Elevation Model
DIPP	औद्योगोगि नीति एवं प्रोत्साहन विभाग	Department of Industrial Policy & Promotion
DL	दिल्ली	Delhi
ETM	संवर्धित विषयमान चित्रक	Enhanced Thematic Mapper
FAR	तल क्षेत्रफल अनुपात	Floor Area Ratio
FFC	चौदहवां वित्त आयोग	Fourteenth Finance Commission
FRBM	राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन अधिनियम	Fiscal Responsibility and Budget Management Act
FRL	राजकोषीय उत्तरदायित्व विधेयन	Fiscal Responsibility Legislation
FSI	तल भूक्षेत्र सूचक	Floor Space Index
GBM	प्रवणतावर्धी प्रतिमान	Gradient Boosting Model
GDP	सकल घरेलू (आंतरिक) उत्पाद	Gross Domestic Product
GIS	भौगोलिक सूचना प्रणाली	Geographical Information System
GSDP	सकल राज्य घरेलू उत्पाद	Gross State Domestic Product
HPEC	उच्च शक्ति विशेषज्ञ समिति	High Powered Expert Committee
HRIDAY	ह्रदय : धरोहर नगर विकास एवं संवर्धन योजना	Heritage City Development and Augmentation Yojana
HUDA	हुडा : हरियाणा शहरी विकास अधिकरण	Haryana Urban Development Authority
HYD	हैदराबाद	Hyderabad
IL&FS	इन्फ्रास्ट्रक्चर लीजिंग एंड फाइनेनिश्यल सर्विसिज लिमिटेड	Infrastructure Leasing & Financial Services Limited
IMF	अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष	International Monetary Fund
IMR	शिशु मृत्युदर (मरणशीलता)	Infant Mortality Rate
ISRO	भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन	Indian Space Research Organization
ITB	मध्यवर्ती राजकोषीय हुन्डियां	Intermediate Treasury Bill
JNNURM	जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी पुनः नवीकरण मिशन	Jawaharlal Nehru National Urban Renewal Mission
JPR	जयपुर	Jaipur
JUSCO	जमशेदपुर सुविधाएं एवं सेवाएं कंपनी लिमिटेड	Jamshedpur Utilities and Services Company Ltd.
KOL	कोलकाता	Kolkata
KPR	कानपुर	Kanpur
LANDSAT	दूर संवेदी भू-उपग्रह प्रणाली	Land Remote-Sensing Satellite (System)
LE Life	जीवांश	Expectancy
LKO	लखनऊ	Lucknow
LUD	लुधियाना	Ludhiana
MCG	गुरूग्राम नगर निगम	Municipal Corporation of Gurgaon
MDG	सहस्राब्दि विकास लक्ष्य	Millennium Development Goals
MIC	मध्यम आय देश	Middle Income Countries

MNDWI	परिवर्तित मानकीकृत अन्तर जल सूचक	Modified Normalized Difference Water Index
MODIS	सामान्य विभेदन दृश्यांकन दूरवर्णक्रममापी	Moderate Resolution Imaging Spectroradiometer
MoUD	शहरी विकास मंत्रालय	Ministry of Urban Development
MPCE	मासिक प्रतिव्यक्ति व्यय	Monthly Per Capita Expenditure
MUM	मुम्बई	Mumbai
NASA	राष्ट्रीय विमानन एवं अंतरिक्ष प्रशासन	National Aeronautics and Space Administration
NDBI	मानकीकृत अंतर निर्मित सूचक	Normalized Difference Built-up Index
NITI	भारत परिवर्तन हेतु राष्ट्रीय संस्थान	National Institution for Transforming India
NRSA	राष्ट्रीय दूर संवेदन एजेंसी	National Remote Sensing Agency
NSS	राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण	National Sample Survey
O&M	संचालन एवं रखरखाव	Operation and Maintenance
OLI	व्यवहारिक भू दृश्यांक	Operational Land Imager
PAT	पटना	Patna
PCA	प्रमुख घटक विश्लेषण	Principal Component Analysis
PDL	जन उद्घाटन अधिनियम	Public Disclosure Laws
PPP	क्रय शक्ति तुल्यता	Purchasing Power Parity
PSU	सार्वजनिक क्षेत्रीय उपक्रम/इकाई	Public Sector Unit
PUN	पुणे	Pune
PWD	लोक निर्माण विभाग	Public Works Department
RAI	रायपुर	Raipur
RAN	रांची	Ranchi
RMB	रेनमिनबी	Renminbi
SAVI	मृदा संमजित वनस्पति सूचक	Soil Adjusted Vegetation Index
SBM	स्वच्छ भारत मिशन	Swachh Bharat Mission
SCM	स्मार्ट सिटी मिशन	Smart Cities Mission
SDL	राज्य विकास ऋण	State Development Loan
SRS	प्रतिदर्श पंजीकरण सर्वेक्षण	Sample Registration Survey
SUR	सूरत	Surat
TFC	तेरहवां वित्त आयोग	Thirteenth Finance Commission
TFR	सकल गर्भाधान दर	Total Fertility Rate
TVM	तिरूवंतनमपुरम्	Thiruvananthapuram
UA	शहरी बस्ती	Urban Agglomeration
UAV	इकाई क्षेत्रिक मूल्य	Unit Area Value
UDAY	उज्जवल डिस्कॉम आश्वस्ति योजना	Ujwal DISCOM Assurance Yojana
ULBs	शहरी स्थानीय निकाय	Urban Local Bodies
UN	संयुक्त राष्ट्र	United Nations
UNICEF	संयुक्त राष्ट्र बालकोष	United Nations Children's Fund
USGS	संयुक्त राज्य भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण	United States Geological Survey
UTS	अनारक्षित टिकट प्रणाली	Unreserved Ticketing System
VAT	मूल्य वृद्धि कर	Value Added Tax
WAH	भारित औसत मिश्रित	Weighted Average Hybrid
WDI	विश्व विकास सूचक	World Development Indicators
WEO	विश्व आर्थिक संभाव्यता	World Economic Outlook
WHO	विश्व स्वास्थ्य संगठन	World Health Organization
WPI	थोक कीमत सूचक	Wholesale Price Index

भारत : आठ रोचक तथ्य

- **संचरणशील भारतीय**

रेलयात्री प्रवाह के आंकड़ों पर आधारित नए अनुपात दर्शा रहे हैं कि लगभग 9 मिलियन व्यक्ति रोजीरोटी कमाने के लिए प्रवास कर रहे हैं। ये आंकड़े 2011 की जनसंख्या गणना के अनुमान से लगभग दुगुने हैं।

वार्षिक नए प्रवासी (मिलियन में)

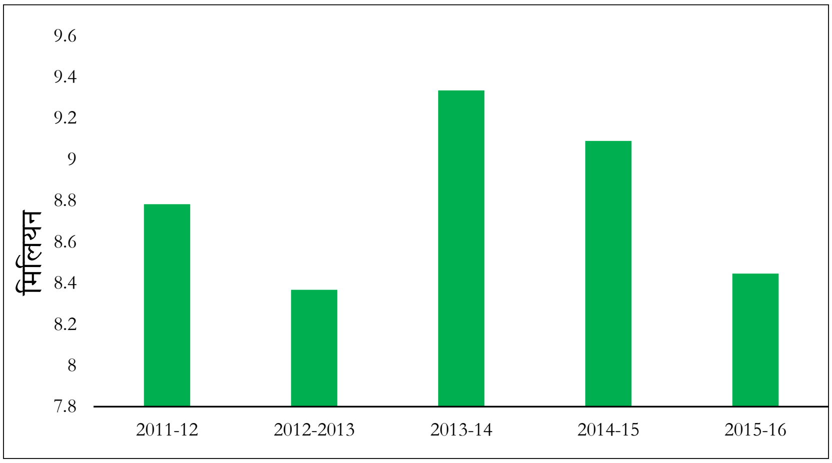

- **अवगम (क्रमिकता निर्धारण) के पूर्वाग्रह**

दिसंबर 2010 में चीन की साख योग्यता का A+ से AA- पर उन्नयन कर दिया गया है, जबकि भारत की क्रमिकता BBB- पर ही टिकी हुई है। वर्ष 2009-15 की अवधि में चीन का साख जीडीपी अनुपात 142 प्रतिशत बढ़कर 205 प्रतिशत हो गया है और इसकी संवृद्धि दर में गिरावट आई है। भारत के इन्हीं सूचकों से तुलना निश्च ही चौंकाने वाली है।

योग्यता निर्धारण के त्रुटिपूर्णमानक : साखयोग्यता निर्धारक-चीन और भारत

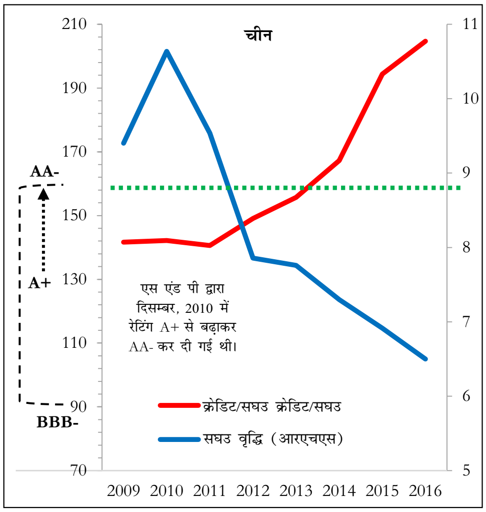

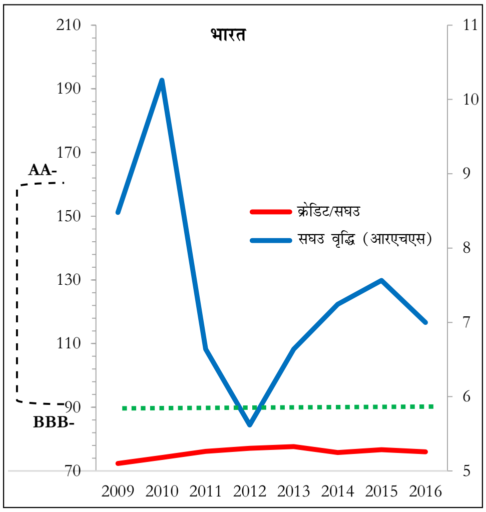

- **सामाजिक कार्यक्रमों की त्रुटिपूर्ण लक्षिता : नए प्रमाण**

  भारत में क्षेम संवर्धन कार्यक्रमों पर व्यय की एक बड़ी समस्या उस धन के अप आबंटन से जुड़ी है। हमारे निम्न रेखाचित्र दर्शा रहे हैं कि जिन जनपदों में गरीबजन अनुपात सर्वाधिक है (लाल रंग, बायां चित्र)। वही आबंटित धन के अभाव को सबसे अधिक झेल रहे हैं (लाल रंग दाहिना चित्र)। जिन जनपदों में देश के गरीबों की 40 प्रतिशत संख्या बसी है, उन तक गरीब जन क्षेम कार्यक्रमों पर खर्च की गई राशियों का 29 प्रतिशत ही पहुँच पा रहा है।

जनपदानुसार गरीबों का अंश

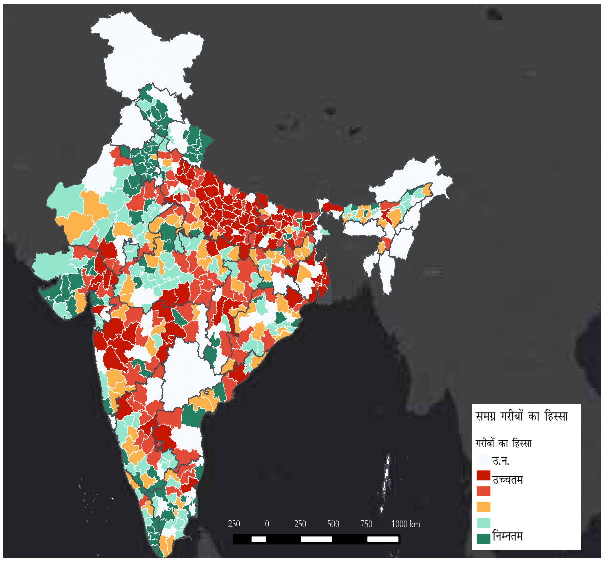

जनपदानुसार गरीबों को आबंटन में रही कमी

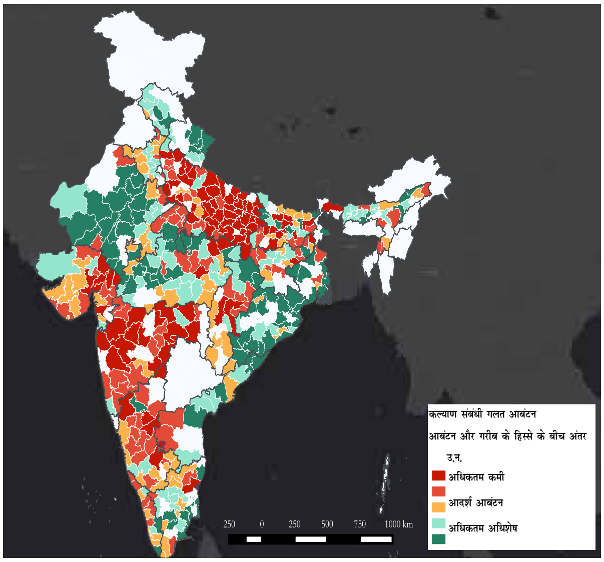

- **राजनीतिक लोकतंत्र तो है पर राजकोषीय लोकतंत्र (कहां है)?**

  भारत में प्रत्येक 100 मतदाताओं में से केवल 7 व्यक्ति करदाता है। यह हमें अपने G-20 समूह के सहयोगी देशों के 18 लोकतंत्रों में 13वें स्थान पर पहुँचा देता है।

करदाता, प्रतिहजार मतदाता

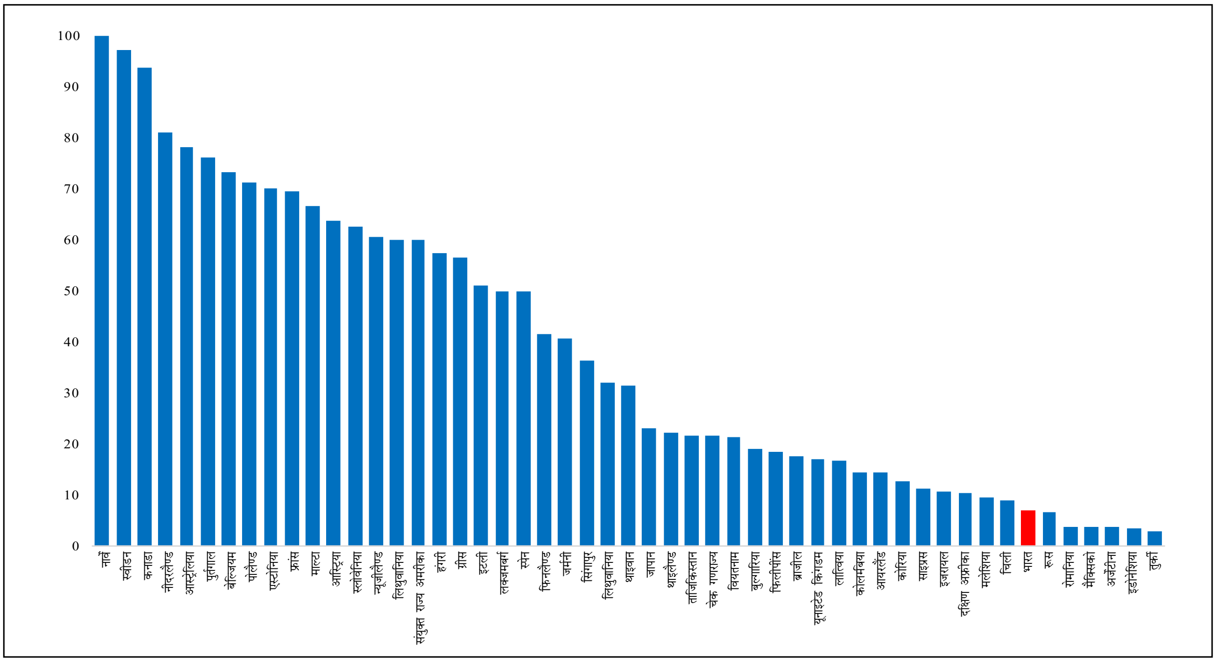

- ## भारत का विशिष्ट जनांकीय लाभांश

भारत की जनसंख्या में कार्यशील आयु के वर्ग का गैर कार्यशील वर्ग के साथ अनुपात अन्य देशों के बाद अपने शिखर स्तर को प्राप्त करेगा और यह अधिक समय तक उक्त शिखर पर बना भी रहेगा। इस जनांकीय उत्प्रेरणा के कारण संवृद्धि में उत्कर्ष का शिखर शीघ्र ही आने वाला है। हां, प्राय:द्वीपीय राज्यों में यह शिखर पहले आ जाएगा, और आन्तरिक राज्यों में इसके काफी बाद में आने की आशा है।

भारतीय राज्यों में तथा अन्य उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं में जनांकीय लाभांश

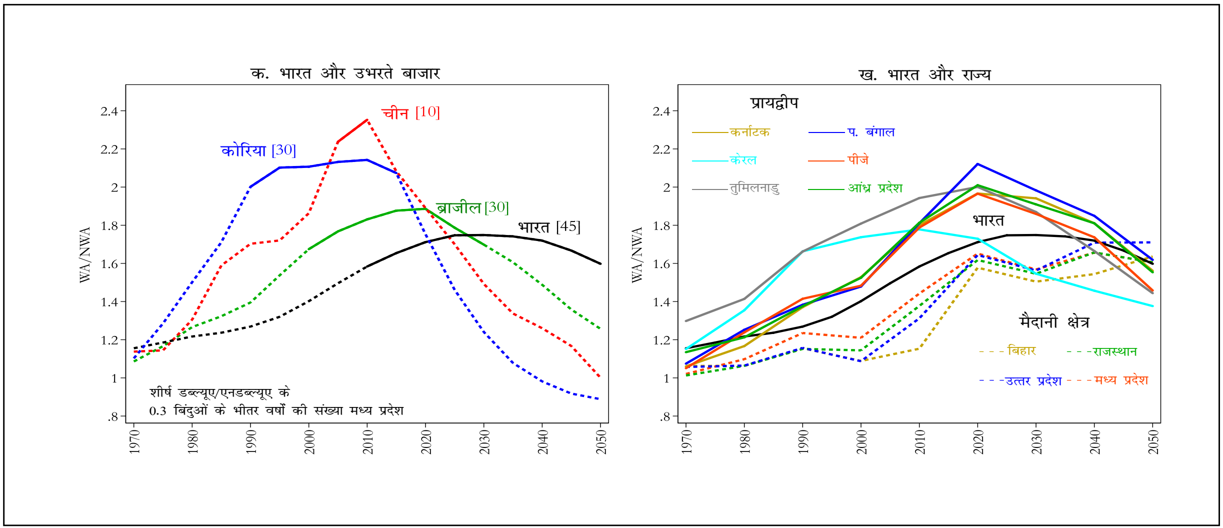

- ## भारत चीन की अपेक्षा अधिक व्यापार करता है और इसका आन्तरिक व्यापार भी अधिक है

यदि भारत के व्यापार के प्रति खुलेपन की बात करें तो 2011 में इसका वस्तुओं और सेवाओं के व्यापार का जीडीपी से अनुपात चीन से कहीं आगे निकल चुका था (चीन विश्व में व्यापार को संवृद्धि इंजन या मुख्य प्रेरक बनाने वाला देश माना जाता है)। भारत का आन्तरिक व्यापार भी अन्य बड़े देशों जैसा ही है। यह परिदृश्य उस रचना से बहुत ही भिन्न है, जिसमें भारत को तरह-तरह की व्यापार बाधाओं से ग्रस्त घोषित कर दिया जाता है।

व्यापार (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

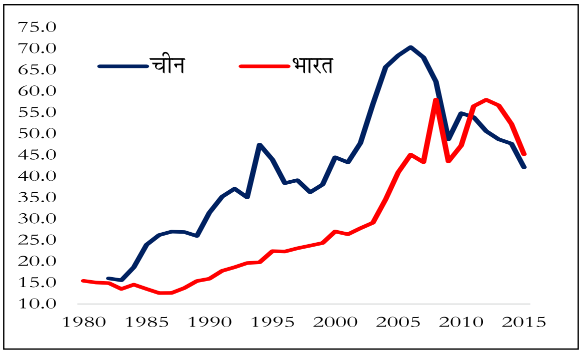

आंतरिक व्यापार (जीडीपी प्रतिशत के रूप में)

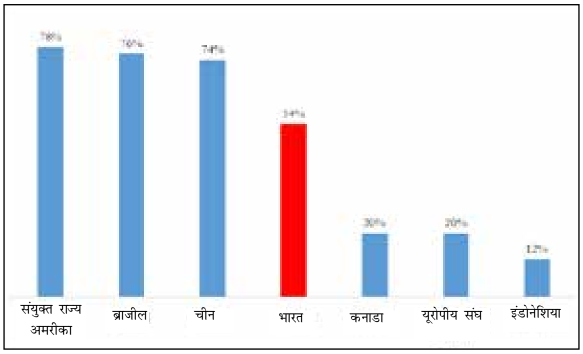

- **भारत में अपसृति : प्रसार**

पिछले दशक (2004-14) में भी भारत में आय के आबंटन की क्षेत्रीय विषमताओं में प्रसार होता रहा है। यह प्रवृति शेष विश्व और चीन के विपरीत ही है। आश्चर्य की बात तो यह है कि अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं के विपरीत भारतीय राज्यों की सीमाएं तो बहुत ही छिद्रपूर्ण हैं, फिर भी अभिसृतिकारी शक्तियां दुर्लभ्य ही प्रतीत हुई हैं।

प्रतिव्यक्ति जीडीपी में नि:शर्त अभिसृति

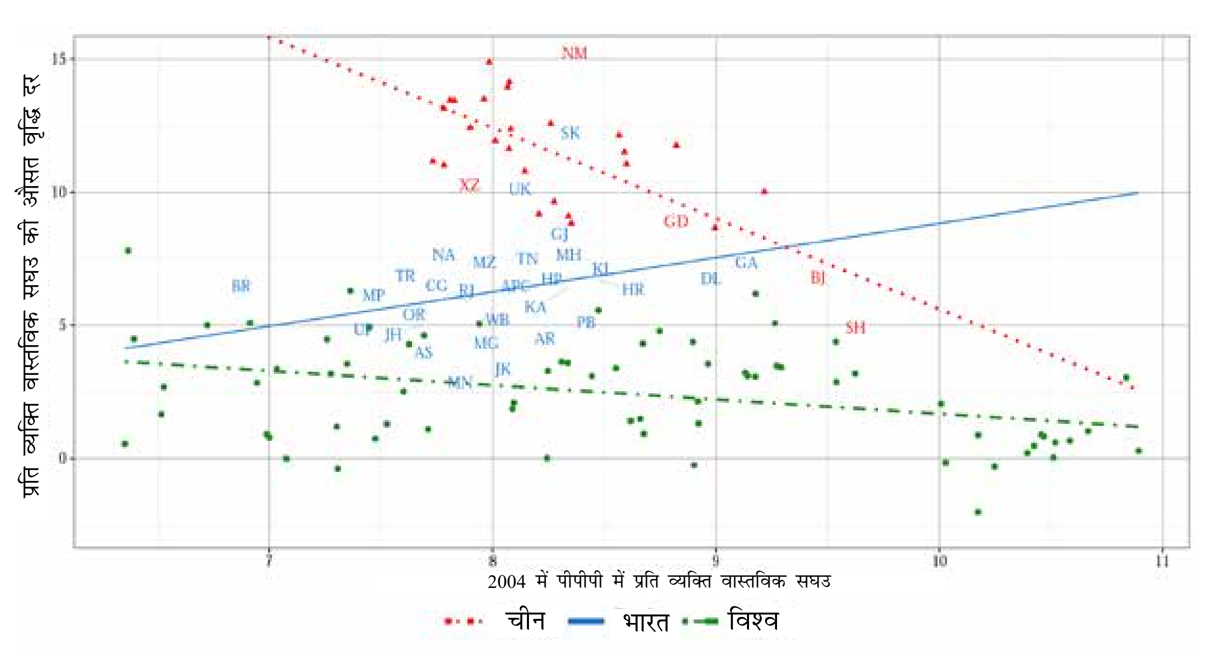

- **अविदौहित संपति कर सामर्थ्य**

उपग्रहों से प्राप्त आंकड़े दर्शा रहे हैं कि बैंगलुरू और जयपुर अपने संभावी संपत्तिकर सामर्थ्य के मात्र 5 प्रतिशत से 20 प्रतिशत की ही उगाही कर पा रहे हैं।

शहरी निर्मित क्षेत्र का प्रसार : बैंगलुरू

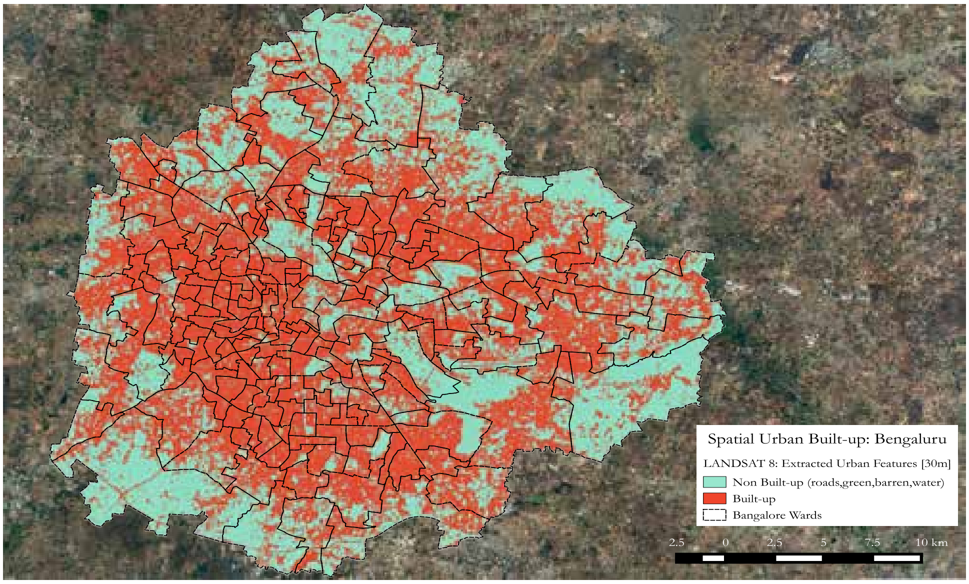

आर्थिक परिदृश्य और नीतिगत चुनौतियां

01
अध्याय

समष्टि स्तरीय आर्थिक स्थिरता के शानदार परिप्रेक्ष्य में इस वर्ष दो बड़ी आन्तरिक नीतियां भी उभर कर आयी है : एक तो व्यापक परिवर्तनकारी वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) को लागू करने का रास्ता साफ करने वाले संविधन संशोधन का संसद में पारित होना, तथा दूसरी बड़ी नीति दो उच्चतम मूल्य वाले नोटों (रू. 500 तथा रू. 1000) का विमुद्रीकरण का निर्णय रही। जीएसटी समूचे देश को एक बाजार का रूप प्रदान करेगा, कर अनुपालन और शासन में सुधार लाएगा तथा निवेश और संवृद्धि को बढ़ावा देगा। यह भारत की सहकारी संघवाद की शासन प्रणाली में एक बड़ा अभिनव प्रयोग भी है। विमुद्रीकरण की कुछ अल्पकालिक लागतें रही हैं, किन्तु इसमें अनेक दीर्घकालिक लाभों की संभावनाएं भी भरी हैं। अब अगले कदमों में लागतों को न्यूनतम और लाभों को अधिकतम करने के लिए आवश्यक उपायों में सम्मिलित हैं : तेजी से, मांग अनुसार, पुन: मुद्रीकरण, आगे कर सुधार (जो भू एवं भवन संपदाओं के लेनदेन को जीएसटी के प्रभाव क्षेत्र में लाएं), कर दरों और स्टैंप शुल्कों में कमी, तथा कर प्रशासकों के अतिउत्साह को लेकर फैली हुई चिन्ताओं का निराकरण करना। ये कदम 2017-18 में एक बार फिर से अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर को अपने सामान्य प्रवृत्ति पथ पर ले आएगा। वर्ष 2016-17 में आयी शिथिलता एक अस्थाई विचलन बन कर रह जाएगी। यदि और दूर तक भविष्य में झांकने का प्रयास करें तो तो लगता है तीन दीर्घ काल से चली आ रही विराट चुनौतियों- दक्षताहीन पुन:वितरण, निजी क्षेत्र एवं संपदाधिकारों के प्रति ढुलमुल व्यवहार और अभी तक त्रुटिपूर्ण रही प्रशासकीय क्षमताओं के उन्नयन का सामना करने के लिए सामाजिक विचारों और संवाद के स्तर पर बड़े परिवर्तनों की आवश्यकता अपरिहार्य होती जा रही है। विमुद्रीकरण के पश्चात् और वैश्वीकरण से घिर रही निराशा के संदर्भ में तो लगता है इन वैचारिक परिवर्तनों को सुबद्ध स्वरूप प्रदान कर इन्हें अपना लेना यह सुनिश्चित करने में निर्णायक सिद्ध होगा कि भारत का उत्कर्ष एक चिरधारणीय विकास है, क्षण भंगुर नहीं।

I. विषय प्रवेश

1.1 आर्थिक समीक्षा 2014-15 ने भारत की अर्थव्यवस्था के ऐसे उत्कर्ष आरंभ बिन्दु की बात की थी जहां से देश 8-10 प्रतिशत की निरंतर धारणीय दर से संवृद्धि के प्रक्षेप पथ पर प्रगति कर सकता है। पिछली वार्षिक समीक्षा ने भी आग्रह किया था कि वह उत्कर्ष आरंभ बिन्दु अभी भी देश को आमंत्रित कर रहा है, किन्तु संभवत: सदैव ऐसा आमंत्रण नहीं मिल पाए। इस वर्ष की जांच पड़ताल सुझा रही है कि आने वाली बड़ी चुनौतियों पर पार पाने और संवृद्धि दर को तीव्र करने, रोजगार के अवसर बढ़ाने तथा सामाजिक न्याय पाने (अध्याय-2, यही समीक्षा) के लिए समाज के अर्थ चिन्तन की धारा में बदलाव लाने आवश्यक होंगे। विमुद्रीकरण के बाद, और चक्रीय विकास क्रम से आर्थिक प्रबंधन में संभावित कठिनाइयों की आशंका के कारण उन बदलावों का स्पष्ट निरूपण कर उन्हें अंगीकार कर लेना उक्त उत्कर्ष बिन्दु को चिरस्थायी स्वरूप प्रदान करने के लिए निर्णायक सिद्ध होगा।

1.2 इस वर्ष में आर्थिक नीति के पटल पर अनेक एतिहासिक विकास हुए हैं। आन्तरिक स्तर पर तो संविधान

संशोधन ने दीर्घ प्रतीक्षित युग परिवर्तनकारी वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) का मार्ग प्रशस्त किया है, तो बड़े मूल्यमान के नोटों के विमुद्रीकरण ने यह स्पष्ट संदेश दिया है कि अब गैर कानूनी गतिविधियों की लागत दंडात्मक स्तरों तक उच्च होने जा रही है। अंतराष्ट्रीय पटल पर ब्रेक्जिट–ब्रिटेन की यूरोपीरय संघ से निकासी तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के महानिर्वाचन भी इतनी बड़ी उथल–पुथल रहे हैं, जिनसे विश्व अर्थव्यवस्था पर कलिमापूर्ण आशंकाओं की छाया मंडराने लगी है। भारतीय अर्थव्यवस्था भी इन छायाओं से पूर्णत: निरापद नहीं रह पाएगी।

1.3 आइए विमुद्रीकरण से चर्चा आरंभ करें। नवंबर 8, 2016 की सांय यह क्रांतिकारी प्रशासकीय एवं सामाजिक अभियांत्रिकी पूर्ण कदम उठाया गया। देश की समस्त मुद्रा आपूर्ति के 86 प्रतिशत अंश, एक हजार और पाँच सौ रूपयों के करैंसी नोटों को अमान्य घोषित कर दिया गया। वे कुछ एक कार्यों के अतिरिक्त सभी प्रकार के लेनदेनों के लिए विधि संगत नहीं रहे।[1] इन्हें दिसंबर 30 तक किसी न किसी बैंक में जमा कराया जाना था, साथ ही बैंकों से नकद निकासी पर भी कुछ प्रतिबंध लगाए गए। दूसरे शब्दों में देशीय मुद्रा और बैंक खातों की नकदी में परिवर्तनशीलता पर कुछ सीमाएं लागू कर दी गईं।

1.4 इस कार्य के चार उद्देश्य थे : भ्रष्टाचार, नकली नोट छापने, उच्च मूल्य के नोटों के सहारे आतंकवाद फैलाने और कर अधिकारियों के समक्ष अघोषित काली कमाई से कालेधन के संकलन पर नियंत्रण लगाना। यह बड़ा कदम अनायास ही नहीं उठा लिया गया था। ऐसी गैर कानूनी गतिविधियों के संबंध में पहले से ही कई कदम उठाए जा रहे थे, जैसे कि 2014 के बजट में ही विशेष जांच दल का गठन; कालाधन अधिनियम, 2015; बेनामी लेनदेन अधिनियम, 2016; स्विटजरलैंड के साथ जानकारी सांझा करने का समझौता; मॉरिशस और साइप्रस के साथ नई कराधन संधियां; तथा अघोषित आय घोषणा योजना।

1.5 विमुद्रीकरण का ध्येय एक व्यवस्था परिवर्तन की घोषणा था। इसमें धन से संबंधित गैर कानूनी गतिविधियों को दंडित करने के प्रति सरकार के आग्रह की स्पष्टोकित भरी थी। वास्तव में गैर कानूनी और कानूनी कराधिकारियों के समक्ष अघोषित गतिविधियों पर करों की दर को दण्डात्मक स्तर तक पहुँचाने का मन्तव्य स्पष्ट किया जा रहा था।

1.6 विमुद्रीकरण पर सार्वजनिक विमर्श में तीन प्रश्न उभर कर आए हैं। पहला प्रबंधन के आयामों से जुड़ा व्यापक प्रश्न इस नीति प्रयास की रचना और क्रियान्वयन विधि से जुड़ा है; दूसरा प्रश्न इसके अल्प एवं दीर्घकालिक प्रभावों से संबंधित है; और तीसरा प्रश्न आर्थिक नीतियों के भावी संचालन के आधारिक दर्शन के लिए निहितार्थो से भरा है। प्रथम प्रश्न पर चर्चा करने के लिए वर्तमान समीक्षा एक उचित पटल नहीं होगा।

1.7 अध्याय–3 में दूसरे प्रश्न पर विस्तृत चर्चा की जा रही है। वहां हमारा मुख्य निष्कर्ष यही है क विमुद्रीकरण की कुछ अल्पकालिक लागतें अवश्य हमें भुगतनी होंगी किन्तु यह कदम दीर्घकालिक हित एवं लाभों का आधार निर्मित करेगा।

1.8 अल्पकालिक लागतों ने असुविधा और कठिनाइयों का रूप धारण किया है। यह समाज के अनौपचारिक और नकदी का ही प्रयोग करने वाले व्यवसाय क्षेत्र के लिए अधिक कष्ट भरी अवधि रही है। यहां एक बड़े जन समुदाय को आय और रोजगार की हानि सहन करनी पड़ी है। ये लागतें बहुत अस्थायी हैं और जीडीपी के आंकड़ों में शायद ही इनकी झलक मिल पाए। कारण यही है कि राष्ट्रीय आय लेखा अनौपचारिक क्षेत्र के योगदान का आंकलन औपचारिक क्षेत्र के सूचकों के आधार पर ही करता है, और ये इतने दुष्प्रभावित नहीं हुए हैं। किन्तु लागतें वास्तविक रही हैं और महत्वपूर्ण भी। निम्न ब्याज दरों तथा कीमतों में आई कुछ कमी ने भी अल्पकाल में समष्टि स्तरीय प्रभावों को कुछ संयत रखा है।

1.9 फिर भी विमुद्रीकरण में निम्न भ्रष्टाचार, अर्थव्यवस्था के उच्च स्तर पर डिजिटाइजेशन, वित्तीय बचतों के बेहतर प्रवाहों, और अर्थव्यवस्था के अधिक

[1] सही अर्थों में केवल पानी, बिजली आदि के भुगतान के अतिरिक्त नोट कागज के टुकडे बन कर रह गए थे। फिर भी आम आदमी के लिए नवंबर 8 की घोषणा ही विमुद्रीकरण का स्थूल रूप धारण कर गई है।

उच्च स्तर पर औपचारिकरण के माध्यम से दीर्घकालिक हित लाभों के सृजन की व्यापक संभावनाएं हैं। ये सभी कार्य जीडीपी में वृद्धि के साथ-साथ बेहतर स्तर पर अनुपालन तथा अधिक कर राजस्व संकलन में सहायक होंगे।

1.10 दीर्घकालिक लाभों के समय एवं वितान की ही भांति अल्पकालिक लागतों के परिमाण को लेकर भी अनिश्चितता बनी हुई है। (अध्याय-3 में लाभों के आंकलन हेतु प्रयोज्य्य कुछ संकेतकों की चर्चा की गई है)। ये सभी परिमाण इस बात पर भी निर्भर रहेंगे कि नीति स्तर पर वर्तमान परिस्थितियों को किस प्रकार समझ कर उचित कदम उठाए जाते हैं। अभी आवश्यक प्रतीत हो रहे कार्य हैं : आवश्यक नकदी की आपूर्ति कर यथाशीघ्र अर्थतंत्र का पुनःमुद्रीकरण करना (विशेषकर निम्न मूल्यमान के नोटों की आपूर्ति बढ़ाना) और विमुद्रीकरण के संपूरक प्राय: कदम उठाना। ये हैं भूमि और संपदा को जीएसटी के प्रभाव क्षेत्र में लाना, कर और स्टैंप शुल्क घटाना तथा ध्यान रखना कि प्रशासक विमुद्रीकरण के बाद अधिक अतिसक्रिय नहीं हो जाएं।

1.11 व्यापक जीवन दृष्टि से जुड़ा तीसरा प्रश्न भी अर्थव्यवस्था के विकास के मध्यम अवधि पथ का निर्माण करने में बड़ी भूमिका निभाने वाला है। यहां सरकार ने पिछले वर्ष कई महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। सबसे बड़ा कदम तो युग परिवर्तनकारी जीएसटी विधेयक रहा है जो सारे देश को एक सुगठित बाजार बनाने, कर अनुपालन बढ़ाने, निवेश एवं संवृद्धि को बढ़ावा देने, सामान्य प्रशासन को सुधारने के साथ-साथ सहकारी संघवादी शासन व्यवस्था के संचालन में भी एक नवीन साहसपूर्ण प्रयोग सिद्ध होगा। साथ ही सरकार ने ये कार्य भी किए हैं :

- दीवालियापन संबंधी कानूनों की पुन: रचना, ताकि पिछली समीक्षा में बताए गए उन हानि कर प्रभावों का शीघ्रातिशीघ्र निराकरण हो सके जो अर्थव्यवस्था के प्रगति पथ में बाधक बन रहे थे;
- रिजर्व बैंक के साथ मिलकर मौद्रिक नीति पर संस्थागत संरचनाओं को सूत्रबद्ध करना ताकि व्यक्तियों और सरकार के मनमाने व्यवहार से स्फीति नियंत्रण नीतियों को मुक्ति दिला कर समष्टि आर्थिक स्थिरता के लाभों को और बढ़ाया जा सके; और
- ''आधार'' के विधिक आधार को अधिक बल प्रदान कर जाम (जनधन-आधार-मोबाइल) की पिछली समीक्षा में चर्चित त्रिविध-युक्ति-युति को प्रभावी रूप प्रदान करना।

1.12 यदि ऐसी कार्यसूची की सरकार ने 2016 के आरंभ में घोषणा की होती तो निश्चित रूप से इस पर अविश्वास ही होता। किन्तु एक वर्ष में ही यह सभी कार्य संभव हो गए हैं, वह भी प्राय: राजनीतिक सर्वानुमति के सहारे विधायी प्रयासों के माध्यम से।

1.13 इन बहुचर्चित बड़े सुधारों के अतिरिक्त अनेक छोटे-छोटे किन्तु दूरगामी संभावनाओं से परिपूर्ण कदम भी उठाए गए हैं। सरकार ने वस्त्र-परिधान क्षेत्र को सहायता प्रदान करने के ध्येय से कई कदमों वाला एक समुच्चय (पैकेज) घोषित किया है। यह कदम इस निर्यातोन्मुखी उद्योग को बढ़ावा देगा, बड़े स्तर पर रोजगार के अवसरों का सृजन करेगा और वह भी महिलाओं के लिए। भारतीय राष्ट्रीय भुगतान निगम NPCI) ने एकीकृत भुगतान पटल (UPI-यूपीआई) को सफलतापूर्वक प्रारंभ किया है। यह विभिन्न सेवातंत्रों पर समान रूप से कार्य करने वाली व्यवस्था भुगतान के डिजिटलीकरण और वित्तीय समाहन को प्रभावी बनाने में मोबाइल फोन की वास्तविक क्षमताओं को प्रभावी रूप प्रदान पर उपर्युक्त चर्चित 'JAM' (जनधन, आधार-मोबाइल) के मोबाइल घटक को सरकार के प्रशासन तंत्र की एक आधारिक इकाई के रूप में प्रतिष्ठित करेगा। साथ ही प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) व्यवस्था में अनेक सुधार लागू कर भारत को विदेशी निवेश पाने वाले सबसे बड़े देशों की पंक्ति में भी शामिल किया गया है।

1.14 इन सभी कदमों ने विश्व के धूमिल पड़े आर्थिक मंडल में भारतीय अर्थव्यवस्था को एक चमकते हुए सितारे की आभा प्रदान की है। अब भारत केवल तीव्रतम संवृद्धिमान बड़े देशों में से एक नहीं रह गया है, जहां स्फीति में कमी आ रही है, राजकोषीय एवं बाह्य संतुलनों में सुधार हो रहा है- यह उन इने गिने देशों में भी सम्मिलित है, जिन्होंने बड़े संरचनात्मक सुधार भी किए हैं। किंतु अभी भी समष्टि आर्थिक स्थिरता एवं

संवृद्धि की इस वास्तविकता तथा क्रम निर्धारक संस्थानों के चिन्तन में एक अन्तर दिखाई दे रहा है। इस अंतर के संभावित कारणों पर बॉक्स-1 में विस्तार से व्याख्या की गई है।

बॉक्स-1 : त्रुटिपूर्ण मानक? क्रमनिर्धरक संस्थाएं, चीन एवं भारत

पिछले कुछ वर्षों से क्रमनिर्धरक संस्थाओं की भूमिका पर बार-बार प्रश्न उठने लगे हैं। संयुक्त राज्य के वित्तीय संकट के समय बंधक आधारित निक्षेपों को AAA घोषित करने में उनकी भूमिका को लेकर बड़े प्रश्न उठे थे, क्योंकि उनकी आधारभूत परिसंपत्तियां स्वयं ही 'विशाक्त' थीं (इसका माइकेल लुइस ने अपनी रचना 'द बिग शॉर्ट' में वर्णन किया है)। साथ ही किसी वित्तीय संकट की आशंका का पूर्वाकलन कर पाने में किलता ने भी उन संस्थाओं के महत्व पर उंगली उठाई है। प्राय: किसी की भी क्रमिकता को घटना घटित होने के बाद ही कम किया गया है। दूसरे शब्दों में घोड़ों के भाग जाने के बाद ही अस्तवल के दरवाजे बंद किए गए हैं (IMF, 2010, क्रूग्मैन, सितंबर, 2015[2])।

किन्तु अधिक सामान्य स्थिति में भी उनकी भूमिका के मूल्यांकन पर ध्यान देना आवश्यक है। भारत के संदर्भ में नवंबर 2016 में स्टैंडर्ड एवं पूअर ने निम्न जीडीपी और उच्च स्फीति के कारण इसकी क्रमिकता में कुछ भी सुधार करने की संभावना से इंकार कर दिया था। इस क्रमिकता तक पहुँचने की वास्तविक गणना अवधि तो कहीं अधिक जटिल होती है, परन्तु यह प्रश्न अवश्य उठता है कि क्या भारत द्वारा ऋण चुका पाने की असमर्थता की जोखिम का आंकलन केवल इन दो चरों के आधार पर कर लेना सही था?

पहले प्रतिव्यक्ति जीडीपी पर चर्चा करते हैं। यह एक बहुत धीमी गति से चलने वाला चर है। निम्न मध्यम आय वर्ग के देशों में 1970-2015 की अवधि में 2010 के स्थिर डालरों में प्रति व्यक्ति जीडीपी वृद्धि दर की औसत 2.45 प्रतिशत रही है। इस दर पर संवृद्धिशील गरीबतम निम्न मध्यम आय वर्ग के देशों को उच्च मध्यम आय वर्ग के स्तर पर पहुँचने में 57 वर्ष लग जाएंगे। यदि यह चर वास्तव में क्रमिकता निर्धरण की सटीक कसौटी है तो क्या गरीब देशों का यह कहना उचित नहीं होगा, ''कृपया इस वर्ष कष्ट न उठाएं, हमारी क्रमकिता का आंकलन करने के लिए तो अर्द्धशती के बाद आइए''?

अब राजकोषीय चरों पर बात करते हैं : क्रमिकता निर्धरक संस्थाएं प्राय: अनेक देशों के समूह बना कर उनके राजकोषीय चरों के व्यवहार का तुलनात्मक आंकलन करती हैं। अत: उदीप्यमान बाजार व्यवस्थाओं के समूह में राजकोषीय घाटा अनुपात 6.6 प्रतिशत (2014) तथा ऋण 67.1 प्रतिशत होने के कारण भारत एक 'बहिष्शायी' घोषित हो जाता है। (देखें तालिका-1, अध्याय-5)।

किन्तु वास्तव में भारत उन देशों से बहुत ही भिन्न हो सकता है, जिनके साथ इन संस्थाओं ने तुलना की है। यह तो सत्य है कि अनेक उदीप्यमान बाजार आज कठिनाइयों में उलझे हुए हैं। किंतु भारत सतत् संवृद्धि पथ पर अग्रसर है और यहां पिछले तीन वर्षों से राजकोषीय अनुशासन की प्रतिबद्धता के दर्शन हुए है। इसी से स्पष्ट हो जाना चाहिए कि आगामी वर्षों में यहां घाटा और ऋण अनुपातों में महत्वपूर्ण कमी आना सुनिश्चित है। यह परिदृश्य सत्य नहीं होने पर भी भारत का इतिहास बताता है कि इसने कभी अपने भुगतान दायित्वों से मुंह नहीं मोड़ा है। अत: यह अतिउच्च ''भुगतान की तत्परता'' वाला देश निश्चित ही कहीं उच्चतर ऋण वहन कर सकता है (Reinhart, Rigoff and Savastano, 2013)।

रेखाचित्र : साख जीडीपी अनुपात और जीडीपी की संवृद्धि : चीन और भारत और S&P द्वारा प्रदान की गई क्रमिकताएं

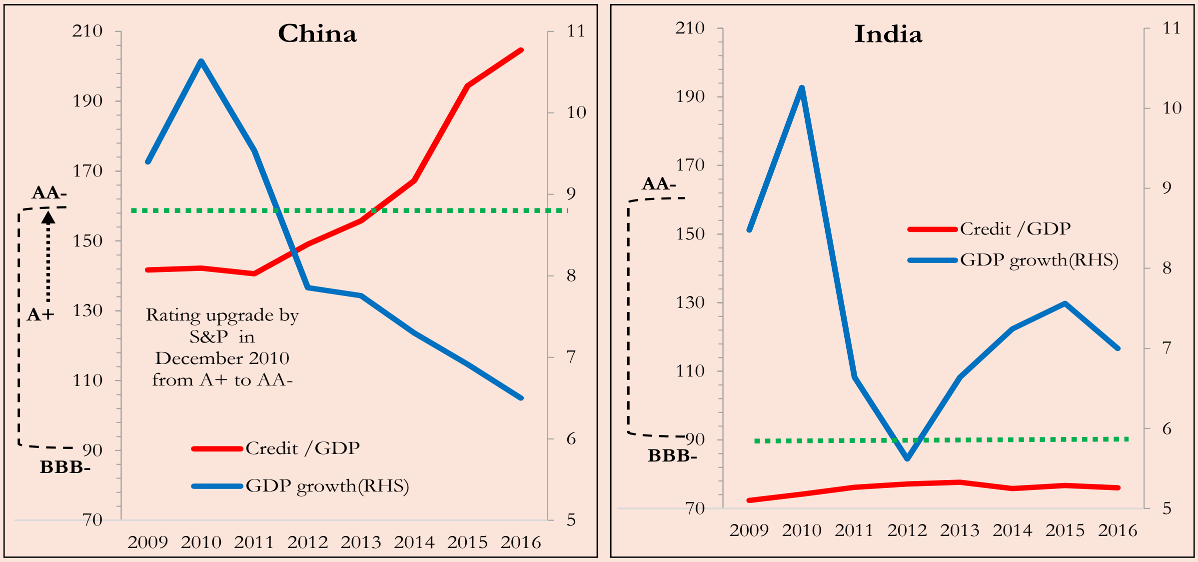

स्रोत : WDI और S&P 2016 के भारत के साख के आंकड़े RBI और Credit Suisse से 2016 के चीन के आंकड़े सकल सामाजिक वित्तीयन (TSF) के Bank of International Settlements से प्राप्त 2015 के स्टॉक को जोड़कर आंकलित किए गए हैं।

2 http://krugman.blogs.nytimes.com/2015/09/17/fear-the-rating-agencies/

भुगतान जोखिम के अन्य मापकों पर भी भारत अन्य देशों से बेहतर सिद्ध होता है। चीन से ही तुलना करें। वर्ष 2009 में चीन ने अपना एतिहासिक साख प्रसार प्रारंभ किया था, जो अभी तक साख जीडीपी अनुपात में 63 प्रतिशत की अभूतपूर्व वृद्धि कर चुका है, यह तो भारत के समस्त जीडीपी स्टॉक से कहीं अधिक है (देखें रेखाचित्र)। इसी समय में चीन की संवृद्धि दर भी 10 से घटकर 6.5 प्रतिशत रह गई है।

तो फिर S&P की इस केंची आकार को लेकर क्या प्रतिक्रिया रहीं? शेष विश्व तो इसे चीन तथा समूचे संसार के लिए गंभीर आर्थिक संकट की आशंका मान रहा है। दिसंबर 2010 में इसने चीन की क्रमिकता का A+ से AA- तक उन्नयन कर डाला। भले ही उसके बाद से साख में विस्फोटक वृद्धि और संवृद्धि दर में भारी गिरावट आई हो पर S&P ने क्रमिकता में परिवर्तन का कष्ट नहीं उठाया है।

इसके विपरीत, भारत की क्रमिकता को बहुत निम्न स्तर, BBB पर अटकाया हुआ है, भले ही 2014 से संवृद्धि और समष्टि आर्थिक स्थिरता में नाटकीय सुधार हुए हों।

इन विपरीत व्यवहारों के कारण यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या क्रमिकता निर्धरण आर्थिक दृष्टि से सटीक कार्यविधि द्वारा निर्धरित होती भी हैं?

1.15 किन्तु और बहुत कुछ करना बाकी है। वर्ष 1991 के बाद तो विशेष रूप से भारत अपने आपको ''माइबाप सरकारवाद'' से दूर हटाता जा रहा है और इसने अपने अर्थप्रबंधन में बहुत बड़े सुधार किए हैं। किन्तु फिर अध्याय-2 में किए गए लेखेजोखे से स्पष्ट है कि संवृद्धि, रोजगार और सामाजिक न्याय की अपनी अभिलाषाओं की प्राप्ति हेतु देश को अभी बहुत कुछ करना है। तीन बड़ी चुनौतियां : दक्षताहीन पुन:वितरण में कमी; आवश्यक सेवाओं की आपूर्ति सुधारने और बाजारों के नियमन की सरकार की क्षमताओं में वृद्धि तथा संपदाधिकारों की सुरक्षा के प्रति ढुलमुलपन त्याग कर बाजार को अंगीकार करने की दिशा में विचार एवं विमर्श तंत्रों में बड़े परिवर्तन की आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में इन चुनौतियों का सामना करना मात्र निहितस्वार्थों पर नियंत्रण की राजनीतिक इच्छा शक्ति का प्रश्न नहीं है।

1.16 इन संरचनात्मक चुनौतियों के तुल्य नीतिगत कदम भी हैं। अध्याय-9 में भारत के व्यापक पुन:वितरण के प्रयासों की समीक्षा की गई है। केवल केन्द्रीय सरकार ही 950 केन्द्रीय एवं केन्द्र प्रायोजित योजनाएं एवं उपयोजनाएं संचालित कर रही है और उन पर जीडीपी के लगभग 5 प्रतिशत अंश का व्यय हो रहा है। स्पष्टत: इनमें से अनेक के लिए तर्काधर विद्यमान है। किन्तु उनके लाभ अपेक्षित हितलाभी वर्ग तक प्रभावी रूप से पहुँचने को लेकर कुछ संदेह बने रहते हैं। अर्थात उनकी 'लक्षिता' को लेकर अन्तर्भूत सीमाएं या त्रुटियां भी बनी हुई हैं।

1.17 पिछले कुछ वर्षों में सरकार ने पुन:वितरण तंत्र की दक्षता को सुधारने की दिशा में बहुत बड़ी प्रगति की है। इस दिशा में उठाए गए महत्वपूर्ण कदमों में सम्मिलित हैं आधार कानून पारित करना-जो JAM के लक्ष्य की सिद्धि की ओर एक बड़ा कदम है (इसी संदर्भ में उर्वरकों की सब्सिडी को लेकर प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण का प्रयोगात्मक प्रकल्प एक बहुत ही नई दिशा की ओर संकेत कर रहा है)। साथ ही अनेक क्षेत्रें में उपभोक्ता द्वारा देय कीमतें अभी बाजार कीमतों के निकट पहुँचनी बाकी है। जीएसटी को लेकर भी आवश्यक वस्तुओं/पदार्थों पर करों की दर को न्यून बनाए रखना और (वह भी अनेक अति उच्च दरों वाली जटिल कर रचना का निर्माण किए बिना, जिससे दीर्घकालिक सेवा दक्षता कुंठित हो सकती है) अपने आप में एक चुनौती है।

1.18 अब राज्यों की क्षमताओं की बात पर आते हैं। स्वास्थ्य, शिक्षा आदि आवश्यक सेवाएं मुख्यत: प्रांतीय सरकारों के अधिकार-दायित्व क्षेत्र का अंश है और इनकी आपूर्ति अभी त्रुटिपूर्ण ही बनी हुई है। नियामक संस्थान अभी अपनी राह खोजने में लगे हैं। यहां सबसे गहन समस्या तो यह है : निवेश एवं प्रतिभाओं को आकर्षित करने में तो हमारे देश के विभिन्न प्रांतों के बीच स्पर्धापूर्ण संघवाद बहुत ही उत्कृष्ट एवं मुखर दिखाई देता है, किन्तु आवश्यक सेवाएं प्रदान करने के मामले में यह स्पर्धा बहुत क्षीण रह जाती है। कुछ महत्वपूर्ण अपवाद भी रहे हैं- जैसे कि छत्तीसगढ़ में सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सुधार, मध्य प्रदेश में कृषि में संप्रेरणाओं का संचार, गुजरात में विद्युत क्षेत्र के सुधार (जिनसे आपूर्ति और लागत की उगाही में सुधार हुए हैं), तमिलनाडु में सामाजिक कार्यों की दक्षता वृद्धि और अभी हाल ही में हरियाणा को 'घासलेट मुक्त' बनाने हेतु प्रौद्योगिकी के प्रयोग आदि। किन्तु स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे

प्रतिमान नहीं उभर पाए है, जिनका देश भर में प्रसार हो सके और जिन्हें अपनाना आकर्षक राजनीतिक सुअवसरों का रूप धारण कर सके। स्पर्धी लोक लुभावन का स्पर्धी सार्वजनिक सेवा प्रदाय स्वरूप भी होना ही चाहिए।

1.19 इसी प्रकार अनेक दशकों से निजी क्षेत्र एवं संपदाधिकारों को लेकर राजनीतिक स्तर पर अस्पष्टता निवारक चिन्तन का कोई सशक्त प्रमाण नहीं मिल पा रहा है। इस अस्पष्टता के परिणाम हमें यहां दिखाई पड़ते हैं : युक्तियुक्त विनिवेश में; दोहरी तुलनपत्र व्यवस्था जारी रहने में; निगम एवं बैंक क्षेत्र की अतिशय ऋण ग्रस्तता में; जो भार के विभाजन के विषय में फैसले करना कठिन बना देती है (विशेष कर जहां निजी क्षेत्र को कुछ छूट देने की बात हो), पिछली तिथि से कर लागू करने के अधिकार (भले ही इनके कारण सरकार निरंतर न्यायिक मामलों में उलझी रही हो सरकार ने इस विषय में अपना भावी मंतव्य तो स्पष्ट कर दिया है); कृषि, जहां बौद्धिक संपदाधिकार संरक्षण का प्रश्न (बीजों को लेकर) बना हुआ है; नागर विमानन क्षेत्र में सुधार की आवश्यकता-जहां बार-बार उदारवाद और हस्तक्षेप के उतार-चढ़ाव दिखाई देते हैं; उर्वरक क्षेत्र, जहां सार्वजनिक क्षेत्र के अत्यंत दक्षताहीन कारखानों का पुन:प्रतिष्ठापन ही उन्हें बंद करने की अपेक्षा अधिक आकर्षक विकल्प प्रतीत होता है; बहुत पुराने पड़ गए आवश्यक वस्तु अधिनियम के अंतर्गत बार-बार कृषि उत्पादों के लिए स्टॉक सीमाओं में फेर-बदल और नियंत्रण किसानों सहित संपूर्ण कृषि क्षेत्र में अनिश्चितता का वातावरण बनाए रखते हैं।

1.20 भले ही यथास्थिति बनाए रखने के कितने ही 'उचित कारण' हो, ये सभी उदाहरण स्पष्ट समझा रहे हैं कि अगर अधिक गहरे हस्तक्षेपवाद से बचने जितना ही बाजार को अंगीकार कर लिया जाए, संपदाधिकारों का संरक्षण किया जाए, उन सार्वजनिक उपक्रमों से मुक्त पा ली जाए जो अर्थक्षम नहीं बचे हैं; तुलनात्मक लाभहीनता के क्षेत्रें से निकला जाए और विभिन्न आर्थिक कर्ताओं को बाजार कीमतों का सामना करने दिया जाए, ये सब नीतिगत उपाय संपूर्ण रूप से अभी अपनाए नहीं गए हैं।

1.21 हमारी आन्तरिक कार्यसूची अभी पूरी नहीं हो पायी है और अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में आ रहे बदलाव नई चुनौतियां प्रस्तुत करने लगे हैं। ब्रेक्जिट और अमेरीकी चुनाव परिणाम के प्रभाव अभी अनिश्चित हैं किन्तु इनमें पृथकतावाद एवं स्थानिकतावाद की दिशा में एक संवाद विमर्श स्तरीय अन्तरण की आशंकाएं अवश्यक उभर रही हैं। विश्व भर के उन्नत देशों में अब महायुद्धोपरांत विकसित वस्तुओं और सेवाओं, विशेष कर श्रम शक्ति, संबंधी वैश्वीकरण की आम सहमति और बाजार आधारित आर्थिक संगठन पर आज गंभीर संकट के बादलों की काली छाया मंडराने लगी है।

1.22 भारत, जो एक देर से 'संसृतिपथगामी' बना है, जिसका जीवन स्तर अभी अग्रणी देशों से बहुत निम्न है, के लिए तो यह घटनाचक्र बहुत से प्रभावों से भरा हुआ है। भारत की अर्थव्यवस्था के 8-10 प्रतिशत दर से संवृद्धि कर पाने की महत्वाकांक्षा की संपूर्ति के लिए निर्यात में निरंतर 15-20 प्रतिशत की वृद्धि आवश्यक होगी। किन्तु भारत के व्यापार सहयोगियों द्वारा निर्बाध व्यापार के पथ से विचलित होने पर तो हमारी संवृद्धि विषयक आकांक्षाएं बहुत खतरे में पड़ जाएंगी (देखें बॉक्स-2)।

1.23 इन आन्तरिक एवं बाहरी संरचनात्क परिवर्तनों के साथ ही हमें समष्टि स्तर को प्रभावित करने वाले कारकों को भी ध्यान में रखना होगा। जून 2014 के शिखर स्तर से पैट्रोलियम कीमतों में कमी के बाद से आय में उछाल दिखाई दिया है। सरकार द्वारा अपनाई गई नीतियों ने निजी उपभोग को प्रोत्साहित किया है, सार्वजनिक निवेश का मार्ग सुगम बनाया है, तथा कमजोर विदेशी मांग एवं निम्न आंतरिक कृषि उत्पादन के थपेड़े झेल रही अर्थव्यवस्था को स्थिरता प्रदान की है। किन्तु इस वर्ष अंतर्राष्ट्रीय तेल कीमतों में फिर उभार आ रहा है तथा इससे हमारी अर्थव्यवस्था की अल्पकालिक गतिशीलता कुछ कुंठित होने की आशंका है। वर्षों से नासूर की भांति पीड़ा दे रही दोहरी तुलन-पत्र प्रणाली के मारे निजी निवेश में भी शिथिलता दिखाई दे रही है (देखें अध्याय-4)। अब निजी निवेश तथा निर्यात में निरंतर वृद्धि को आर्थिक संवृद्धि के प्रमुख एवं चिरंतन स्रोत के रूप में प्रतिष्ठापित करना एक महती समष्टि आर्थिक चुनौती का रूप धारण कर रहा है।

1.24 कुल मिलाकर पिछले कुछ वर्षों से संरचनात्मक

सुधारों की दिशा में किए गए सुधारों को आधार बना उन पर और तीव्र गति से नवनिर्माण करना तथा अभी तक अपूर्ण कार्यों को पूरा करना आवश्यक हो गया है। विमुद्रीकरण के पश्चात् एवं निरंतर प्रस्तुत दीर्घकालिक चुनौतियों के चलते उस उत्कर्ष बिंदु से जुड़े संयोगों को खो बैठने को लेकर उठ रही आशंकाओं का सुनिश्चित रूप से निवारण करना आवश्यक हो गया है।

II. वैश्विक परिप्रेक्ष्य

1.25 तीन बाह्य घटनाक्रम भारत के लिए महत्वपूर्ण हैं। अल्पकाल में विश्व भर में ब्याज की दरों का परिदृश्य अमेरिकी चुनावों तथा उसके परिणाम स्वरूप अमेरिकी राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों विषयक अपेक्षाओं के कारण भारत के पूंजी प्रवाहों और विनिमय दरों को प्रभावित करेगा। बाजार पहले ही उन्नत देशों में सत्तातंत्र में हो रहे परिवर्तनों का आकलन-समंजन करने में लगा है, उसे अमेरिकी समष्टि आर्थिक नीतियों, विशेषकर राजकोषीय प्रोत्साहन और गैरपारंपरिक मौद्रिक नीति से सुनिश्चित रूप से पलायन को लेकर बहुत उत्साहवर्धक आशाएं हैं। बीस वर्षों से निरंतर बाँड कीमतों में उछाल की प्रक्रिया और अवस्फीति एवं अवस्फीतिकारी अपेक्षाओं के पाश से शीघ्र मुक्ति अब निकट प्रतीत हो रही है।

1.26 दूसरे पटल पर वैश्वीकरण विषयक मध्यकालिक राजनीतिक संभावनाओं की बात आती है। अभी-अभी के घटना चक्र ने संभवत: विश्व की ''वैश्वीकरण हेतु राजनीतिक धारण क्षमता'' को बहुत प्रभावित कर दिया है। अल्पकाल में डालर की सबलता में वृद्धि और स्पर्धाशीलता का ह्रास संरक्षणवादी नीतियों को अति आकर्षक स्वरूप प्रदान कर सकता है। यह पहले ही व्यापक रूप से स्वीकार किए जा रहे रूझानों : शिथिल या ह्रासमान विश्व व्यापार (देखें बॉक्स-2 का रेखाचित्र) के संदर्भ में और महत्वपूर्ण हो जाता है। यह आ रहा बदलाव बॉक्स-2 में निरूपित भारत की निर्यात एवं संवृद्धि की संभावनाओं को प्रभावित किए बिना नहीं रहेगा।

1.27 तीसरा पटल है अमेरिकी घटनाक्रम, डालर की सुदृढ़ता और उनके चीन की मुद्रा एवं विनिमय नीतियों पर प्रभाव का। यदि चीन अपनी अर्थव्यवस्था को पुन: संतुलित करने में सफल रहता है तो इसके भारत एवं शेष विश्व पर सकारात्मक प्रच्छालन प्रभाव होंगे। दूसरी ओर युवान में ह्रास भले ही डालर के कारण हो, वह चीन में विद्यमान आन्तरिक भेद्यताओं के साथ मिलकर

बॉक्स-2 : पश्चिम की निर्बन्ध्ता विषयक राजनीति धारण क्षमता और भारत पर इसके प्रभाव

कभी टी एस इलियट ने कहा था कि 'मानवजाति बहुत अधिक वास्तविकता को सहन नहीं कर पाती' तो हाल ही का घटना चक्र बता रहा है कि विश्व अत्यधिक वैश्वीकरण को भी सहन कर पाने की स्थिति में नहीं है। इसका भारत के निर्यात पर क्या प्रभाव होगा?

पहले रेखाचित्र में 1870 से लेकर विश्व के व्यापार जीडीपी अनुपात अंकित किए गए हैं। इसके चार सोपान रेखांकित किए जा रहे हैं। वैश्वीकरण की दो बड़ी लहरें 1870-1914 और 1945-84 की अवधियों में चली थीं, अतिउग्र वैश्वीकरण का ज्वार 1985-2008 के बीच रहा (सुब्रमण्यम एवं केस्लर, 2014) तथा अन्त: महायुद्धकाल में एक अ-वैश्वीकरण का सोपान रहा है। आगे क्या होगा, ये प्रश्न तीन तीरों द्वारा पूछा जा रहा है, विश्व व्यापार में और आगे वैश्वीकरण होगा, अ-वैश्वीकरण होगा या फिर शैथिल्य का संचार होगा? इन तीनों संभावनाओं के भारत के निर्यात-आयात व्यापार और देश की संवृद्धि दर पर बड़े महती प्रभाव होंगे।

रेखाचित्र : वैश्वीकरण और विश्व (1870 से आजतक)

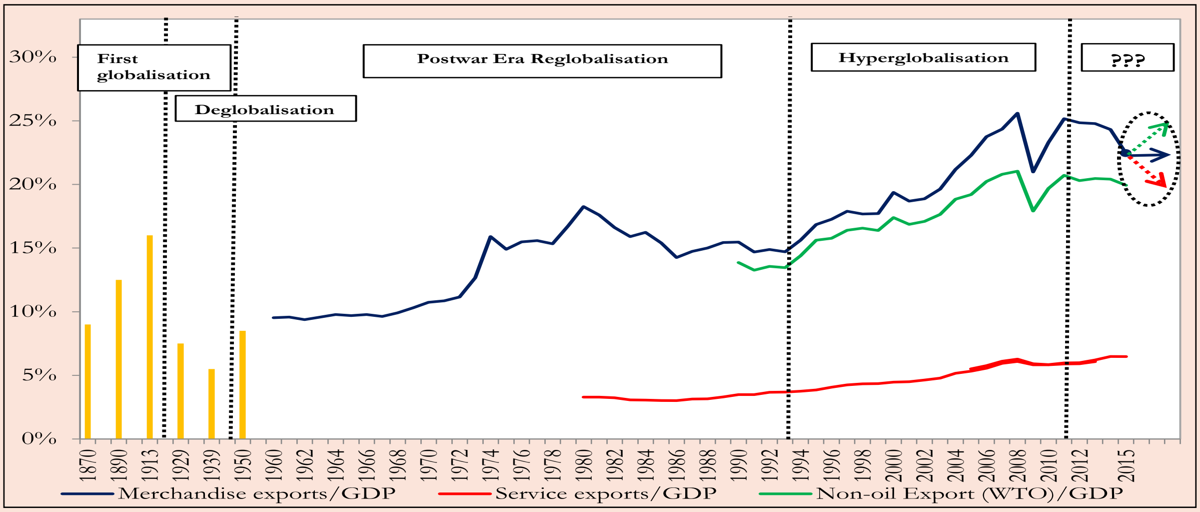

वर्ष 2003-2011 के उत्कर्षकाल में भारत की वास्तविक जीडीपी संवृद्धि की औसत दर 8.2 प्रतिशत रही और वास्तविक डालरों में वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यात की वार्षिक वृद्धि 20 से 25 प्रतिशत के बीच रही। अत: यह मानना उचित ही प्रतीत होता है कि अगले दशक में 8 प्रतिशत दर पर संवृद्धि का लक्ष्य रखने वाले भारत को अपने वस्तुओं और सेवाओं के निर्यात को 15 प्रतिशत दर पर अवश्य बढ़ाना होगा।

अब यह भी मान लेते हैं कि विश्व भविष्य में 3 प्रतिशत दर से संवृद्धिशील रहेगा। हम विश्व की वैश्वीकरण हेतु राजनीतिक धारण क्षमता को निर्यात जीडीपी अनुपात द्वारा परिभाषित कर रहे हैं। उसका नवीनतम आंकड़ा 21 प्रतिशत है। हम मान लेते हैं कि यह अनुपात भी स्थिर रहेगा (ध्यान रहे कि जैसा पिछले कुछ वर्षों में दिखाई दिया है, यदि व्यापार वृद्धि की दर जीडीपी से पिछड़ जाएगी, तो संतुलन स्तर पर धारण क्षमता अर्थात विश्व का निर्यात जीडीपी अनुपात वास्तव में कम हो जाएगा।)

निर्बंधता हेतु विश्व की राजनीतिक धारण क्षमता (वर्तमान एवं भावी)

	आज			10 वर्षों में परिवर्तन			
	विश्व	भारत	चीन	विश्व (स्थिर)	भारत	चीन	शेष विश्व नाम प्राय:
विश्व वस्तु निर्यात/विश्व जीडीपी	21.10%	0.40%	2.90%	0.00%	0.80%	1.40%	-2.10%
विश्व सेवा निर्यात/विश्व जीडीपी	6.10%	0.30%	0.40%	0.00%	0.50%	0.20%	-0.70%
वस्तु एवं सेवा निर्यात/विश्व जीडीपी	27.30%	0.60%	3.30%	0.00%	1.30%	1.50%	-2.80%
विश्व जीडीपी संवृद्धि विषयक मान्यताएं : विश्व (3%), भारत (8%), चीन (5%)							
निर्यात संवृद्धि मान्यताएं : विश्व (3%), भारत (15%), चीन (7%)							

***स्रोत:* समीक्षा की गणनाएं**

इन परिस्थितियों में उठने वाली समस्याएं ये हैं : केवल भारत की जीडीपी और निर्यात संवृद्धि विश्व निर्यात-जीडीपी अनुपात में 1.3 प्रतिशत बिन्दुओं को योगदान देगी। पिछले 6 वर्षों की दर पर चीन के निर्यात की वृद्धि (वास्तविक कीमतों पर 7 प्रतिशत वार्षिक) भी विश्व निर्यात-जीडीपी अनुपात में 1.4 प्रतिशत बिन्दुओं का योगदान देगी। दूसरे शब्दों में भारत को विश्व की वैश्वीकरण धारण क्षमता से टकराना होगा। यदि विश्व व्यापार जीडीपी अनुपात में कमी आई तो यह टकराव और भीषण हो जाएगा। चीन का प्रगति रथ चलते रहने पर उक्त भीषणता और प्रखर होगी।

भारत की दृष्टि से वैश्वीकरण धारण क्षमता केवल वस्तुओं नहीं सेवाओं के पटल पर भी महत्वपूर्ण है। विश्व का सेवा निर्यात जीडीपी अनुपात लगभग 6.1 प्रतिशत है। यदि भारत सक्रिय सेवा निर्यात के सहारे तीव्र संवृद्धि पाता है तो विश्व के सेवा निर्यात जीडीपी अनुपात में 0.5 प्रतिशत अंकों की वृद्धि संभव है। यह वैश्विक निर्यात का एक बहुत बड़ा अंश होगा। दूसरे शब्दों में, भारत की सेवा निर्यात वृद्धि विश्व की सेवा क्षेत्रीय धारणीय क्षमता की कड़ी परीक्षा लेगी। इसके विरूद्ध प्रतिक्रियाएं श्रम की गतिशीलता ही नहीं वरन् उन्नत देशों द्वारा 'बाह्य प्रापण' (बाहर से काम कराने-आउटसोर्सिंग) पर नियंत्रण प्रतिबंध का रूप धारण कर सकती हैं।

यह संभव है कि विश्व की भारतीय सेवाओं की धारण क्षमता उससे अधिक रहे जो चीन की वस्तुओं के प्रति थी। कारण यही है कि चीन का वस्तु निर्यात प्रसार कई दृष्टियों से असंतुलित था, उसके निर्यात आयातों से बहुत अधिक थे, वह उन्नत देशों को विनिर्मित वस्तुएं निर्यात कर रहा था और उनके अपने उत्पादन को कुप्रभावित कर रहा था, साथ ही वह विकासशील देशों से कच्चा माल आयात करता था। यदि उसने विकसित देशों से कुछ मंगाया तो वह सेवा क्षेत्र का उत्पादन ही था।[3] परिणामस्वरूप चीन को निर्यात ने उन्नत देशों में बहुत कम निर्यात प्रेरित रोजगार के अवसरों का सृजन किया है, जबकि विनिर्माण क्षेत्र में बड़े स्तर पर रोजगार हानि हुई है। जो रोजगार वृद्धि हुई वह भी उच्चस्तरीय (वित्त आदि) सेवाओं में हुई थी, जो विनिर्माण से विस्थापित श्रमिकों की पहुंच से बाहर थे।

इसके विपरीत, भारत के निर्यात की वृद्धि अधिक संतुलित हो सकती है। भारत में चालू खाते पर निरंतर घाटा चल रहा है, अतिरेक नहीं। भारत के सेवा निर्यात से भी उन्नत देशों में कुछ कर्मी विस्थापित होंगे, किन्तु उन्हें वैकल्पिक रोजगार पाना सरल होगा, वे और आधुनिक सेवाओं की ओर प्रवृत्त हो जाएंगे (जैसे कि अधिक उन्नत स्तर पर कंप्यूटर प्रोग्रामिंग आदि)। किन्तु इसका दूसरा पक्ष भी है : भारतीय स्पर्धा का प्रभाव उन्नत देशों की कौशल संपन्न श्रमशक्ति पर पड़ेगा और उसकी राजनीतिक स्तर पर आयात विरोध के आयोजन की क्षमता भी अधिक होती है।

कुल मिलाकर उन्नत देशों में वैश्वीकरण के विरूद्ध प्रतिक्रिया और चीन की अपनी अर्थव्यवस्था को पुन: संतुलित करने में कठिनाइयां भारत की आर्थिक संभावनाओं पर विपरीत प्रभाव डाल सकती हैं। आने वाले वर्षों दशक भर तो अवश्य उन पर ध्यान देना होगा।

---

3 पूंजीगत पदार्थों का आयात एक अपवाद रहा है।

ऐसी अव्यवस्था को सृजित कर देगा कि भारत उससे अछूता नहीं रह पाएगा (देखें अनुच्छेद VI 'ख')। मुद्रा को लेकर चीन को कम से कम दो कठिन संतुलन साधने होंगे। आन्तरिक रूप से करेंसी में ह्रास (और साख प्रसार) अल्पकाल में अर्थव्यवस्था को सहारा दे सकते हैं, किन्तु उससे न केवल पुन:संतुलन आगे की ओर खिसक जाएगा, बल्कि मध्यकालिक चुनौतियां भी और अधिक गंभीर रूप धारण कर लेंगी। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पूंजी पलायन की प्रतिक्रिया स्वरूप करैंसी का क्षरण होने देना व्यापार में टकराव पैदा करेगा। साथ ही पूंजी नियंत्रण प्रत्यक्ष विदेशी निवेश एफडीआई को हतोत्साहित करेंगे और युवान को विश्व की सुरक्षित करेंसी के रूप में स्थापित करने की चीनी महत्वाकांक्षा पर आघात होगा। अपनी अंतर्निहित भेद्यताओं के कारण आज चीन वह देश बन गया है, जिसमें वैश्विक अर्थव्यवस्था में भीषण व्यावधान उत्पन्न करने की बहुत क्षमता है।

III. वर्ष 2016-17 के घटनाक्रम की समीक्षा

(क) जीडीपी और मुद्रास्फीति

1.28 पिछली समीक्षा की प्रस्तुति के बाद के 11 महीनों में भारतीय अर्थव्यवस्था ने समष्टि आर्थिक स्थिरता की दिशा में अपनी उपलब्धियों का निरंतर पोषण है।

1.29 वर्ष के पूर्वार्द्ध में वास्तविक जीडीपी संवृद्धि आर्थिक समीक्षा 2015-16 के पूर्वाकलन 7.0-7.5 प्रतिशत की निम्न सीमा के अधिक निकट 7.2 प्रतिशत रही। यह 2015-16 के उत्तरार्द्ध की दर 7.6 प्रतिशत से निश्चित रूप से कम थी (रेखाचित्र 1क)। समस्या का मुख्य स्रोत रहा अचल निवेश। इसमें काफी कमी आई, फर्मों की विषादग्रस्त तुलनपत्र अवस्था के उनकी निवेश व्यय योजनाओं पर गहरे प्रभाव रहे। सकारात्मक पक्ष पर सरकार द्वारा सातवें वेतन आयोग की सिफारिशें लागू करने के निर्णय (सरकारी उपभोग व्यय में वृद्धि) से अर्थव्यवस्था में व्यय पक्ष में सुधार हुआ। साथ ही विकसित देशों की मांग में सुधार के कारण निर्यात में चिरप्रतीक्षित वृद्धिक्रम में भी त्वरण के चिन्ह दिखाई देने लगे। सामान्य जीडीपी सम्मानपूर्ण स्तर पर पहुँच गई और 2015-16 के पूर्वार्द्ध जैसी तीखी एवं चिन्ताकारी गिरावट की प्रवृत्तियों से मुक्ति मिल गई (देखें रेखाचित्र 1ख)।[4]

1.30 वर्ष 2016-17 के पूर्वार्द्ध में क्षेत्रवार संवृद्धि निष्पादन की विशेषताएं ये रही : (i) औद्योगिक एवं गैर सरकारी सेवा क्षेत्रें में कुछ शिथिलता; (ii) बेहतर मानसून के सहारे कृषि संवृद्धि में सुधार; और (iii) लोक प्रशासन और प्रतिरक्षा सेवाओं में अच्छी संवृद्धि (कुल मिलाकर उन्नयकारी एवं दमनकारी कारकों ने परस्पर संतुलन प्राय: स्थापित कर लिया है और इस

रेखाचित्र 1क : सकल मूल्यवृद्धि और जीडीपी संवृद्धि (स्थिर कीमतों पर)

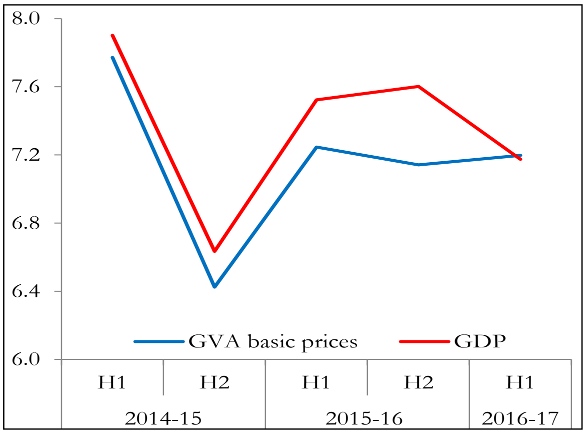

स्रोत: सीएसओ

रेखाचित्र 1ख : सकल मूल्यवृद्धि और जीडीपी संवृद्धि (चालू कीमतों पर)

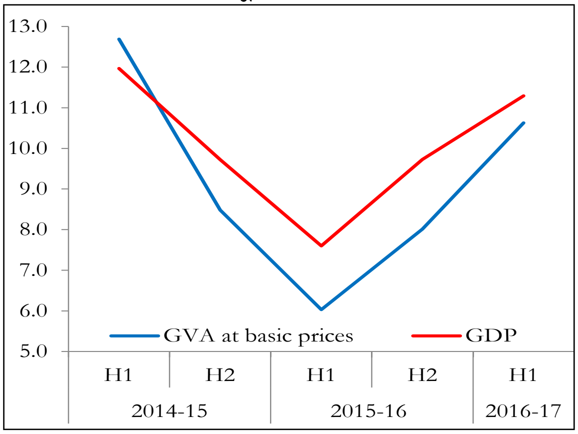

स्रोत: सीएसओ

[4] सामान्यत: चालू कीमतों पर जीडीपी संवृद्धि में नीतिनिर्माताओं की विशेष रूचि नहीं होती। किन्तु जब जीडीपी 'अपस्फायक' (deflator) के आंकलन में असामान्य मापन की अनिश्चिता आ जाए तो चालू कीमतों पर संवृद्धि वास्तविक गतिविधियों के विषय में अतिरिक्त जानकारी अवश्य सुलभ करा देती है।

रेखाचित्र 2 : थोक कीमत सूचक एवं उपभोक्ता कीमत सूचक के अनुसार स्फीति

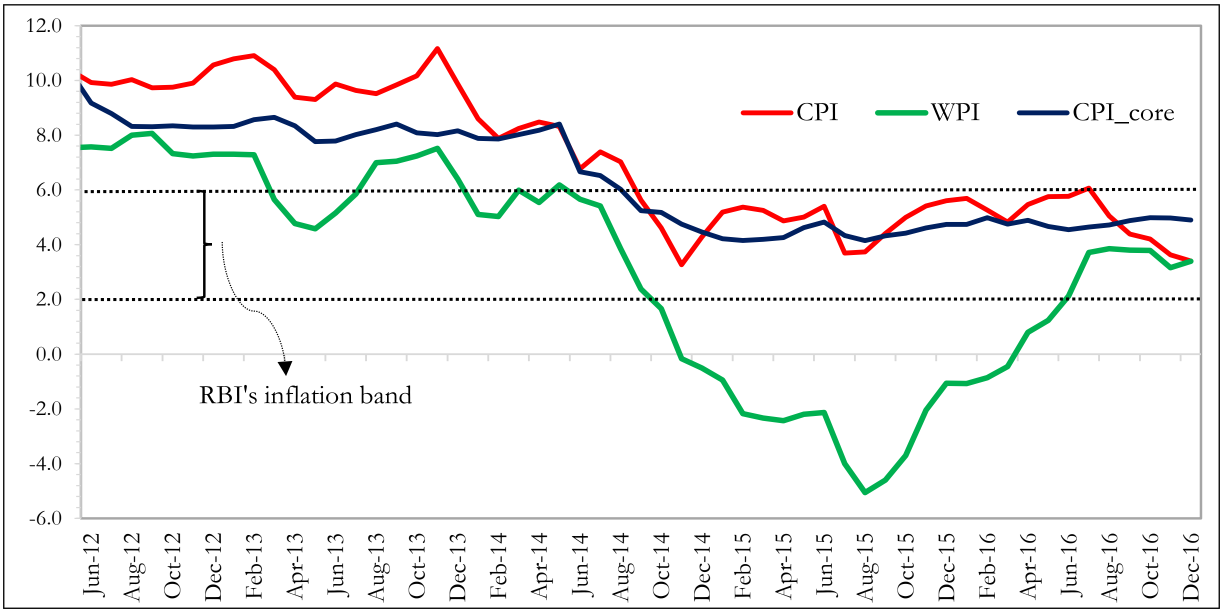

स्रोत: **सीएसओ**

प्रकार सकल मूल्य वृद्धि में संवृद्धि का मान 7.2 हो गया, जो 2015-16 के उत्तरार्द्ध के मान (7.1 प्रतिशत) के समान प्रायः ही था (देखें रेखाचित्र-1क))।

1.31 इस वर्ष मुद्रा स्फीति के दो विशेष लक्षण रहे हैं (रेखाचित्र-2)। उपभोक्ता कीमत सूचक CPI की नई श्रृंखला, जिसके अनुसार अप्रैल-दिसंबर 2016 की अवधि में औसत स्फीति 4.9 प्रतिशत थी, में जुलाई के बाद से निरंतर गिरावट आ रही है। उसी समय यह स्पष्ट संकेत मिलना प्रारंभ हो गए थे कि खरीफ की फसल अच्छी होगी और दालों का उत्पादन विशेष रूप से प्रचुरतापूर्ण होगा। दालों की कीमत में कमी का CPI स्फीति में गिरावट में बड़ा योगदान रहा है, यह दिसंबर के अंत तक घटकर 3.4 प्रतिशत रह गई है।

1.32 दूसरी विशेषता थोक कीमत सूचक WPI आधारित स्फीति मापक की दिशा का परिवर्तन है। यह अगस्त 2015 के (-) 5.1 प्रतिशत बढ़कर दिसंबर 2016 के अंत तक 3.4 प्रतिशत हो गई थी (देखें रेखाचित्र-2)। अब WPI और CPI के बीच की वह खाई, जो जीडीपी मापन में एक गंभीर समस्या का करण बन रही थी, अब काफी संकीर्ण रह गई है (इसके विषय में 2015-16 के वर्ष मध्य आर्थिक विश्लेषण (MYEA) के बॉक्स-3 में चर्चा की गई थी)। अन्तस्थ रूप से स्फीति में अधिक स्थिरता रही है, यह इस वर्ष अभी तक 4.5 से 5 प्रतिशत के बीच रही है।

1.33 अपेक्षा है कि पूरे वर्ष भर CPI स्फीति का स्तर रिजर्व बैंक द्वार लक्षित 5 प्रतिशत से कम ही रहेगा, इसमें विमुद्रीकरण का सहायक प्रभाव भी झलक रहा है।

(ख) बाह्य क्षेत्र

1.34 इसी प्रकार बाह्य क्षेत्र की दृष्टि से भी स्थिति सुदृढ़ दिखाई दे रही है। 2016 के अंत में विशाल आकार की गैर-नागरिक विदेशी मुद्रा जमाओं का सफलतापूर्ण भुगतान हो चुका है तथा अमेरिकी चुनाव और विमुद्रीकरण संबंधित अस्थिरता पर भी पार पाया जा चुका है। चालू खाते का घाटा वित्त वर्ष 2017 के पूर्वार्द्ध में घटकर जीडीपी का 0.3 प्रतिशत रह गया है। जनवरी 2016 के $350 बिलियन से बढ़कर दिसंबर 2016 में विदेशी मुद्रा भंडार $360 बिलियन के अच्छे स्तर पर पहुँच गए है। यह सुरक्षित कोष की पर्याप्तता के मानक स्तर से कहीं अधिक है। वित्त वर्ष 2016 के प्रत्यक्ष विदेशी मुद्रा प्रवाह जीडीपी के 1.7 प्रतिशत थे। उनका वित्त वर्ष 2017 के पूर्वार्द्ध में 3.2 प्रतिशत हो जाने का भी भुगतान शेष की सुखद स्थिति में योगदान रहा है (देखें रेखाचित्र 3क से 3घ तक)।

1.35 अप्रैल-दिसंबर 2016 में पूर्ववर्ती वर्ष की इसी अवधि की तुलना में व्यापार घाटे में 23.5 प्रतिशत की कमी आई। वित्त वर्ष के पूर्वार्द्ध में इसका मुख्य कारण आयात

रेखाचित्र 3क : चालू खाता संतुलन (जीडीपी का प्रतिशत)

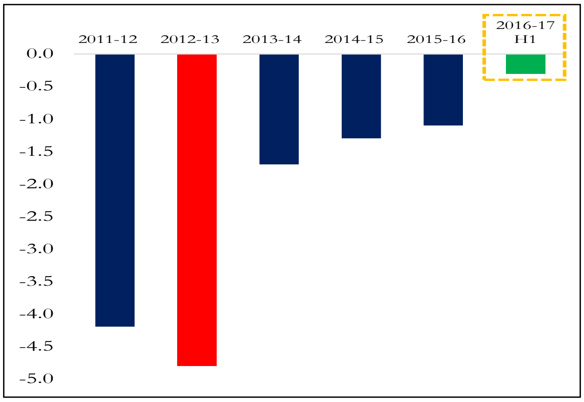

रेखाचित्र 3ख : विदेशी मुद्रा भंडार (अमेरिकी $ बिलियन)

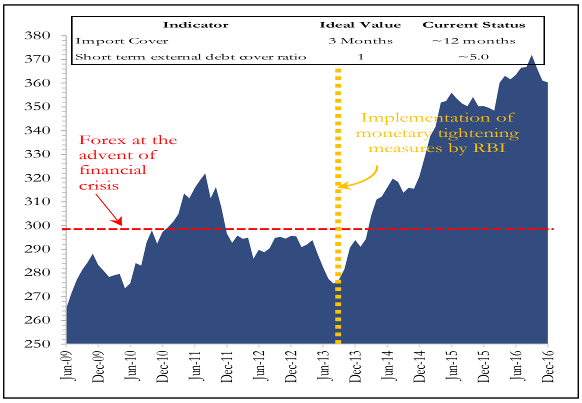

रेखाचित्र 3ग : पूंजी प्रवाहों के मुख्य घटको की प्रवृत्तियां ($बिलियन)a*

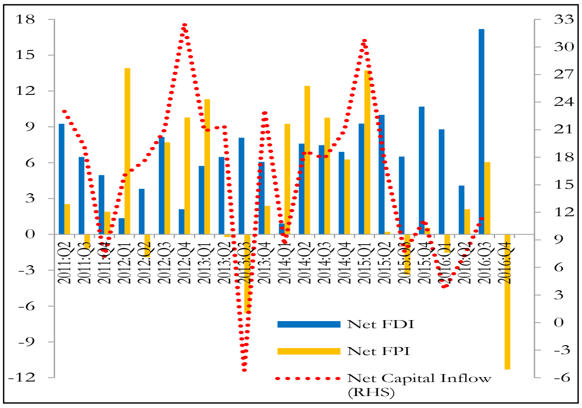

रेखाचित्र 3घ : NEER, REER और $विनिमय दर सूचक (2010=100)

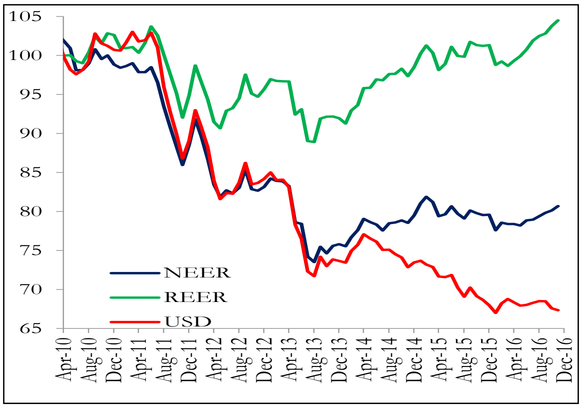

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक, इन सभी चित्रों में कैलेंडर वर्षों का प्रयोग किया गया है।

में गिरावट का निर्यात की कमी से कहीं अधिक तीखा रहना था। किन्तु, दिसंबर में निर्यात-आयात में दीर्घप्रतीक्षित सुधार आना आरंभ हो गया और इनमें 5 प्रतिशत से अधिक दर पर वृद्धि होने लगी (रेखाचित्र 4(क))। निर्यात में सुधार का संबंध विश्व अर्थव्यवस्था में हो रही प्रगति से प्रतीत हो रहा है (यह अमेरिका और जर्मनी में बेहतर संवृद्धि का परिणाम है)। आयात पक्ष पर अंतर्राष्ट्रीय तेल कीमतों में नर्मी की प्रक्रिया समाप्त हो चली है और अल्प से मध्यम काल में ये कीमतें आयात के सकल खाते पर अपना प्रभाव दिखाएंगी।

रेखाचित्र 4क : आयात एवं निर्यात परिमाण (गैर तेल, गैर स्वर्ण) संवृद्धि सूचक (%) त्रैमासिक

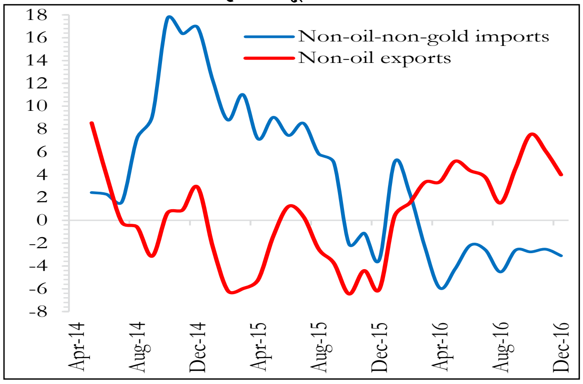

स्रोतः **DGCIS तथा समीक्षा गणनाएं**

रेखाचित्र 4ख : गैर साधन सेवा निर्यात संवृद्धि (प्रतिशत)

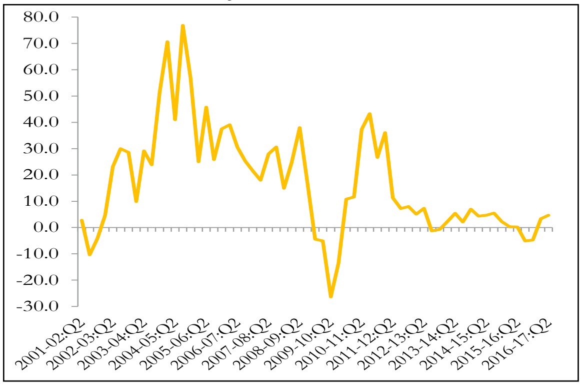

स्रोतः **RBI और समीक्षा गणनाएं**

रेखाचित्र 5 : निजी धन प्रेषण
($बिलियन)

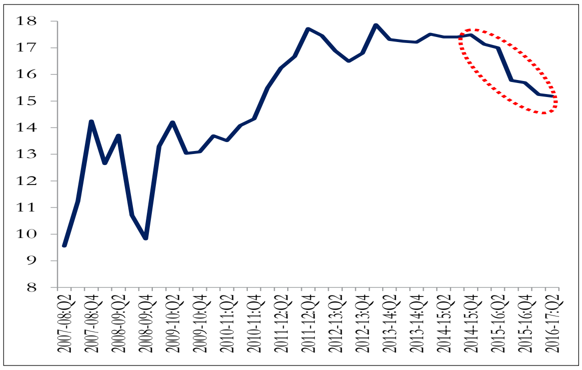

स्रोतः **RBI**

1.36 यही नहीं, पूर्वार्द्ध में सेवा क्षेत्र का निवल अतिरेक कम होने लगा है, सॉफ्टवेयर सेवाओं की निर्यात दर धीमी पड़ रही है और वित्तीय सेवाओं का निर्यात कम हो रहा है (रेखाचित्र 4(ख))। निवल निजी धन प्रेषण में वर्ष 2015-16 की इसी अवधि की तुलना में 2016-17 के पूर्वार्द्ध में $4.5 बिलियन की कमी आई है। इसमें कुछ प्रभाव तेल कीमतों की कमी के कारण खाड़ी क्षेत्र से आवकों में कमी का भी रहा है (रेखाचित्र-5)।

(ग) राजकोषीय

1.37 राजकोषीय क्षेत्र में कोई अप्रत्याशित रूझान नहीं दिखाई दिया है और सरकार की इस वर्ष जीडीपी के 3.5 प्रतिशत के स्तर पर राजकोषीय घाटा सीमित रखने की प्रतिबद्धता सफल होती दिखाई दे रही है। पिछले वर्ष अपनाए गए अधिक राजस्व सृजक कदमों से उत्पादन शुल्क और सेवाकर संग्रह में सुधार आया है। सबसे प्रमुख बात तो उत्पादन शुल्क संग्रह में आया बड़ा उछाल है, यह बजट अनुमान से भी अधिक है। इसका कारण तेल उत्पादों के उपभोग में भारी उछाल है। पिछले वर्ष की इसी अवधि की तुलना में वर्ष 2016-17 में इस उपभोग में 11.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। अप्रत्यक्ष कर संग्रह भी मजबूती भरा रहा है। इसका आंशिक कारण विमुद्रीकरण से तेल उपभोग को मुक्त रखना भी है। जिसके परिणाम स्वरूप तेल पदार्थों पर उत्पादन शुल्क पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं दिखाई दिया। अधिक व्यापक स्तर पर कर संग्रह का अपेक्षा से उच्चतर बने रहने का एक कारण पुराने नोटों की कर भुगतान के लिए वैधता बनी रहना भी था। टेलीफोन स्पैक्ट्रम की बिक्री और विनिवेश से प्राप्ति कम रहना (उनकी अति आशावादी पूर्वापेक्षा की तुलना में) तथा सार्वजनिक उद्यमों में चल रही दबाव की स्थिति के कारण लाभांश में कमी के परिणाम स्वरूप गैर कर राजस्व संकलन में कुछ बाधाएं आई हैं।

1.38 राज्य सरकारों के वित्त में भी कुछ तनावपूर्ण स्थिति बनी है (रेखाचित्र 6(ख))। पिछले कुछ वर्षों से राज्यों के समेकित घाटे में निरंतर वृद्धि चल रही है। यह 2014-15 के जीडीपी के 2.5 प्रतिशत से बढ़कर 2015-16 में 3.6 प्रतिशत हो गया था। इसका आंशिक दायित्व 'उदय (UDAY)' योजना पर भी है। बजट अनुमानों से इस वर्ष अवस्था में सुधार होने के संकेत

रेखाचित्र 6क : केंद्र का राजकोषीय घाटा (जीडीपी का %)

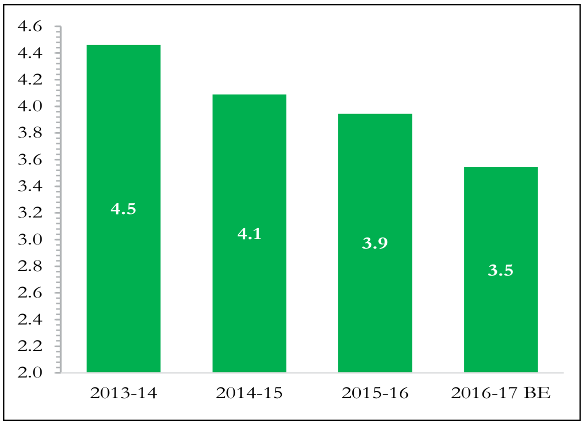

स्रोतः केन्द्र सरकार के बजट दस्तावेज

रेखाचित्र 6ख : राज्यों का राजकोषीय घाटा (जीडीपी का %)

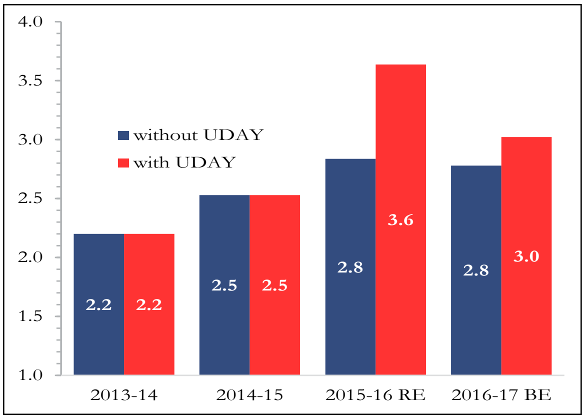

स्रोतः राज्य सरकारों के बजट दस्तावेज

रेखाचित्र 6ग : सामान्य सरकार का राजकोषीय घाटा (जीडीपी का %)

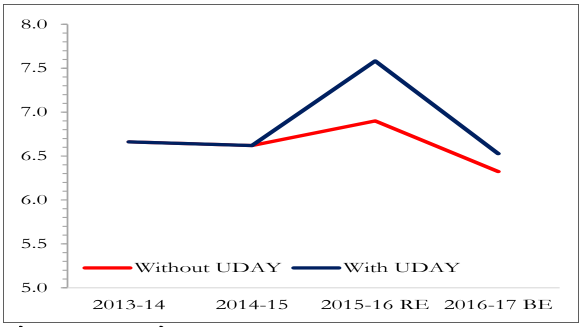

स्रोत: बजट दस्तावेज

मिल रहे हैं। किन्तु बाजारों के कुछ फिसल जाने की आशंकाएं भी हैं। यह संवृद्धि में कुछ शिथिलता की अपेक्षा, स्टैंप शुल्क संग्रह में कमी तथा राज्यों के अपने वेतन आयोगों की सिफारिशें लागू होने का मिलाजुला परिणाम होगा। इन्हीं के फलस्वरूप अक्टूबर 2016 के 45 बिन्दुओं की अपेक्षा जनवरी 2017 में राज्य सरकारों के बांड अन्य सरकारी निक्षेपों की तुलना में 75 आधारिक बिन्दुओं का अन्तराल दिखाने लगे हैं।

1.39 सामान्य प्रशासन स्तर पर उदय योजना के साथ भी और उसके बिना भी, राजकोषीय घाटे की स्थिति में सुधार ही दिखाई दिया है (देखें रेखाचित्र 6ग)।

IV. वर्ष 2016-17 की संभावनाएं

1.40 इस वर्ष की संभावनाओं/अपेक्षाओं का मूल्यांकन 8 नवंबर को उच्चमान के करैंसी नोटों के विमुद्रीकरण की घोषणा के परिप्रेक्ष्य में ही किया जाना चाहिए। किन्तु उससे पूर्व अल्पकाल में विमुद्रीकरण के संक्षोभ का विश्लेषण समझ लेना आवश्यक है (दीर्घकालिक लाभों की व्याख्या अध्याय-3 की जाएगी)।

1.41 विमुद्रीकरण अर्थव्यवस्था को तीन अलग-अलग विधियों से प्रभावित करता है। संभवत: ये हैं;

- यह सकल मांग संक्षोभ का कारण बनता है, क्योंकि मुद्रा की आपूर्ति में कमी आती है और निजी धन संपन्नता (विशेषकर अघोषित संपदा वालों की) में कमी आती है;
- जिन क्षेत्रकों में नकद का ही प्रयोग होता रहा हो वहां से आपूर्ति में बड़ी गिरावट का संक्षोभ (उदाहरण : कृषि उत्पादन पर दुष्प्रभाव की आशंका, क्योंकि मजदूरी प्राय: नकद दी जाती है); और
- अनिश्चितता का संक्षोभ - अनेक आर्थिक कर्ता नकद प्रवाह के स्तर पर प्रभाव और उसकी अवधि को लेकर आशंकित हो जाते हैं। नीति विषयक असमंजस का प्रभाव भी रहता है (संभवत: उपभोक्ता कुछ ऐच्छिक उपभोग स्थगित कर देते हैं तो उत्पादक भी निवेश व्यय घटाने को विवश हो जाते हैं)।

(क) नकदी एवं मुद्रा की आपूर्ति और ब्याज की दरों पर प्रभाव

1.42 विमुद्रीकरण के मौद्रिक प्रभाव बहुत ही असामान्य होते हैं। इससे मुद्रा के एक स्वरूप, नकदी, की आपूर्ति में भारी कमी आई है। किन्तु साथ ही मांग जमा रूपी स्वरूप में बड़ी वृद्धि भी हुई है। कारण यही है कि विमुद्रीकृत नोटों को बैंक खातों में जमा कराया जा सकता था। रेखाचित्र 7 में लाल और हरी रेखाओं का बड़ा अंतर इसी प्रभाव को दर्शा रहा है। वित्त वर्ष 2017 के तीसरे चतुर्थांश में विमुद्रीकरण किया गया था और तुरंत ही नकदी में 9.4 प्रतिशत की कमी तथा मांग जमाओं में 43 प्रतिशत का उछाल आया। दोनों के योग में 11.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि पिछले वर्ष ये आंकड़े क्रमश: 12.5, 10.5 और 11.7 प्रतिशत की वृद्धि के ही थे।

1.43 यदि विमुद्रीकरण के असामान्य प्रभावों के 'कीमत' पक्ष पर ध्यान दें तो नकदी की कीमत में भारी उछाल आया था (यह मुख्यत: नकद निकालने पर रूकावटों और निकासी हेतु लगी कतारों के आधार पर ही लगाया गया अनुमान है)। दूसरी ओर 9 नवंबर के बाद से उधार पर ब्याज की दर में 90 आधारिक बिन्दुओं की कमी (यह नकद कोष की सीमांत लागत पर आधारित होती हैं); जमाओं पर ब्याज दर में 25 बिन्दुओं की कमी तथा सरकारी निक्षेपों एवं अन्य पर 32 बिन्दुओं की कमी को हमने रेखाचित्र 8 में दिखाया है।

1.44 विमुद्रीकरण के अन्य आयाम का भी ध्यान रखना चाहिए। ये सभी परिमाण एवं कीमत प्रभाव पुन:मुद्रीकरण की दर और नीतिगत रूकावटों को हटाने के अनुसार स्वयं ही समंजित हो जाएंगे। ऐसा होते ही उपभोक्ता अपने बैंक खाते खाली कर एक बार फिर से नकदी का भंडार जमा

रेखाचित्र 7. नकद और मांग जमा वृद्धि (%)

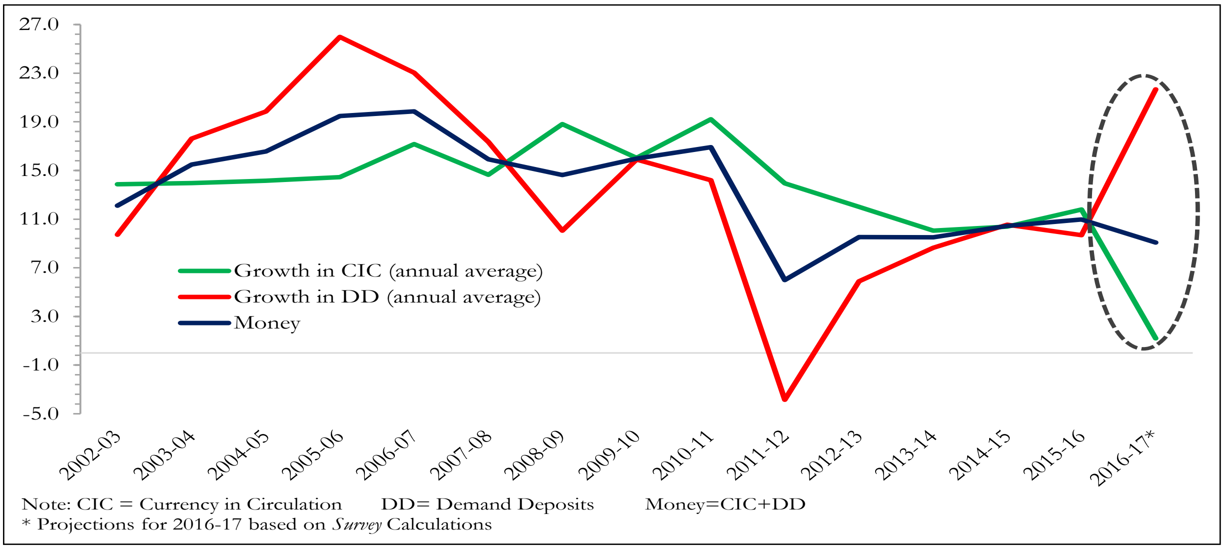

नोट : CIC=परिचलन में करेंसी; DD=मांग जमाएं; Money = CIC + DD
****वर्ष 2016-17 के पूर्वाकलन समीक्षा की गणनाओं पर आधारित हैं।***
स्रोत : RBI और समीक्षा की गणनाएं

रेखाचित्र 8 : रैपो दर, आधार दर और सावधि जमा दर में परिवर्तन

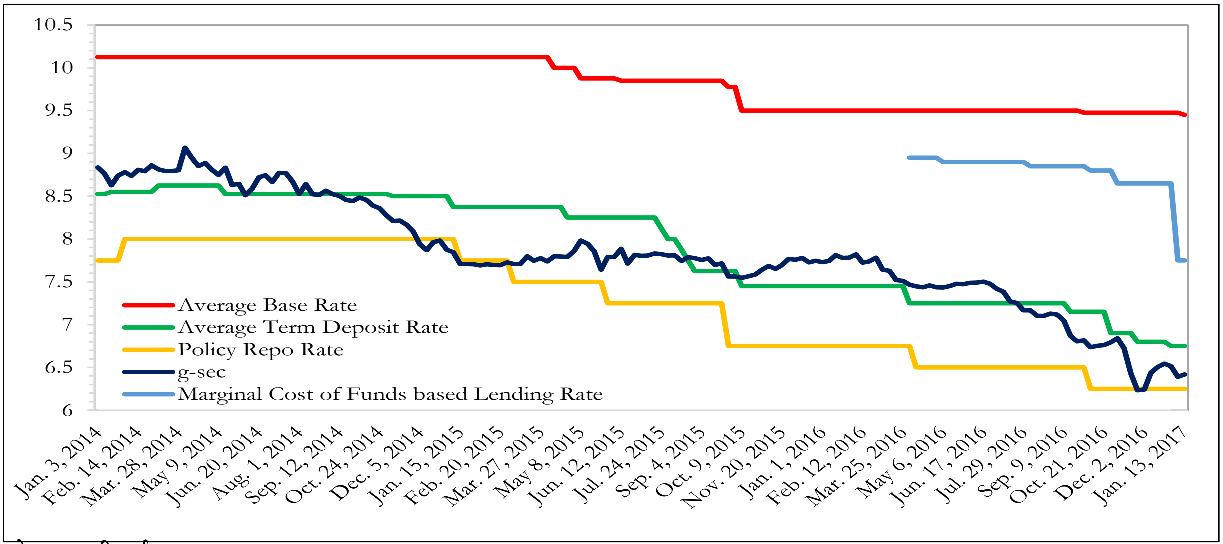

स्रोतः आरबीआई

कर लेंगे। हां, यह संभव ही नहीं संभावित भी है कि यह स्वर्यसमंजन संपूर्ण नहीं होगा, नई संतुलन अवस्था में सकल नकद धारिता (बैंक जमाओं और जीडीपी के अंश के रूप में) पहले से कम ही रहेगी।

1.45 सभी मांग, आपूर्ति और अनिश्चितता प्रभावों का परिमाण निर्धारण कर पाना न केवल कठिन है, बल्कि अभी ऐसा करना एक जल्दबाजी भी होगी। रेखाचित्र 9(क) और 9(ख) में तरलता नकदी पर प्रभावों का परिमाण निर्धारण करने के प्रयास किए गए हैं। परिचलन में नकदी के शीर्ष परिमाण और प्रभावी परिचलन के हमारे अनुमान परम संख्याओं तथा लेनदेन की मांग के अंश के रूप में दिखाए गए हैं।[5]

1.46 इन रेखाचित्रें से तीन मुख्य बातें उभर कर आ रही हैं। तरलता का अभाव शीर्ष परिमाण के आंकड़ों से

[5] शीर्ष परिमाण सभी विमुद्रीकरण नोट घटाकर एवं नए नोट जोड़कर आंकलित किया गया है। 'समीक्षा' के अनुमानों में अन्य कारकों का भी आंकलन किया गया है। 'समीक्षा' के अनुमानों में अन्य कारकों का भी आंकलन किया गया है- देखें अध्याय-3

रेखाचित्र 9क : प्रभावी करेंसी परिचलन (बाजार की धारणा)

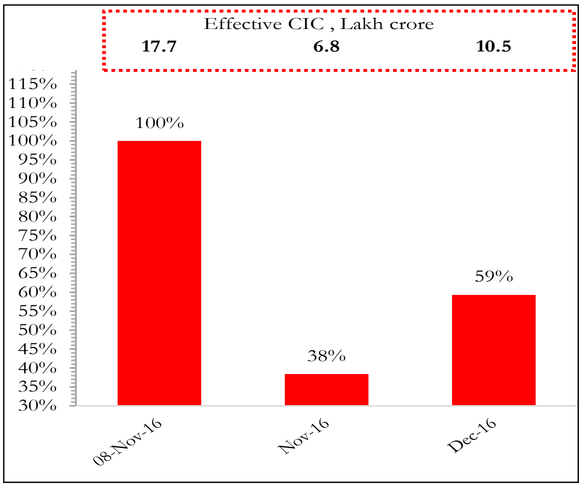

रेखाचित्र 9ख : अनुमानित लेनदेन की मांग के अनुपात में प्रभावी करेंसी परिचलन

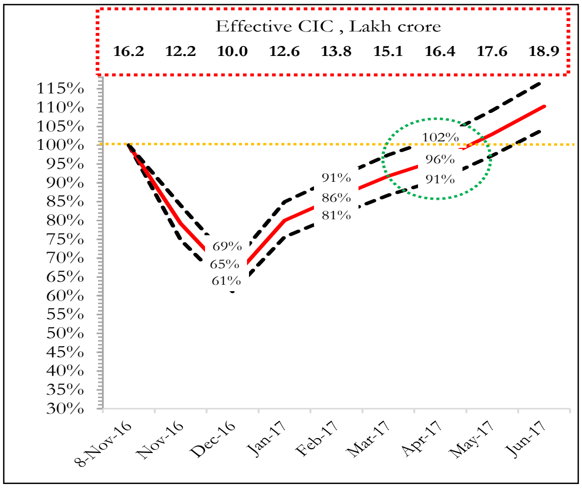

स्रोत : समीक्षा की गणनाएं

कहीं कम रहा (परिचलन में प्रभावी नकदी द्वारा मापित अभाव की यहां बात हो रही है)। शीर्ष परिमाण से तो करैंसी में 8 नवंबर से मासांत तक 62 प्रतिशत कमी की जानकारी मिल रही है। यह दिसंबर अंत तक 41 प्रतिशत रह गई थी। हमारे अभाव के अनुमान क्रमश: 25 तथा 35 प्रतिशत हैं। दूसरे शब्दों में नकदी का वास्तविक अभाव सामान्य रूप से समझे जा रहे स्तर की तुलना में बहुत कम गंभीर था।

1.47 मनोवैज्ञानिक संक्षोभ के विपरीत इस विमुद्रीकरण के वास्तविक संक्षोभ का चरम बिन्दु तो दिसंबर मास में आया था, नवंबर में नहीं। विमुद्रीकरण की घोषणा के बाद कुछ सप्ताह तक प्रभावी करैंसी आपूर्ति पूर्ववत बनी रही, क्योंकि वे पुराने नोट भी प्रभावी एवं विधिक रूप से (कुछ कार्यों हेतु) स्वीकार्य बने रहे। किन्तु दिसंबर में वे सब बैंकों में जमा हो गए तथा उनके स्थान पर मिले रूपए 2000/- वाले नोटों की तरलता उतनी अधिक नहीं थी।

1.48 विभिन्न परिमाण यह भी स्पष्ट कर रहे हैं कि अब अन्तर तेजी से मिटता जा रहा है। दिसंबर 2016 के अंत में प्रभावी करैंसी अनुमानित मांग के 65 प्रतिशत के लगभग थी और फरवरी अंत तक यह अनुपात 86 प्रतिशत तक पहुँच जाने की आशा है।

1.49 इन आधारिक तथ्यों का ध्यान रखते हुए हम विमुद्रीकरण के अभी तक के समष्टि आर्थिक प्रभावों की समीक्षा की ओर चल रहे हैं।

1.50 रेखाचित्रें 10-12 में विमुद्रीकरण के बाद से ब्याज की दरें, विनियम दर और पूंजी (स्टॉक) मार्केट प्रभाव अंकित किए गए हैं। हमारी विमुद्रीकरण की घोषणा के साथ-साथ अमेरिका में आर्थिक पटल पर परिवर्तनों की संभावनाओं से परिपूर्ण राष्ट्रपति चुनाव के परिणाम भी घोषित हुए हैं। अत: विमुद्रीकरण के प्रभावों को पृथक रखते हुए (यथासंभव) हम तुलनीय उदीप्यमान बाजार व्यवस्था वाले देशों की तुलना में भारत पर संभावित प्रभावों की समीक्षा करेंगे।

1.51 सबसे नाटकीय प्रभाव तो ब्याज दरों से संबंधित है (रेखाचित्र 10)। प्राय: सभी बड़े देशों में बांडों पर प्रतिप्राप्ति में 8 नवंबर के बाद से उछाल आया है, जनवरी 19 तक संयुक्त राज्य अमेरिका में तो यह उछाल 58 आधारिक बिन्दुओं तक पहुँच चुका था। किन्तु भारत में यह परिवर्तन विपरीत दिशा में 32 बिन्दु रहा। अर्थात तुलनात्मक दृष्टि से 90 बिन्दुओं का बदलाव आया। इसी प्रकार भारत के शेयर बाजार में 0.93 प्रतिशत की गिरावट रही (रेखाचित्र 11)।

1.52 ब्याज दरों तथा संभावनाओं में गिरावट के कारण पत्रक निवेशकर्ता विदेशियों में भगदड़ मची और नवंबर-दिसंबर में $9.8 बिलियन की राशियां वापस चली गई, इसका 60 प्रतिशत तो ऋण के रूप में आई राशियां ही थीं (3ग)। फिर भी विचित्र सा लगता है कि विनिमय दर पर प्रभाव बहुत सामान्य सा रहा (रेखाचित्र 12)। संभवत: इसका एक बड़ा कारण भारतीय रिजर्व

रेखाचित्र 10 : सरकारी बाँडों पर प्रति प्राप्ति (%)

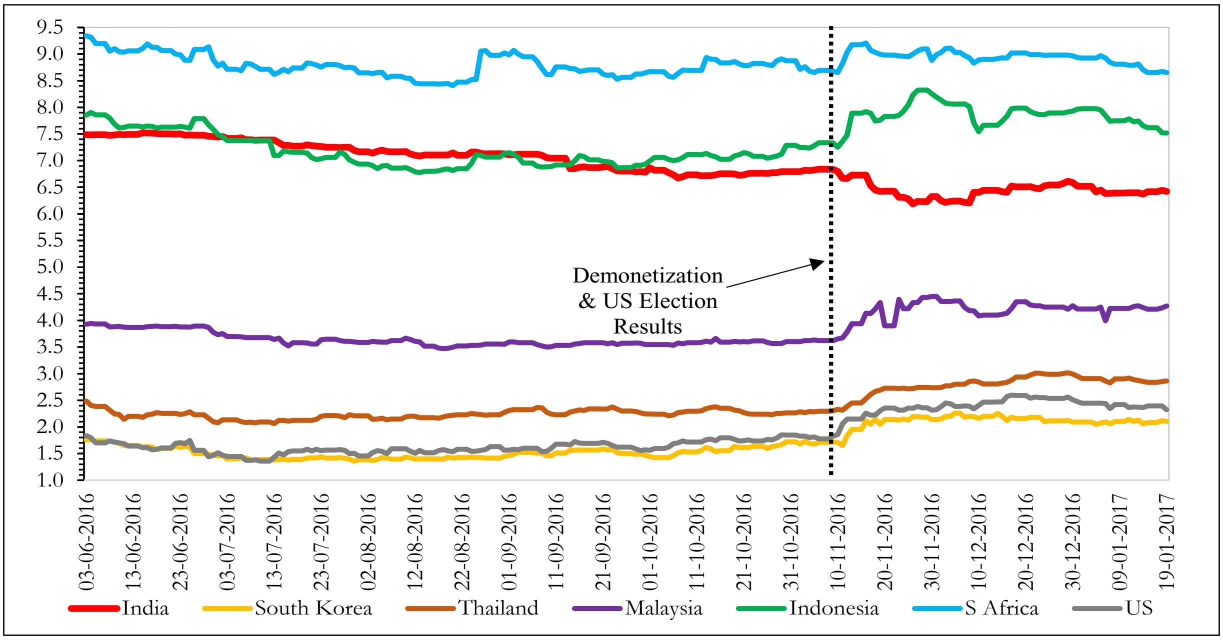

स्रोत: ब्लूमबर्ग

रेखाचित्र 11 : शेयर कीमतें (नवंबर 7 = 100)

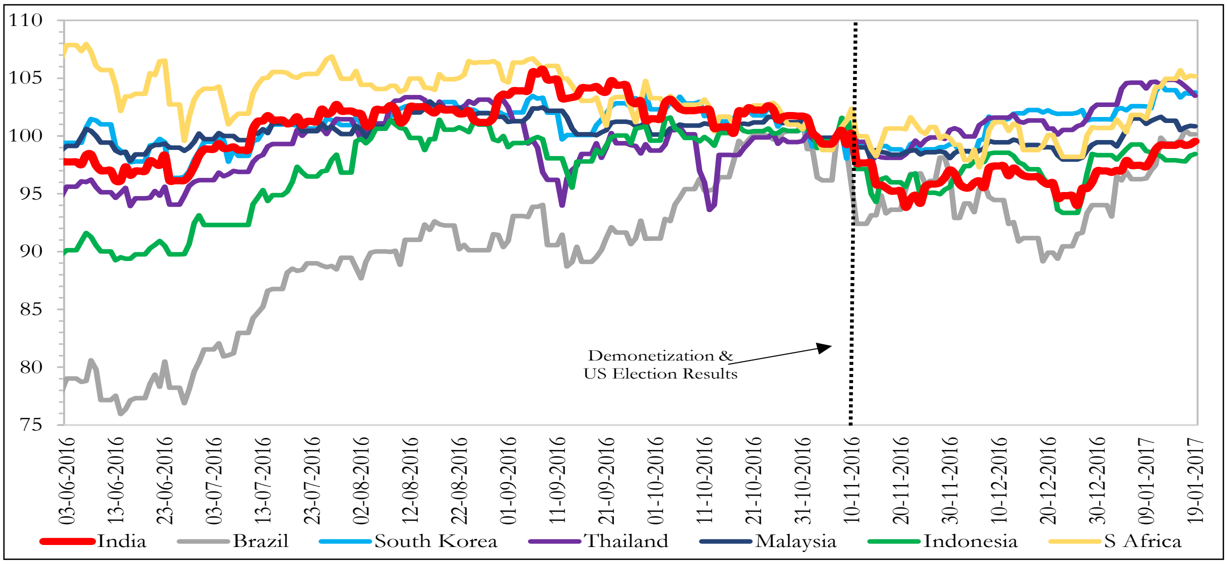

स्रोत: ब्लूमबर्ग

बैंक द्वारा रूपए की स्थिरता बनाए रखने हेतु अपनाए गए कदम ही हैं।

(ख) जीडीपी पर प्रभाव

1.53 विमुद्रीकरण के प्रभावों पर घटनावृतों और सर्वेक्षण आधारित आंकड़ों की भरमार है। किन्तु हमारी रूचि तो समष्टि स्तरीय मूल्यांकन में है और इसीलिए हम पाँच बृहत्तर सूचकों पर ध्यान दे रहे हैं।

- कृषि (रबी) की फसल की बुआई;
- उत्पादन एवं विक्रय के व्यापक मापक के रूप में अप्रत्यक्ष कर राजस्व;
- ऐच्छिक उपभोक्ता के सूचक : दुपहिया वाहनों पर व्यय, जो ग्रामीण एवं अपेक्षाकृत कम धनिक वर्ग की मांग को दर्शाता है;
- वास्तविक साख संवृद्धि; और

रेखाचित्र 12 : विनिमय दर में 7 नवंबर के बाद से परिवर्तन

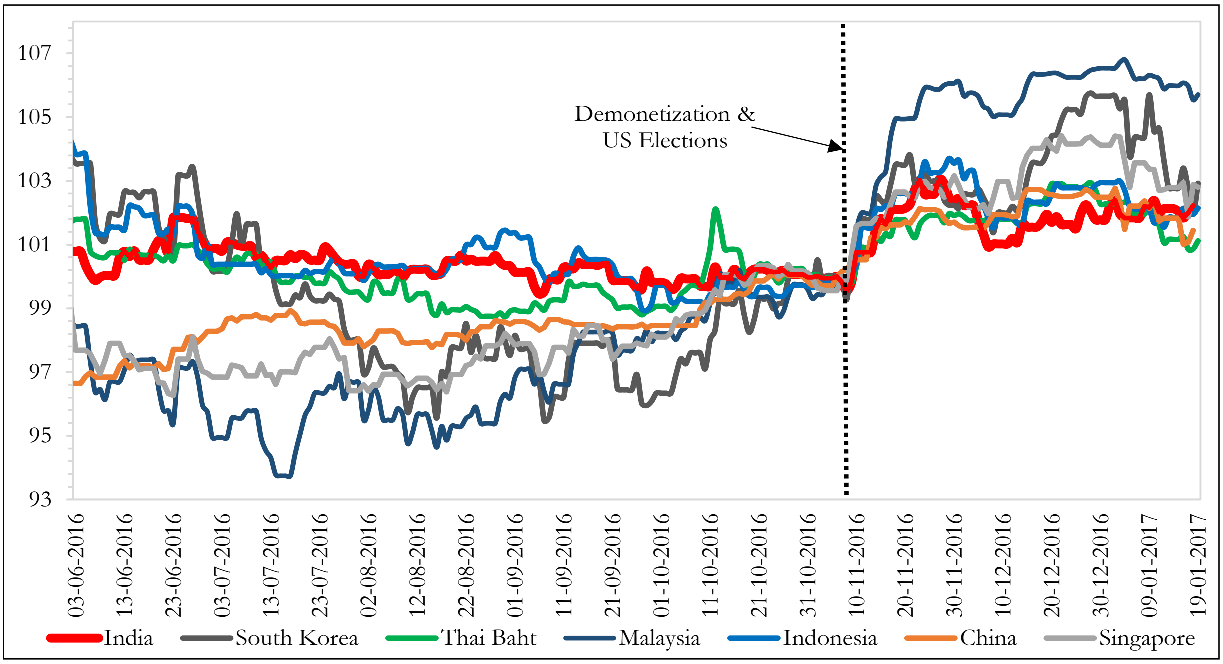

स्रोत: ब्लूमबर्ग

- भवन संपदा कीमतें।

1.54 प्रारंभिक आशंकाओं के विपरीत 15 जनवरी 2017 तक दो मुख्य रबी की फसलों, गेहूँ और चना (दालों) की कुल बुआई पिछले वर्ष से 7.1 तथा 10.7 प्रतिशत अधिक भू-भाग में हो चुकी थी (रेखाचित्र 13)। मौसम और मिट्टी में नमी की उचित मात्र उत्पादन में वृद्धि होने के पूर्व संकेत हैं। इन सहायक कारकों का लाभ का लाभ उठा पाना किसानों की उर्वरक, साख और श्रम जुटा पाने की क्षमता पर निर्भर रहेगा।

1.55 अन्य उच्च प्रायिकता सूचकों का परिदृश्य मिला जुला है (देखें रेखाचित्र 14-17)। यात्री कारों की बिक्री और उत्पादन शुल्क संग्रह पर विमुद्रीकरण का कोई प्रभाव नहीं दिखाई देता; बड़े शहरों में भवन संपदा बाजार में मंदी तथा दुपहिया वाहनों की बिक्री में भारी गिरावट आई है; साख में विमुद्रीकरण से पहले ही चल रही नरमी और गहरी हो गई।[6] यदि 2016-17 में अपनाई गई अन्य नीतियों के प्रभाव का समंजन कर दें तो अप्रत्यक्ष कर संकलन शीर्षांकित संख्याओं की अपेक्षा कम प्रभावशाली रह जाता है। इनकी संवृद्धि दर धीमी पड़ रही थी, किन्तु 8 नवंबर के बाद कोई विशेष धीमापन नहीं आया। उपलब्ध साक्ष्य संकेत दे रहे हैं कि वास्तविक जीडीपी और आर्थिक गतिविधि पर कुछ अस्थायी विपरीत प्रभाव अवश्य पड़ा है। किन्तु प्रश्न यह है कि वह प्रभाव कितना बड़ा है?

1.56 विमुद्रीकरण के प्रभाव का अनुमान लगाने के लिए हम एक विपरीत तथ्य से प्रारंभ कर रहे हैं। विमुद्रीकरण नहीं होने पर प्रचलित कीमतों पर संवृद्धि का हमारा श्रेष्ठतम अनुमान 11 1/4 प्रतिशत था (यह पिछले वर्ष की समीक्षा से कुछ अधिक था, क्योंकि थोक कीमत सूचक में तेजी से वृद्धि होने लगी थी)। किन्तु यह केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन CSO के प्रारंभिक पूर्वानुमान 11.9 प्रतिशत से कुछ कम था। हां, वास्तविक रूप में दोनों ही पूर्वाकलन 7 प्रतिशत दर पर सहमत थे।

1.57 विमुद्रीकरण के बाद संवृद्धि के आंकलन के लिए हम मुद्रा और जीडीपी का संबंध निरूपण करने के एक सरल प्रतिमान का प्रयोग कर रहे हैं। फिर, अर्थव्यवस्था में नकदी के प्रयोग और डिजिटल भुगतान की ओर अग्रसर होने के परिणाम का अनुमान लगाने वाली

---
[6] साख वृद्धि में नरमी की कुछ भरपाई तो बाँड, बाहरी व्यापारिक उधार (EcBs) तथा व्यापारिक पत्राकों के माध्यम से हो गई लगती है।

रेखाचित्र 13 : गेहूँ और चने की बुआई (मिलि. हैक्टेयरों में)

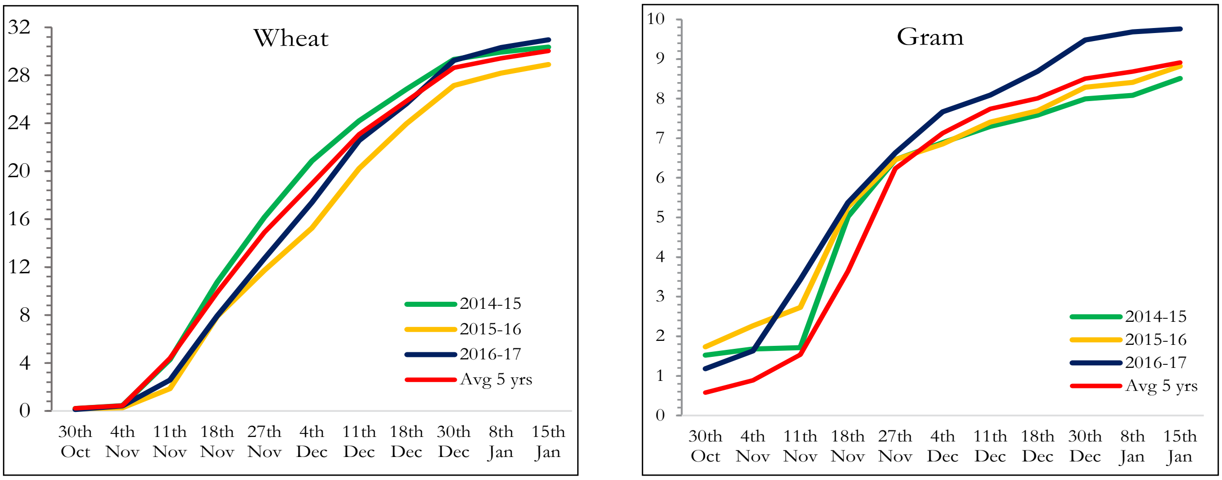

स्रोतः कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय

स्रोतः कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय

रेखाचित्र 14 : अप्रत्यक्ष कर राजस्व वृद्धि (मौसमी समंजन के बाद, प्रतिशत)

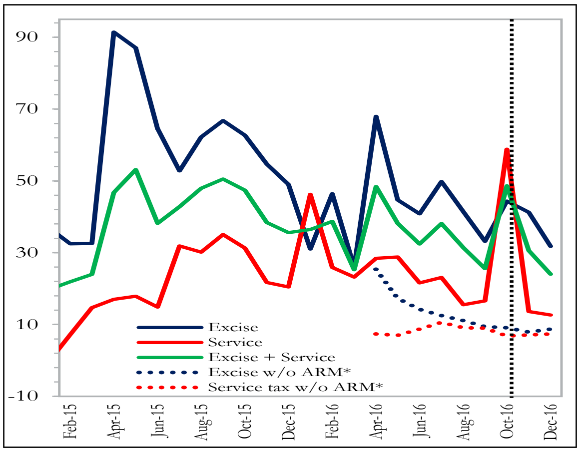

स्रोतः राजस्व विभाग और समीक्षा गणना

* संचयी वृद्धि

रेखाचित्र 15 : वाहन विक्रय वृद्धि, प्रतिशत, मौसमी समंजन के बाद

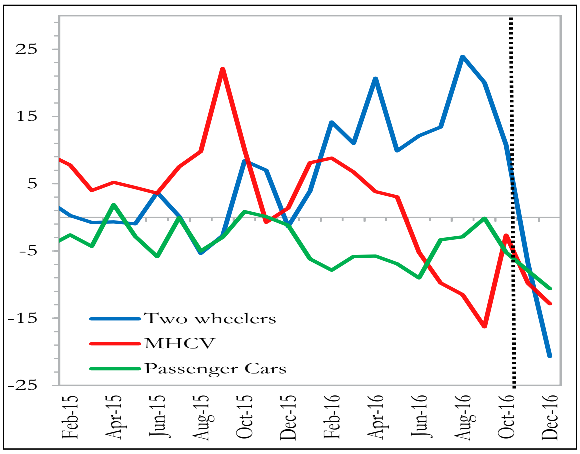

स्रोतः एसआईएएम

रेखाचित्र 16 : वास्तविक साख वृद्धि (प्रतिशत, मौसमी समंजन के बाद)

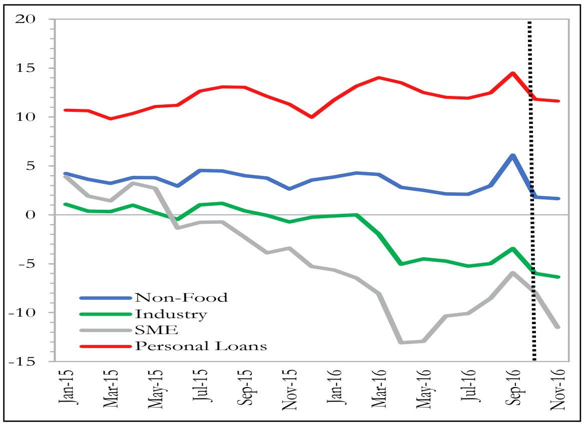

स्रोतः भारतीय रिजर्व बैंक और समीक्षा गणना

रेखाचित्र 17 : भवन-सपंदा कीमतें (%, मौसमी समंजन के बाद)[7]

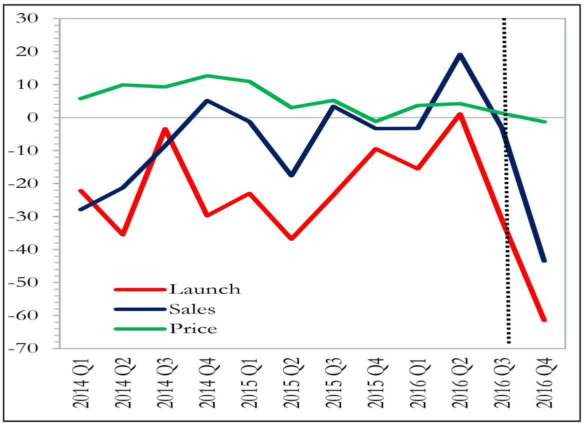

स्रोतः नाइट फ्रैंक डाटा और और समीक्षा गणना

---

7 भवन संपदाओं की कीमतों के त्रैमासिक आंकड़ों को कैलेंडर वर्षानुसार अंकित किया गया है।

मान्यताओं के आधार पर हम वित्तवर्ष 2017 में प्रचलित कीमतों पर तथा वास्तविक जीडीपी की संवृद्धि पर प्रभाव का आंकलन करेंगे। अभी तक चल रही अनिश्चितता के कारण ही हम प्रचलित कीमतों पर जीडीपी संवृद्धि दर में 1/4 प्रतिशत से 1 प्रतिशत तक तथा वास्तविक जीडीपी में 1/4 प्रतिशत से 1/2 प्रतिशत तक कमी आने का पूर्वाकलन कर रहे हैं। ध्यान रहे कि संवृद्धि का आधारिक मान तो 7 प्रतिशत है। मध्यम अवधि में ही जीएसटी लागू करने, विमुद्रीकरण के अनुषांगिक कदम उठाने और अन्य संरचनात्मक सुधार करने से अर्थव्यवस्था अपने वास्तविक जीडीपी में 8 से 10 प्रतिशत संवृद्धि कर पाने के सामर्थ्य को फलीभूत कर पाएगी। अच्छे एवं स्वयं संपूरक कारणों से 2016-17 के पूर्वानुमानों की तुलना अन्य वर्षों के अनुमानों से ही की जाएगी। इन तुलनाओं की सटीक एवं कुछ कम सटीक विधियों का वर्णन बॉक्स-3 में किया जा रहा है।

1.58 वित्त वर्ष 2016-17 के उत्तरार्द्ध में दर्ज होने वाली जीडीपी संवृद्धि विमुद्रीकरण के प्रभावों का न्यूनांकन करेगी, कारण यही है कि राष्ट्रीय आय लेखांकन में इस घटना से सर्वाधिक प्रभावित क्षेत्रकों, अनौपचारिक और नकद आधारित क्षेत्र के लिए भी औपचारिक क्षेत्र प्रदर्शन के आधार पर एक गढ़ा हुआ अनुमान जोड़ लिया जाता है। उदाहरण के लिए औपचारिक विनिर्माण का काम औद्योगिक उत्पादन के सूचक अंक द्वारा चलाया जाता है। यह मुख्यत: बड़े उद्योगों के निष्पादन पर आधारित है। अत: उत्पादन एवं आपूर्ति या आर्थिक गतिविधि के स्तर पर प्रभाव का न्यूनांकन होगा। हां, अनौपचारिक क्षेत्र की निम्न आय के औपचारिक क्षेत्र के उत्पादन की मांग पर पड़ने वाले प्रभाव किसी सीमा तक आंकलन का हिस्सा बन जाते हैं। उदाहरण : दुपहिया वाहनों की मांग – बॉक्स-3।

1.59 ये अनुमान लगभग पूरी तरह से विमुद्रीकरण के तरलता प्रभाव पर आधारित हैं- इनमें संपदा, सकल आपूर्ति और अनिश्चितता प्रभावों को समाहित नहीं किया है (वैसे इन सभी प्रभावों का गुणात्मक स्वरूप में आंकलन भी कठिन ही रहता है)। संभव है अनिश्चितता के कारण कुछ उपभोक्ताओं ने अपनी मांग तथा उत्पादकों ने अपने निवेश निर्णय तीसरे चतुर्थांश में स्थगित किए हैं। किन्तु जैसे-जैसे अर्थतंत्र का पुन:मुद्रीकरण होगा, स्थिति सामान्य हो जाएगी, अनिश्चितता समाप्त होगी तो वित्त वर्ष के अंत तक ये व्यय भी पुन: पूर्ववत् स्तरों को छूने लगेंगे। यही

बॉक्स 3 : जीडीपी विमुद्रीकरण प्रभावों में गलत व्याख्याओं की कुछ आशंकाएं

सीएसओ तथा समीक्षा के जीडीपी संवृद्धि अनुमानों, विशेषकर विमुद्रीकरण के प्रभावों में कई प्रकार की गलत व्याख्याओं की संभावना हो सकती हैं, उनको पहले से ही भांप कर उनका स्पष्टीकरण करने की आवश्यकता है।

उदाहरण के लिए कुछ टिप्पणिकारों को इस वर्ष की वास्तविक जीडीपी संवृद्धि के अनुमान की पिछले वर्ष की दर 7.6 प्रतिशत से तुलना करने की उत्सुकता होगी। किन्तु यह अनुप्युक्त होगा, क्योंकि विमुद्रीकरण के अतिरिक्त अन्य अनेक कारकों का इस वर्ष के निष्पादन पर प्रभाव रहा है। उदाहरण के लिए अंतर्राष्ट्रीय तेल कीमतों में गिरावट बंद हो गई है; उसके कारण अर्थव्यवस्था को मिलने वाले उत्कर्ष संप्रेरण अब शिथिल पड़ गए हैं। अत: विमुद्रीकरण के बिना भी संवृद्धि दर में कुछ अंतर तो अवश्य आना ही था।

अत: तुलना का उचित आधार वास्तविक संवृद्धि की वह दर होगी जो विमुद्रीकरण नहीं होने की स्थिति में प्राप्त हो सकती। यहां एक विपरीत तथ्य सीएसओ का वास्तविक जीडीपी का अग्रिम अनुमान 7.1 प्रतिशत होगा, वह समीक्षा के विपरीत तथ्य के निकट ही है।

एक कहीं बेहतर आधार वास्तविक नहीं, बल्कि प्रचलित कीमत पर जीडीपी की संवृद्धि हो सकता है। आखिर विमुद्रीकरण वस्तुत: एक मौद्रिक मांग संक्षोभ ही है और इसके प्रभावों में भी मौद्रिक परिमाण आंकड़ें ही दिखाई देंगे। यही नहीं, जैसा कि वर्ष मध्य आर्थिक विश्लेषण (2015) में ध्यानाकर्षित किया गया था, CPI और WPI स्फीति में एक बड़ी खाई जीडीपी अपस्फायक का आंकलन करने में कठिनाइयां पैदा कर रही है (उसी अपस्फायक का प्रयोग मौद्रिक जीडीपी को वास्तविक जीडीपी में परिवर्तित करने के लिए किया जाता है)। इस वर्ष, दिसंबर 2016 की जानकारी तो उस खाई का विस्तार शून्य रह जाने का संकेत दे रही है, फिर भी उस खाई के स्थायी रूप से भर जाने तक विमुद्रीकरण के प्रभावों का सही अभिज्ञान करने के लिए मौद्रिक या प्रचलित कीमतों पर लगाए गए अनुमान ही अधिक उपयुक्त होंगे। अत: विमुद्रीकरण के प्रभाव का सही मापन करने में प्रचलित कीमतों पर जीडीपी में पाई गई संवृद्धि की तुलना या समीक्षा के इस विषयक पूर्वानुमान की विमुद्रीकरण मुक्तावस्था में जीडीपी संवृद्धि के मौद्रिक मान से तुलना का प्रयोग ही सबसे उचित होगा। सीएसओ के अनसार यह 11.9 प्रतिशत होना था जबकि समीक्षा का अनुमान 11.25 प्रतिशत के निकट था।

अन्तत:, कुछ टीकाकारों को समीक्षा के वास्तविक जीडीपी संवृद्धि के अनुमानों की विश्व बैंक या अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष जैसे संस्थानों द्वारा तैयार किए गए अनुमानों से तुलना करने की लालसा भी होगी। किन्तु उन संस्थानों का 2016-17 का विमुद्रीकरण पर आधारिक अनुमान सीएसओ के अग्रिम अनुमान और समीक्षा के अनुमान से कहीं अधिक था। अत: पूर्वानुमान का स्तर नहीं बल्कि इसमें आए परिवर्तन ही तुलना के उचित आधार होंगे।

स्थिति प्रारंभिक संपदा प्रभाव को लेकर होगी, शुरू में नकदी बैंकों में जमा करनी पड़ी, जहां से उसे निकालना कठिन था, पर निकासी पर प्रतिबंध शिथिल होने पर यह प्रभाव भी विलुप्त हो जाएगा। वस्तुत: यदि इस संपदा का कुछ अन्तरण उनको हो गया है जिनकी व्यय करने प्रवृत्ति अधिक उच्च होती है (सरकार ऐसी ही एक बड़ी आर्थिक इकाई है) तो सकल मांग में अन्तत: एक बड़ी वृद्धि ही दिखाई देने लगेगी।

1.60 किन्तु यह अपेक्षाकृत सुखद परिणाम तभी संभव हो पाएगा जब हम तेजी से अर्थव्यवस्था का पुन:मुद्रीकरण कर लें। अन्यथा ऐसा नहीं हो पाएगा (रेखाचित्र 9ख दर्शा चुका है कि वर्ष के अंत तक विनिमय मांग के लगभग 90 प्रतिशत अंश की पूर्ति होने लगेगी)। साथ ही अनिश्चितता दूर करने के लिए उपयुक्त नीतियां अपनानी होंगी तथा अतिउग्र कर प्रशासकों पर भी अंकुश लगाना होगा। तभी विमुद्रीकरण के दुष्प्रभाव गैर स्थायी स्वरूप धारण कर पाएंगे।

1.61 और अन्त में, विमुद्रीकरण नकदी एवं मुद्रा के अन्य स्वरूपों के बीच प्रतिस्थापनीयता का एक स्वभाविक प्रयोग सिद्ध होगा। इसने इन दो स्वरूपों की आपूर्तियों के बीच एक बड़ी खाई निर्मित कर दी है। यदि नकदी और अन्य स्वरूपों में प्रतिस्थापनीयता हो तो इस खाई का प्रभाव क्षीण पड़ जाएगा। यदि दूसरी ओर नकद की प्रतिस्थापनीयता नहीं हो पाई तो प्रभाव अधिक गहन हो जाएगा।

V. वर्ष 2017-18 की आशाएं

(क) वास्तविक जीडीपी

1.62 आइए, अब 2017-18 की आशाओं की ओर दृष्टि डाले। हमें सकल मांग के प्रत्येक घटक पर विचार करना होगा : निर्यात, उपभोग, निजी निवेश और सरकारी व्यय पर।

1.63 जैसा कि पहले भी चर्चा हुई है, भारत के निर्यात में वृद्धि का क्रम प्रारंभ हो चुका है और इसका कारण वैश्विक आर्थिक गतिविधियों में हो रहा उन्नयन है। यह क्रम अमेरिकी चुनाव और प्रत्याशित राजकोषीय उत्प्रेरणा के बाद भी चलता रहेगा। जनवरी में IMF ने अपने विश्व आर्थिक संभावना पूर्वाकलन को संशोधित किया है। इसमें 2016 के 3.1 प्रतिशत से सुधार कर 2017 में विश्व संवृद्धि दर के 3.4 प्रतिशत होने की आशा व्यक्त की गई है। इसी अवधि में विकसित देशों की संवृद्धि दर के भी 1.6 से बढ़कर 1.9 प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया है। भारत की वास्तविक निर्यात की वैश्विक जीडीपी के प्रति लोच अधिक होने के कारण यह अपेक्षा की जा रही है कि निर्यात में होने वाली वृद्धि अगले वर्ष देश की आर्थिक संवृद्धि दर में 1 प्रतिशत बिन्दु का योगदान और देगी।

1.64 निजी उपभोग को लेकर अपेक्षाएं इतनी स्पष्ट नहीं है। विश्व में तेल कीमतें 2016 की अपेक्षा 10 से 15 प्रतिशत अधिक रहने की आशंका है। यह संवृद्धि में 0.5 प्रतिशत क्षति कर सकती है। दूसरी ओर दो कारणों से इस उपभोग में वृद्धि भी संभव है : एक तो विमुद्रीकरण के कारण आई शिथिलता (वर्ष 2016-17 के उत्तरार्द्ध की दो तिमाहियों के दौरान) का निवारण एक सामान्य प्रक्रिया होगा; और दूसरे 2017 में उधार की लागतें 75 से 100 आधारिक बिन्दु कम रहने से भी इस उपभोग (विशेषकर दीर्घोपयोगी वस्तुओं पर व्यय) को बढ़ावा मिलेगा। कुल मिलाकर गृह निर्माण, उपभोक्ता दीर्घोपयोगी पदार्थों और अर्द्ध दीर्घोपयोगी चीजों पर व्यय में शानदार वृद्धि होने की आशा है। वर्ष 2017 के मानसून की भविष्यवाणी करना तो अभी जल्दबाजी होगी, इसी कारण कृषि उत्पादन का पूर्वानुमान भी कठिन है। किन्तु इस वर्ष कृषि उत्पाद संवृद्धि दर अधिक रही है। अत: अगले वर्ष इसमें और तीव्र वृद्धि की संभावना कम ही आंकनी चाहिए।

1.65 फिर, अभी तक दोहरी तुलनपत्र प्रणाली की समस्या का कोई व्यवहारिक समाधान नहीं उभर पाया है। अत: निवेश स्तर में वित्त वर्ष 2017 की अपेक्षा बहुत बड़े सुधार की आशा कर पाना कठिन ही है। इस त्रुटि का आंशिक समाधान तो उच्चतर सार्वजनिक निवेश द्वारा हो सकता है, किन्तु वह भी राजकोषीय नीति के दृष्टिकोण पर निर्भर होगा, उसके समक्ष विमुद्रीकरण के संक्षोभ से उबर रही अर्थव्यवस्था की अल्पकालिक आवश्यकताओं तथा मध्यकालिक वित्तीय अनुशासन बनाए रखने के बीच संतुलन बिठाने और ऐसा करते हुए दिखने की चुनौतियां तो विद्यमान हैं ही।

1.66 इन सभी कारकों पर विचार करते हुए हम वित्त वर्ष 2018 में वास्तविक जीडीपी संवृद्धि के 6 3/4 से 7 1/2 प्रतिशत के बीच रहने की अपेक्षा कर सकते हैं। इस पूर्वाकलन में भी भारत विश्व की तीव्रतम संवृद्धिशील बड़ी अर्थव्यवस्था बना रहेगा।

1.67 इस पूर्वाकलन को कम कर सकने वाली तीन जोखिमें भी विद्यमान है। पहली बात तो यह है कि विमुद्रीकरण के शिथिलताकारी प्रभाव किसी सीमा तक अगले वर्ष भी बने रहेंगे (विशेषकर यदि नीति स्तर पर अस्पष्टता ही छाई रही)। करेंसी की कमी कुछ कृषि उत्पादों, विशेषकर दूध की आपूर्ति को प्रभावित करती है (हम विभिन्न एजेंसियों द्वारा दुग्ध प्रापण में कमी देख रहे हैं), चीनी (जहां कुछ दक्षिणी राज्यों में गन्ने के उत्पादन पर सूखे का प्रभाव पड़ा है) और आलू तथा प्याज की बुआई-रोपाई भी शिथिल रही है। इस बात पर सतर्कता रखनी होगी कि कहीं अन्य कृषि उत्पादों को लेकर आपूर्ति की बाधाएं 2017-18 में उसी स्थिति का निर्माण नहीं कर दें जो 2015-16 में दालों को लेकर पैदा हो गई थी।

1.68 विश्व राजनीतिक उतार चढ़ाव तेल कीमतों को हमारे अनुमान से अधिक स्तर तक ले जा सकता है। शेल तेल उत्पादन में तुरन्त वृद्धि की संभावनाएं अधिक तीव्र वृद्धि की आशंका का निवारण कर सकती हैं। किन्तु, यदि तेल कीमतें मात्र $60-65 प्रति बैरल तक भी पहुँच गई तो भारत में उपभोग में कमी, सार्वजनिक निवेश की क्षीण संभावना और कंपनियों के लाभ में कमी होने के फलस्वरूप निजी निवेश व्यय पर और आघात होने की आशंकाएं हो सकती हैं। यदि उच्च तेल कीमतों से स्फीति की आशंका हुई तो मौद्रिक नीति में अधिक उदारता की संभावना नहीं बचेगी।

1.69 तीसरी बड़ी नकारात्मक संभावना बड़े देशों के बीच राजनीतिक उथल-पुथल या फिर करेंसी की विनिमय दरों के कारण भी व्यापार में तनाव पैदा हो सकते हैं। इसके परिणाम स्वरूप वैश्विक संवृद्धि दुष्प्रभावित होगी और उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाओं से पूंजी का पलायन प्रारंभ हो जाएगा।

1.70 एक महत्वपूर्ण शुभ संभावना विश्व स्तर पर मांग में उछाल है। उससे भारत का निर्यात भी बेहतर होगा। इसके कुछ प्रारंभिक लक्षण पिछली दो तिमाहियों में दिखाई भी पड़े हैं। निर्यात में अच्छे सुधार का निवेश पर एक व्यापक प्रतिच्छालन प्रभाव होगा।

(ख) राजकोषीय संभावनाएं

1.71 अगले वर्ष केन्द्रीय सरकार के लिए राजकोषीय संभावनाएं तीन कारकों से प्रभावित रहेंगी। सबसे पहले तो पिछले दो वर्षों से तेल कीमतों के प्रभाव से संभव हो रही कर जीडीपी अनुपात में 0.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि तो विलुप्त होने वाली है। वस्तुत: उत्पादन शुल्क आदि करों में जीडीपी के अनुपात के रूप में 0.1 प्रतिशत की गिरावट ही होगी। कुल मिलाकर वित्त वर्ष 2017 की अपेक्षा जीडीपी के 0.6 प्रतिशत अंश की कर संग्रह में कटौती की आशंका है।

1.72 दूसरे, बैंकों के माध्यम से रिजर्व बैंक में जमा नहीं कराए गए उच्च मूल्य नोटों और प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना के अंतर्गत पोषित आय पर करों के रूप में एक बड़ी राजकोषीय प्राप्ति संभावित है। लेकिन ये एक बार ही हो जाने वाली घटनाएं हैं तथा इनकी प्राप्तियां भी अनिश्चित ही है।

1.73 तीसरा कारक जीएसटी लागू होना है। संभावना यही है कि इसका क्रियान्वयन वर्ष के अगले कुछ महीनों में ही हो पाएगा। प्रशासकीय और प्रौद्योगिकीय पटलों पर जीएसटी का क्रियान्वयन इतनी जटिलताओं से भरा है कि इसके माध्यम से राजस्व संकलन की पूरी संभावनाओं के प्रस्फुटन में काफी समय लग सकता है। जब इस बात पर भी ध्यान दिया जाए कि केन्द्र ने जीएसटी के कारण राज्यों के राजस्व में संभावित गिरावट (-14 प्रतिशत वृद्धि को सामान्य मानकर) की प्रतिपूर्ति करने का भी आश्वासन दिया है, तो केन्द्रीय राजकोष की अवस्था को लेकर सावधानीपूर्वक ही पूर्वानुमान बनाने होंगे। जीएसटी और विमुद्रीकरण से राजकोषीय लाभ होंगे तो अवश्य, किन्तु उनके होने में समय लग सकता है।

1.74 साथ ही गैर कर राजस्व में शिथिलता और 7वें वेतन आयोग की अनुशंसाएं लागू करने हेतु अनुदान भी राजकोषीय घाटे को ऊपर उठा सकते हैं।

(ग) वर्ष 2017-18 के लिए समष्टि आर्थिक नीति पक्ष

1.75 विमुद्रीकरण के संक्षोभ से उबर रही अर्थव्यवस्था को नीतिगत समर्थन की आवश्यकता होगी। यदि मान लें कि नकद जीडीपी अनुपात 8 नवंबर 2016 के स्तर से नीचे आ जाएगा तो बैंक क्षेत्रक जमाओं के उच्चतर स्तर से लाभान्वित होगा। अत: बाजार में सभी ब्याज दरें, चाहे जमा पर हों या उधार पर तथा सरकारी निक्षेपों पर प्रति प्राप्ति की दरें 2016-17 की अपेक्षा 2017-18 में निम्न ही रहेंगी। इससे अर्थव्यवस्था को एक प्रोत्साहन मिलेगा

(बस तरलता एक संरोध नहीं बन जाए)। इसकी एक उत्पत्ति है : नीति निर्धारित दरें कम होनी चाहिए, बाजार दरों को कमी की ओर धकेलने के लिए नहीं बल्कि उनमें आ रही कमी का समर्थन करने के लिए। हां यह बात सत्य है कि तेल कीमतों और कृषिक उत्पादों की कीमतों में बड़े उछाल दिखाई दिए तो मौद्रिक स्तर पर मृदुलता अपनाने की संभावनाएं कम रह जाएंगी।

1.76 राजकोषीय नीति भी सहारा और समर्थन दे सकती है। इस वर्ष के तर्क पिछले वर्ष से दो प्रकार से कुछ भिन्न हैं। पिछले वर्षों के विपरीत इस बार विमुद्रीकरण के कारण कुछ अधिक 'दुर्बलता' की झलक मिल रही है। साथ ही तीन वर्षों से लगातार राजकोषीय पटल पर संगतिपूर्ण सुधारों के माध्यम से सरकार ने अधिक विश्वस्तता अर्जित की है। केंद्रीय सरकार का राजकोषीय घाटा 2013 में जीडीपी का 4.5 प्रतिशत था। यह घटते हुए 4.1, 3.9, 3.5 प्रतिशत तक पहुँच गया है। किन्तु राजकोषीय नीति को चक्रीय अपरिहार्यताओं और सूझबूझ तथा विश्वस्तता की मध्यमकालिक आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य स्थापित करना होगा।

1.77 अप्रत्याशित आय (जो नोट लौटाए नहीं गए तथा PMGKY के अंतर्गत प्राप्तियां) का प्रयोग एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न होगा (वैसे अभी तक इन मदों से प्राप्त आय को लेकर असमंजस ही है)। किंतु ये अप्रत्याशित प्राप्ति एक ही बार होने वाली है, इसका स्वरूप संपदा प्राप्ति है, आय की वृद्धि नहीं। अत: उचित तो यही होगा कि इसका प्रयोग सरकार के तुलनपत्र को सुदृढ़ करने के लिए किया जाए, ऐसे सरकारी उपभोग में तो किसी भी हालत में नहीं जो स्थायी अधिकारिताओं का सृजन कर देता हो। अत:, इन परिस्थितियों में अप्रत्याशित आय का श्रेष्ठतम सदुपयोग एक सार्वजनक क्षेत्रीय परिसंपदा निर्माण कंपनी (अध्याय-4 में चर्चित) का गठन होगा। यह दोहरे तुलनपत्र की समस्या का समाधान कर पाएगी, साख सुलभ करा निवेश को पुन: प्रोत्साहित करेगी या फिर जीएसटी प्रतिपूर्ति कोष की स्थापना द्वारा कर की दरें घटाने और न्याय संगत बनाने में सहायक होगी, या कम से कम इस राशि का प्रयोग सरकार के ऋण भार को कम करने के लिए तो होना ही चाहिए। इस अनायास मिली राशि का राजकोषीय नीति के संचालन में प्रगति विषयक निर्णयों पर कोई प्रभाव नहीं होना चाहिए।

1.78 संवृद्धि को बढ़ावा देने वाले श्रेष्ठ सुधार संभवत: संरचनात्मक सुधार ही होंगे। अनुच्छेद-1 में चर्चित सुधारों के यौक्तिक विनिवेश, कर-सुधार, सब्सिडी को तर्क संगत बनाने के साथ-साथ दोहरी तुलनपत्र समस्या का भी प्रत्यक्ष रूप से समाधान खोजना होगा। अध्याय-4 स्पष्ट कर रहा है कि यह समस्या बहुत बड़ी है, लगातार बनी हुई है और कठिन भी है। यह अपने आप सुलझने वाली भी नहीं है, चाहे संवृद्धि दर में सुधार हो या ब्याज दरें कम हो जाए, वस्तुत: अभी तक इसके समाधान के सभी प्रयास नितांत अपर्याप्त ही सिद्ध हुए हैं। संभवत: अब वह समय आ गया है जब एक सार्वजनिक परिसंपदा पुन: निर्माण कंपनी का गठन होना ही चाहिए।

1.79 सुधारों का एक अन्य आयाम श्रम से जुड़ा है। श्रम कानूनों में बड़ा परिवर्तन तो मुश्किल लगता है किन्तु श्रमिकों को अधिक चयन के अवसर सुलभ कराने की दिशा में कदम उठाए जा सकते हैं। इससे सेवा प्रदाताओं के बीच स्पर्धा में वृद्धि होगी। इन चयनों का स्वरूप यह हो सकता है : क्या वे कर्मचारी भविष्य निधि कोष संगठन (EPFO) में अपना अंश भाग जमा करना चाहते हैं या राष्ट्रीय पेंशन योजना (NPS) में तथा कर्मचारी राज्य बीमा योजना (ESI) अथवा किसी वैकल्पिक स्वास्थ्य बीमा कार्यक्रम में। साथ ही साथ यह भी सुनिश्चित होना चाहिए कि कम से कम केंद्रीय श्रम कानूनों का अनुपालन कागजी कारवाई की जटिलता से मुक्त हो जाए, इसके क्रियान्वयन में नकदी का चलन भी नहीं रहे।

1.80 व्यय पक्ष पर अध्याय-9 में चर्चा होगी और वहां स्पष्ट किया जाएगा कि वर्तमान सरकारी कार्यक्रमों के लाभ वास्तविक लक्षित वर्गों तक नहीं पहुंच पाते। एक क्रांतिकारी विचार तो सार्वलौकिक आधार आय स्तर व्यवस्था को अपनाना है। इस पर हम आगे चर्चा करेंगे। किन्तु एक कहीं अधिक उदारतापूर्ण प्रस्ताव है कि नए सरकारी व्यय कार्य अभी प्रारंभ नहीं किए जाएं; यदि किसी पुराने कार्य जैसा ही प्रस्ताव हो तो उसकी यह पूर्व समीक्षा अवश्य हो कि नया प्रस्ताव किस प्रकार पुराने कार्यक्रम की त्रुटियों को दूर करेगा; और साथ ही अपने ध्येय प्राप्त करने में किल रहे किंतु अभी तक चल रहे कार्यों को धीरे-धीरे बंद करने की प्रतिबद्धता भी आवश्यक हो रही है।

VI. अन्य मुद्दे

(क) पुन:वितरण : सार्वलौकिक आधारिक आय (UBI) : एक नया क्रांतिकारी बोध

1.81 अध्याय-9 में भारत के पुन:वितरण संबंधी विस्तृत प्रयासों पर चर्चा की जा रही है। केवल केन्द्र सरकार संचालित एवं प्रायोजित पुन:वितरण योजनाओं की संख्या 950 है और इन पर जीडीपी के 5 प्रतिशत के समान लागत आती है। स्पष्टत: अनेक का तर्काधार स्पष्ट दिखाई देता है। किंतु लक्षित करने की प्रभावोत्पादकता में कुछ सीमाएं अंतर्निहित होती हैं। रेखाचित्र 18 आवंटन की त्रुटिपूर्णता स्पष्ट कर रहा हैं इसमें सबसे बड़े 6 कार्यक्रमों की जानकारी लेकर उसकी तुलना देश के जनपदों में गरीबों के अंशभाग से की गई है (रेखाचित्र 18(क) और उन्हें कम आवंटित धन की बात उठाई गई है (रेखाचित्र 18(ख) में यह कमी या अंतर आवंटित धन अंश और गरीबों के अंश के बीच अंतर द्वारा परिभाषित है)। ये दोनों रेखाचित्र एक बात को बहुत ही स्पष्ट रूप से दिखा रहे हैं : जिन जनपदों में जनसंख्या में गरीबों का अनुपात उच्चतम है, उन्हीं को आवंटित धन राशियां कम रहती हैं। ये जनपद दोनों रेखाचित्रें में लाल रंग द्वारा दिखाए गए हैं। इस प्रकार से आवंटन की गड़बड़ी के गंभीर परिणाम होते हैं : वस्तुत: जिन गरीबों को सरकारी योजनाओं का लाभ मिलना चाहिए वही इससे वंचित रह जाते हैं, कहीं न कहीं गैर गरीब वर्गों को उन लाभों का क्षरण तथा स्थानीय भ्रष्टतंत्र द्वारा उक्त लाभ हड़प कर जाना भी समस्या के अन्य स्वरूप हैं। अनेक कार्यक्रमों की प्रमुख समस्या यही है कि उनकी प्रभावोत्पादकता प्रांत की कार्यक्रम स्वीकार कर उसे लागू कर पाने की संस्थाबद्ध क्षमताओं पर निर्भर रहती है। तमिलनाडू और आंध्रप्रदेश जैसे प्रांतों में बिहार जितना गरीब जन अनुपात भले ही नहीं हो किंतु उनकी ऐसे कार्यक्रम (केन्द्र द्वारा प्रस्तावित) स्वीकार कर उन्हें लागू करने की क्षमता बिहार से बहुत अधिक है। यह कोई विचित्र बात नहीं है, प्राय: सभी गरीबी निवारण एवं सामाजिक कार्यक्रमों में यही बात अन्तस्थ पाई जाती है। ऐसे मामलों में ''बहिष्कृति की जोखिम'' अर्थात् सर्वाधिक पात्र जन समुदाय के कार्यक्रम से बाहर रह जाने की जोखिम अधिक रहती है।

1.82 उचित एवं अन्य कारकों के प्रभाव स्वरूप समीक्षा (अध्याय-9 में) यह आग्रह कर रही है कि ''प्रत्येक गांव के आंसू पोछने'' के महात्मा गांधी के आदर्श उद्देश्य की प्राप्ति का कहीं बेहतर माध्यम सार्वलौकिक आधारिक आय सुनिश्चित करने का नवीन विचार हो सकता है। ऐसे UBI प्रकल्प का एक सद्गुण यही है कि यह निम्न स्तर पर कार्यक्रम संचालन करने की क्षमता का आश्रित नहीं होगा। यह तो सभी पात्र जनों को ऊपर से लाभ प्रदान करने पर निर्भर रहेगा। अत: इसमें बहिष्कृति की आशंका कम रह जाएगी। साथ ही यह लाभ राशियां नौकरशाही के अनेक स्तरों को दूर करते हुए सीधे ही लाभान्वितों के बैंक खातों में जमा होने पर इस व्यवस्था में से क्षरण (सार्वजनिक वितरण प्रणाली की एक अंतरंग विशेषता) की समस्या पर भी अंकुश लग सकता है। हां, इस मार्ग में अनेक क्रियान्वयन स्तर की बड़ी चुनौतियां हैं जिन पर चिन्तन-मनन् होना बाकी है। अध्याय-9 अनेक मार्ग सुझा रहा है, प्रत्येक की अपनी-अपनी कठिनाइयां भी हैं।

रेखाचित्र 18क : गरीबों का सकल अंश रही

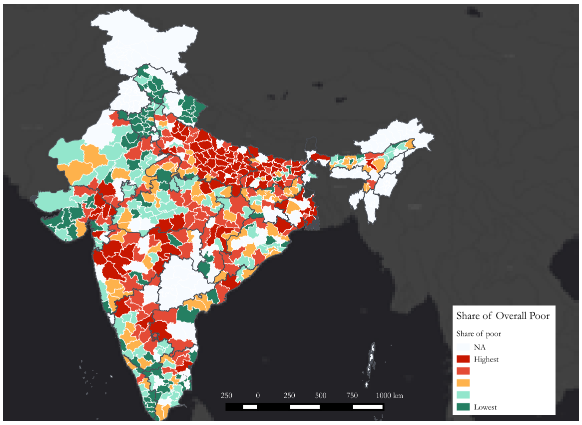

स्रोत: NSS, 2011-12

रेखाचित्र 18ख: गरीबों को आबंटन में कमी

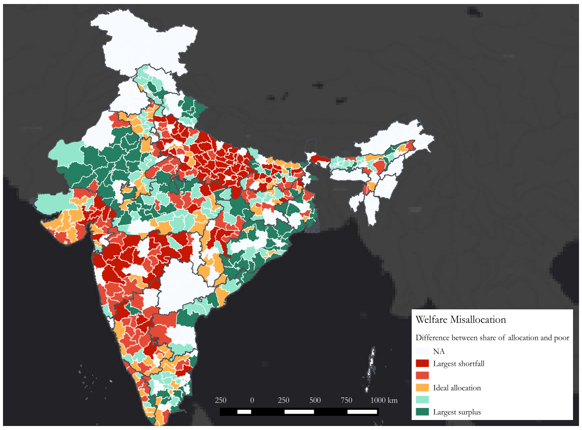

स्रोत: भारत सरकार और NSS 2011-12

किन्तु राजनीतिक पटल पर सभी पक्षों की इस विषय में वैचारिक सहमति सुझा रही है कि इस विचार का शीघ्र ही व्यवहारिक नीति विमर्श में समावेश होना चाहिए।

(ख) विनिमय दर नीति : चौकसी और निगरानी की नई विधियां

1.83 वैश्विक वित्तीय संकट, यूरो क्षेत्रीय संकट और चीन के 2015 के आशंकाग्रस्त घटनाक्रमों के बाद से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अवसर कम हो रहे हैं। हमने बॉक्स-2 में भी दिखाया था कि 2011 से लेकर निर्यात जीडीपी अनुपात कम हो रहा है और आगे डालर में तीखी वृद्धि अपेक्षित है, जिससे भारत, चीन, वियतनाम जैसे देशों की मुद्राओं की विनिमय दरों में गिरावट आएगी। जुलाई 2015 के बाद से ही युआन (दिसंबर 2016 में) लगभग 1.6 प्रतिशत गिर चुका है। परिणाम स्वरूप भारतीय रूपया युआन की तुलना में 6 प्रतिशत ऊपर हो गया है (रेखाचित्र 19)। पुन:संतुलन की युक्ति को स्थगित रखने की नीति से आगे भी करैंसी में मृदुलता बनी रहगी। यदि पूंजी के बाहर की ओर प्रवाह बने रहे तो यह मृदुलता अवश्यंभावी हो जाएगी (देखें आर्थिक समीक्षा, 2016, बॉक्स-1)।

1.84 निर्यात में अच्छी वृद्धि दर को बनाए रख पाना भारत के लिए जरूरी है। इसीलिए विश्व बाजार में भारतीय निर्यात की स्पर्धाशीलता का आंकलन आवश्यक है।

1.85 भारत की स्पर्धा क्षमता की पुन: समीक्षा करने का एक अन्य कारण भी है- वियतनाम, बंगलादेश और फिलिपीन्स जैसे देश अनेक उत्पादों और सेवाओं में भारत के प्रतिद्वंद्वी के रूप में उभर रहे हैं।

1.86 क्या भारत ने अभी तक विनिमय दर को स्पर्धाशील बनाए रखा है और भविष्य में क्या करना आवश्यक होगा?

1.87 वास्तविक प्रभावी विनिमय दर के आंकड़ों पर निगाह डालते ही स्पष्ट हो जाता है कि 2013 के संकट के बाद से भारतीय रूपए के मान में 19.4 प्रतिशत का सुधार हुआ है (यह जनवरी 2014 से अक्टूबर 2016 के बीच की तुलना है)। यह आंकलन IMF ने किया है, जबकि भारतीय रिवर्ज बैंक के आंकलन के अनुसार यह सुधार 12 प्रतिशत रहा है। किन्तु ये दोनों सूचक कुछ भ्रामक हो सकते हैं। संयुक्त अरब गणराज्य भारत का तेल आयात का एक प्रमुख स्रोत है और यहीं से अन्य देशों को भारतीय निर्यात होते है। इसी नाते रिजर्व बैंक के आंकलन में इस देश को अधिक भारमान प्रदान किया गया है। किन्तु इस व्यापार का स्पर्धाशीलता से शायद ही कुछ नाता हो। रिजर्व बैंक और IMF दोनों का ध्यान सकल व्यापार पर रहता है, केवल विनिर्माण व्यापार पर नहीं। जबकि अनेक नीतियों की दृष्टि से तो श्रम-सघन विनिर्माण पर ध्यान केंद्रित करना अधिक उपयोगी होगा। परिणाम स्वरूप हम यूरो को अधिक भारमान प्रदान कर बैठते हैं, जबकि हमारे वास्तविक स्पर्धी तो यूरोपवासी नहीं बल्कि एशियाई देश ही हैं।

1.88 अत: हम भारत के विनिर्माण प्रतिद्वंदियों पर

रेखाचित्र 19 : युआन-डालर तथा रूपए-युआन की परस्पर विनिमय दरें

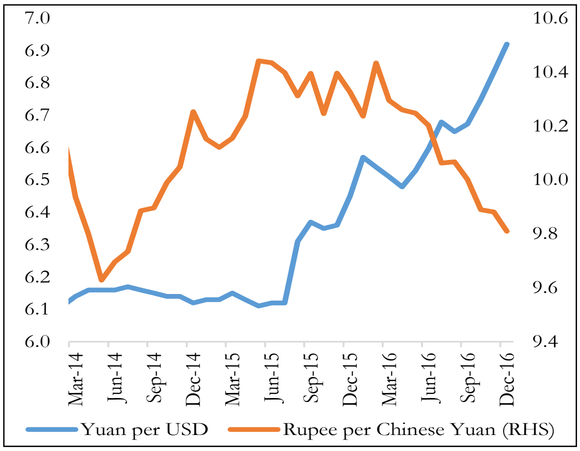

स्रोत: आरबीआई

रेखाचित्र 20 : वास्तविक प्रभावी विनिमय दर तुलनाएं (2014 = 100)

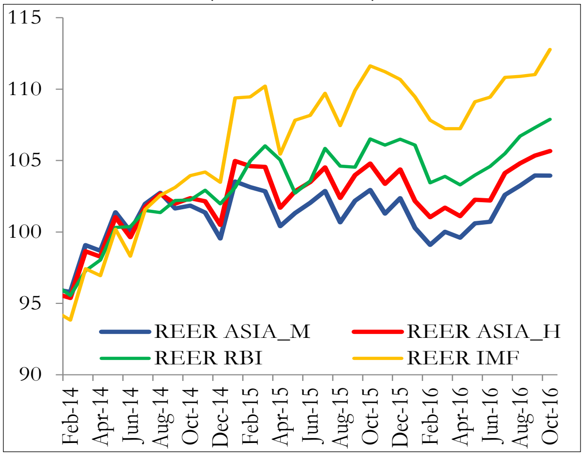

स्रोत: आरबीआई

केन्द्रित एक नवीन वास्तविक विनिमय दर सूचक की रचना कर रहे हैं। मूलत: हम उन देशों को अधिक भारमान प्रदान कर रहे हैं जो विश्व वित्तीय संकट के बाद से विनिर्माण में बहुत अधिक स्पर्धी हो गए है। यह विश्व निर्यात बाजार में उनके अंशभाग से सहज स्पष्ट हो जाता है। इस सूचक की रचना का विवरण परिशिष्ट–1 में दिया गया है। यहां तो हम केवल निष्कर्ष बता रहे हैं। रेखाचित्र 20 में IMF और रिजर्व बैंक के (36 करेंसी आधारित) सूचकों की हमारे आंकलित दो सूचकों से तुलना की गई है। एक REERASIA-M में हमने भारत के प्रतिद्वंद्वी (चीन, वियतना और फिलिपीन्स) देशों को कुछ उच्च भारमान दिया है तो दूसरे REER-ASIA-H में उन्हें अधिक उच्च भार प्रदान किया गया है। यही देश है; जिनका विश्व बाजार अंश 2010 के बाद से अधिक हो गया है।

1.89 यह आश्चर्यजनक जानकारी स्पष्ट हो रही है कि IMF और रिजर्व बैंक, दोनों ही 2014 से रूपए की स्थिति में सुधार का कहीं अधिक आंकलन कर रहे हैं। इसका मूल कारण उन द्वारा यूरो (जो सारी अवधि में दुर्बलताग्रस्त रहा है) को अधिक भारमान दिया जाना ही है। जब अपेक्षाकृत सुदृढ़ रही एशियाई करेंसियों से तुलना करते है तो REERASIA-M और NEERASIA-H दोनों ही दिखाते है कि स्पर्धाशीलता की हानि क्रमश: 8.3 प्रतिशत और 10.4 प्रतिशत ही रही है (जनवरी 2014 से अक्टूबर 2016 के बीच)।

1.90 दूसरे शब्दों में, व्यापार भागीदार देशों से अधिक पूंजी प्रवाह पाते हुए और उच्चतर स्फीति के बावजूद भारत ने अपने निर्यात को स्पर्धाशील बनाए रखने में सफलता पाई है। वर्ष 2010 से 215 के बीच विश्व बाजार में भारत के विनिर्मित निर्यात अंश में वृद्धि इसी बात को प्रमाणित करती है।

1.91 किन्तु यदि और आगे की ओर देखें तो IMF का आधार स्तर मापक बिल्कुल विपरीत दिशा में भ्रामक परिदृश्य की रचना कर सकता है। उदाहरण के लिए यदि युआन और अन्य एशियाई देशों की मुद्राएं डालर की अपेक्षा कमजोर पड़ जाएं किन्तु अन्य विनिमय दरें, विशेषकर डालर यूरो दर में अधिक बदलाव न हो (इस समय यूरो को अत्यंत निम्न स्तर पर आंका जा रहा है, अत: यह सहज संभव है) तो फिर एशियाई मुद्राओं का अधो–आंकलन करने वाला IMF का सूचक यह भ्रम पैदा कर देगा कि भारतीय रूपए की दर स्पर्धी है, जबकि वास्तव में इसमें ह्रास हो रहा होगा। अत: नीति पटल पर इसका एक ही निहित अर्थ है : यदि भारत सचमुच निर्यात स्पर्धी बने रहना चाहता है और इसे एशियाई निर्यातकों को लेकर चिंता है तो इसे उस विनिमय दर सूचक पर ध्यान देना होगा जो इन स्पर्धी देशों की मुद्राओं को अधिक भारमान प्रदान करता है।

(ग) व्यापार नीति

1.92 ब्रेक्जिट और अमेरिकी चुनाव के बाद से विश्व व्यापार नीति विमर्श में एक बड़ा परिवर्तन आ चुका है। अमेरिका में समष्टि आर्थिक परिवर्तन और बल धारण करेंगे तथा डालर में सुधार की वर्तमान प्रक्रिया और सशक्त होगी। 8 नवंबर, 2016 से दिसंबर अंत तक डालर में 5.3 प्रतशत का उछाल आया और इसने जनवरी 2017 में ही अपने व्यापार भागीदारों के मौद्रिक सूचक के आधार पर और 3.1 प्रतिशत की बढ़त दर्ज की है। अमेरिकी व्यापार नीतियों का इतिहास है कि 1950 के दशक मध्य में इनका सबसे अधिक संरक्षणवादी स्वरूप उभर कर आया था और उस समय भी मौद्रिक नीति में कड़ाई तथा राजकोषीय नीत में उदारता की जा रही थी।

1.93 विकसित देशों में संरक्षणवादी दबावों और भारत जैसे देशों के तीव्र आर्थिक विकास के लिए विश्व बाजारों के खुलेपन की जरूरतें देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि भारत एवं शेष उदीप्यमान देश मिलकर विश्व बाजार को खुला बनाए रखने के लिए निरंतर प्रयास करते रहें। विश्व व्यापार नेतृत्व में एक खालीपन की रचना हो रही है और आवश्यक हो रहा है क निर्बन्ध व्यापार के पक्ष में भारत का स्वर और बुलंद हो तथा वह अपने प्रभाव का प्रयोग करते हुए उस नेतृत्व का दायित्व संभालने में संकोच नहीं करे। हां, इसके लिए भारत को अपने बाजार को और उदार बनाना होगा अर्थात अपनी निर्बंधता का आरंभ अपने घर से करना होगा।

1.94 यहां दो विशेष सुयोग उभर कर आ रहे हैं। हमारा अध्याय–7 भारत के लिए श्रम सघन निर्यात संवर्धन की अनिवार्यता दर्शा रहा है। अत: भारत को सक्रिय रूप से ब्रिटेन और यूरोप के साथ निर्बंध व्यापार अनुबंधों पर

तालिका 1 : EU तथा UK के साथ मुक्त व्यापार समझौतों से अधिक निर्यात एवं रोजगार की संभावनाएं

	परिधन		चमड़े की वस्तुएं		जूते चप्पल	
	अतिरिक्त निर्यात ($मिलियन)	रोजगार में वृद्धि (संख्या)	अतिरिक्त निर्यात ($मिलियन)	रोजगार में वृद्धि (संख्या)	अतिरिक्त निर्यात ($मिलियन)	रोजगार में वृद्धि (संख्या)
ईयू	1483.6	76853	416.9	18542	216.9	9966
यूके	603.3	31176	103.8	4615	95.3	4381
योग	**2086.9**	**108029**	**520.7**	**23156**	**312.2**	**14347**

स्रोत: समीक्षा गणना

वार्तालाप करना चाहिए। यहां निर्यात और देश में रोजगार वृद्धि की संभावनाएं बहुत विशाल है। पिछले वर्ष की समीक्षा में प्रारंभ किए गए चिन्तन मनन के आधार पर हमारा आकलन है कि केवल परिधान, चर्म और जूतों का निर्यात $3 बिलियन बढ़ाया जा सकता है, साथ ही इससे 1.5 लाख लोगों के लिए रोजगार के नए अवसर भी पैदा होंगे (तालिका 1)।

1.95 साथ ही यह भी संभव है कि एशिया में प्रशांत क्षेत्रीय भागीदारी (TPP) तथा यूरोपीय संघ से एटलांटिक व्यापार एवं निवेश भागीदारी जैसी क्षेत्रीय प्रतिबद्धताओं से अमेरिका के पीछे हटने के कारण विश्व व्यापार संगठन का महत्व और प्रासंगिकता और अधिक हो जाएंगी। भू-राजनीतिक बदलावों के परिवेश में एक बड़े भागीदार होने के कारण विश्व व्यापार संगठन और बहुराष्ट्रवाद को पुन: जीवित करने की दिशा में भारत को अधिक सक्रिय प्रयास करने होंगे।

(घ) मौसम में परिवर्तन और भारत

1.96 दिसंबर 2015 की मौसम परिवर्तन संधि अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की एक नवीन उत्कृष्ट उदाहरण है। अब सारा ध्यान इस संधि की व्यवस्थाओं को लागू करने की ओर रहेगा। मौसम परिवर्तन की समस्या के समाधान में कार्बन उत्सर्जन की कीमत के निर्णायक महत्व को लेकर पहले ही व्यापक स्तर पर सहमति बन चुकी है (स्टेर्न, 2006, विट्समैन, 2007 और नॉर्बास)। भारत का अभी तक इस दिशा में क्या निष्पादन रहा है? जून 2014 से पैट्रोलियम कीमतों में भारी गिरावट के कारण मौसम परिवर्तन को रोकने की दिशा में

रेखाचित्र 21 : निहित कार्बन कर ($/t of CO_2)

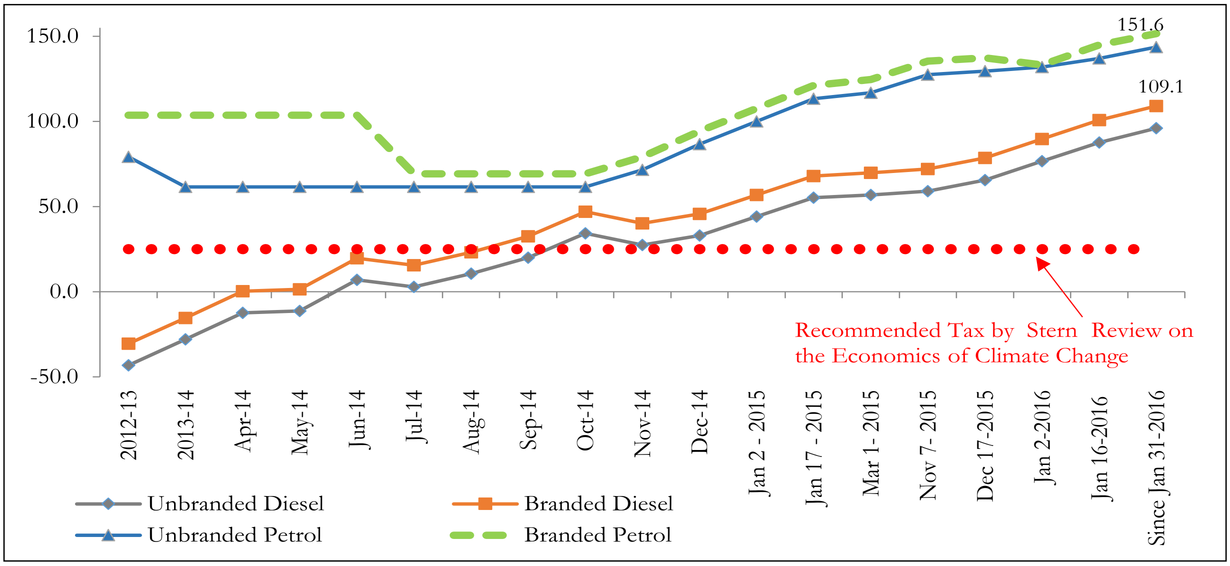

स्रोत: समीक्षा की गणनाएं

तालिका 2 : मुख्य देशों में स्थानीय पैट्रोलियम कर (डॉलर प्रति लीटर)

क्रमांक	देश	डीजल				पेट्रोल			
		जून-14	जन-16	नवंबर-16	*प्रतिशत परिवर्तन (जून 2014 से नवंबर 2016 तक)*	जून-14	जन-16	नवंबर-16	*प्रतिशत परिवर्तन (जून 2014 से नवंबर 2016 तक)*
1	भारत	0.00	0.38	0.38	large no	0.21	0.54	0.53	152.3
2	अमेरिका	0.13	0.14	0.14	5.4	0.11	0.12	0.12	6.3
3	चीन	0.30	0.28	0.28	-6.7	0.32	0.34	0.34	6.3
4	जापान	0.39	0.34	0.35	-9.7	0.63	0.55	0.57	-8.9
5	कनाडा	0.29	0.21	0.23	-21.2	0.37	0.27	0.29	-21.2
6	फ्रांस	0.60	0.74	0.75	25.1	1.18	0.93	0.92	-22.0
7	जर्मनी	0.64	0.68	0.69	8.0	1.24	0.93	0.92	-25.5
8	इटली	0.84	0.91	0.91	8.0	1.42	1.07	1.05	-26.2
9	स्पेन	0.50	0.58	0.59	17.0	0.97	0.71	0.71	-26.9
10	यू.के	0.98	1.08	0.97	-1.1	1.35	1.08	0.96	-28.8

स्रोत: जी 7 देशों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (http://www.iea.org/statistics/topics/pricesandtaxes/) अन्यथा वित्त मंत्रालय के अनुमान।

प्रयासों को पहुँचते गहरे आघात की दृष्टि से भी यह प्रश्न महत्वपूर्ण बन चुका है।

1.97 तालिका-2 तथा रेखाचित्र 21 में उपर्युक्त प्रश्नों के कुछ उत्तर मिल रहे हैं। जून 2014 में पैट्रोलियम कीमतों में कमी आरंभ होने से लेकर दिसंबर 2016 तक भारत ने ब्रांड नाम से विक्रित पेट्रोल पर उत्पादन शुल्क को रूपए 15.5 से बढ़ाकर 22.7 तथा ब्रांड नाम के डीजल पर रू. 5.8 से बढ़ाकर रू. 19.7 तक पहुँचा दिया है। तालिका 2 में बड़े जी-20 देशों में मौसम परिवर्तन विरोधी प्रयासों का परिमाण निर्धारण करने का प्रयास किया गया है। परिणाम बहुत ही चौंकाने वाले हैं।

1.98 भारत में तो पेट्रोल कर को डेढ़ गुना किया गया है, जबकि अधिकांश विकसित देशों ने कीमत में कमी का प्रभाव उपभोक्ता तक पहुँचा दिया है। उनके इस कदम से मौसम परिवर्तन क्रम को रोकने के प्रयासों को गहरा धक्का लगा है। परिणाम स्वरूप अब भारत यूरोपीय देशों को छोड़ पेट्रोल और डीजल पर कर लगाने में सबसे आगे निकल चुका है।

1.99 रेखाचित्र 21 भारत द्वारा उठाए कदमों में निहित कार्बन कर का आंकलन कर रहा है। अब कार्बन सब्सिडी की व्यवहारिक व्यवस्था को त्याग कर भारत लगभग $150 प्रति टन की दर से कार्बन कर लगा रहा है। यह स्टेर्न मौसम परिवर्तन समीक्षा की सिफारिश से 6 गुना अधिक है।

1.100 और अन्त में, दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य में भी भारत के जीवाश्मीय ईंधन प्रयोग पर विचार होना चाहिए। आज सकल ऊर्जा उपभोग में भारत का जीवाश्म ईंधन प्रयोग अंश विकास की तुल्य स्थिति से गुजरे अन्य देशों की अपेक्षा कितना है? रेखाचित्र 22 में इस जानकारी को क्रय शक्ति तुल्य प्रति व्यक्ति जीडीपी के आधार पर अंकित किया गया है। अभी तक और कल्पनीय भविष्य में भी भारत की यह जीवाश्म ईंधन अनुपात अपने निकटतम तुलनीय देश चीन से ही नहीं बल्कि विकास की तुल्य अवस्था में अमेरिका, ब्रिटेन और यूरोप से भी कम रहा है (और रहेगा)। यह भारत द्वारा हीलिंगड्म में व्यक्त प्रतिबद्धता कि हम प्रति व्यक्ति स्तर पर विकसित देशों से अधिक उत्सर्जन नहीं करेंगे को ही प्रमाणित कर रहा है। हां आगे की ओर देखें तो भारत को इस वक्र को और झुका कर अन्य देशों से नीचे लाने का प्रयास करना चाहिए ताकि विश्व मौसम परिवर्तन के पटल पर भी यह अच्छे नागरिक का मान-सम्मान बनाए रख सके।

(च) महिलाओं का एकान्त निश्चित करना

101. पिछले दो वर्षों से आर्थिक समीक्षा निरंतर एक नारी विषयक आयाम पर ध्यान दिलाती रही है।

रेखाचित्र 22 : ऊर्जा की सकल मांग/उपभोग में जीवाश्मीय ईंधन का अंश और प्रति व्यक्ति जीडीपी (1971-2040)

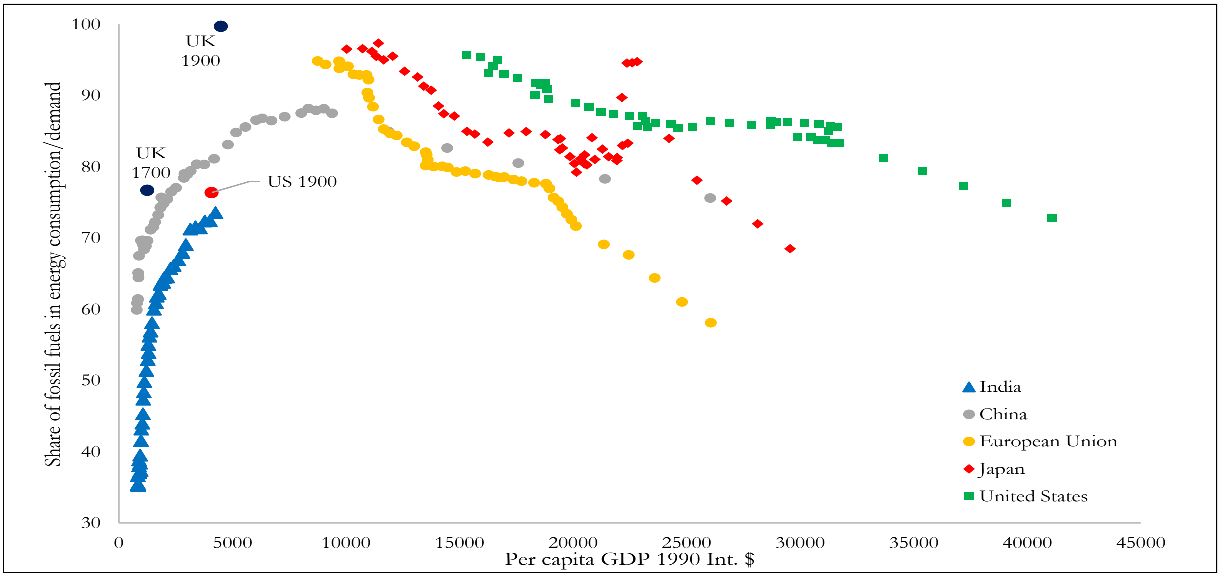

स्रोत : जीवाश्म ईंधन के पूर्वाकलित अंश (TPED में) 2020, 2025, 2030, 2035 और 2040 के लिए विश्व ऊर्जा संभावना, 2016 के आंकड़ों के आधार पर आंकलित हैं, इनमें कोयला, तेल और गैस विषयक नवीन नीति परिदृश्य को प्रतिव्यक्ति जीडीपी के साथ रखा गया है। यह मैड्डीसन प्रकल्प, 2013 का संस्करण उपलब्ध है : http://www.ggdc.net/maddison/maddison-project/home.htm, 2013 version. यूरोपीय संघ की जीडीपी के उपर्युक्त स्रोत से आंकलन में माल्टा, साइप्रस और लक्समबर्ग सम्मिलित नहीं हैं।

वर्ष 1971 से अभी तक ऊर्जा उपभोग में जीवाश्म ईंधन की जानकारी विश्व बैंक से उपलब्ध है।

सं.रा. अमेरिका की यही जानकारी US Energy Information Administration/ Annual Energy Review 2011 से ली गई है।

ब्रिटेन के जीवाश्म ईंधन उपभोग की जानकारी का स्रोत Warde (2007)[8] है।

वित्त वर्ष 2015 में परिवार नियोजन विधियां अपनाए जाने में नारी के विरूद्ध हिंसा (जोर जबर्दस्ती) की ओर ध्यानाकर्षण किया गया था। वर्ष 2016 में ''माँ और संतान'' पर एक अध्याय ने उनके दीर्घकालिक कुशलक्षेम को सुनिश्चित करने में सरकारी हस्तक्षेप के महत्व पर बल दिया गया था।

1.102 स्वच्छतापूर्ण सामाजिक व्यवहार और स्वस्थता के बीच संबंध तो भली प्रकार निरूपित हो चुका है (स्पीअर्स और कन्निंग्स, 2013)। हमारा यह अनुच्छेद तो यही समझाने का प्रयास कर रहा है कि स्वच्छता सेवाओं के अभाव का किस प्रकार नारी जगत पर अनावश्यक रूप से अधिक भार पड़ता है।

1.103 नारी पर यह बोझ कई रूप धारण कर सकता है : खुले में शौच के लिए जाने पर जीवन और शारीरिक जोखिम, शौचादि के लिए घर से बाहर जाना न्यूनतम रखने के लिए भोजन और जल का उपभोग न्यूनतम रखने की विवशता, प्रदूषित जल के कारण महिलाओं और बच्चों की प्रसव संबंधित संक्रमणों से मृत्यु, और अनेक अन्य प्रभाव।

1.104 नारी की निजी स्वच्छता का न केवल उसके स्वास्थ्य के लिए बल्कि अपने शरीर पर अपने नियंत्रण से सुलभ स्वातंत्र्य में भी झलकती है। यह शारीरिक एकांत का एक मौलिक अधिकार भी है। दूसरे शब्दों में इन सुविधाओं का सापेक्ष अभाव नारी वर्ग के लिए एक 'शुचिता असुरक्षा' का कारण बन रहा है।

1.105 स्वच्छता-शुचिता सेवाओं की अलभ्यता की जानकारी भी सभी को है। जनगणना, 2011 ने बताया था कि देश की आधी से अधिक जनसंख्या खुले में शौच करने को विवश है। अधिक नवीन जानकारी के अनुसार अब 60 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को (पेय जल

---

8 *Paul Warde (2007), Energy Consumption in England and Wales: 1500-2000 published by Consiglio Nazionale delle Ricerche (CNR), Istituto di Studio sulle Societa del Mediterraneo (ISSM)*

एवं स्वच्छता मंत्रालय, 2017)[9] तथा 89 शहरी परिवारों को (NSSO-2016)[10] को शौचालय उपलब्ध हो चुके हैं। ग्रामीण परिवारों के विषय में NSSO-2015 ने मात्र 45 प्रतिशत को यह सुविधा सुलभ बताई थी। कुल मिलाकर 2011 की जनगणना द्वारा बताई गई स्थिति में बहुत बड़ा सुधार हुआ है।[11]

1.106 सामान्य रूप से सुविधाओं के अभाव के कारण महिलाओं के समक्ष और अधिक चुनौतिपूर्ण स्थिति क्यों कर उत्पन्न हो जाती है? वॉश संस्थान एवं संबोधी[12] द्वारा 2016 में आर्थिक समीक्षा के लिए किया गया एक अध्ययन इस विषय में विशेष जानकारी प्रदान कर रहा है। उक्त सर्वेक्षण की रूपरेखा का विवरण परिशिष्ट–1 में है। ध्यान रहे कि यहां बताए गए तथ्य किसी कारण प्रभाव संबंध का निरूपण नहीं करते। यह कार्य इस समय चल रहे अध्ययनों द्वारा किया जाएगा।[13]

महिलाओं पर अनावश्यक रूप से भारी बोझा

- **शौचालयहीन परिवार :** अधिकांश शौचालयहीन परिवारों के विषय में इस त्वरित सर्वेक्षण ने कुछ चिंताजनक तथ्य उद्घाटित किए हैं, 76 प्रतिशत महिलाओं को शौच सुविधाएं प्रयोग करने के लिए बहुत अधिक दूर तक चलकर जाना पड़ता है।[14] लगभग 33 प्रतिशत महिलाओं ने एकांताभाव ही नहीं बल्कि शारीरिक उत्पीड़न तक की समस्याएं होना स्वीकार किया है। इन गंभीर समस्याओं से बचने के लिए प्रतिदर्श में 33 प्रतिशत महिलाओं ने भोजन कम करने तथा 28 प्रतिशत ने तो पानी कम पीने की बात भी स्वीकार की है। यह भोजन एवं जल की कमी न केवल अल्पकाल में रोग बाधाओं और अभाविताओं का कारण बन जाती है, बल्कि इनसे स्वास्थ्य पर अनेक दीर्घकालिक दुष्प्रभाव भी पड़ते है, बच्चियों में तो यह विकास क्रम को ही दुष्प्रभावित करने का कारण बन सकता है। अनेक अध्ययनों (सिंह आदि, 2008, कर्टिस एवं मीनास, 1955) ने यह भी बताया है कि खुले में शौचादि कर रहे स्त्री–पुरूषों को केवल प्राकृतिक धूप, बारीश, सर्दी आदि ही नहीं, कितनी ही बार सांप आदि जहरीले जानवरों द्वारा काटे जाने

रेखाचित्र 23 : महिलाओं के लिए शौचालय नहीं होने के संभावित परिणाम

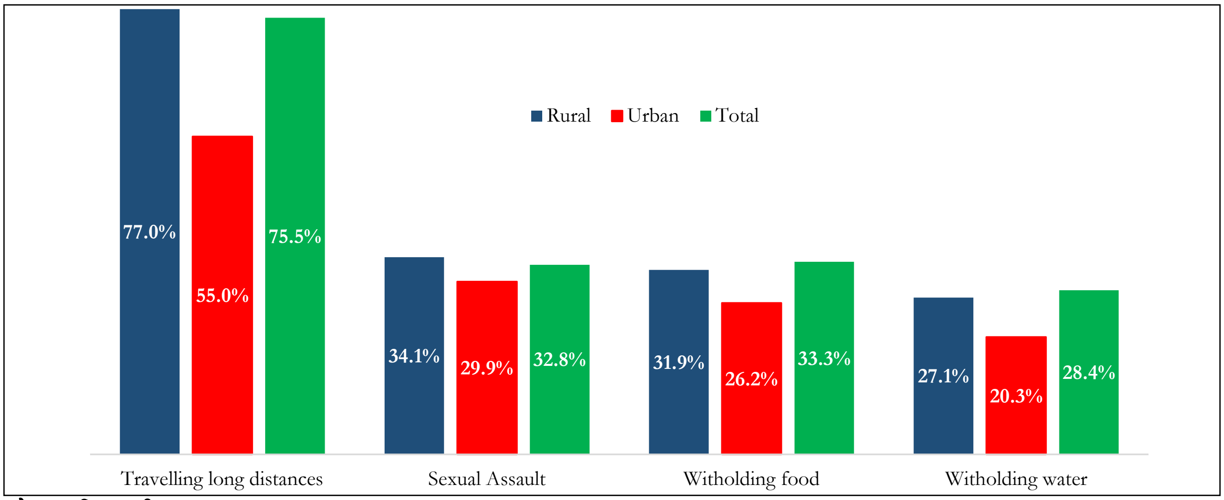

स्रोत: **त्वरित समीक्षा (2016)**

---

9 Swatchh Bharat Mission website: http://www.sbm/gov.in-accessed on 20 January 2016.

10 Swatchhta Status Report, NSSO, 2016

11 जनगणना 2011 तथा नवीनतम आंकड़ों के अंतर का मुख्य कारण स्वच्छ भारत मिशन कार्यक्रम के अन्तर्गत शौचालय निर्माण में आई तेजी है।

12 लिंगाधारित मानक और स्वच्छता एवं शुचिता पर एक त्वरित सर्वेक्षण, और जीवन की अवस्था के अनुसार निहितार्यका (किशोरियों, गर्भवती महिलाओं तथा 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों की माताओं), ने 10 राज्यों में 5 प्रकार की भौगोलिक परिस्थितियों में स्वच्छता–शुचिता की सुविधाओं का आंकलन किया गया था।

13 यहां उद्धत सभी अनुपात जाति एवं धर्म, गरीबी रेखा से ऊपर या नीचे की स्थिति, ग्रामीण/शहरी, लिंग तथा परिवार में अपने शौचालय की सुलभता जैसे कारकों के समायोजन के बाद आंकलित किए गए हैं। सभी उद्धत अंक 95% आश्वसित अंतराल में सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण पाए गए हैं।

14 त्वरित सर्वे ने इस अन्तर को व्यक्तियों द्वारा स्वयं बाताया गया चर माना है।

के भय का भी सामना करना पड़ जाता है।

- **शौचालययुक्त परिवार :** शौचालय सहित परिवारों में पाया गया है कि महिलाएं इनकी सुविधा का पुरूषों की अपेक्षा अधिक प्रयोग करती हैं। इससे स्पष्ट संकेत मिलता है कि उन्हें इनकी अधिक जरूरत होती है। कॉफे आदि (2016) ने पाया था कुछ परिवारों में अनेक कारणों से खुले में शौच के प्रति वरीयता दिखाई देती है (विशेषकर जहां मल आदि एक गड्ढे में ही जमा हो जाता है)। किन्तु त्वरित सर्वे बता रहा है कि शौचालय सहित परिवारों में महिलाओं द्वारा इस सुविधा का प्रयोग अधिक बेहतर ढंग से किया जाता है। यही बात NSSO-2016 ने स्वतंत्र रूप से भी पुष्ट की है। शौचालय युक्त परिवारों की 62 प्रतिशत महिलाएं सदैव उसका प्रयोग करती है, जबकि पुरूषों में सदैव प्रयोग करने वालों का अनुपात 52 प्रतिशत पाया गया। ग्रामीण क्षेत्रें के महिला एवं पुरूषों के सदैव शौचालय प्रयोग के अनुपात 56 तथा 43 प्रतिशत थे तो शहरी क्षेत्रें में 75 और 72 प्रतिशत। इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि स्वच्छ भारत के खुले में शौच मुक्त समुदायों की ओर अग्रसर होने में नारी वर्ग एक अग्रणी भूमिका निभा सकता है। यही वर्ग पुरूषों एवं बालकों को भी अपना शौच व्यवहार बदलने की प्रेरणा दे सकता है।

1.107 इस समस्या को सुलझाने की दिशा में पहला कदम समस्या की उपस्थिति को स्वीकार करना है। इसका अर्थ है सामाजिक दृष्टि से वर्जित विषय पर अधिक जानकारी को संकलित एवं संप्रेषित करना होगा। दूसरे यह स्वीकार करना होगा कि स्वच्छता सेवा सुलभ होने पर नारी के व्यवहार में बहुत शीघ्र सकारात्मक परिवर्तन

रेखाचित्र 24 : महिलाओं द्वारा शौचालयों का प्रयोग

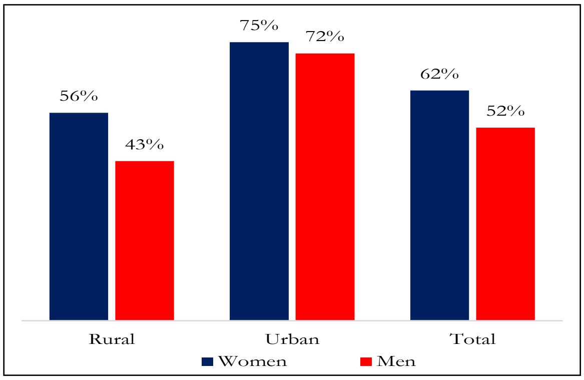

स्रोत: त्वरित सर्वेक्षण (2016)

आना एक निर्णायक विकास होता है। यही नहीं, इन सुविधाओं के अभाव में नारी वर्ग में गंभीर असुरक्षा की भावना के साथ-साथ पोषण हानि भी घर कर जाती है। इन्हीं कारणों से पर्याप्त स्वच्छता सुविधाएं, पेयजल, सुरक्षा और स्वस्थतापूर्ण व्यवहार, जो स्वच्छ भारत अभियान के उद्देश्य हैं- अधिक व्यापक स्तर पर एकांत के मूल अधिकार के अंग के रूप में एक गंभीर नीतिगत सरोकार का रूप धारण कर रहे हैं।

(छ) भारत का शीघ्र ही धूमिल पड़ जाने वाला जनांकीय लाभांश

1.108 विश्व के जनांकीय रूझानों में वर्ष 2016 एक दिग्वर्तन बिंदु रहा है। वर्ष 1950 के बाद इस वर्ष पहली बार विकसित देशों की कार्य आयु (WA) जनसंख्या (15-59 वर्ष का वय वर्ग) में गिरावट आई है [Ip (2015)]। संयुक्त राष्ट्र का पूर्वानुमान है कि अगले 3 दशकों में चीन और रूस में भी WA जनसंख्याओं में 30 प्रतिशत से अधिक की गिरावट आ जाएगी। किन्तु भारत WA जनसंख्या के मामले में अभी एक सुखद स्थिति में प्रतीत होता है। इसी अवधि में यहां तो कार्य कारने वाली जनसंख्या के अनुपात में एक तिहाई की वृद्धि होने वाली है। किन्तु ध्यान रहे, जनांकिकी एक सुअवसर प्रदान कर सकती है नियति का निर्धारण नहीं।

1.109 पिछले दो दशकों के आर्थिक शोध ने सुझाया है कि पूर्वी एशिया में संवृद्धि का दौर संभवत: जनांकीय कारकों द्वारा संचालित रहा है (ब्लूम आदि, 2003)। सकल जनसंख्या के अधिक बड़े अनुपात के कार्यरत वर्ग में होने से आर्थिक सक्रियता से देश को अधिक लाभ होते हैं। युवा पीढ़ियां अधिक उद्यमशील होती है (यह प्रवृत्ति उत्पादिता वृद्धि में सहायक होती है); ये बचत भी अधिक करती है (जिसके सकारात्मक प्रतिस्पर्धा प्रभाव संभव हैं- प्रसाद, राजन और सुब्रमण्यम, 2007; वी और झांग, 2011); और आर्थिक संवृद्धि के कारण इसलिए भी राजकोषीय आधार का विकास होता है कि निर्भर बच्चों और वृद्धजनों की संख्या कम होती है (सरकार को इनकी देखभाल पर कम व्यय करना पड़ता है, देखें ब्लूम आदि 2010)।

1.110 सिद्धांत तो यही सुझाता है कि जनांकीय लाभांश का संचालक विशेष चर WA और NWA जनसंख्या का अनुपात है, यह अनुपात एक होने का अर्थ है कि कार्य

समर्थ एवं निर्भर व्यक्तियों की संख्या एक समान है। WA/NWA अनुपात का स्तर और उसमें संवृद्धि के आर्थिक गतिविधि पर सकारात्मक प्रभाव होते हैं (क्लूम एवं केन्निंग, 2004)।

विशिष्ट भारतीय जनांकिकी

1.111 रेखाचित्र 25 में संयुक्त राष्ट्र संघ के मध्यम जनसंख्या पूर्वाकलनों के आधार पर 1970-2050 की अवधि में भारत, ब्राजील, कोरिया और चीन के WA/NWA जनसंख्या अनुपातों के विकास क्रमों की तुलना की जा रही है। यहां भारत की जनांकीय संरचना की तीन पृथक-पृथक विशेषताएं स्पष्ट हो रही है। इनके पूरे देश एवं इसके विभिन्न प्रांतों के संवृद्धि परिदृश्यों के लिए बड़े निहित अर्थ होंगे।

1.112 एक तो भारत का जनांकीय चक्र अन्य देशों से 10-30 वर्ष पीछे चल रहा है, अब यह अगले कुछ दशकों में उन देशों के प्रति व्यक्ति आय स्तरों को छू लेने का एक सुअवसर प्रदान कर रहा है।

1.113 साथ ही भारत के WA/NWA जनसंख्या अनुपात के उच्चतम स्तर के 1.7 तक पहुँचने की आशा है। यह ब्राजील और चीन से बहुत कम रहेगा, क्योंकि उन दो देशों में तो यह अनुपात कम से कम 25 वर्षो तक 1.7 बना रहा था। और अन्त में, भारत का यह अनुपात इस शीर्ष स्तर के आसपास अन्य देशों की अपेक्षा अधिक लंबी अवधि तक बने रहने की भी आशा है।

1.114 इस विशिष्ट स्वरूप का एक कारण भी है और संभावित परिणाम भी। कारण तो रेखाचित्र 26क में तुलनीय देशों और देश समूहों के सकल गर्भाधान दरों (TFR) के रेखांकन से स्पष्ट हो जाता है। यह चित्र दर्शाता है कि इन देशों ने भी अपनी द्वितीय महायुद्ध पश्चात् यात्र लगभग उतनी ही ऊँची TFR दर से प्रारंभ की थी। चीन और कोरिया में यह दर शीघ्र ही पुनर्स्थापन दर से कम रह गई, अर्थात् प्रति नारी दो से कम बच्चे। इससे 2000 के प्रारंभिक वर्षो तक WA अनुपात में तेजी से वृद्धि हुई, किन्तु फिर वृद्धता का संचार प्रारंभ हो गया। भारत में, उनके विपरीत TFR में गिरावट काफी धीमी रही है।

1.115 संवृद्धि प्रभाव कुछ इस प्रकार है। भारत को पूर्व एशियाई देशों की भांति संवृद्धि दरों में उच्चावचन की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। कम से कम जनांकीय लाभांश के कारण तो ऐसा नही हो पाएगा। किन्तु अन्य कारणों से संवृद्धि दर में तेजी अवश्यक आ सकती है। ये कारण सुधारों और आन्तरिक संस्थागत सामर्थ्य से जुड़े हैं। हां, भारत जनांकीय लाभांश के फलस्वरूप तीव्र आर्थिक संवृद्धि को अधिक लम्बी अवधि तक जारी रखने में अवश्य सफल हो सकेगा।

1.116 भारत की एक विशेषता उसके प्रांतों में विद्यमान व्यापक विषमता है। उनकी जनांकीय रचनाओं तथा विकासक्रमों में बहुत विविधताएं है। रेखाचित्र 25(ख) में 10 भारतीय राज्यों की कार्य आयु जनसंख्या का विकास क्रम दिखाया गया है, इसकी तुलना रेखाचित्र 25क में दिखाए गए अन्य उदीप्यमान बाजार व्यवस्थाओं के विकासक्रमों के साथ अवश्य करनी चाहिए।[15]

1.117 प्रायद्वीप क्षेत्र (पश्चिम बंगाल, करेल, कर्नाटक, तमिलनाडू और आंध्र प्रदेश) तथा आन्तरिक क्षेत्र (मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा बिहार) के बीच एक बहुत बड़ा अंतर दिखाई देता है। प्राय:द्वीपीय राज्यों का विकास क्रम चीन और कोरिया के निकट है, यहां WA जनसंख्या में तेजी से वृद्धि के बाद गिरावट की प्रवृत्ति स्पष्ट दिखाई दे रही है। हां, एक अंतर अवश्य है, पूर्वी देशों की अपेक्षा इन प्रांतों में WA जनसंख्या अनुपात का शीर्षस्तर कम ही रहेगा (पश्चिम बंगाल अपनी अतिनिम्न TFR के कारण कोरिया के निकटस्थ दिखाई दे रहा है)। इसके विरीत आन्तरिक प्रांतीय क्षेत्र WA जनसंख्यानुपात में चल रही वृद्धि के कारण अभी और आगे तक युवा एवं गत्यात्मक बना रहेगा, इसका शीर्ष स्तर तो वर्तमान शताब्दी के मध्य में ही आ पाएगा।

1.118 प्राय:द्वीपीय एवं आन्तरिक प्रांतों के बीच यह विभाजन मूलत: उनके TFR के स्तरों के कारण है (देखें रेखाचित्र 26क यह 26ख का TFR प्रतिरूप है)। जनांकीय दृष्टि से एक नहीं दो भारत हैं, उनके नीतिगत सरोकार भी अलग-अलग होंगे। एक भारत वह है जहां शीघ्र ही वृद्धता का संचार प्रारंभ हो जाएगा, वहां वृद्धजन

[15] नवीनतम गर्भाधान और मृत्युदरों पर आधारित प्रांतवार जनांकीय पूर्वाकलन (2011-2050) प्रो. एस इरूडिया राजन और डॉ. एस सुनीता, सेंटर फॉर डिवेल्पमेंट स्टडीज, केरल ने किया है।

रेखाचित्र 25 : कार्यशील एवं गैर कार्यशील जनसंख्या अनुपात (WA/NWA)

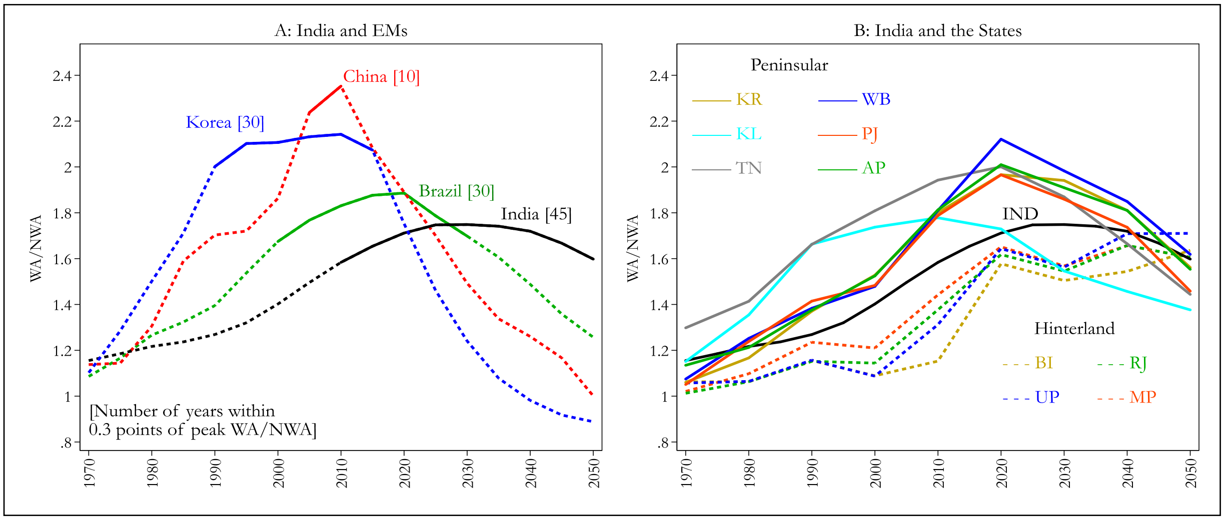

रेखाचित्र 26 : भारत में TFR में धीमी गिरावट : एक दौ-धारी तलवार

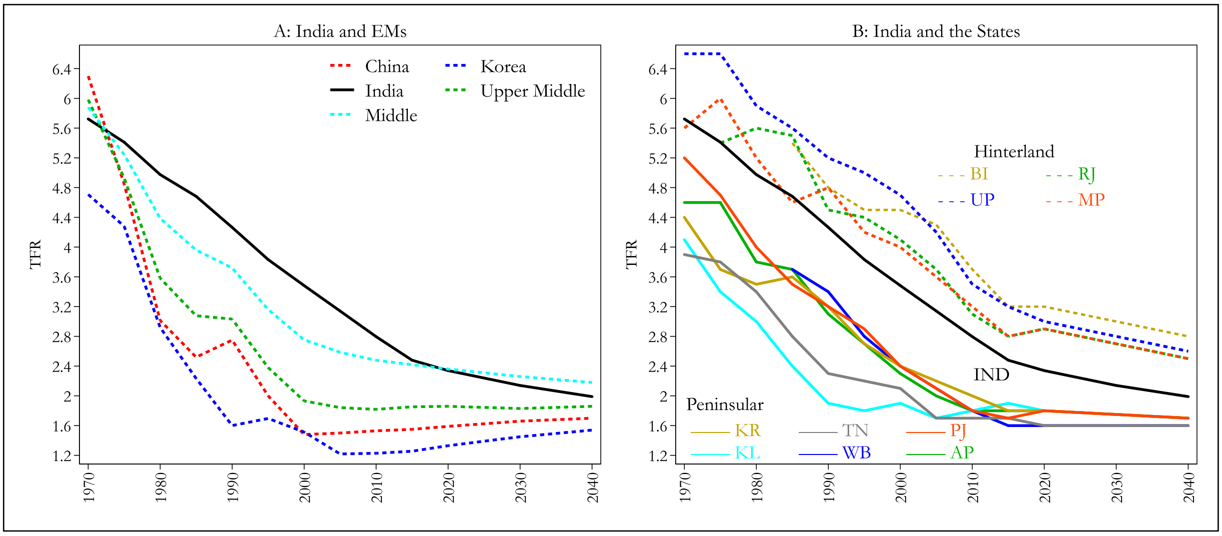

स्रोत: **भाग (क) : UN World Population Prospects (2015)**

भाग (ख) : भारत की जनगणना पर आधारित
प्रो. इरूदया राजन (CDS, केरल) का अध्ययन (रेखाचित्र 28, 29)

समाज और उसकी आवश्यकताओं पर अधिक ध्यान देना आवश्यकता होगा। दूसरा वह भारत है जो युवा है, वहां तो शिक्षा, कौशल प्रदान करना आवश्यक होगा, साथ ही रोजगार के अवसरों के सृजन पर भी ध्यान केंद्रित करना होगा। हां, देश के भीतर विद्यमान विविधताएं किसी सीमा तक अधिक श्रम गतिशीलता के माध्यम से इन सरोकारों का समाधान पाने में सहायक हो सकती हैं। उससे जनांकीय असंतुलन का भी निवारण होगा।

संवृद्धि प्रभाव

1.119 इस जनांकीय प्रतिरूप के संवृद्धि पर दो महत्वपूर्ण प्रभाव होंगे। एक तो लगता है कि भारत के लिए जनांकीय लाभांश का शीर्ष स्तर शीघ्र ही आने वाला है। रेखाचित्र 26 'क' के अनुसार समस्त भारत के लिए यह शीर्ष स्तर 2020 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में ही आ जाएगा। किन्तु रेखाचित्र 26'ख' बता रहा है कि यह प्राय:द्वीपीय क्षेत्र में 2020 में तो आन्तरिक क्षेत्र में 2040 के आसपास संभव होगा।

1.120 मोदी और अय्यर (2011) की विश्लेषण विधि पर आधारित तालिका-3 ने पिछले एवं आगामी चार दशकों के लिए भारत के जनांकीय लाभांश का आंकलन किया है (अर्थात यह आंकलित किया है कि केवल

जनांकीय कारणों से कितनी अतिरिक्त संवृद्धि संभव हुई है)। यहां आंकड़े 2011-20 की अवधि में अपना शीर्ष स्तर 2.6 प्राप्त कर आगे घटते दिखाई देते हैं। संवृद्धि में अतिरिक्त उछाल का स्तर 2020 के दशक में 1.8 प्रतिशत बिन्दु रहने की अपेक्षा है। दूसरे शब्दों में, भारत अगले चार वर्षों में ही अपने उच्चतम जनांकीय लाभांश को प्राप्त कर चुका होगा। किन्तु ध्यान रहे, इससे आगे यह लाभांश ऋणात्मक नहीं हो जाएगा, केवल इसके सकारात्मक प्रभाव कुछ धीमे होने लगेंगे।

तालिका 3 : भारत के लिए पूर्वाकलित जनांकीय लाभांश

दशक	जनांकीय लाभांश के कारण प्रतिव्यक्ति आय में अतिरिक्त वृद्धि	WA/NWA (WA कुल जनसंख्या) दशक के आरंभ में
2001-10	1.44	1.33 (57.1)
2011-20	2.62	1.53 (60.5)
2021-30	1.81	1.81 (64.4)
2031-40	1.92	1.72 (63.2)
2041-50	1.37	1.72 (63.3)

स्रोत: **समीक्षा की गणनाएं**

1.121 संवृद्धि पर प्रभाव का दूसरा प्रभाव देश भर में वितरण-आवंटन से संबंधित है। इसकी एक विधि तो राज्यों के स्तरों पर अतिरिक्त संवृद्धियों की वर्तमान प्रतिव्यक्ति जीडीपी से तुलना है। रेखाचित्र 27 में इन्हीं दो चरों को अंकित किया गया है। यहां सबसे अच्छा समाचार यही है कि इनके बीच ऋणात्मक संबंध स्पष्ट हो रहा है। दूसरे शब्दों में, अपेक्षाकृत गरीब प्रांतों को भविष्य में जनांकीय लाभांश की प्राप्ति होने की संभावना है। परिणाम स्वरूप, देश भर में आय के स्तरों में एक अभिसृति दिखाई देगी।

1.122 इस आशाजनक दृश्यांकन में भी बिहार, जम्मू एवं कश्मीर, हरियाणा और महाराष्ट्र धनात्मक "बहिष्शायी" प्रतीत होते हैं अर्थात् इनकी वर्तमान आय की तुलना में भविष्य में इनका जनांकीय लाभांश कहीं उच्चतर होगा। इस अतिरिक्त लाभांश के फलस्वरूप जहां बिहार अन्य प्रांतों के निकट पहुँचेगा वहीं पहले से ही समृद्ध

रेखाचित्र 27 : प्रतिव्यक्ति आय 2011 और जनांकीय लाभांश (2011-31)[16]

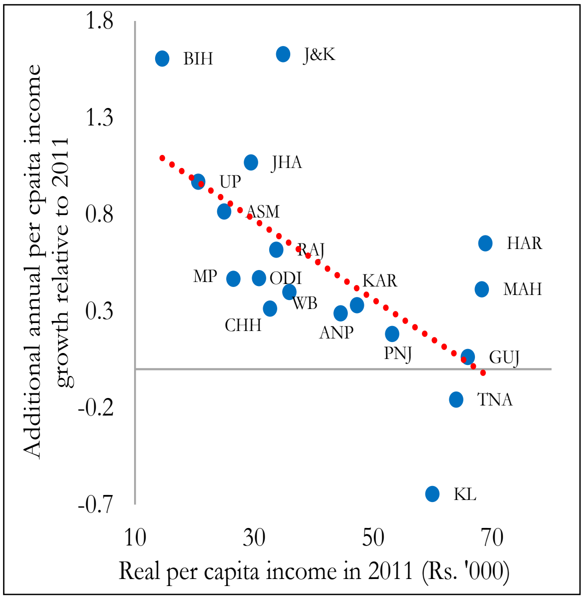

स्रोत : **समीक्षा की गणनाएं**

हरियाणा और महाराष्ट्र भारत की औसत से कहीं ज्यादा दूर छलांग लगा जाएंगे। दूसरी ओर केरल, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और पश्चिम बंगाल ऋणात्मक बहिष्शायी है, इनके जनांकीय लाभांश वर्तमान आय स्तर से कम रहेंगे। परिणाम स्वरूप अपेक्षाकृत गरीब प्रांत और पिछड़ जाएंगे, अपेक्षाकृत समृद्ध केरल भी औसत स्तर की ओर अग्रसर हो जाएगा, इसकी संवृद्धि दर को उत्साह प्रदान करने वाले कारक तेजी से शिथिल हो रहे हैं। इन सबसे केवल एक ही स्थिति में बचा जा सकता है : सुधार और संवृद्धि की प्रक्रियाओं को और अधिक बल प्रदान किया जाए।

1.123 भारत में जनांकीय लाभांश प्रेरित संवृद्धि क्रम अगले पांच वर्षों में अपने शीर्ष स्तर को छूने वाला है, क्योंकि देश का कार्यवय जनसंख्या अनुपात अब उच्चतर स्तर को पा रहा है। किन्तु इस अनुपात में कमी का क्रम बहुत धीमा रहेगा, इसी कारण भारत को पूर्वी एशिया की भांति संवृद्धि में तीव्र गिरावट का अनुभव नहीं करना पड़ेगा। साथ ही, प्राय:द्वीपीय एवं आन्तरिक प्रांतों में विशाल जनांकीय अन्तर भी इन क्षेत्रें के उस शिखर स्तर को पाने के समय में भारी अन्तर ला सकते हैं।

[16] यह माना है कि प्रत्येक राज्य को WA/NWA में वृद्धि से उतना ही जनांकीय लाभांश मिलता है जितना औसत स्तर पर पूरे भारत को मिलता है। यह बड़ी महत्वपूर्ण मान्यता असत्य भी हो सकती है, क्योंकि लाभांश का वास्तविक स्तर तो प्रशासन, राज्य स्तर पर नीति परिवेश तथा विभिन्न राज्यों के बीच प्रवसन पर निर्भर होगा।

यही नहीं इनके कारण श्रम की गतिशीलता के माध्यम से जनांकी असंतुलन का भी निवारण संभव है (देखें अध्याय-12)। किन्तु शीघ्र ही विलुप्त होने की आशंका से ग्रस्त इस जनांकीय लाभांश को अधिकतम करने के लिए तुरंत आवश्यक सुधार लागू करने की अनिवार्यता को नकारा नहीं जा सकता।

संदर्भ

1. Aiyar, Shekhar, and AshokaMody. *"The Demographic Dividend: Evidence from the Indian States." India Policy Forum. No. Volume 9. National Council of Applied Economic Research, 2013.*
2. Bloom, David E., David Canning, and Jaypee Sevilla. *"The demographic dividend: A new perspective on the economic consequences of population change. Rand Corporation, 2003.*
2. Bloom, David E., and David Canning. *"Global Demographic Change: Dimensions and Economic Significance." Population and Development Review 34 (2008): 17-51.*
3. Bloom, David E., David Canning, and Günther Fink. *"Implications of population ageing for economic growth." Oxford review of economic policy 26.4 (2010): 583-612.*
4. Coffey Diane, Gupta Aashish, *Hathi Payal, Spears, D., Srivastav Nikhil, Vyas Sangita (2016). Understanding Open Defecation in Rural India, EPW*
5. Curtis C. and Minjas J (1985). *Expanded Polysterene for mosquito control. Parasitology Today 1, 36.*
6. Ip, Greg. *"How Demographics Rule the Global Economy." Wall Street Journal. Nov. 22, 2015 [http:èèwww.wsj. comèarticlesèhow-demographics-rule-the-global-economy-1448203724, accessed: 11:08 am, January 23, 2016]*
7. National Sample Survey Organization (NSSO). 2016. *Swachhata Status Report. Ministry of Statistics and Programme Implementation, Govt of India.*
8. Prasad, Eswar S., Raghuram G. Rajan, and Arvind Subramanian. *"Foreign Capital and Economic Growth." Brookings Papers on Economic Activity 1.2007-1 (2007): 153-230.*
9. Singh, J, Bhoi S, Gupta V, Goel A (2008). *Clinical Profile of Venomous Snake Bites in a North Indian Military Hospital. Journal of Emergencies, Trauma, and Shock 1, 78-80.*
10. Spears, D., Ghosh, A., Cumming, O. (2013). *Open Defecation and Childhood Stunting in India: An Ecological Analysis of New Data from 112 District*
11. Wei, Shang-Jin, and Xiaobo Zhang. *"The competitive saving motive: Evidence from rising sex ratios and savings rates in China." Journal of political Economy 119.3 (2011): 511-564.*

परिशिष्ट I : वैकल्पिक विनिमय दरों के सूचकांक के लिए करेंसी भारमान

क्र. सं.	देश	IMF 25 देश	RBI 36 करेंसियां	Asia-H 30 देश	Asia-M देश 30
		25 देश	36 देश	30 देश	30 देश
1	संयुक्त राज्य	**17.82**	**8.80**	**7.86**	**11.44**
2	चीन	**12.47**	**10.84**	**43.51**	**31.12**
3	जर्मनी	9.08		3.36	5.04
4	जापान	6.13	2.72	2.10	3.15
5	ब्रिटेन	5.58	2.36	2.60	3.52
6	फ्रांस	4.63		1.61	1.96
7	बेल्जियम	4.53		2.64	3.95
8	ईटली	4.33		1.39	2.09
9	कोरिया	4.26	2.65	2.26	3.39
10	सिंगापुर	3.53	3.37	2.30	3.45
11	संयुक्त अरब अमीरात	2.84	11.44		
12	आस्ट्रेलिया	2.47	2.36		
13	नीदरलैंड	2.39		0.94	1.41
14	कनाडा	2.20	0.69		
15	स्पेन	2.12			
16	ताइवान	1.96	1.18	0.83	1.24
17	मलेशिया	1.90	2.07	1.12	1.68
18	रूसी संघ	1.85	0.97	1.12	1.46
19	थाइलैंड	1.70	1.28	1.18	1.77
20	इंडोनेशिया	1.51	3.02	0.71	1.06
21	स्वीटजरलैंड	1.42	4.80	0.70	0.94
22	ब्राजील	1.41	1.51		
23	स्वीडन	1.34	0.40		
24	इजराईल	1.28	0.95	0.77	1.16
25	तुर्की	1.26	0.69	0.96	1.01
26	साऊदी अरब		5.51	1.93	1.94
27	हांगकांग		3.41	4.01	5.63
28	कुवैत		2.52		
29	नाइजीरिया		2.49		
30	ईरान		2.38	0.55	0.82
31	दक्षिण अफ्रीका		2.08	0.57	0.86
32	कत्तर		1.89		
33	वियतनाम		0.81	5.80	3.36
34	मिश्र		0.75		
35	श्रीलंका		0.74	0.56	0.85
36	बंगलादेश		0.73	1.21	1.09
37	मैक्सिको		0.58	4.45	2.57

क्र. सं.	देश	IMF 25 देश	RBI 36 करेंसियां	Asia-H 30 देश	Asia-M देश 30
		25 देश	36 देश	30 देश	30 देश
38	केनिया		0.45		
39	पाकिस्तान		0.36		
40	अर्जेंटीना		0.25		
41	फीलिपीन्स		0.24	1.36	0.88
42	पोलैंड			0.90	0.64
43	चैक गणराज्य			0.71	0.51
	यूरो क्षेत्र	**27.08**	**12.69**	**11.56**	**15.62**
	कुल भार	100.01	99.98	100.00	100.00
	शीर्ष 20 करेंसियां	93.30	88.91	92.76	91.33

ASIA-H (ASIA-M) उन कल्पनिक समुच्चयों को दर्शा रहे हैं जहां एशियाई देशों को अन्य दो सूचकों की अपेक्षा अधिक उच्च सामान्य अधिक मान दिया गया है। प्रत्येक भारमान विधि में तीन शीर्ष करेंसियों को गहरे छापा गया है।

इन भार मानों का निर्धारण कैसे करते हैं? हम प्रत्येक व्यापारिक भागीदार के लिए दो भार लेते हैं : पहला भार तो भारत के विनिर्मित आयात में उस देश का वास्तविक अंश (W1) है; दूसरा भार आंकलित करने के लिए उन देशों पर ध्यान दिया जाता है, जिन्होंने 2010-15 की अवधि में विश्व विनिर्मित निर्यात में अपना अंश बढ़ाने में सफलता पाई है। यह UNCTAD के आंकड़ों पर आधारित है। ऐसे प्रत्येक देश की वृद्धि का शेष सभी देशों की वृद्धि से अनुपास W2 आंकलित किया जाता है। अत:, उदाहरण के लिए यदि 10 देशों ने कुल मिलाकर अपना निर्यात अंश 10 प्रतिशत बढ़ाया हो जिसमें चीन की 4 प्रतिशत बिन्दु की वृद्धि भी शामिल है तो चीन का अंश 0.4 होगा। इसी प्रकार अन्य देशों के भार आंकलित होते हैं। ASIA-H में हमें W1 और W2 को समान भार प्रदान करते हैं, किन्तु ASIA-M में इनके भार क्रमश: 0.75 और 0.25 रखे जाते हैं।

परिशिष्ट-II स्वच्छता सर्वेक्षण का विवरण

प्रतिदर्श का आकार : त्वरित अध्ययन के प्रतिदर्श में जीवन चक्र भर में फैले हुए संवादी थे :

- किशोरियां (10-19 वर्ष वर्ग)
- गर्भवती महिलाएं
- 0-60 माह की आयु के बच्चों वाली महिलाएं

तुलना करने के लिए इन्हीं परिवारों के एक उपप्रतिदर्श के पुरूषों को भी सम्मिलित कर लिया गया था।

सर्वेक्षण के लिए देश को 5 भौगोलिक क्षेत्रें में बांटा गया था : उच्चतम IHHL प्रसार; उच्च IHHL प्रसार; मध्यम IHHL प्रसार; निम्न IHHL प्रसार और निम्नतम IHHL प्रसार। प्रत्येक क्षेत्र से दो राज्य चुने गए। एक उच्च प्रदर्शन वाला दूसरा निम्न निष्पादन वाला। प्रत्येक राज्य से 2 जनपद, प्रत्येक जनपद से 12 प्राथमिक सर्वे इकाईयां और प्रत्येक PSU से 18 परिवार चुने गए। कुल मिलाकर 4320 परिवारों का प्रतिदर्श बना, जिसमें 4255 महिलाएं आर 1450 पुरूष मिलकर 5705 का आकार बनाते थे। प्रांत और जनपदों का चयन IHHL प्रसार के आधार पर हुआ। प्रत्येक क्षेत्र से उच्च एवं निम्न निष्पादक राज्य चुना गया यही कसोटी राज्य से जनपद चुनने में प्रयोग की गई। 18 संवादियों का चयन प्रत्येक प्रतिदर्श Use से यादृच्छिक विधि से किया गया, वे तीनों संवाद वर्गों में समान रूप से विभाजित थे। एक त्रुटि यही है कि इसे संपूर्ण रूप से प्रतिनिधि प्रतिदर्श नहीं कह सकते।

विलक्षण विचार-भेद ग्रस्त भारत के लिए एक आर्थिक दृष्टिबोध

02

अध्याय

''अर्थशास्त्रियों और दार्शनिकों के विचार, चाहे वे सही हों या गलत, सामान्य धारणा की अपेक्षा कहीं अधिक सशक्त होते हैं। वस्तुत: विश्व पर शायद ही किसी और बात का इतना प्रभाव रहता है।''

-जोहन मेनार्ड कैन्ज

वर्ष 1980 के आसपास से भारत में आर्थिक संवृद्धि रूपी निष्पादन बहुत प्रभावशाली रहा है- एक लोकतांत्रिक समाज की तो यह एक बड़ी उपलब्धि है। इसी क्रम को और बल प्रदान करने वाले नीतिगत सुधारों ने भारत को वस्तुओं एवं पूंजी का मुक्त हृदय से स्वागत करने वाला देश बनने की दिशा में अग्रसर करते हुए व्यष्टि स्तरीय दक्षता और समष्टि स्तरीय राजकोष अंश की दृष्टियों से सार्वजनिक क्षेत्र के आकार को घटाया भी है। किन्तु अभी ऐसी चुनौतियां विद्यमान हैं जो इस दिशा में अधिक तेजी से प्रगति को बाधित कर सकती हैं- इनका एक स्रोत तो यही है कि भारत ने अपनी विकास यात्रा एक भीषण सामाजिक विभाजनों से ग्रस्त (विलक्षण विचार-भेदग्रस्त) लोकतंत्र के रूप में प्रारंभ की थी। इन चिरपोषित चुनौतियों में सम्मिलित हैं संपदा अधिकारों और निजी क्षेत्र के विषय में उभय भाविता (जान बूझकर अपनाया गया अस्पष्ट चिन्तन), सरकार की क्षमताओं (विशेषकर अनिवार्य सेवाओं की आपूर्ति कर पाने में) की त्रुटियां और दक्षताहीन पुन:वितरण। इन चुनौतियों का सामना करने में केवल निहित स्वार्थों को पार करना पर्याप्त नहीं होगा- इसमें तो वैचारिक एवं संप्रेषण-चिन्तन के स्तर पर व्यापक समाजस्तरीय बदलावों की भी आवश्यकता पड़ सकती है।

I. विषय प्रवेश

2.1 भारत की आर्थिक नीतियों के आधार-दर्शन की झलक दिखाने वाले बृहद परिदृश्य में दो प्रावस्थाएं स्पष्ट होती हैं। पहला क्रम तो 'समाजवाद' की लगभग आधी शती का हैं। इसमें आर्थिक राष्ट्रवाद और संरक्षणवाद ही मार्गदर्शक सिद्धांतों के रूप में स्थापित रहे उन वर्षों में सार्वजनिक क्षेत्र अर्थतंत्र के नियंत्रण शिखर पर पहुँच गया था और सरकार निजी फर्मों की निवेश, उत्पादन और व्यापार जैसी पूर्णत: व्यष्टि स्तरीय निर्णय प्रक्रिया में भी घुसपैठ करने लगी थी। वह नीति रचना 1991 के बाद से नकार दी गई है (भगवती एवं पानागड़िया, 2013)। किन्तु अभी तक यह स्पष्ट नहीं हो पा रहा कि उसके स्थान पर बनी रचना को क्या नाम दिया जाए। आप ये प्रश्न उठा सकते हैं: नीति निर्माताओं ने अस्वीकार कर दिया है, किस सीमा तक त्याग दिया है और यह पुरानी रचना से विच्छेद किस प्रकार किया गया है। इन प्रश्नों का उत्तर किसी एक सरकार या दल को नहीं देना है- यह प्रश्न तो भारतीय अर्थचिन्तन के व्यापक विचार पटल पर पूछा जा रहा है।

2.2 एक स्तर पर तो इस प्रश्न का उत्तर सहज स्पष्ट प्रतीत होता है। भारत ने अपने 'समाजवादी' वैचारिक दर्शन के स्थान पर ''वाशिंगटन सहमति'' से मिलते जुलते किसी विचार को स्थापित कर लिया है: इसमें मुक्त व्यापार, मुक्त पूंजी प्रवाह और निजी क्षेत्र पर निर्भरता के उसी प्रतिमान के दर्शन होते हैं जिसका अधिकांश पूर्वी एशिया के देशों में सफलतापूर्वक प्रयोग हुआ है।[1] पिछली एक चौथाई शती में भारत में सत्तासीन रही सभी सरकारों ने इसी प्रकार के सुधारों

[1] चीन को छोड़कर, वह एक विशेष केस है।

की नीतियों का अनुसरण किया है। उदाहरण के लिए वर्तमान सरकार ने पिछले दो वर्षों में अपनी नई मौद्रिक नीति रूप रेखा में निम्न स्फीति दर की प्रतिबद्धता को एक संस्थानात्मक स्वरूप प्रदान कर दिया है। इसी प्रकार व्यवसाय करने की लागतों को घटाने और एक देशीय-विदेशीय निवेश मित्र वातावरण की रचना की दिशा में बड़े प्रयास किए गए हैं। यही नहीं, पिछले 6 मास में (विवरण अध्याय-1 में देखें) सरकार ने आधार विधेयक, दीवालियापन संहिता और वस्तु एवं सेवा कर जैसे संविधान संशोधनों को भी पारित करा लिया गया है।

2.3 पिछले 25 वर्ष से चले इस सुधार क्रम के परिणाम स्परूप भारत में शानदार बदलाव आया है- यह अब एक अवरूद्ध संवृत और निरूद्योग अर्थव्यवस्था से अनावृत एवं समृद्धिशील अर्थव्यवस्था में परिवर्तित हो चुका है। देश की यह प्रगति केवल गुणात्मक नहीं है। इसका मापन भी हो सकता है। उदाहरण के लिए इन चार मानक मापकों पर विचार करें: व्यापार हेतु खुलापन; विदेशी पूंजी के प्रति खुलापन; व्यापारिक गतिविधियों में सार्वजनिक उपक्रमों के वर्चस्व का स्तर; और सकल व्यय में सरकारी व्यय का अंश।

2.4 आइए व्यापार-जीडीपी अनुपात [(आयात+निर्यात) ÷ सकल घरेलू उत्पाद] से प्रारंभ करें। एक मूलभूत तथ्य तो भूगोल से जुड़ा हुआ है : बड़े आकार के देश छोटे देशों की तुलना में व्यापार (विदेशों से) कम ही करते हैं। उनके अपने बड़े आकार के कारण उनके लिए शेष विश्व से व्यापार करने के लाभ अपेक्षाकृत उनके अपने आन्तरिक व्यापार की तुलना में कम रह जाते हैं। छोटे देशों की स्थिति इनके एकदम विपरीत होती है : आन्तरिक बाजार का आकार सीमित होने के कारण उनके शेष विश्व से व्यापार के लाभ अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण हो जाते हैं और इसी कारण उनके व्यापार-जीडीपी अनुपात भी प्राय: अधिक रहते हैं।

2.5 रेखा चित्र 1(क) में कई देशों के अपने आकार के साथ उनके व्यापार-जीडीपी अनुपात (ऊर्द्धव अक्ष पर) चित्रित किए गए हैं। देशों का आकार जनसंख्या के लघुगणक द्वारा क्षैतिज अक्ष पर दर्शाया गया है। बिन्दुओं द्वारा विभिन्न देशों की स्थितियां तथा सरल रेखा द्वारा उन देशों के अनुपातों की औसत दिखाई गई है। यह रेखा दाहिनि ओर ढलवां है - और हमारी पूर्ववर्ती भूगोलाधारित अन्तर्दृष्टि की पुष्टि कर रही है कि बड़े देश कम व्यापार करते हैं। उदाहरण के लिए चीन, भारत, ब्राजील, संयुक्त राज्य और जापान सभी दाहिनि ओर के कोण में अवस्थित हैं। इनके व्यापार अंश 50-60 प्रतिशत से कम ही हैं। किन्तु भारत उक्त सरल रेखा से ऊपर है, अर्थात इसका व्यापार अनुपात इसके आकार के आधार पर अपेक्षित अनुपात से अधिक है, यह 1991 पूर्व की अवधि से बहुत ही अलग (बदलाव) है, उस अवधि में तो भारत का व्यापार स्तर निम्न रहता था।

रेखाचित्र 1 : व्यापार (वस्तुएं और सेवाएं)-जीडीपी अनुपात

रेखाचित्र 1(क) : व्यापार (वस्तुएं और सेवाएं)-जीडीपी अनुपात

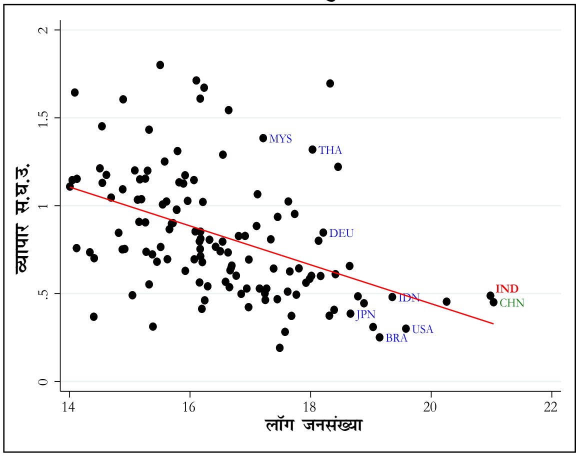

स्रोत: डब्ल्यूटीओ

रेखाचित्र 1(ख) : व्यापार (वस्तुएं और सेवाएं)-जीडीपी अनुपात

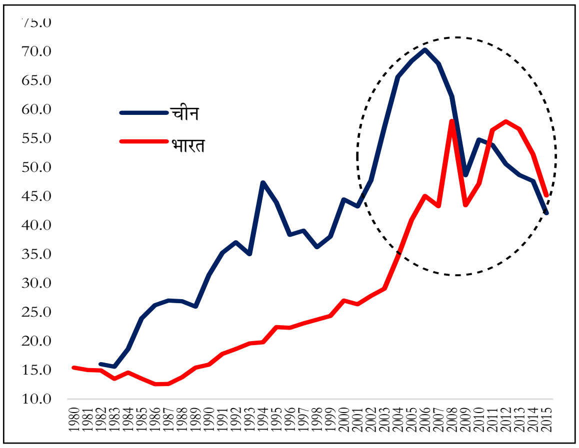

स्रोत: डब्ल्यूटीओ

2.6 पिछले तीन दशकों में चीन के साथ तुलना तो भारत के व्यापार-जीडीपी अनुपात के विकास क्रम को और भी अधिक स्पष्ट रूप प्रदान कर देती है। यह बात रेखाचित्र 1(ख) में बड़ी स्पष्ट दिखाई दे रही है। भारत का यह अनुपात तेजी से वृद्धिशील रहा है (विशेषकर 2012 में समाप्त हुए दशक में)। यह लगभग दुगुना होकर 53 प्रतिशत तक पहुँच गया था। भारत 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट से भी शीघ्र ही उबर आया था। परिणाम स्वरूप आज भारत इस अनुपात की दृष्टि से चीन से आगे निकल चुका है- यह अपने आप में एक उल्लेखनीय बात है।[2]

2.7 अगले दो रेखाचित्र भारत के विदेशी पूंजी प्रवाहों का जीडीपी के अंश के रूप में दृश्यांकन कर रहे हैं। रेखाचित्र 2(क) यह स्पष्ट कर रहा है कि भारत में पूंजी प्रवाहों पर महत्वपूर्ण नियंत्रणों के बावजूद यहां आ रहे निवल पूंजी प्रवाह अन्य उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाओं के समान प्राय: हैं। रेखाचित्र 2(ख) दर्शा रहा है कि भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेशों के प्रवाह में (आगमान में) तीव्र उछाल आया है। इसका वार्षिक स्तर लगभग +75 बिलियन है- यह चीन में संवृद्धि उत्कर्षकाल (2000-2010 के मध्य) के स्तर से अधिक कम नहीं है।

2.8 अब सार्वजनिक उपक्रमों के आकार पर ध्यान दें। आम धारणा है कि अन्य देशों की तुलना में भारत के सार्वजनिक उपक्रमों (PSUs) का आकार विराटकाय है। यह बात पहले कभी सत्य रही होगी। किन्तु रेखा चित्र 3 दर्शा रहा है कि अब तो इस आकार की दृष्टि से भारत उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाओं के मध्यवर्ती क्षेत्र में ही है। इसके कई कारण है- एक तो भारत ने नागरिक विमानन, दूरसंचार और वित्तीय सेवाओं के क्षेत्रकों में निजी उद्यम को कार्य करने की अनुमति दे दी है। इस कारण से सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा कार्य करना बन्द तो नहीं हुआ है- न ही उन्हें निजी उद्यमियों को बेचा ही गया है- किन्तु निजी उद्यमों के बड़े स्तर पर निवेश के कारण इन क्षेत्रकों में सार्वजनिक उपक्रमों का अंश घट गया प्रतीत होता है।

2.9 और आइए अंत में सरकार के आकार पर चर्चा करें। प्राय: भारत पर अनावश्यक रूप से विशाल सरकारी क्षेत्र ढोने का आरोप लगाया जाता है। किन्तु जब अनेक देशों के सरकारी व्यय के आंकड़ों को उनके प्रति व्यक्ति जीडीपी के अनुसार अंकित किया जाता है तो भारत उस बिन्दु समुच्च्य की प्रतीपगमन रेखा पर ही अवस्थित दिखाई पड़ता है- अर्थात इसका सार्वजनिक व्यय उसी स्तर पर है जहां उसके विकास के वर्तमान

रेखाचित्र 2 : पूंजी के प्रति खुलापन

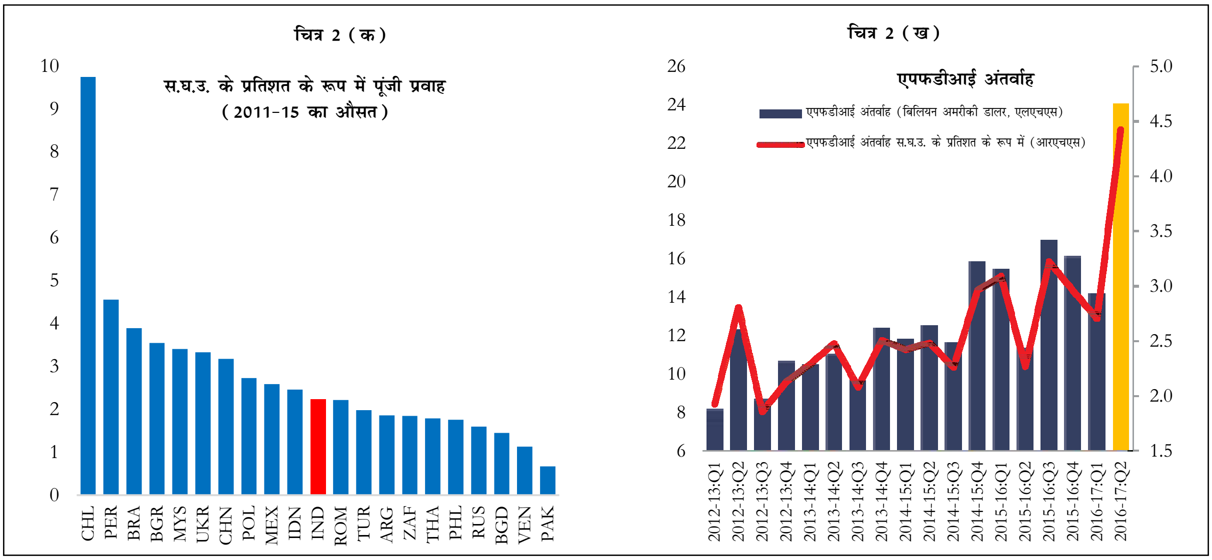

स्रोत: **समीक्षा परिकलन** *स्रोत:* **आरबीआई**

2 हाँ, सकल व्यापार और मूल्य वृद्धि व्यापार में अन्तर है। कुछ समय से चीन के व्यापार में मूल्य वृद्धि में बढ़ोतरी होने लगी है। किन्तु भारत के व्यापार में भी यह कम नहीं है। हमारा सेवा क्षेत्रक श्रम सघन है और वैश्विक मूल्य श्रृंखला से कम जुड़ाव के कारण विनिर्माण क्षेत्र में भी उच्च मूल्य वृद्धि हो रही है।

रेखाचित्र 3 : सरकार का आकार (व्यष्टि स्तर पर) : सार्वजनिक उपक्रम व्यय का संकल राष्ट्रीय आय में अंश

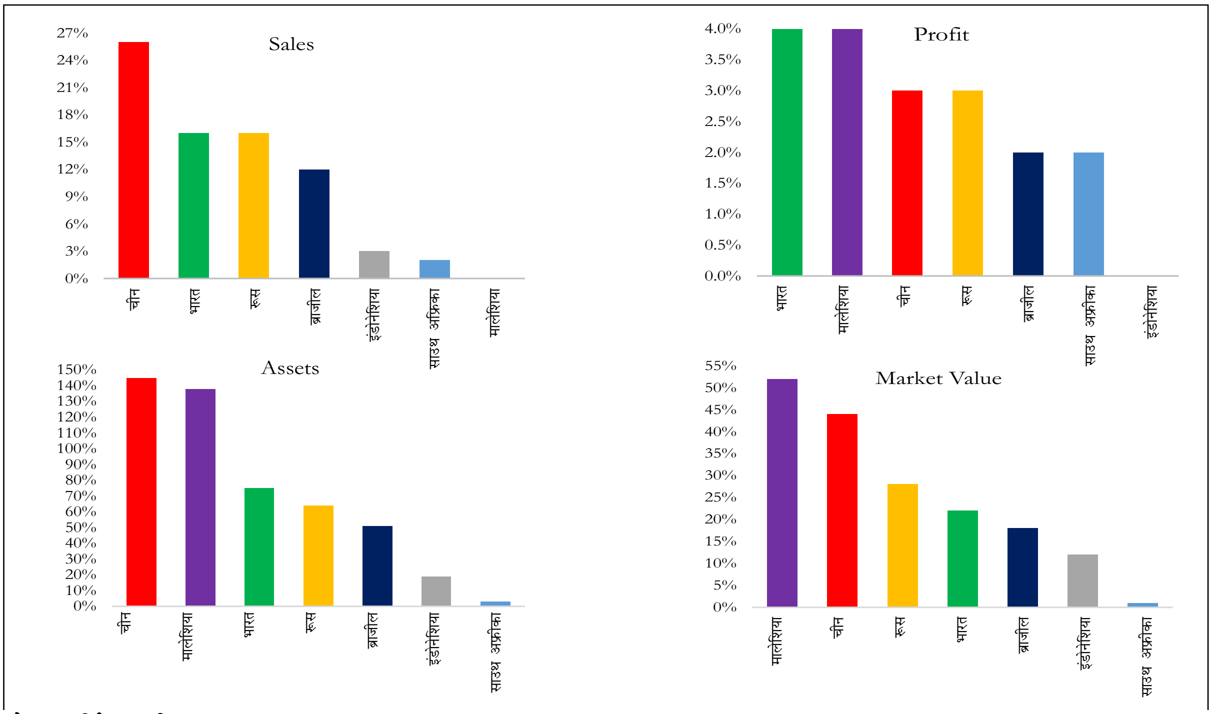

स्रोत: **आर्थिक समीक्षा 2015-16**

रेखाचित्र 4 : सरकार का आकार (समष्टि स्तर पर) : सरकारी व्यय-प्रतिव्यक्ति जीडीपी

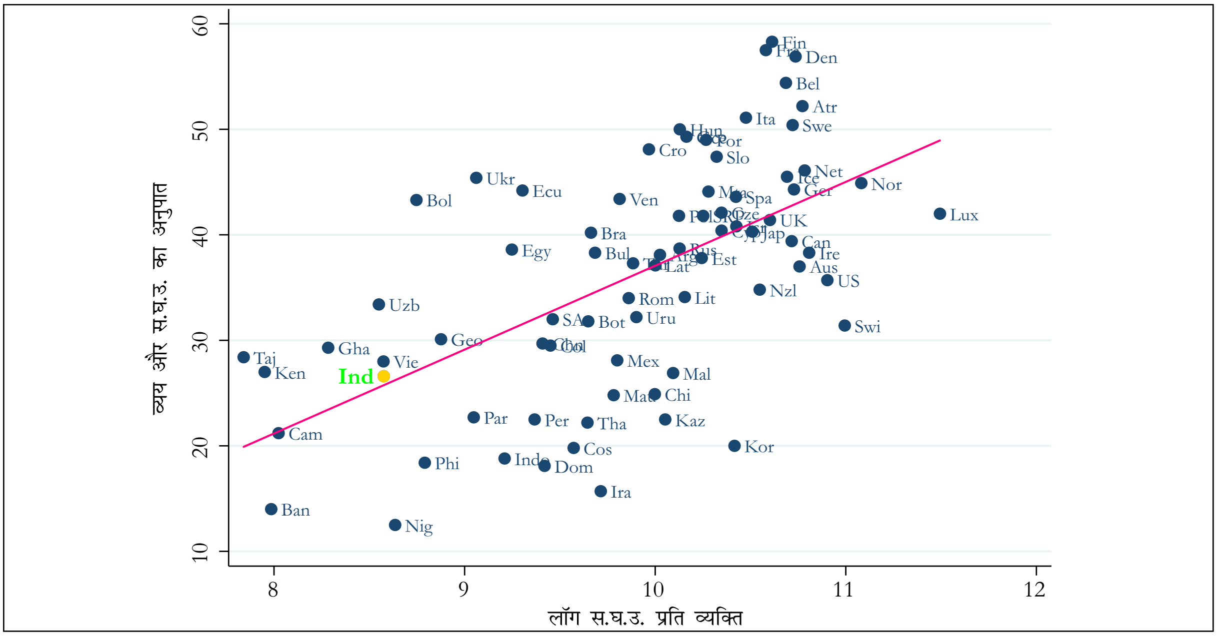

स्तर पर उसके होने की अपेक्षा की जाती है।

2.10 कुल मिलाकर मानक मापक यही दर्शा रहे हैं कि भारत अब एक ''सामान्य'' उदीप्यमान बाजार है, यहां भी एशियाई विकास-पथ का अनुसरण हो रहा है। यह विदेशी व्यापार और निवेश के प्रति निर्बन्धतापूर्ण है- सरकार न व्यष्टि स्तर पर उद्यमी के रूप में और न ही समष्टि स्तर पर राजकोषीय स्परूप में अधिक निरंकुश प्रतीत होती है।

2.11 एक अन्य निर्णायक स्वरूप में भी भारत की अवस्था ''सामान्य'' कही जा सकती है। अन्य उदीप्यमान

अर्थव्यवस्थाओं की भांति ही यहां भी मानक विकास पथ के अनुसरण ने संवृद्धि के मीठे फल सुलभ कराए हैं। यदि दीर्घकालिक दृष्टि से देखें तो भारत में सुधार क्रम 1980 के लगभग प्रारंभ हो गया था (रोड्रिक एवं सुब्रामण्यम, 2004)। यहां पहला महत्वपूर्ण सत्य यही है कि भारत 37 वर्षों से लगभग 4.5 प्रतिशत वार्षिक दर से संवृद्धिशील रहा है। यह एक प्रभावशाली उपलब्धि है।

2.12 यह उपलब्धि एक अन्य कारण से विशेष उल्लेखनीय हो जाती है : यह एक पूर्णरूप से लोकतान्त्रिक राजनीतिक व्यवस्था के अंतर्गत रहते हुए प्राप्त हुई है।[3] महायुद्ध पश्चात् के आर्थिक इतिहास में भारतीय प्रतिमान का निरंतर रूप से लोकतान्त्रिक बने रह पाना (वह भी स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद) अपने आप में एक विलक्षण घटनाक्रम है- प्राय: लोकतंत्र इस प्रकार सफल नहीं रह पाते। रेखाचित्र-5 के Y-अक्ष पर देशों के उत्कर्ष कालों की औसत वार्षिक प्रति व्यक्ति जीडीपी संवृद्धि दरों को अंकित किया गया है। भारत में इसके लिए 1979 के बाद का समय प्रयुक्त किया गया है (देखें रोड्रिक, 2014)। X-अक्ष पर उत्कर्ष काल में लोकतान्त्रिक व्यवस्था के अंतर्गत बिताए गए वर्षों के अनुपात हैं। भारत की ही भांति लोकतान्त्रिक अवधि में उत्कर्ष वर्ष अनुपात दिखाने वाले मात्र इटली, जापान, इजराइल और आयरलैंड रहे हैं। अन्य इतने ही तीव्र संवृद्धिशील देश तेल निर्यातक है, पूर्वी एशियाई है या फिर वे हैं जो द्वितीय महायुद्ध की मार से उबर आए हैं।

II. अभी जिस राह पर चलना है

2.13 इन सभी साक्ष्यों पर विचार करें तो भारत की सुधारवादी एवं बाजार उन्मुखता पर प्रश्न उठाना धनलोलुपता का ही परिचायक होगा। फिर भी कहीं न कहीं संदेह सा बना रहता है कि संभवत: जैसा दिखता है, भारत वैसा है नहीं, कि सभी आंकड़ें चाहे जो कुछ दर्शा रहे हों पर भारत अभी मानक विकास प्रतिमान का अनुसरण नहीं कर रहा है।

2.14 तो फिर भारत किस प्रकार से भिन्न है? तीन अभिलक्षण उन संदेहों का आधार हैं कि भारत ने अभी किन्हीं अस्पष्ट और अनिर्दिष्टनीय किन्तु अभीष्ट एवं वांछनीय लक्ष्यों की ओर पर्याप्त रास्ता तय नहीं किया है। सर्वप्रथम तो अभी निजी क्षेत्र को पूर्णरूप से स्वीकार/

रेखाचित्र 5 : एक विलक्षण विचार भेदग्रस्त लोकतंत्र का निष्पादन

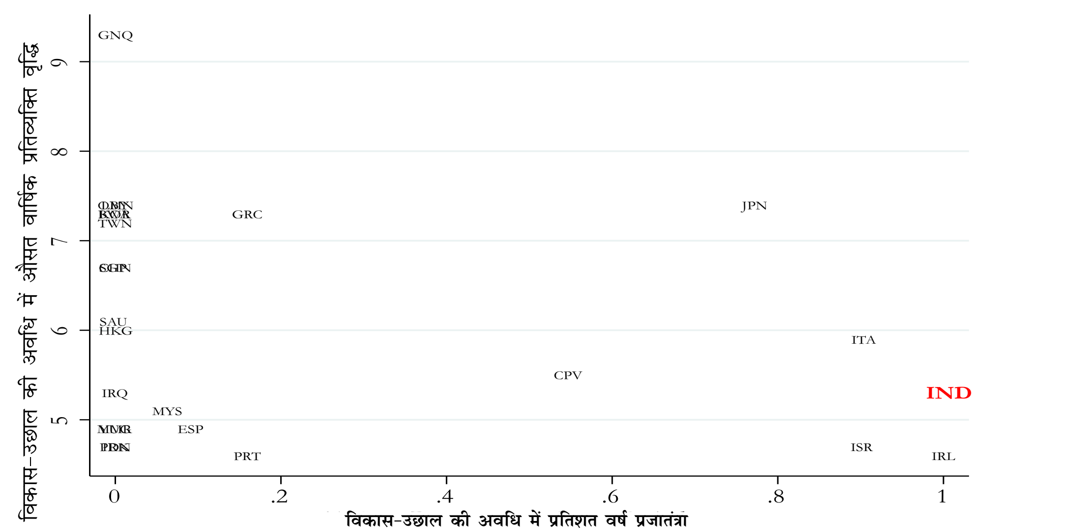

रोड्रिक 2013 एण्ड पॉलिसी से लिए आंकड़े (1979-2015 के लिए डब्ल्यूडीआई से भारत के विकास संबंधी आंकड़े

[3] एक देश को लोकतान्त्रिक माना जाता है यदि राजतंत्र IV सूचक पर इसका अंकमान 7 से अधिक हो । रोड्रिक (2013) ने उत्कर्ष काल उस घटनाक्रम को माना है जब कम से कम 30 वर्षों तक किसी देश में वार्षिक प्रति व्यक्ति आय की संवृद्धि दर 4.5 प्रतिशत अवश्य रही हो।

अंगीकार करने को लेकर संकोच बना हुआ है, यही बात संपदाधिकारों के संरक्षण को लेकर दिखाई देती है और साथ ही अनेक ऐसे कार्यों, जिन्हें निजी क्षेत्र के लिए ही छोड़ देना उपयुक्त होता, में अभी राजकीय हस्तक्षेप बना हुआ है (कोचर आदि, 2006)। दूसरे, सरकार की क्षमताएं दुर्बल रही है (प्रित्चेत, 2009)। यह बात आवश्यक सेवाओं की लचर आपूर्ति व्यवस्था से स्पष्ट होती है (राइस और पैट्रिक, 2008)। और तीसरे, पुन:वितरण एक साथ ही बहुत व्यापक किन्तु दक्षताहीन रहा है (कोहली, 2012)।

(क) निजी क्षेत्र और संपदाधिकारों के विषय में उभयभाविता

2.15 सभी शासनतन्त्रों और समाजों में निजी क्षेत्र के प्रति कुछ न कुछ उभयभाविता (विश्वास और अविश्वास की स्थिति) बनी रहती है। आखिर निजी क्षेत्र के मौलिक उद्देश्य- अधिकतम लाभ-का उचित अनुचित की धारणा जैसे वृहत्तर सामाजिक सरोकारों से कब तालमेल बैठ पाता है? किन्तु भारत में यह उभयभाविता अन्य देशों की अपेक्षा कहीं गहन प्रतीत होती है। रेखाचित्र-6 में चुने हुए देशों में जन सामान्य की निजी क्षेत्र के प्रति धारणा को अंकित किया गया है।[4] स्पष्ट दिखाई दे रहा

रेखाचित्र 6 : निजी क्षेत्र के प्रति वैश्विक जनभावना

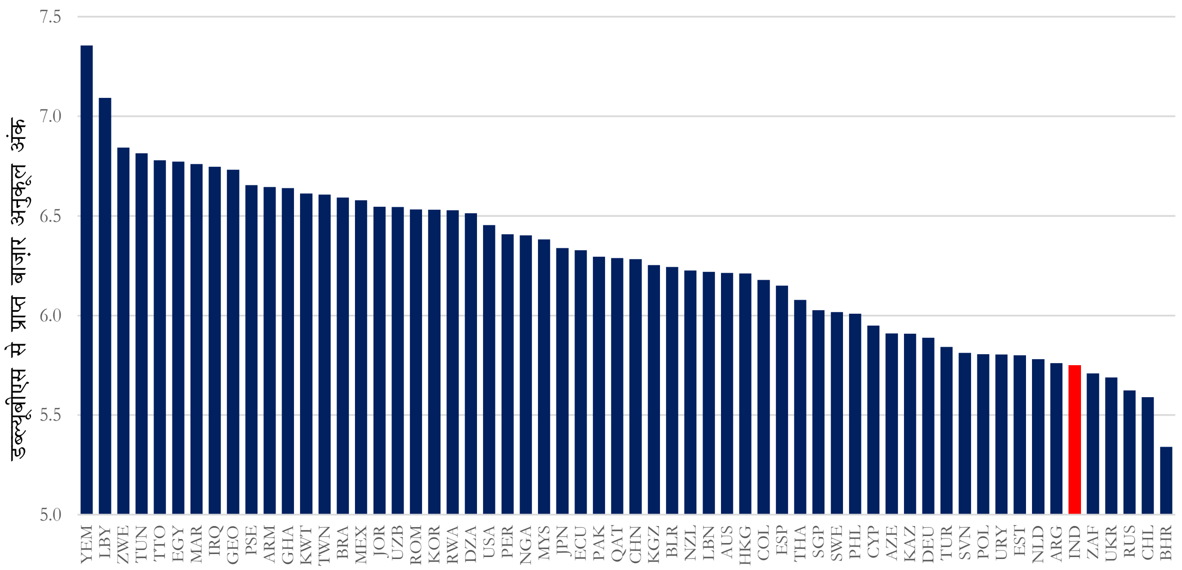

***स्रोत:* वर्ल्ड वैल्यूज़ सर्वे**

---

4 रेखाचित्र-6 2010-12 की अवधि के विश्व जीवन मूल्य सर्वेक्षण पर आधारित है। इसमें विश्व भर में लोगों से कहा गया था कि निम्न कथनों पर अपनी सहमति का स्तर 1 से 10 अंकों द्वारा व्यक्त करें।

- आय को अधिक समान बनाया जाना चाहिए (1) बनाम वैयक्तिक प्रयास को बढ़ावा देने के लिए आय में अधिक अन्तरों की आवश्यकता है। (10)
- उद्योग व्यापार का निजी स्वामित्व बढ़ाना चाहिए (1) बनाम उद्योग व्यापार पर सरकारी स्वामित्व में वृद्धि करनी चाहिए। (10)
- सभी की जरूरतें पूरी करने को सरकार को अधिक दायित्व उठाना चाहिए (1) बनाम सबको अपना दायित्व स्वयं उठाना चाहिए (10)
- स्पर्ध अच्छी है। यह व्यक्तियों को अधिक परिश्रम करने और नए विचार विकसित करने को प्रोत्साहित करती है (1) बनाम स्पर्ध हानिकारक है, यह व्यक्तियों को निकृष्टतम व्यवहार करने को उकसाती है (10)
- अंतत: कड़ा परिश्रम ही जीवन को बेहतर बनाता है (1) बनाम सामान्यत: कड़ा परिश्रम सफलता नहीं दिलाता, सफलता तो भाग्य और संपर्क-संबंध से मिलती है (10)
- एक व्यक्ति अन्य व्यक्तियों की लागत (उन्हें ठेस पहुँचाकर) पर ही धनी बन सकता है (1) बनाम धन में संवृद्धि संभव है और इससे सभी को पहले से अधिक मिल सकता है (10)।
- विभिन्न व्यक्तियों द्वारा प्रदत्त अंक मानों का प्रश्न एवं व्यक्ति स्तरों पर औसत कर देश स्तरीय औसत अनुक्रम निर्धारित किया गया है। उच्चतर औसत अंक मान का अर्थ है कि देश में बाजार के प्रति श्रद्धाभाव अधिक प्रबल है। इस प्रतिदर्श में 60 देश सम्मिलित थे।

है कि भारत में अन्य देशों की अपेक्षा बाजार विरोधी भावना कहीं अधिक प्रबल है–वस्तुत: यह भावना प्रारंभ में अपने ही जैसे निम्न प्रतिव्यक्ति जीडीपी स्तर पर रहे देशों की तुलना में भी कहीं अधिक गहन है।

2.16 निजी क्षेत्र के प्रति इस उभयभाविता के लक्षण अनेक स्वरूपों में प्रकट होते हैं। सबसे बड़ा उदाहरण तो सार्वजनिक उपक्रमों के निजीकरण में आ रही कठिनाई ही है। यह कठिनाई उन सरकारी फर्मों को लेकर भी होती है जिन्हें लेकर सभी अर्थशास्त्री यही आग्रह करते हैं कि उन्हें तो होना ही निजी क्षेत्र में चाहिए था। नागरिक उड्डयन की बात लें। संपूर्ण इतिहास को झुठलाते हुए एक निरंतर घाटा उठा रही सरकारी विमानन कंपनी को 'विश्व स्तरीय'' (श्रेष्ठ) बनाने को लेकर एक प्रतिबद्धता दिखाई दे जाती है। हाल ही में विमान पट्टनों के निजीकरण के नाम पर स्वामित्व अन्तरण नहीं, केवल प्रबंधन के ठेके दिए गए हैं। यही नहीं, इस क्षेत्र में नीतिगत सुधारों का स्वरूप कभी हस्तक्षेपवादी तो कभी उदारीकरणवादी हो जाता है। यह बात कीमतों के विषय में सरकारी नियामकों द्वारा निर्दिष्ट सीमाओं में बहुत स्पष्ट रूप से झलक जाती है।

2.17 ऐसी ही भावना बैंक क्षेत्र को लेकर भी छाई हुई है। सरकारी बैंकों में सरकार की हिस्सेदारी घटाने पर सारी चर्चा यहीं आकर अवरूद्ध हो जाती है कि ये बैंक तो सरकार द्वारा संसाधन आवंटन और उनके प्रवाह के दिग्वर्तन के विधिसंगत उपस्कर हैं।

2.18 यदि उर्वरक उद्योग को देखें तो वह अनेक विकृतियों से भरा दिखाई देता है, किन्तु सार्वजनिक नीतियां बुरी तरह से दक्षताहीन सार्वजनिक उपक्रमों को बंद करने नहीं बल्कि उनके पुनर्वास और पुन: प्रतिष्ठापन से आगे नहीं सोच पाती।

2.19 निजी क्षेत्र के प्रति यह उभयभाविता केवल निजीकरण के आड़े नहीं आती– इसके और भी अनेक स्परूपों में दर्शन होते हैं। कृषि क्षेत्रक अभी भी ''समाजवादी युग'' में गढ़े गए नियम विनियमों का एक ज्वलंत उदाहरण है। यद्यपि पिछले दो वर्षों में कुछ बदलाव आए हैं किन्तु कृषि उत्पाद विपणन अधिनियम अभी भी अधिकांश उत्पादकों को ''विनियमित'' मंडियों में निर्दिष्ट मध्यस्थों (बिचोलियों) को ही अपना उत्पादन बेचने को विवश कर रहा है। किन्तु जब यही सरकार विरचित विपणन प्रणाली कीमतों में ''अतिशय वृद्धि'' का सृजन करने लगती है तो आवश्यक वस्तु अधिनियम का सहारा लेकर ऐसे व्यवसाय पर स्टॉक की सीमाएं लागू करने के प्रयास आरंभ हो जाते हैं जो अंतर्निहित रूप से चक्रीय उतार-चढ़ाव से ग्रस्त होता ही है। ये नीति-प्रयास इस प्रकार कृषि क्षेत्र की विपणन समस्याओं को सुलझाने के स्थान पर उन्हें और अधिक गंभीर बना देता है।[5]

2.20 इसी प्रकार की एक पुरानी जंजीर संपदा अधिकारों के लिए भी फंदा बनी हुई है। प्रारंभ में संविधान ने संपदाधिकार को एक मौलिक अधिकार की मान्यता प्रदान की थी। किन्तु समाजवादी युग के 44वें संविधान संशोधन ने धारा 19(1)(f) तथा धारा 31 को हटाकर उनके स्थान पर धारा 300-A को स्थापित कर दिया और संपदाधिकार का दर्जा कम होकर केवल एक ''कानूनी अधिकार'' रह गया। इस निर्णय की अनुगूंज आज भी पिछली किसी भी तिथि से नए कर लगाने जैसे मुद्दों में सुनाई दे जाती है। सरकार ने करों और ऐसे अन्य मुद्दों पर पूर्ववर्ती तिथियों से कुछ भी लागू नहीं करने का अपना संकल्प दोहराया है। किन्तु इस प्रकार लगाए गए कर अभी भी कानूनी दांवपेचों के झमेलों में उलझे हैं और इनका समाधान निकट भविष्य में होता नहीं दीखता। प्रतीत होता है कि व्यापक रूप से स्वीकार्य एवं न्यायिक स्तर पर अनुमोदित जब्तिकरण और पूर्ववर्ती तिथि से नई व्यवस्था लागू करने के विरूद्ध सिद्धांत को लागू करने में भी यही 'हिचक' आ जाती है कि कहीं यह कदम राजनीतिक दृष्टि से निजी, विशेषकर विदेशी निजी उद्यमों, के प्रति पक्षपात तो नहीं मान लिया जाएगा। वोडाफोन और मोनसेंटो जैसे अनेक मामलों में यही बात उभर कर आयी है।

2.21 ये 'सावधानी' या आशंका केवल विदेशी निजी उद्यमों तक सीमित नहीं है। निगम एवं बैंक क्षेत्रों में दोहरी तुलनपत्र रचना की समस्या आज भी अर्थव्यवस्था के गले में पत्थर की तरह लटक रही है- परिणाम है निजी निवेश पर छा रहा धुंधलका- वह सकल स्तर पर

[5] देखें, दालों के उत्पादन को प्रोत्साहन देने संबंधी सुब्रमणियन समिति रिपोर्ट (2016)

संवृद्धि को भी अपनी छाया में समेट रहा है। वर्ष 2010 में उभर कर आई इस समस्या के समाधान में बाधक हो रहा एक कारण यही है कि कहीं सरकार को निजी उद्यमों का पक्षधर तो नहीं मान लिया जाएगा। यह समस्या बार-बार उन मामलों में अवश्य उठती रहेगी जहां निजी क्षेत्र के कुछ कर्ज या देयताएं माफ करने की बात उठ रही हो।

2.22 इन सभी उदाहरणों के पीछे कोई न कोई वैध कारण हो सकता है। किन्तु ये सब मिलकर एक बहुत ही सुस्पष्ट परिदृश्य को अंकित भी कर रहे हैं।

(ख) सरकार की क्षमता

2.23 भारतीय आर्थिक प्रतिमान की दूसरी बड़ी विशेषता सरकार की क्षमताओं में विद्यमान दुर्बलता है- स्वास्थ्य एवं शिक्षा जैसी आवश्यक सेवाओं की आपूर्ति कर पाने में यह ''अक्षमता'' बहुत ही अधिक गंभीर दिखाई देती है (मंगला, 2015, डीटन, 2013)। यह सच है कि स्वतंत्रता के समय सभी उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाओं ने अपनी विकास यात्रा दुर्बल राजकीय क्षमताओं के साथ ही प्रारंभ की थी। किन्तु अर्थव्यवस्था के विकास और समृद्धि के साथ-साथ सरकार की क्षमता में भी सुधार हुआ। प्राय: यह सुधार शेष अर्थव्यवस्था से कहीं अधिक तीव्र दर से भी हुआ है। किन्तु इनके विपरीत भारत में ऐसा नहीं हो पाया। फुकुयामा (2013) का तर्क है कि भारतीय सरकार की क्षमता निम्न है और साथ ही इसमें भ्रष्टाचार, प्रश्रयवाद, नियमों और लालफीताशाही का भी बोलबाला है।

2.24 फिर भी एक पहेली बहुत अबूझ बनी हुई है : निवेश और योग्यता प्रतिभा को आकर्षित करने में तो संघीय-स्पर्धाशीलता एक बहुत सशक्त परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में उभर कर आई है (सबसे बड़ा उदाहरण तो टाटा नैनो कार का ही है), किन्तु आवश्यक सेवाओं की आपूर्ति सुधारने में भारत के राज्यों में कोई प्रतियोगिता नहीं दिखाई पड़ रही। कुछ अपवाद अवश्य है : छत्तीसगढ़ और बिहार में सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सुधार, मध्य प्रदेश में कृषि क्षेत्र में संप्रेरणाओं का संचार, हरियाणा में घासलेट मुक्ति अभियान, गुजरात में विद्युत क्षेत्र के सुधार, जिनसे आपूर्ति व्यवस्था बेहतर हुई है, और लागत उगाही में बढ़ोतरी आई है तथा तमिलनाडू में सामाजिक कार्यों की दक्षता। किन्तु स्वास्थ्य और विशेषकर शिक्षा के विषय में बहुत ही कम अच्छे प्रतिमान विकसित हो पाए हैं, जिन्हें आकर्षक राजनीतिक सुयोग माना जा सके और देश भर में जिनका अनुकरण हो सके। इन सबके विपरीत विभिन्न राज्यों में लोकलुभावन स्पर्धा अवश्य चल रही है- जिन कुछ चीजों/सेवाओं को मुफ्त में नहीं दिया जाना चाहिए उन्हीं की बंदरबांट हो रही है। आवश्यक सेवाओं की आपूर्ति में तो ऐसी स्पर्धा के कोई संकेत नहीं मिल रहे।

2.25 सरकार की अक्षमता ने सेवाएं सुलभ कराने में विफलता के साथ-साथ एक अन्य समस्या को भी जन्म दिया है। कुछ मामलों में नीतितंत्र इतनी बुरी तरह से संरोधग्रस्त हो गया है कि कुछ समुदायों के हितों की ओर ध्यान ही नहीं जाता। इसके दोहरे परिणाम हुए हैं।

2.26 एक तो अब सभी सार्वजनिक परिसंपत्तियों को नीलामी द्वारा ही आवंटित किया जा रहा है- इसका एक अभीष्टतापूर्ण सार्वजनिक नीति सिद्ध होना अनिवार्य नहीं है। दूरसंचार के संदर्भ में तो न्यायपालिका ने पारदर्शिता और नीलामी की अनिवार्यता लागू कर दी। यह पिछले भ्रष्टाचार के अनुभवों को लेकर एक महत्वपूर्ण और उचित हस्तक्षेप था। किन्तु इसने कुछ सार्वजनिक नीति स्तरीय असमंजस भी पैदा कर दिया है। दूरसंचार सेवाओं के व्यापक प्रसार से बहुत विशाल बाह्यताओं का सृजन संभव है। अत: कुछ मामलों में स्पैक्ट्रम को नीलामी निर्धारित लागत से कम दामों पर आवंटित करना सामाजिक अभीष्टी की दृष्टि से अधिक उपयुक्त हो सकता है। किन्तु, नीलामी के अतिरिक्त कोई अन्य विधि, जहां आवंटनकर्ता स्वविवेक का प्रयोग करता हो, को लेकर सहज अविश्वास और उसमें संभावित पक्षपात की आशंकाएं भी उठ सकती हैं।

2.27 दूसरे, नौकरशाही के स्तर पर निर्णय प्रक्रिया में अति-सतर्क रहने की प्रवृत्ति बन गई है- यह 'यथास्थिति' का ही पोषण करती है। ऊपर चर्चित दोहरी तुलनपत्र परंपरा को ही लें: सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के उच्च अधिकारी केवल इसलिए कुछ ऋणों की उगाही संभव नहीं होने पर भी खातों से हटाने के लिए तैयार नहीं होते कि उन्हें किसी कंपनी के पक्षपाती मान लिया जाएगा। और वह स्वयं ''4 Cs'' नामक संस्थागत निर्णायकों के निशाने पर आ जाएंगे : कचहरी, केन्द्रीय सतर्कता आयोग, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो और नियंत्रक एवं महालेखपाल

रेखाचित्र 7 : अप-आवंटन - सभी योजनाओं पर व्यय/आवंटित धन में गरीब जनपदों का निम्न अंश

7(क) : गरीबों का कुल अंश

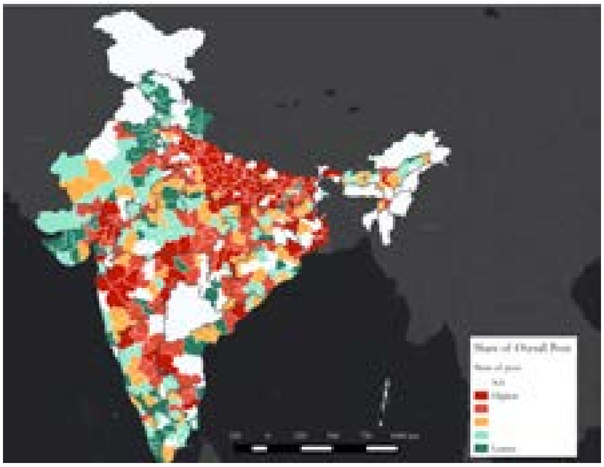

7(ख) : गरीबों को आवंटन में त्रुटि

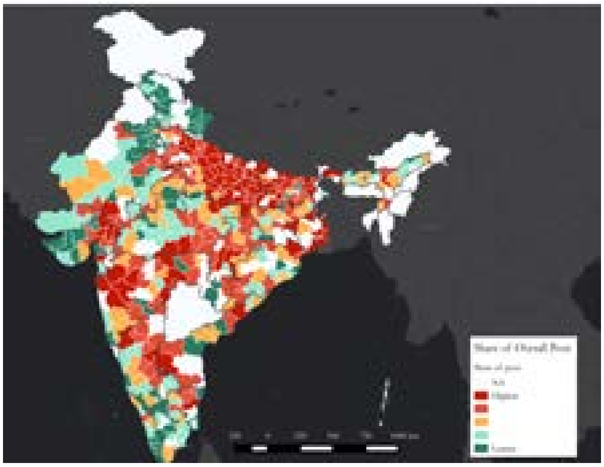

स्रोत: एनएसएस 2011-12, भारत सरकार, समीक्षा परिकलन

(Court, CVC, CBC और CAG)। इससे ऋणों को ''सदैव हरित'' या 'पुनर्नवित' रखने को बढ़ावा मिलता है और समस्या के समाधान को स्थगित कर दिया जाता है।

(ग) दक्षताहीन पुन:वितरण

2.28 भारतीय विकास प्रतिमान की यह तीसरी विशिष्टता है। सभी देशों में कुछ न कुछ पुन:वितरण होता है, होना भी चाहिए। प्रश्न यही है कि यह कितना प्रभावोत्पादक रहता है और कितना होना चाहिए।

2.29 गरीबों तक पहुँचने के लक्ष्य की दृष्टि से सरकार द्वारा किया जा रहा पुन:वितरण दक्षता से बहुत दूर रह जाता है। गरीब समाज के सहायतार्थ चल रहे वर्तमान कार्यक्रमों की प्रभावोत्पादकता की समीक्षा अध्याय-9 में होगी। ये कार्यक्रम सब्सिडी आधारित हैं और महात्मा गांधी ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, सर्व शिक्षा अभियान, एकीकृत बाल विकास योजना आदि इनमें प्रमुख प्रकल्प माने जाते हैं। उस समीक्षा से स्पष्ट हो रहा है कि क्षेम कार्यों पर व्यय में बहुत अधिक अप-आवंटन हो रहा है: रेखाचित्र-7 के दो चित्र दिखा रहे हैं कि सबसे अधिक गरीब अनुपात वाले जनपदों (रेखाचित्र 7(क) में लाल रंग से रंजित) में ही धनाभाव अधिकतम है। इससे सबसे पहले तो 'बहिष्कृति की त्रुटि' पैदा होती है : गैर-गरीब वर्ग हितलाभों का एक बड़ा हिस्सा हस्तगत कर जाता है। साथ ही इस व्यवस्था में भ्रष्टाचार और दक्षताहीनता के कारण भी हितलाभों का एक अंश क्षरित हो जाता है।

2.30 पिछले दो वर्षों में सरकार ने सब्सिडी घटाने की दिशा में बड़े प्रयास किए हैं- पैट्रोलियम उत्पादों के विषय में ये कदम विशेष उल्लेखनीय रहे हैं। हमारे अध्याय-1 ने स्पष्ट किया है कि चार में से दो उत्पादों पर सब्सिडी पूरी तरह निरस्त हो चुकी है और वस्तुत: एक कार्बन उत्सर्जन कर प्रभावी हो गया है, उसकी दर भी विश्व भर में उच्चतम है।

2.31 किन्तु सब्सिडी निरस्ति कार्य में भी प्रौद्योगिकी की क्षरण रोकने में बड़ी भूमिका रही है (इस संदर्भ में उर्वरक के हितलाभ का सीधे कृषक को अन्तरण का प्रारंभिक प्रयोग बहुत ही निर्णायक रहा है) अत: उपभोक्ता द्वारा चुकाई जा रही कीमतें अपरिवर्तित ही रही है।

2.32 पुन:वितरण का सटीक उपस्कर नहीं माना जा सकने वाले वस्तु एवं सेवा कर की रचना भी अंतर्निहित तनाव-टकराव स्पष्ट कर रही है। इस जीएसटी के संदर्भ में राज्यों की ओर से दरों को निम्न रखने और इसकी रचना को सरल रखने के राजनीतिक दबाव (ताकि जीएसटी व्यवस्था दक्ष एवं प्रभावोत्पादक बन सके) तो बहुत कम रहे हैं। हां एक बात पर आग्रह अवश्य दिखाई दिया है कि इस कर प्रणाली की भावी दर संरचना भी वर्तमान जटिल यथास्थिति का ही अनुकरण करती रहे। अधिकांश ध्यान इस बात पर भी केंद्रित रहा है कि आवश्यक वस्तुओं पर कर की दरें कम रहें तथा विलासिता पदार्थों पर अधिक हों। इस विचार से दक्षता एवं सरलता पर पड़ने वाले प्रभावों की लगभग पूरी अनेदखी हो गई है।

केंद्र ने प्रांतीय सरकारों को क्षतिपूर्ति की गारंटी दी थी। इसके बाद भी इस प्रकार के आग्रह नहीं होना विचित्र लगता है। स्पष्टत: कर की दरों को निम्न रखते हुए भी राजस्व में कमी नहीं होने का स्वप्न-प्राय: विचार भी राजनीतिक दृष्टि से आकर्षक नहीं माना गया।

III. संभव व्याख्या

2.33 भारतीय विकास प्रतिमान की इन तीन विलक्षण विशेषताओं की व्याख्या कौन से कारक कर पाएंगे? भारत के आर्थिक परिदृश्य को समझ पाने का एक ही मार्ग है : इस देश ने आर्थिक सफलता के लिए जिस पथ का चयन किया है उसे **विलक्षण विचार-भेद ग्रस्तता** का नाम दिया जा सकता है।

2.34 ऐतिहासिक दृष्टि से आर्थिक सफलता दो में से एक राह पर चलकर प्राप्त हुई है। आज के विकसित देशों ने अपने वर्तमान स्तर को पाने में दो शतियों तक धीमे आर्थिक राजनीतिक विकास के पथ पर निरंतर यात्रा की है। उन्होंने अपनी यात्रा का आरंभ व्यापक मताधिकार से नहीं किया था। ये मताधिकार शुरू में बहुत संकीर्ण एवं सीमित थे, धीरे-धीरे इनका विस्तार हुआ, इसने भी सीमित क्षमताओं वाली शासन व्यवस्था पर बहुत अधिक अपेक्षाओं के बोझे को आरोपित नहीं किया। इसी कारण से इन देशों में आर्थिक एवं राजकोषीय विकास की प्रक्रिया में बहुत सहायता मिली थी (एस मोगलू एवं रोबिन्सन, 2013; नॉर्थ एवं वीनगास्ट, 1989; सेंट-पॉल एवं वर्डीअर, 1993)।[6]

2.35 तीव्र आर्थिक प्रगति का दूसरा सफल समूह पूर्वी एशिया के चीन, कोरिया की प्रत्यक्ष निरंकुश व्यवस्था या फिर सिंगापुर, थाईलैंड, ताईवान की व्यावहारिक रूप से निरंकुशता का रहा है। इन देशों में कुछ थोड़ी बहुत राजनीतिक उदारता का संचार आर्थिक सफलता के किसी अच्छे स्तर की प्राप्ति के बाद ही दिखाई दिया है। प्रत्यक्ष निरंकुशता के तीन स्वरूप रहे है : सैन्य (कोरिया); शासक दल (चीन); और वैयक्तिक तानाशाही (इंडोनेशिया)।

2.36 किन्तु इन सबके विपरीत भारत ने प्रारंभ से ही व्यापक मताधिकार के साथ आर्थिक विकास पथ पर चलने का निर्णय लिया है। रेखाचित्र-8 में क्षैतिज अक्ष पर स्वतंत्रता के बाद से लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था के अधीन बिताए गए वर्षों का प्रतिशत अनुपात है और Y-अक्ष पर स्वतंत्रता के समय आय का स्तर दिखाया गया है। इससे स्पष्ट हो रहा है कि भारत का अनुभव

रेखाचित्र 8 : मतभेद ग्रस्त लोकतंत्र

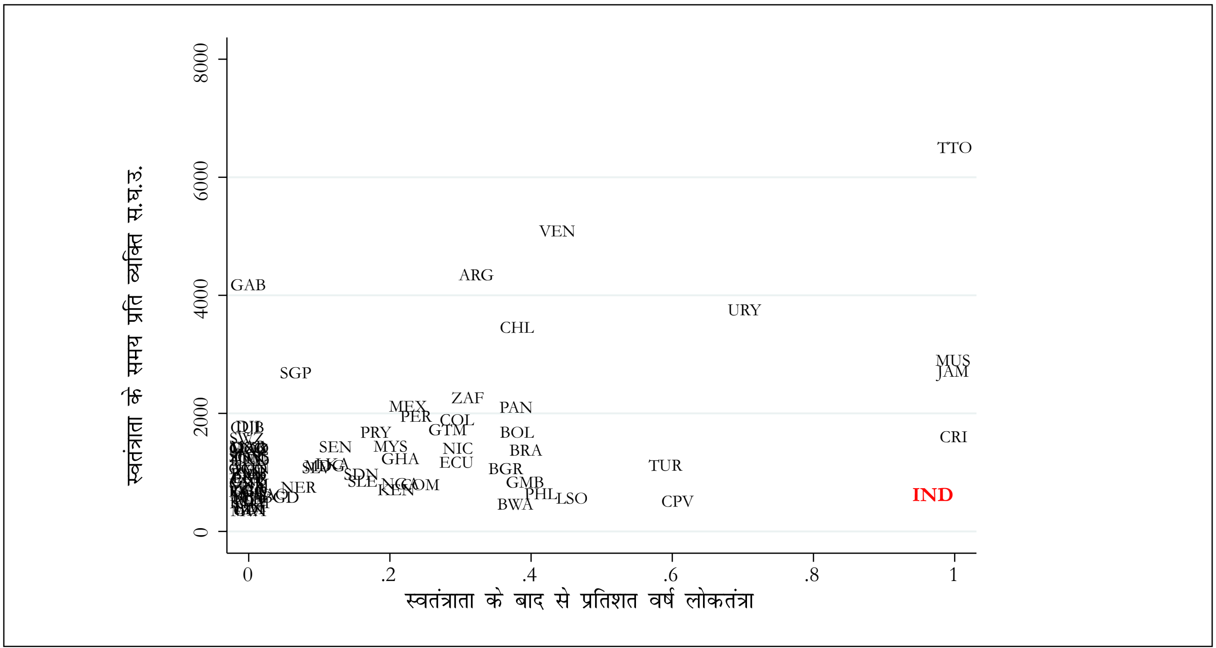

---

[6] उदाहरण : उपरिसंरचना की वित्तव्यवस्था हेतु संपत्तिकर लगाना संभव रहा- इसके परिणाम स्वरूप उच्च भूमी मूल्यों का लाभ सीमित कर दाता वर्ग एवं मतदाताओं को जो मिल रहा था।

विलक्षण है। भारत उन इनेगिने देशों में से एक है जहां लोकतंत्र निरंतर बना रहा है। चित्र के दाहिने छोर पर अवस्थित अन्य देश हैं बोट्सवाना, मारीशस, जमैका, त्रिनिदाद एवं टोबागो तथा कोस्टारिका।

2.37 यही नहीं, एक और भी विलक्षणता रही है। स्वतंत्रता के समय भारत एक अत्यंत गरीब लोकतंत्र था।[7] इस चित्र में भारत लगभग सबसे नीचे दिखाई दे रहा है अर्थात यह एक गरीबतम लोकतंत्र था। वस्तुत: एक गरीबतम देश भी था। 1990 में क्रयशक्ति तुल्यता पर आधारित प्रतिव्यक्ति जीडीपी का स्तर मात्र $617 था। यह सभी प्रकार के शासनतंत्र के अंतर्गत रहे सभी देशों में निम्नतम ही था (देखें मैडीसन)।

2.38 उसी समय भारत में अत्यंत ही वैचारिक भिन्नता से ग्रस्त समाज भी था। इतिहासकारों ने बताया है कि यहां अन्य देशों की अपेक्षा, अनेक विभाजक अक्ष-तंत्र विद्यमान थे : भाषाएं, लिपियां, धर्म-संप्रदाय, क्षेत्र-जातियां, लिंग एवं वर्ग (गुहा, 2016)। केवल प्रजाति-भाषाई विभाजकों के अनुसार तो भारत अन्य देशों के समान प्राय: ही है (इस्टरली एवं लेविन, 1997)[8]। किन्तु यदि यहीं पर जाति का भी हिसाब लगाया जाए तो भारत सबसे अलग दिखाई देता है (बैनर्जी एवं सोमनाथ, 2007)। रेखाचित्र-9 में अंकित बिन्दु समूह के उत्तर पश्चिमी कोण में अवस्थित भारत एक ''बहिष्शायी'' प्रतीत होता है- यह अति उच्च गरीबी एवं गहनतम सामाजिक विभाजनों की युति का परिचायक है।

2.39 एक विलक्षण वैचारिक विभाजन ग्रस्त लोकतंत्र, (जो गरीबी से ही अपनी यात्रा का प्रारंभ कर रहा हो) में निजी क्षेत्र के प्रति अविश्वास होना निश्चित प्राय: होता है। इसी धारणा को उस समय बौद्धिक स्तर पर व्याप्त समाजवाद ने और बल प्रदान किया था। भारत के संस्थापक देश का निर्माण करते समय उन उद्योगों का विकास भी करना चाहते थे जो देश को राजनीतिक के साथ-साथ आर्थिक स्तर भी स्वतंत्र बना सके। किन्तु

रेखाचित्र 9 : विलक्षण वैचारिक मतभेदग्रस्त भारत

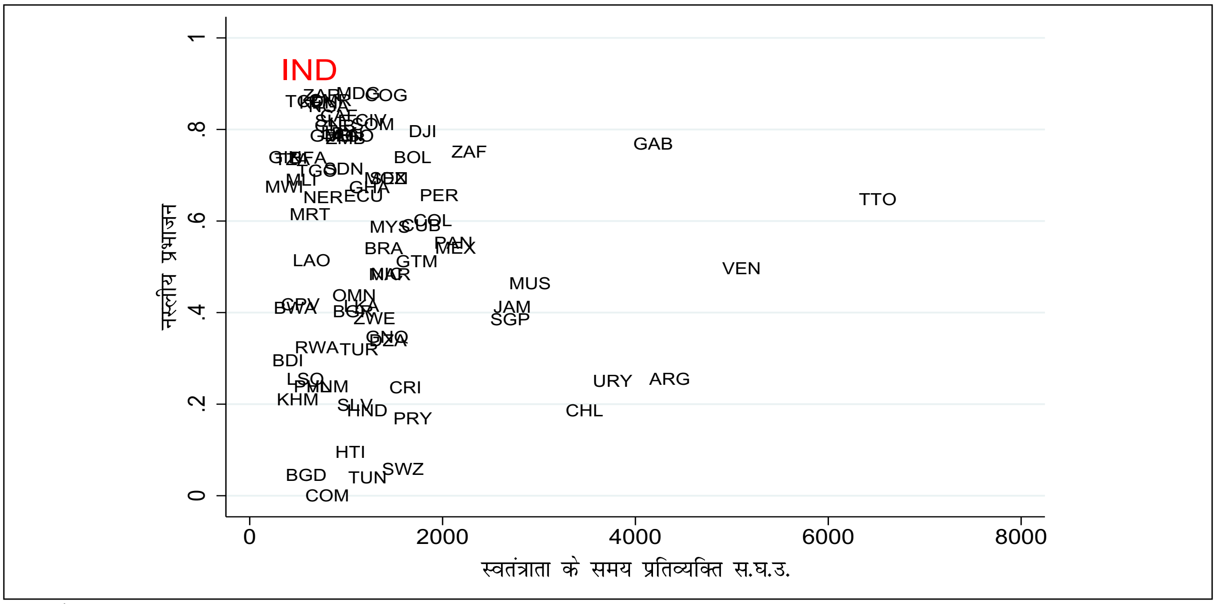

स्रोत: बैनर्जी एण्ड सोमनाथन, 2007/समीक्षा परिकलन

[7] बसु (2016) ने एक गरीब लोकतंत्र होने से पैदा होने वाली कठिनाइयों-आपदाओं को इस प्रकार चित्रण किया है: अधिकांश विकासशील देशों को लोकतंत्र नहीं होने के कारण वे समस्याएं नहीं झेलनी पड़ी, जिनका भारत ने सामना किया है। एक बार जनमत में कोई बात रूढ़ हो गई (नेहरू ने इस जनमत को स्वरूप दिया था) तो फिर कोई नीति आम जनता पर थोंपी नहीं जा सकती। बड़े नीतिगत बदलाव से पूर्व जनमत में बदलाव लाना आवश्यक हो जाएगा। कम से कम नीति निर्माता को आम जनता की उस समय तक ''सहमति'' की प्रतिक्षा करनी होगी जब वह (जनता) स्वयं वर्तमान स्थिति को लेकर असमंजस में फंसी हो।

[8] प्रजाती-भाषाई विभाजकों का अर्थ है कि यादृच्छिक रूप से चुने गए किसी युग्म की एक समान सामाजिक पहचान की प्रायिकता शून्य प्राय: होगी। यह पहचान धर्म, भाषा या प्रजाति पर आधारित हो सकती है।

निजी क्षेत्र उपनिवेशी शासन व्यवस्था के अंतर्गत यह कार्य कर पाने में पूरी तरह विफल रहा था। यही परिदृश्य सभी नव-स्वतंत्र देशों में दिखाई दे रहा था। अतः निजी क्षेत्र की आर्थिक स्वतंत्रता की प्राप्ति की क्षमता को लेकर गंभीर संदेह के सशक्त आधार विद्यमान थे। इनके विपरीत कुछ ही दशकों में स्वयं को एक कृषिक देश से औद्योगिक शक्ति के रूप में ढ़ाल चुके सोवियत संघ का उदाहरण सुझा रहा था कि यदि शासनतंत्र अर्थव्यवस्था के शिखर पर स्थित हो संसाधनों का अधिक वरीयता वाले क्षेत्रों में प्रवाह निदेशन करे तो तीव्र विकास सचमुच संभव हो सकता है।

2.40 हां यह भी सत्य है कि भारत ने नियोजन अपनाया और सरकारी क्षेत्र को एक बड़ी भूमिका भी सौंपी किन्तु सोवियत रूस की तरह निजी क्षेत्र का पूर्ण निर्मूलन नहीं किया। इसने निजी उद्यमों पर लाइसेंस-परमिट व्यवस्था के माध्यम से नियंत्रण रखने का प्रयास किया। विडंबना ही थी कि इसने निजी क्षेत्र को और अधिक बदनामी ही प्रदान की : सरकार ने जितने अधिक नियंत्रण लगाए, उतनी ही प्रबल जनभावना बनती गई कि ये निजी उद्यमी केवल सरकारी नियंत्रणों के सहारे फलफूल रहे थे- इस प्रकार वे जन आक्रोश के ही भागी बन रहे थे।

2.41 विलक्षण वैचारिक भेद ग्रस्तता का एक अन्य महत्वपूर्ण परिणाम भी रहा; भारत को विकास क्रम के प्रारंभिक स्तर से ही पुनःवितरण पर भी ध्यान देना पड़ा, जबकि उस समय इसके शासनतंत्र की क्षमताएं बहुत ही सीमित थीं। रेखाचित्र-10 दर्शा रहा है कि तुलनात्मक दृष्टि से उस समय भारत के शासनतंत्र की क्षमताएं कितनी दुर्बल थीं। यह चित्र विभिन्न देशों के आय स्तरों और जीडीपी के उन अंशों की तुलना कर रहा है जो भारत आज पुनःवितरण पर खर्च कर रहा है। प्रायः इस प्रकार के व्यय विकास प्रक्रिया के काफी उन्नत स्तर पर पाए जाते हैं- उस समय तक देश का शासनतंत्र भी पर्याप्त क्षमता अर्जित कर चुका होता है। उदाहरण के लिए दक्षिण कोरिया अपनी प्रतिव्यक्ति जीडीपी के लगभग $20000 के स्तर पर जितना व्यय कर रहा था उतना ही भारत मात्र $5000 के स्तर पर कर रहा है। और अंततः, पुनर्वितरण का तकाजा देश के नीति निर्माण पर इस प्रकार छा गया कि भारत मानवीय पूंजी के निर्माण में पर्याप्त निवेश नहीं कर पाया। उदाहरण के लिए स्वास्थ्य पर 1950-51 में सरकारी व्यय जीडीपी का मात्र 0.22 प्रतिशत था (स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, 2005)। यह आज बढ़कर एक प्रतिशत से कुछ अधिक हो गया है किन्तु विश्व औसत तो 5.99 प्रतिशत है (विश्व बैंक, 2014)।

2.42 निम्न राजकीय क्षमता वाले गरीब देश (भारत जैसे) को जब पुनःवितरण करने को विवश होना पड़ता है तो वह निश्चित रूप से अनगढ़ और छीजन भरे उपायों का प्रयोग कर दक्षताहीन पुनःवितरण ही कर पाता है। वर्ष 1950 में प्रभावी रूप से लक्षित कार्यक्रम बना पाने

रेखाचित्र 10 : पुनःवितरण की बहुत पहले शुरूआत

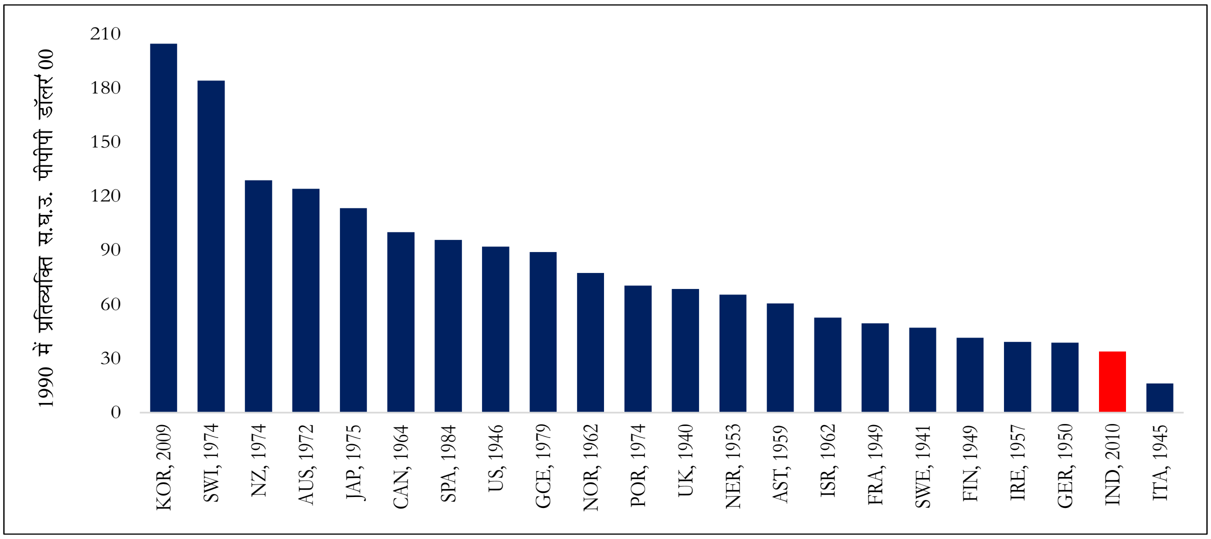

स्रोत: समीक्षा की गणनाएं

की ''विलासिता'' कहां सुलभ थी? वस्तुत: 1960 या फिर 1970 में भी यह संभव नहीं था।

2.43 उपर्युक्त विवरण यही समझा देता है कि इस प्रकार के नीतिगत हस्तक्षेप क्यों प्रारंभ हो गए? किन्तु यह अब भी स्पष्ट नहीं हो पाता कि इन दक्षताहीन पुन:वितरण प्रयासों से हम आज भी क्यों चिपके हुए हैं-आखिर अन्य सभी देश तो अपेक्षाकृत कम दक्षताहीन पुन:वितरण विधियां अपना चुके हैं। इसकी एक आंशिक व्याख्या तो एक बार अपना ली गई दक्षताहीन प्रणाली को त्याग नहीं पाने की विवशता हो सकती है। यह समस्या प्राय: हर देश में दिखाई दे जाती है, किन्तु एक ऐसे गरीब देश में यह अधिक गंभीर होती है, जहां विचार-भेदग्रस्त लोकतंत्र हो और उस पर निहित स्वार्थ, अक्षम संस्थानों और ऐसी विचारधारा का वर्चस्व हो जो

रेखाचित्र 11 : भारत का न्यून कर आधार[9]

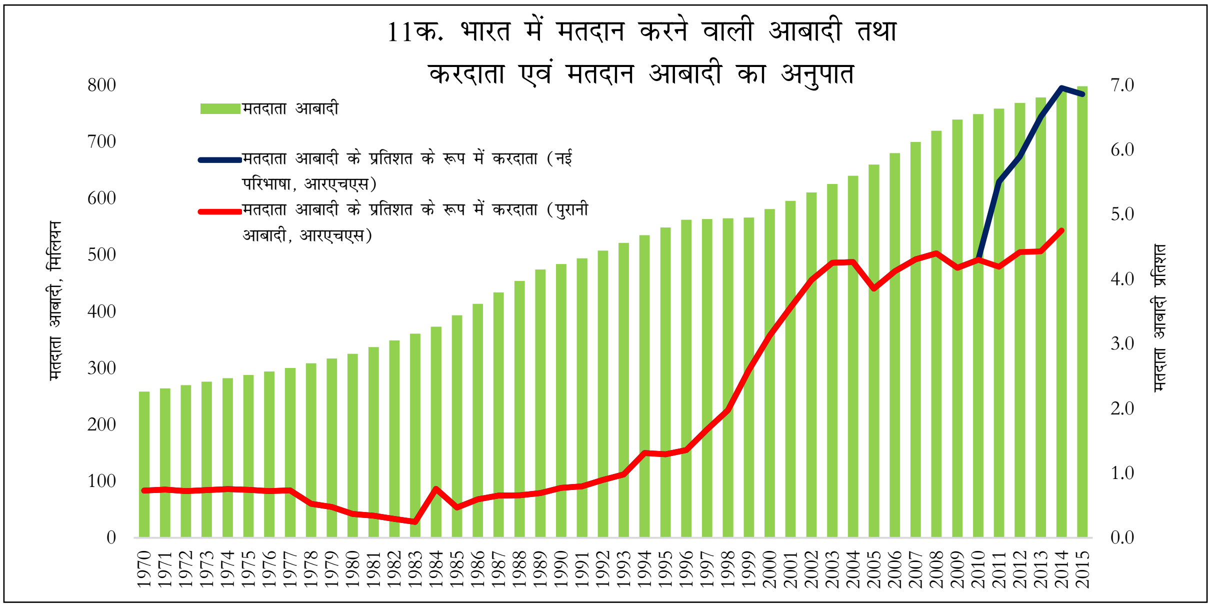

स्रोत: **पिकेटी, चुनाव आयोग, राजस्व विभाग**

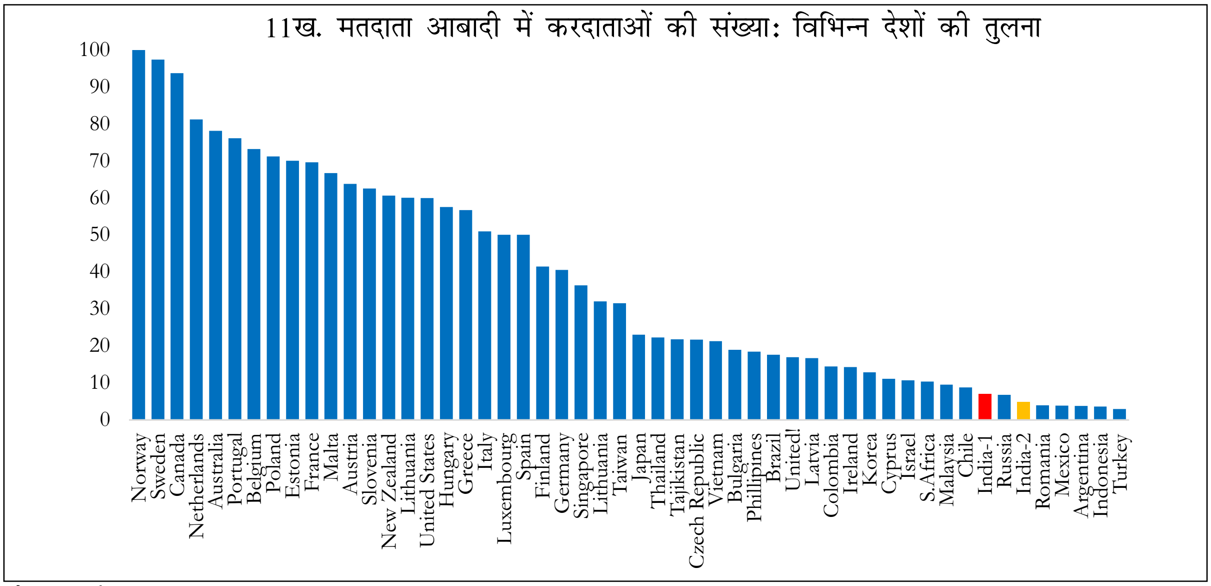

स्रोत: **आर्थिक समीक्षा, 2015-16**

9 नई परिभाषा : करदाता + कर कटौती किंतु विवरणी नहीं। पुरानी परिभाषा : विवरणी भरने वाले ही।

निवेश से अधिक महत्व पुन:वितरण को प्रदान करती हो (इस पर 2015-16 के समीक्षा खंड-2 के अध्याय 2 में विस्तार से चर्चा की गई थी)।

2.44 इस विवरण से एक और रोगाभिज्ञान उभर कर आता है। यूरोप और संयुक्त राज्य का इतिहास सुझाता है कि वहां शासनतंत्र ने पुन: वितरण की भूमिका स्वीकार करने से पहले भौतिक सुरक्षा, स्वास्थ्य, शिक्षा और उपरि पूंजी संरचना जैसी आवश्यक सेवाओं की आपूर्ति पर ही ध्यान दिया था। यह क्रम किसी दुर्घटना का परिणाम नहीं है। जब तक समाज के मध्यमवर्ग को यह विश्वास नहीं हो जाता कि सरकार के कार्यों से उसे कुछ लाभ प्राप्त होता है, वह पुन:वितरण का वित्तीयन करने को तैयार नहीं होता। दूसरे शब्दों में पुन: वितरण करने की वैधानिकता का अर्जन प्रभावी रूप से आवश्यक सेवाओं की आपूर्ति कर पाने में सफलता की सिद्धि में ही निहित है।

2.45 इसकी एक गंभीर उपपत्ति भी है। यदि सरकार की भूमिका मुख्यत: पुन:वितरण हो जाती है तो मध्यम वर्ग उस शासनतंत्र से ही विरत हो जाता है-प्रो. अलबर्ट हर्षमैन के शब्दों में- मध्यम वर्ग ऐसे शासनतंत्र से बहिरगमन करने लगता है। अत: एक वैचारिक भेद ग्रस्त समाज की तो इस रोगाभिज्ञान से ग्रस्त हो जाने की पूर्व रचित नियति ही है। इस बहिरगमन का एक चिन्ह करदाता संख्या में कमी है। यह बात भारत में बहुत ही स्पष्ट दिखाई दे रही है। रेखाचित्र-11 अन्य देशों की तुलना में करदाता और मतदाता जनसंख्या का अनुपात दिखा रहा है। भाग 11(क) यह दिखा रहा है कि भारत में इस अनुपात की वृद्धि कितनी धीमी रही है।

2.46 सरकार पर दबाव घटाते हुए शासनतंत्र से मध्यम वर्ग का बहिर्गमन उसे और कमजोर बना देगा, इसकी विधिसंगति और क्षीण हो जाएगी-परिणाम स्परूप बहिर्गमन की गति में और वृद्धि होगी। दक्षताहीन पुन:वितरण को विवश की गई सरकार दक्षताहीन वितरण, निम्न विधि-संगति, कम संसाधन, निम्न मानवीय पूंजी निवेश, निम्न क्षमता आदि के पाश में फंस कर रह जाती है।

III. निष्कर्ष

2.47 भारत आर्थिक निष्पादन और सुधार के पथ पर बहुत लंबी यात्रा कर चुका है। किन्तु गत्यात्मकता और सामाजिक न्याय की प्राप्ति का बहुत लम्बा मार्ग अभी तय करना बाकी है। एक अनुमानिक निष्कर्ष तो यही है कि इस यात्रा को पूर्ण करने के लिए आर्थिक दृष्टि को लेकर समूचे राजनीतिक पटल पर एक अधिक सहमति का निर्माण करना होगा।

2.48 अभी तक विमुद्रीकरण का अनुभव कुछ सीख दे रहा है। एक स्वरूप में एक पुन: वितरक उपाय है जो सरकार के मध्यम से धनिक वर्ग की गैर कानूनी रूप से संकलित संपदा को निर्धन वर्ग के बीच बांटने वाला एक कदम माना जा रहा है। निश्चित रूप से अल्पकाल में तो इस कदम की लागत मुख्यत: अनौपचारिक/नकद सघन क्षेत्र में कार्य कर रहे वह वर्ग चुका रहे हैं जो धनिक नहीं माने जा सकते। इस दृष्टि से इसे भी दक्षताहीन पुन:वितरण माना जा सकता है। अत: जहां सहाय्य गरीबों की ओर पुन:वितरण का अदक्ष माध्यम थे वहीं विमुद्रीकरण को अमीरों से दूर पुन:वितरण का अदक्ष कदम कहा जा सकता है।

2.49 किन्तु फिर भी अभी तक तो, विमुद्रीकरण को व्यापक जन समर्थन मिला है, विशेषकर उन वर्गों से जिन्होंने इसकी अधिकतर अल्पकालिक लागत का भी वहन किया है।[10] विमुद्रीकरण की अनुगूंज यह दर्शा रही है कि आर्थिक पटल समतल नहीं है यहां चल रहे क्रम में कुछ लोग (धनिक) इस प्रकार व्यवस्था का लाभ उठा जाते हैं जिसे जन सामान्य अनुचित और गैर कानूनी मानता है।

2.50 यहां दक्षताहीन पुन:वितरण और निजी क्षेत्र की विधि संगति तथा शासनतंत्र को लेकर कुछ सीखें भरी हैं और ये सीखें भारत की विकास यात्रा के अगले सोपान में बहुत निर्णायक सिद्ध होंगी। एक सीख तो यही है कि आगे सुधार केवल उन निहित स्वार्थों पर पार पाना मात्र नहीं होंगे जो उन सुधारों को बाधित करते हैं। आधारभूत विचारों एवं जीवन दृष्टि के पटल पर अधिक व्यापक सामाजिक सहमति का निर्माण अधिक निर्णायक सुधार

[10] पांच राज्यों में फोन पर किए गए एक नवीन सर्वेक्षण ने इस कदम की जन स्वीकार्यता को 75 प्रतिशत से अधिक आंका है।

सिद्ध होगा।

2.51 विचार ही शासन करते हैं।

संदर्भ

1 Acemoglu, Daron, and James A. Robinson. "Economics versus politics: Pitfalls of policy advice." *The Journal of Economic Perspectives* 27.2 (2013): 173-192.

2 Banerjee, Abhijit, and Rohini Somanathan. "The political economy of public goods: Some evidence from India." *Journal of Development Economics* 82.2 (2007): 287-314.

3 Basu, Kaushik. "Economic Development, Importance of Institutions in and Social Aspects of.", *Encyclopedia of India,* Thomson Gale.

4. Bhagwati, Jagdish, and Arvind Panagariya. *Why growth matters: How economic growth in India reduced poverty and the lessons for other Developing countries*. Public Affairs, 2013.

5. Deaton, Angus. *The great escape: health, wealth, and the origins of inequality*. Princeton University Press, 2013.

6. Easterly, William, and Ross Levine. "Africa's growth tragedy: policies and ethnic divisions." *The Quarterly Journal of Economics* (1997): 1203-1250.

7. Fukuyama, Francis. "What is governance?." *Governance* 26.3 (2013): 347-368.

8. Guha, Ramachandra. "Democrats and Dissenters.", Penguin Random House India Private Limited, 2016.

9. Hirschman, Albert. O. "Exit, Voice and State.", *World Politics* Vol 31, No. 1 (1978): 90-107.

10. Kochhar, Kalpana, et al. "India's Pattern of Development: What happened, What Follows?." *Journal of Monetary Economics* 53.5 (2006): 981-1019.

11. Kohli, Atul. "State and redistributive development in India." Growth, Inequality and Social Development in India". Palgrave Macmillan UK, 2012. 194-226.

12. Mangla, Akshay. "Bureaucratic Norms and State Capacity in India." *Asian Survey* 55.5 (2015): 882-908.

13. North, Douglass C., and Barry R. Weingast. "Constitutions and commitment: the evolution of institutions governing public choice in seventeenth-century England." *The journal of Economic History* 49.04 (1989): 803-832.

14. Parussini, Gabriele. "India's Central Bank cuts interest rates", Wall Street Journal (2016).

15. Pritchett, Lant. "Is India a Flailing State? Detours on the Four Lane Highway to Modernization." (2009), mimeo.

16. Rice, Susan and Patrick, Steward. "Index of State Weakness in the Developing World", *Brooking Foreign Policy*.

17. Rodrik, Dani, and Arvind Subramanian. "From 'Hindu Growth' to Productivity Surge: The Mystery of the Indian Growth Transition." *IMF Staff Papers*, vol. 52, no. 2, 2005, pp. 193–228. www.jstor.org/stable/30035894.

18. Rodrik, Dani. "The past, present, and future of economic growth." *Challenge* 57.3 (2014): 5-39.

Saint-Paul, Gilles, and Thierry Verdier. "Education, democracy and growth." *Journal of development Economics* 42.2 (1993): 399-407.

19. Subramanian, Arvind. "Incentivising Pulses Production Through Minimum Support Price and Related Policies", Ministry of Finance, Government of India.

विमुद्रीकरण : स्तुति करें या भर्त्सना?

03
अध्याय

"टका माटी, माटी टका"
-रामकृष्ण परमहंस

"सभी भ्रान्तियों में सबसे अधिक अधिकार शून्य तो भविष्यवाणी ही होती है।"
-जार्ज इलियट, मिडलमार्च

विमुद्रीकरण एक क्रांतिकारी एवं अप्रत्याशित कदम है, इसकी अल्पकालिक लागतें हैं, किन्तु दीर्घकालिक लाभ भी हैं। समाचार पत्रों के शीर्ष लेखों में किए गए आग्रह की तुलना में समाज में तरलता की हानि बहुत कम रही और दिसंबर 2016 के अंत से तरलता की स्थिति में निरंतर सुधार हो रहा है। आगे उठाए जा सकने वाले अनेक ऐसे कदम है, जिनसे लागतें न्यूनतम हो जाएंगी और विमुद्रीकरण के लाभ अधिकतम स्तर पर पहुँच पाएंगे। इनमें सम्मिलित हैं : तीव्र, मांग के अनुसार, पुनः मुद्रीकरण; और कर सुधार, अर्थात भूमि एवं भवन संपदा के लेनदेन को जीएसटी के अंतर्गत लाना, करों की दरों और स्टैंप शुल्क को घटाना; और अतिउग्र कर प्रशासकों के उत्साह पर अंकुश लगाते हुए समाज को आश्वस्त करना। इन प्रयासों से संवृद्धि; 2017-18 में अपने सामान्य उन्नयन पथ पर लौट आएगी, भले ही 2016-17 में इसमें कुछ गिरावट ही दिखाई दे।

I. विषय प्रवेश

3.1 सरकार ने नवंबर 8, 2016 की शाम अर्थव्यवस्था के लिए गंभीर निहितार्थों से भरी एक ऐतिहासिक घोषणा की। तुरन्त प्रभाव से, कुछ एक कार्यो को छोड़कर, दो उच्चतम मूल्य के रू. 500/. और रू. 1000 नोटों का विमुद्रीकरण कर दिया गया।[1] ये नोट अब विधिमान्य करेंसी नहीं रहे। एक झटके में अर्थव्यवस्था के परिचलन की 86 प्रतिशत मुद्रा अवैध घोषित हो गई।[2] ये नोट दिसंबर 30, 2016 तक बैंकों में जमा कराए जाने थे। दूसरे शब्दों में, आन्तरिक मुद्रा और बैंक जमाओं की परिवर्तनशीलता पर रूकावटें लागू कर दी गईं।[3]

3.2 इस कदम के चार उद्देश्य थे : भ्रष्टाचार पर अंकुश, नकली नोटों की छपाई पर लगाम, आतंकवादियों द्वारा इन उच्च मूल्य नोटों का प्रयोग, और विशेष कर कालाधन संचित करने पर रोक (यह कालाधन कर अधिकारियों के समक्ष घोषित नहीं की गई आय होता है)।

3.3 यह कदम उक्त गैरकानूनी कामों को रोकने के लिए उठाए गए अनेक कदमों के बाद उठाया गया था। ये कदम थे बजट 2014 द्वारा विशेष अन्वेषण दल का गठन; कालाधन और (उस पर) कर अधिनियम, 2015; बेनामी लेनदेन अधिनिमय, 2016; स्विट्जरलैंड से जानकारी सांझा करने का समझौता, मॉरीशस, साइप्रस

---

1 स्पष्ट रूप से कहें तो कुछ कार्यो को छोड़ शेष सभी के लिए ये नोट विधि मान्य करेंसी नहीं रहे थे। ये कुछ कार्य थे सार्वजनिक सेवाओं के बिलों के भुगतान आदि। किन्तु जन सामान्य के विमर्श में इसे विमुद्रीकरण का नाम मिल गया है। हम भी इसी रूप से इस शब्द का प्रयोग कर रहे हैं।

2 इस सारे अध्याय में नकदी, करेंसी, करेंसी/जनता के पास नकदी का पर्यायवाची रूप में प्रयोग होगा।

3 नकद को बैंक जमा में बदलना कठिन हो गया था, किन्तु इसे वैधानिक रूप दिसंबर 30, 2016 से निर्दिष्ट बैंक नोट (दायित्व समापन) अध्यादेश द्वारा ही प्रतिबंधित किया गया था।

और सिंगापुर के साथ कर संधियों में परिवर्तन; तथा अघोषित आय की घोषणा योजना। विमुद्रीकरण एक व्यवस्था परिवर्तन का संकेत देने वाला कदम है। यह गैरकानूनी कार्यों तथा उनसे संबंधित धन अर्जन को दंडित करने की सरकार की प्रतिबद्धता की घोषणा थी। साथ ही जिन विधि संगत कार्यों को अभी तक सरकार से छिपाया जा रहा था, उन्हें भी स्थायी रूप से और दंड भरने के साथ घोषित करने का आव्हान था।

3.4 विश्व के आर्थिक इतिहास में भारत की विमुद्रीकरण की घोषणा अप्रत्याशित रही, इसमें सामान्यप्रायः राजनीतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के बावजूद गोपनीयता और आक्समिकता का समावेश रहा। अभी तक सभी विमुद्रीकरण अचानक, किन्तु अतिशय स्फीति, युद्ध, राजनीतिक संकट या अन्य इसी प्रकार की अति पराकाष्ठापूर्ण परिस्थितियों में हुए हैं। किंतु भारतीय अर्थव्यवस्था तो स्थिरतापूर्ण समष्टि स्तरीय अर्थ और प्रभावी प्रभावशाली सुधार कार्यों के लागू किए जाने के आधार पर विश्व की तीव्रतम दर पर संवृद्धि कर रही थी (अध्याय-1)। ऐसी सामान्य परिस्थितियों में यदि विमुद्रीकरण करते भी हैं तो वह यूरोप की भांति धीमे-धीमे कदमों में किया जाता है (देखें परिशिष्ट-1, इसमें धीमे-धीमे एवं अचानक किए गए विमुद्रीकरणों की देशानुसार सूची दी गई है)।

3.5 भारत का यह कदम इसके अपने इतिहास की दृष्टि से अभूतपूर्व नहीं है : पहले भी दो बार, 1946 और 1970 में विमुद्रीकरण किए गए है, किन्तु 1970 के कदम का नकदी की सफलभता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा था, जैसा रेखाचित्र-1 में दिखाया गया है।[4] किन्तु अभी उठाए गए कदम बहुत बड़े, किन्तु अस्थाई करेंसी प्रभाव रहे हैं। रेखाचित्र-1 में 1953 से वार्षिक करेंसी प्रतिशत परिवर्तन दिखाए गए हैं। वर्ष 2016-17 के लिए यह परिवर्तन पिछले वर्ष की तुलना में मात्रा 1.2 प्रतिशत (ऋणात्मक) रहेगा। यह पिछली चार मुद्रा की कटौती की घटनाओं से 2 प्रतिशत अंकों से अधिक कम है। उन घटनाओं की औसत करेंसी कटौती लगभग 3.3 प्रतिशत थी।[5]

रेखाचित्र 1 : जनता के पास करेंसी की औसत में वृद्धि (प्रतिशत वर्षानुसार)

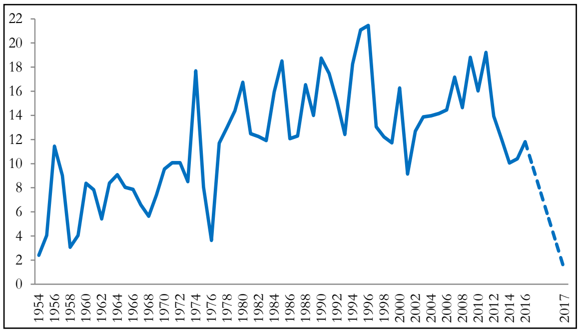

स्रोत : समीक्षा की गणनाएं

नोट : यहां वित्तीय वर्ष दिखाए गए हैं, वह भी केवल सम वर्ष।

3.6 वैश्विक वित्तीय संकट के बाद से अनेक विकसित देशों ने मौद्रिक नीति का प्रयोग संवृद्धि प्रोत्साहन के लिए किया है, यह क्रम ऋणात्मक ब्याज की दरों तथा "हैलीकॉप्टर द्वारा नोटों की वर्षा" जैसी अचिन्त्य नीतियों तक चला गया है। भारत के कदम ने तो गैर परंपरागत मौद्रिक नीति को एक नया ही स्वरूप प्रदान कर दिया है। विकसित देश तो मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि करने में जुटे थे, किंतु भारत ने तो उसे घटा दिया है। इस नीति को एक "विपरीत हैलीकॉप्टर करेंसी वर्षा" का नाम दिया जा सकता है। संभवतः "हैलीकॉप्टर द्वारा अवशोषण" अधिक उपयुक्त शब्द होगा।

3.7 विमुद्रीकरण पर लोक विमर्श में तीन प्रकार के प्रश्न समूह उठाए गए हैं। पहले समूह में इस कदम को लागू करने में निहित रचना एवं कार्यविधि से जुड़ प्रबंधन विषयक प्रश्न हैं। दूसरे प्रश्न अल्प एवं मघ्यकालिक आर्थिक प्रभावों से संबंधित हैं, और तीसरे प्रश्न भविष्य में आर्थिक नीतियों के संचलन के आधारिक बृहतर जीवन दर्शन के प्रति निहितार्थों से जुड़े हैं। यह समीक्षा पहले समूह के प्रश्नों के लिए एक उचित मंच नहीं है तथा तीसरे समूह पर हम अध्याय-1 में चर्चा कर चुके हैं। वर्तमान अध्याय में हमारा ध्यान केवल दूसरे समूह के प्रश्नों पर केंद्रित रहेगा।

3.8 पृष्ठभूमि के तथ्य क्या हैं? विश्लेषण कैसे किया जाए? दीर्घकालिक हितलाभ क्या होंगे तथा अल्पकालिक लगातें क्या हैं? साथ ही, किस प्रकार की नीति प्रतिक्रियाएं

4 वर्ष 1970 में सेवानिवृत प्रधान न्यायाधीश के.एन बान्चू की अध्यक्षता वाली कालेधन को कोट से विमुक्ति पर समिति ने अपनी अन्तरिम रिपोर्ट में 10 और 100 के नोट बंद करने की सिफारिश की थी। उस समय इन्हीं नोटों का मान 86.65 प्रतिशत मुद्रा के समान था।

5 उन चार घटनाओं के समय औसत मौद्रिक जीडीपी संवृद्धि दर 3.5 प्रतिशत थी।

आगे की ओर बढ़ते हुए हितलाभों को अधिकतम एवं लागतों को न्यूनतम बना पाएंगी? यह अनुच्छेद इन्हीं प्रश्नों के उत्तर तलाश करने का प्रयास कर रहा है। समीक्षा में बृहतर क्षेमशास्त्रीय और अन्य गैर आर्थिक आयामों पर चिंतन नहीं किया जाता (राय, 2016)। रोजगार में कमी, कृषि आय में हानि, और अर्थव्यवस्था के नकद सघन अनौपचारिक क्षेत्रकों में सामाजिक असंतोष की सूचनाएं आई है। किन्तु समष्टि आर्थिक जानकारी के अभाव में इन सब का व्यवस्थित रूप से विश्लेषण नहीं हो पाएगा।

3.9 एक चेतावनी देना भी उपयुक्त रहेगा। विमुद्रीकरण एक अनुठा कदम है, यह पिछली व्यवस्था से एक संरचनात्मक विलगाव का प्रतिनिधित्व कर रहा है। इसका अर्थ है कि इसके प्रभावों का (पुराने चिन्तन के आधार पर) पूर्वाकलन कर पाना एक जोखिम भरा काम होगा। अत: आगामी चर्चा, विशेषकर परिमाण निर्धारण के प्रयासों को निश्चयत्मक नहीं, किंचित अनुमानात्मक ही मानना चाहिए। इतिहास के फैसला, जब भी वह समय के धुंधलके, को चीरता हुआ आएगा, आज के निष्कर्ष निदानवादों को अचंभित कर सकता है।

II. पृष्ठभूमि के तथ्य

3.10 भ्रम का निवारण करते हुए मुद्दों की सटीक समझ पाने के लिए शुरू में ही कुछ भेद स्पष्ट कर देने चाहिए। 'नकद' को दो आयामों/स्वरूपों में जाना जा सकता है : इसके कार्यों तथा इसके स्वरूप/स्रोतों के रूप में कार्य-स्वरूप में नकद विनिमय का माध्यम तथा धन के अन्य स्वरूपों, स्वर्ण या फिर भू-भवन संपदा, की भांति मूल्य का भंडार हो सकता है। स्वरूप की दृष्टि से नकदी विधिग्राह्य मुद्रा हो सकती है या फिर गैरकानूनी भी।

3.11 कार्य और स्वरूप बहुत ही पृथक-पृथक होते हैं। उदहारकण के लिए मूल्य के भंडार के रूप में रखी गई नकदी श्वेत (परिवार द्वारा आक्समिकताओं की पूर्ति के उद्देश्य से नकद रूप में रखी गई बचत) हो सकती है। दूसरी ओर लेनदेन के लिए प्रयुक्त नकदी का स्रोत, यदि कर वंचना या भ्रष्टाचार हो, तो यह कालाधन हो सकता है। ये वर्ग निरूपण कदाचित अस्थिर ही होता है, कई प्रकार की गतिविधियों और कराधिकारियों के समक्ष घोषणा करते हुए जुर्माना चुका कर कालेधन को श्वेत बनाना भी संभव होता है।

3.12 कुछ एक तत्व सार्थक हैं और उन्हीं ने विमुद्रीकरण की प्रेरणा भी दी है।

3.13 सबसे पहले तो भारत में नकद जीडीपी अनुपात का विकास क्रम दो सोपानों में हुआ है। पहले डेढ़ दशकों में (1952-53 से 1967-68 तक) यह लगभग 12 प्रतिशत से घटकर 9 प्रतिशत के आसपास रह गया था। उसके बाद से यह अनुपात अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर के साथ-साथ बदलता रहा है। जब 1970 के दशक के अंत में संवृद्धि दर में सुधार होने लगा तो यह नकद जीडीपी अनुपात भी ऊपर की ओर उठने लगा। वर्ष 2000-2010 में जब संवृद्धि में उफान आया तो इस अनुपात की वृद्धि भी त्वरित दर से होती दिखी। वर्ष 2010 के आसपास स्फीति की दर उच्च रही और उस समय यह अनुपात कुछ कम हो गया था, किंतु 2014-15 के बाद स्फीति दर में गिरावट के बाद यह अनुपात पुन: 12 प्रतिशत पर पहुँच गया। उच्चमान के करेंसी नोटों (रू. 500 तथा रू. 1000) के मूल्य और जीडीपी का अनुपात भी जीवन स्तर के उन्नयन के साथ-साथ ऊपर उठता रहा है (देखें रेखाचित्र-2 के दूसरे भाग में हरित रेखा)।

3.14 दूसरे, भारत की अर्थव्यवस्था, भले ही यह एक अपेक्षाकृत गरीब देश माना जाता हो, किसी सीमा तक अधिक नकदी पर निर्भर रहती है। रेखाचित्र-3 में नकद

तालिका 1 : नकदी के दो आयाम

	श्वेत धन	काला धन
विनिमय	कंपनी अपने कर्मचारियों को नकद वेतन देती है और यह वेतन की प्राप्ति कर अधिकारियों के समक्ष घोषित होती है।	छोटे उद्यम आदानों की नकद खरीद करते हैं, वे स्वयं और उन्हें वह आदान बेचने वाले, दोनों ही इस लेनदेन की कर अधिकारियों के समक्ष घोषणा नहीं करते।
मूल्य का भंडार	परिवार आकस्मिकताओं हेतु बचत का कुछ अंश नकद रूप में अपने पास रखते हैं।	व्यापारी अघोषित धन जमा रखते हैं ताकि चुनाव के समय अपने चहेते उम्मीदवारों को बांट सकें।

जीडीपी अनुपात को प्रतिव्यक्ति सकल राष्ट्रीय आय (GNI) के अनुसार अंकित किया गया है। यह कत्थई रंग की रेखा दिखा रही है कि विकास के स्तर में सुधार के साथ-साथ नकद जीडीपी अनुपात में कमी आती है। भारत में यह अनुपात अपने समवर्ती आय समूह (बीच वाले चित्र खंड में दर्शित) में भी अपेक्षाकृत उच्चतर ही है।

3.15 इससे संकेत मिलता है कि संभवत: नकदी के कुछ भंडार विधिसंगत लेनदेन के लिए नहीं बल्कि भ्रष्टाचार जैसी अन्य गतिविधियों के लिए जमा किए जा रहे थे।[6] यह पूर्वधारणा बहुत प्रबल है, विश्वभर में गलत कार्यों और नकद के बीच गहरा रिश्ता पाया जाता है : जितना अधिक नकदी का परिचलन होता है, देश में (ट्रांस्पेरेन्सी इंटरनेशनल द्वारा मापित) भ्रष्टाचार भी उतना ही अधिक होता है (रेखाचित्र-4)।

रेखाचित्र 2 : परिचलन में करेंसी, उच्चमान नोट और वास्तविक जीडीपी संवृद्धि

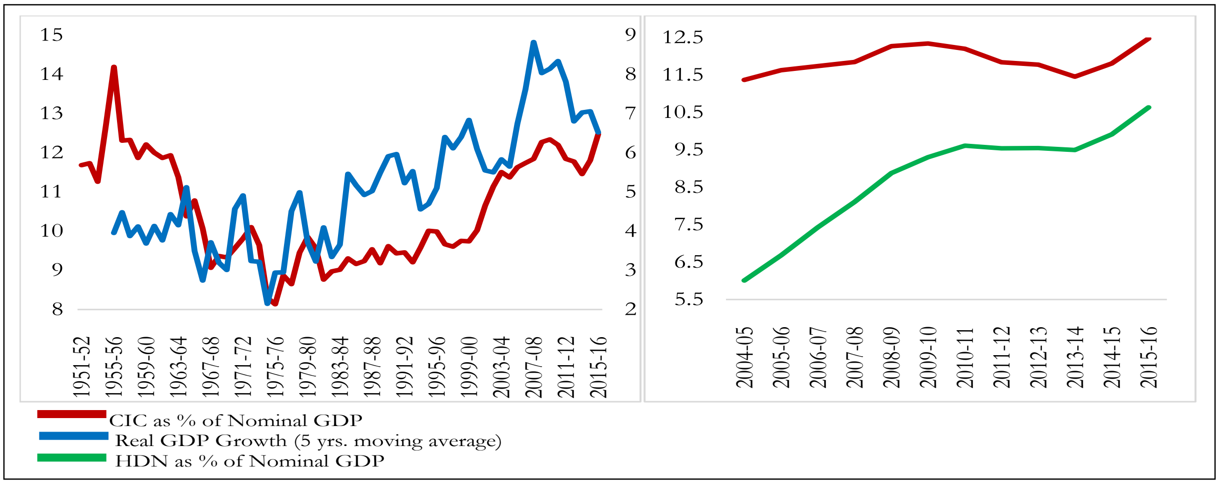

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक

रेखाचित्र 3 : नकद जीडीपी अनुपात बनाम प्रतिव्यक्ति सकल राष्ट्रीय आय, क्रय शक्ति तुल्य इकाइयों में

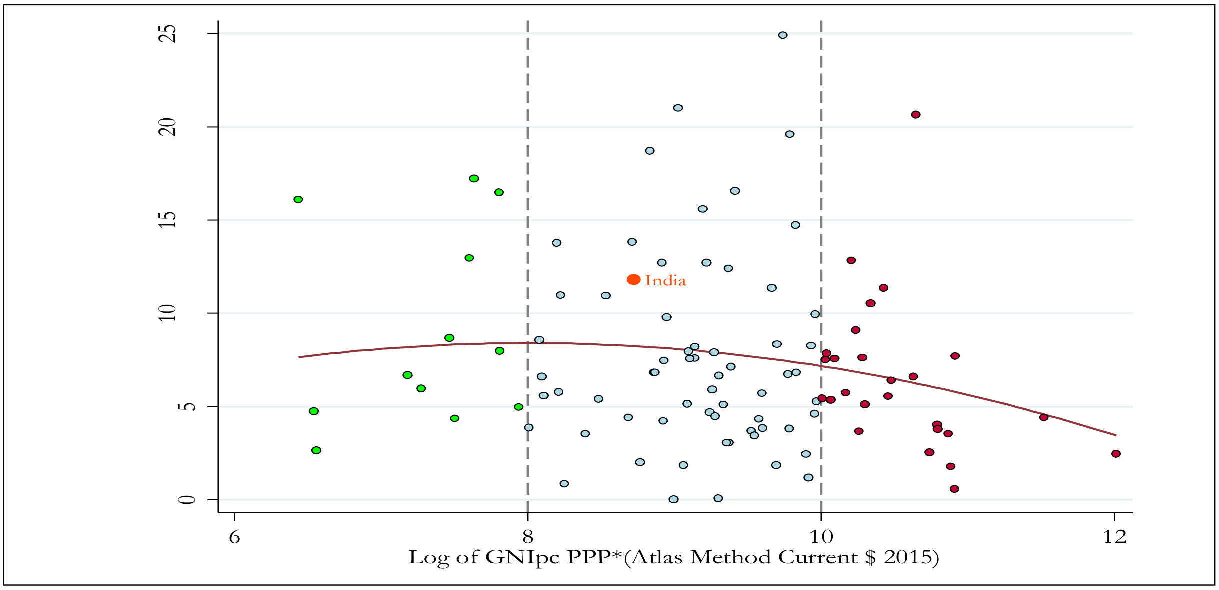

स्रोत : विश्व विकास सूचक; अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय आंकड़े

[6] यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि भ्रष्टाचार से कमाई गई आय काली कमाई ही होती है, किन्तु अधिकांश काली कमाई का माध्यम पूर्णत: विधि संगत होता है। अधिकतर मामलों में वह कमाई इसलिए कालाधन बन जाती है कि कर अधिकारियों के समक्ष उसकी घोषणा नहीं होती। शंकर आचार्य और सहयोगी द्वारा NIPFP के लिए तैयार एक रिपोर्ट 1985 में इन प्रश्नों पर विस्तार से चर्चा हुई है।

3.16 इस रूप में अर्थव्यवस्था में नकद के चलन को कम करने के प्रयासों से भ्रष्टाचार निवारण रूपी दीर्घकालिक हितलाभ संभव है। किन्तु भारत की स्थिति सामान्य समाश्रयण (प्रतीपगमन) वक्र से उच्चतर है, अर्थात यहां भ्रष्टाचार के स्तर की तुलना में नकद का व्यवहार अधिक होता है। इसके दो संभावित कारण स्रोत हो सकते हैं। संभवत: भारत में भ्रष्टाचार तथा इसी प्रकार की व्याधियां अनुमानों से कहीं अधिक गहरे पैठी हुई हैं, अर्थात नारंगी बिन्दु वर्तमान से कहीं दाहिनि ओर होना चाहिए। या फिर संभव है कि अनेक विधिसंगत कार्यों के लिए भी नकदी का ही प्रयोग होता है।

3.17 किन्तु यदि नकदी की जरूरत अधिक है तो इसका अर्थ यह नहीं होगा कि बड़े नोट ही जरूरी है। सामान्यत: बड़े नोट इस कारण भ्रष्टाचार से जुड़े हुए पाए जाते हैं कि उन्हें रखना तथा लाना-लेजाना छोटे नोटों तथा स्वर्ण जैसे अन्य मूल्यवान पदार्थों की अपेक्षा अधिक आसान रहता है। (सैन्ड्स, 2016; हेनरी, 1980; सम्मर्स, 2016; रोगोफ, 2016)।

3.18 भारत में उच्चमान नोटों का लेनदेन उनके मूल्य भंडार स्वरूप से कितना अधिक (उच्च) था? रेखाचित्र-5, 6 इस बात पर कुछ प्रकाश डाल रहे हैं। मौद्रिक प्रतिव्यक्ति आय के सापेक्ष नोटों के मूल्य पर ध्यान देना तो विशेष उपयोगी रहेगा। नोट का आकार आय से जितना अधिक होगा उसकी किसी सामान्य लेनदेन में प्रयोग की संभावना उतनी ही कम होगी? भारत में पिछली एक चौथाई सदी में यह नोट मान आय अनुपात बड़ी तेजी से कम हुआ है, कारण यही रहा है कि आय में वर्तमान उच्चतम नोट मान की अपेक्षा तेजी से वृद्धि हुई है (रेखाचित्र-5)। इससे यही संकेत मिलता है कि बड़े नोट सामान्य लेनदेन में अधिकाधिक प्रयोग हो रहे हैं।

3.19 विभिन्न देशों के आंकड़ों की तुलना इसी धारणा की पुष्टि करती है। यहां स्पष्ट हो रहा है कि अन्य करेंसियों के समूह में हमारा रू. 1000 का नोट तो निम्न मध्यम आय वर्ग की अर्थव्यवस्था के समूह में लगभग बीच में ही था (रेखाचित्र-6)।

3.20 संभवत: रू. 500 और रू. 1000 के नोटों के प्रयोग के स्तर को लेकर सबसे सशक्त साक्ष्य तो नोटों

रेखाचित्र 4 : नकद जीडीपी अनुपात और भ्रष्टाचार

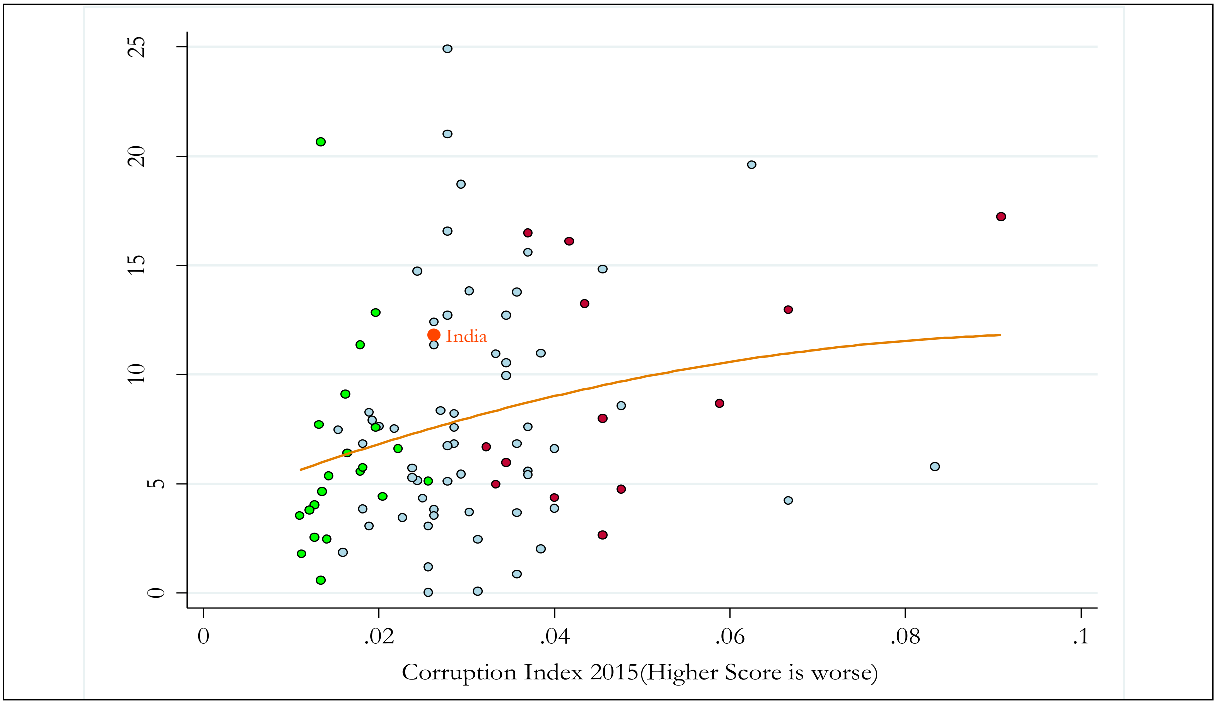

स्रोत : ट्रांस्पेरेन्सी इंटरनेशनल : विश्व विकास सूचक

के 'मैले हो जाने' की दर हैं। अर्थात लेनदेन की वह दर जिस पर नोटों इतने गंदे घोषित हो जाते हैं कि बैंक उन्हें ग्राहकों को देने के स्थान पर केंद्रीय बैंक के पास लौटा देना बेहतर समझते हैं। भारतीय रिजर्व बैंक के आंकड़े बताते हैं कि निम्न मान के नोटों के मैले होने की दर 33 प्रतिशत प्रतिवर्ष है, रू. 500 के नोटों की 22 प्रतिशत तथा रू. 1000 नोटों की यह दर तो मात्रा 11 प्रतिशत रही है। कालेधन के आंकलन की एक संभावित विधि है : यदि सभी नोटों का सामान्य रूप से लेनदेन में प्रयोग होते हैं तो उनके मैले हो जाने की दर भी समान प्राय: होनी चाहिए। अत: हमें लेनदेन में अप्रयुक्त मुद्रा का एक अनुमान मिल जाता है : यह है रू. 7.3 लाख करोड़।

3.21 किन्तु इस मान्यता को पूर्णत: स्वीकार कर लेना कुछ अनुचित रहेगा। बड़े नोटों के मैले होने की

रेखाचित्र 5 : उच्च नोटमान/आय अनुपात (प्रति व्यक्ति जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

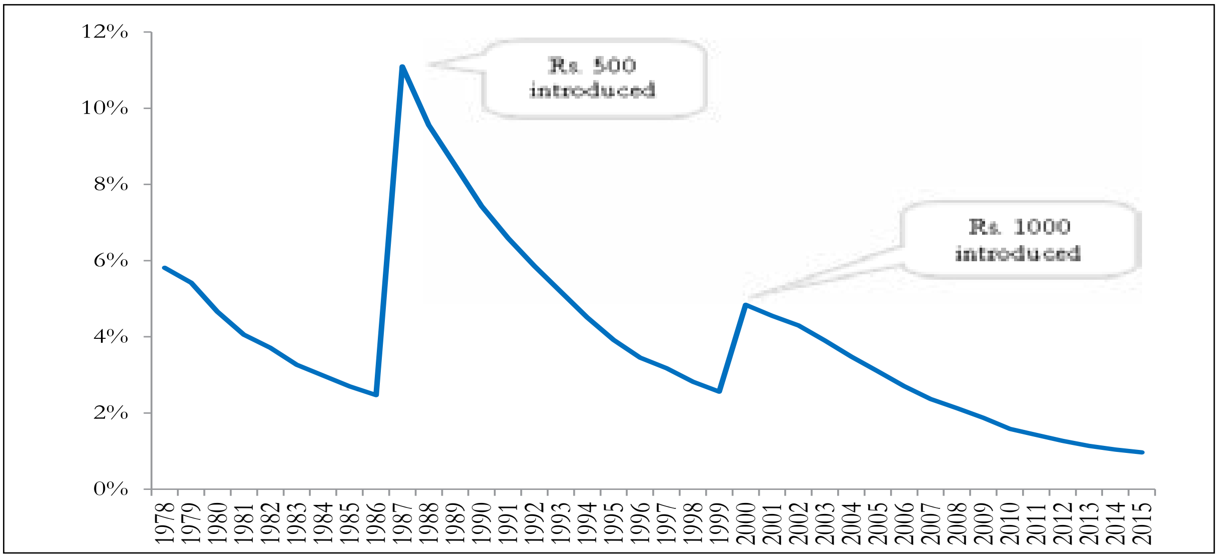

स्रोत : विश्व विकास सूचक; भारतीय रिजर्व बैंक

रेखाचित्र 6 : उच्चतम मान नोट (जीडीपी प्रतिव्यक्ति के प्रतिशत के रूप में)[7]

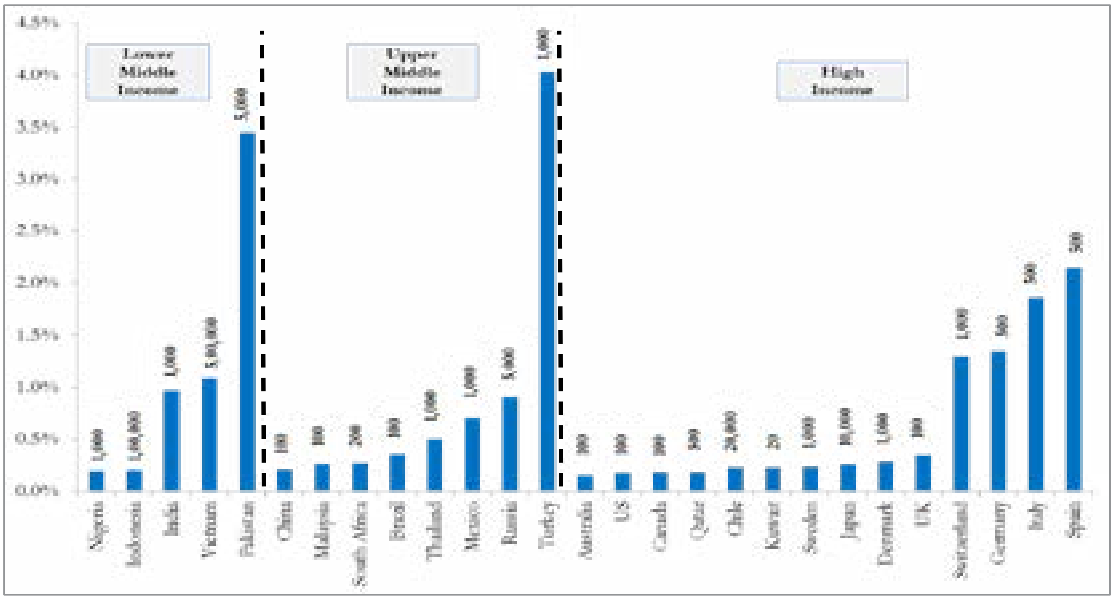

स्रोत : केन्द्रीय बैंकों के तुलनपत्र, विश्व विकास सूचक

7 8 नवंबर, 2016 के दिन

दर इस कारण से भी कम रह सकती है कि बड़े नोटों की जरूरत पड़ने वाले लेनदेन कम होते हैं।

3.22 किन्तु इन दो धारणाओं के बीच अंतर करने की एक विधि है तो, भले ही उसे संपूर्ण नहीं माना जाए। हम भारत के आंकड़ों की अन्य देशों में मैला पड़ने की दरों की तुलना कर सकते हैं। सिद्धांत रूप में रूपए के नोट और विदेशी करेंसी के नोट एक जैसे लेनदेन संपन्न करते हैं तो उनके मैले पर जाने की दरें भी समान प्राय: होनी चाहिए। यदि भारत की यह दर कम हो तो संकेत मिलेगा कि संभवत: उन नोटों का एक अंश लेनदेन के लिए नहीं बल्कि कालाधन जमा करके रखने में काम आ रहा होगा।

3.23 यदि अमेरिका के $20 और $50 के नोटों के मैला पड़ने की दर का प्रयोग कर भारत के उच्च मान नोटों का आंकलन करे तो लेनदेन में प्रयुक्त नहीं होने वाली मुद्रा का मान रू. 3 लाख करोड़ बनता है। यह राशि भी बहुत अधिक है। यह जीडीपी के 2 प्रतिशत के समान है।

III. विश्लेषण विधि

3.24 विमुद्रीकरण के लाभ और लागतों को समझने के लिए इसकी विश्लेषण विधियों का विस्तार आवश्यक है, यह कार्य बहुत ज्ञानवर्धक एवं जटिलतापूर्ण है। मोटेतौर पर, कई प्रभाव होंगे। उन प्रभावों का निरूपण तालिका-2 में किया जा रहा है।

3.25 विश्लेषणात्मक पटल पर विमुद्रीकरण के ये घटक दृष्टिगोचर होने चाहिए :

- मुद्रा की आपूर्ति में संकुचन, किन्तु केवल एक प्रकार की, अर्थात नकद मुद्रा में
- अघोषित निजी संपत्ति (नकद रखी गई) या कालेधन पर कर
- औपचारिक वित्त व्यवस्था से बाहर रखी गई बचतों पर कर

3.26 हम मुद्रा आपूर्ति में संकुचन के प्रभावों (जो क्षणिक ही रहने वाले हैं) पर बाद में चर्चा करेंगे। पहले तो हितलाभों पर ध्यान दे रहे हैं।

IV. हितलाभ

(क) कालेधन पर कर

3.27 यह संभवत: विमुद्रीकरण की व्याख्या की सबसे महत्त्वपूर्ण विधि है, इसे ऐसा कर प्रशासन कदम माना जा सकता है जो कालेधन पर एक कर की भांति है। यह सत्य है कि केवल बड़े नोटों का विमुद्रीकरण कालेधन के विमुद्रीकरण के समान नहीं है। कुछ नकद कोष निश्चित रूप से कालाधन नहीं थे, ये ऐसी आय से बचाकर रखी गई राशियां थीं जिनपर कर चुकाया जा चुका था या कृषि जैसे स्रोतों से अर्जित आय थी जिस पर कोई कर देय नहीं होता।

3.28 अत: सारी कार्ययोजना में एक समीक्षा विधि सम्मिलित रही, वह कालेधन और सफेद धन को अलग करने के लिए बनाई गई थी। घोषित आय में से नकदी के रूप में रखी बचत को बैंक में जमा कराया जा सकता था और उसके बदले नए नोट प्राप्त किए जा

तालिका 2. विमुद्रीकरण का प्रभाव

क्षेत्रक	प्रभाव	
	दिसंबर अंत तक प्रभाव	संभावित दीर्घकालिक प्रभाव
मुद्रा/ब्याज की दर	नकदी में भारी कमी बैंक जमाओं में तीखी वृद्धि रिजर्व बैंक का तुलनपत्र प्राय: अप्रभावित : करेंसी वापसी से केंद्रीय बैंक की नकद देनदारी में कमी किन्तु इसकी व्यापारिक बैंकों के प्रति जमा देनदारियों में वृद्धि जमाओं, ऋणों और सरकारी निक्षेपों पर ब्याज दर में कमी, नकद पर निहित दर में वृद्धि	नकदी में वृद्धि होगी, किन्तु यह पूर्ववर्ती से निम्न स्तर पर ही रहेगी जमाए कम होंगी, किन्तु पहले से उच्च स्तर पर ही रहेगी व बैंक का तुलनपत्र संकुचित होगा (बचे हुए पुराने नोट बदलने की तिथि के बाद) ऋणों पर दरें और कम होंगी, यदि जमाओं की वृद्धि का स्वरूप स्थायी रहा
वित्त व्यवस्था की बचतें	वर्धित होंगी	नकद जमा अनुपात में स्थायी गिरावट के अनुसार वृद्धि
भ्रष्टाचार (गैरकानूनी कार्यों में निहित)		यदि अनुपालन की प्रेरणाएं बलवती हुई तो भ्रष्टाचार में गिरावट होगी

अघोषित आय/ कालाधन (इसका आधारभूत कार्य भले ही गैरकानूनी नहीं हो)	कालेधन के भंडार में कमी, कुछ कालाधनधारी कर पाश में फंसे	औपचारीकरण से अघोषित आय का प्रवाह कम होगा
निजी संपत्ति	निजी क्षेत्र की संपत्ति में गिरावट, कुछ उच्चमान नोट लौटाए नहीं गए, भवन संपदा कीमतों में गिरावट	यदि भवन संपदा कीमतों में गिरावट चलती रही तो निजी धन और कम होगा
सार्वजनिक क्षेत्र की संपत्ति	कोई प्रभाव नहीं हुआ	सरकार/RBI के धन में बिना लौटाए गए नकद के समापन से वृद्धि होगी, देनदारियां कम होगी
औपचारीकरण/ डिजिटाईजेशन	नए प्रयोक्ताओं में RuPay/AEPS के प्रयोग में तीखी वृद्धि, वर्तमान प्रयोक्ताओं द्वारा इनका प्रयोग पूर्ववत चलता रहा	कुछ व्यक्ति नकदी की आपूर्ति बढ़ने पर पुनः नकद प्रयोग करने लगेंगे, किन्तु डिजिटल क्रांति जारी रहेगी।
भवन संपदा	कीमतें कम हुई, धन में गिरावट, नकदी के अभाव में लेनदेन कम हुआ	अघोषित आय का भवन संपदा में निवेश कठिन होने से कीमतें कम हो सकती हैं, यदि इन संपदाओं पर जीएसटी लगा तो कर का अंश और अधिक हो जाएगा
बृहतर स्तर पर अर्थव्यवस्था	रोजगार स्तर में कमी, कृषि आय में कमी, सामाजिक असंतोष, विशेषकर नकद सघन क्षेत्रें में	पुनः मुद्रीकरण होने के साथ-साथ इनमें स्थिरता पुनः स्थापित हो जाएगी
जीडीपी	संवृद्धि में शिथिलता, विमुद्रीकरण ने नकदी और निजी संपत्ति में कमी के माध्यम से मांग में कमी की है, तरलता और काम चलाऊ पूँजी घटा कर और माल असबाब की आपूर्ति श्रृंखला को भंगकर सकल आपूर्ति में कमी की है। साथ ही अनिश्चितता अधिक हा गई है। कृषि, भवन संपदा, आभूषण जैसे नकद प्रधान क्षेत्रों में हानि अधिक रही जीडीपी के आंकड़े अनौपचारिक क्षेत्र पर पड़े 'नकारात्मक' प्रभावों को पूरी तरह अभिव्यक्त नहीं कर पाएंगे, कारण यही है कि प्रायः औपचारिक क्षेत्र के उत्पादन के एक अंश के रूप में अनौपचारिक के लिए अनुमान गढ़ लिया जाता है। किन्तु जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था में औपचारिकरण में वृद्धि होगी, यह अधौअनुमान भी कम हो जाएगा। जीडीपी के दर्ज किए गए आंकड़े इस कारण भी अधिक होंगे कि बैंक क्षेत्र में मूल्यवृद्धि का आंकलन तो जमा राशियों के आधार पर करते हैं, तथा पुराने नोट बैंकों में जमा हो गए हैं। यह उछाल भी अस्थाई ही है।	यदि औपचारीकरण में दीर्घकालिक स्तर पर वृद्धि हुई और भ्रष्टाचार कम हुआ तो इससे लाभ ही होंगे। अनौपचारिक क्षेत्र के उत्पादन में कमी के बावजूद औपचारीकरण की वृद्धि से जीडीपी में सुधार ही दिखाई देगा।
कर संकलन	अधिक आय की घोषणा के कारण आय कर में वृद्धि हुई है। कर जमा कराने और बकाया का भुगतान करने के लिए पुराने नोट मान्य रहे। अतः स्थानीय निकायों तथा वितरण संस्थानों को भुगतानों में वृद्धि दिखाई दे सकती है।	संवृद्धि की शिथिलता से अप्रत्यक्ष और निगम कर संग्रह कम हो सकते हैं। औपचारीकरण में सुधार और कर अनुपालन में वृद्धि से दीर्घकालिक पटल पर कर संग्रह अधिक होगा।
अनिश्चितता/ विश्वस्तता	अनिश्चितता में वृद्धि हुई है, फर्में और परिवार, दोनों में ही आर्थिक प्रभावों और भावी नीतियों पर प्रभावों को लेकर असमंजस फैला है। निवेश एवं स्थायी प्रयोग की चीजों की खरीदारी स्थगित हुई है	यदि विमुद्रीकरण के अनुषांगिक कदम उठाए गए तो विश्वस्तता में सुधार होगा। शीघ्र एवं पूर्ण पुनःमुद्रीकरण अनिवार्य है। कर निर्धारण में मनमानी और करदाता वर्ग का उत्पीड़न सरकार की विश्वस्तता के लिए घातक हो सकते हैं।

सकते थे। किन्तु कालेधन के स्वामियों के समक्ष तीन 'कठिन' विकल्प थे। ये संभव थे :

- अपनी आय घोषित करें और उस पर दंडात्मक कर भरें;
- उसे छुपाए रहें, नए नोटों में नहीं बदलवाएं और इस प्रकार शत प्रतिशत दर पर कर चुकाएं; और
- अपने कालेधन को 'परिवर्तन लागतें' उठाकर सफेद कर लें।

3.29 दृश्यांत रूपी साक्ष्य यही सुझाते हैं कि तीसरी विधि, कालेधन की 'धुलाई' द्वारा उसके 'श्वेतीकरण' का कार्य खूब किया गया। एक ऐसा तरीका तो आय की प्राप्ति के समय की परिवर्तन रहा, ऐसी रसीदें गढ़ी गई जिनसे लगे कि यह तो अभी-अभी 8 नवंबर 2016 से तुरंत पहले कमाई गई राशियां है। ऐसे तकनीकें कालेधन को बैंकों में जमा करा सकती थी, किन्तु कर चुका कर। इस प्रकार कालाधन कर पाश में आ जाता।

3.30 अन्य तकनीकों में कालेधन के स्वामियों को अपना धन सफेद करने के लिए बिचौलियों को कुछ न कुछ अंश भाग देना पड़ता था। उदाहरण: कुछ व्यक्तियों ने अन्य लोगों को बैंक की लाइनों में खड़े होकर नोट बदलवाने या जमा कराने के लिए पैसे दिए थे। यह भी बड़े पैमाने पर देखा गया कि जनधन खातों में नवंबर 8 से दिसंबर 30 की 50 दिनों अवधि में बहुत "भारी" राशियां जमा कराई गई। हां यह कुल राशियां अपेक्षाकृत कम ही रही, केवल रू. 42000 करोड़।[8]

3.31 इन सभी मामलों में कालेधन वालों को एक बड़ा घाटा अवश्य उठाना पड़ा, चाहे उन्होंने कर भरा या नकद बदलने का कमीशन चुकाया। यही नहीं, अभी उन बैंक खातों को खंगाला जा रहा है, जिनमें संदेहास्पद लेनदेन हुए हैं, अर्थात जिन्होंने बैंको में जमा कराने के माध्यम से धन की धुलाई की है, उन पर अभी तक चुकाई गई फीस और करों के अतिरिक्त दंडात्मक कर एवं अभियोजन की तलवार लटक रही है।

3.32 हां, कुछ पुराने नोट वापस नहीं हुए। दिसंबर 30, 2016 के एक अधयादेश ने ऐसे नोटों को अवैध घोषित कर दिया है। इनका अब किसी लेने में प्रयोग संभव नहीं रहा। जब नियत रियायत अवधि समाप्त होगी तो ये नोट किसी भी प्रकार से नए नोटों में परिवर्तनीय नहीं रहेंगे। ऐसा होने पर उक्त नोटों से जुड़ी रिजर्व बैंक की देयताएं भी समाप्त हो जाएंगी। इस तरह से विमुद्रीकरण ने कालेधन स्वामियों की धन राशियों का सार्वजनिक क्षेत्र को अंतरण कर दिया है। अब इनका प्रयोग अनेक उत्पादक कार्यों में हो सकेगा : सरकारी ऋण चुकाने में, बैंकों के पुन:पूंजीकरण में, या निजी क्षेत्र को पुन:वितरण में भी।

3.33 अधिक सटीक रूप से कहें तो नहीं लौटाए गए पुराने नोट गैर कानूनी धनस्वामियों से छीन कर लगाए जाने का कोई विश्वस्त अनुमान नहीं दे सकते। इनके साथ प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना के अंतर्गत घोषित आय पर चुकाए गए करों तथा धन की धुलाई करने वाले मध्यस्थों को चुकाए गए शुल्क कमीशन आदि का जोड़ भी किया जाना चाहिए।

(ख) कर अनुपालन

3.34 विमुद्रीकरण को सरकार द्वारा व्यवस्था परिवर्तन भी कहा जा सकता है। यह कालेधन पर आघात के सरकारी निश्चय का प्रतीक एवं प्रमाण है, यह दिखाता है कि अब करवंचना को जीवन की एक जरूरी विवशता के रूप में स्वीकार नहीं किया जाएगा। इस कदम को जनता का व्यापक समर्थन मिला है। अत: स्पष्ट है कि समाज का जनसामान्य भी कालेधन को सहन करने के लिए तैयार नहीं है।

3.35 इन दो अनुशस्तियों, वित्तीय दंड और सामाजिक भर्त्सना, के बहुत सशक्त एवं दीर्घकालिक प्रभाव हो सकते हैं। विशेषकर उस समय जब इन्हें अनुच्छेद X में वर्णित संप्रेरणा संगत कदमों का समर्थन भी मिल जाए। उस स्थिति में कर वंचक यही निर्णय करना बेहतर समझ सकते हैं कि एक सामान्य दर पर कर भरना अचानक सबकुछ खो देने से कहीं अच्छा होगा। इससे भ्रष्टाचार और कर अनुपालन पर स्थायी प्रभाव पड़ेंगे।

3.36 विमुद्रीकरण एक अन्य प्रकार से भी कर प्रशासन की सहायता कर सकता है। यह लेनदेन को नकद तंत्र से औपचारिक भुगतान तंत्र की ओर उन्मुख कर सकता है। बड़े नोट बंद होने पर परिवार और फर्में अब नकदी

[8] यह आंकड़ा नवंबर 10 से दिसंबर 23, 2016 के बीच है है। देखें http://www.hindustantimes.com/india-news/jan-dhan-accounts-deposits-double-to-rs-87-000-crore-i-t-dissects-data/stor y-Nf4iM7X8bynNglVo8okVaN.html

को छोड़कर इलेक्ट्रोनिक भुगतान तकनीकों का अधिक प्रयोग करने लगे हैं।

3.37 परिणाम स्वरूप कर जीडीपी अनुपात और औपचारिक अर्थव्यवस्था में स्थायी वृद्धि हो सकती है।

(ग) अनौपचारिक बचतों पर कर

3.38 कर वंचना के अतिरिक्त भी विमुद्रीकरण के बहुत दूरगामी परिणाम हो सकते हैं। उदाहरण के लिए यह बचतों को औपचारिक वित्त व्यवस्था में प्रवाहित करेगा। नि:संदेह, बैंकों में जमा कराई गई अधिकांश नकदी जैसे ही नोटों की आपूर्ति में सुधार होने पर आहरण की सीमा बढ़ाई जाएगी, निकाल ली जाएगी। किन्तु इन जमाओं का कुछ अंश अवश्य बैंक खातों में ही जमा रह जाएगा। यह अंश बैंकों द्वारा अधिक साख मुद्रा (उधार) प्रदान करने का आधार बनेगा, वह भी अपेक्षाकृत कम ब्याज दर पर।

3.39 दीर्घकालिक रूप से, यदि विमुद्रीकरण सफल रहा तो यह अर्थव्यवस्था में नकद जीडीपी और नकद जमा अनुपातों को कम कर देगा। इससे वित्तीय बचतों की वृद्धि होगी और उसका दीर्घकालिक संवृद्धि पर एक सकारात्मक प्रभाव होगा।

V. संभावित दीर्घकालिक हितलाभ के प्रारंभिक साक्ष्य

3.40 दीर्घकालिक परिवर्तनों के दिशा एवं परिमाण का सटीक निर्धारण करने के लिए तो अभी, परिभाषा के अनुसार ही, पर्याप्त समय व्यतीत नहीं हुआ है। गैर कानूनी लेनदेन, कालेधन और वित्तीय बचतों पर इस विमुद्रीकरण का सही प्रभाव जानने में तो कई वर्ष लग जाएंगे। फिर भी कुछ संकेत उभर रहे हैं जो परिवर्तन के सूचक हैं।

(क) डिजिटलाइजेशन

3.41 विमुद्रीकरण का एक मध्यकालिक उद्देश्य नकदहीन या नकदक्षीण अर्थव्यवस्था की रचना कर अधिक बचतों को औपचारिक वित्त व्यवस्था में प्रवाहित करना और (इस प्रकार) कर अनुपालन के स्तर को सुधारना था। अभी तो भारत इस उद्देश्य की संपूर्ति से बहुत दूर है। वटाल समिति ने अभी अनुमान लगाया है कि उपभोक्ता वर्ग द्वारा किए जा रहे 78 प्रतिशत भुगतान तो नकद राशियों में होते हैं।[9] प्राईस वाटर हाउस कूपर्स की 2015 की रिपोर्ट ने भी कहा था कि भारत में उपभोक्ताओं के लेनदेन में अन्य देशों की तुलना में नकदी की भारी प्रबलता है। यह मूल्यानुसार 68 प्रतिशत है तो संख्यानुसार 98 प्रतिशत (देखें रेखाचित्र-7)। इस स्थिति के कई कारण है। नकदी के कई फायदे होते हैं : यह सुविधाजनक है, प्रत्येक स्थान पर स्वीकार्य है और इसका प्रयोग भले ही समाज के लिए लागतहीन नहीं हो किन्तु जन सामान्य के लिए तो इसकी लागत शून्य ही होती है। नकद लेनदेन में किसी का नाम नहीं आता, गोपनीयता बनी रहती है। जब तक यह लेनदेन गैरकानूनी या करवंचना के ध्येय से नहीं हो, ये दोनों ही बातें सद्लक्षण होती है।

रेखाचित्र 7 : उपभोक्ताओं द्वारा नकद लेनदेन (प्रतिशत, 2015)

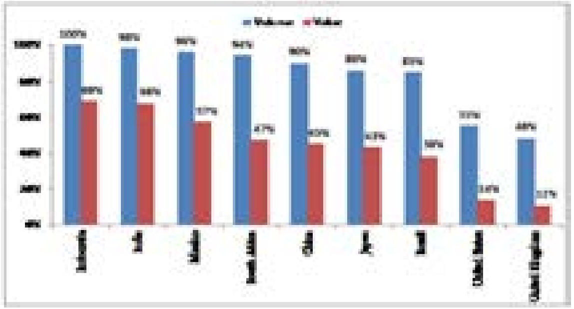

स्रोत : **प्राईस वाटरहाऊस कूपर्स, 2015**

3.42 इसके विपरीत डिजिटल लेनदेन में कई बाधाएं उपस्थित रहती है। इनके लिए विशेष उपकरणों की आवश्यकता होती है। उपभोक्ता को सैलफोन तो विक्रेता को विक्रय-बिन्दु मशीन चाहिए। ये दोनों उपकरण तभी काम करेंगे जब इंटरनेट से संपर्क हो। ये भुगतान विधि लागत भरी भी है, क्योंकि ई-भुगतान फर्मों को अपनी लागतें पूरी करने के लिए भुगतान सेवा ग्राहकों-विक्रेताओं या दोनों पर भी शुल्क लगाने पड़ते हैं। हां, कुछ निर्विवाद सत्य इन बाधाओं की क्षतिपूर्ति भी कर देते हैं। डिजिटल लेनदेन जनता को आधुनिक "तार संपर्क" युग से जोड़ देते है। वह जनता को औपचारिक वित्ततंत्र से जोड़कर सक्रिय वित्तीय बचत संकलन को बढ़ावा भी देता है। इससे कर वंचना कम होती है और कर-अनुपालक एवं कर वंचक फर्मों और व्यक्तियों के बीच की खाई कम हो जाती है।

---

9 http://www.finmin.nic.in/report/watal_report271216.pdf

3.43 डिजिटलाइजेशन का मोटेतौर पर समाज के तीन वर्गों पर प्रभाव होगा : गरीबजन, जो अभी तक पूरी तरह डिजिटल अर्थतंत्र से असंबंधित है; कम समृद्ध, जो जनधन खाता और RuPay कार्डो के माध्यम से डिजिटल अर्थतंत्र से जुड़ते जा रहे हैं; और धनी वर्ग जो पहले से ही अपने क्रेडिट-डेबिट कार्डो के माध्यम से पूरी तरह डिजिटल तंत्र से संबंधित है। इन तीन वर्गों के आकार की ओर संकेत करने वाला एक सरल सा सूचक सैलफोन का स्वामित्व है। देश में 350 मिलियन व्यक्ति सैलफोन से रहित है; 350 मिलियन के पास सामान्य "फीचर" फोन हैं; तथा 250 मिलियन के पास स्मार्ट फोन हैं।

3.44 विमुद्रीकरण के बाद से सरकार ने जनता को डिजिटल अर्थतंत्र की ओर उन्मुख करने के लिए कई सुविधाएं और प्रोत्साहन दिए है। इनमें शामिल हैं :

- भीम – 'भारत इंटरफेस फॉर मनी' नामक स्मार्टफोन ऐप। यह नवीन एकीकृत भुगतान इंटरफेस (UPI) पर आधारित है और विभिन्न डिजिटल लेनदेन प्लेटफॉर्मों के बीच संपर्क साधने में समर्थ है। जनवरी 10 तक 10 मिलियन प्रयोक्ता इसे अपने सेलफोन में डाउनलोड कर चुके थे। एक मिलियन से अधिक भुगतान/लेनदेन भी इसके माध्यम से हो चुके थे। अब 250 मिलियन स्मार्टफोन स्वामी तो बड़ी सरलता से तुरंत भुगतान कर सकते हैं।[10]
- भीम यूएसएसडी 2.0, वह उत्पाद है जो 'फीचर फोन' पर भी UPI का लाभ संभव बनाता है। इसके माध्यम से अब 350 मिलियन "फीचर फोन" प्रयोक्ताओं को भी यह क्षमता प्रदान हो चुकी है।
- 'आधार विक्रेता भुगतान' व्यवस्था का प्रारंभ कर शेष 350 मिलियन फोन रहित उपभोक्ता भी अब डिजिटल भुगतान कर सकते हैं। अब कोई भी बैंक खाताधारी अपने आधार नंबर का प्रयोग कर अपने अंगूठे के निशान के सत्यापन के माध्यम से विक्रेता को भुगतान कर सकता है। आधार भुगतान को शीघ्र ही भीम से जोड़कर एक उपयुक्त प्रकार के विक्रय-बिन्दु उपकरण शीघ्र ही बाजार में लाने का कार्य चल रहा है।
- डिजिटल एवं UPI आधारित भुगतानों की विक्रेता से उगाही जा रही फीस में कटौतियां हो रही हैं। 'भुगतान वैले' के प्रयोग पर लगी सीमाएं भी उदार की जा रही हैं। डिजिटल लेनदेन को बढ़ावा देने के लिए करों में भी कुछ छूट दी जा रही है।
- शुल्क कटौती के माध्यम से विक्रय-बिन्दु उपकरणों का प्रयोग वर्तमान 1.5 मिलियन से बढ़ाने की ओर कदम उठाए जा रहे हैं।

रेखाचित्र 7 : उपभोक्ताओं द्वारा नकद लेनदेन (प्रतिशत, 2015)

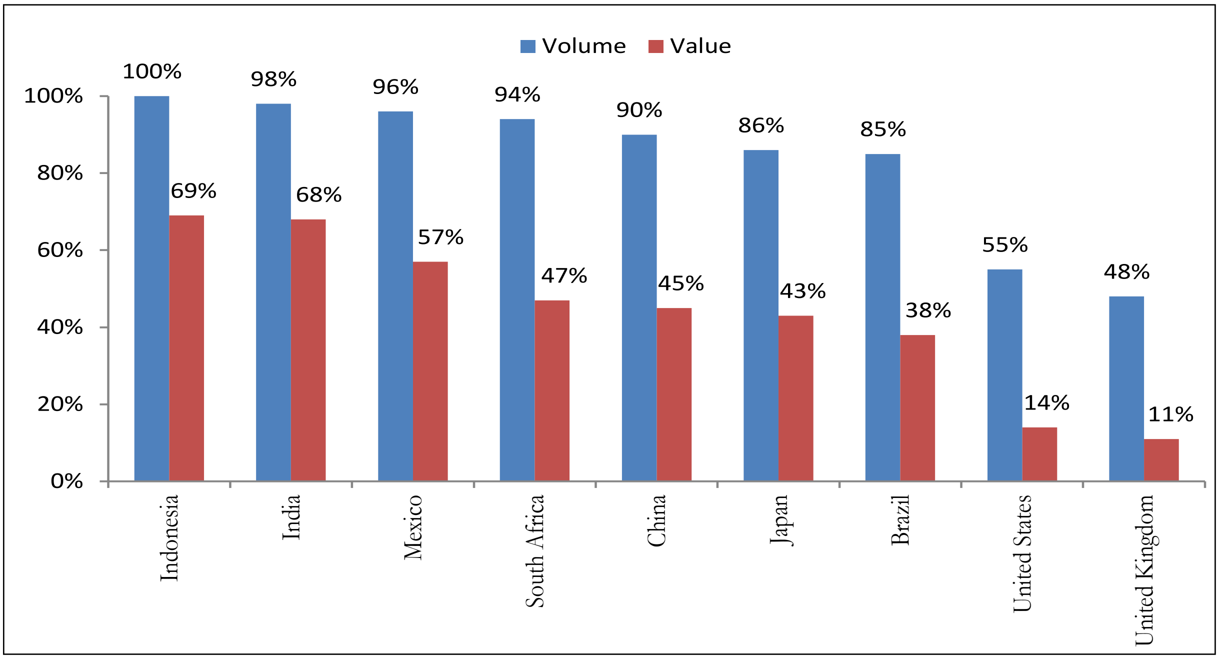

[10] इस एप ने विक्रेताओं के लिए मानक विभिन्न प्लेटफॉर्मों पर कार्यक्षम UPI-IQR का ही प्रयोग किया है।

3.45 अभी RuPay और भुगतान बटुआ सुविधाएं डिजिटल लेनदेन के बहुत ही संक्षिप्त भाग की समानता कर पा रही है। कुल वित्तीय लेनदेन की अपेक्षा भी इनका परिमाण बहुत ही कम है। उदाहरण के लिए दिसंबर का रिजर्व बैंक का भुगतान सर्वेक्षण बता रहा है कि डिजिटल बटुओं से 95 बिलियन रूपयों का भुगतान हुआ, और UPI से मात्र 7 बिलियन का, जबकि डेबिट कार्डो से (RuPay और ATM को छोड़कर) 314 बिलियन रूपयों और क्रेडिट कार्डों से 270 बिलियन रूपयों के भुगतान हुए हैं। किन्तु इन नई सुविधाओं का प्रयोग निरंतर वृद्धिशील है।

3.46 आधार आधारित भुगतान व्यवस्था (AEPS) द्वारा लेनदेनों से हम अभी तक डिजिटल तंत्र से बाहर रहे समुदायों पर प्रभाव का आकलन कर सकते हैं। हमने पाया है कि AEPs लेनदेनों में नवंबर 8, 2016 से पहले भी वृद्धि का क्रम चल रहा था, परन्तु उस तिथि के बाद इस वृद्धि में और तेजी आई है (रेखाचित्र 8'क')।

3.47 डिजिटल संपर्क के मध्यम वर्ग पर प्रभाव की झलक RuPay लेनदेनों से मिल जाती है। राष्ट्रीय भुगतान निगम के आंकड़े बता रहे हैं कि विक्रय-बिन्दुओं पर लेनदेन में रू. 13000 करोड़ तथा ई-कॉमर्स में रू. 2000 करोड़ की वृद्धि हुई है। यह 300-400 प्रतिशत की वृद्धि रेखाचित्र 8ख में अंकित है।

3.48 क्रेडिट कार्ड/डेबिट कार्ड लेनदेन डिजिटल तंत्र से जुड़े समृद्ध वर्ग के विषय में जानकारी दे रहे हैं (RuPay तथा ATM निकासी पर तो नकदी के अभाव का प्रभाव पड़ा था, अतः उन लेनदेनों को छोड़कर ही हम यहा आंकलन कर रहे हैं (रेखाचित्र 8ग))। नवंबर 8, 2016 के बाद इनमें 21 प्रतिशत की तीखी वृद्धि हुई है। हां यह देखना है कि क्या पुनः मुद्रीकरण के बाद भी यह प्रवृत्ति चलती रहेगी। UPI लेनदेनों में भी भारी वृद्धि दिखाई दे रही है, किन्तु उसका प्रारंभिक स्तर बहुत ही नगण्य प्रायः था।

3.49 जैसे-जैसे लोगों ने इन ई-भुगतान विधियों का प्रयोग करना आरंभ किया है, उन्हे इलेक्ट्रोनिक विधि से वित्तीय कार्य करने की सुविधा भी समझ आने लगी है। उन्हें अब पता चल रहा है कि इस प्रकार भुगतान की सुविधा तो बहुत से स्थानों पर सफलभ है। विमुद्रीकरण इस तंत्र को और विकसित कर रहा है। जैसे-जैसे कोई पहल करने वाला व्यक्ति इस में पारंगत होता है, उसके अनुकरण से और अनेक व्यक्ति इस तंत्र से जुड़ जाते हैं। अधिक परिवारों की भागीदारी और ज्यादा फर्मों को इससे जुड़ने को प्रोत्साहित कर रही है। किन्तु फिर भी, ई-भुगतान तंत्र के सुरक्षा पक्षों को और सुदृढ़ करना जरूरी है। तभी इनमें और विश्वास जागृत होगा।

(ख) भवन संपदा

3.50 भवन-संपदा क्षेत्रक पर तो विमुद्रीकरण का प्रभाव विशेष रूप से अधिक गहरा होने की अपेक्षा

रेखाचित्र 8क : डिजिटल तंत्र से बाहर रहे समुदाय द्वारा डिजिटल भुगतान (करोड़ रूपए)

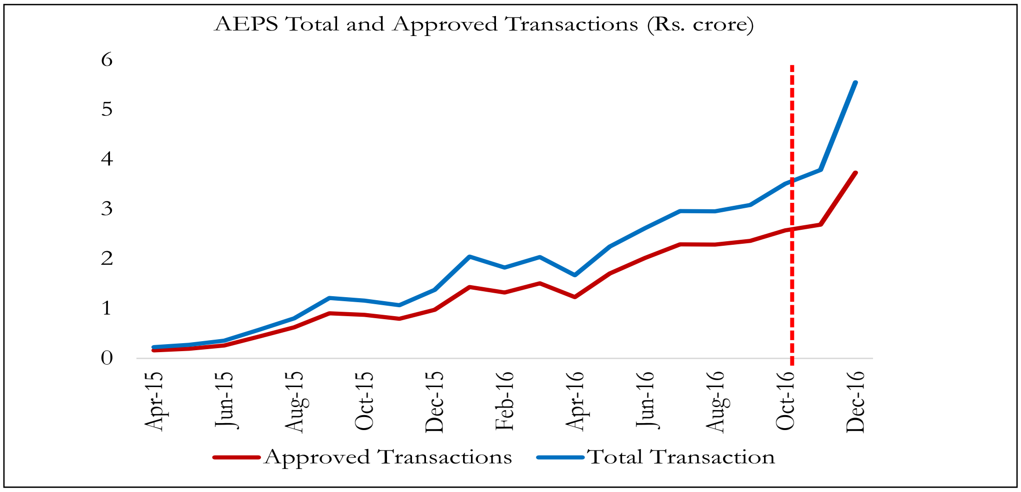

स्रोत : **NPCI**

नोट : आधार आधारित भुगतान व्यवस्था

रही है। अतीत में अधिकांश कालेधन का सृजन (और उसकी खपत भी) संपत्ति के लेनदेन में ही कर वंचना के ध्येय से होता रहा है। जैसे कालेधन में कमी होगी, और वित्तीय लेनदेन इलैक्ट्रोनिक विधि से होने लगेगा, यह कर वंचना भी नियंत्रित हो जाएगी। अभी यह कहना तो जल्दबाजी होगी कि यह प्रभाव कितना स्थायी रहेगा, हमारा रेखाचित्र-10 यही दर्शा रहा है कि 8 बड़े नगरों में भवन संपदा का भारित औसत सूचक, जो पहले से ही ह्रासमान था, 8 नवंबर के बाद और तेजी से कम हुआ है। भवन संपदा कीमतों में एक संतुलनकारी गिरावट आवश्यक है, तभी मध्यमवर्ग को (उचित दाम पर) अपने घर का सपना पूरा करने का अवसर मिल पाएगा। इससे अन्ततः किराए भी कम होंगे और अभी तक बाधित श्रम की गतिशीलता में भी सुधार होगा।

VI. अल्पकालीन प्रभाव

3.51 दीर्घकालिक सकारात्मक प्रभावों की बहुत संभावनाएं अपने स्थान पर हैं, किन्तु विमुद्रीकरण की कुछ अल्पकालिक लागतें तो समाज को सहनी ही पड़ेंगी। उन लागतों के स्तर का अनुमान लगा पाना भी अभी तो कठिन ही है, क्योंकि विभिन्न क्षेत्रें से जानकारी अभी आनी प्रारंभ ही हुई है। दूसरे अर्थव्यवस्था का आकार इतना विशाल एवं विविधतापूर्ण है कि केवल कुछ सूचकों के आधार पर समस्त अर्थव्यवस्था के विषय में किसी निष्कर्ष का निष्पादन एक बहुत ही जोखिम भरा कार्य सिर्फ होगा। वैसे भी विमुद्रीकरण एक इतना बड़ा संरचनात्मक संक्षोम है कि पुराने व्यवहार प्राचल तो भावी व्यवहार के बहुत अपूर्ण सूचक बनकर यह जाएंगे। फिर

रेखाचित्र 8ख : दैनिक डिजिटल लेनदेन (करोड़ रूपए) : कम समृद्ध उपभोक्ता वर्ग

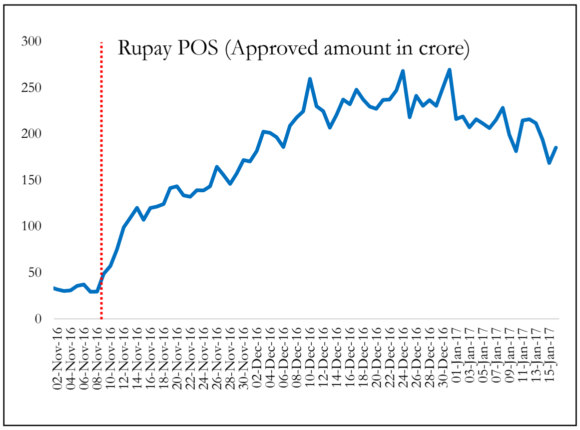

स्रोत : NPCI

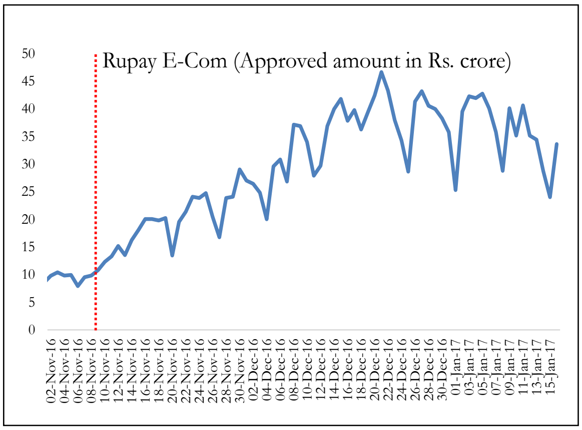

स्रोत : NPCI

रेखाचित्र 8ग : मासिक डिजिटल लेनदेन समृद्ध वर्ग

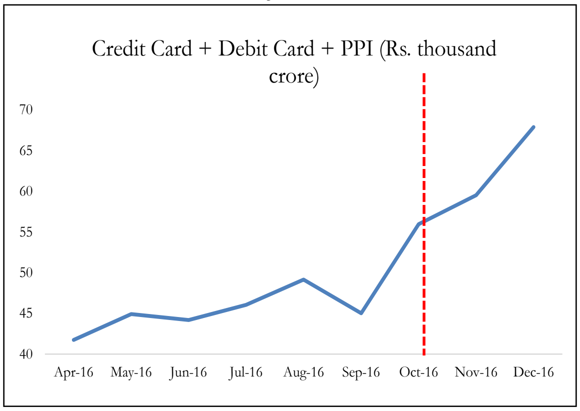

स्रोत : NPCI

नोट : PPI – **पूर्व भुगतान उपस्कार**

डेबिट कार्ड लेनदेन से ATM **और** RuPay **लेनदेन घटा दिए गए हैं।**

रेखाचित्र 8घ : दैनिक डिजिटल लेनदेन UPI द्वारा

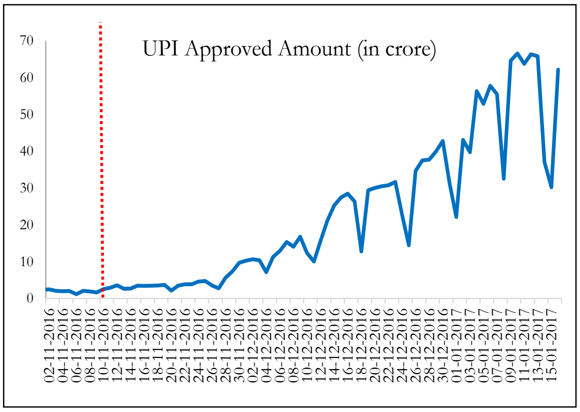

स्रोत : NPCI

बॉक्स-1 : बैंकों को अंतप्लेटफॉर्म कार्य बाधित करने से रोकना

डिजिटलाइजेशन की सफलता बहुत सीमा तक भुगतान तंत्र के विभिन्न प्लेटफॉर्मों के बावजूद बाधारहित चलने पर निर्भर करेगी। NPCI द्वारा बनाए गए UPI की प्रौद्योगिकी अंतर्प्लेटफार्म संचलन में सहायक होगी। किन्तु इसे सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक बैंक को अपने स्तर पर इस कार्य में सहयोग करना होगा। बाधाएं उत्पन्न करने से बचना होगा।

इस प्रकार की अंतर्प्लेफॉर्म कार्यशीलता की एक कसौटी तो एक ही बैंक द्वारा जारी एवं प्राप्ति के लेनदेन की असफलता दर की तुलना (यहां के On-US लेनदेन का उद्धरण लिया जा रहा है) उस दर से हो सकती है जो विभिन्न बैंकों के भुगतान देने एवं पाने वालों के बीच होती है (Off-US)। NPCI द्वारा प्रदान आंकड़ों का प्रयोग कर जनवरी 2017 के मध्य आधार आधारित भुगतानों की अस्वीकृति की दरें आंकलित की गई हैं (रेखाचित्र 9)।

रेखाचित्र 9 : आधार माध्यम से भुगतान अस्वीकार करने की दर

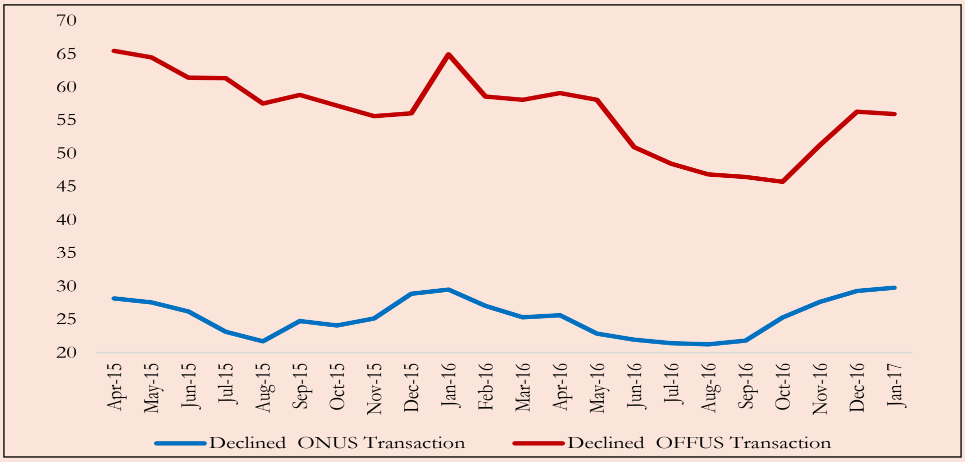

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक

हमारा यह रेखाचित्र है कि Off-US लेनदेनों की विफलता की दर (56 प्रतिशत) On-US की दर से दुगुनी थी।

एक संभावित व्याख्या यह हो सकती है : बड़े बैंक छोटे भुगतानकर्ता बैंकों ग्राहकों के भुगतान को अस्वीकार कर देते हैं और अपने ही ग्राहकों के भुगतान को तुरंत 'स्वीकार' दिखा देते हैं। इसके कुछ वैध कारण भी हो सकते हैं। किन्तु इन समस्याओं का समाधान करना ही होगा, क्योंकि छोटे भुगतान बैंक, दूरसंचार कंपनियां और छोटे बैंक ही तो वित्तीय समाहन की क्रांति का अग्रणि या हरावल दस्ता है। अत: उनका UPI तंत्र से जुड़ाव डिजिटलाईजेशन की प्रगति के लिए अत्यंत आवश्यक होगा। यह गरीब वर्ग को इस क्रांति से जोड़ने के लिए तो निर्णायक सिद्ध होगा।

भी, वर्तमान स्थिति का आंकलन करने के लिए एक विश्लेषक रूप रेखा का निर्माण तो अवश्य करना होगा।

3.52 हम पहले नकद प्रभाव का परिमाण निर्धारण करेंगे। वही जीडीपी पर प्रभाव के अनुमान का आधार बनेगा।

(क) नकदी/मुद्रा पर प्रभाव

3.53 जीडीपी पर प्रभाव का आंकलन करने से पूर्व विमुद्रीकरण के नकदी की आपूर्ति पर प्रभाव का निर्धारण कर लेना आवश्यक है। अभी तक हो चुके प्रभावों का अनुमान लगा पाना भी सरल नहीं है, क्योंकि नवंबर 9 से दिसंबर 30, 216 की अवधि में परिचलन में नकदी का प्रभावी स्तर बहुत सीमा तक इन बातों पर निर्भर था।

(क) अभी तक पुराने नोटों का प्रयोग लेनदेन के लिए चल रहा था;

(ख) नए 2000 रूपए के नोट भी 'तरल' मुद्रा थे, व्यक्ति एवं फर्म उनसे लेनदेन कर सकते थे;

(ग) नकदी, पुरानी या नई लौटाई नहीं जा रही थी।

3.54 परिचलन में प्रभावी नकद मुद्रा का आंकलन करने के लिए 'क' और 'ख' के विषय में कुछ और मान्यताएं करनी पड़ेंगी।

- उपर्युक्त 'क' के विषय में यह माना गया है कि 75 प्रतिशत पुराने 500 एवं 1000 रूपए के नोट उक्त अवधि में विधिग्राह्य मुद्रा का कार्य कर रहे थे।
- 'ख' के विषय में मान्यता है कि 2000 रूपए के नए नोटों में से केवल 75 प्रतिशत नवंबर में तरल

रेखाचित्र 10 : भवन संपदा कीमतें

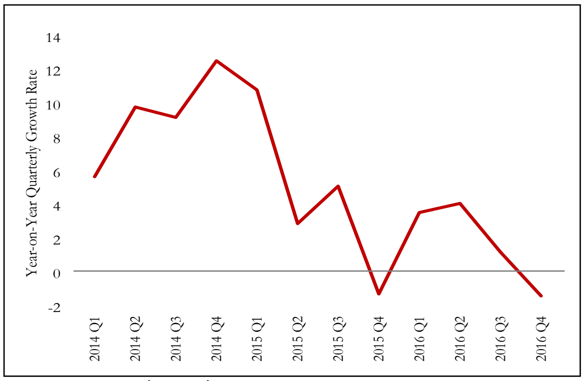

स्रोत : नाइट फ्रैंक और समीक्षा गणनाएं

रहे और दिसंबर में 85 प्रतिशत। जनवरी में जाकर ही (नए 500 रूपए के नोट आने के बाद) ये 100 प्रतिशत व्यवहार में प्रयोग होने लगे थे।[11]

3.55 दिसंबर अन्त के बाद से प्रक्षेपण करना अधिक सरल है, क्योंकि इसके बाद पुराने नोट सामान्य परिचलन में नहीं रहे थे। यहां तो नए नोटों और उनके मान की आपूर्ति की दर एक निर्णायक चर बन गया था (पुनःमुद्रीकरण)।

3.56 इन सब मान्यताओं और सफलभ जानकारियों के प्रयोग से हम नवंबर 8, 2016 से अप्रैल 2017 के अन्त की अवधि में मुद्रा के प्रभावी परिचलन का अनुमान लगा सकते हैं। ये अनुमान परम रूप में तथा संभावित विनिमय मांग के प्रतिशत अंश के रूप में आंकलित किए गए है। यह अंश आंकलन मौद्रिक जीडीपी और डिजिटलाइजेशन के स्तर में वृद्धि तथा नकद जमा अनुपात के संतुलन स्तर में कमी के आंकलन पर आधारित है। यहां भविष्य में नकदी की विनिमय संबंधी कार्यों के लिए मांग में कमी आने की आशा की जा रही है। यह विनिमय मांग अनुमान ही है। इसी कारण हम अपने केन्द्रीय अनुमानों को विश्वस्ति अन्तराल के साथ प्रस्तुत कर रहे हैं (रेखाचित्र 11'ख')।

3.57 हमारे ये प्रभावी मुद्रा परिचलन के आंकड़े उन संख्याओं से बहुत अलग है, जिनका बहुत प्रचार सुनाई दे रहा था।

3.58 प्रचारित आंकड़ों के अनुसार नवंबर 8, 2016 से मासांत तक नकदी में 62 प्रतिशत की कमी हो चुकी थी। दिसंबर 2016 के अन्त तक यह कमी संकुचित होकर 41 प्रतिशत रह गई थी। किन्तु इनके समतुल्य हमारे आंकड़े तो 25 प्रतिशत और 35 प्रतिशत ही है (देखें रेखाचित्र 11(क) और 11(ख))। दूसरे शब्दों में मुद्रा की प्रभावी आपूर्ति में कमी प्रचारित धारणा की अपेक्षा बहुत कम थी और विमुद्रीकरण के वास्तविक मौद्रिक शिखर की प्राप्ति (मनौवैज्ञानिक शिखर से भिन्न) तो नवंबर नहीं दिसंबर 2016 में हो पायी थी।

3.59 प्रभावी आपूर्ति के आंकड़े यह बता रहे हैं कि अब मुद्रा की कमी बड़ी तेजी से समाप्त हो रही है। दिसंबर, 2016 के अंत में प्रभावी मुद्रा कुल मांग के 65 प्रतिशत के समान थी, किन्तु फरवरी 2017 के अंत तक इसके विनिमय मांग के 86 प्रतिशत तक पहुँच जाने की आशा है।

3.60 इन अनुमानों से हम मुद्रा की विनिमय मांग से संबंधित दो प्रकार के मौद्रिक समंकों तक पहुँच जाते हैं जो हमें जीडीपी संवृद्धि पर पहुँचने में सहायक हैं। यह हैं परिचलन में नकदी और परिचलन में मुद्रा (नकद तथा मांग जमाओं का योग)। यह माना जा रहा है कि प्रत्येक मास में मांग जमाओं की वृद्धि नए नोटों की निकासी तथा ऋण भुगतान के समंजन बाद पुराने नोटों में जमा कराई गई राशियों के समान है। प्रभावी नकदी और मुद्रा का अनुमान वार्षिक आधार पर इस प्रकार किया गया है :

- वर्ष 2016-17 का उत्तरार्द्ध (औसत) (-)12.5 प्रतिशत नकद और +3.5 प्रतिशत (नकद + मांग जमाएं)
- 2016/17 औसत (+)1.2 प्रतिशत और (+)9.1 प्रतिशत

VII. जीडीपी पर प्रभाव

3.61 सबसे पहले तो विमुद्रीकरण के अल्पावधि संक्षोभ की कार्यविधि को समझ लेना जरूरी है। विमुद्रीकरण संभावी रूप से है :

- **एक सकल मांग संक्षोभ** : क्योंकि यह मुद्रा की आपूर्ति को घटाता है और निजी संपदा (विशेषकर अघोषित धन तथा भवन संपदा के स्वामियों की) को प्रभावित करता है;

[11] पुनः उपलब्धता के आधार पर आंकलन है कि 2000 के नए नोट नबंवर 2016 में 14 प्रतिशत, दिसंबर में 35 प्रतिशत, जनवरी में 47 प्रतिशत नकद परिचलन के समान रहे। मार्च 2017 के अंत में पहुंच कर इनका परिचलन घटकर 39 प्रतिशत रह गया।

- **एक सकल आपूर्ति संक्षोभ :** जहां तक आर्थिक कार्यों में नकदी एक आदान की तरह प्रयोग होती है (उदाहरण : कृषि उत्पादकों को श्रमिकों की मजदूरी चुकाने के लिए नकद चाहिए) और
- **एक अनिश्चितता रूपी संक्षोभ :** क्योंकि आर्थिककर्ता तरलता संक्षोभ के स्तर और अवधि को लेकर आश्वस्त नहीं होते, साथ ही उन्हें भविष्य में अपनाई जाने वाली नीतियों को लेकर भी संशय हो जाते हैं (उपभोक्ता अपने ऐच्छिक व्यय स्थगित करने लगते हैं तो फर्में अपनी निवेश योजनाओं पर पुनः विचार करने लगती है)।

3.62 विमुद्रीकरण के प्रभाव को लेकर तरह-तरह के सर्वेक्षणों और सुने सुनाए किस्सों पर आधारित आंकड़ों की भरमार है। किन्तु हमारी रूचि तो समष्टि स्तरीय समीक्षा में है और इसीलिए हम पांच बृहतर सूचकों पर ध्यान केंद्रित रख रहे हैं :

- रबी की फसल की बुआई
- उत्पादन एवं बिक्री के बड़े सूचक के रूप में अप्रत्यक्ष

रेखाचित्र 11क : प्रभावी करेंसी परिचलन (बाजार की धारणा)

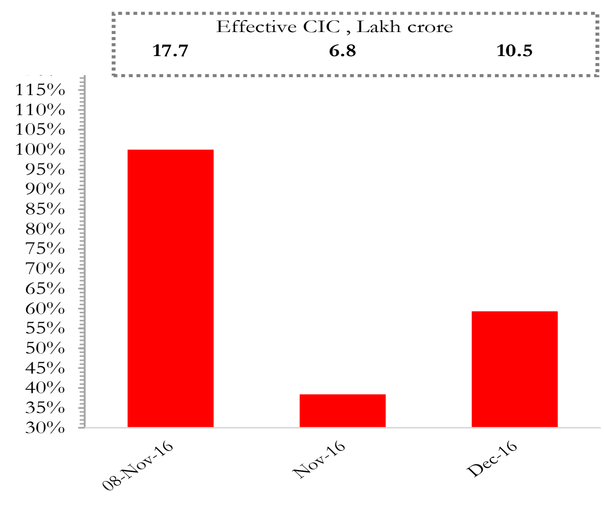

रेखाचित्र 11ख : परिचलन में प्रभावी नकद अनुमानित विनिमय मांग के प्रतिशत के रूप में*

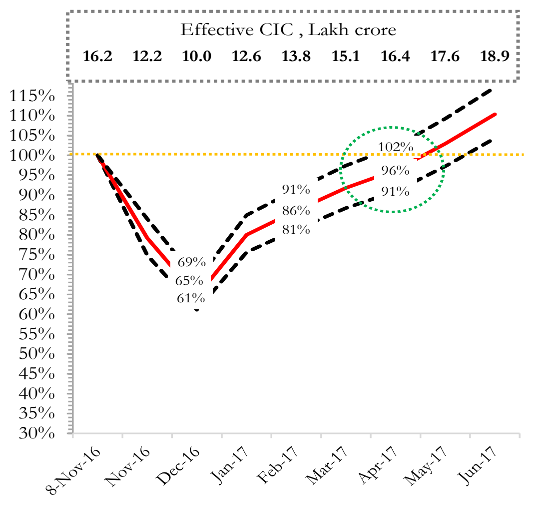

स्रोत : समीक्षा गणनाए

**यदि कहा न जाए तो मास के अंत में*

रेखाचित्र 12 : जनता के पास औसत नकदी तथा मांग जमाएं (प्रतिशत)

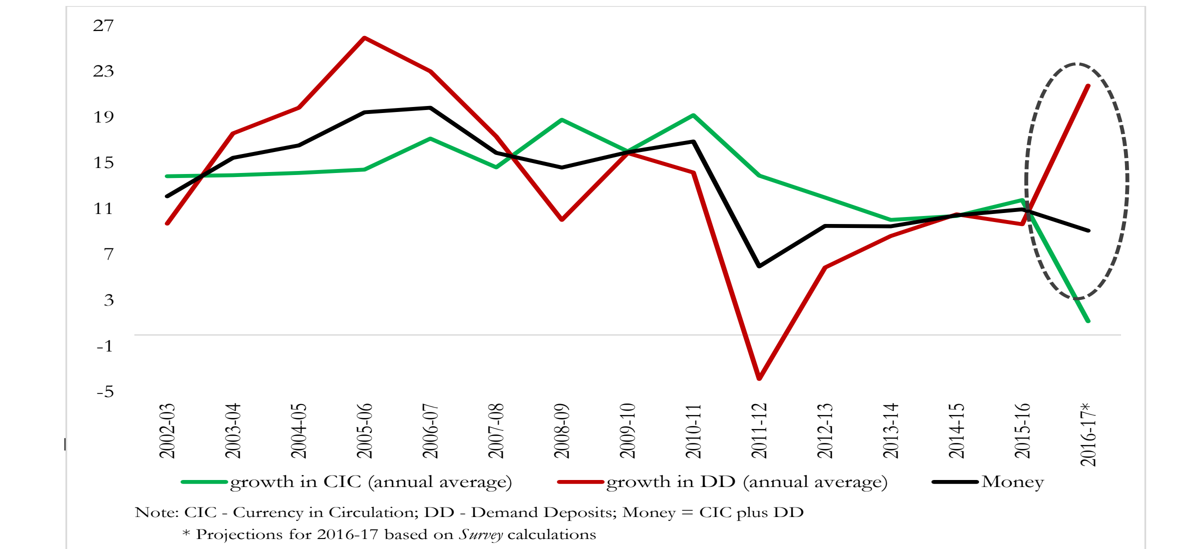

स्रोत : समीक्षा गणनाएं

कर राजस्व संकलन;

- वाहनों की बिक्री – यह उपभोक्ता के ऐच्छिक व्यय का अच्छा संकेत देती है। दुपहिया वाहनों की बिक्री कम समृद्ध वर्ग और ग्रामीण क्षेत्र की ऐच्छिक मांग की सूचक मानी जाती है।
- भवन संपदाओं की कीमतें; और
- वास्तविक साख वृद्धि।

3.63 आशंकाओं के विपरीत जनवरी 15, 2017 तक दो बड़ी फसलों, गेहूं और दालों (चना) की बुआई पिछले वर्ष से क्रमशः 7 तथा 10.7 प्रतिशत अधिक रही (रेखाचित्र 13)। किन्तु इससे उत्पादन में भी समतुल्य वृद्धि हो पाएगी? इसका उत्तर तो इस बात पर निर्भर रहेगा कि विमुद्रीकरण ने किस सीमा तक किसानों की उर्वरक, साख और श्रम जुटा पाने की क्षमता को दुष्प्रभावित किया है।

3.64 उच्च प्रायिकता सूचकों से एक मिला जुला परिदृश्य उभर रहा है (रेखाचित्र 13 से 16)। कृषि बीजाई, यात्रीकारों की बिक्री, और उत्पादन शुल्क के सकल संग्रह पर तो विमुद्रीकरण का कोई प्रभाव नहीं दिखाई पड़ रहा। दुपहियों की बिक्री में तीखी गिरावट दिखी है, पर साख के आंकड़ें तो विमुद्रीकरण से पहले ही कमजोर पड़ रहे थे, हां नवंबर 8 के बाद ये पहले से ही विद्यमान प्रवृत्तियां कुछ और बलवती हो गई हैं। वर्ष 2016-17 में प्रारंभ अन्य नीतियों के प्रभाव का समंजन करने के बाद अप्रत्यक्ष कर संकलन की राशियां रेखाचित्र 14 में 'ARM' द्वारा चिन्हित टूटी रेखाओं द्वारा दिखाई गई है। ये सकल आंकड़ों से कुछ कमजोर दिखाई दे रही है, किन्तु यहां भी वृद्धि निर्विवाद है। अतः इस निष्कर्ष तक पहुंच जाना उचित ही होगा कि वास्तविक जीडीपी और आर्थिक गतिविधियों के स्तर पर विमुद्रीकरण का कुछ नकारात्मक प्रभाव तो पड़ा है, किन्तु वह अस्थायी है। यहां प्रश्न उठता है, कितना और कहां तक? संक्षिप्त सा उत्तर तो यही है कि यह प्रभाव 0.25 और 0.50 प्रतिशत अंकों के बीच सीमित रहा है, जबकि आधार स्तर 7 प्रतिशत था। मध्यम अवधि में जीएसटी के क्रियान्वयन, विमुद्रीकरण की अनुशांगिक नीतियां अपनाए जाने तथा अन्य संरचनात्मक सुधारों से अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर 8-10 प्रतिशत तक पहुंच सकती है। और यही भारत की आवश्यकता भी है। हमारा अगला अनुच्छेद इसी बात की विस्तार से चर्चा कर रहा है।

(क) रूपरेखा

3.65 अगला कदम नकदी के अभाव के आर्थिक गतिविधियों पर प्रभाव का आंकलन है। इस कार्य की मानक विधि जाने पहचाने 'मुद्रा के परिमाण सिद्धांत' वाले समीकरण का प्रयोग ही है। इस समीकरण के अनुसार: MV=PY, जहां

M = मुद्रा की आपूर्ति

V = परिचलन वेग, मुद्रा के परिचलन की दर, (अर्थात अंतिम विक्रय के मान, GDP और रूपयों की संख्या का अनुपात)

रेखाचित्र 13 : रबी मौसम में गेहूं और चने की बुवाई (मिलियन हैक्टेयर में)

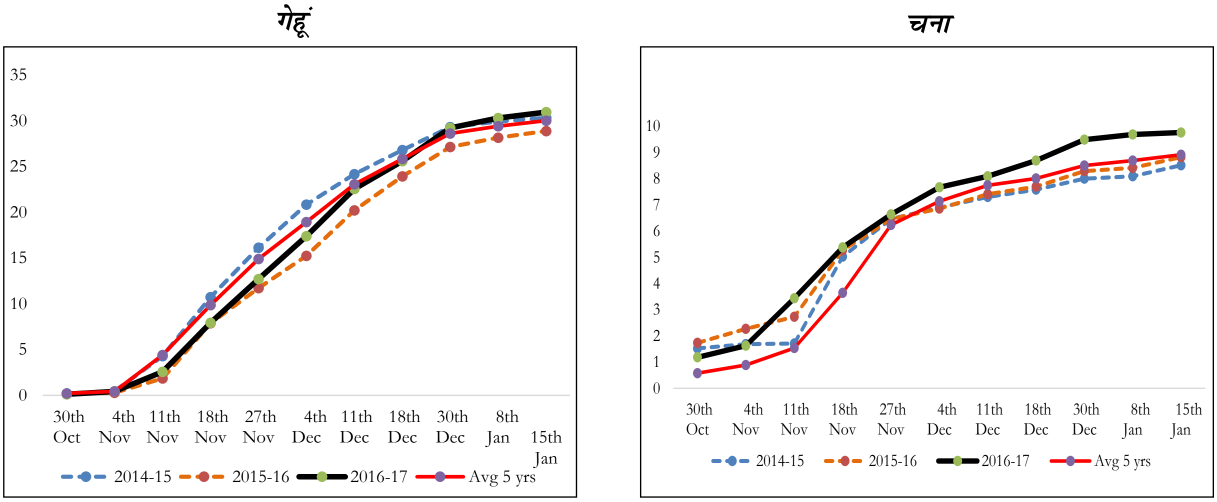

स्रोत : कृषि मंत्रालय

P = कीमत स्तर

Y= वास्तविक जीडीपी

3.66 सीधे शब्दों में यह समीकरण कहता है कि यदि मुद्रा की आपूर्ति घटा दी जाए तो बची हुई मुद्र के भंडार का अधिक गहनता से प्रयोग करना होगा अथवा फिर मौद्रिक जीडीपी की कमी को सहना होगा। मौद्रिक जीडीपी में इस कमी का कुछ अंश कीमतों में कमी का रूप भी ले सकता है। किन्तु, वास्तविक आर्थिक गतिविधियों के स्तर पर भी कुछ प्रभाव अवश्य होगा।

(ख) प्रतिमान का व्यवहारिक प्रयोग : अर्थव्यवस्था के नकद एवं गैर नकद अनुपातों का अनुमान लगाएं

रेखाचित्र 15 : मोटर वाहनों की बिक्री, (वर्षानुगत, प्रतिशत)

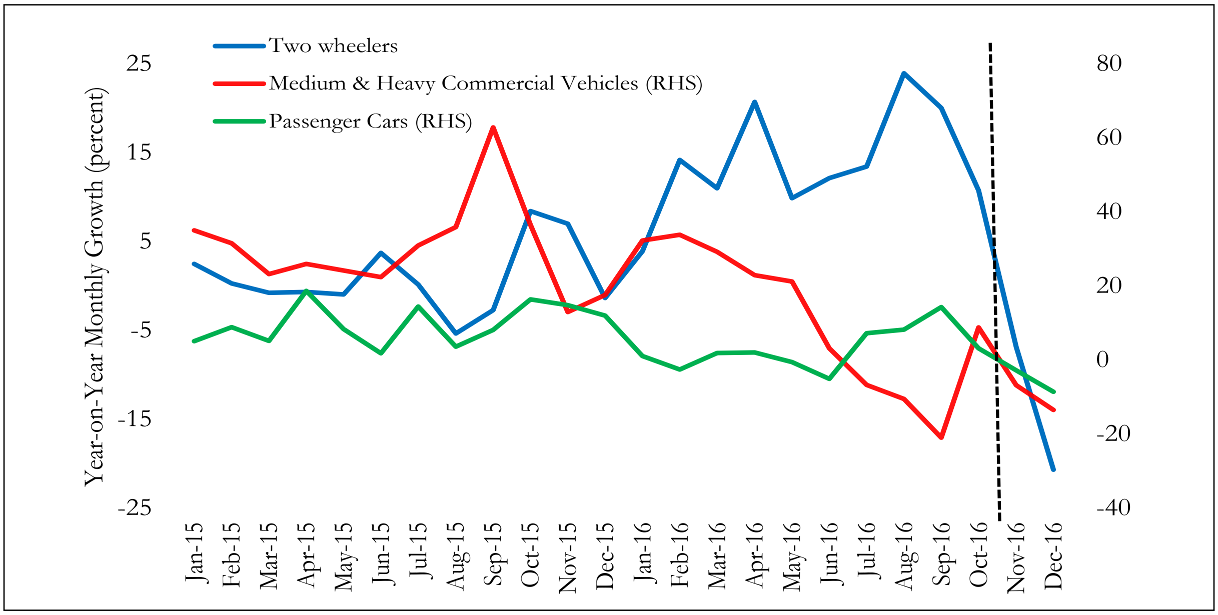

स्रोत : सोसाइटी ऑफ इंडियन ऑटोमोबाइल मैन्यूफैक्चरर्स।

***स्रोत:* राजस्व विभाग और सर्वेक्षण परिकलन**

रेखाचित्र 16 : भवनसंपदा कीमतें (वर्षानुगत त्रैमासिक प्रतिशत)[12]

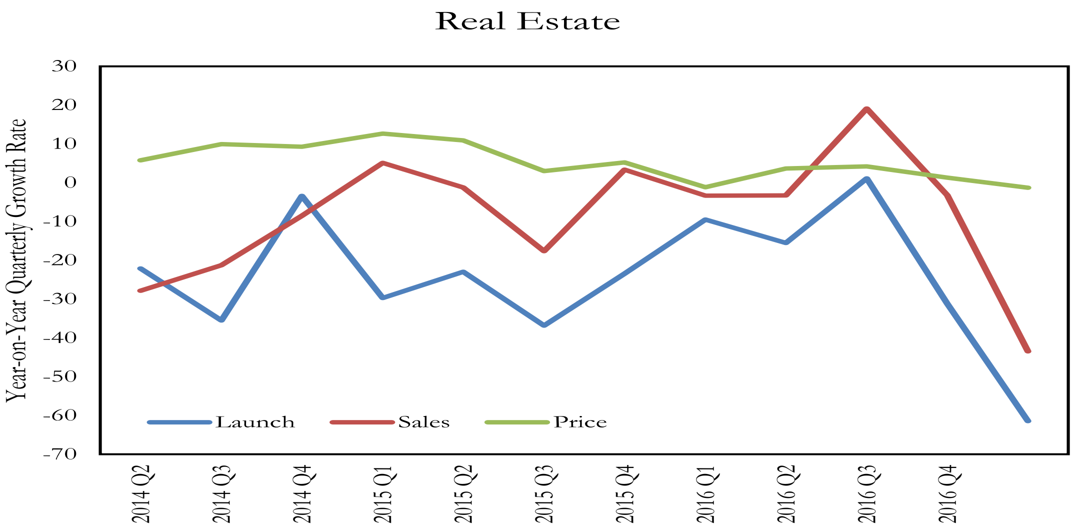

स्रोत : फ्रैंक नाइट आंकड़े एवं समीक्षा गणनाएं

12 फ्रैंक नाइट द्वारा संकलित भवन संपदा आंकड़े कैलेंडर वर्षानुसार होते हैं अर्थात Q4 का अर्थ है अक्टुबर से दिसंबर की तिमाही।

रेखाचित्र 17 : वास्तविक साख संवृद्धि (वर्षानुगत प्रतिशत)

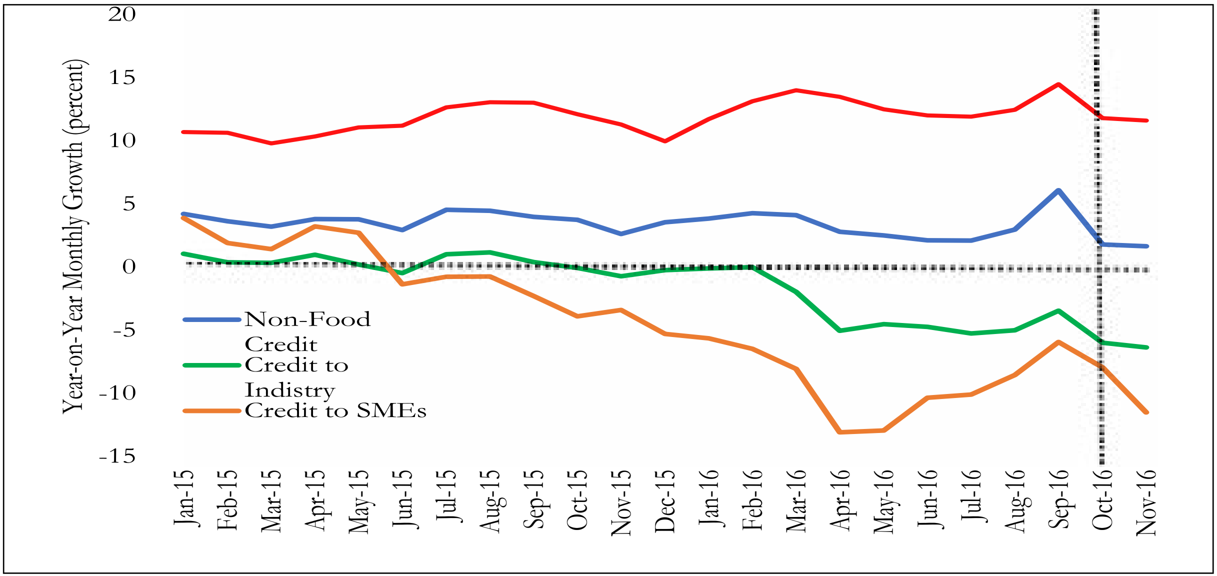

स्रोत: **आरबीआई**

नोट : **उपभोक्ता कीमत सूचक, नई श्रृंखला, 2012 कीमतों द्वारा अपस्फायित**

और यह मान्यता बना कर चले कि विमुद्रीकरण का अर्थव्यवस्था के नकदविहीन अंश पर कोई प्रभाव नहीं होगा।

3.67 इस समीकरण को व्यवहारिक स्वरूप प्रदान कर इसके आधार पर पूर्वाकलन करने से पूर्व दो संकल्पनात्मक मुद्दों का स्पष्टीकरण आवश्यक है। पहला प्रश्न तो मुद्रा की आपूर्ति की परिभाषा से जुड़ा है। सामान्यता अर्थशास्त्री आपूर्ति की व्यापक अवधारणा का प्रयोग करते हैं, उसमें नकद और बैंक जमाए सम्मिलित रहते हैं। जमाओं को नकदी का "निकट स्थानापन्न" माना जाता है। किन्तु नवंबर 8 के कदम का एक बड़ा आयाम तो नकद और जमा के बीच परिवर्तनीयता को बाधित करना था। नकद को बैंक में जमा करना आसान नहीं रहा तो बैंक खातों से नकद निकालने पर भी अनेक रूकावटें लगा दी गई थी। अत: नकद और बैंक जमाओं पर अलग-अलग विचार करना आवश्यक हो गया है।

3.68 इसी प्रकार औपचारिक एवं अनौपचारिक अर्थव्यवस्थाओं में भेद करना भी आवश्यक है। स्पष्टत: नकदी के अभाव का अनौपचारिक अर्थतंत्र पर प्रभाव अवश्य पड़ा होगा। यह अपने संचलन के लिए मुख्यत: नकदी पर निर्भर क्षेत्र अर्थव्यवस्था के आधो भाग के समान माना जाता है (सेन, 2016)। यदि उपभोक्ता की अपने भुगतान में नकदी प्रयोग की प्रवृत्तियों पर ध्यान दें तो यह अर्द्धांश का अनुमान बहुत निम्न भी सिद्ध हो सकता है, फिर तो अर्थव्यवस्था में उत्पादन की नकदी की सफलभता पर निर्भरता और अधिक हो सकती है।

3.69 यह भी इतना ही स्पष्ट है कि बैंक व्यवस्था पर निर्भर रहने वाले औपचारिक आर्थिक तंत्र पर विमुद्रीकरण का कोई प्रभाव नहीं हुआ होगा। वहां तो तरलता में और वृद्धि हो गई है। अत: दोनों क्षेत्रकों पर पृथक-पृथक विचार करना ही उपयुक्त होगा। यह मानकर चलना उचित है कि नकदी के अभाव का प्रभाव केवल अनौपचारिक क्षेत्रक पर पड़ा था, औपचारिक तंत्र इससे मुक्त प्राय: ही रहा।

3.70 हां यह कथन पूर्णत: सत्य नहीं होगा, क्योंकि द्वितीय चक्र के महत्वपूर्ण प्रभाव अवश्य रहते है। अनौपचारिक क्षेत्र में मंदी के कारण अपना रोजगार खो बैठे कर्मियों ने दुपहिया वाहनों जैसे औपचारिक क्षेत्रीय उत्पादों की अपनी खरीदारी एक बार तो रोक ही दी थी।[13] यह भी संभव है कि कुछ अनौपचारिक

[13] मुख्य बात तो यह है कि औपचारिक एवं अनौपचारिक क्षेत्र परस्पर अच्छी तरह गुंथे होते हैं। एक की समस्या दूसरे को अवश्य प्रभावित करती है। अनेक औपचारिक क्षेत्र की फर्में अनौपचारिक क्षेत्र के आपूर्तिकर्ताओं पर ही अपना व्यवसाय चलाने के लिए निर्भर रहते हैं।

क्षेत्र व्यापारी, किराने वाले आदि विक्रय बिन्दु उपकरण लगाकर औपचारिक बैंक व्यवस्था के साथ जुड़ गए हों। साथ ही अनौपचारिक क्षेत्र में अस्थाई रूप से ही सही कुछ उधार देना भी आरंभ हो गया। नियमित ग्राहकों को किराने वाले एवं अन्य छोटे दुकानदार यह कहने लगे थे कि आप कल परसों जब सुविधा हो, भुगतान कर दीजिए।

3.71 अप्रत्यक्ष मांग और डिजिटलाइजेशन के साख के प्रभाव हमें विपरीत दिशाओं में खींचते हैं। पहला नकदी के अभाव के प्रभाव को और गहरा कर देता है तो दूसरा उसे कुछ कम कर देता है। हमने दो परिदृश्यों की कल्पना की है और उनके लिए अर्थव्यवस्था की नकद गहनता तथा उसमें नवंबर 8 से मार्च 2017 के अंत तक होने वाले परिवर्तन विषयक पृथक-पृथक मान्यताएं बनाई हैं।

3.72 यह रूपरेखा अपने आप में मौद्रिक जीडीपी संवृद्धि के अनुमानों को वास्तविक एवं कीमत घटकों में विभाजित करने के विषय में अधिक कुछ नहीं बता पाती। किन्तु यदि विमुद्रीकरण मुख्यत: एक सकल मांग पक्षीय संक्षोभ है तो हमें कीमतों में कुछ कमी की अपेक्षा अवश्य होनी चाहिए। अत: हम कीमतों का मार्च, 2017 के अंत तक प्रेक्षण/पूर्वाकलन दोनों परिदृश्यों के अनुसार कर रहे हैं। एक वह जहां विमुद्रीकरण स्फीति को घटाएगा तथा दूसरा जहां स्फीति अप्रभावित रहेगी।

3.73 उपर्युक्त सभी चर्चाओं तथा अनिश्चतता के कारण हम एक स्पष्ट अनुमान नहीं दे पाते, हम ऐसी दो सीमाएं बताते है जिनके बीच कहीं वास्तविक अनुमान रहना चाहिए। मौद्रिक जीडीपी पर प्रभाव संवृद्धि दर में गिरावट के रूप में होगा। यह गिरावट 0.25 से 0.50 प्रतिशत अंक की हो सकती है (आधार अनुमान 7 प्रतिशत)। मध्यम अवधि में जीएसटी लागू होने, विमुद्रीकरण के अन्य अनुषांगिक कार्य संपादित होने और अन्य संरचनात्मक सुधार हो जाने के बाद अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर 8-10 प्रतिशत की सीमाओं में पहुँच जाएगी। इसी की भारत को जरूरत भी है। इन अनुमानों की व्याख्या कैसे करे और कैसे नहीं करें, ये बातें हम बॉक्स-2 में स्पष्ट कर रहे हैं।

3.74 अन्त में एक और महत्वपूर्ण बात स्पष्ट कर दें : जीडीपी संवृद्धि पर विमुद्रीकरण का दुष्प्रभाव बहुत ही अस्थायी होगा। एक बार नकदी की आपूर्ति पुन: पूर्ववत स्तर तक पहुँचने (यह भी मार्च 2017 के अन्त तक हो जाने की आशा है) पर अर्थव्यवस्था पुन: अपनी पुरानी रफ्तार पर पहुँच जाएगी। संभव है पुन: उछलकर अपने पुराने औसत को प्राप्त करने की ललक भी दिखाई दे जाए। अत: 2017-18 में वास्तविक जीडीपी संवृद्धि दर के 6¾-7½ प्रतिशत की सीमाओं में रहने का पूर्वानुमान बन रहा है।

3.75 अब बारी है विमुद्रीकरण के आर्थिक गतिविधियों पर प्रभावों के विषय में कुछ निष्कर्षात्मक टिप्पणियों की। यह तो स्पष्ट है कि वित्त वर्ष 2017 के उत्तरार्द्ध में दर्ज होने वाली जीडीपी संवृद्धि इन प्रभावों का न्यूनांकन ही करेगी। कारण यही है कि या तो सबसे अधिक प्रभावित अनौपचारिक क्षेत्र की जानकारी राष्ट्रीय आय लेखे में परिलच्छित ही नहीं होती या फिर उसके लिए भी औपचारिक क्षेत्र के निष्पादन सूचकों के आधार पर ही कुछ अनुमानित आंकड़े जोड़ लिए जाते है। उदाहरण के लिए अनौपचारिक क्षेत्र के उत्पादन का अनुमान भी मुख्यत: औपचारिक क्षेत्र के बड़े निकायों की जानकारी के आधार पर आंकलित औद्योगिक उत्पादन सूचक के अनुसार कर लिया जाता है। अत: उत्पादन, अर्थात आर्थिक गतिविधियों के आपूर्ति पक्ष पर प्रभाव का निश्चित रूप से न्यूनांकन होगा। हां, जहां तक अनौपचारिक क्षेत्र की निम्न आय के औपचारिक क्षेत्र के उत्पादन की मांग पर दुष्प्रभाव हो पाते हैं, उस सीमा तक यह प्रभाव अवश्य विश्लेषण में कुछ स्थान पा जाएगा। दुपहियां वाहनों की मांग में गिरावट इसी की ओर इंगित कर सकती है।

3.76 कुल मिलाकर, विमुद्रीकरण नकदी और मुद्रा के अन्य स्वरूपों के बीच प्रतिस्थापनीयता का एक अच्छा स्वभाविक प्रयोग अवश्य रहेगा। विमुद्रीकरण ने इन दोनों के बीच, आपूर्ति पक्ष पर एक बहुत बड़ी खाई पैदा कर दी है। यदि ये दोनों स्वरूप परस्पर प्रतिस्थापकीय हैं तो प्रभाव अपेक्षाकृत सीमित रहेगा। दूसरी ओर यदि नकद का प्रतिस्थापन नहीं हो सकता, तो यह प्रभाव बहुत बड़ा हो जाएगा।

(ग) सत्यापन का प्रयास : नकदी और मांग जमाएं संपूर्ण रूप से प्रतिस्थापक हैं बनाम नकदी एक बाध्यताकारी संरोध है।

3.77 यहां वर्ष के उत्तरार्द्ध के लिए संवृद्धि अनुमानों पर केंद्रित एक सत्यापन प्रयास किया गया है।[14] मुद्रा (नकद तथा मांग जमाएं) और नकदी के लिए निहित परिचलन वेग का आंकलन कर यह देखा गया है कि ऐतिहासिक अनुभवों की तुलना में इस अवधि में इनका व्यवहार कैसा रहा है। यह प्रयोग भी दो परिदृश्यों के लिए अलग-अलग किया गया है। पहले में मुद्रा का वेग आंकलित किया गया है (रेखाचित्र-18) यहां नकद और मांग जमाओं को संपूर्ण प्रतिस्थापक माना गया है। अत: नकदी में कमी का कोई प्रभाव नहीं होना चाहिए था, क्योंकि अन्य प्रकार की मुद्रा (बैंक जमाओं) में तो वृद्धि हो ही गई थी। यह एक पराकाष्ठ मान्यता है। प्रत्येक परिदृश्य के लिए निहित वेग का मान एतिहासिक प्रवृत्ति आधारित मान से कुछ अधिक ही पाया गया है।

3.78 दूसरा परिदृश्य (रेखाचित्र-19) में केवल नकदी का निहित वेग मापा गया है। यहां मान्यता है कि नोटबंदी की अवधि में नकदी की सफलभता सभी लेनदेनों में एक प्रभावी संरोध बन गई थी। अत: इस मान्यता के अधीन तो मापित निहित वेग ऐतिहासिक प्रवृत्ति से बहुत ही भिन्न होना चाहिए था।

3.79 किन्तु वास्तविकता तो कहीं इन दोनों पराकाष्ठापूर्ण मान्यताओं के आधार पर किए गए आंकलन के बीच में कहीं होगी। अत: इन अनुमानों के व्यवहार्य होने की संभाव्यता विमुद्रीकरण अवधि में नकद और गैर नकद (जमाओं) के बीच प्रतिस्थापनीयता पर निर्भर रहेगी। यह प्रतिस्थापनीयता जितनी अधिक होगी, संवृद्धि अनुमान उतने ही अधिक संभाव्य होंगे और प्रतिस्थापनीयता जितनी कम होगी जीडीपी पर उतना ही अधिक गंभीर नकारात्मक प्रभाव होगा।

(घ) आपूर्ति पक्षीय प्रभाव

3.80 ये अनुमान पूरी तरह से विमुद्रीकरण के तरलता पर प्रभाव पर आधारित हैं, इनमें धनसंपदा, सकल आपूर्ति

बॉक्स-2 : जीडीपी विमुद्रीकरण प्रभाव : संभावित अपव्याख्याओं का पूर्व स्पष्टीकरण

CSO और समीक्षा द्वारा जीडीपी संवृद्धि, विशेषकर विमुद्रीकरण के प्रभावों विषयक अनुमानों की कई प्रकार अपव्याख्याएं संभव है। इसीलिए इस प्रकार की आशंकाओं का ''पूर्व अनुमान'' लगाकर उनके विषय में स्पष्टीकरण करना अनिवार्य हो जाता है।

उदाहरण के लिए, कुछ टीकाकारों को इस वर्ष की वास्तविक जीडीपी संवृद्धि दर की पिछले वर्ष की दर (7.6 प्रतिशत) से तुलना करने कल ललक होगी। किन्तु ऐसा करना उपयुक्त नहीं होगा। इस वर्ष के निष्पादन पर विमुद्रीकरण के अतिरिक्त और भी अनेक कारकों के प्रभाव रहे हैं। एक तो अंतर्राष्ट्रीय तेल कीमतों की गिरावट बंद हो चुकी है। अब अर्थव्यवस्था को उस गिरावट का सहारा नहीं मिल पा रहा। अत: विमुद्रीकरण के बिना भी जीडीपी संवृद्धि दर पिछले वर्ष से कुछ भिन्न अवश्य रहती।

अत: तुलना का एक बेहतर आधार उस संवृद्धि दर से मिल सकता है, जो विमुद्रीकरण नहीं होने की अवस्था में हमारी जीडीपी प्राप्त कर जाती। यहां CSO द्वारा तैयार जीडीपी संवृद्धि का अग्रिम अनुमान (7.1 प्रतिशत) काम आ सकता है। यह समीक्षा के अपने अग्रिम अनुमान के निकट भी है।

इनसे भी कहीं बेहतर तो वास्तविक नहीं मौद्रिक जीडीपी संवृद्धि की तुलना होगी। आखिर विमुद्रीकरण एक मौद्रिक मांग पक्षीय संक्षोभ ही तो है। अत: इसके प्रभाव भी सबसे पहले मौद्रिक रूप से ही होने चाहिए। यही नहीं, जैसा कि 2015 के वर्ष मध्य आर्थिक विश्लेषण में स्पष्ट किया गया था, CPI तथा WPI के बीच पैदा हो गई विस्तृत खाई ने जीडीपी अपस्फायक का मापन ही कठिन बना दिया है। उसी अपस्फायक द्वारा हम मौद्रिक जीडीपी के आंकड़ों को वास्तविक जीडीपी में परिवर्तित करते रहे हैं। यह खाई अब शून्य के निकट पहुँच रही है। दिसंबर 2016 के आंकड़े यही बता रहे हैं, फिर भी विमुद्रीकरण के प्रभावों की एक बेहतर झलक मौद्रिक आंकड़ों में ही मिल पाएगी।

अत: विमुद्रीकरण के प्रभावों का सबसे सटीक आंकलन वास्तविक मौद्रिक जीडीपी संवृद्धि की तुलना समीक्षा द्वारा तैयार पूर्वानुमानों से करने पर हो पाएगा (वह पूर्वानुमान विमुद्रीकरण के बिना मौद्रिक जीडीपी की संवृद्धि को ही दर्शा रहा था)। CSO के अनुसार यह तुलनीय आंकड़ा 11.9 प्रतिशत था तो समीक्षा के अनुसार 11 प्रतिशत था।

अंत में, कुछ टीकाकारों को समीक्षा के वास्तविक जीडीपी संवृद्धि के अनुमानों की अन्य संस्थानों, विशेषकर विश्व बैंक, IMF आदि के अनुमानों से तुलना की ललक भी होगी। किन्तु उन संस्थानों ने 2016-17 का जो (विमुद्रीकरण पूर्व) पूर्वानुमान लगाया था वह CSO तथा समीक्षा के अग्रिम अनुमानों से कही उच्चतर था। अत: अधिक उपयुक्त तुलना तो पूर्वानुमानों के स्तरों की नहीं बल्कि उन पूर्वानुमानों में परिवर्तन की होनी चाहिए।

---

[14] एक अन्य संभावना इसी प्रयास का पूरे वर्ष के लिए करने की थी। किन्तु विमुद्रीकरण तो केवल उत्तरार्द्ध को प्रभावित करेगा और वैसे भी जुलाई-सितंबर की तिमाही में मौद्रिक मानों में असामान्य उतार-चढ़ाव दिखाई दिए थे। इसीलिए यह विश्लेषण नवंबर 2016 से मार्च 2017 की अवधि तक ही सीमित रखा गया है।

या अनिश्चितता का कोई योगदान नहीं है। यह अन्य प्रभाव तो परिमाणात्मक स्वरूप में पूर्वाकलित नहीं हो सकते, हां इनका कुछ गुणात्मक आंकलन अवश्य संभव होता है। संभव है कि वित्त वर्ष की तृतीय तिमाही में अनिश्चतता के कारण कुछ उपभोक्ताओं और फर्मों ने अपने क्रय संबंधी तथा निवेश निर्णय स्थगित कर दिए हों। किन्तु जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था का पुन:मुद्रीकरण होगा, परिस्थितियां सामान्य होगी, अनिश्चितता का निवारण हो जाएगा और वित्त वर्ष के अंत तक मांग को पुन: अपने पूर्ववर्ती स्तरों की ओर लौट आना चाहिए। इसी प्रकार, प्रारंभिक महीनों में एक संपदा संक्षोभ था, नकद संसाधन बैंकों में जमा करने पड़ गए थे (और वहां से उन्हें निकालना आसान नहीं था)। किन्तु जैसे-जैसे आहरण पर रोक में छूट मिली, इस प्रभाव का भी निवारण हो जाना चाहिए। हां, जिस सीमा तक उक्त धन का कुछ हिस्सा (सरकार सहित) अधिक व्यय प्रवृत्ति वाले वर्गों को अन्तरित हुआ होगा, उस सीमा तक मांग में अंतत: वृद्धि ही होगी।

3.81 यह अपेक्षाकृत लाभप्रद परिणाम तभी संभव होगा जब पुन:मुद्रीकरण तेजी से हो जाए (रेखाचित्र 11ख में दर्शाया था कि वित्तवर्ष के अन्त तक 90 प्रतिशत तक, मुद्रा की विनिमय मांग अवश्य पूरी होने लगेगी), निर्णायक नीतियां अपनाकर अनिश्चितता का निवारण किया जाए तथा अति उत्साही कर प्रशासकों पर अंकुश रखा जाए। तभी विमुद्रीकरण के प्रभावों का स्वरूप गैर-स्थायी बन पाएगा।

3.82 विमुद्रीकरण कुछ कृषि उत्पादों की आपूर्ति को भी प्रभावित कर सकता है। यहां दूध का संग्रह कम हुआ है, दक्षिण प्रांतों की अनावृष्टि का प्रभाव चीनी की आपूर्ति पर अवश्य होगा और आलू तथा प्याज की बुवाई-रोपाई भी कम हुई है। अत: अभाव और कीमत वृद्धि के पटल पर 2015-16 में जो हालत दालों के कारण हुई थी, अन्य पदार्थों के कारण वैसी स्थिति से 2017-18 में बचने के लिए सतर्कता आवश्यक होगी।

VIII. सरकार के पक्ष में पुन: वितरण

3.83 विमुद्रीकरण संसाधनों का पुन: वितरण भी करेगा। जहां तक कालेधन के स्वामी किसी अन्य को कतार में खड़े होकर अपना धन सफेद करने में सफल रहे हैं, उन्होंने भी कतार में लगने वालों को कुछ न कुछ 'कमीशन' दिया है। इस प्रकार उस धन का निम्न व्यय प्रवृत्ति से उच्च व्यय प्रवृत्ति वर्ग को आंशिक अन्तरण तो हो ही गया है। किन्तु सबसे बड़ा पुन:वितरण प्रभाव तो निजी क्षेत्र से सरकार को अन्तरण होगा। उससे आगे

रेखाचित्र 18 : नकद एवं गैर नकद मुद्रा का अर्द्धवार्षिक परिचलन वेग (गैर नकद एवं नकद)

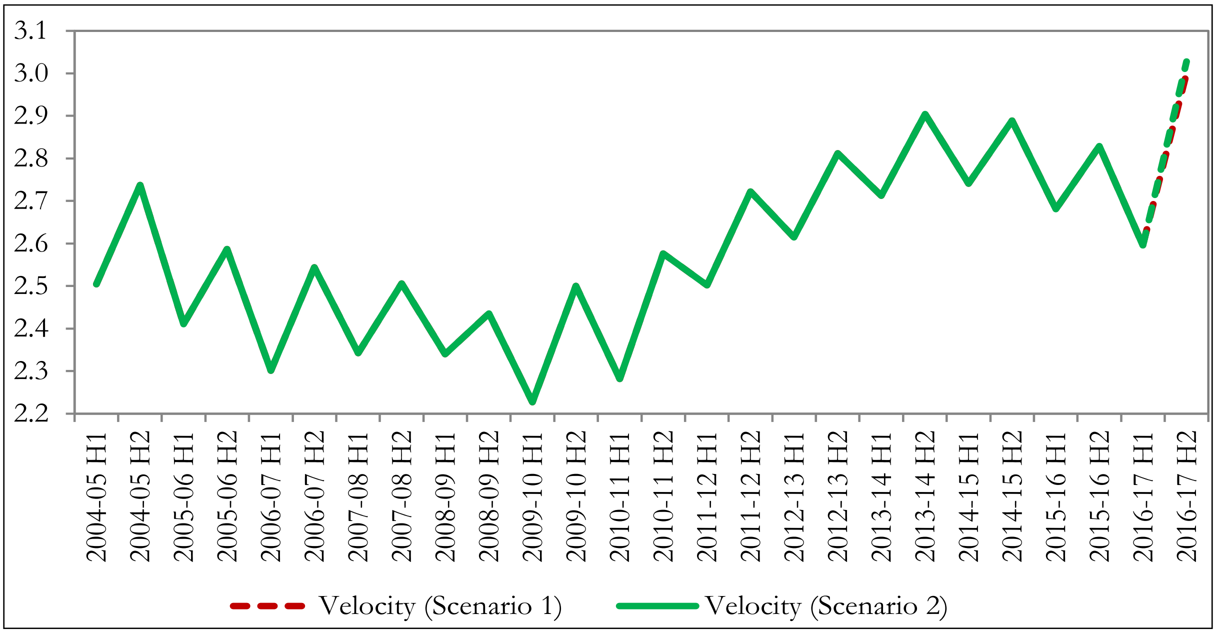

स्रोत : समीक्षा गणनाएं

रेखाचित्र 19 : अर्द्धवार्षिक मुद्रा का परिचलन वेग (केवल नकद)

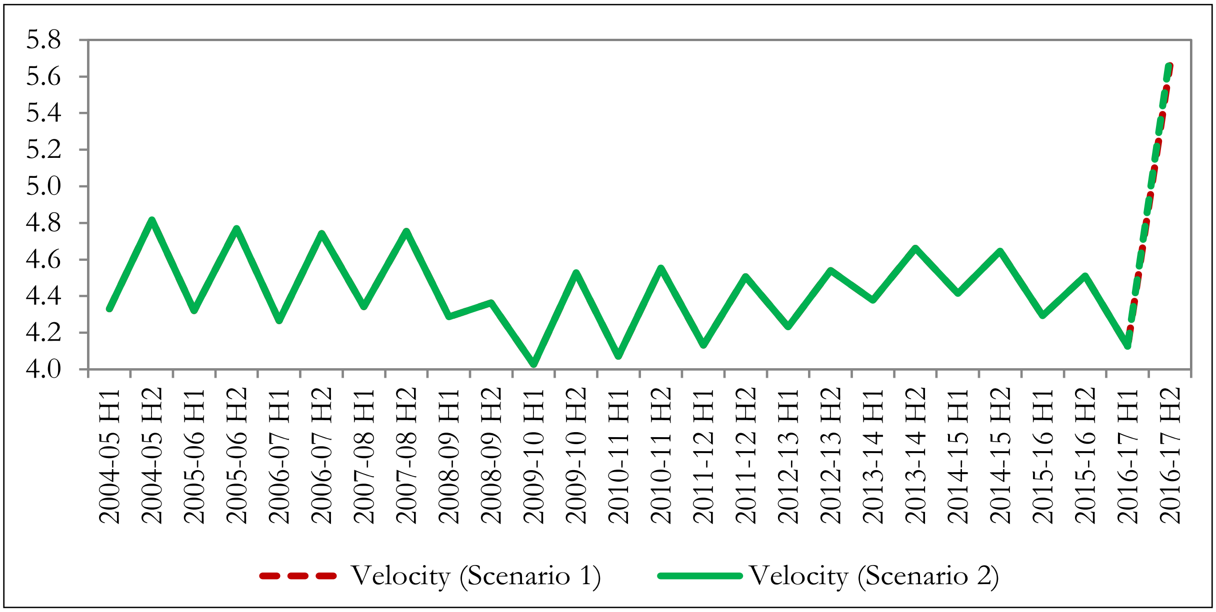

स्रोत : समीक्षा गणनाएं

सारी अर्थव्यवस्था पर होने वाला प्रभाव इस बात पर निर्भर करेगा कि सरकार उस अन्तरित धनराशि का क्या प्रयोग करती है।

3.84 विमुद्रीकरण का राजकोष के खातों पर प्रभाव इस प्रकार रहेगा :

3.85 धन संपदा का लाभ : रिजर्व बैंक / सरकार को उस नकद राशि के समान धन लाभ होगा जो बैंक व्यवस्था को लौटाई नहीं जाएगी।

3.86 अल्पकालिक प्रवाह प्रभाव : निवल रूप में इस प्रभाव का आंकलन कठिन है, क्योंकि कई प्रकार के अन्तर्प्रवाह भी चल रहे हैं। कालेधन के बैंक खातों में जमा होने पर उस पर उगाहा गया आयकर (खंड IV में चर्चित) कुल कर संकलन में वृद्धि करेगा। राज्य सरकारों को बकाया कर राशियों के भुगतान के समाचार भी आ रहे हैं, साथ ही विद्युत वितरकों को भी भुगतान में उछाल आया है। इसके प्रति तीन नकारात्मक प्रभाव भी है :

- सामान्य रूप से पुराने (घिसेपिटे/गंदे हो गए) नोटों के स्थान पर नए नोट छापने से कहीं अधिक भारी परिमाण में छपाई की लागत,
- बैंक व्यवस्था में तरलता के उफान को नियंत्रित रखने हेतु बाजार स्थिरीकरण योजना बांड जारी करने की विवशता,
- मौद्रिक जीडीपी में कमी आने पर निगम एवं अप्रत्यक्ष कर राजस्व में कमी की आशंका होगी, किन्तु अभी तक इस कमी का कोई संकेत नहीं मिला है।

3.87 इस सारे कार्य की सकल लागत तो एक वर्ष पूरा होने के पश्चात ही पूरी तरह से स्पष्ट हो पाएगी।

IX. सफलता के कुछ चिन्ह

3.88 विमुद्रीकरण के दीर्घकालिक लाभ संभव हैं। ये अगले 6 महीनों में तो नहीं दिखाई देने वाले, किन्तु एक वर्ष बीतते-बीतते इनका क्षितिज दर्शन अवश्य प्रारंभ हो जाएगा। और, सफलता के इन चिन्हों की पहचान इतनी कठिन भी नहीं है।

3.89 पहला चिन्ह तो डिजिटल तंत्र से जुड़े तीनों स्तरों के जनसमुदाय द्वारा डिजिटल भुगतान को अपनाया जाना है। हमने ये तीन वर्ग क्रमशः स्मार्टफोन प्रयोक्ता, सामान्य मोबाईल फोन प्रयोक्ता और फोनविहीन के रूप में बनाए है। इस पटल पर प्रारंभिक चिन्ह उत्साहवर्धक हैं।

3.90 दूसरे, नकद जीडीपी अनुपात में कमी आनी चाहिए, क्योंकि अपेक्षाकृत अधिक बचतें औपचारिक वित्त व्यवस्था में प्रवाहित होने लगेंगी तथा कालेधन में कमी आएगी। कालेधन के एक अनुमान के आधार पर तो कहा जा सकता है कि नकद जीडीपी अनुपात में 2 प्रतिशत अंकों की स्थायी कमी आ जाएगी।

3.91 संभवत: कर राजस्व संग्रह तो सफलता का सर्वश्रेष्ठ चिन्ह होगा। नए करदाताओं की संख्या तथा सकल घोषित आय में आंकड़ों में समय के साथ-साथ वृद्धि होगी। वर्ष 2013-14 की अवस्था हम तालिका-3 में प्रस्तुत कर रहे हैं। समय के साथ-साथ यहां दर्शाई गई सभी संख्याओं में महत्वपूर्ण वृद्धि होनी चाहिए। यही सफलता का सबसे प्रामाणिक चिन्ह होगा।

3.92 विमुद्रीकरण ने किसी सीमा तक अप्रत्यक्ष कर अनुपालन नहीं करने की लागतें बढ़ा दी है। अत: सेवाकर, उत्पादन शुल्क तथा राज्यों के मूल्य वृद्धि करदाताओं की पंजीकृत संख्याओं में भी वृद्धि की आशा है। ये संख्याएं भविष्य में निरंतर वृद्धिशील होनी चाहिए।

तालिका 3 : वैयक्तिक आयकर दाताओं का विवरण : वित्तवर्ष 2013-14

सकल आय सीमाएं	करदाता संख्या (लाखों में)	सकल आय (लाख करोड़ रूपए)
रू. 0-2.5 लाख	137.2	2.6
रू. 2.50-5.0 लाख	138.5	4.8
रू. 5.00-10.00 लाख	65.1	4.4
रू. 10.00 लाख और अधिक	24.4	6.7
विवरणियां भरने वाले करदाता	365.1	18.6
विवरणियां नहीं भरने वाले करदाता	172.9	
सकल योगफल	538.0	

X. दीर्घकालिक लाभों को अधिकतम एवं अल्पकालिक लागतों को न्यूनतम करना

3.93 अब आगे चलते हुए विमुद्रीकरण की लागतों को न्यूनतम और इसके लाभों को अधिकतम करने पर आग्रह होना चाहिए।

3.94 लागत कम करने के पक्ष पर यथाशीघ्र नकदी के अभाव को दूर करने पर बल दिया जाना चाहिए। जितनी शीघ्र पुन:मुद्रीकरण हो जाएगा, विमुद्रीकरण के प्रभाव उतने ही अल्पकालिक या अस्थाई तथा कम गंभीर होंगे।

3.95 एक अन्य बात पर बल देना आवश्यक है : करेन्सी की आपूर्ति वास्तविक मांग के अनुरूप होनी चाहिए, सरकारी तौर पर निर्धारित ''वांछनीय मांग के अनुसार नहीं''। दूसरे शब्दों में, रिजर्व बैंक को आन्तरिक प्रतिस्थापनीयता को पुन: स्थापना कर जन सामान्य को उसकी आवश्यकता के अनुसार नकदी सफलभ करानी चाहिए। खातों से आहरण सीमाओं को शीघ्र समाप्त करने पर जनता का विश्वास पुन: जागृत होगा, इसी प्रकार नकद आहरण पर कोई जुर्माने नहीं लगने चाहिए, अन्यथा लोग फिर से नकद राशियां अपने पास ही दबा कर रखने लगेंगे।

3.96 आन्तरिक परिवर्तनीयता प्रत्येक वित्तीय व्यवस्था का आधार होती है। इसके अनेक अत्यंत ही व्यवहारिक कारण हैं। जब तक जन सामान्य को यह भरोसा नहीं होगा कि बैंक में जमा राशियां बिना बाधा के नकद में बदली जा सकती है, वे अपनी कमाई की रकम को बैंक में जमा करने/रखने के लिए तैयार ही नहीं होंगे। वे उस रकम को अपने पास दबाकर रखेंगे, इस प्रकार न तो औपचारिक वित्त व्यवस्था को संसाधन मिल पाएंगे और न ही अनौपचारिक अर्थतंत्र के संचालन के लिए नकदी। इसका सबसे बड़ा प्रभाव समाज के गरीब वर्ग पर ही पड़ेगा, इस बात की बहुत संभावना है कि वही अनौपचारिक तंत्र में काम कर रहें हो और वैसे भी प्राय: धनिक वर्ग को नकदी के दर्शन पहले होते हैं और वही उसे दबाकर बैठ जाएंगे। धीरे-धीरे कम मूल्य के नोटों में वृद्धि होनी चाहिए (उच्च मूल्य के नोटों की तुलना में)। किन्तु सकल मुद्रा की आपूर्ति पर कोई प्रतिबंध नहीं होने चाहिए।

3.97 साथ ही, इस बीच नहीं लौटाए गए नोटों के रूप में सरकार को होनेवाली अनायास प्राप्तियों का प्रयोग चालू खाते पर उपभोग के लिए नहीं बल्कि पूंजी व्यय के लिए होना चाहिए। यह अनायास प्राप्ति केवल एक बारगी प्राप्ति है, अत: इसका प्रयोग भी एक बारगी कार्यों के निमित्त होना चाहिए। इस प्रयोग से व्यय को स्थायी रूप से बढ़ाने वाली अधिकारिताओं का सृजन नहीं होना चाहिए।

3.98 मध्यमकालिक दृष्टि से डिजिटलाईजेशन को मिला प्रोत्साहन चलते रहना चाहिए। इस प्रयास को आगे बढ़ाने हेतु कुछ नियम/सिद्धांत बन जाने चाहिए। न तो डिजिटाइजेशन कोई रामबाण औषधि है और न ही नकद इतना बुरा है। सार्वजनिक नीति को भुगतान की दोनों विधियों की लागतों और लाभों के बीच संतुलन बनाना चाहिए। दूसरे, डिजिटाइजेशन की और समाज को धीरे-धीरे अग्रसर करना चाहिए, इस प्रयास में अभी तक डिजिटल प्रौद्योगिकी से वंचित वर्ग का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। अर्थात जनता के चयन का सम्मान करना चाहिए, उसपर हुक्म नहीं चलाना चाहिए और नीति को समाहनकारी स्वरूप मिलना चाहिए, नियंत्रणकारी नहीं।

3.99 जहां तक डिजिटलाइजेशन के लिए प्रोत्साहन की बात है और नकदी को प्राप्त प्रोत्साहन निरस्त करने की बात है, तो इस प्रकल्प की लागतें सरकार/सरकारी क्षेत्र तथा रिजर्व बैंक को वहन करनी चाहिए। इनका भार उपभोक्ता एवं वित्तीय लेनदेन सहज बनाने वाली संस्थाओं पर नहीं पड़ना चाहिए। यह प्रोत्साहन प्रकल्प सावधिक होना चाहिए, क्योंकि इस डिजिटलाइजेशन में वृद्धि होने पर एक स्तर से आगे तो इसे निजी रूप से भी लाभप्रद हो जाना चाहिए। इस प्रकार की भुगतान व्यवस्था में विश्वास दृढ़ बनाने के लिए साइबर सुरक्षा व्यवस्था को बहुत सशक्त बनाना आवश्यक है। एक अन्य महत्वपूर्ण आवश्यकता है कि भुगतान प्रक्रिया विभिन्न तंत्रें के बीच सुचारू रूप से चलती रहे। यही बात डिजिटलाइजेशन की ओर आगे प्रगति के लिए अभी नवसृजित UPI को और व्यापक एवं विकसित करने का आग्रह कर रही है।

3.100 **सबसे बड़ी बात तो यह है :** यदि यह सुनिश्चित करना है कि विमुद्रीकरण सचमुच में व्यवहार में दीर्घकालिक बदलाव का उत्प्रेरक सिद्ध हो तो हमें इसका साथ देनेवाले ऐसे गैर-दण्डात्मक एवं प्रोत्साहन मित्र कदम भी उठाने होंगे जो कर वंचना के लिए वर्तमान प्रोत्साहनों को कम कर दें। विमुद्रीकरण निश्चित रूप से एक सशक्त छड़ी रहा है। अब इसका साथ देने के लिए कुछ चारे (गाजरों) की भी जरूरत है। यहां एक पंचमुखी युक्ति अपनाई जा सकती है।

- एक ऐसी जीएसटी प्रणाली लागू की जाए जो भूमी एवं अचल संपत्ति के लेनदेन सहित सभी कालेधन का सृजन करने वाले कार्यों को अपने वितान में समेट लें;
- वैयक्तिक आयकर और स्टैंप शुल्क दरें कम की जा सकती हैं;
- धीरे-धीरे आयकर जाल को फैलाया जा सकता है, यह संवैधानिक व्यवस्थाओं के अनुरूप हो और इसमें सभी उच्च आमदनियों को समाहित कर लिया जाए (आखिर कालाधन इस प्रकार का सूक्ष्म क्षेत्रीय भेदभाव कहां करता है?);
- निगम कर में कमी की काल सारिणी को अधिक त्वरण दिया जा सकता है; और
- कर प्रशासन को सुधार उसमें मनमानापन घटाया जा सकता है तथा साथ ही उसमें उत्तरदायित्व (जवाबदेही) में सुधार लाया जा सकता है।

3.101 अन्त में, यह भी आवश्यक है कि नई घोषित (अभी तक छुपाई गई) संपदा को लेकर प्रत्येक स्तर के कर प्रशासक उन संपदाधिकारियों का उत्पीड़न प्रारंभ नहीं कर पाएं। जानकारी के बेहतर प्रयोग, साक्ष्य के आधार पर संवीक्षा और अंकेक्षण तथा कर आंकलन अनुपालन को यथासंभव ऑनलाईन बना कर प्रशासकों एवं करदाताओं के बीच व्यक्तिगत स्तर पर भेंट की संभावनाएं न्यूनतम की जानी चाहिए। अब वह समय आ रहा है जब जीएसटी प्रत्येक लेनदेन को लेकर बहुत अधिक आंकड़ों (जानकारी) का सृजन करेगा। अत: केन्द्र में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष कर प्रशासकों के बीच जानकारी के आदान-प्रदान, वह भी राज्य सरकारों के साथ समन्वयपूर्वक, में वृद्धि होनी चाहिए। इससे न केवल अप्रत्यक्ष करों का बल्कि प्रत्यक्ष करों का भी गैर दण्डात्मक विधियों से बेहतर अनुपालन संभव हो

पाएगा। कर प्रशासन को विशाल आंकड़ा समुच्च्य और डिजिटल युग द्वारा सफलभ बनाए जा रहे सुअवसरों को अंगीकार करना चाहिए।

संदर्भ

1. Acharya, Shankar N. (1986), *"Aspects ofthe black economy in India", NationalInstitute of Public Finance and Policy*

2. Government of India (2016), *"Committee on Digital Payments",Ministry of Finance*

3. Henry, James S. (1980), *"The CashConnection: How to Make the MobMiserable", The Washington Monthly.*

4. PricewaterhouseCoopers India (2015), *"Disrupting cash: Accelerating electronicpayments in India"*

5. Rai, Suyash (2016), *"A flawed policy: The real problem with demonetisation isnot just in implementation", scroll.in*

6. Rogoff, Kenneth S. (2016), *The Curse ofCash, Princeton University Press*

7. Sands, Peter (2016), *" Making it Harder forthe Bad Guys: The Case for EliminatingHigh Denomination Notes", HarvardKennedy School M-RCBG AssociateWorking Paper No. 52*

8. Sen, Pronab (2016), "Demonetisation isa hollow move", Op-ed: Mint

9. Summers, Larry (Feb 16, 2016), "It's timeto kill the $100 bill", Op-ed: WashingtonPost

परिशिष्ट 1. विभिन्न देशों से विमुद्रीकरण के उद्धरण

वर्ष 1982 के बाद से अचानक विमुद्रीकरण/करेंसी में भारी संकुचन की घटनाएं[15]

देश	वर्ष	उठाए गए कदम	तर्काधार	प्रभाव
घाना	1982	50 सेडी नोटों का विमुद्रीकरण, देर तक कोई नोट बदली नहीं, बैंक जमाओं को निष्क्रिय किया गया।	अत्यधिक तरलता और स्फीति	बैंक व्यवस्था में विश्वास समाप्त हो गया।
म्यांमार	1985	50 और 100 क्याट के नोट बंद, सीमित नोट बदली की अनुमति, 75 क्याट के नोट प्रारंभ	कालाबाजारी का सामना करने की आवश्यकता	सार्वजनिक विरोध
	1987	25, 35 और 75 क्याट के नोट अमान्य, बदली की सुविधा नहीं नए मूल्यों के नोट जारी		चीजें खरीदकर रखने की जल्दबाजी ने स्फीति को और गंभीर कर दिया।
ब्राजील	1990	कॉलर योजना : एक सीमा से अधिक की सभी जमाएं पूरी तरह बंद कर मौद्रिक संकुचन, अर्थव्यवस्था में सूचक बंधन समाप्त, कीमतें और मजदूरी पूरी तरह नियत। एक सीमा तक के पुरानी करेंसी के जमा समान दर पर नई करेंसी में बदले गए।	अतिस्फीति का सामना	उत्पादन का संकुचलन, अनियंत्रित स्तर पर तरलता के पुन: संचार के कारण कीमतों में धीमी कमी
	1993	रियल योजना : नई करेंसी प्रारंभ, इसकी एक इकाई पुरानी की 1000 के समान घोषित, दोनों करेंसियां साथ-साथ चलती रहीं।	अतिस्फीति का सामना	धीरे-धीरे अर्थव्यवस्था में स्थिरता आ गई।
सोवियत संघ	1991	जनवरी माह में अचानक 50 और 100 रूबल के नोट वापस, नए नोटों से बदली, किन्तु केवल तीन दिन तक, वह भी प्रतिव्यक्ति बहुत कम मात्राा में।	संगठित अपराध तंत्र का सामना और अत्यधिक मौद्रिक प्रसार से मुक्ति	जनता का विश्वास भंग, अतिस्फीति प्रारंभ, नकदी समाप्त प्राय: रोजगार में भारी हानि।
रूस	1993	1991 वाले कदम जैसा ही रूस ने अपने पड़ोसियों से रूबल प्रयोग करने वाले क्षेत्र की स्थापना पर बातचीत की, किन्तु बेलारूस ही सहमत हुआ।	पुराने बैंक नोटों का परिवर्तन करने और स्फीति पर नियंत्रण की आवश्यकता	रूबल को तो बल नहीं मिला। पड़ोसी देशों की करेंसिया भी समस्याग्रस्त हुई।
इराक	1993	25 दिनार के नोटों को देश में ही छपे निम्न गुणवत्ता नोटों से बदल दिया गया, बदली के लिए सीमित समय दिया गया, देश के उत्तरी भाग में बदली भी नहीं हुई, पुराने दिनार को ही नया दिनार मान लिया गया।	दक्षिण ईराक संयुक्त राष्ट्र के प्रतिबंधों का सामाना करने के लिए देश में ही नोट छपवाने लगा, यह छपाई बजट का घाटा पूरा करने के लिए ज्यादा ही तेजी से होने लगी।	अनियंत्रित नोट छपाई का स्वभाविक परिणाम रहा स्फीति में भारी वृद्धि।
उत्तरी कोरिया	2009	पुराने नोट रद्द, पुन: मूल्यित, बदली पर कड़े नियंत्रण, जिसमें आगे कुछ छूट दी गई, फरवरी 2010 में मुक्त बाजार पर लगाई गई कुछ बाधाएं कम कर दी गईं।	काले करेंसी बाजार और स्फीति पर नियंत्रण	एक सप्ताह तक कार्यवाही रोक दी गई, करेंसी वॉन का काले बाजार में अवमूल्यन जनता का कड़ा विरोध
साइप्रस	2013	यूरो IMF के सहायता कार्यक्रम को स्वीकार करने के बाद साईप्रस ने बीमा रहित बैंक जमाओं पर एक बारगी कर लगा दिया गया।	ग्रीस द्वारा ऋण नहीं चुकाने पर बैंक प्रणाली को क्षति पहुँची, राजकोषीय एवं बैंकिंग संकट हुआ	बैंक व्यवस्था धीरे-धीरे फिर अपने पैरों पर खड़ी हो गयी।

[15] अचानक विमुद्रीकरण की और भी अनेक घटनाओं की चर्चा के.एन वांचू समिति की रिपोर्ट में की गई है। इनमें बेल्जियम, नीदरलैंड, ग्रीस, फ्रांस, रोमानिया और श्रीलंका सम्मिलित थे।

ग्रीस	2015	जून 2015, बैंकों को कुछ समय तक बंद कर दिया गया, और पूंजी पर नियंत्रण लगाए गए।	राजकोषीय और बैंक क्षेत्र में संकट	बैंक तो जुलाई 2015 में फिर से काम करने लगे पर पूंजी नियंत्रण बने रहे।
वेनुजुएला	2016	दिसंबर 2016 में 100 बोलिवर का नोट वापिस ले लिया गया।	स्फीति और मुनाफाखोरी पर नियंत्रण के लिए	जन असंतोष

पहले से ही घोषणा कर धीमे-धीमे विमुद्रीकरण/करेंसी में तीखी कमी

देश	वर्ष	उपाय	औचित्य	प्रभाव
सिंगापुर	1967	जून 1967 में सिंगापुर, मलेशिया और ब्रूनई के करेंसी संघ का समापन, तीनों ने अपनी-अपनी करेंसी प्रारंभ की। तीनों की संधि ने इन करेंसियों का समान दर पर विनिमयशील रखा था।	1965 में सिंगापुर की मलेशिया से स्वतंत्रता के बाद करेंसी संघ 1967 में भंग हो गया।	अभी तक ब्रुनई के डालर से परिवर्तनीयता बनी हुई है।
आस्ट्रेलिया	1988 व 2015	सत्तर और अस्सी के दशकों में बहुत शोध अनुसंधान के बाद (उन्नत पुन:मुद्रण प्रौद्योगिकी पर आधारित) नकलरोधी पोलिमर नोट 1988 में जारी किए गए। फरवरी 2015 की घोषणा के अनुसार नई पीढ़ी के नोटों में एक ऐसी निर्माणात्मकता होगी कि दृष्टिबाधित व्यक्ति भी उन्हें सहज ही पहचान सकेंगे।	नोटों की नक्काली को रोकना	यह विश्व का पहला देश बन गया, जहां सभी प्रचलित नोट पोलिमर प्रौद्योगिकी पर आधारित है।
यूरो	1999	इस वर्ष तक एक करेंसी अपनाने पर यूरोपीय संघ में 1992 में ही सहमति बन चुकी थी। बहुत सतर्कता पूर्ण नियोजन और इसके प्रारूप स्वरूप की घोषणा के बाद जनवरी 1999 में गैर भौतिक आकार में यूरो प्रारंभ किया गया। जनवरी 2002 तक विभिन्न सदस्यों की पुरानी करेंसियां भी प्रचलन में रही, किंतु उसके बाद से केवल यूरो के नोटों का निर्गम प्रारंभ हो गया। जून 2002 के अंत तक (कुछ बाद तक भी) पुरानी करेंसियां परिवर्तनीय बनी रहीं।	यूरोपीय संघ में एक सांझी करेंसी को प्रचलित करना	यह संक्रांति सामान्यत: विघ्न बाधारहित रही।
सिंगापुर	1999	सितंबर 1999 में परिष्कृत सुरक्षा विशेषताओं सहित चित्रवाले नोट, करेंसी की चौथी श्रृंखला, जारी की गई।	2014 का कदम उच्च मुद्रा के माध्यम से कालाधन सफेद करने पर रोक के लिए था। यह जोखिम बड़े लेनदेनों में अधिक होता है।	
	2014	S $ 10,000 के नोट जारी करना बंद कर बैंकों को अक्टुबर 2014 से ग्राहकों को ये नोट वापस परिचलन हेतु देने से मना, किंतु ये अभी तक वैध मुद्रा है।		
कनाडा	2011	जून 2011 में पोलिमर बैंक नोट जारी, जानकारी का व्यापक प्रसार नवंबर में $100 तथा मार्च 2012 में $50 के नोट जारी	जनता का करेंसी में विश्वास दृढ़ हुआ, नकली नोट छापना कम हुआ	
डेनमार्क	2012	2009 से 2011 की अवधि में नई बैंक नोट श्रृंखला जारी हुई थी, जिसमें कई नई विशेषताएं थी। वर्ष 2012 में फेरोइज बैंक नोट श्रृंखला को उच्च स्तर पर पहुँचाया गया।	नकली नोटों की आशंका का सामना	

स्वीडन	2013–2016	बिना चमकीली पट्टी वाले 50 और 100 क्रोना के नोट दिसंबर 2013 के बाद बंद कर दिए गए। अक्टुबर 2015 में 20, 50, 200 और 1000 क्रोना के नए नोट जारी पुराने नोटों का चलन जून 2016 तक सीमित किया गया, अक्टुबर 2016 में 100 और 500 क्रोना के नए नोट आए, कुछ सिक्के भी जारी किए गए; पुराने नोटों से भुगतान जून 2017 तक स्वीकाय	ये सभी निर्णय बैंक नोटों और सिक्कों की नई श्रृंखला जारी कर पुराने बंद करने के फैसले का अंग है। नए नोट आदि की निकासी 2015 से प्रारंभ की जानी थी।	
जिम्बाब्वे	2015	जिम्बाबवे डालर ZD का विमुद्रीकरण, योजना पूरी तरह से अमेरीकी डालर का प्रयोग करने की थी। यह काम सितंबर 2015 तक पूरा करना था। और अनेक करेंसियों स्वीकार्य बनाई जानी थी	अतितीव्र स्फीति के कारण 2009 से ही ZD का त्याग हो चुका था और देश में अन्य देशों की करेंसियों का प्रयोग मान्य था	उपभोक्ता कीमतों में स्थायित्व की स्थापना हो गई।
पाकिस्तान	2015	जून 2015 में घोषणा कर दी गई कि दिसंबर 2016 से 10, 50, 100 और 1000 रूपए के पुराने स्वरूप के नोट अमान्य हो जाएंगे। नवंबर 2016 तक उन्हें नए नोटों से बदला जा सकता था; हां स्टेट बैंक ऑफ पाकिस्तान और बैंकिंग सर्विसिज कार्पोरेशन 2021 तक पुराने नोट स्वीकार करते रहेंगे।	भ्रष्टाचार, कालेधन और आतंकवाद पर अंकुश लगाना।	परिवर्तन की पुष्टि में कोई स्वीकार्य जानकारी सफलभ नहीं है।
यूरो क्षेत्र	2016	जुलाई 2016 में €50 की नई श्रृंखला जारी, यह अप्रैल 2017 से प्रयोग होने लगेंगे। यूरोपीय केंद्रीय बैंक की घोषणा है कि 2018 के अंत तक €500 के नोट जारी होना बंद हो जाएगा, उस समय €100 और €200 के नोटों की यूरोपा श्रृंखला प्रारंभ हो जाएगी।	यूरो को अधिक सुरक्षित तथा नवीनतम सुरक्षा विशेषताओं से सन्नद्ध बनाना। €500 संबंधी निर्णय का आधार यही था कि इनके कारण गैर कानूनी कामों को बढ़ावा मिलता है।	

दोहरी तुलन पत्र समस्या का नासूर

04

अध्याय

"सबसे महंगा व्यय तो समय का होता है"

-एंटीफोन द सॉफिस्ट,
एथेन्स, 5वीं शती, ईसा पूर्व

कुछ समय से भारत अपनी दोहरी तुलन पत्र समस्या का समाधान पाने का प्रयास कर रहा है। एक तरफ अत्यधिक ऋण लिए हुए कंपनियां हैं तो दूसरी ओर 'बुरे ऋणों' से त्रस्त बैंक। यहां एक विकेन्द्रीकृत कार्यविधि अपनाई जा रही है। बैंकों को ही पुन: रचना करने के दायित्व सौंप दिए गए हैं। किन्तु कुछ बड़ी-बड़ी कंपनियों के पास संकुलित ऋणों की समस्या का कोई निर्णायक समाधान, अनेक सुधार प्रयासों के बाद भी, नहीं हो पा रहा है। परिणाम स्वरूप यह समस्या का जख्म नासूर बनता जा रहा है : गैर निष्पादक परिसम्पत्तियां वृद्धिमान हैं, और साख तथा निवेश में गिरावट आ रही है। संभवत: अब एक नई विधि पर विचार करने का समय आ गया है। एक ऐसी सार्वजनिक क्षेत्रीय परिसंपदा पुन: प्रतिष्ठापन एजेन्सी का गठन होना चाहिए जो विशालतम एवं कठिनतम मामलों को संभाल ले और ऋण घटाने के लिए राजनीतिक दृष्टि से कठिन निर्णय लेने में भी संकोच नहीं करे।

I. विषय प्रवेश

4.1 फरवरी 2016 में बैंक क्षेत्रक से मिले बुरे समाचारों से भारत के वित्तीय बाजारों में खलबली मच गई थी। दिसंबर में समाप्त तिमाही के अपने निष्पादन के आंकड़ों को एक के बाद एक सार्वजनिक बैंक घोषित करता जा रहा था और ये आंकड़े दिल दहला देने वाले थे। बैंकों ने बताया था कि निष्पादन शून्य परिसंपत्तियों का परिमाण इतना विशाल हो गया था कि उनके लिए प्रावधान के बाद सामान्य लेनदेन से संभव आमदनी शून्य प्राय: हो रही थी। अत: निवल आय तो बुरी तरह से घाटा दिखा रही थी।

4.2 इस समाचार से निवेशक बहुत चिंतित हो गए और उन्होंने सार्वजनिक बैंकों के अपने शेयरों की तेजी से बिकवाली शुरू कर दी। उनके दाम इतने गिर गए थे कि मध्यम आकार का HDFC बैंक अकेले ही 24 सार्वजनिक बैंकों के सम्मिलित मूल्यमान पर अधिक भारी पड़ने लगा था (रेखाचित्र 1)।

4.3 आखिर क्या हो गया था? प्राय: निष्पादनहीन परिसंपदाएं उसी समय तीखा उछाल दर्ज करती हैं, जब देश किसी आर्थिक संकट से गुजर रहा हो और बड़े स्तर पर फर्में दीवालिया हो रही हों। पूर्वी एशिया में 1997-98 में ऐसा ही हुआ था, तो संयुक्त राज्य तथा ब्रिटेन का 2008-09 का अनुभव भी यही रहा था। किन्तु भारत में तो कोई आर्थिक संकट नहीं था, वस्तुत: भारत की जीडीपी तो विश्व की उच्चतम दर पर संवृद्धिशील थी। निगम क्षेत्र में कोई बहुत बड़ी दुर्घटना भी नहीं हुई थी, कोई फर्म दीवालिया नहीं हुई थी।

4.4 किन्तु एक स्तर पर व्याख्या बहुत स्पष्ट थी। रिजर्व बैंक ने परिसंपदा गुणवत्ता समीक्षा (AQR) की थी, उसके बाद बैंकों ने अपने खातों को 'साफ' करना शुरू कर दिया था और वर्षों से जमा हो रहे 'कूड़े कचरे' को झाड़ बुहार कर बाहर निकाल दिया था। किन्तु इससे एक बड़ा गंभीर प्रश्न उठ रहा था : आखिर इतना 'कूड़ा कचरा' जमा कैसे हो गया था? जैसे-जैसे हम वर्ष 2016 में आगे बढ़े, यह भी साफ हो गया कि वह

रेखाचित्र 1 : बाजार पूंजीकरण : सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक और एचडीएफसी (रू. ट्रिलियन)

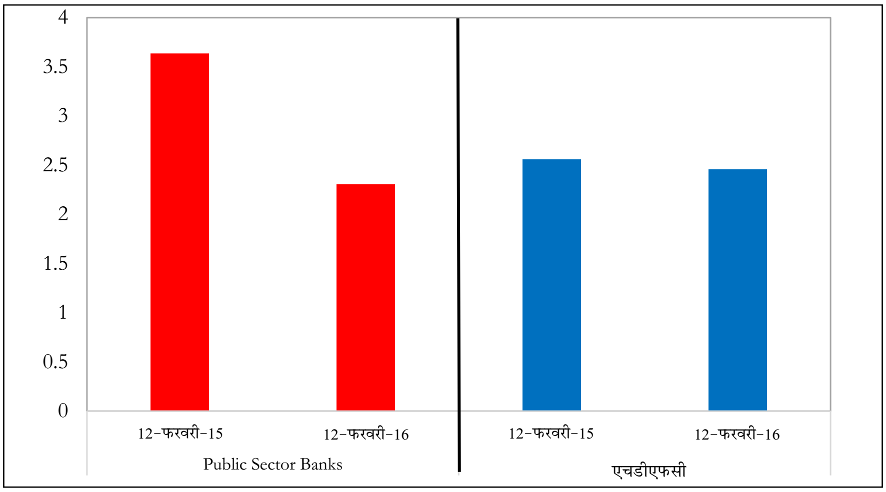

स्रोत: ***Bloomberg***

AQR ही एक मात्र कारक नहीं था। अधिदेशित समंजन मार्च तक पूरे हो गए थे। किन्तु निष्पादनहीन परिसंपदाओं का उफान चलता रहा। सितंबर माह में उनका स्तर कुल उधार के 9 प्रतिशत को पार कर गया। यह एक वर्ष पूर्व की अपेक्षा दुगुना था। इन बुरे ऋणों का संकुलन भी इतना ही चौंकाने वाला था। निष्पादनहीन परिसंपदाओं का 80 प्रतिशत अंश सार्वजनिक बैंकों द्वारा दी गई उधार से सृजित हुआ था, उनकी निष्पादनहीनता दर तो 12 प्रतिशत को छू रही थी (रेखाचित्र 2)।

4.5 उसी समय क्रेडिट स्विस ने यह रिपार्ट दी कि इस द्वारा अंकेक्षित 40 प्रतिशत निगम ऋणों की स्थिति तो ऐसी थी कि उन्हें लेने वाली कंपनियों की ब्याज अच्छादन दर 1 प्रतिशत से भी कम थी, अर्थात वे अपने लिए गए ऋणों पर ब्याज चुकाने लायक कमाई भी नहीं कर पा रही थी (रेखाचित्र-3)[1]।

4.6 जैसे-जैसे यह जानकारी जनचेतना में फैली, यह स्पष्ट हो गया कि भारत को 'दोहरी तुलन पत्र' नामक बीमारी ने ग्रस लिया है। इसके पाश में बैंकिंग और गैर

रेखाचित्र 2 : सकल निष्पादनहीन परिसंपदा अनुपात (सकल ऋण के प्रतिशत के रूप में)

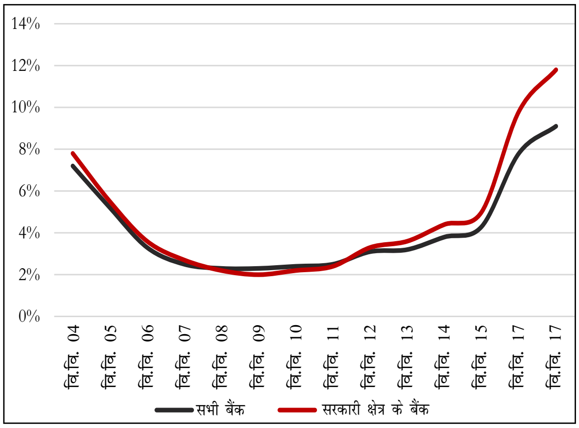

स्रोत : रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया (RBI)

रेखाचित्र 3 : ऋण आपदा ग्रस्त कंपनियों द्वारा देय ऋण अंश'

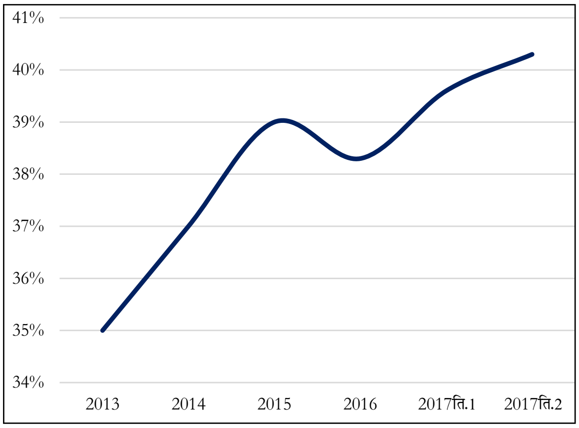

स्रोत : Credit Suisse for debt share' यह उन कंपनियों द्वारा देय ऋण का प्रतिशत है जिनका ब्याज आच्छादन अनुपात एक से कम हो गया है। यहां नकद प्रवाह का मापन EBIT – ब्याज और कर भुगतान पूर्व आमद से किया जा रहा है। यह 3700 गैर वित्त कंपनियों के प्रतिदर्श पर आधारित आंकलन 2013-16 की मार्च अंत की स्थिति दर्शा रहे हैं। H117 का अर्थ है वित्तीय वर्ष 2017 का पूवार्द्ध।

---

[1] इस अध्याय में किए गए विश्लेषण में क्रेडिट स्यूएस के डाटाबेस का प्रयोग किया गया है, विशेषकर 3,700 सूचीबद्ध फर्मों से संबंधित जानकारी के मामले में।

बैंकिंग, दोनों प्रकार के निगम फंसे हुए थे। ये कोई छोटा मोटा दबाव नहीं था, विश्व में उच्चतम दबावों में इसकी गणना हो रही थी। वर्तमान में भारत का निष्पादनहीनता अनुपात रूस को छोड़ सभी उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाओं से उच्च है। यह तो पूर्वी एशियाई संकट के समय कोरिया में दिखाई दिए शीर्ष स्तर से भी अधिक है (रेखाचित्र-4)।

रेखाचित्र 4 : चुने हुए देशों के NPA अनुपात (सकल ऋण का प्रतिशत)

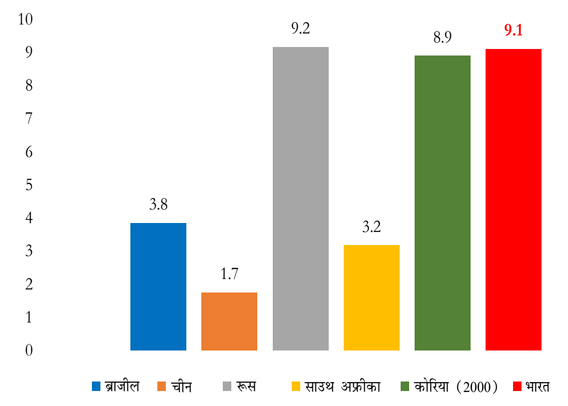

स्रोत: **भारत के लिए RBI, अन्य देशों के लिए World Development Indicator, Worl Bank.**

4.7 इसकी क्या व्याख्या संभव हो सकती है? दोहरी तुलन पत्र व्याधि से ग्रस्त सभी अर्थव्यवस्थाओं में प्राय: एक विशेष तरीका अपनाया जाता है। उनके निगम उत्कर्षकाल में बहुत अधिक प्रसार कर बैठते हैं और उस समय की ओढ़ी हुई देनदारियां चुकाने में आगे चलकर कठिनायों का सामना करना पड़ता है। फिर तो वह ऋण नहीं चुका पाते, और उससे बैंकों के तुलन पत्रों को भी आघात लगता है। यह संयुक्ति अर्थव्यवस्था की संवृद्धि के लिए विनाशकारी रूप धारण कर लेती है। पहले से ही लंगड़ा रहे निगम निवेश के लिए उन्मुख नहीं हो पाते और जिन निगमों को इस समस्या का सामना नहीं करना पड़ रहा हो वह भी निवेश में असमर्थ होकर रह जाते हैं, कारण यही है कि खस्ताहाल बैंक उन्हें उधार दे पाने की स्थिति में नहीं होते।

4.8 किन्तु भारत के संबंध में तो यह प्रतिमान सही नहीं प्रतीत होता। ठीक है भारत में भी शेष विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ-साथ आर्थिक तेजी का दौर इस शती के प्रथम दशक मध्य में चल रहा था। किन्तु यह विश्व वित्तीय संकट से तो प्राय: अछूता ही निकल आया था। हां संवृद्धि दर में एक बार थोड़ी शिथिलता आई थी, किन्तु शीघ्र ही तीव्र दर पर संवृद्धि का क्रम पुन: प्रारंभ हो गया था। सामान्य परंपरागत ज्ञान तो इसकी यही व्याख्या करेगा कि भारत में उत्कर्ष काल में कंपनियों और बैंकों द्वारा वे गलतियां नहीं गई जो अन्य देशों में हुई थी। अधिक सटीक रूप से, इस मत के अनुसार, उन्हें अत्यधिक ऋण भार चढ़ाने से तो इस बात ने बचा दिया कि विवेकपूर्ण व्यवहार विषयक प्रतिबंधों ने उत्कर्षकाल में बैंक साख का अधिक प्रसार नहीं होने दिया तथा पूंजी नियंत्रणों ने विदेशी ऋण लेने की अनावश्यक प्रवृत्तियों पर अंकुश लगा रखा था।

4.9 यदि यह वर्णन सही है तो फिर यह विस्मय होता है कि भारत में दोहरी तुलन पत्र समस्या कैसे पैदा हो गई। इसके विपरीत यदि यह विचार गलत है और भारत भी अन्य देशों वाले मार्ग पर ही चल रहा था तो यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि परिणाम इतने कम गंभीर क्यों रहे।

4.10 इन सामान्य से परिणामों का एक कारण तो सहज ही ध्यान में आता है। इस दोहरी तुलन पत्र समस्या से ग्रस्त अन्य देशों में तो निष्पादनहीन परिसंपदाओं द्वारा गंभीर बैंकिंग संकट उत्पन्न होने से संवृद्धि पथ से उनके अर्थतंत्र विचरित हो गए थे। किन्तु भारत में ऐसा कुछ नहीं हुआ। वास्तव में ऐसा कोई संकेत भी नहीं उभरा कि बैंक क्षेत्र किसी समस्या में फंस गया है। न किसी बैंक पर जमाकर्ताओं ने चढ़ाई की है, न अन्तर्बैंक बाजार में तनाव-दबाव आया है और न 2010 में पहली बार दोहरी तुलन पत्र समस्या दिखाई पड़ने के बाद से तरलता सहायता की कोई आवश्यकता पड़ी है। इन सबका एक बहुत बड़ा कारण रहा है : समस्या का बहुत बड़ा हिस्सा सार्वजनिक बैंकों तक सीमित रहा है, उनकी पूंजी न केवल उनकी अपनी होती है बल्कि अन्तत: उन्हें सरकार का समर्थन प्राप्त रहता है और उसके (सरकार के) संसाधन तो इस निष्पादनहीन परिसंपदा समस्या का सामना करने के लिए पूर्णत: पर्याप्त हैं। इसी कारण जमाकर्ताओं का बैंक व्यवस्था में विश्वास अचल रहा है।

4.11 इसके बाद भी भारत की दोहरी तुलन पत्र व्यवस्था का अनुभव गंभीर रूप से विस्मयकारी ही बना रहता है। इस अध्याय में हम प्रश्नों के चार समूहों का उत्तर खोजने का प्रयास कर रहे हैं :

- गड़बड़ क्या हुई और कब हुई?
- अपनी दोहरी तुलन पत्र समस्या के बाद भी भारत तीव्र संवृद्धि दर पाने में किस प्रकार सफल रहा है?
- क्या भारत में चल रहा ये प्रतिमान धारणीय है?
- और, अब क्या किए जाने की आवश्यकता है?

4.12 इन प्रश्नों के उत्तर काफी जटिलतापूर्ण हैं। फिर भी नीतिगत निहितार्थों को सहज ही निरूपित किया जा सकता है। कुछ वर्षों तक तो दोहरी तुलनपत्र समस्या को एक छोटी सी समस्या मानना संभव था। आशा यही थी कि जैसे ही अर्थव्यवस्था पुनः तीव्र संवृद्धि पथ पर लौटेगी, इस समस्या का भी स्वमेव निपटान हो जाएगा। किन्तु अभी कुछ समय से प्रतीत हो रहा है कि यह इंतजार करने की युक्ति सफल नहीं हो पाएगी। संवृद्धि से दबाव में आ गई फर्मों की समस्या का हल नहीं हो पाएगा, बल्कि इसके विपरीत इन फर्मों की समस्याएं पूरे अर्थतंत्र की संवृद्धि को संकटासन्न कर सकती हैं।

4.13 इस परिणाम से बचने के लिए बड़े-बड़े बुरे ऋणों की समस्या को सुलझाने के लिए एक औपचारिक संगठन की आवश्यकता हो सकती है। वस्तुतः पूर्वी एशियाई देशों में 1990 के दशक की गंभीर दोहरी तुलन पत्र समस्या से निपटने के लिए यही विधि अपनाई गई थी। लगता है एक सार्वजनिक क्षेत्रीय परिसंपदा पुनःप्रतिष्ठापन एजेंसी (PARA) के गठन का समय आ गया है।

(क) गड़बड़ क्या हुई?

4.14 निष्पादहीन परिसंपदाओं की समस्या पिछले कुछ वर्षों की देन नहीं है। यह 2000-10 के बीच लिए गए फैसलों का नतीजा नहीं है। इसकी जड़े तो अतीत में बहुत दूर तक फैली हैं। उक्त दशक में तो सारे विश्व की अर्थव्यवस्थाएं उत्कर्षशील थी, भारत जितनी नहीं,

बॉक्स 1 : एक सार्वजनिक क्षेत्रीय परिसंपदा पुनः प्रतिष्ठापन एजेंसी क्यों जरूरी है?

ऐसी एजेंसी के पक्ष में तर्क को हम सविस्तार तो तीसरे खंड में प्रस्तुत करेंगे। किन्तु इस निष्कर्ष की ओर ले जाने वाले सात कारणों की एक अग्रिम रूपरेखा पर यहीं ध्यान देना भी उपयोगी होगा।

(1) **यह केवल बैंकों का मामला नहीं है, हमारी कंपनियों के साथ भी इसका गहरा संबंध है।** अभी तक बुरे ऋण विषयक जन संवाद में सारा ध्यान बैंकों की पूंजी पर केन्द्रित रहा है जैसे कि दोहरी तुलन पत्र समस्या के समाधान में एक मात्र बाधा सार्वजनिक बैंकों की जरूरत के हिसाब से पर्याप्त धन जुटा पाने की बाधा हो। किन्तु यह कोष जुटाना तो वस्तुतः सबसे आसान काम है। इसकी लागत भी सरकार के पास सुलभ संसाधनों की तुलना में बहुत कम रहेगी। कहीं अधिक उलझाव तो बुरे ऋणों की समस्या को सुलझाने का मार्ग तलाश करने में ही निहित है।

(2) **यह एक आर्थिक समस्या है, नैतिक नहीं।** निश्चित रूप से कुछ भुगतान की समस्याएं इस कारण भी उठी हैं कि ऋण राशियों का कहीं अन्यत्र प्रयोग कर लिया गया है। किन्तु समस्या का अधिकांश तो आर्थिक वातावरण में आए अनअपेक्षित परिवर्तन के कारण पैदा हुआ है : समय सारिणियों और विनिमय दर में बदलाव आए हैं तथा संवृद्धि दर संबंधी मान्यताएं पूरी नहीं हो पाई हैं।

(3) **संकटग्रस्त साख ऋण का बड़ी कंपनियों में ही संकुलन हुआ है।** यह संकुलन भी एक अच्छा अवसर प्रदान कर रहा है। कुछ थोड़े से मामलों के निपटान से ही दोहरी तुलनपत्र समस्या पर काबू पाया जा सकता है। किन्तु यही अधिक गंभीर चुनौती भी है : बड़े मामलों का निपटान अंतर्निहित रूप से अधिक कठिन होता है।

(4) **इनमें से कई कंपनियां वर्तमान ऋणभर के चलते अर्थक्षम नहीं बची हैं।** इनके ऋणों को घटाना (माफ कर देना) आवश्यक हो रहा है। पिछले कुछ वर्षों से इन बड़ी ऋणग्रस्त कंपनियों की नगद आगम इतनी कम हो चुकी है कि अब इनके आधे से अधिक ऋणों को माफ करने से कम से काम नहीं चल पाएगा। एक मात्र अन्य विकल्प है ऋणों को अंश पूंजी में परिवर्तित करके कंपनी पर अधिकार कर उसे घाटे में बेच देना।

(5) **अनेक सहायतार्थ योजनाओं के बावजूद बैंक इन मामलों को निपटाने में कठिनाई अनुभव कर रहे हैं।** उनके समक्ष अन्य समस्याएं समन्वय के स्तर पर भी आ रही है। बड़ी ऋणी फर्मों ने अनेक स्रोतों से ऋण लिए है, उनके अपने-अपने हित हैं। यदि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक ऋणों में कोई बड़ी छूट देते हैं तो कई अन्वेषण ऐजेन्सियां उनकी जांच में जुट जाएंगी। किन्तु बड़ी कंपनियों का अधिग्रहण करना भी राजनीतिक दृष्टि से कम समस्यापूर्ण नहीं होगा।

(6) **देरी और अधिक महंगी सिद्ध होगी।** बैंक बड़े मामलों का समाधान नहीं कर पाते, इसीलिए वे ऋणि उपक्रमों को पुनःवित्तीयन करते जाते हैं। एक प्रकार से समस्या को और आगे धकेलते चले जाते हैं। किन्तु यह सरकार के लिए महंगा पड़ सकता है, क्योंकि बुरे ऋणों का बोझ तो बढ़ता ही जाएगा। अन्ततः सरकार को और अधिक बड़ा पुनःपूंजीकरण भार उठाना पड़ेगा। इसके साथ जुड़ी राजनीतिक लागते और भी बड़ी हो सकती हैं। देरी करना पूरी अर्थव्यवस्था के लिए भी महंगा सौदा होगा। इस झंझट में फंसे बैंक अब पर्याप्त साख नहीं दे पा रहे हैं और संकटग्रस्त फर्में अपने निवेश घटा रही हैं।

(7) **प्रगति के लिए PARA की आवश्यकता हो सकती है।** निजी परिसंपदा पुनःप्रतिष्ठापन कंपनियां (ARCs) भी इस समस्या का निपटान करने में बैंकों से अधिक सफल नहीं हो पायी हैं। किन्तु अंतर्राष्ट्रीय अनुभव बताते हैं कि सरकार द्वारा समर्थित एक व्यवसायिक आधार पर संचालित प्रबंधित केन्द्रीय ऐजेंसी भले ही उसकी अपनी भी कुछ समस्याएं हो, प्रगति को बाधित करने वाली इन समस्याओं पर (अधिक आसानी से) पार पा सकती है।

यहां तो जीडीपी संवृद्धि 9-10 प्रतिशत वार्षिक को छू रही थी। देश के इतिहास में पहली बार सब कुछ ठीक चल रहा था, निगम लाभ प्रदता विश्व के उच्चतम स्तरों में सम्मिलित थी, यह फर्मों को बड़ी उग्रता के साथ नियुक्तियां करने को विवश कर रही थी। परिणाम स्वरूप मजदूरी-वेतन में बहुत तेजी से वृद्धि हो रही थी। ऐसा लग रहा था कि भारत अन्ततः 1991 में प्रारंभ प्रयासों का पुरूस्कार पाने लगा है। वह प्रयास एक आधुनिक स्पर्धावान अर्थव्यवस्था की स्थापना के प्रयास थे। अगला कदम भी स्पष्ट दिखाई दे रहा था : देश शीघ्र ही चीन द्वारा प्रदर्शित उस पथ पर पहुँचने वाला था, जहां अनेक दशकों तक दो आंकड़ों की संवृद्धि दर सुनिश्चित रहेगी।

4.15 फर्में भी इसी के अनुसार अपनी योजनाएं बना रही थी। उन्होंने विद्युत उत्पादन, इस्पात, दूर संचार जैसे संरचनात्मक पूंजी उद्यमों में कई-कई लाख करोड़ के विराट प्रकल्पों का सूत्रपात किया। इससे देश के इतिहास में सबसे बड़ा निवेश उत्कर्ष प्रारंभ हुआ। केवल चार वर्षों की छोटी सी अवधि में निवेश जीडीपी अनुपात 11 प्रतिशत अंक उछलकर 2007-08 तक 38 प्रतिशत हो चुका था (देखें रेखाचित्र-5)।

4.16 इस निवेश उत्कर्ष का वित्त प्रबंध एक आश्चर्यजनक साख उत्कर्ष द्वारा किया गया था। यह भी देश के इतिहास में एक अभूतपूर्व अनुभव था। इसका आकार अंतर्राष्ट्रीय पटल पर चले किसी बड़े साख प्रसार के उफान से कम नहीं था। वर्ष 2004-05 से 2008-09 के बीच के तीन वर्षों में ही गैर खाद्य बैंक साख का परिमाण दुगुना हो गया। और, यह तो केवल बैंकों की साख उधार थी। विदेशों से भी बहुत बड़े धन प्रवाह आए थे, इस प्रकार प्राप्त विदेशी पूंजी प्रवाह 2007-08 में जीडीपी के 9 प्रतिशत का अंक छूने लगे थे। इन सबने मिलकर गैर वित्तीय निगमों के ऋणों में अभूतपूर्व वृद्धि कर दी थी। दूसरे शब्दों में दो अंकों में संवृद्धि के आकर्षण ने फर्मों को अपनी सतर्कतापूर्ण ऋण/अंशपूंजी अनुपात चिन्तन का त्याग कर निकट ही प्रतीत होने वाले सुअवसरों का लाभ उठाने को लालायित कर दिया था।

4.17 किन्तु जहां कंपनियां अधिक जोखिम उठाने की तैयारी कर रहीं थी उसी समय कुछ घटनाएं गलत दिशा की ओर मुड़ने लगीं। लागतें उनके बजट से बहुत आगे निकल गई; भूमि के प्रयोग और पर्यावरण संबंधी अनुमतियां मिलने में बहुत कठिनाइयां आने लगीं और समय लगने लगा। उसी समय विश्व वित्तीय संकट के कारण उन फर्मों द्वारा जिन आगम के पूर्वानुमानों के आधार पर काम का आरंभ किया गया था, वही ध्वस्त हो गया; जो प्रकल्प इस मान्यता के आधार पर प्रारंभ

रेखाचित्र 5 : सकल पूंजी निर्माण : सकल एवं निजी निगम क्षेत्र
(जीडीपी का प्रतिशत)

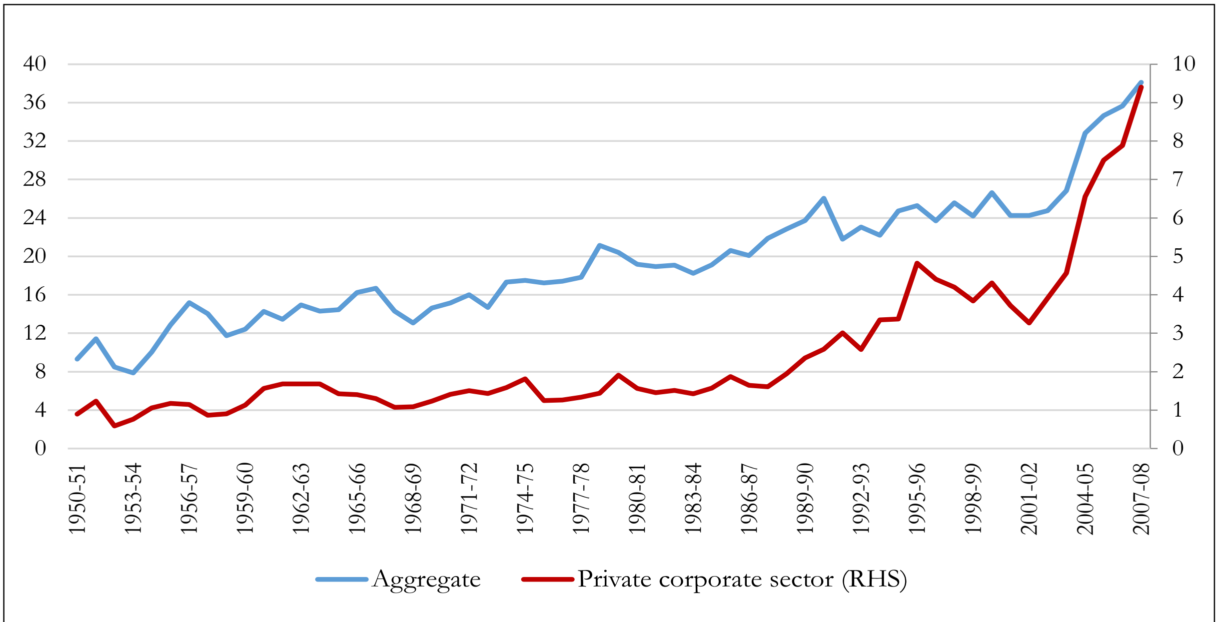

स्रोत: केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय।

किए गए थे कि दो अंकों पर ही संवृद्धि दर बनी रहेगी, उन्हें अचानक आधी संवृद्धि दर का सामना करना पड़ गया।

4.18 जैसे कि ये समस्याएं काफी नहीं थी, वित्त जुटाने की लागतें तेजी से बढ़ने लगीं। जब रिजर्व बैंक ने दो अंकों वाली स्फीति पर अंकुश लगाने के लिए ब्याज की दरों में वृद्धि की तो देश के आंतरिक वित्त तंत्र से उधार लेने वाली फर्मों की लागतें और अधिक हो गई। यही नहीं जिन फर्मों ने 40 रूपए प्रति डालर की विनिमय दर पर विदेशी ऋण उठाए थे, उन्हें 60–70 रूपए प्रति डालर की दर पर उन ऋणों को चुकाना बहुत ही भारी पड़ने लगा।

4.19 उच्चतर लागत, निम्नतर आगम, अधिक वित्तीय लागतें। इन सबने मिलकर निगमों के नकद प्रवाहों को सुखा ही डाला, उन्हें ऋणों पर ब्याज और किश्तें चुकाना कठिन होने लगा। वर्ष 2013 तक एक तिहाई निगम ऋण उन निगमों ने उठाया हुआ था, जो देय ब्याज के एक प्रतिशत से भी कम कमाई कर पा रहीं थी (IC1 कंपनियां) इनमें से बहुत सी तो संरचना उद्योगों (विशेषकर विद्युत उत्पादन) और धातु परिशोधन क्षेत्रकों में थीं। वर्ष 2015 आते-आते IC1 कंपनियों का अंश 40 प्रतिशत तक पहुँच गया। चीन की संवृद्धि दर धीमी होने से विश्व बाजार में इस्पात की कीमतें गिर गई, प्राय: सभी इस्पात कंपनियों को भारी हानि उठानी पड़ी। सरकार ने तुरंत कदम उठाते हुए इस्पात की न्यूनतम आयात कीमतें तय कर डाली, विश्व बाजार में इस्पात कीमत में कुछ सुधार होने पर भारत के इस्पात उद्योग को कुछ राहत मिली। फिर भी 2016 के अंत तक IC1 कंपनियों का ऋणों में अंश 40 प्रतिशत से अधिक ही बना रहा।

(ख) भारतीय अभिलक्षणों वाले दोहरे तुलन पत्र रोग की व्याख्या कैसे होगी?

4.20 दूसरे शब्दों में सामान्य विचार के विपरीत भारत ने चिर परिचित मार्ग का अनुसरण करते हुए ही अपनी दोहरी तुलन पत्र समस्या को प्राप्त किया, अर्थात, उधार में उछाल, उधार का अंश पूंजी से अत्यधिक होना और फिर ऋण एवं ब्याज चुकाने में कठिनाइयां। हां, भारत इस समस्या के प्रभाव के मामले में शेष देशों से अलग रहा है। भारत में भी तुलन पत्रों को इस अत्यधिक उधार से गंभीर आघात तो लगे हैं, किन्तु संवृद्धि पर इसका प्रभाव बहुत सीमित ही रहा है। विश्व वित्तीय संकट के उपरांत अमेरिका और यूरोप की भांति यहां दोहरी तुलन पत्र समस्या ने आर्थिक गतिहीनता की स्थिति तो पैदा नहीं की, न ही 1990 के दशक में जापान में बुलबुला फूटने पर हुए जैसे हालात पैदा हुए। इन सबके विपरीत यह समस्या सशक्त आंतरिक मांग के सहारे उच्च संवृद्धि दर के साथ सहअस्तित्व बना कर चलती रही। उच्च घरेलू मांग-संवृद्धि का क्रम बहुत दुर्बल निर्यात निष्पादन और सामान्य से तीव्र स्फीति के साथ-साथ चलता ही रहा। दूसरे शब्दों में, भारत ने दोहरी तुलन पत्र समस्या का अपना ही स्वरूप गढ़ लिया। आर्थिक समीक्षा ने इसी को भारतीय अभिलक्षणों सहित दोहरी तुलनपत्र समस्या का नाम दिया है।

4.21 तो फिर भारत के इस अद्वितीय अनुभव की व्याख्या क्या कर पाएगा? किसी सीमा तक तो, जैसे हमने भाग 'क' में भी बताया है, भारत की बैंक व्यवस्था की अनूठी रचना ने ही यह सुनिश्चित कर दिया था कि कोई वित्तीय संकट उत्पन्न नहीं हो। संरचनागत संरोधों के कारण विनिर्माण ही नहीं वाणिज्य और परिवहन जैसी सेवा क्षेत्रीय गतिविधियों के प्रसार में भी आती रही बाधाओं ने भारत में आपूर्ति संरोधों की प्रताड़ना को, बहुत समय से, बड़ा विकट स्वरूप मिला रहा है। उत्कर्ष काल में ये संरोध काफी नरम पड़ गए थे, नए विद्युत संयंत्र लगाए गए, नई सड़कों, हवाई अड्डों और बन्दरगाहों का निर्माण भी हुआ था। अत: वैश्विक वित्तीय संकट के बावजूद अर्थव्यवस्था के पास संवृद्धि की प्रचुर संभावनाएं विद्यमान थी, भले ही संरचना तंत्र में हुआ निवेश बहुत अर्थक्षम सिद्ध नहीं हो पाया था। अत: 2000-10 के एतिहासिक निवेश उत्कर्ष की थाती का रूप दोहरी तुलनपत्र समस्या और संवृद्धि का समन्वय रहा। इसकी तुलना में संयुक्त राज्य अमेरिका का उत्कर्ष तो गृह निर्माण पर आधारित था। संकट के बाद वह क्षेत्र अधिक उपयोगी नहीं रह पाया। वैसे भी अमेरिका ने कभी गंभीर आपूर्ति संरोधों को नहीं झेला था।

4.22 संभवत: भारत और अन्य देशों के बीच सबसे महत्वपूर्ण अन्तर तो निगमों द्वारा झेले जा रहे गंभीर संकट पर वित्त क्षेत्र की प्रतिक्रिया में निहित था। अन्य देशों में ऋणदाताओं का सहज व्यवहार ऋणि निगमों को दीवालिया घोषित कराकर एक नए संतुलन की स्थापना होता है। इससे अल्पकाल में संवृद्धि को आघात लगता

ही है (भले ही अर्थव्यवस्था की पुन:रचना दीर्घकालिक संभावना को उज्जवल बना देती है)। किन्तु भारत में ऐसा कुछ नहीं हुआ। यहां तो 'वक्त को कुछ और वक्त दो' की युक्ति अपनाई गई, अर्थात निगम क्षेत्र के जख्मों को भर जाने के लिए समय दिया गया। निगमों ने अपने ऋणदाताओं से ही वित्तीय रियायतें मांगी, मूल का पुन: भुगतान यह कह कर स्थगित करने का अनुरोध किया गया कि पर्याप्त समय मिल जाने पर प्रकल्प अन्तत: अर्थक्षम हो ही जाएंगे।

4.23 शुरू में तो यह अनुरोध उचित ही लगा था। पिछले व्यवसाय चक्रों में, 2000 के प्रारंभिक वर्षों में 'वक्त को वक्त' देने की युक्ति कारगर भी रही थी। उस समय भी निष्पादनहीन ऋणों का आकार बहुत बड़ा हो गया था, किन्तु कुछ ही वर्षों में मांग में सुधार के कारण कीमतों के सुधार के फलस्वरूप यह आकार स्वत: ही नियंत्रित हो गया था। यह ठीक ही लग रहा था कि इस बार भी ऐसा ही होगा, क्योंकि जिस संरचना क्षमता का निर्माण हो रहा था, उसकी अन्तत: भारत को आवश्यकता तो पड़ेगी ही। अत: बैंकों ने संकटासन्न फर्मों को और समय देने के लिए ऋण की वसूली स्थगित करनी प्रारंभ कर दी। यहां तक कि 2014-15 तक वे अपने बकाया ऋणों के 6.4 प्रतिशत भाग का 'पुनर्गठन' कर चुके थे (रेखाचित्र 6'क')। उन्होंने मांग के स्तर में सुधार तक की अवधि तक काम चलाने के लिए उक्त फर्मों को नए ऋण भी प्रदान किए।

4.24 अत: परिणाम यह हुआ है कि संकटग्रस्त परिसंपदाओं का मान निष्पादनहीन परिसंपदाओं से कहीं अधिक बढ़ा चढ़ा हो गया है। इसमें पुनर्गठित ऋणों तथा IC1 निगमों की वह देयताएं भी जोड़ी जानी चाहिए, जिन्हें अभी तक संकटग्रस्त नहीं माना गया है। उन ऋणों को तो बैंक 'निरंतर हरित' (Evergreen) किए जा रहे हैं। यहां बैंक फर्मों को पुराने ऋणों पर ब्याज चुकाने के लिए नए ऋण प्रदान कर रहे हैं। बाजार विश्लेषक मानते हैं कि ये ऋण नहीं मानी जा रही राशियां भी बैंकों द्वारा दिए गए कुल उधार का 4 प्रतिशत (सरकारी बैंकों के संदर्भ में तो 5 प्रतिशत) तक पहुँच चुकी है। ऐसी अवस्था में संकटग्रस्त ऋण परिसंपदाएं 16.6 प्रतिशत हो जाती है। सरकारी बैंकों के लिए तो इनका मान लगभग 20 प्रतिशत आंका जा रहा है (रेखाचित्र 6ख)[2]।

4.25 अनेक प्रकार से भारत का रास्ता चीन से मिलता जुलता लगता है। हां, इसका स्तर बहुत छोटा है, क्योंकि भारत में निष्पादनहीन बुरे ऋणों का आकार चीन के आकार का मात्र 1/7 हिस्सा है। दोनों देशों ने बुरी तरह ऋणग्रस्त कंपनियों को उदारतापूर्वक बैंक वित्त सुलभ कराया है और दोनों देशों की यह युक्ति तीव्र संवृद्धि दर को बनाए रखने में अभी तक तो सफल रही है। किन्तु यह प्रश्न अभी खड़ा हुआ है कि क्या यह प्रतिमान सचमुच धारणीय सिद्ध होगा?

रेखाचित्र 6क : पुन: रचित ऋण अनुपात (सकल ऋणों का %)

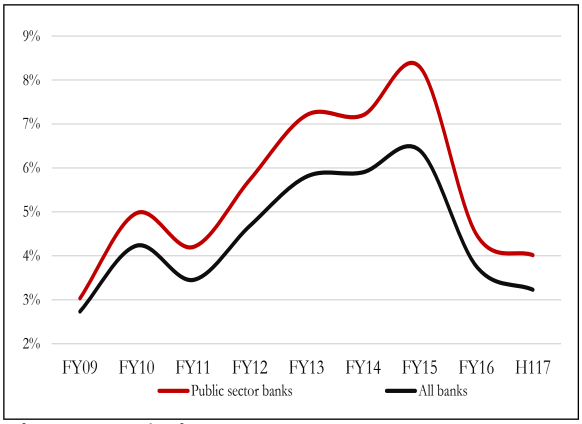

रेखाचित्र 6ख : सकल आपदा भार (%)

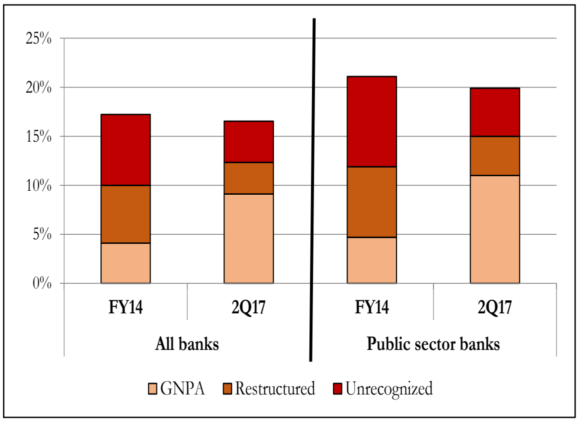

स्रोत: आरबीआई, क्रेडिट स्यूएस द्वारा आंकलित मान्यतारहित दबावग्रस्त आस्तियों को छोड़कर।

[2] पुनर्गठित परिसंपदाओं में 2014-15 में केवल इसलिए कमी आ गई थी कि इन अनुबंधों के बाद उन ऋणग्रस्त कंपनियों को अनुपालन नहीं करना पड़ा, बैंकों ने और अधिक ऋणों को निष्पादनहीन घोषित करना प्रारंभ कर दिया।

तालिका 1 : अनुमानित निष्पादनहीन ऋण

	भारत	चीन	भारत	चीन
	1998-99	**2002**	**2016@**	**2015**
सकल + बिलियन	14.0	209.1	191.1	1300
सकल ऋणों का प्रतिशत	14.7	23.4	16.6^	15.5
जीडीपी का प्रतिशत	3.0	14.4	8.4	12.0
बैंक साख (जीडीपी अनुपात)	20.5	108#	53.4*	137.5**

स्रोत: **आईएमएफ, आरबीआई, क्रेडिट सूइएस प्राक्कलन।**

@सितंबर 2016 तक उपलब्ध आंकड़े के अनुसार। ^: कुल दबाव वाले ऋणों में एनपीए, पुनर्संरचित ऋण और अमान्य दबावग्रस्त ऋण शामिल है; * मार्च 2016 की स्थिति के अनुसार, आरबीआई से प्राप्त उद्योग विषयक आंकड़े में बकाया ऋण का इस्तेमाल करते हुए; # ''मनी एंड क्रेडिट: चाइना सोशल फाइनेंशियल'', यारडेनी रिसर्च, इन्क, नवंबर 2016 में यथावर्णित पीपुल्स बैंक आफ चाइना; **पीआरसी 2016 आर्टिकल। IV कन्सलटेशन, आईएमएफ।

II. क्या यह युक्ति धारणीय है?

4.26 सिद्धांत रूप से तो एक वित्तीयन युक्ति धारणीय हो सकती है। किन्तु इसके लिए दो में से एक बात अवश्य सत्य सिद्ध होनी चाहिए। 'पुनर्उत्थान' परिदृश्य के अंतर्गत संवृद्धि दर में तीव्रता धीरे-धीरे 'संकटासन्न' फर्मों के पास आने वाले नकदी के प्रवाह को सुधार देगी और वे अपनी ऋण संबंधी देनदारियां चुका पाएंगी। दूसरे शब्दों में, भारतीय अर्थव्यवस्था की अंतर्निहित गतिशीलता ही क्षतिग्रस्त कंपनियों और बैंकों के भार को तब तक ढ़ोती रहेगी, जब तक कि आर्थिक गतिविधियों का 'ज्वार' सभी किश्तियों के लिए मंदी के पथरीले जल क्षेत्र को पार करने योग्य नहीं बना देता।

4.27 दूसरी या वैकल्पिक परिस्थिति ऐसी हो सकती है कि जिसमें सभी प्रकल्प वैयक्तिक स्तर पर तो अर्थक्षम नहीं बन पाएंगे किन्तु भारत की अर्थव्यवस्था अवश्य इस तुलनपत्र समस्या से उबर जाएगी। यहां 'समस्या परिसीमन' की विधि में निष्पादनहीन परिसंपदाओं को मौद्रिक रूप में नामांकित किया जा सकता है। एक बार यह काम हो गया तो इनके परिमाण जीडीपी एवं बैंक तुलनपत्रों के अंश के रूप में शीघ्र ही सिकुड़ते दिखाई देंगे, क्योंकि मौद्रिक जीडीपी में तो 10 प्रतिशत से अधिक दर पर वार्षिक वृद्धि हो रही है। इस प्रकार यह दोहरी तुलन पत्र समस्या वास्तव में समाप्त तो नहीं होगी, किन्तु इसका महत्व विलुप्त प्राय: हो जाएगा।

4.28 कुछ समय तक तो ये दोनों ही परिदृश्य व्यवहारिक प्रतीत हो रहे थे। वर्ष 2012 से लेकर मध्य 2015 तक तो IC1 कंपनियों की ब्याज एवं कर पूर्व आय (EBIT) प्रति तिमाही रू. 25000 करोड़ पर टिकी हुई थी।[3] इससे यही आशा बलवती हो रही थी कि कम से कम 'परिसीमन' परिदृश्य तो उभर ही आएगा। किन्तु अभी कुछ ही समय पर यह चित्र बहुत ही नाटकीय रूप से बदल गया है। वर्ष 2015 के अंत तक यह EBIT मात्र रू. 20000 करोड़ प्रति तिमाही रह गई। सितंबर 2016 में तो धातु क्षेत्र में कुछ सुधार आया किन्तु शेष संरचना क्षेत्र के भारी गिरावट से यह त्रैमासिक EBIT गिरकर मात्र रू. 15000 करोड़ रह गई। दूसरे शब्दों में, संकटग्रस्त कंपनियों की नकद आगम, जो 2014 में भी ऋण पर ब्याज चुकाने के लिए पर्याप्त नहीं थी, में और 40 प्रतिशत की गिरावट हो गई। यह भी दो वर्ष से कम समय में।

4.29 इन कंपनियों को कार्य करते रहने के लिए भी भारी ऋण उठाने पड़े हैं। यदि 10 सर्वाधिक संकटग्रस्त समूहों के ऋणों पर ध्यान दें तो उनमें अत्यधिक तीव्र दर पर वृद्धि दिखाई दे रही है, पिछले 6 वर्षों में ये तीन गुना हो गए हैं (रेखाचित्र 7)। इसका सहज परिणाम है कि उनकी ब्याज की देनदारी में भी तीखी वृद्धि हुई है।

4.30 अत: संकटग्रस्त कंपनियों की कठिनाइयां बढ़ती जा रही है। उनके नकद प्रवाह सूखते जा रहे हैं और ब्याज दायित्वों में उछाल आ रहा है। यदि इन

[3] ये तीन तथा अगले 5 अनुच्छेदों के आंकड़े क्रेडिट स्विस आंकड़ा आधार से लिए गए हैं।

रेखाचित्र 7 : दस शीर्ष संकटग्रस्त निगमों के ऋण भार (रूपए बिलियन)*

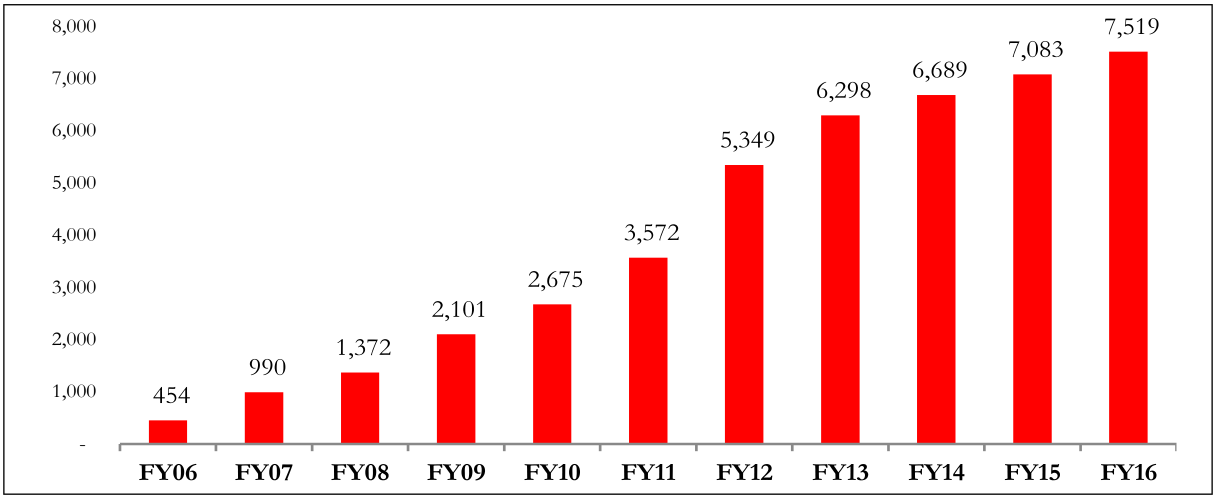

स्रोत : **Credit Suisse आंकड़ा आधार। *बैंक ऋण, बाँड, बाहरी व्यापारिक ऋण और अन्य ऋणों सहित।**

परिस्थितियों में वे और अधिक उधार उठाती हैं तो यह नकद प्रवाह और ब्याज दायित्व की खाई और अधिक चौड़ी हो जाएगी। कुछ मामलों में कंपनियों ने अपने व्यवसाय का कुछ अंश बेचकर काम चलाने का प्रयास किया है, किन्तु इस प्रकार तुरंत प्राप्त नकदी से अस्थायी राहत ही मिल सकती है, फर्मों के पास भविष्य में ऋण चुकाने के निमित्त आगम के स्रोत और सीमित रह जाते हैं। यही नहीं, यह कदम बहुत कम कंपनियों के लिए ही अल्पकालिक राहत ला पाया है। संकटग्रस्त कंपनियों की सकल वित्तीय अवस्था से तो निरंतर रक्त बह कर जा रहा है। इनकी हानियां (ब्याज की देयता और मूल्य ह्रास तथा कर भार EBIT तथा परिसंपदा विक्रय से प्राप्त राशियों से अधिकता) अब लगभग रू. 15000 करोड़ त्रैमासिक हो गई है। दो वर्ष पूर्व तो ये फिर भी थोड़ा सा लाभ दिखा पा रहीं थीं।

4.31 विद्युत क्षेत्र की दशा अधिक व्यापक स्तर पर छायी हुई समस्या का बहुत अच्छी तरह वर्णन कर देती है। दूसरे खंड में चर्चित आघातों ने नए विद्युत संयंत्रों की लागतों को अनुमान से डेढ़ गुना तक पहुंचा दिया। कुछ मामलों में तो यह लागत वृद्धि और भी अधिक रही है। इन लागतों का वहन करने के लिए इन संयंत्रों को अपनी सारी सृजित विद्युत की बिक्री उच्चतम दर पर करनी चाहिए। किन्तु हो इसके एकदम विपरीत रहा है।

- संयंत्र निष्पादन दर, अर्थात स्थापित क्षमता के अनुपात में वास्तव में बिजली की उत्पादन दर बहुत कम ही नहीं है, इसमें निरंतर गिरावट आ रही है। पिछले वर्ष के 62 प्रतिशत की तुलना में यह अप्रैल-दिसंबर 2016 में घटकर मात्र 59.6 प्रतिशत रह गई थी।
- यही नहीं, विक्रेता द्वारा देय विद्युत दर भी ताजा बाजार में गिरकर रू. 2.5/kwh रह गई है। यह उन संयंत्रों की अपनी अर्थक्षम उत्पादन लागत रू. 4/kwh से बहुत कम है, जबकि कितने ही संयंत्रों को चलाने के लिए तो रू. 8/kwh पर बिजली की बिक्री होनी चाहिए।[4]

8.32 परिणाम स्वरूप अधिकांश निजी विद्युत उत्पादों को प्राप्य नकद प्रवाह उनके ब्याज भुगतान को भी पूरा नहीं कर पा रहे। दूसरे शब्दों में इन कंपनियों का 60 प्रतिशत से अधिक देय ऋण इन्हें IC1 कंपनियों की सूची में ले जाता है। साथ ही अभी तो क्षितिज पर PLF (संयंत्र प्रयुक्ति अनुपात) और विक्रय दरों में सुधार की कोई आशा भी नहीं दिखाई दे रही।

4 यह ठीक है कि विद्युत क्रय अनुबंधों के अनुसार बहुत सा विद्युत उत्पादन तो कहीं उच्चतर दीर्घकालिक कीमत पर बिक जाता है, किन्तु कई मामलों में तो ये दरें भी लागतों से कम रहती हैं। यही नहीं PPA के अधीन खरीदी गई बिजली का अनुपात गिर रहा है। राज्य विद्युत बोर्ड तत्काल या ताजा बाजार से सस्ती दर पर खरीदारी को बेहतर मान रहे हैं, वहां इसकी प्रचुर मात्रा भी सुलभ है। ध्यान रहे कि यदि संयत्र लगाने की लागतों में वह वृद्धि नहीं हुई होती तो अधिकांश नए संयंत्रों को लाभप्रद बनाए रखने के लिए रू. 3/kwh की बिक्री दर ही पर्याप्त होती।

4.33 इसी समय निगमित क्षेत्र में संकट का और विस्तार भी हो रहा है। वैश्विक वित्तीय संकट के बाद से बहुत समय तक तो समस्याएं उन्हीं बड़ी कंपनियों तक सीमित थी, जिन्होंने 2000-10 के दशक में बहुत भारी ऋण उठा लिए थे। किन्तु अधिक सावधानीपूर्वक काम कर रही छोटी, और मध्यम आकार की कंपनियां प्राय: अपनी ब्याज की देनदारियां नियमित चुका रही थी। लेकिन 2016 के उत्तरार्द्ध में एक चौंकाने वाली बात उभर कर आई। इस अवधि में निष्पादनहीन परिसंपदा वृद्धि का 80 प्रतिशत अंश मध्यम एवं MSME उद्यमों का 'योगदान' था। छोटे उद्यमी तो वर्षों से कम बिक्री और लाभ को सहन करते हुए भी ऋण चुकाने में नियमित बने हुए थे। इस वर्ष 2017 में भी यही क्रम चलने की आशा है।

4.34 अब संकट की छाया दूरसंचार क्षेत्र पर भी मंडराने लगी है। यहां नई आई फर्मो ने स्पर्धा में वृद्धि कर ब्याज अर्जन क्षमता को घटा दिया है (बड़े स्तर पर कंपनियां कीमतें कम करने को बाध्य जो हो रहीं हैं। कुल मिलाकर स्थिति यह है : निगम क्षेत्र पर दबाव के बादल न केवल गहरा रहे हैं, ये और व्यापक भी हो रहे हैं।

4.35 एक अन्य कारण से भी लगता है कि अर्थव्यवस्था अपने इन ऋणों से उबर नहीं पाएगी : अब यह समस्या संवृद्धि पर भी आघात करने लगी है। पहले भाग में भी हमने ध्यान दिया था कि दोहरी तुलनपत्र समस्या वाले देशों में संकटग्रस्त कंपनियां अपने नकद प्रवाहों को बचाए रखने के प्रयास में निवेश में कटौतियां करने लगती हैं तो दूसरी ओर संकटग्रस्त बैंक नए उधार देने की जोखिम नहीं उठाना चाहते (देखें डेल ऐरिक्किआ आदि, 2012)[5] और यही अब भारत में भी होने लगा है। उत्कर्ष काल में आकाश छू रहा निजी निवेश घटकर 2010-11 आते-आते मात्र 5 प्रतिशत रह गया। वर्ष 2015-16 तक तो इसमें वास्तव में संकुचन ही प्रारंभ हो गया था और अभी 2016-17 में इसमें 7 प्रतिशत संकुचन हो चुका है (रेखाचित्र 8)[6]। समस्त अर्थव्यवस्था को इसके दुष्प्रभाव से बचाने के लिए सार्वजनिक निवेश में बहुत वृद्धि की गई है, किन्तु वह सकल निवेश में गिरावट को थामने के लिए पर्याप्त नहीं है।

4.36 अल्पकाल में तो उपभोग के सहारे भी अर्थव्यवस्था तेजी से संवृद्धिशील रह सकती है, फर्में उत्कर्षकाल में सृजित उत्पादन क्षमता का प्रयोग करते हुए मांग को पूरा कर सकती है। किन्तु मध्यमकालिक दृष्टि से तो निवेश में गिरावट की प्रक्रिया को पलटना ही पड़ेगा।

रेखाचित्र 8 : वास्तविक सकल अचल पूंजी निर्माण में वृद्धि (प्रतिशत)

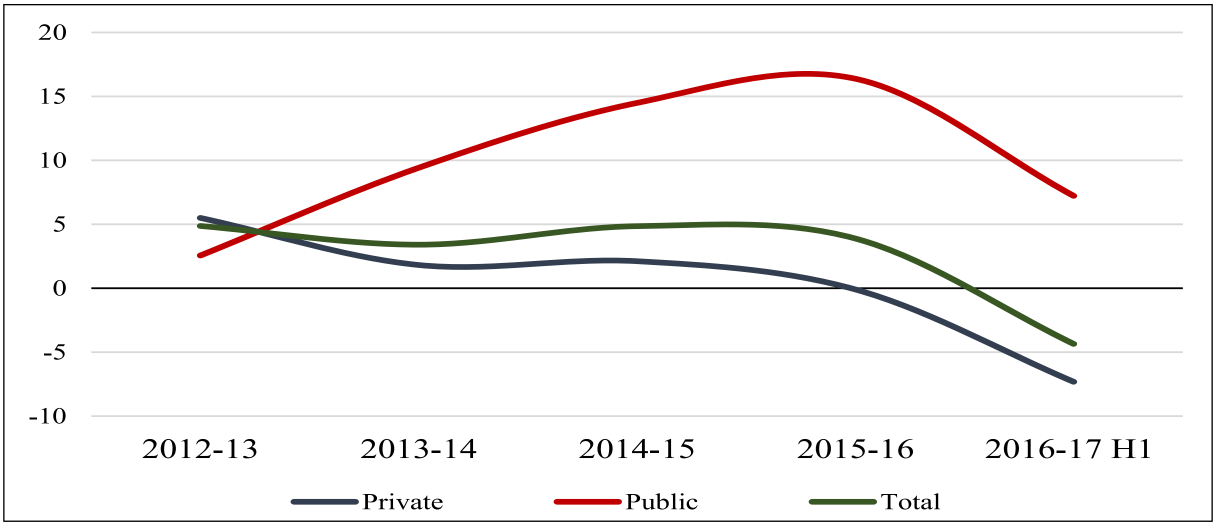

***स्रोत:* वित्त मंत्रालय द्वारा की गई गणना**

5 डेल आदि ने पाया है कि 5 में से 3 साख उत्कर्ष कालों में उनके अंत के 6 वर्ष बाद तक संवृद्धि दरें अपने सामान्य प्रवृत्ति स्तरों से कम ही बनी रहीं। इन वर्षों में संवृद्धि दरें सामान्य अवधियों की अपेक्षा 2.2 प्रतिशत अंक निम्न आंकी गई हैं।

6 यह जानकारी राज्य एवं संघीय सरकारों के बजटों पर आधारित है।

4.37 यही नहीं, इस समय दोहरी तुलन पत्र 'व्यवस्था' सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के स्वास्थ्य के लिए बहुत घातक सिद्ध हो रही है। कम से कम 13 ऐसे बैंक, जिन्होंने सकल ऋणों का 40 प्रतिशत अंश फर्मों को प्रदान किया हुआ है, अब भीषण संकट से ग्रस्त हो रहे हैं। उनके 20 प्रतिशत ऋण अब पुन:रचित अथवा निष्पादनहीन[7] वर्ग में पहुंच चुके हैं। उनके निवेश पत्र भंडार के इतने बड़े अंश की दुर्दशा के कारण उनके लिए अपने कार्य चलाने तथा जमाकर्ताओं को ब्याज चुकाने की लागतें कमा पाना कठिन होता जा रहा है। प्राय: विश्व भर में बैंक परिसंपदा की प्रतिप्राप्ति (ROA) की दर 1.5 प्रतिशत रहने पर आराम से काम करते रहते हैं। इसे रेखाचित्र 9'क' में लाल रेखा द्वारा दिखाया गया है। किन्तु भारत के सरकारी बैंक तो इस अंतर्राष्ट्रीय मानक दर से बहुत नीचे रह जाते हैं। वस्तुत: उनकी ROA पिछले दो वर्षों में ऋणात्मक हो चली है। परिणाम स्वरूप अब निवेशकर्ता उनके शेयरों के लिए पूरी कीमत चुकाने को भी तैयार नहीं होते। ये शेयर कीमतें उनके लेखा मूल्यांकन (बुक वैल्यु) के दो तिहाई के समान रह गई हैं (देखे रेखाचित्र 9'ख')।

4.38 सरकारी बैंकों ने अपनी वित्तीय कठिनाईओं पर मानक प्रतिक्रिया दिखाई है। अपनी पूंजी स्थिति को बनाए रखने के लिए उन्होंने नए जोखिम लेना कम कर दिया है, अर्थात अब वे आगे उधार देने से बच रहे हैं। इस साख की कमी का कुछ अंश तो निजी बैंक पूरा कर रहे हैं, किन्तु उनका आकार सरकारी बैंकों की तुलना में बहुत छोटा होने के कारण वे इस साख प्रसार का पूरा दायित्व तो नहीं उठा पा रहे। परिणामस्वरूप निगम क्षेत्र को प्रदत्त कुल साख में निरंतर कमी आ रही है। वास्तविक रूप में तो अब साख की वृद्धि दर नकारात्मक हो चुकी है। यह पिछले 23 वर्षों के न्यूनतम साख स्तर को दर्शा रही है (रेखाचित्र 10)।

4.39 इस धीमे किन्तु निरंतर चल रहे साख संकुचन के प्रभाव अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रकों में पृथक-पृथक रहे हैं। गृहस्थों को ऋणों में अत्यधिक तेजी से वृद्धि हुई है। यह ऐसा साख प्रसार है, जहां मूल और ब्याज के मारे जाने की संभावना न्यूनतम होती है। यहां निजी बैंकों को एक तुलनात्मक लाभ भी प्राप्त रहता है। परिणाम स्वरूप ऋणों के सहारे उपभोग का प्रसार बहुत तेजी से हो रहा है। कृषि क्षेत्र को साख का प्रसार तो वरीयता साख की अनिवार्यता से बंधा होने के कारण अच्छी संवृद्धि दिखा ही रहा है। किन्तु निगम और MSMEs वर्ग को गहरा आघात लगा है। वर्ष 2014-15 में MSMEs को ऋणों की वास्तविक वृद्धि में बहुत कमी आई है और पिछले दो वर्षों में तो यह नकारात्मक ही हो गई है (रेखाचित्र 11'क')। इसी समय बड़ी कंपनियों को ऋण प्रदान करने में तेजी ही बनी रही। कारण यही था कि उन्हें बंद होने से रोकने की रणनीति पर चला जा रहा था, किन्तु वित्त

रेखाचित्र 9क : सार्वजनिक बैंक परिसंपदाओं प्रतिप्राप्ति (ROA) प्रतिशत

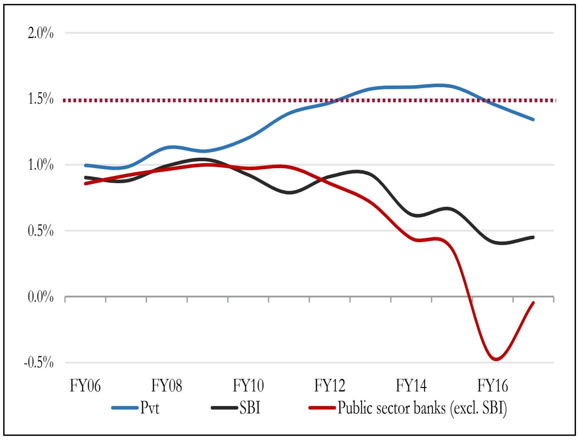

स्रोत: वित्त मंत्रालय

रेखाचित्र 9ख: सार्वजनिक बैंक : बाजार पूंजीकरण का खाता मूल्य से अनुपात

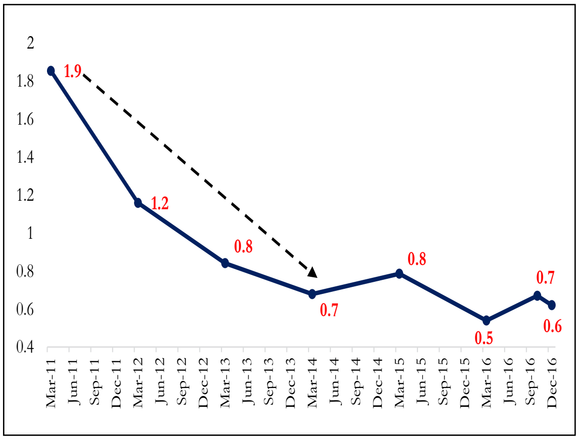

स्रोत: वित्त मंत्रालय

7 अमान्य या 'सातत्य' ऋणों को छोड़कर

रेखाचित्र 10 : उद्योगों को ऋणों में वास्तविक वृद्धि (CPI-IW तथा WPI की औसत द्वारा अपस्फायित)*

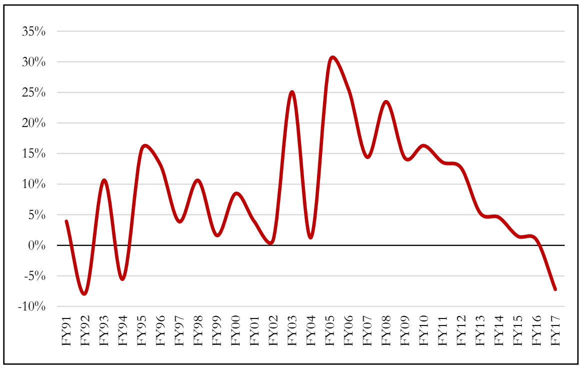

*वित्त वर्ष 2017 की जानकारी नवंबर 2016 के अंत तक की ही है।

वर्ष 2016-17 में इन्हें प्रदत्त साख की संवृद्धि दर भी वस्तुत: ऋणात्मक हो चुकी है (रेखाचित्र 11'ख')।

4.40 सरकारी बैंकों ने अपनी वित्तीय कठिनाइयों पर एक अन्य मानक प्रतिक्रिया भी दोहराई है। उन्होंने निष्पादनहीन परिसंपदाओं पर हो रहे घाटे की भरपाई करने के लिए ब्याज दरों के बीच के फैलाव को बढ़ा दिया है (रेखाचित्र 12)। उदाहरण के लिए दिसंबर 2016 होते-होते और सावधिक जमा दर और औसत आधार दर के बीच का अंतर जनवरी, 2015 के 1.6 प्रतिशत अंक से बढ़कर 2.7 प्रतिशत अंक हो गया था। वस्तुत:

रेखाचित्र 11क : वास्तविक ऋण वृद्धि* MSME एवं निगम

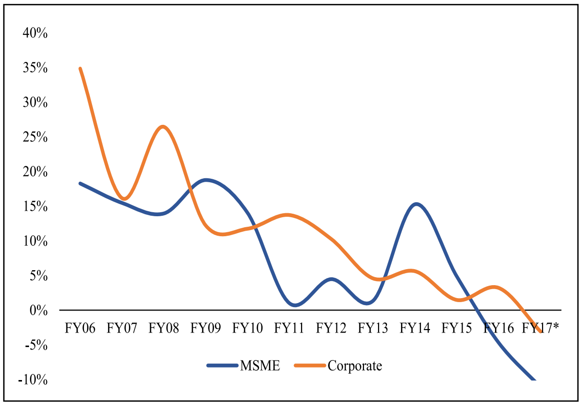

रेखाचित्र 11ख : वास्तविक ऋण वृद्धि* संकटासन्न एवं गैर संकटासन्न

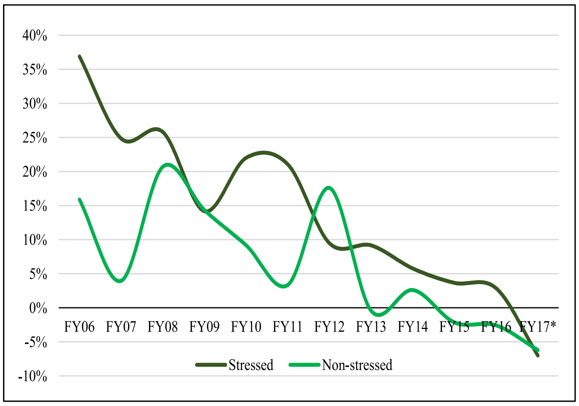

स्रोत : **RBI,* CPI तथा WPI की औसत द्वारा अपस्फायित, वित्तवर्ष 2017 के आंकड़े नवंबर 2016 के अंत तक। निगम एवं विनिर्माण एवं सेवा सम्मिलित। संकटग्रस्त उद्योग हैं : खनन, वस्त्र, आधारिक धातुएं, रत्न एवं आभूषण, निर्माण, संरचना।**

रेखाचित्र 12 : रैपो, आधार उधार दर और सावधिक जमा पर ब्याज दर (प्रतिशत)

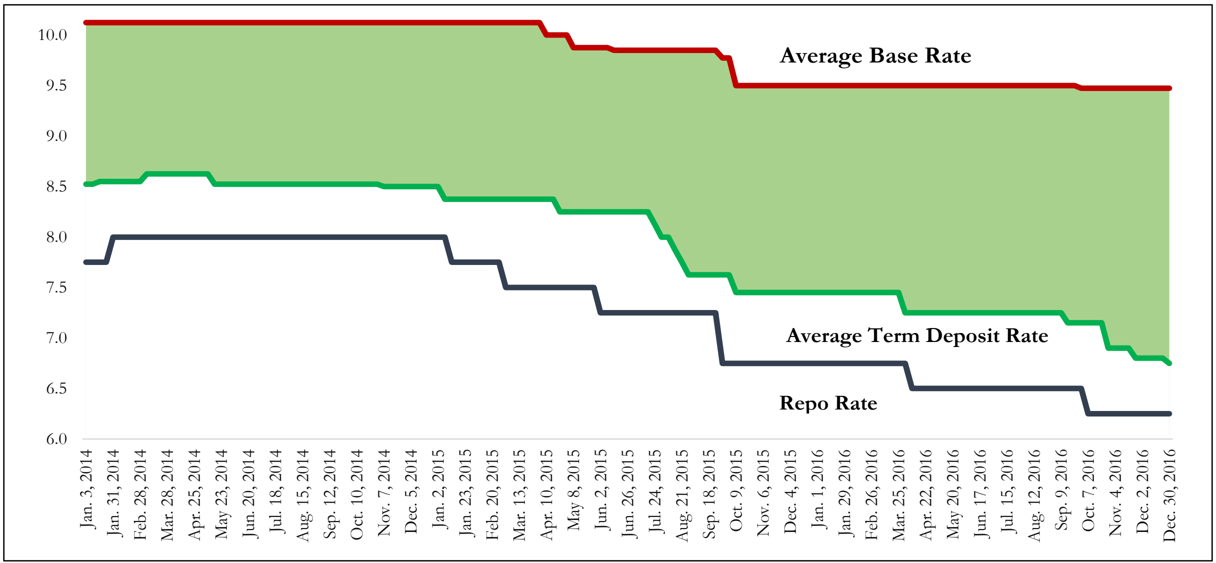

स्रोत : **RBI. आधार दर सभी बैंकों की औसत है। सावधि जमा दर एक वर्ष से अधिक अवधि की जमाएं हैं।**

विमुद्रीकरण के परिणाम स्वरूप अपने पास आए नकदी के प्रवाह में अप्रत्याशित वृद्धि के बाद ही बैंकों ने ऋणों पर ब्याज की दरों में कुछ महत्वपूर्ण कटौतियां प्रारंभ की हैं।

4.41 इस अन्तर में विस्तार ने बैंक व्यवस्था से जुड़े विमध्यस्थीकरण को बढ़ावा दिया है। इस विस्तार का अर्थ है कि अब निष्पादनहीन उधार लेने वालों को सब्सिडी देने के लिए निष्पादक जमाकर्ताओं और उधार लेने वालों पर 'कर' लगाया जा रहा है। विवश होकर अच्छे उधारकर्ता कहीं अन्य से ऋण पाने का प्रयास कर रहे हैं : अल्पकालिक आवश्यकता के लिए व्यापारिक पत्रक बाजार तथा दीर्घकालिक के लिए बांड बाजार के दरवाजे खटखटाएं जा रहे हैं (रेखाचित्र 13)। इसे किसी रूप में एक वांछनीय कार्य भी माना जा सकता है, क्योंकि इससे देश के पूंजी बाजारों का विकास हो रहा है। किन्तु यदि यह विमध्यस्थीकरण चलता रहा तो उस कर का सारा भार MSMEs पर भी पड़ने लगेगा। उन्हें बांड बाजार में जाने की अनुमति नहीं होती (और उन्हें उधार दाता की आवश्यकता रहती है जो उनके प्रकल्पों का सही मूल्यांकन भी कर लें, ऐसा बैंक ही कर पाते हैं)। इस प्रवृत्ति से बैंकों की जोखिम और अधिक हो सकती है। उनके पास से अच्छे ऋणकर्ता पलायन कर जाएंगे और उनके पास अधिक जोखिम भरे मध्यम/छोटे उद्यमी ही बच रहेंगे।

चित्र 13: सांकेतिक कार्पोरेट बैंक क्रेडिट, कार्पोरेट बॉन्ड्स, और वाणिज्यिक पत्र में वृद्धि (प्रतिशत)

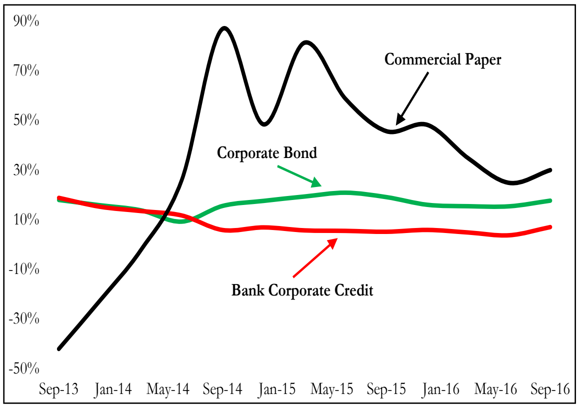

स्रोत: क्रेडिट स्यूएस

4.42 संक्षेप में कहें तो, कुछ वर्षों तक तो यह वित्तीयन युक्ति कारगर रही है, इसने महत्वपूर्ण दोहरी तुलनपत्र समस्या के बावजूद भारत को अपनी संवृद्धि दर को उच्च स्तर पर बनाए रखने में सहायता दी है। किन्तु अब यह युक्ति अपनी प्रभावोत्पादकता की सीमा पर पहुँच रही है। आठ वर्ष तक का समय दिए जाने के बाद भी उन कंपनियों के स्वास्थ्य में कोई सुधार होता नहीं दिखाई दे रहा। वस्तुत: बुरे ऋणों की समस्या की गंभीरता में कमी के लक्षण भी नहीं दिख रहे। इस अपेक्षा के विपरीत निगमों और बैंकों पर दबाव में वृद्धि ही हो रही है और इसके निवेश एवं साख प्रवाह पर प्रभाव स्पष्टत: मापनीय रूप धारण कर रहे हैं। यही नहीं, समष्टि स्तरीय उत्प्रेरण प्रदान करने के प्रयास भी अपर्याप्त सिद्ध हो रहे हैं : सार्वजनिक निवेश में वृद्धि से कहीं अधिक निजी निवेश की कटौती रही है। विमुद्रीकरण से प्राप्त हुई धन राशियां भी ऋण-जमा अंतर के प्रसार के कारण उद्यमियों तक नहीं पहुँच पाई। इन परिस्थितियों में यह अधिकाधिक स्पष्ट हो रहा है कि यह समस्या भारत के संवृद्धि पथ को ही विचलित कर दे उससे पहले इस ऋण समस्या का समाधान करना ही होगा।

III. क्या करना आवश्यक है?

4.43 संकटासन्न परिसंपदाओं की समस्या से जूझने के लिए पिछले कुछ वर्षों में रिजर्व बैंक ने कई प्रक्रियाएं प्रारंभ की हैं (देखें परिशिष्ट)। प्रारंभिक कदम तो फर्मों को ऋण चुकाने के लिए अधिक समय प्रदान करना था। किन्तु जब यह स्पष्ट हुआ कि संकटग्रस्त फर्मों की दशा तो और खराब हो रही है तो रिजर्व बैंक ने उनकी ऋणशोध क्षमता के प्रश्न से संबंधित प्रक्रियाओं का भी सूत्रपात किया है।

4.44 इनमें से तीन प्रक्रियाएं विशेषरूप से महत्वपूर्ण हैं। कुछ समय से रिजर्व बैंक निजी परिसंपदा पुन:निर्माण कंपनियों (ARCs) की स्थापना पर बल दे रहा है। इसे आशा है कि ये कंपनियां व्यापारिक बैंकों के बुरे ऋण उनसे खरीद लेंगी। इस प्रकार दक्षतापूर्ण 'श्रमविभाजन' होगा, बैंक अपने परंपरागत जमा लेने और उधार देने के कार्यों पर केन्द्रित रह सकेंगे और निगम ऋणों की पुन: रचना करने के लिए ARCs विशिष्ट कौशल संपन्न व्यक्तियों को दायित्व सौंप सकेंगी।

4.45 किन्तु इस युक्ति को बहुत सीमित सफलता मिली है। बहुत सी ARCs का गठन तो हुआ है, किन्तु इन्होंने समस्या के बहुत ही छोटे से हिस्से का समाधान किया है। ये 2014-15 और 2015-16 के खाता मूल्य पर मात्र 5 प्रतिशत निष्पादनहीन परिसंपदाओं को खरीद पाई है। समस्या यही है कि ARCs भी ऋणी निगमों से अधिक कुछ वसूल नहीं कर पा रहीं। अत: वे बैंकों को ही और निम्नतर कीमतें चुकाना चाहती हैं, किन्तु बैंक वे निम्न कीमतें स्वीकार नहीं कर पा रहे।

4.46 अत: अभी-अभी रिजर्व बैंक ने दो अन्य उपायों पर ध्यान दिया है : ये हैं बैंक आधारित कार्य विधियां। जून 2015 में युक्ति युक्त ऋण पुन:रचना (SDR) योजना प्रारंभ की गई। इसके अंतर्गत ऋणदाता ऋणी फर्मों का अधिग्रहण कर उन्हें किन्हीं अन्य उद्यमियों को बेच सकते हैं। अगले वर्ष दूसरी योजना आरंभ की गई। यह है : संकटासन्न परिसंपदाओं की धारणीय पुन:संरचना योजना (S4A)। इसके अंतर्गत ऋणदाता आधी तक देनदारी माफ कर ऋणी निगमों की वित्तीय धारण क्षमता की पुन:स्थापना कर सकते हैं।

4.47 सिद्धांत रूप से ये योजनाएं मिलकर ऋणशोधन से जुड़ी समस्याओं के पूर्ण समाधान की विधि की रूपरेखा प्रदान कर सकती हैं। किन्तु इनकी सफलता बहुत सीमित रही है। मात्र दो दर्जन फर्मों ने SDR के अंतर्गत विचार विमर्श प्रारंभ किया है और केवल दो मामलों का निपटान दिसंबर 2016 तक हो पाया है। दूसरी विधि S4A ने भी केवल एक मामले का समाधान किया है।

4.48 इतनी धीमी प्रगति के कई कारण हैं। एक तो यही कि ये योजनाएं बहुत नई हैं और वित्तीय पुन:रचना पर वार्तालाप या सौदेबाजी में बहुत समय लगता है। किन्तु कहीं बड़ी समस्या तो यह है कि समाधान के लिए आवश्यक तत्व अभी पूरी तरह से उपलबध ही नहीं हैं :

- हानि को स्वीकार करना। AQR की स्थापना का लक्ष्य बैंकों को उनकी वस्तु स्थिति से अवगत कराना था। किन्तु बैंक तो उन ऋणों को निरंतर हरित किए जा रहे हैं। अभी तक अचिन्हित रहे संकटासन्न परिसंपदा अनुमानों से यही बात स्पष्ट हुई है।
- समन्वय। रिजर्व बैंक ने ऋणदाताओं को एक मंच 'संयुक्त ऋणदाता मंच'' पर एकत्र होने को प्रोत्साहित कर रहा है। यहां 75 प्रतिशत ऋण राशियां दे चुके बैंक, जो कुल ऋणदाता बैंको की संख्या का 60 प्रतिशत भी हों मिलकर निर्णय कर सकते हैं। किन्तु इन मंचों पर सहमति तक पहुँचना कठिन रहा है, विभिन्न बैंकों द्वारा प्रदत्त साख के अनुपात अलग-अलग हैं, उनके पूंजी आधार और संप्रेरणाओं में भी अंतर हैं। उदाहरण के लिए जिन बैंकों ने बहुत अधिक ऋण ऐसी कंपनियों को दिए हों वे हानि सहन करने को इतने इच्छुक नहीं होंगे। कई बार तो यह भी नहीं पता चलता कि कोई कंपनी हानि में चल रही है। उसे सरकार द्वारा प्रकल्प क्रियान्वयन में सरकारी अपूर्णताओं/विफलताओं के लिए क्षतिपूर्ति मिल रही होती है (जैसे कि भूमि अधिग्रहण में देरी, या फिर विद्युत दरों में समंजन आदि)। और इस क्षतिपूर्ति का निर्धारण एक कठिन एवं समय लगने वाला कार्य है; अनेक मामले तो अब न्यायपालिका के पास लंबित हैं।
- उपयुक्त संप्रेरणाएं। S4A ने यह समझ लिया है कि अनेक मामलों में अर्थक्षमता की पुन: स्थापना के लिए ऋणों में भारी कटौतियां आवश्यक होंगी। किन्तु सार्वजनिक बैंक इसे स्वीकार करने को तैयार नहीं है। आखिर ऋण माफ करने पर उन्हें क्या पुरूस्कार मिलता है? बल्कि इसके विपरीत यहां तो दंडित होने की आशंका विद्यमान होती है। बड़े स्तर पर ऋण माफी सहज ही अन्वेषण एजेन्सियों का ध्यान आकर्षित कर लेती है। अत: बैंकरों को एकमात्र संप्रेरणा ऋणों के भुगतान की अवधि को बढ़ाना है। यह समस्या को मात्र किसी अगली तिथि तक स्थगित कर देना ही है। इस समस्या के समाधान के लिए बैंक बोर्ड ब्यूरो (BBB) ने एक निगरानी समिति बनाई है, वह ऋण माफी प्रस्तावों की समीक्षा कर उनको प्रमाणित कर सकती है। किन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि क्या यह बैंकरों की संप्रेरणाएं भी परिवर्तित कर पाएगी।
- पूंजी। सरकार ने वर्ष 2018-19 तक अपनी इन्द्रधनुष योजना के अंतर्गत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में रू.

70,000 करोड़ की अतिरिक्त पूंजी का संचार करने का निर्णय लिया है। किन्तु यह पर्याप्त नहीं होगी, अंतर्निहित रूप से ही इसमें अपर्याप्तता दिखाई दे रही है। यहां प्रमुखकर्ता-अभिकर्ता की समस्या विद्यमान है, वित्तीय उत्तरदायित्व तो सरकार नामक संस्था का है, किन्तु इसका निर्णय करने वाले अभिकर्ता बैंक हैं। यदि सरकार पहले से ही अधिक धनराशियों का वचन दे देती है तो बैंक बहुत उदारतापूर्वक ऋण माफी प्रदान करने लगेंगे। किन्तु यदि उन्हें पर्याप्त धन राशियां नहीं मिलीं तो वे कंपनियों को ऋणों में राहत दे ही नहीं पाएंगे।

4.49 संक्षेप में, समाधान पथ, बहुत ही साधारण से बुरे ऋणों वाले मामलों में भी, बहुत सी रूकावटों से भरा है। किन्तु, समस्या का अधिकांश भाग सामान्य से मामलों का नहीं है। संकटासन्न परिसंपदाएं तो बहुत कम ऋणियों के पास संकुलित हैं। केवल 50 कंपनियां ही IC1 की देनदारी के 71 प्रतिशत के लिए उत्तरदायी है। औसत रूप से इन्हें रू. 20000 करोड़ चुका है, दस कंपनियों की देनदारी तो रू. 40000 करोड़ प्रत्येक है। और अनेक दृढ़मूल हो चले कारणों से इन विराटकाय ऋणियों के मामलों का समाधान बहुत ही कठिन है।

- गंभीर अर्थक्षमता की समस्याएं : वर्तमान में तो बड़ी IC1 कंपनियों की अर्थक्षमता की पुनः स्थापना के लिए बड़े पैमाने पर ऋण माफी करनी पड़ेगी। तत्संबंधी राशियां तो प्रत्येक मामले में अलग-अलग होंगी और उसके निर्धारण के लिए उनके खातों का पूरी तरह से विश्लेषण करना होगा। किन्तु मोटेतौर पर यह आंकलन यहां हो सकता है कि उनके वर्तमान नकद प्रवाह पर ब्याज का भार घटाने के लिए ऋणों में कितनी कटौती आवश्यक है। सितंबर 2016 के अंत तक के आंकड़े सुझाते हैं कि उच्चतम संकटासन्न 100 ऋणियों में से 33 को आधे से कम ऋण माफी चाहिए। 10 के लिए 51-75 प्रतिशत और 57 को तो कम से कम 75 प्रतिशत माफी की जरूरत है।[8]
- गंभीर समन्वय विफलताएं : बड़े ऋणियों ने अनेक बैंक से ऋण पाए हैं, उनका किसी एक युक्ति पर सहमत होना जरूरी है। जब बड़ी-बड़ी राशियों का मामला हो तो यह सहमति कठिन हो जाती है।
- गंभीर संप्रेणात्मक समस्याएं : सार्वजनिक बैंक प्रबंधक बड़े ऋणियों की ऋण माफी को लेकर बहुत संवेदनशील हो जाते हैं। इस कार्य से वे केवल अन्वेषण एजेंसियों नहीं बल्कि आम जनता के भी निशाने पर आ जाते हैं। ये बैंकर तो प्रायः ऋणों को अंश पूंजी में बदलकर उन शेयरों को बेचने का कदम भी नहीं उठा पाते, भले ही SDR नीति के अंतर्गत इस कदम को प्रोत्साहित किया गया हो और यही मूल्यमान को अधिकतम कर पाने का एकमात्र मार्ग बचा हो।
- अपर्याप्त पूंजी : बड़े ऋणियों की कर्ज माफी से तुरंत ही बैंकों की अपनी पूंजी के आधार कोष रिक्त प्रायः हो सकते हैं।

4.50 दूसरे शब्दों में बड़ी फर्मों के लिए ऋण माफी का रास्ता बाधाओं से भरा नहीं है, यह पूरी तरह बंद ही है।

4.51 तो क्या नया दीवालापन कानून कोई व्यवहारिक राह सुझा पाएगा? एक रूप में तो जहां फर्म की सेहत सुधारने के लिए बहुत विशाल स्तर पर उनकी देनदारियां माफ करने की जरूरत हो वहां उसे दीवालिया घोषित करना समझादारीपूर्ण हो सकता है। ये फर्में पहले से ही SDR और S4A व्यवस्थाओं के प्रयोग के लिए अनुप्रयुक्त हैं। समस्या यह है कि नया दीवालियापन कानून अभी लागू नहीं हो पाया है, और जब यह लागू होगा तो पहले इसके भागीदार प्रावधान का छोटे ऋणियों के मामले में प्रयोग करके देखना चाहेंगे। जब तक यह नई व्यवस्था अधिक बड़े और जटिल मामलों को सुलझाने को तैयार

[8] ये गणनाएं बहुत सी सरलीकरण मान्यताओं के आधार पर की गई है। नकद प्रवाह का मापन ब्याज, कर, मूल्यह्रास और ऋण भुगतान पूर्व प्राप्तियों के आधार पर किया गया है (EBITDA); ऋणात्मक नकद प्रवाह वाली कंपनियां 75 प्रतिशत से अधिक माफी वाले समूह में चली जाती हैं। यह भी माना गया है कि ब्याज की देयता में कमी ऋण देयता में कमी के समानुपाती रहेगी। गणना की सबसे बड़ी मान्यता तो यह है कि भविष्य में नकद प्रवाह में कमी नहीं आएगी। कुछ मामलों में यह प्रवाह

हो पाएगी, तब तक तो बहुत अधिक समय व्यतीत हो जाएगा।

4.52 अन्य शब्दों में इस समय स्थिति यह है : दोहरी तुलनपत्र समस्या को सिर उठाए हुए 8 वर्ष बीत चुके हैं, पर कोई समाधान दिखाई नहीं दे रहा। संकटासन्न ऋणियों की वित्तीय स्थिति तेजी से बिगड़ रही है और सरकार तथा समाज की संभावित लागतों में भारी वृद्धि हो रही है। ये केवल वित्तीय लागतें नहीं है, इनके साथ गवाएं गए संवृद्धि के अवसर तथा भविष्य में संवृद्धि की संभावनाओं को लगने वाले आघातों की लागतें भी जोड़ी जानी चाहिए।

4.53 ये कठिनाइयां एक मौलिक प्रश्न उठा रही हैं। अधिकांश आर्थिक समस्याओं का श्रेष्ठतम समाधान बाजार आधारित प्रक्रियाओं द्वारा हो जाता है। वहां व्यापारिकता प्रेरित कर्तागण सरकार रचित रूपरेखा में रहते हुए काम करते हैं। किन्तु यहां तो ऐसी प्रक्रिया कार्य करती हुई नहीं दिखाई देती। कारण हैं वे संरोध और विकृत संप्रेरणाएं, जिनका उन्मूलन बहुत कठिन सिद्ध हो रहा है।

4.54 इन सबसे यही संकेत मिल रहे हैं कि वर्तमान प्रक्रियाओं के प्रयोग द्वारा संकटासन्न परिसंपदा समस्या का समाधान नहीं हो पाएगा। वस्तुत: निकट भविष्य में आने वाली कोई अन्य विकेन्द्रित विधि भी इस कार्य में सफल होती प्रतीत नहीं हो रही। इनके स्थान पर एक बड़ी केन्द्रीकृत विधि या प्रक्रिया की ही आवश्यकता होगी।

4.55 एक संभव युक्ति सार्वजनिक क्षेत्र परिसंपदा पुन:प्रतिष्ठापन एजेंसी (PARA) हो सकती है, जिसे विशाल एवं जटिल मामलों को निपटाने का दायित्व दिया जा सके। यह विधि ऋण समाधान में आ रही अधिकांश बाधाओं का निवारण कर सकती है। इससे समन्वय की समस्या भी सुलभ जाएगी, क्योंकि सारे ऋण एक ही एजेंसी के पास सिमट जाएंगे। इसे निश्चित अवधि में अधिकतम संभव वसूली का आदेश तथा उसके अनुपालन के लिए उपयुक्त संप्रेरणातंत्र के साथ गठित करना चाहिए। इस प्रकार ऋण समाधान का मामला बैंकों की पूंजी संबंधी चिंताओं से पृथक हो जाएगा। इन कारणों से ही अनेक देशों ने परिसंपदा पुन: प्रतिष्ठापन एजेंसियां अपनाई है। दोहरी तुलनपत्र समस्या से ग्रस्त रहे, पूर्वी एशियाई देश तो इस कार्य में प्रमुख रहे हैं।

4.56 एक PARA कैसे कार्य करेगी? इसके कई प्रारूप हो सकते हैं, किन्तु मुख्य रूपरेखा तो स्पष्ट नहीं है। यह निर्दिष्ट ऋणों की लेनदारी बैंकों से खरीद लेगी (ये बड़ी ऋणग्रस्त संरचना उद्यमों, तथा इस्पात उद्योगों की देनदारियां हो सकती हैं)। फिर उनके समाधान का प्रयास प्रारंभ होगा, ऋणों को अंश पूंजी में परिवर्तित कर उस पूंजी को नीलामी द्वारा बेचा जा सकता है या फिर व्यावसायिक मूल्यांकन के आधार पर मूल्यमान अधिकतम करने की युक्ति अपनाते हुए ऋणों में माफी दी जा सकती है।

4.57 जब सरकारी बैंकों के खाते उन ऋणों से मुक्त हो जाएंगे, तब सरकार उन्हें पुन: पूंजीकृत कर उनके वित्तीय स्वास्थ्य को सुधार उन्हें अपने मानवीय एवं वित्तीय संसाधन नए ऋण देने के निर्णायक कार्य में लगाने योग्य बना देगी। इसी प्रकार अतिऋण ग्रस्त कंपनियां भी अपनी अर्थक्षमता की पुन:प्रतिष्ठा के बाद अपने उत्पाद-निर्माण कार्यो पर (वित्तीय दशा के स्थान पर) ध्यान केंद्रित कर सकेंगी। और अन्ततः, वे नए निवेश की योजनाएं भी बना पाएंगी।

4.58 किन्तु इस सबकी एक लागत भरी जाएगी : हानि को हानि के रूप में स्वीकार कर उसे चुकाना पड़ेगा। किन्तु यह लागत तो अपरिहार्य है। ऋण पहले ही दिए जा चुके हैं, हानि भी हो ही चुकी है और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की स्वामी सरकार है। अत: अधिकांश भार भी सरकार पर ही पड़ेगा। हां कंपनियों के शेयरधारी वर्ग को भी अंश पूंजी की हानि वहन करनी पड़ सकती है। अत: बात PARA की हो या किसी विकेन्द्रीत समाधान युक्ति की। यह तो प्रश्न ही नहीं है कि सरकार को नए दायित्व उठाने पड़ेंगे। प्रश्न यह है कि वर्तमान दायित्व भार को बुरे ऋणों की समस्या सुलझा कर न्यूनतम कैसे किया जाए। वह भी यथा संभव प्रभावी रूप से और यथाशीघ्र। PARA के गठन का यही ध्येय होगा।

4.59 किन्तु इस कार्य में बड़ी भारी पूंजी की आवश्यकता होगी। यह कोष कहां से आएगा? एक अंश तो सरकार द्वारा निर्गित निक्षेपों से एकत्र होगा। इससे सार्वजनिक ऋण भार में वृद्धि होगी किन्तु यदि PARA गठन से निष्पादनहीन परिसंपदाओं की समस्या

का समाधान हो गया तो वस्तुत: सरकार की वित्तीय स्थिति में सुधार ही होगा। इससे बुरे ऋणों की भरपाई हेतु बैंकों को दिए जाने वाली क्षतिपूर्ति की राशियों में यथेष्ट कमी आ पाएगी।

4.60 यदि PARA की रचना ऐसी हो कि निजी निवेशक इसकी अंश पूंजी में भागीदारी करने को प्रोत्साहित हों तो एक अंश पूंजी बाजार से भी जुटाया जा सकता है। साथ ही, यदि सरकार अपनी हिस्सेदारी को बेचने को तैयार हो तो पूंजी बाजार सरकारी बैंकों के पूंजी कोष को संवर्धित करने को भी तैयार हो सकता है।

4.61 पूंजी का तीसरा स्रोत भारतीय रिजर्व बैंक हो सकता है। इसकी प्रक्रिया तो सरल और सीधी है (देखें बॉक्स-2)। प्रभावीरूप से रिजर्व बैंक अपने पास मौजूद कुछ सरकारी निक्षेप सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और PARA को अंतरित कर देगा। परिणाम स्वरूप रिजर्व बैंक की पूंजी कुछ कम होगी और सरकारी बैंकों तथा PARA की पूंजी में वृद्धि हो जाएगी। मौद्रिक नीति के लिए इसके कोई निहित अर्थ या परिणाम नहीं होंगे, क्योंकि इस अन्तरण से नई मुद्रा का सृजन नहीं होगा।

4.62 यह भी सत्य है कि PARA की स्थापना सभी रोगों की दवा नहीं है। वास्तव में सरकार संचालित परिसंपदा पुन:प्रतिष्ठान ऐजेंसियों को लेकर अनुभव सदैव सकारात्मक नहीं रहे हैं। उन एजेंसियों को तीन प्रकार की समस्याओं को लेकर कठिनाइयां आई हैं। अत: उनका निदान-निपटान ही यह सुनिश्चित कर पाएगा कि हमारी सुझाई PARA के होने पर वह अपने लक्ष्यों में सफल हो पाए।

4.63 सबसे पहले तो बैंकिंग क्षेत्र में अभी तक हो चुकी हानि को स्वीकार करने और उस समस्या का सामना करने के राजनीतिक परिणामों को झेलने के लिए तत्परता चाहिए। ऋण माफी पर पक्षपात के आरोप अवश्य लगेंगे, कंपनियों का अधिग्रहण कर उनकी बिक्री को अनावश्यक रूप से सरकारी जोरजबरदस्ती का नाम दिया जाएगा। इन सब आरोपों के विरूद्ध एक मात्र बचाव यही होगा कि PARA एक पूर्णरूप से व्यवसायिक संस्था हो, जिसके पास वसूल किए जा रहे मूल्यमान को अधिकतम करने की योजना हो और वह उसे अधिकतम करती हुए दिखाई भी पड़नी चाहिए।

4.64 दूसरे, PARA को राजनीतिक नहीं व्यापारिक नियमों का पालन करना होगा। इसलिए उसे एक ऐसा स्वतंत्र संगठन बनना होगा, जिसमें बैंक कार्य विशेषज्ञ ही काम करते हों। इसे एक उचित रूप से सीमित अवधि में अधिकतम मूल्यांकन उगाहने का स्पष्ट निर्देश होना चाहिए। इन उद्देश्यों को पाने का एक मात्र मार्ग GST छमजूवता जैसी संरचना करनी होगी जो सार्वजनिक क्षेत्र की छत्रछाया में तो मानी जाए, किन्तु जिसमें सरकार की हिस्सेदारी 49 प्रतिशत ही रहे।

4.65 तीसरा प्रश्न कीमत निर्धारण का है। यदि ऋणों को बढ़ाचढ़ा कर अन्तरित किया गया तो वास्तव में बैंक अपने घाटे को पुन: प्रतिष्ठापन एजेंसी को अन्तरित कर जाएंगे। परिणाम स्वरूप निजी बैंक इस में भागीदार नहीं हो पाएंगे। एक बार फिर से समन्वय का प्रश्न उठ खड़ा होगा। निजी पूंजी इस एजेंसी में निवेश नहीं करना चाहेगी, क्योंकि यह PARA तो घाटे में ही चलेगी। इस समस्या का एक हल है : अन्तरण बाजार कीमतों पर हो। किन्तु, संकटासन्न ऋणों की बाजार कीमत का निर्धारण सहज नहीं होता, इसमें समय भी बहुत लग सकता है।

4.66 ये तीनों समस्याएं बहुत विशालकाय हैं। यही कारण है कि पहले अन्य विधियों का परीक्षण किया गया है। किन्तु वे अन्य विधियां कारगर नहीं रही हैं। वर्षों बीत गए हैं और लागतें निरंतर वृद्धिशील हैं। विद्वान अर्थशास्त्री मिस्टर होल्मस की बात को दोहराएं तो, ''जब आप एक बार असंभव को पूरा कर लें तो बाद में जो कुछ बच रहता है, वह चाहे जितना भी कठिन हो वही समाधान होता है''।

IV. निष्कर्ष

4.67 आर्थिक समीक्षा, 2015-16 ने आग्रहपूर्वक कहा था कि संकटासन्न परिसंपदाओं की समस्या के समाधान के लिए रू. 4 की आवश्यकता होगी। ये हैं सुधार Reforms; स्वीकृति Recognition; पुन: पूंजीकरण Recapitalization; और समाधान Resolution। एक वर्ष में (इस दिशा) में कितनी प्रगति हो पाई है?

बॉक्स 2. भारतीय रिजर्व बैंक की अतिरिक्त पूंजी

पिछले वर्ष की आर्थिक समीक्षा में रिजर्व बैंक में सरकार की अतिरिक्त पूंजी का प्रश्न उठाया गया था। इस वर्ष विमुद्रीकरण ने उस प्रश्न को और अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है।

निम्न रेखाचित्र में पिछले वर्ष के आंकलन का नवीनीकरण करते हुए रिजर्व बैंक के पास पूंजी का स्तर दिखाया गया है। विमुद्रीकरण के कारण अनायास प्राप्तियों को गणना में स्थान नहीं देने पर भी रिजर्व बैंक एक प्रमुख बहिष्शायी के रूप में उभर रहा है।

रेखाचित्र : केन्द्रीय बैंक के तुलनपत्र में अंशपूंजी का प्रतिशत भाग

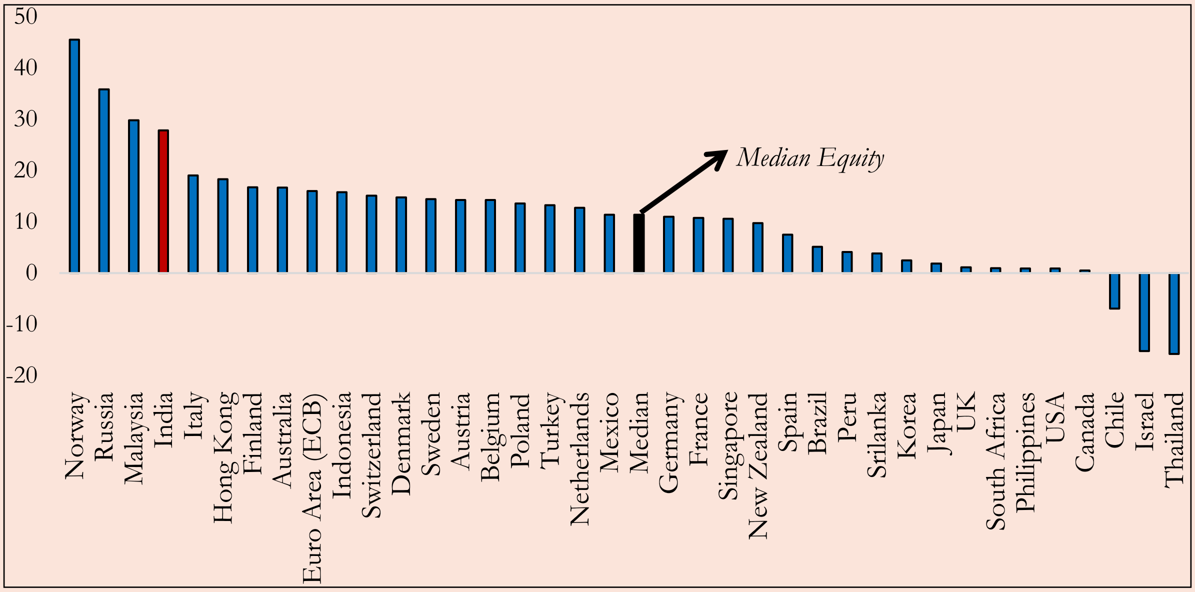

स्रोत : **विभिन्न देशों के केन्द्रीय बैंकों के नवीनतम आंकड़े। भारत के अनुमान में विमुद्रीकरण से अनायास प्राप्ति का मान शून्य ही लगाया गया है।**

ऐसी कोई विशेष वजह नहीं है जिसके चलते यह अतिरिक्त पूंजी भारतीय रिजर्व बैंक के पास रखी जानी चाहिए। मौजूदा स्तरों पर भी, भारतीय रिजर्व बैंक पहले से ही अपवादात्मक रूप से अत्यधिक पूंजी वाला बैंक है। वस्तुत:, यह विश्व में सर्वाधिक उच्च पूंजीकृत केन्द्रीय बैंक है। अत:, यह इस पूंजी को अन्य तरीकों में पुनर्नियोजित करने लिए अत्यधिक उत्पादक प्रतीत होगी।

कोई कारण नहीं होता कि सरकार अपनी अतिरिक्त पूंजी रिजर्व बैंक के पास ही रखे। वर्तमान स्तर पर भी रिजर्व बैंक अत्यधिक पूंजीकृत है। वास्तव में यह विश्व के सर्वाधिक पूंजीकृत केन्द्रीय बैंकों की श्रेणी में है। अत: लगता है कि इस पूंजी का कहीं अन्य प्रयोग कर लेना अधिक उत्पादक सिद्ध होगा।

मान लें कि रिजर्व बैंक रू. 4 लाख करोड़ की पूंजी केन्द्र सरकार को लौटा देता है, तो फिर इसका सरकार क्या प्रयोग कर सकती है? इसके कई अच्छे कार्यों में प्रयोग संभव हैं।

सबसे प्रथम तो बैंक का पुन:पूंजीकरण या फिर एक सार्वजनिक क्षेत्रीय परिसंपदा पुन: प्रतिष्ठापन ऐजेंसी का पूंजीकरण हो सकता है। दूसरे, ऋण चुकाकर सरकार सबल सार्वजनिक क्षेत्रीय राजकोष अवस्था के प्रति अपनी प्रतिबद्धता प्रदर्शित कर सकती है। यहां मुख्य ध्यान यही रखना चाहिए कि विमुद्रीकरण सहित रिजर्व बैंक के पास पूंजी एक तुलनपत्र की रकम में वृद्धि/कमी है, यह अतिरिक्त आय नहीं है। अत: इसके प्रयोजन का स्वरूप भी तुलनपत्रीय होना चाहिए। इस बात पर पुन: आग्रह किया जा रहा है कि इस अतिरिक्त पूंजी के प्रयोग की युक्ति द्वारा किसी भी अन्य नियम/कानून के उल्लंघन या उसकी अवहेना का संकेत नहीं मिलना चाहिए। इसे रिजर्व बैंक की पूर्ण सहमति के साथ किया जाना चाहिए। उसकी स्वायत्तता और विश्वस्तता पर कोई आँच नहीं आनी चाहिए।

ऐसी युक्ति अपनाने के विरूद्ध संभव आर्थिक आपत्तियां क्या हो सकती हैं?

(क) पहला प्रश्न तो यही है कि क्या इस प्रकार पूंजी में कमी के बाद रिजर्व बैंक के पास किसी धक्के को सह सकने योग्य अवरोधक बचेंगे? रिजर्व बैंक की परिसंपदा का बहुत बड़ा अंश (70 प्रतिशत) तो निवल विदेशी संपदाओं (NFA) के रूप में है। इस कारण भी कुछ विशेषज्ञ उच्च अंश पूंजी/संपदा अनुपात पर बल देते हैं। एक तर्क है कि NFA का सकल परिसंपदा से अनुपात जितना उच्च होता

है रिजर्व बैंक उतना ही विनिमय दर में उच्चावचन का सामना करने में दुर्बलताग्रस्त हो सकता है। नॉर्वे के नोगेस बैंक का NFA सकल संपदा अनुपात 8.6 प्रतिशत है और यह अंश पूंजी का परिसंपदाओं के साथ अनुपात भी 45 प्रतिशत पर बनाए रखता है। यह भारत की अपेक्षा बहुत अधिक है।

क्या सचमुच किसी सैंट्रल बैंक के NFA और अंश पूंजीधारिता में सकारात्मक सह संबंध होता है? इस विचार के सत्यापन के लिए विभिन्न देशों के NFA/सकल संपदा अनुपात के आंकड़ों को अंशपूंजी/संपदा अनुपात के अनुसार अंकित किया गया है। इन दो अनुपातों के बीच सहसंबंध का मान मात्र 0.09 आंकलित हो पा रहा है। इसे तो समस्तरीय आंकड़ों में आ सकने वाली सामान्यसी विकृति माना जा सकता है। अत: यह कहना उचित नहीं होगा कि NFA का उच्च स्तर अधिक पूंजीधारिता के लिए विवश करता है।

रेखाचित्र : परिसंपदाएं और अंश पूंजी

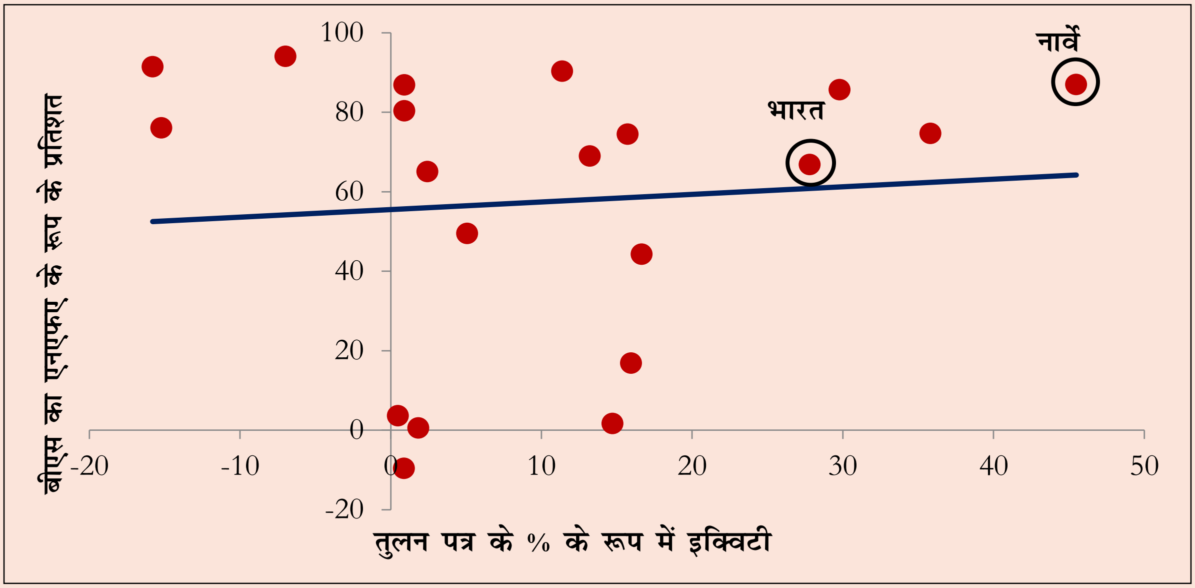

***स्रोत :* विभिन्न देशों के केन्द्रीय बैंक**

(ख) पूंजीगत हानि की आशंका

किन्तु वास्तव में निर्णायक प्रश्न तो यह है : विनिमय दर में कैसे, किस आकार प्रकार के परिवर्तन रिजर्व बैंक की पूंजी की अवस्था को दुर्बल बना सकते हैं?

ध्यान देने की पहली बात तो यह है कि रूपए के मूल्यमान में सुधार होने पर विदेशी मुद्रा संसाधनों का अवमूल्यन हो जाएगा। अत: हम यह मानकर कि 4 लाख करोड़ रूपयों की पूंजी का अन्तरण किया जा रहा है, गणना करने का प्रयास कर रहे हैं कि रूपए की विनिमय दर में कितना सुधार रिजर्व बैंक के विदेशी मुद्रा संसाधनों में 4 लाख करोड़ रूपयों का अवमूल्य कर सकता है। यह 16.3 प्रतिशत है। रिजर्व बैंक द्वारा आंकलित व्यापक आधार वाली वास्तविक प्रभावी विनिमय दर (REER) के सूचक को 135.8 तक ऊपर उठना होगा।

गणना का यह आधार बहुत सरल है : 4 लाख करोड़ रूपयों की राशि विदेशी मुद्रा कोष का मात्र 16.3 प्रतिशत है (जनवरी 13, 2017 की विनिमय दर के अनुसार)। अत: इस स्तर की तुलना में रूपए की दर में 16.3 प्रतिशत का सुधार रिजर्व बैंक की पूंजी को समाप्त कर सकता है। यह विनिमय दर सुधार अगले चित्र में प्रदर्शित REER स्तर के समान होगा। रूपए की दर में इस सुधार से प्रतिस्पर्धी स्तर में इतनी भारी गिरावट आ जाएगी जितनी पिछले 12 वर्षों से कभी अनुभव नहीं की गई। विनिर्माण उद्योग तो पूरी तरह से नष्ट हो जाएगा। अत: स्पष्ट है कि इस प्रकार की पूंजीगत हानि कभी भारतीय रिजर्व बैंक पर थौंपी नहीं जाएगी।

(ग) हानि से बचने का संभावना

किन्तु क्या रिजर्व बैंक न चाहते हुए भी इस प्रकार रूपए की विनिमय दर में सुधार को रोक पाएगा? उत्तर है हां। केन्द्रीय बैंक की कार्य प्रणाली में एक मूलभूत असम्मिति होती है। उनकी विदेशी मुद्रा की आपूर्ति सीमित होती है, किन्तु आन्तरिक मुद्रा की आपूर्ति असीमित रहती है। अत: यदि रूपए की दर में सुधार को रोकना हो तो रिजर्व बैंक रूपयों के बदले डालर खरीदना प्रारंभ कर सकता है। किन्तु यदि रूपए की दर गिर रही हो तो फिर रिजर्व बैंक की उसे रोकने में हस्तक्षेप करने की क्षमता सीमित हो जाती है। वह उसी सीमा तक बाजार से रूपया खरीद सकता है, जितनी विदेशी मुद्रा उसके पास होती है। अत:, दूसरे शब्दों में, रिजर्व बैंक के पास उसकी पूंजी पर भीषण आघात करने में सक्षम बड़े पुन:मूल्यांकन को रोकने की क्षमता और संप्रेरणा, दोनों विद्यमान हैं।[9]

9 रिजर्व बैंक के तुलनपत्र को ब्याज दर परिवर्तन से भी धक्का लग सकता है। यदि दर में वृद्धि होती है तो इसके पास मौजूद सरकारी बाँड भंडार का मूल्यांकन गिर जाता है। किन्तु इसकी परिसंपदा रचना के कारण ब्याज दर वाली जोखिम रिजर्व बैंक के लिए कम महत्वपूर्ण होती है। दूसरे, यह जोखिम विनिमय दर जोखिम से विपरीत दिशा में होती हैं।

रेखाचित्र : REER द्वारा मापित स्पर्धाशीलता

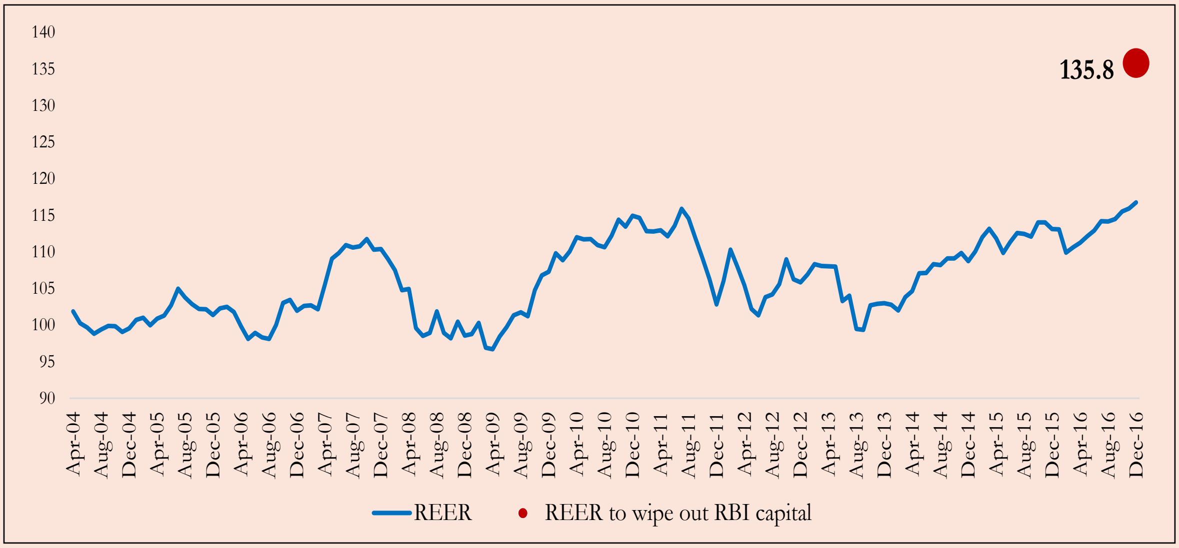

***स्रोत :* RBI 36 करेंसी REER मौद्रिक प्रभावी विनिमय दर का आंतरिक एवं विदेशी कीमतों के अनुपात द्वार समंजन करने से प्राप्त होता है।**

एक अंतिम चिन्ता : मान लें कि इस अतिरिक्त पूंजी का बैंकों के पुन:पूंजीकरण में प्रयोग किया जाता है। तो क्या इससे नियमनकर्ता (रिजर्व बैंक) नियमनाधीन निकायों (व्यापारिक बैंकों) में हिस्सेदार नहीं बन जाएगा? वस्तुत: इसका परिणाम सरकार द्वारा अपने तुलनपत्र की रचना में परिवर्तन होगा, वह अपनी 'अंश पूंजी'' रिजर्व बैंक से निकालकर व्यापारिक बैंकों में उसका 'निवेश' कर रही होगी। व्यवसायिक बैंकों में रिजर्व बैंक की पूंजी धारिता नहीं होगी। इस कदम के मौद्रिक नीति के लिए भी कोई निहित प्रभाव नहीं होंगे।

इसके विषय में विचार करना इसे दो चरणों में देखने के माध्यम से आसान हो जाता है। पहले चरण में रिजर्व बैंक (परिसंपदा पक्ष पर) सरकार को सरकारी निक्षेपों पर (भारी) लाभांश प्रदान करता है और उस क्रम में (देयता पक्ष पर) उसकी पूंजी में कमी हो जाती है। दूसरे चरण में सरकार नए ऋण पत्र जारी कर बैंकों का पूंजीकरण करती है। अत: इस प्रकार सरकारी बाँड, सामान्य रूप में रिजर्व बैंक से निकलकर सरकारी व्यावसायिक बैंकों के पास पहुँच जाते हैं। इसी प्रक्रिया में पूंजी का अन्तरण हो जाता है। और कुछ नहीं बदलेगा, विशेषरूप से मुद्रा की आपूर्ति और सरकार की अंशपूंजी धारिता अप्रभावित रहेगी।

(घ) अंतर्राष्ट्रीय उद्धरण

और अन्त में हमारे पास बड़े महत्वपूर्ण उदाहरण है, जहां विदेशों में सरकारों ने केन्द्रीय बैंक में अपनी अंशपूंजी का अपने अन्य कार्यों के लिए प्रयोग किया है।

- वर्ष 2015[10] : संयुक्त राज्य ने अपने पूंजीकोष से परिवहन प्रकल्पों के लिए $19 बिलियन की अतिरिक्त पूंजी प्रदान की थी।
- वर्ष 2004 : जर्मनी के केंद्रीय बैंक ने अपने पुराने 'मार्क' भंडार का समापन कर इस आय को लाभ-हानि खाते में चढ़ा लिया था, इस बात की कोई संभावना नहीं थी कि इन राशियों के बदले कभी यूरो मिल पाएंगे।

2010 में, इजरायल बैंक ने वित्तीय पत्रकों में ILS 220 मिलियन की वृद्धि दर्ज कर ली थी (उस समय यह $62 मिलियन के समान थी। यह नोटों के घोषित मूल्य का योगफल था जो नोट बदली की तिथि तक उसके पास लौटाए नहीं गए थे और सामान्य लेनदेन के लिए अमान्य हो गए थे।

पिछले कुछ वर्षों के अनुभव ने समस्याएं उत्पन्न होने पर बैंकिंग व्यवस्था में जनमानस का विश्वास बनाएं रखने में इस क्षेत्र में सार्वजनिक बैंकों के वर्चस्व का सर्वाधिक महत्व बार-बार सिद्ध हुआ है। किन्तु, इस व्यवस्था की सबसे बड़ी त्रुटियां भी, समस्याओं का पूरी तरह समाधान करने में अरूचि तथा उन समस्याओं को पैदा होने के अवसर प्रदान करने के रूप में स्पष्ट हुई है। यदि दो अंकों की संख्या में NPA सरकारी बैंकों में कभी-कभार हो गए होते तो संभवत: इस बात का कोई महत्व नहीं होता। किन्तु यहां तो एक दशक में दूसरी बार उनके निवेश पत्रक भंडार का इतना बड़ा भाग निष्पादनहीन हो गया है। अत: यदि कुछ मूलभूत सुधार नहीं किए गए तो यह समस्या बार-बार सिर उठाती रहेगी।

---

[10] See https://www.bloomberg.com/news/articles/2015-12-01/fed-surplus-tapped-in-highway-bill-as-banks-get-dividend-break.

4.68 हम उस क्षेत्र से चर्चा का प्रारंभ कर रहे हैं, जिसमें प्रगति सबसे कम रही है : यह प्रथम R अर्थात सुधार का स्तर है।

4.69 वस्तुतः एक बार दोहरी तुलनपत्र समस्या का समाधान होने के बाद भी नैतिक द्वन्द्व की समस्याएं मत्वपूर्ण रहेंगी। नई–नई साफ सुथरी तुलनपत्र अवस्था से उत्साहित होकर बैंकों के प्रबंधक पिछले घटनाचक्र के सबक को भुलाकर फिर से मुक्त हस्त होकर ऋण देना प्रारंभ कर सकते हैं। इस पक्ष पर केंद्रित संरचनात्मक सुधारों के कई रूपभेद हो सकते हैं, किन्तु हमारा आग्रह है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में सरकार का स्वामित्व में बहुमत भी ऐसा पक्ष है, जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

4.70 अब उस ओर चलते हैं जहां सबसे अधिक प्रगति हुई है। यह दूसरा R अर्थात स्वीकृति का पक्ष है। वर्षों तक 'और समय देने' की युक्ति का इस आशा में अनुसरण किया गया है कि धीरे–धीरे संकटासन्न परिसंपदाएं स्वमेव ही संकट से उबर आएंगी। किन्तु अब जाकर बैंकरों को यह स्पष्ट अनुभूति हुई है कि ऋणियों की वित्तीय दशा इस सीमा तक बिगड़ चुकी है कि उनमें से बहुत से कभी भी 'स्वस्थ' नहीं हो पाएंगे। इसलिए रिजर्व बैंक द्वारा परिसंपदा गुणवत्ता समीक्षा के बाद बैंक अब ऋणों की अधिकाधिक संख्या को 'निष्पादनहीन' स्वीकार करने लगे हैं।

4.71 NPAs के उच्च स्तर की स्वीकारोक्ति के साथ–साथ उसके लिए और उच्च प्रावधान करने की विवशता भी जुड़ी है। इसके कारण अब बैंकों का पूंजी आधार सिकुड़ने लगा है। परिणाम स्वरूप बैंकों के पुनः पूंजीकरण, तीसरे R, की आवश्यकता होगी। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए तो यह कोष सरकार से ही प्राप्त होंगे। यहां तक तो स्वचालित प्रायः है। किन्तु यह पुनःपूंजीकरण, भले ही जन संवाद में इसे कितना ही महत्व मिल रहा हो, इस समय का तकाजा नहीं है। किसी भी रूप में, मुख्य तकाजा तो नहीं ही है।

4.72 सही तकाजा तो चौथा R, समाधान है। पुनः पूंजीकरण के बाद भी सरकारी बैंक तब तक नए ऋण नहीं दे पाएंगे जब तक उन्हें यह निश्चित रूप से पता नहीं चल जाता कि पुराने ऋणों के कारोबार में उन्हें कितना घाटा उठाना पड़ा है। बड़े, वर्तमान संकटग्रस्त ऋणी भी तब तक नए निवेश नहीं कर पाएंगे, जब तक उन्हें अपनी वित्तीय स्थिति वास्तव में सुधर जाने का विश्वास नहीं हो जाए। जब तक ये दोनों कार्य संपन्न नहीं होते, आर्थिक संवृद्धि तो संशयापन्न ही रहेगी।

4.73 तो प्रश्न यही है कि समाधान प्रक्रिया को किस प्रकार तेज किया जाए। भारत में वैश्विक वित्तीय संकट के आठ वर्ष बाद भी इस दिशा में शायद ही कुछ प्रगति हुई है। जबकि 1990 के दशक में संकट के बाद मात्र 2 वर्षों में पूर्वी एशिया के देशों ने अधिकतर बड़े मामलों को निपटा लिया था। एक कारण यह भी था कि वे देश बहुत अधिक गहन दबाव में थे : वे संकट में फंसे थे, जबकि भारत तो निरंतर तीव्र दर पर संवृद्धि कर रहा है।

4.74 किन्तु पूर्वी एशियाई देशों के इतनी तेजी से ऋण समस्या का समाधान कर पाने का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण भी था : उन्होंने कहीं अधिक दक्षतापूर्ण प्रक्रिया अपनाई थी। भारत एक विकेंद्रित विधि का पालन कर रहा है। इसमें बैंक अकेले–अकेले अपने स्तर पर ऋण पुनःरचना के निर्णय कर रहे हैं। यह अनेक संरोधों और विकृतिपूर्ण संप्रेरणाओं से भरा मार्ग है। परिणामतः उन्होंने बार–बार समाधान को स्थगित करने का ही चयन किया है। इनके विपरीत पूर्वी एशिया के देशों में केन्द्रीकृत समाधान युक्ति अपनाई गई थी और वहां सार्वजनिक परिसंपदा पुनःप्रतिष्ठापन कंपनियों के माध्यम से ऋण समस्याओं का त्वरित समाधान संभव हो गया था। संभवतः समय आ गया है कि भारत भी उसी कार्यविधि को अपनाने का निर्णय कर ले।

संदर्भ

1. Dell'Ariccia, Giovanni, Deniz Igan, Luc Laeven, & Hui Tong, with Bas Bakker & Jérôme Vandenbussche, (2012), *"Policies for Macrofinancial Stability: How to Deal with Credit Booms" IMF Staff Discussion Note SDNè12è06 (Washington, DC: International Monetary Fund).*

परिशिष्ट

पिछले तीन वर्षों में रिजर्व बैंक ने संकटासन्न परिसंपदा समस्या के समाधान में सहायता के लिए कई योजनाएं लागू की हैं। हम यहां उनका एक संक्षिप्त दृश्यांकन प्रस्तुत कर रहे हैं।

रेखाचित्र : रिजर्व बैंक के नीतिगत कदमों का कालानुक्रम

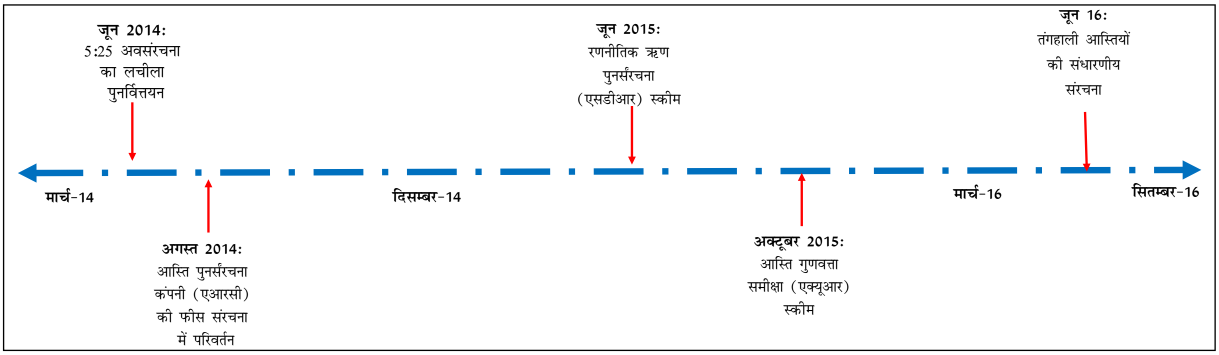

5/25 संरचना पुन:वित्तीयन योजना : इस योजना ने संरचना एवं 8 अतिमहत्वपूर्ण उद्योगों में संकटासन्न परिसंपदाओं के पुन:प्रतिष्ठापन के लिए अधिक अवधि प्रदान की। ऋण देने वालों से कहा गया कि वापसी की अवधि 25 वर्ष तक बढ़ा दो, प्रत्येक 5वें वर्ष ब्याज की दर में भी परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन करो। इस प्रकार ऋण की अवधि इन प्रकल्पों की दीर्घ प्रारंभिक अवधि के अधिक अनुरूप हो जाएगी। इस योजना का लक्ष्य उधारकर्ताओं की साख और तरलता को सुधारना था। साथ ही बैंक इनको दिए गए उधार को भी अपने मानक ऋण मानकर इनकी भरपाई के प्रावधान की लागत से बच सकते थे। किन्तु ऋण वापसी की अवधि का एक परिणाम यह भी रहा : कंपनियों को कुल मिलाकर अधिक राशियां ब्याज के रूप में चुकानी पड़ गई। ये उन्हें कठिन लगा और बैंक और अधिक ऋण देने को बाध्य होते गए (पुराने ऋण सदा हरित होते गए)। इसने तो अंतत: प्रारंभिक समस्या को और गंभीर बना दिया है।

निजी परिसंपदा पुन:प्रतिष्ठापन कंपनिया (ARCs) : इन ARCs से भारत को SARFAESI अधिनियम, 2002 के अंतर्गत परिचित कराया गया। आशा थी कि ऋण समस्या के समाधान की विशेषज्ञ होने के नाते ये बैंकों को इस दायित्व से मुक्त कर देंगी। किन्तु इन ARCs को भी उन परिसंपदाओं के झंझट सुलझाने में कठिनाइयां आ रही हैं जो इन्होंने खरीद ली थी। अत: अब तो वे ऋणों को बहुत कम दामों पर खरीदने को तैयार हो रही है। किन्तु, परिणाम स्वरूप अब बैंक उन्हें बड़े पैमाने पर ऋण बेचने को उत्सुक नहीं है। फिर, 2014 में ARCs द्वारा उगाही जाने वाली शुल्क संरचना में भी बदलाव कर यह आवश्यक कर दिया गया कि ARCs तय कीमत का एक बड़ा हिस्सा पहले ही नकद चुकाएंगी। उसके बाद तो इन्हें बिक्री का क्रम बूंद-बूंद भर रह गया है। वर्ष 2014-15 और 2015-16 की अवधि में खाता मूल्यों की बात करें तो मात्र 5 प्रतिशत निष्पादनहीन परिसंपदाएं इन्हें बेची गई थी।

युक्तियुक्त ऋण पुन:रचना (SDR) : रिजर्व बैंक ने जून 2015 में बैंकों को ऋणी कंपनियों को दिए गए उधार को उन कंपनियों की अंश पूंजी में बदल डालने का एक अवसर दिया ताकि वे 51 प्रतिशत अंश पूंजी के मालिक बनकर उन कंपनियों को ही किन्हीं अन्य पक्षों को उच्चतम बोली पर बेच सकें। हां वर्तमान शेयर धारियों की सहमति आवश्यक थी (यह कार्य उन कंपनियों के संदर्भ में किया जाना था जिनकी परिसंपदाओं की पुन:रचना की गई थी किन्तु वे उक्त पुन:रचना की शर्तों को पूरा नहीं कर पाई थी)। इस कार्य के लिए 18 महीने का समय दिया गया था और इस अविधि में ऋणों को निष्पादक माना जाता था। किन्तु दिसंबर 2016 तक केवल दो कंपनियों को इस प्रावधान के अंतर्गत बेचा जा सका था। कारण यही था कि कंपनियों के ऋण का एक अंश ही पूंजी में परिवर्तित हुआ था और परिणाम स्वरूप वे वित्तीय रूप से अर्थक्षमताहीन ही बनी रही।

परिसंपदा गुणवत्ता समीक्षा (AQR) : बुरे ऋणों की समस्या के समाधान के लिए उनकी सटीक पहचान करना आवश्यक होता है। अत: रिजर्व बैंक ने AQR पर आग्रह किया ताकि यह तय हो सके कि बैंक अपने दिए गए ऋणों का आंकलन/वर्गीकरण रिजर्व बैंक द्वारा निर्दिष्ट ऋण वर्गीकरण नियमों के अनुसार ही कर रहे थे या नहीं। उक्त नियमों से प्रत्येक विचलन को मार्च 2016 तक सुधारा जाना था।

संकटासन्न परिसंपदाओं की धारणीय पुनःसंरचना : जून 2016 में प्रारंभ इस व्यवस्था के अंतर्गत बैंकों द्वारा नियुक्त की गई कोई स्वतंत्र एजेंसी यह निश्चित करने वाली थी कि किसी कंपनी के संकटासन्न ऋणों का कितना अंश धारणीय था। शेष (अधारणीय) भाग को अंश पूंजी और वरीयता पूंजी में परिवर्तित किया जाना था। SDR व्यवस्था के विपरीत इसमें कंपनी के स्वामित्व में कोई परिवर्तन नहीं होना था।

राजकोषीय रूपरेखाः विश्व बदल रहा है! क्या भारत को भी बदलना चाहिए?

05
अध्याय

''मैं चाहता हूँ कि सभी देशों की संस्कृति की बयारें मेरे घर के आसपास बहती रहें, किन्तु मैं अपनी संस्कृति को उन हवाओं के झोंकों में खोना नहीं चाहता''

*– **महात्मा गांधी***

विकसित देशों ने राजकोषीय सक्रियता को अपना लिया है, वे अब चक्रीयता विरोधी नीतियों को अधिक बड़ी भूमिका प्रदान कर रहे हैं और ऋण के स्टॉक को नियंत्रित रखना कम महत्वपूर्ण मान रहे हैं। किन्तु भारत के अपने अनुभवों ने तो इसके विरीत कुछ और ही सबक सिखाए हैं। इसने इस प्रकार की सक्रियता का नियमन करने की आवश्यकता को दोहराया है ताकि उत्कर्ष में अत्यधिक व्यय और अपकर्षकाल में अत्यधिक घाटे (की वित्तव्यवस्था) से बचा जा सके। इस प्रकार (अधिक व्यय-अधिक घाटे) की नीतियों ने ही 1991 और 2013 के समष्टि आर्थिक अस्थिरता जैसे संकट उत्पन्न किए थे। भारत के अनुभवों ने प्राथमिक संतुलन में स्थिरता के माध्यम से ऋणों में कटौती के स्थान पर तीव्र आर्थिक संवृद्धि पर अधिक भरोसा करने से बचने का भी सुझाव दिया है, क्योंकि इस प्रकार की संवृद्धि ऋण जीडीपी अनुपात को पूरी तरह से अधोमुखी पथ की ओर अग्रसर नहीं बना पाई है। ये प्रवाह और स्टॉक विषयक दुर्बलताएं अब नवीन राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजटीय प्रबंधन (FRBM) समिति की समीक्षा का विषय है।

I. विषय प्रवेश

5.1 वर्तमान सरकार सत्ता संभालने के बाद से राजकोषीय अवस्था को सुधारने के प्रति कटिबद्ध है। यह राजकोषीय घाटे और जीडीपी के अनुपात में 2013-14 के स्तर 4.5 प्रतिशत से अगले तीन वर्षों में 4.1 प्रतिशत, 3.9 प्रतिशत और 3.5 प्रतिशत रह जाने मे स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही है। तो भविष्य में राजकोषीय नीति का स्वरूप क्या होना चाहिए? यह प्रश्न अंतर्राष्ट्रीय और आंतरिक, दोनों प्रकार के कारणों से बहुत ही महत्वपूर्ण हो गया है।

5.2 वर्ष 2008-09 के वैश्विक वित्तीय संकट के बाद से मौद्रिक नीति पर चिन्तन में एक बड़ा परिवर्तन आया है। भीषण अपप्रवाहों से ग्रस्त अर्थव्यवस्था के जहाज को स्थायित्व प्रदान करने के लिए मौद्रिक नीति निर्माता उन विधियों की ओर उन्मुख हुए हैं जिन पर कभी ध्यान भी नहीं दिया गया था : शून्यप्रायः ब्याज की दरें; केन्द्रीय बैंकों के तुलनपत्रों में विस्फोटक प्रसार के माध्यम से परिमाणात्मक स्तर पर मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि, और सभी प्रकार के सामान्य विवेक के विपरीत जाकर ऋणात्मक ब्याज दरें जहां व्यक्तियों को नकद राशि अपने पास रखने भर पर ब्याज प्राप्त होता है।

5.3 किन्तु अब मौद्रिक तरलता वृद्धि का दौर अपनी सभी अपेक्षाओं और संभावनाओं को भुना चुका है तो नीति निर्माता पुनः राजकोषीय नीति अस्त्रों की ओर ध्यान देने को विवश हो रहे हैं। यहां भी एक बड़ा चिन्तन विवर्तन हो चुका है। अमेरीकी राष्ट्रपति ओबामा की आर्थिक सलाहकार परिषद[1] के अध्यक्ष जैसन फर्मन ने परंपरागत बोध में आए परिवर्तनों का बहुत स्पष्ट रूप से इस प्रकार वर्णन किया है :

[1] अक्तूबर, 2016 के एक भाषण में देखें https://www.whitehouse.gov/sites/default/files/page/files/20161005_furman_suerf_fiscal_policy_cea.pdf

- राजकोषीय नीति का एक चक्रीयता विरोधी स्परूप में प्रयोग करना उचित है;
- यह उस समय बहुत ही उपयोगी हो सकती है, जब मौद्रिक नीति तो शून्य ब्याज की निम्नतम सीमा पर पहुँच चुकी है, क्योंकि उस स्थिति में गुणक विशेष रूप से उच्च स्तर (1.5) के निकट होते है;
- राजकोषीय नीति जीडीपी संवर्धन में सहायक होती है, इसीलिए इससे कर संकलन में वृद्धि होगी, अर्थात राजकोषीय सक्रियता किसी सीमा तक स्वयं अपनी लागत चुका देगी (गैस्पर ऑब्स्टफेल्ड और सहाय, 2016);
- वैसे भी, ब्याज की दरें तो अब निम्न ही रहने वाली हैं, अत: ऋण के धारणीय स्तर के अनुमानों को अधिक ऊंचे स्तर तक ले जाया जा सकता है;
- और अंत में, धारणीयता का संबंध भुगतान करने की क्षमता के साथ कम होता है, यह तो राजनीतिक व्यवस्था की अपनी देनदारियों का सम्मान करने की तत्परता से अधिक घनिष्ठतापूर्वक जुड़ा हुआ प्रश्न है।

5.4 दूसरे शब्दों में, नई राजकोषीय दृष्टि अब स्टॉक के स्थान पर प्रवाहों (घाटे) की दिशा में अधिक सक्रियता दिखा रही है। यह अब स्टॉक (घाटा) की धारणीयता को लेकर भी चिन्तित नहीं है। अमेरीकी चुनाव के बाद तो इस सक्रिय राजकोषीय नीति के वास्तविक रूप धारण करने की संभावना प्रबल हो चली है। ये बात और है कि चक्रीय दशाएं अब परिवर्तित हो चुकी हैं, निम्न बेरोजगारी के कारण अब वेतन और स्फीति में वृद्धियां होने लगी है।

5.5 यह दृष्टिबोध भारत पर किस प्रकार लागू होगा? यहां पिछले 15 वर्षों के अनुभवों और अगले 10-15 वर्षों की संभावनाओं एवं अपेक्षाओं पर भी विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है। FRBM, 2003 में निहित राजकोषीय नीति रूपरेखा की पुन: समीक्षा करते हुए ये प्रश्न (और इनकी पृष्ठभूमी) बहुत महत्वपूर्ण रूप धारण कर लेगा।

II. भारत और विश्व : प्रवाह

5.6 उन्नत देशों में राजकोषीय सक्रियता की नीति के प्रतिपादन के दो आधार स्तंभ हैं : मंद आर्थिक गतिविधि और मौद्रिक नीति द्वारा इस समस्या के समाधान में असमर्थता।

5.7 भारत में भी इन बातों की कुछ अनुगूँज सुनाई दे रही है। कुछ यूरोपीय देशों की भांति भारत अभी भी दोहरी तुलनपत्र समस्या से ग्रस्त है और यह निवेश एवं साख प्रसार में बाधक होकर समस्त आर्थिक गतिविधियों में शिथिलता का कारण बन रही है। अतिऋण निवारण अभी नहीं हो पाया है और उस ऋणाधिक्य की धूमिल छाया अभी आर्थिक गतिविधियों पर संरोध की भांति छाई रहेगी (देखें अध्याय-4)। अत: चक्रीयता निवारक राजकोषीय नीति की आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता।

5.8 इस कथन के बाद भी भारत की परिस्थितियां उन्नत देशों से कुछ भिन्न ही हैं। एक तो भारत में संवृद्धि दरें कही उच्चतर हैं, हां स्फीति दर भी उन देशों से अधिक ही है। अत: मौद्रिक नीति किसी भी तरह से अपनी शून्य प्राय: निम्नतम सीमा के निकट नहीं है। इस कारण राजकोषीय सक्रियता के लिए आवश्यकता इतनी 'तीव्रतापूर्ण' प्रतीत नहीं होती। यही नहीं, स्फीति दर के उच्च होने के कारण चक्रीयता निवारक नीति में निहित स्फीतिकारी प्रभावों के प्रति भी हमें बहुत सचेत रहना होगा। संभावित संवृद्धि का पूर्वानुमान, विशेषकर भारत में, बहुत कठिन रहता है। फिर भी एक नवीनतम प्रयास यही सुझाता है कि सकल मांग में, स्फीति को बढ़ावा दिए बिना, वृद्धि कर पाने की संभावना क्षीण ही है (चिनॉय, कुमार, मिश्रा, 2016)।

5.9 चक्रीयता निवारक सक्रियता के विरूद्ध एक अधिक महत्वपूर्ण तर्क तो भारत के अपने पिछले कुछ समय के अनुभव हैं। रेखाचित्र-1 और 2 इसी इतिहास को दर्शा रहे हैं। रेखाचित्र-1 ने पिछले 35 वर्षों में भारत में दो बार समष्टि आर्थिक स्तर की भेदयताओं (1991 और 2013) के साथ राजकोषीय घाटे में बड़ी वृद्धि की घटनाओं के संबंध दिखाए हैं। ये घाटा वृद्धि उक्त धारणा से पूर्व या फिर बाद में दिखाई देती है। अस्सी के दशक में संवृद्धि दर के त्वरण के फलस्वरूप सरकारी व्यय और वित्तीय घाटे में तीव्र वृद्धि हुई थी। इस घाटे पर अंकुश रख पाने में विफलता ने देश की बाह्य स्थिति को कमजोर कर दिया और पैदा हुआ 1991 का भुगतान शेष का संकट। हां, 1991 और 2013 में एक बड़ा अंतर था, 1991 में हम स्थिर विनिमय दरों का अनुसरण कर रहे थे और उन्होंने एक भरा पूरा संकट खड़ा कर दिया था, जबकि 2013 में विनिमय दरों को तरित रखा जा

रेखाचित्र 1 : केन्द्रीय सरकार को सकल राजकोषीय घाटा (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

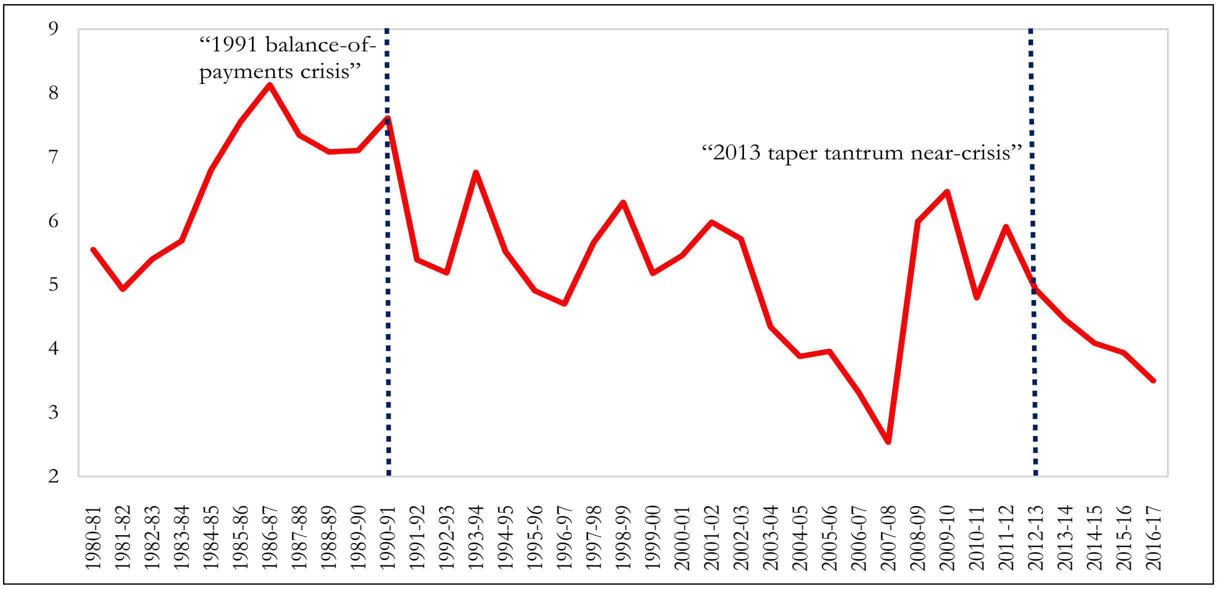

स्रोत: बजट दस्तावेज।

रेखाचित्र 2 : केन्द्र सरकार : राकोषीय घाटा और व्यय (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

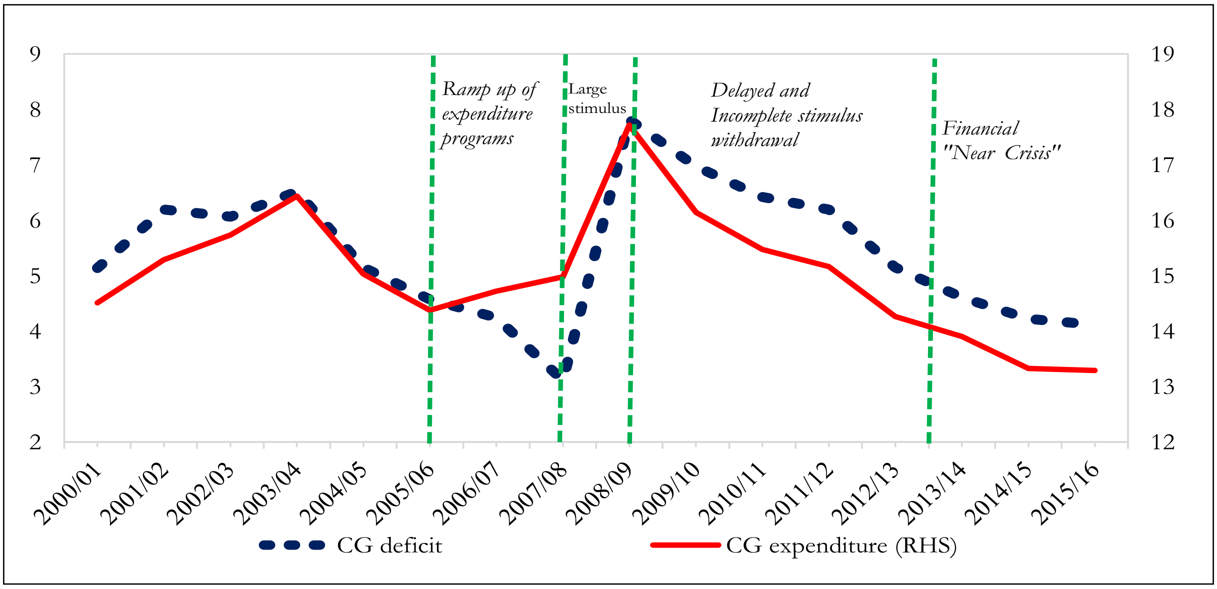

टिप्पणी : आईएमएफ के अनुसार राजकोषीय घाटे की परिभाषा।

स्रोत: **अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष।**

रहा है। इस तरित विनिमय दर ने अन्य परिसंपदाओं की कीमतों में व्यावधानों को सीमित रखा है।

5.10 रेखाचित्र-2 2013 के संकट तक पहुँचाने वाले घटनाक्रम पर केन्द्रित है। 2000-10 के दशक मध्य में संवृद्धि उत्कर्ष काल में अनेक नए व्यय कार्यक्रम प्रारंभ किए गए थे, किन्तु जब कर आदि से प्राप्तियां सामान्य प्राय: हो गई तो उन कार्यक्रमों का राजकोषीय भार असहय्य हो गया। फिर, वैश्विक वित्तीय संकट के बाद बजट के घाटे में एक बार नया उफान आया। वह अत्यंत ही उच्च स्तर पर पहुँच गया। वह (2005-06) से प्रारंभ उत्कर्ष प्रेरित एवं वित्तीय व्यय GFC के कारण एक बड़े संवर्धन (जीडीपी के 4 प्रतिशत के समान) का साथ पाकर 2013 के सितंबर माह में एक बड़े वित्त एवं करेंसी संकट का कारण बन गया। उक्त संवर्धन

तालिका 1 : सामान्य सरकारी ऋण जीडीपी

देश	2007	2008	2009	2010	2011	2012	2013	2014	2015	2016
जापान	183.0	191.8	210.2	215.8	231.6	238.0	244.5	249.1	248.0	250.4
इटली	99.8	102.4	112.5	115.4	116.5	123.3	129.0	132.5	132.7	133.2
संयुक्त राज्य	64.0	72.8	86.0	94.7	99.0	102.5	104.6	104.6	105.2	108.2
फ्रांस	64.4	68.1	79.0	81.7	85.2	89.6	92.4	95.3	96.1	97.1
कनाडा	66.8	67.8	79.3	81.1	81.5	84.8	86.1	86.2	91.5	92.1
यूनाइटेड किंगडम	42.2	50.3	64.2	75.7	81.3	84.8	86.0	87.9	89.0	89.0
ब्राजील	63.7	61.9	64.9	63.0	61.2	62.3	60.4	63.3	73.7	78.3
भारत	**74.0**	**74.5**	**72.5**	**67.5**	**69.6**	**69.1**	**68.0**	**68.3**	**69.1**	**68.5**
जर्मनी	63.5	64.9	72.4	81.0	78.3	79.5	77.1	74.5	71.0	68.2
मेक्सिको	37.5	42.8	43.9	42.2	43.2	43.2	46.4	49.5	54.0	56.0
अर्जनटिना	50.8	43.9	53.8	42.6	38.1	39.4	42.2	43.6	52.1	51.8
दक्षिण अफ्रीका	27.1	26.5	30.1	34.7	38.2	41.0	44.0	46.9	49.8	51.7
चीन	29.0	27.0	32.6	33.1	33.1	34.0	36.9	39.8	42.9	46.3
कोरिया	28.7	28.2	31.4	30.8	31.5	32.1	33.8	35.9	37.9	38.9
तुर्की	39.9	40.0	46.1	42.3	39.1	36.2	36.1	33.5	32.9	31.7
इंडोनेशिया	32.3	30.3	26.5	24.5	23.1	23.0	24.8	24.7	27.3	27.5
रूस	8.0	7.4	9.9	10.6	10.9	11.8	13.1	15.9	16.4	17.1
उन्नत अर्थव्यवस्थाएं	*71.7*	*78.5*	*91.9*	*98.4*	*102.6*	*106.8*	*105.6*	*105.4*	*105.4*	*108.6*
यूरो क्षेत्र	*64.9*	*68.5*	*78.3*	*84.1*	*86.7*	*91.3*	*93.3*	*94.3*	*92.5*	*91.7*
जी-7	*80.9*	*88.9*	*103.7*	*111.9*	*117.1*	*121.3*	*119.4*	*118.6*	*117.9*	*121.7*
उदीप्यमान बाजार एवं मध्यम आय अर्थव्यवस्थाएं	*35.2*	*33.5*	*38.4*	*38.1*	*37.3*	*37.5*	*38.9*	*41.1*	*44.8*	*47.3*

स्रोत: आईएमएफ फिस्कल मॉनीटर (अक्तूबर, 2016)

को पर्याप्त रूप से और समय रहते वापस नहीं लेने की यहां मुख्य भूमिका रही।

5.11 दूसरे शब्दों में भारत के राजकोषीय व्यवहार में उच्चतर घाटे की ओर रूझान तो अंतर्निहित ही है, यहां संवृद्धि उत्कर्ष में राजकीय व्यय की वृद्धि चक्रीयता का साथ दे रही होती है तो अपकर्ष में व्यय वृद्धि को चक्रीयता निवारक स्वरूप में प्रयोग किया जाता है। ऐसी दशा में राजकोषीय भंगुरता का संचार होना स्वभाविक ही है। अत: यदि वे प्रभावी रह सकें तो, ऐसे राजकोषीय नियम बनाए जाने चाहिए जो उत्कर्ष में व्यय उत्कर्ष तथा अपकर्ष में चक्रीयता का निवारण कर सकें।

III. भारत और विश्व : स्टॉक

5.12 भारत में एक स्टॉक समस्या भी प्रतीत होती है। इसका ऋण जीडीपी अनुपात अन्य उदीप्यमान बाजार व्यवस्थाओं से अधिक है। किन्तु इस प्रकार की मशीनी तुलना भारत की राजकोषीय क्षमता के आंकलन की सही विधि नहीं होगी, वास्तविक समस्या कहीं अधिक दुर्बोध है।

(क) राजकोषीय प्रतिबद्धता

5.13 भारत में विकसित देशों की भांति एक विशेषता है : इसने कानूनी या वास्तविक विधि से कभी भी आंतरिक ऋण लौटाने में चूक नहीं की है (स्फीति काल कितना ही लंबा रहा हो)। इस दृष्टि से भारत आम उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाओं से बहुत ही भिन्न है (यह लैटिन अमेरिकी देशों से तो बहुत ही अलग है, जिन्होंने आन्तरिक दायित्वों को सहज ही नकार दिया है। यदि राजकोषीय एवं ऋण धारणीयता का नाता सरकार की अपने ऋण का स्तर सीमित रखने तथा समय पर भुगतान की क्षमता में विश्वास और भरोसे से है (जैसे रीनहार्ट, रोगोफ और सवस्तानो, 2003, का सुझाव है) तो निश्चित रूप से भारत का रिकार्ड बहुत अच्छा है। अभी कुछ समय पूर्व भारत का ऋण जीडीपी अनुपात 83 प्रतिशत हो गया था, फिर भी इसने अपने भुगतान

दायित्व को पूर्णत: निभाने में कोई कोताही नहीं आने दी है।

5.14 वस्तुत: बाह्य ऋण को लेकर तो भारत का व्यवहार और भी शिक्षाप्रद है। जब 1991 में इसकी विदेशी देनदारियां पूरी करने की क्षमता पर संदेह हुए तो अपने ऋणदाताओं को आश्वस्त करने के लिए सरकार एक पराकाष्ठापूर्ण कदम उठाने में भी नहीं हिचकिचाई थी। भारतीय रिजर्व बैंक के पास जमा सोना एक विशेष विमान द्वारा ले जाकर बैंक ऑफ इंगलैंड की तिजोरियों में प्रतिभूति स्वरूप जमा करवा कर ऋण भुगतान को लेकर भारत की प्रतिबद्धता को प्रमाणित किया गया था (सीतापति, 2016)।

(ख) ऋण की गत्यात्मकता (उच्चावचन)

5.15 अगला प्रश्न ऋण में परिवर्तनों का है। ऋण धारणीयता का मूल समीकरण सूत्र इस प्रकार है :

$$d_t - d_{t-1} = pd_t - \frac{g_t - r_t}{1+g_t}.d_t \quad \text{....................} \ (1)$$

जहां,

d_t = अवधि t में ऋण जीडीपी अनुमान

d_t-1 = अवधि t-1 में ऋण जीडीपी अनुमान

pd_t = अवधि t में प्राथमिक घाटा

g_t = मौद्रिक जीडीपी संवृद्धि दर

r_t = मौद्रिक प्रभावी ब्याज दर (सरकारी ऋण की उधार लागत)

5.16 यह समीकरण दिखाता है कि यदि सरकार के बजट में प्राथमिक घाटा pd चल रहा है तो मौद्रिक संवृद्धि दर को मौद्रिक ब्याज की दर से अधिक होना चाहिए, अर्थात (g-r) का मान शून्य से अधिक होना चाहिए तभी ऋण भार में वृद्धि रूक पाएगी। इसके विपरीत यदि प्राथमिक संतुलन धनात्मक हो तो (g-r) ऋणात्मक होने पर भी ऋण अनुपात स्थिर रह सकता है।

5.17 (g-r) और pd को लेकर तुलनाएं बहुत रोचक हैं। उन्नत देशों में निम्न स्फीति दर तथा आर्थिक गतिविधियों के निम्न स्तर ने मिलकर वित्तीय संकटों के बाद वहां मौद्रिक दर को घटा दिया है। इससे स्वयं ही ऋण की धारणीयता में भंगुरता आ जाती है। किन्तु इसी समय उच्च बचतों, वृद्धता और संरक्षित संपदाओं की विश्व व्यापी मांग में चल रही निरंतर प्रवृत्तियों ने ब्याज की दरों के संतुलन मान को कम कर दिया है। दूसरे शब्दों में, g और r, दोनों में कमी आई है। इसी से ऋण की गत्यात्मकता धारणीय बनी हुई है।

5.18 किन्तु भारत में परिस्थितियां अलग रही हैं। भारत तो अभिसृति पथ पर चल रहा है। इसका विकास स्तर अपेक्षाकृत निम्न है और अगले एक दो दशकों तक इसकी संवृद्धि दर महत्वपूर्ण रूप से उच्च रहने वाली है। यही परिदृश्य पिछले दो दशकों से चल रहा है। पिछले 35 वर्षों में देश ने 6 प्रतिशत वार्षिक की वास्तविक संवृद्धि प्राप्त की है और इस अभिसृति क्रम को इसी प्रकार बनाए रखने की संभावनाएं बहुत प्रचुर प्रतीत होती है। अगले 15 वर्षों तक भारत की जीडीपी संवृद्धि दर का निम्नतम अनुमान 7–8 प्रतिशत है (यह प्रति व्यक्ति आधार पर 5.5 से 7 प्रतिशत रहेगा)। यदि इसे स्फीति की लक्षित दर 4±2 प्रतिशत के साथ मिलाकर देखें तो अर्थ होगा कि अगले दशक और उससे कुछ आगे तक मौद्रिक जीडीपी संवृद्धि दर 11–14 प्रतिशत के बीच रहेगी।

5.19 संवृद्धि ब्याज दरों के बीच अन्तर को लेकर उपर्युक्त घटनाक्रम के प्रभाव बहुत ही विलक्षण होंगे। उन्नत देशों में तो (g-r) का अंतर 0–2 प्रतिशत के बीच रहेगा, अर्थात वास्तविक जीडीपी संवृद्धि 1–2 प्रतिशत, जमा 1–2 प्रतिशत कीमत वृद्धि, अर्थात मौद्रिक स्फीति दर 2 प्रतिशत से कम ही रहेगी। किन्तु, भारत में यह अन्तर 4–6.5 प्रतिशत रह सकता है, अर्थात उच्च मौद्रिक संवृद्धि घटा 7–7.5 प्रतिशत की ब्याज दर (इसमें स्फीति तथा एक देश विशिष्ट जोखिम प्रीमियम शामिल है)। परिणाम स्वरूप अगले दशक और उससे अधिक समय में भारत के लिए ऋण गत्यात्मकता विकसित एवं अन्य उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाओं की अपेक्षा बहुत सकारात्मक रहने वाली है।

5.20 किन्तु इस गत्यात्मकता के दूसरे पक्ष, चक अर्थात प्राथमिक घाटे की क्या स्थिति होगी? यहां भी विकसित देशों से एकदम अलग स्थिति दिखती है, पर भारत की भेद्यता भी स्पष्ट हो रही है।

5.21 यह भेद्यता देश के प्राथमिक घाटे को लेकर है, अर्थात इसके गैर ब्याज व्यय तथा राजस्व प्राप्तियों के बीच अंतर से संबंधित है। सीधी सी बात यही है कि भारत की सरकार (केन्द्र एवं राज्य मिलकर) ऋण

तालिका 2 : सामान्य प्रशासन का प्राथमिक संतुलन (जीडीपी का प्रतिशत) और वास्तविक जीडीपी संवृद्धि (प्रतिशत)

	2007	2008	2009	2010	2011	2012	2013	2014	2015	2016	औसत	वास्तविक स.घ.उ. वृद्धि (प्रतिशत)
अर्जनटिना	1.7	1.8	-1.1	-0.4	-1.4	-1.5	-2.4	-3.2	-5.4	-5.6	**-1.8**	**2.3**
ब्राजील	3.2	3.8	1.9	2.3	2.9	1.9	1.7	-0.6	-1.9	-2.8	**1.2**	**2.0**
चीन	0.4	0.4	-1.3	1.1	0.4	-0.2	-0.3	-0.4	-2.1	-2.2	**-0.4**	**8.9**
भारत	**0.4**	**-5.3**	**-5.2**	**-4.2**	**-3.9**	**-3.1**	**-3.1**	**-2.8**	**-2.3**	**-2.1**	**-3.2**	**7.4**
इंडोनेशिया	0.9	1.7	-0.1	0.0	0.5	-0.4	-1.0	-0.9	-1.2	-1.0	**-0.2**	**5.7**
मोक्सिको	1.5	1.7	-2.3	-1.4	-1.0	-1.2	-1.2	-1.9	-1.2	0.1	**-0.7**	**2.1**
रूस	5.6	4.7	-6.2	-3.1	1.7	0.7	-0.8	-0.7	-3.2	-3.4	**-0.5**	**1.5**
दक्षिण अफ्रीका	3.9	2.1	-2.5	-2.1	-1.1	-1.3	-0.9	-0.6	-0.6	-0.4	**-0.4**	**2.1**
दक्षिण कोरिया	1.4	1.2	-0.7	0.8	0.9	0.8	-0.2	-0.3	-0.4	-0.3	**0.3**	**3.3**
तुर्की	2.9	1.7	-1.4	0.3	2.1	1.1	1.4	1.4	1.2	0.3	**1.1**	**3.5**

स्रोत : **IMF Fiscal Monitor (October 2016)**

देयताओं पर ब्याज चुकाने को छोड़ भी दें तो अपने चालू खर्चे पूरा करने योग्य राजस्व भी एकत्र नहीं कर पा रही।

5.22 वैसे प्राथमिक घाटा होना कोई विचित्र बात नहीं होती। अधिकांश बड़ी उदीप्यमान बाजार व्यवस्थाओं में यही क्रम चल रहा है। उनकी यह स्थिति वैश्विक वित्तीय संकट के बाद संवृद्धि दर गिरने पर उत्प्रेरक व्यय में वृद्धि के बाद हुई है (तालिका-2)। फिर भी भारत में इस घाटे का आकार, पिछले दशक में तो इसकी संवृद्धि दर से बहुत अधिक रहा है। जब हम देखते हैं कि इसकी संवृद्धि दर इसके सामान्य स्पर्धियों की तुलना में बहुत अधिक रही है तो एक आशा बनती है कि इसका प्राथमिक घाटा कम हो रहा होगा। किन्तु वास्तविकता इस आशा के बिल्कुल विपरीत रही है (रेखाचित्र-3)।

5.23 प्राथमिक घाटा रखने के कारण सरकार अपने ऋण अनुपात को सीमित रखने के लिए संवृद्धि तथा अपने पक्ष में ब्याज दरों पर निर्भर होकर रह गई है। वस्तुत: वैश्विक वित्तीय संकट के बाद जैसे ही संवृद्धि

रेखाचित्र 3 : वास्तविक जीडीपी संवृद्धि दर और औसत प्राथमिक घाटा (जीडीपी का प्रतिशत) 2007-16

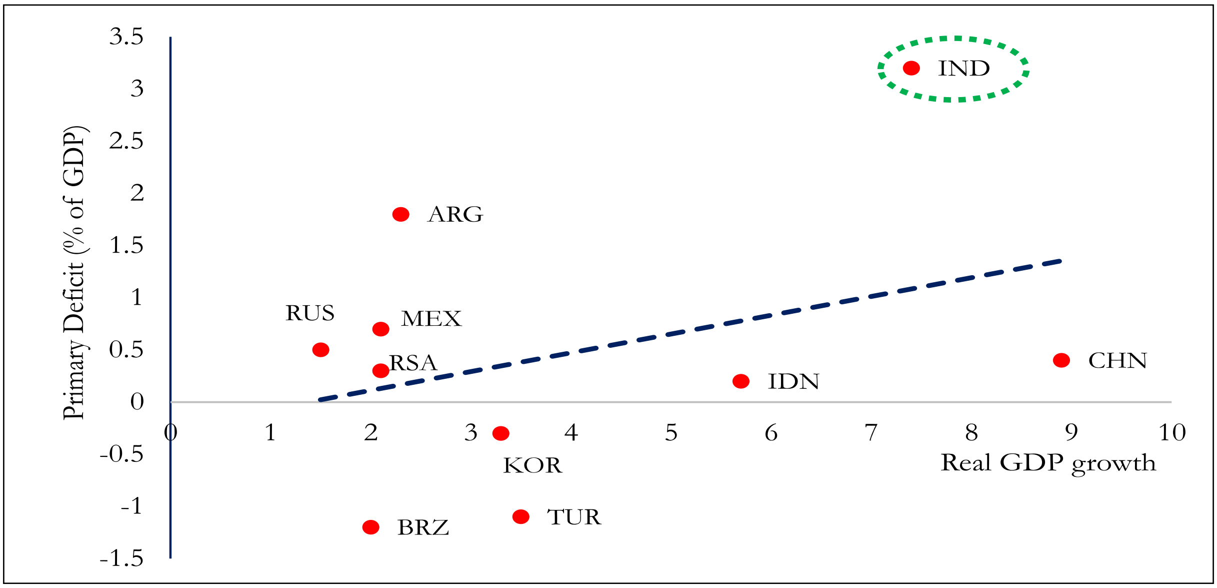

स्रोत: आईएमएफ, वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक, अक्तूबर, 2016।

रेखाचित्र 4 : सामान्य सरकारी ऋण, प्राथमिक संतुलन और ब्याज दर मौद्रिक संवृद्धि अन्तर

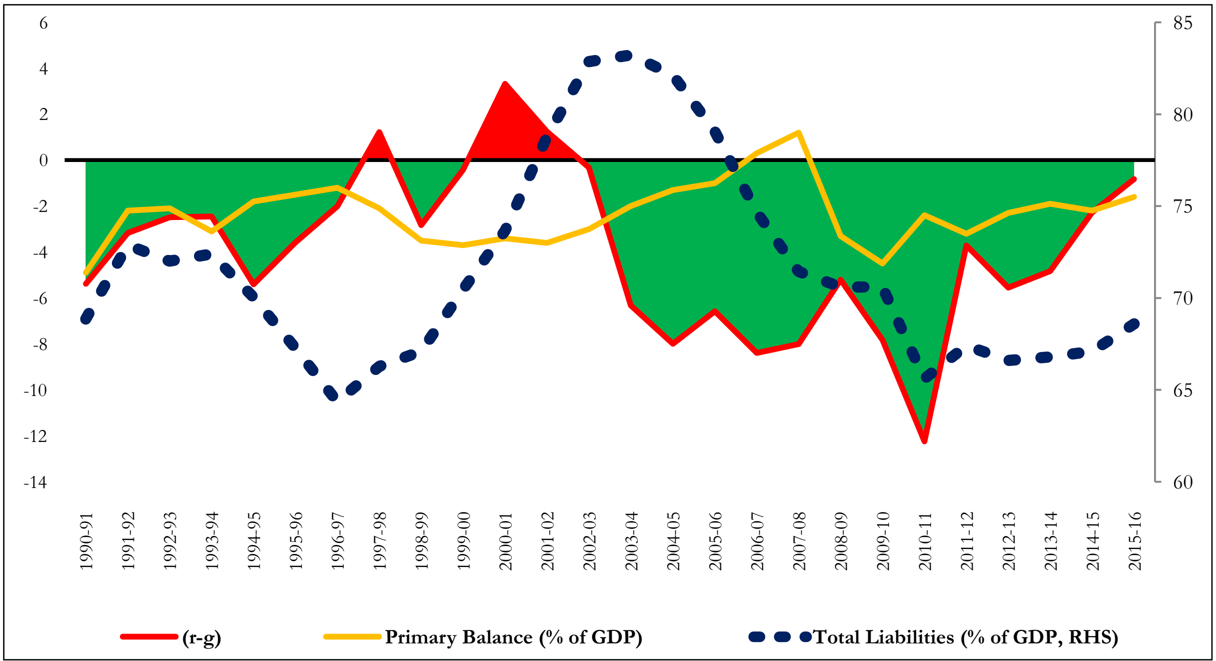

स्रोत: **RBI, बजट दस्तावेज और समीक्षा अनुमान**

दर में कुछ गिरावट आई और अपस्फीति प्रारंभ हुई, वैसे ही ऋण के स्तर फिर ऊपर उठने लग गए (रेखाचित्र-4)।

5.24 अतः निष्कर्ष होगा कि यदि किसी दिन संवृद्धि बाधित हुई और ब्याज दर में निरंतर वृद्धि होने लगी तो ऋण अनुपात का कुंतल उर्द्धवगामी हो जाएगा। ऋण के विस्फोट के लिए निश्चित ही किसी अप्रत्याशित संक्षोभ की आवश्यकता पड़ जाती है। किन्तु यह केवल कोरी सैद्धांतिक संभावना मात्र नहीं है : ग्रीस में वास्तव में यही हुआ है।

5.25 भारत तथा अन्य देशों की प्राथमिक संतुलन दशाओं में यह बड़ा अंतर एक गहन तथ्य की ओर संकेत कर रहा है। भारत प्रायः नीति संबंधी राजकोषीय संमजन धीमे-धीमे करता है। संकट काल को छोड़ इसकी राजकोषीय दशा निरंतर सुधरती रही है। इसे कुछ अप्रत्याशित प्राप्तियों से सहायता भी मिलती रही है। यह सहायता चाहे 2000 के दशक मध्य की अति तीव्र संवृद्धि से मिली हो या फिर तेल कीमतों में गिरावट ने पैट्रोलियम पर सब्सिडी घटाने और उत्पादन शुल्क बढ़ाने के अवसर ने प्रदान की हो। उदाहरण के लिए 2014-15 से 2016-17 के बीच निम्न तेल कीमतों का राजकोषीय समंजन में लगभग एक प्रतिशत बिन्दु का योगदान रहा है। रेखाचित्र-4 में ध्यान दें : प्राथमिक संतुलन रेखा अपेक्षाकृत स्थायित्वपूर्ण रही है और 2007 के आसपास इसमें आया सुधार संवृद्धि उत्कर्ष का परिणाम था तो अवधि अंत में यहां निम्न तेल कीमतों के कारण इसके वर्तमान स्वरूप की रचना हुई है।

V. निष्कर्ष

5.26 FRBM को कानून का दर्जा मिले और विवेकपूर्ण राजकोषीय प्रबंधन के सिद्धांतों का प्रतिपादन हुए 13 वर्ष हो चुके हैं। इस अवधि में भारत में परिस्थितियां पूरी तरह से बदल चुकी हैं। उस समय 2003 में तो देश की अर्थव्यवस्था अपेक्षाकृत छोटे आकार की थी और बाहरी दुनिया से अपेक्षाकृत अलग-थलग सी थी। उस समय की प्रति व्यक्ति आय का सृजन अन्य उदीप्यमान बाजारों की तुलना में बहुत पिछड़ा हुआ था। आज भारत एक मध्यम आय देश बन चुका है। इसकी अर्थव्यवस्था विशाल एवं अनावृत है तथा विश्व के किसी भी बड़े अर्थतंत्र की अपेक्षा यहां की अर्थव्यवस्था अधिक तीव्र दर से संवृद्धिशील है।

5.27 अतः अनेक प्रकार से भारत की अर्थव्यवस्था पश्चिम की बड़ी, अनावृत और समृद्ध अर्थव्यवस्थाओं के निकट पहुँच रही है। किन्तु इसका यह प्रगतिपथ एक मौलिक रूप में उनसे भिन्न है। पिछली चौथाई

शती में जहां भारत की संवृद्धि दर में सुधार हुआ है वहीं उन्नत देशों की गत्यात्मकता में शिथिलता आई है। वैश्विक वित्तीय संकट के बाद से तो यह अंतर बहुत ही स्पष्ट हो चला है। और इसी ने राजकोषीय परिदृश्यों एवं चिंतन में एक मूलभूत प्रत्यांतर का सृजन किया है। उस समय, 2003 में, इस बात पर आम सहमति थी कि अपनी इच्छा से कार्य करने की अपेक्षा राजकोषीय व्यवहार के कतिपय नियमों का अनुसरण करना बेहतर है, और राजकोषीय नीति को अल्पकालिक चक्रीयता निवारक परिप्रेक्ष्य की अपेक्षा मध्यमकालिक ऋण भार निवारण पर केन्द्रित रहना चाहिए। अब उन्नत देश इन सिद्धांतों का त्याग कर राजकोषीय सक्रियता का दामन थाम रहे हैं, चक्रीयता निवारक नीतियों की भूमिका का संवर्धन हो रहा है और परिणामतः ऋण भंडार या भार के निवारण से ध्यान हटता जा रहा है।

5.28 किन्तु भारत के अनुभवों ने कुछ विपरीत सीखें सिखाई हैं। इसने राजकोषीय घाटे के नियंत्रण के नियमों पर प्रतिबद्धता दोहराई है, क्योंकि यहां तो उत्कर्ष में मुक्त हस्त हो व्यय करने और अपकर्ष में मांग संवर्धन हेतु अधिक व्यय करना सामान्य मानसिकता का अंग बन चुका है। इसने राजकोषीय एवं प्राथमिक घाटे में निरंतर, शनै शनै समंजन द्वारा ऋण निवारण की अपेक्षा तीव्र संवृद्धि पर भरोसा कर बैठने की जोखिमों को भी भली प्रकार समझ लिया है। संक्षेप में, भारत ने FRBM में प्रतिपादित राजकोषीय नीति सिद्धांतों की मूलभूत वैधता को ही रेखांकित किया है।

5.29 भले ही FRBM के मूल सिद्धांत अभी भी मान्य हों, पर इनकी कार्यविधि, जिसका निर्माण 2003 में हुआ था, में तो आज के भारत, बल्कि कल होने वाले भारत की छवि का समावेश होना ही चाहिए। यही कार्य है जिसे FRBM समीक्षा समिति को करना है, उसे 21वीं शती के लिए एक नए FRBM परिवेश की रचना करनी है।

संदर्भ

1. Chinoy,S., Kumar,P., and Mishra,P.,2016, *"What is Responsible for India'sSharp Disinflation?," IMF Working PaperNo. WP/16/166*

2. Furman, J., 2016, *"The new view of fiscalpolicy and its application," VOXEU. ORG, Nov. 2, 2016.*

3. Gaspar,V., Obstfeld, M., and Sahay, R.,2016, *"Macroeconomic ManagementWhen Policy Space Is Constrained:A Comprehensive, Consistent, andCoordinated Approach to EconomicPolicy," IMF Staff Discussion Note.*

4. Reinhart, C. M., Kenneth S. Rogoff, and Miguel A. Savastano, 2003, *"DebtIntolerance," Brookings Papers onEconomic Activity.*

राजकोषीय नियम : राज्यों से सीख

06

अध्याय

''हे ईश्वर, मुझे शुचिता और संयम प्रदान करना, किन्तु अभी नहीं।''

–सेंट ऑगंस्टाइन

अधिकांश राज्यों ने अपने राजकोषीय उत्तरदायित्व विधेयक (FRL) पारित करने के बाद शीघ्र ही लक्षित राजकोषीय घाटा दर (GSDP का 3 प्रतिशत) प्राप्त कर ली थी और वे उसी का अनुपालन भी कर रहे हैं। किन्तु इस प्रभावशाली राजकोषीय निष्पादन के पीछे एकमात्र प्रेरणा शक्ति FRL की नहीं थी। जीडीपी संवृद्धि में त्वरण, केंद्र से अधिक धन राशियों के अंतरण, ब्याज भुगतान में कमी और केंद्र द्वारा CSS व्यय में वृद्धि ने भी राज्यों की वित्तीय दशा को सुदृढ़ करने में एक बड़ा योगदान दिया है। राज्यों का महत्वपूर्ण योगदान तो यही रहा कि उन्होंने आसानी से मिल रहे पैसे को उड़ाने से परहेज रखा (व्यय को नियंत्रित करने के प्रयास तो प्राय: नहीं ही हुए)। अब वेतन आयोग की सिफारिशों, संवृद्धि दर में कमी और UDAY बाँडों के पुन: भुगतान प्रारंभ होने के कारण राजकोषीय चुनौतियां सिर उठा रही हैं। फिर समष्टि आर्थिक दशाएं अब राज्यों के उतनी पक्ष में नहीं रहेंगी जितनी 2000 के दशक मध्य में थीं। भविष्य में झाकें तो राज्य सरकारों की वित्त व्यवस्था पर बेहतर बाजार आधारित अनुशासन लगाना आवश्यक होगा। और केन्द्र सरकार को न केवल राज्यों को राजकोषीय विवेक अपनाने की संप्रेरणाएं प्रदान करनी होंगी बल्कि उसे अपने व्यवहार द्वारा उनके समक्ष एक आदर्श भी प्रस्तुत करना होगा।

I. विषय प्रवेश

6.1 राजकोषीय प्रबंधन की समस्या चिरंतन ढुलमुलपन के आकर्षण की गाथा है। राजकोषीय विवेक के वांछनीय लक्ष्य की प्राप्ति को स्थगित रखने के स्थान पर उसे शीघ्र पाने के ध्येय से भारत ने भी अन्य अनेक देशों की भांति 2000 के दशक मध्य में राजकोषीय घाटे को नियंत्रित करने के लिए नए नियम रचकर कोष की वित्तव्यवस्था को सृढ़ढ़ करने की दिशा में महत्वाकांक्षी कदम उठाए। इस प्रकल्प का सबसे अधिक चर्चित एवं विश्लेषित भाग तो राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजटीय प्रबंधन (FRBM) विधेयक रहा है जिसे केन्द्र सरकार ने 2003 में पारित किया था। इसी विधेयक की झलक राज्यों में स्वीकृत/पारित राजकोषीय उत्तरदायित्व विधेयनों में मिली है। ये भी FRBM से कम महत्वपूर्ण नहीं रहे हैं, क्योंकि देश के सामान्य सरकारी घाटे में लगभग आधा अंश तो राज्यों के घाटे का ही रहता है। अनेक अध्ययनों ने दर्शाया है कि 2005 के बाद से राज्यों की राजकोषीय दशा में सुधार हुए हैं और इस सुधार के एक अंश का श्रेय अवश्य FRL को दिया जा सकता है (टपोला और सीमोन, 2009, चक्रवर्ती और दाश, 2013)। यह अध्याय उक्त विश्लेषण को आगे बढ़ाते हुए अभी प्राप्त हुए और नवीन एवं नूतनविध आंकड़ों का प्रयोग करने जा रहा है। ये नई प्रकार के आंकड़े राज्यों की बजट प्रक्रियाओं तथा बजट से बाहर रहने वाले व्यय के आंकड़े हैं।

6.2 ऊपरीतौर पर तो FRL अत्यंत ही सफल रहा प्रतीत

रेखाचित्र 1 : घाटे और ऋणों की प्रवृत्तियां, 1994-2014

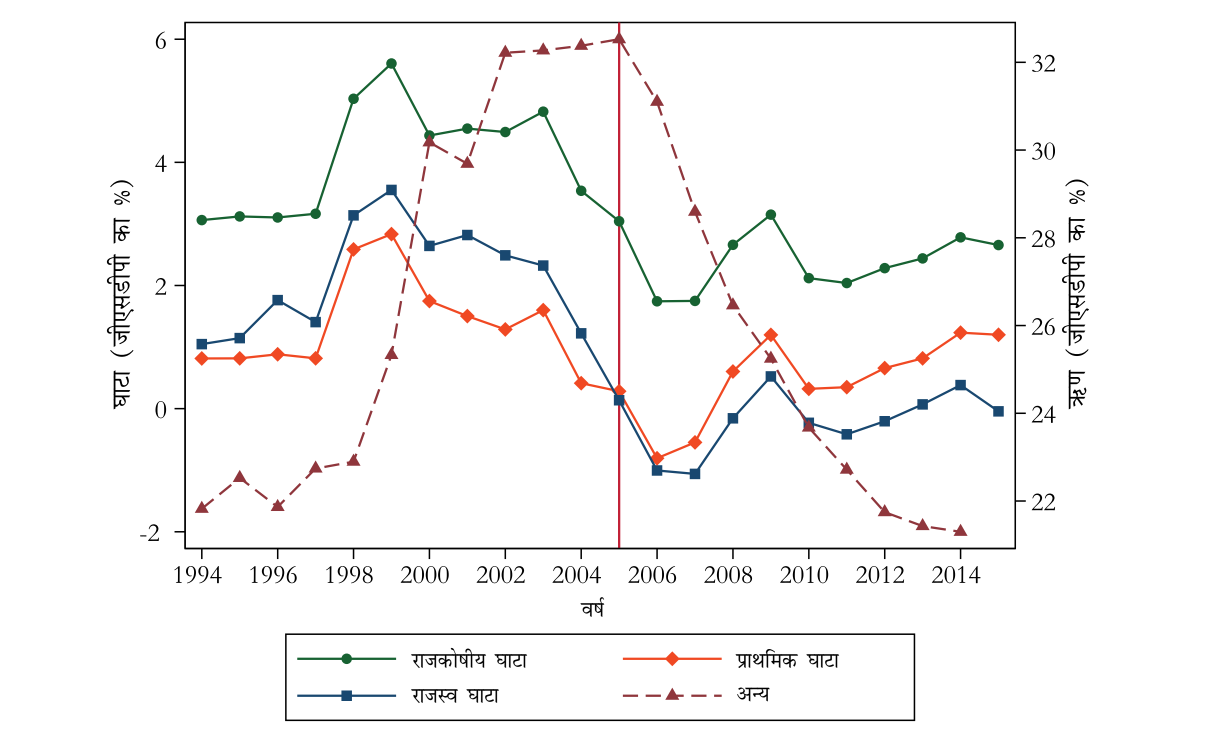

होता है। 2005 के बाद से राज्यों की वित्तीय दशा में बहुत सुधार हुआ है (इसका मापन किसी भी प्रकार कर लिया जाए, देखें रेखाचित्र-1)। औसत राजस्व घाटे का तो पूरी तरह समापन हो गया जबकि औसत राजकोषीय घाटे को FRL के निर्देश के अनुसार घटाकर GSDP के 3 प्रतिशत से नीचे ले आया गया। अतः स्वभाविक ही था कि औसत ऋण GSDP अनुपात में 10 प्रतिशत बिन्दुओं की कमी आई और यह घटकर 2013 में GSDP का 22 प्रतिशत ही रह गया।

6.3 किन्तु FRL को इस राजकोषीय प्रगति का श्रेय केवल इस कारण तो नहीं दिया जाना चाहिए कि यह प्रगति FRL के पारित होने के बाद हुई है। प्रारंभ से ही घाटे में कमी बहुत से बाह्य कारकों के पक्ष में हो जाने के कारण संभव हुई है :

- मौद्रिक संवृद्धि दर के औसतन 6 प्रतिशत हो जाने से राज्यों का राजस्व संग्रह उनकी GSDP के एक प्रतिशत के समान वर्धित हुआ;
- 13वें वित्त आयोग की सिफारिशों और केंद्रीय सरकार के राजस्व में वृद्धि के फलस्वरूप GSDP के एक प्रतिशत के समान अधिक राशियां केन्द्र से मिलने लगी;
- केन्द्र द्वारा तैयार ऋण-पुनःरचना के कारण ब्याज भुगतान दायित्व में GSDP के 0.9 प्रतिशत की कमी आई; और

रेखाचित्र 2 : केन्द्र प्रायोजित योजनाओं में केन्द्र का योगदान (जीडीपी का प्रतिशत)

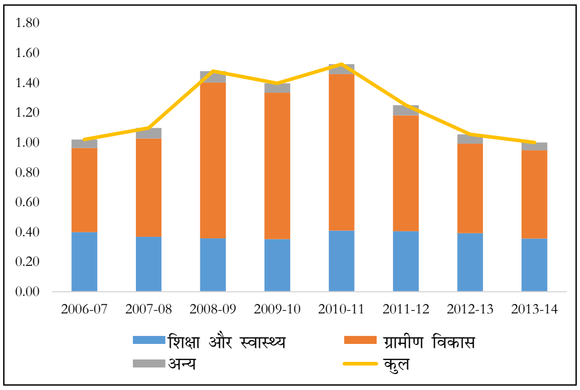

- केन्द्र द्वारा अनेक बड़े सामाजिक क्षेत्रीय प्रकल्पों को केंद्र प्रायोजित योजनाओं में सम्मिलित कर लिए जाने से राज्यों की खर्च करने की विवशता

में अनुमानित है कि GDP के 1.2 प्रतिशत के समान कभी अवश्य आई (रेखाचित्र 2)। राज्यों की दृष्टि से इन प्रकल्पों पर व्यय अब गैर बजट व्यय हो गया था।

6.4 अत: दो प्रश्न उठते हैं, और वर्तमान अध्याय उन्हीं पर विचार कर रहा है :

- FRL ने किस सीमा तक प्रभाव डाला और कैसे?
- भविष्य में राजकोषीय नियम रचना के लिए क्या सीखें मिल रही हैं?

II. राजकोषीय उत्तरदायित्व विधेयनों का सारांश

6.5 FRL का ध्येय अनेक विधियों से राजकोषीय अनुशासन लगाना था :

- राजकोषीय लक्ष्य निर्धारित किए गए, वह सभी राज्यों के लिए एक समान थे, अर्थात वे किसी भी समय GSDP के तीन प्रतिशत से अधिक नहीं होना था, साथ ही 2007-08 तक राजस्व घाटे को समाप्त किया जाना था, वैसे बाद में इसे एक वर्ष, 2008-09 तक स्थगित कर दिया गया;
- 12वें वित्त आयोग ने राज्यों को स्वयं ही बाजार से उधार लेने की अनुमति दे दी थी, आशा थी कि निवेशक सरकारों पर कुछ अंकुश लगा पाएंगे, जिन राज्यों की राजकोषीय दशा नहीं सुधरेगी, उन्हें अधिक ब्याज देना आवश्यक हो जाएगा; और
- अंत में, रिपोर्ट प्रस्तुत करने की नई आवश्यकताओं के कारण सार्वजनिक अनुशासन में सुधार होगा। राज्यों के लिए वार्षिक आधार पर वर्ष मध्य राजकोषीय नीति रिपोर्ट प्रकाशित करना अनिवार्य हो गया। उसमें अगले तीन-चार वर्षों के पेंशन जैसी बड़ी खर्च की मदों में संवृद्धि के साथ-साथ घाटे के पूर्वानुमान दिए जाते हैं।

6.6 वैश्विक वित्तीय संकट के कारण राजकोषीय घाटे के लक्ष्य को 2008-09 में GSDP के 3.5 प्रतिशत तथा 2009-10 में 4 प्रतिशत तक सीमित रखने की अनुमति दे दी गई थी (रिजर्व बैंक, 2010)। किन्तु वित्तवर्ष 2010 में पुन: FRL के मूल लक्ष्य, 3 प्रतिशत तक लौट आना था। आगे चलकर 14वें वित्त आयोग ने सुझाया कि तीन शर्तें पूरा करने वाले राज्यों में इस लक्ष्य में 0.5 प्रतिशत अंकों की छूट दी जा सकती है। ये तीन शर्तें थी : (1) पिछले वर्ष में राजस्व घाटा शून्य रहा हो; (2) ऋण-GSDP अनुपात 25 प्रतिशत से कम हो; और (3) ब्याज भुगतान-GSDP अनुपात 10 प्रतिशत से कम हो।

III. मूल्यांकन की कार्यविधि

6.7 वर्ष 2005 के बाद के आंकड़ों से राजकोषीय प्रगति के आंकड़ों से FRL के प्रभाव के विषय में भ्रामक जानकारी मिलने का एक कारण तो यही है कि सभी राज्यों ने उस वर्ष में यह विधेयक पारित नहीं कर लिए थे। इस पथ पर चलने वाले पांच अग्रणी प्रांत कर्नाटक, केरल, उत्तर प्रदेश, पंजाब और तमिलनाडू थे, जिन्होंने 2003 में केन्द्र के FRBM से भी पहले अपने FRL पारित कर लिए थे। अन्य अनेक राज्यों ने 2005-06 में ये विधायी प्रयास किए जबकि कई अनेक राज्य तो 2010 तक भी इस व्यवस्था का अंग नहीं बने थे (रेखाचित्र-3)।

6.8 इस अवधि के दौरान अनेक अन्य घटनाओं का राजकोषीय दशाओं पर गहरा प्रभाव रहा (रेखाचित्र-4) राज्यों ने मूल्य वृद्धि कर (VAT) अपनाए, छठे वेतन आयोग की सिफारिशें स्वीकृत हुई और 12वें तथा 13वें वित्त आयोगों ने केन्द्र से राज्यों को अन्तरण में बड़े परिवर्तन किए। यह उच्च मौद्रिक GDP संवृद्धि की अवधि भी थी। इसकी 2005-10 अवधि में औसत 15.8 प्रतिशत रही। अत: हमारे समक्ष दूसरी चुनौति यही है कि उसी समय हो रहे अन्य नीति परिवर्तनों और समष्टि आर्थिक घटनाक्रमों के प्रभावों को FRL के प्रभावों से पृथक रूप से कैसे निरूपित करें।

6.9 इन प्रश्नों का समाधान खोजते हुए यहां हमारी मूल्यांकन विधि इस प्रकार रहेगी। किसी FRL की स्वीकृति से पहले या बाद के वर्षों द्वारा हम "FRL काल" का आंकलन कर रहे हैं। उदाहरण : केरल ने FRL 2003 में पारित किया और हरियाणा ने 2005 में। अत: FRL के बाद के एक वर्ष का तात्पर्य केरल के लिए 2004 से तथा हरियाणा के लिए 2006 से होगा। इस विधि के प्रयोग का एक लाभ है : इससे हम FRL

रेखाचित्र 3 : राज्यों द्वारा राजकोषीय उत्तरदायित्व विधेयन

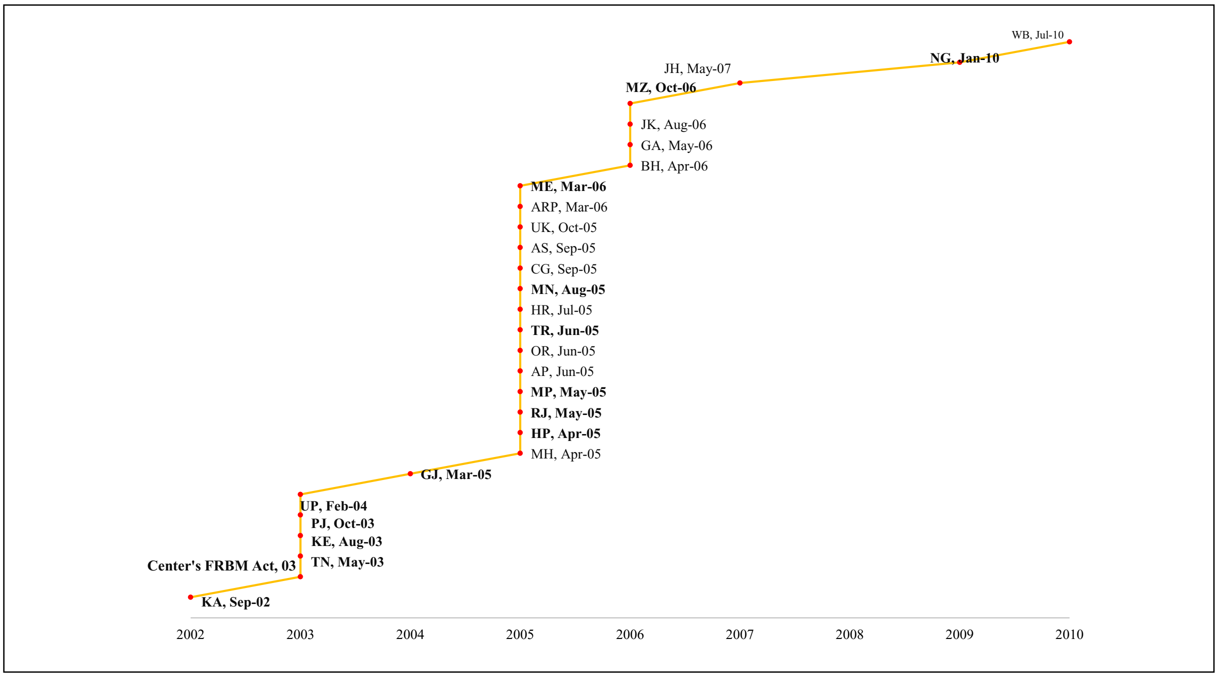

रेखाचित्र 4 : राज्यों द्वारा मूल्य वृद्धि अपनाना और 2002-15 की महत्वपूर्ण राजकोषीय घटनाएं

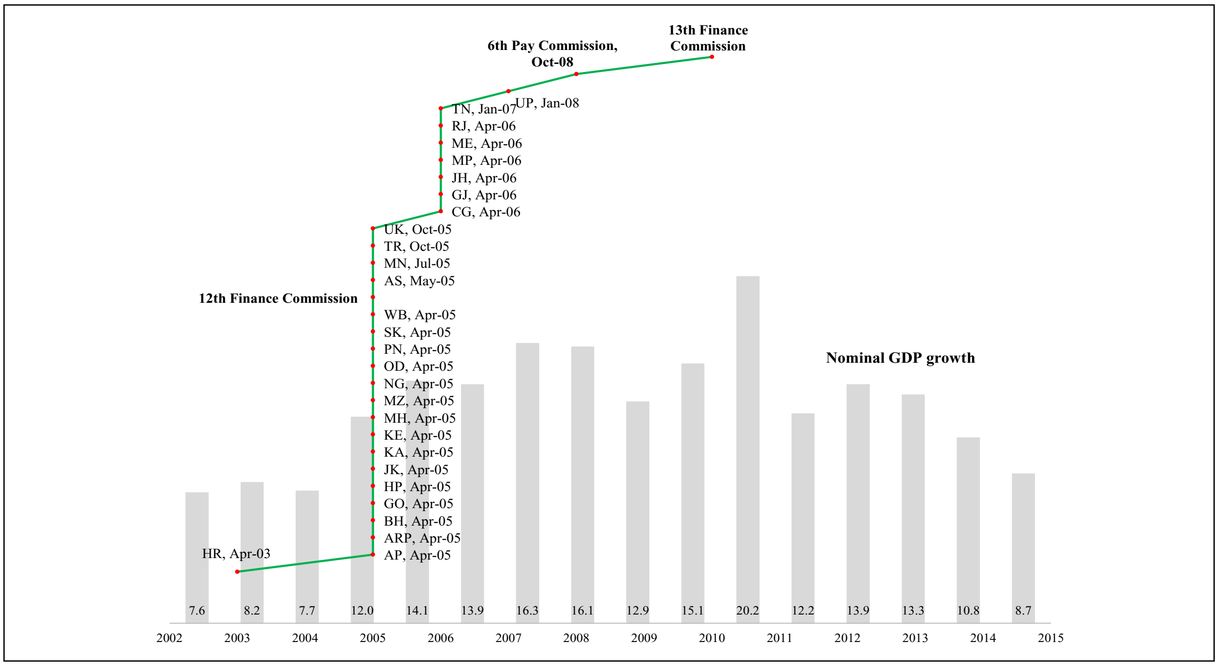

के पहले वर्ष हुए प्रभावों और दीर्घकालिक प्रभावों के विषय में प्रश्नों के उत्तर तलाश कर सकते हैं।

6.10 FRL काल के प्रयोग का एक दूसरा लाभ भी है : यह राजकोषीय घाटे को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों को पृथक रखने में सहायक हो सकता हैं, जैसे कि 6ठा वेतना आयोग। यह पृथक्कीकरण संपूर्ण तो नहीं हो पाता, किन्तु इसका मान बहुत कम भी नहीं रहता। उदाहरण के लिए हरियाणा में प्रथम वर्ष (2006) के घाटे पर VAT अपनाने और GSDP की संवृद्धि में उत्थान तथा अधिक केंद्रीय अन्तरणों के प्रभाव सम्मिलित हैं किन्तु केरल में प्रथम वर्ष (2004) में ऐसा कोई प्रभाव सम्मिलित नहीं था। अत: सभी राज्यों की औसत लेने पर FRL काल बाह्य कारकों के प्रभाव को कम कर

देता है (विशेषकर कैलेंडर वर्ष की औसत की तुलना में) यह बात उस समय और भी महत्वपूर्ण हो जाती है जब कोई कारक किसी वर्ष विशेष से जुड़ा हो (वेतन आयोग की सिफारिशें आदि)। परिशिष्ट तालिका 1 और 2 में हम प्रतीपगमन विश्लेषण के माध्यम से इन बाह्य कारकों की अधिक सटीक समीक्षा कर पाएंगे।

6.11 किन्तु एक कारक ऐसा भी है जिसे पृथक नहीं किया जा सकता। केन्द्र सरकार ने राज्यों को राजकोषीय नियम स्वीकार करने और उन लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता के उद्देश्य से एक सशर्त ऋण पुन: रचना का अवसर प्रदान किया था, इसे ऋण समेकन और राहत सुविधा (DCRF) का नाम दिया गया था। अत: राज्य FRL स्वीकार करने के वर्ष में ही अपने ब्याज भुगतान के भार में भारी कटौती करने में सफल हो जाते थे। अत: FRL काल में घाटे तथा अन्य राजकोषीय सूचकों में आए परिवर्तनों में FRL के लक्ष्यों के साथ-साथ ऋण पुन:रचना सुविधा के परिणाम भी समाहित हैं।[1]

IV. घाटे पर प्रभाव

6.12 सबसे पहली और बड़ी बात तो यही है कि राज्यों ने राजकोषीय लक्ष्यों को 2007-08 (आगे 2008-09 तक बढ़ाए गए) निर्दिष्ट वर्ष से पहले ही प्राप्त कर लिया था। पहले दो वर्षों में ही राज्यों ने अपने घाटे को निर्धारित लक्ष्यों (राजकोषीय घाटा : 3 प्रतिशत और राजस्व घाटा शून्य प्रतिशत) तक घटा लिया था। साथ ही प्राथमिक संतुलन में तो अतिरेक दिखाई देने लगा था (रेखाचित्र 5, 6)।

रेखाचित्र 5: राजकोषीय घाटे (GSDP का प्रतिशत)

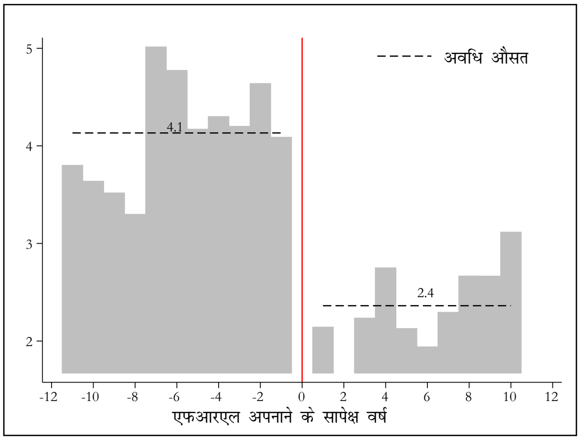

रेखाचित्र 6: राजस्व घाटा (GSDP का प्रतिशत)

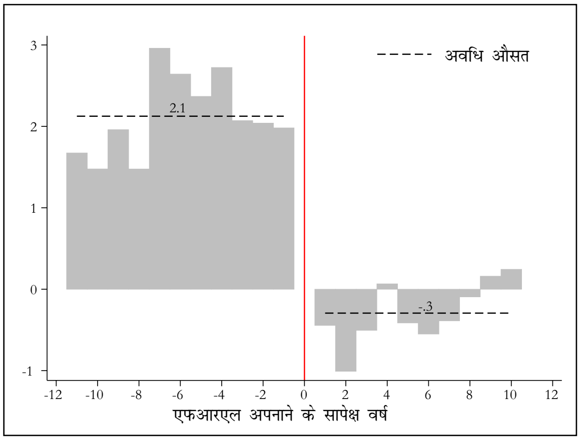

6.13 यही नहीं, यह प्रगति काफी स्थायित्वपूर्ण रही है। FRL पूर्व के 11 वर्षों की FRL पश्चात् 10 वर्षों से तुलना करें तो राजकोषीय घाटा लगभग आधा रह गया (यह GSDP के 4.1 प्रतिशत से घटकर 2.4 प्रतिशत तक पहुँच गया) (हमारे पास बाद वाले 10 वर्षों के लिए अधिक संतुलित प्रतिदर्श जानकारी है)। राजस्व घाटा भी GSDP 2.1 प्रतिशत से घटकर औसतन (–) 0.3 प्रतिशत रह गया।

6.14 किन्तु औसत घाटे में कमी के ये अनुमान राज्यवार रहे अंतरों को छिपा जाते हैं। परिशिष्ट रेखाचित्र 7 और 8 में राज्यानुसार राजकोषीय एवं राजस्व घाटे में हुए परिवर्तनों को FRL से तीन वर्ष पहले से लेकर 3 वर्ष बाद तक अंकित किया गया है। राजकोषीय घाटे में सबसे बड़े परिवर्तन उड़ीसा, पंजाब, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र में आए है, इन्होंने अपने घाटे को 3 प्रतिशत अंकों से अधिक कम किया है। इन्हीं राज्यों ने राजस्व घाटे में भी सबसे अधिक कटौतियां दिखाई है।

6.15 FRL के महत्वपूर्ण प्रभाव का एक अन्य संकेत भी मिल रहा है : राज्यों ने वेतन मजदूरी व्यय पर कड़ा अंकुश रखा हैं (रेखाचित्र-7)। किन्तु इसके स्थान पर उन्होंने अधिक ऐच्छिक व्यय किए हैं, जिन्हें यदि घाटे के लक्ष्य प्राप्त करने के लिए आवश्यक हो जाए तो घटाना या बंद करना भी आसान रहता है (देखें परिशिष्ट चित्र 5)।

6.16 किन्तु इसी समय प्राथमिक घाटे का बिन्दुपथ एक अंतर्भूत समस्या की ओर इंगित कर रहा है

[1] एक अपवाद भी है, केरल और कर्नाटक को ये सुविधा FRL पारित करने के साथ ही नहीं मिल पाई थी।

रेखाचित्र 7 : मजदूरी और वेतन पर व्यय (GSDP का प्रतिशत)

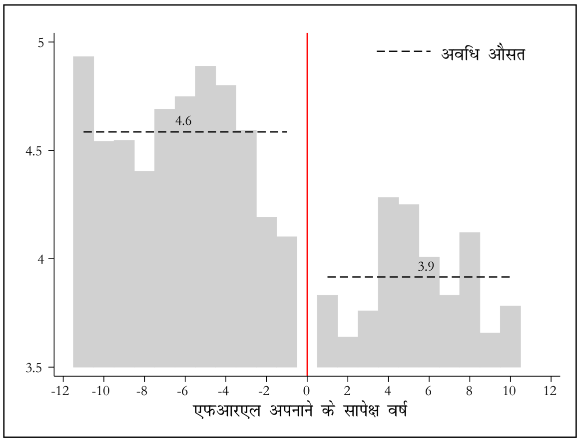

रेखाचित्र 8 : प्राथमिक घाटा (GSDP का प्रतिशत)

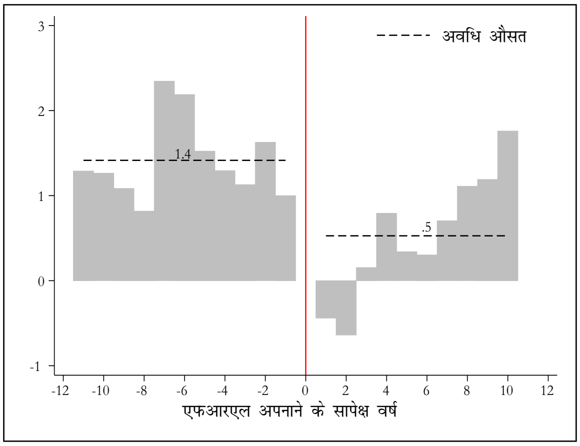

(रेखाचित्र 8)। FRL के एक दशक बाद भी औसत प्राथमिक घाटा अपने पूर्ववत् स्तर पर ही टिका हुआ है। यह पिछड़ जाना पहले केवल इसी कारण उभर कर नहीं आया कि केन्द्र की ऋण रियायतों के कारण ब्याज पर हो रहे खर्च में तीखी कमी आ गई थी।

6.17 यदि हम राज्य सरकारों की राजकोषीय स्थिति में सुधार के घटकों पर पृथक-पृथक विचार करें तो बाह्य कारकों के प्रभाव बहुत ही स्पष्ट हो जाते हैं। रेखाचित्र-9 में राज्यों के राजकोषीय, प्राथमिक और राजस्व घाटों को GSDP के प्रतिशत के रूप में दर्शाते हुए FRL से ग्यारह वर्ष पहले और दस वर्ष बाद के औसत मानों की तुलना की गई है। इस रेखाचित्र से स्पष्ट है :

- इस अवधि में GSDP के प्रतिशत के रूप में केन्द्रीय अन्तरणों में 0.9 प्रतिशत बिन्दुओं की वृद्धि हुई। यह राजकोषीय घाटे में आई कमी के आधे से अधिक तो राजस्व घाटे की कमी से लगभग आधा था।
- GSDP के अनुपात के रूप में अपने कर राजस्व में 1 प्रतिशत अंक की वृद्धि मुख्यत: उच्च GDP संवृद्धि तथा VAT अपनाने का परिणाम था।
- ऋण पुन:रचना के कारण GSDP के अनुपात के रूप में ब्याज के भुगतान का अंश भी लगभग 0.9 प्रतिशत अंक कम हो गया।
- गैर ब्याज राजस्व व्यय में 0.4 प्रतिशत की मामूली वृद्धि से यही संकेत मिल रहा है कि राज्यों ने राजस्व लाभ का प्रयोग मुख्यत: अपने घाटे में कमी लाने के लिए किया है, व्यय को बढ़ाने के लिए नहीं। ऐसा उस समय किया गया जब FRL उपरांत अवधि में वैश्विक वित्तीय संकट की छाया भी मंडरा रही थी।

6.18 परिशिष्ट में राजस्व प्राप्ति अपना कर राजस्व, केन्द्रीय अन्तरण, पूंजीगत व्यय तथा अन्य राज्य राजस्व और व्यय के घटकों की FRL पूर्व एवं उपरांत अवधियों की प्रवृत्तियां दिखाई गई हैं (देखें परिशिष्ट रेखाचित्र 1-6)। इनमें FRL के एकदम साथ राजस्व में एक तीखा बदलाव स्पष्ट दिखाई दे रहा है। GSDP के अनुपात के रूप में राजस्व प्राप्ति FRL पूर्व के 12.3 प्रतिशत से बाद की अवधि में 14.2 प्रतिशत तक पहुँच जाती है (परिशिष्ट रेखाचित्र-1)। इस वृद्धि के अधिकांश के लिए निजी कर राजस्व और केन्द्रीय अन्तरणों में इसी प्रकार की तीखी वृद्धि उत्तरदायी रही है (प. रेखाचित्र 2 तथा प. रेखाचित्र 3)। व्यय में इसके अनुरूप कोई वृद्धि नहीं दिखाई देती (प. रेखाचित्र-5)। FRL के पश्चात केवल पूंजी व्यय में तीखी वृद्धि हुई है (प. रेखाचित्र 6)।

6.19 हमारे प्रतीपगमन परिणाम (जो चक्रवर्ती और दारा, 2013 तथा सीमोन और टोपालोवा, 2007 के अध्ययनों के समरूप ही है) तो बाह्य कारकों के और अधिक प्रबलतापूर्ण प्रभाव दिखा रहे हैं। तालिका-1 में राजकोषीय सूचकों में FRL के तीन वर्ष बाद की अवधि की FRL पूर्व की त्रैवार्षिकी से तुलना की गई है। इसमें GSDP की संवृद्धि, राज्य एवं समय के अनुसार संक्षोभ तथा

रेखाचित्र 9 : घाटे में परिवर्तनों का FRL पूर्व एवं पश्चात् अवधियों में विभाजन

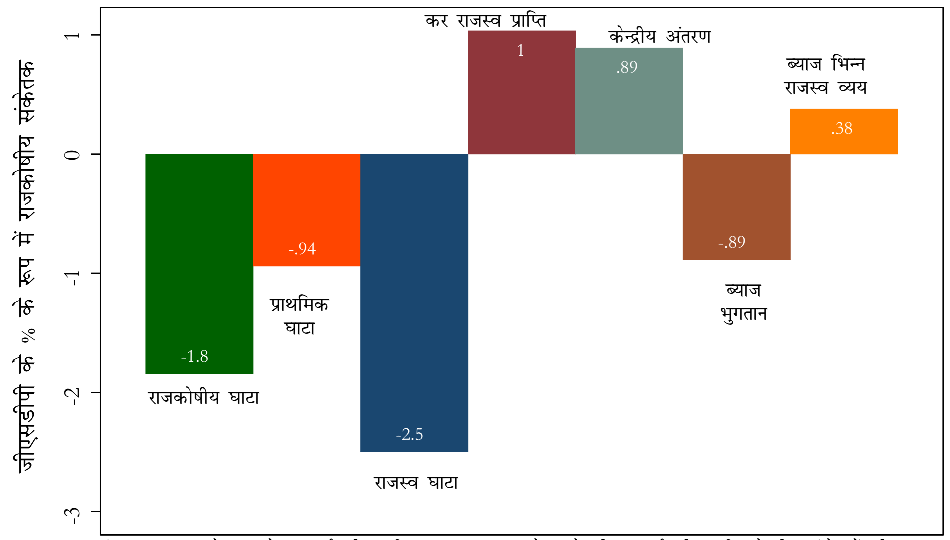

दंड एफआरएल के बाद के दस वर्ष की अवधि तथा एफआरएल से पहले की 11 वर्ष की अवधि के बीच संकेतकों की राज्यवार औसत में अंतर को प्रदर्शित करती है।

VAT लागू होने और नहीं होने का समंजन भी कर लिया गया है। तालिका स्पष्ट करती हैं : FRL के पहले दो वर्षों में राजस्व घाटे में 0.86 प्रतिशत अंक की कमी आई, यह कमी सांख्यिकी की दृष्टि से ''महत्वपूर्ण'' है (स्तंभ-1)।

- इसी प्रकार राजकोषीय घाटे में पहले दो वर्षों में ही 0-7 प्रतिशत अंक की कमी आई है (स्तंभ-2)।
- किन्तु इन पहले दो वर्षों में भी प्राथमिक घाटे में कोई कमी नहीं आई, वस्तुत: बाद के वर्षों में तो इसमें वृद्धि ही हुई है (स्तंभ-3)। यह हमारे पूर्व अवलोकन के साथ संगतिपूर्ण परिणाम है कि राजकोषीय घाटे में बड़ी कमी तो ब्याज भुगतान में कमी का परिणाम थी। स्तंभ-8 सुझा रहा है कि उसमें पहले दो वर्षों में 0.3 प्रतिशत बिन्दुओं की महत्वपूर्ण कमी आई थी।

6.20 एक अन्य विशेषाभिधान भी केन्द्रीय अन्तरणों में वृद्धि के प्रभाव को पृथक कर देता है। परिशिष्ट तालिका-1 में इसे ''नियंत्रण चर'' मानकर इसे अलग रख छोड़ा था, क्योंकि इन अंतरणों की वृद्धि से राजस्व एवं व्यय दोनों में ऐसी वृद्धि हो सकती है कि घाटा पूरी तरह अप्रभावित रह जाए। किन्तु परिशिष्ट तालिका-2 के स्तंभ-3 बता रहे हैं कि केन्द्रीय अंतरणों को पृथक रखने के बाद भी राजकोषीय, प्राथमिक और राजस्व घाटों में वही प्रवृत्तियां बनी रहती है (हां FRL के कारण राजस्व घाटे में कमी का परिमाण कुछ कम रह जाता है)। व्यय में किसी महत्वपूर्ण वृद्धि का कोई प्रमाण नहीं मिल पाता।

V. बजट से इतर व्यय

6.21 राजकोषीय व्यवहार को नियमों में जकड़ते समय एक बहुत ही गंभीर चिंता व्यक्त की जाती है : ''इससे सरकार को अपने व्यय को बजट के इतर'' वर्ग में अन्तरित करने का प्रोत्साहन मिल सकता है। इन बजट से इतर मदों का मापन बहुत कठिन हो जाता है। राज्य इसके लिए अपने-अपने मानको मापकों का प्रयोग करते हैं और इनके आंकड़े केन्द्रीय स्तर पर संकलित एवं विश्लेषित नहीं किए जाते। इस प्रकार के व्यय प्रवाह राजकोषीय नियमों की शक्तियों का अवमर्दन करते हैं।

6.22 यहां हम बजट इतर व्यय की इन दो मदों का मूल्यांकन कर रहे हैं जिनके लिए आंकड़े उपलब्ध हैं : राज्य सरकारों द्वारा स्पष्ट रूप से दी गई गारंटी और राजकीय सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा लिए गए ऋण। परिणाम उत्साहवर्धक हैं। FRL से पूर्व राज्य सरकारें प्रतिवर्ष GSDP के 0.9 प्रतिशत के समान अतिरिक्त गारंटियां दे रहीं थी (रेखाचित्र 10)। किन्तु FRL पारित होने के पहले तीन वर्षों में ही इस प्रकार का स्पष्ट गारंटी प्रवाह

ऋणात्मक हो गया था, अर्थात गारंटियों का वर्तमान भंडार कम होने लगा था, यानि पुरानी गारंटियां निरस्त

रेखाचित्र 10 : गारंटी प्रवाह
(GSDP का प्रतिशत)

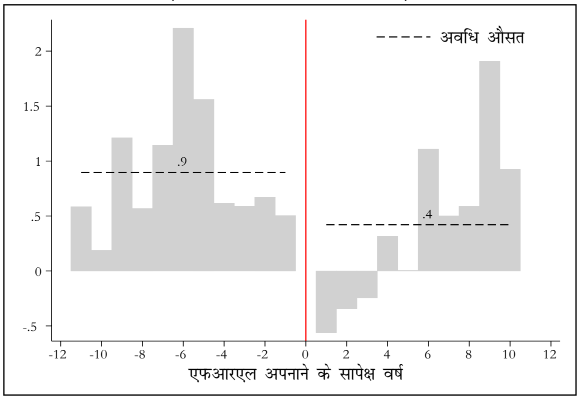

हो रही थीं और नया प्रवाह उनके समरूप भी नहीं था।

6.23 किन्तु इस आयाम पर भी शिक्षिलता या क्षरण के चिन्ह शीघ्र ही उभरने लगे; तीन वर्षों के बाद राज्य सरकारें पुनः पुराने ढर्रे पर गारंटी भरने में जुट गईं। यहां यही बात उत्साहवर्धक है कि 14वें वित्त आयोग ने ''संवर्धित ऋण'' का विचार प्रतिपादित कर इन सार्वजनिक उद्यमों के ऋणों को दी गई गारंटियों को भी लेखे में सम्मिलित कर दिया है।

6.24 राज्य उपयोगिता उपक्रमों द्वारा उठाए गए उधार भी FRL के बाद GSDP के 4.3 प्रतिशत से घटकर 3.4 प्रतिशत रह गए थे (रेखाचित्र-11)। यह विशेष रूप से उत्साहवर्धक घटनाक्रम था, क्योंकि केन्द्र सरकार ने 2002-03 में एक महत्वपूर्ण ऋण पुनः रचना पर

रेखाचित्र 11 : उपयोगिता निकायों के ऋण
(GSDP का प्रतिशत)

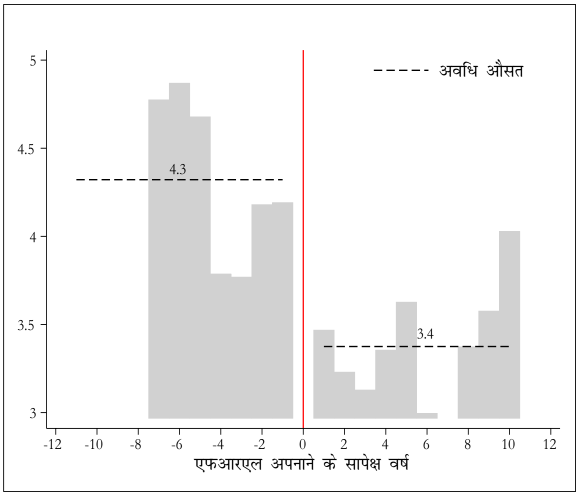

व्यापक चर्चा के बाद सहमति प्रदान की थी, जिससे प्रांतीय उपयोगिता उपक्रमों की उधार लेने की वित्तीय क्षमता का पुनःनिर्माण हो गया था (इस सहमति का आशय रू. 28,984 करोड़ की राशि से था)।

6.25 किन्तु यह चेतावनी अभी भी बनी हुई है कि ये सभी उपाय और सावधानियां भी हमें संपूर्ण चित्र नहीं दिखा पाते, क्योंकि अनेक प्रकार के व्यय अनावलोकित प्रवाहों का रूप ले सकते है। ये हैं : अन्य प्रांतीय उपक्रमों द्वारा उधार, सार्वजनिक-निजी भागीदारी आदि आदि।

VI. बजट प्रक्रिया

6.26 सकारात्मक प्रभावों का एक अन्य क्षेत्र प्रांतीय बजट प्रक्रिया पर प्रभाव था। यदि प्रांतीय सरकारें सचमुच अपने FRL पर कृतसंकल्प थीं तो हमारी अपेक्षा होगी कि वे अपने राजस्व और व्यय के सटीक पूर्वानुमान आंकलित करेंगी ताकि अपने घाटे के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए वर्ष के अंत में व्यय में बड़ी कटौतियां नहीं करनी पड़ें। वास्तव में ऐसा ही हुआ था।

6.27 रेखाचित्र 12 में FRL पूर्व और उपरांत के वास्तविक एवं बजट अनुमानों के बीच अंतर को बजट अनुमान के प्रतिशत के रूप में दर्शाया गया है। FRL पूर्व अवधि में औसत रूप से निजी कर राजस्व के

रेखाचित्र 12 : बजट अनुमान और वास्तविक निजी कर राजस्व में प्रतिशत अंतर

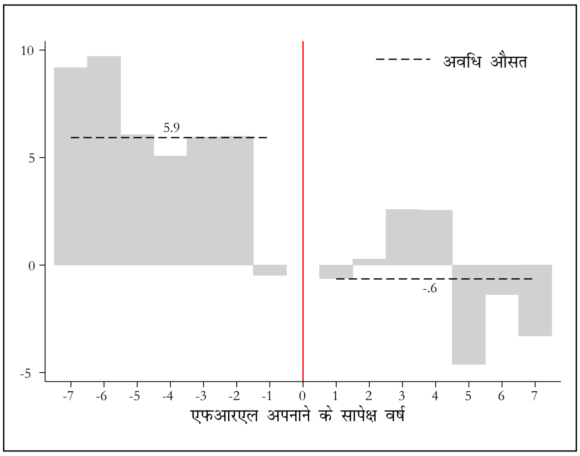

अनुमान वास्तविक प्राप्तियों से 5.9 प्रतिशत अधिक रहते थें। अर्थात, राज्य सरकारें अपने बजट बनाते समय बहुत आशावादी होती थी।

6.28 FRL के उपरांत राजस्व पूर्वानुमान त्रुटियों में भारी गिरावट आई है। विचित्र बात तो यह है कि अब ये त्रुटियां ऋणात्मक हो गई हैं, अर्थात बजट निर्माण करते समय वित्तमंत्री निराशावादी रहने लगे हैं। निजी कर राजस्व के पूर्वानुमान वास्तविक प्राप्तियों से औसत रूप से 0.6 प्रतिशत निम्न पाए गए है। इसी प्रकार की सतर्कता व्यय अनुमानों में भी पाई गई है। ये उत्साहवर्धक चिन्ह हैं, लगता है कि राज्य सरकारों के बजट के प्रति दृष्टिकोणों पर उनके FRLs का सचमुच प्रभाव हुआ है।

6.29 सतर्कता में वृद्धि का एक अन्य संकेत राज्य सरकार के नकद भंडार में वृद्धि से भी मिल रहा है। राज्य सरकारों की केन्द्रीय अन्तरणों पर निर्भरता में वृद्धि हुई है और वे अन्तरण देर से या फिर राज्य की तात्कालिक आवश्यकताओं के अनुरूप परिमाणों में नहीं प्रात होते। अत: राज्य सरकारों ने अपने पास अधिक नकद कोष रखने प्रारंभ कर दिए है ताकि उनके व्यय कार्यों में व्यावधान नहीं हों। मध्यम राजकोषीय हुंडियों (ITBs) की धारिता GSDP के 0.3 प्रतिशत से बढ़कर 1.3 प्रतिशत हो गई है। यह कार्य FRL पूर्व 6 वर्षों से प्रारंभ होकर FRL के बाद के 10 वर्षों में पूरा हुआ है (रेखाचित्र-13)। यह कदम राज्य सरकारों द्वारा CSS पर केन्द्र के व्यय में वृद्धि के फलस्वरूप अपने व्यय में की गई कटौती की मशीनी प्रक्रिया के भी अनुरूप है। ये खर्च से बची राशियां ही ITBs के रूप में जमा रखी जाती हैं। नकद कोष में इस अचानक वृद्धि को राजकोषीय प्रबंधन में त्रुटियों का प्रमाण भी माना जा सकता है। संभवत: प्रांतीय सरकारें अधिक ऋण लेने से पूर्व अपने नकद कोष का प्रयोग करना चाहती हैं।

रेखाचित्र 13 : मध्यवर्ती राजकोषीय हुंडियों की बकाया राशियां (GSDP का प्रतिशत)

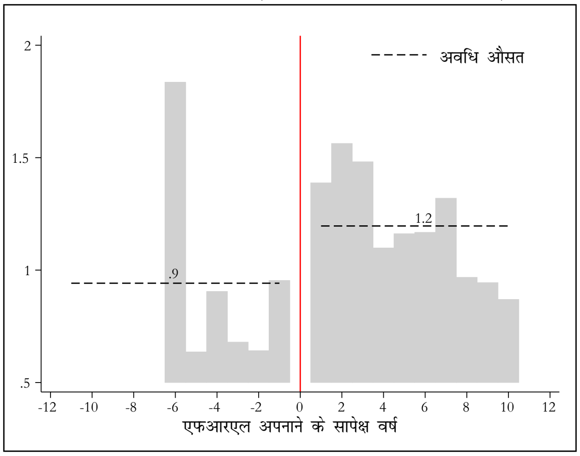

VII. मूल्यांकन

6.30 आइए अब अध्याय के प्रारंभ के उठाए गए प्रश्नों पर ध्यान दें। पहले प्रश्न के उत्तर में हम स्पष्टत: कह सकते हैं कि परिणाम और व्यवहार, दोनों कसौटियों पर FRLs के प्रभाव महत्वपूर्ण रहे हैं। FRL पश्चात के 10 वर्षों में राज्यों का औसत राजकोषीय घाटा निर्धारित उच्च सीमा 3 प्रतिशत, से काफी कम 2.4 प्रतिशत ही रहा है। यही नहीं, उनके बजट निर्माण व्यवहार में भी बड़ा परिवर्तन आया है। बजट पूर्वाकलन की प्रविधियों में सुधार आया है, गारंटी देने, नकद कोष जमा करने और ऋण घटाने में अब अधिक सतर्कता बरती जा रही है।

6.31 किन्तु इतना कहने के बाद भी एक बात को भूलना नहीं चाहिए : वित्तीय दशा में आए इन सुधारों में केन्द्र द्वारा अतिरिक्त राजस्व अंतरणों, राज्यों के ऋणों का दायित्व स्वयं उठाने तथा नई-नई केन्द्र प्रायोजित योजनाएं लागू करने के रूप में दी गई सहायता का योगदान ही प्रमुख रहा है। परिणाम स्वरूप FRLs का प्रभाव प्रदर्शित आंकड़ों की तुलना में कहीं अधिक सूक्ष्म रहा होगा। संभवत: FRLs ने प्रांतों को पूर्णत: अनुशासनबद्ध नहीं किया, केवल सारी अनायास प्राप्तियों को तुरंत खर्च करने से रोका मात्र है।

6.32 यही नहीं, FRL अनुभव की विलक्षणता की ओर इंगित करने वाला एक लक्षण इनके प्रभावों में तेजी से आ रही शिथिलता में निहित है। अर्थात, FRL पारित होने के कुछ ही वर्षों बाद राजकोषीय निष्पादन के सभी सूचकों- घाटे, व्यय और विशेषकर बजट इतर कार्यों में पतन के चिन्ह दिखाई देने लगे हैं। संभव है कि केन्द्र ने संविधान के अनुच्छेद 293(3) का प्रयोग करते हुए इस पतन को रोका भी हुआ है। इसका प्रावधान है कि प्रांत सरकारें नए ऋण लेने से पूर्व केन्द्र की सहमति प्राप्त करेंगी और FRL उपरांत अवधि में सभी प्रांतों पर पुराने ऋणों की देनदारियां बनी हुईं थी (रेखाचित्र-14।

VIII. भविष्य में राजकोषीय नियम रचना के लिए सीखें

6.33 वेतन आयोग की सिफारिशों, धीमी पड़ती संवृद्धि और ''उदय'' बाँडों के भुगतान के बढ़ते हुए भार से

रेखाचित्र 14 : राज्यों द्वारा देय केन्द्रीय ऋणों की बकाया राशियां, मार्च 2014 में (GSDP का प्रतिशत)

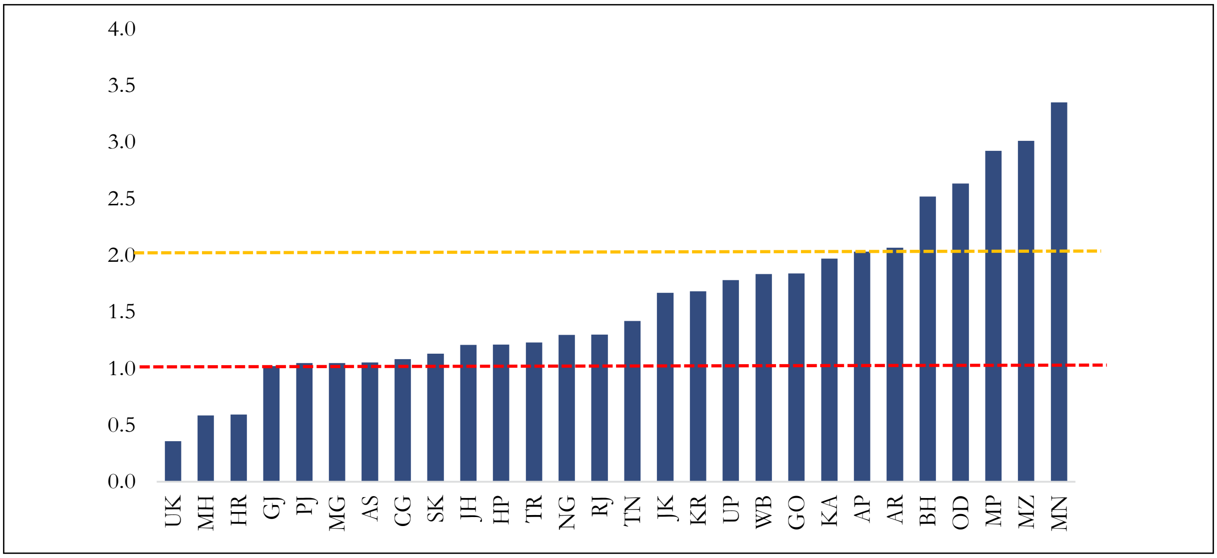

राज्यों के समक्ष राजकोषीय चुनौतियां गंभीर रूप धारण कर रही हैं। अत: राजकोषीय निष्पादन का स्तर बनाए रखने के नए तरीकों की खोज आवश्यक होगी। यह ठीक है कि जैसे-जैसे प्रांत सरकारें केन्द्र के ऋण चुका रही हैं केन्द्र की उन पर कड़े बजट संरोध थोंपने की क्षमता कम हो रही है, फिर केन्द्र को उन्हें अपना राजकोषीय निष्पादन स्तर बनाए रखने एवं सुधारने के लिए कुछ संप्रेरणाएं तो अवश्य प्रदान करनी होंगी (रेखाचित्र 15)।

6.34 चौदहवें वित्त आयोग द्वारा बेहतर निष्पादक राज्यों के लिए FRL की उच्चतम सीमाओं में कुछ छूट देना संप्रेरणा व्यवस्था की ओर बढ़ने का एक संकेत था। किन्तु उसकी सिफारिशों में कुछ तनाव भी भरा था। एक तरफ तो छूट वाली यह संप्रेरण प्रक्रिया थी तो

रेखाचित्र 15 : राज्यों के केन्द्र से लिए गए ऋणों का बकाया (GSDP का प्रतिशत)

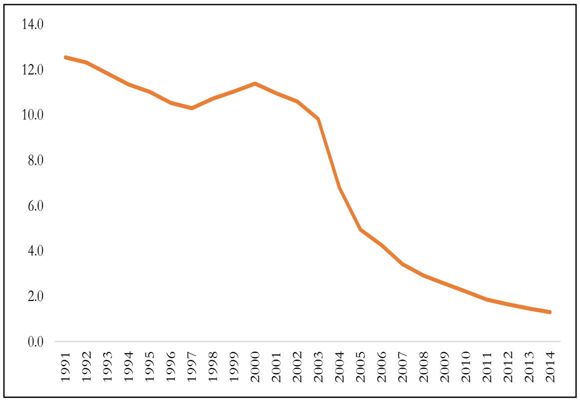

दूसरी और इसने 13वें आयोग द्वारा सुझाई गई अधिक व्यापक संप्रेरणा प्रणाली को पूरी तरह निरस्त कर दिया था। 13वें आयोग ने बीच संसाधन आवंटित करने के लिए ''क्षैतिजता आधारित कसौटी'' बनाई थी जो राज्यों के अपनी राजकोषीय निष्पादन (निजी राजस्व संग्रह) पर आधारित थी। 13वें आयोग की सिफारिशों में इस कसौटी को 17 प्रतिशत का भारमान दिया गया था। एक बार फिर से ऐसी महत्वपूर्ण संप्रेरणा प्रणाली को पुन: अपना लेने से बहुत हित संभव है।

6.35 इसके साथ-साथ प्रांत सरकारों के वित्त पर बाजार अनुशासन का उच्चतर स्तर लागू करना भी आवश्यक हो रहा है। अभी तो यह अनुशासन है ही नहीं, क्योंकि राज्य सरकारों के बांडों पर दरों तथा उनके ऋणों या घाटे के स्तरों में कोई तारतम्य नहीं दिखाई देता, अधिक ऋणी/घाटाग्रस्त राज्य सरकारों को अपने बांडों पर उच्चतर ब्याज नहीं देना पड़ रहा। रेखाचित्र 16 में रिजर्व बैंक द्वारा नीलाम राज्य विकास बांडों पर कूपन दरों तथा अन्य इसी प्रकार के सरकारी निक्षेपों पर अंतर तथा दिए हुए वित्तीय वर्षों में उन्हीं राज्यों के ऋण GSDP अनुपात चित्रित किए गए हैं। यह चित्र मई 2009 से दिसंबर, 2014 की अवधि में नीलामी द्वारा आवंटित सभी प्रांतीय विकास ऋणों को दिखा रहा है। यदि बाजार अधिक विवेकशील प्रांत सरकारों को पुरूस्कृत करता तो कूपन दरों और ऋणों के बीच सकारात्मक संबंध होता। अधिक

ऋणी राज्यों को अपने बांड अधिक आकर्षक बनाने के लिए उनपर अधिक प्रतिप्राप्ति प्रदान करनी पड़ती। किन्तु सभी राज्यों के बीच यह अंतर समान प्राय: है, उन्हें पुरूस्कृत या दंडित नहीं किया जा रहा। उनका ऋण आकार व्यवहार कुछ भी हो (रेखाचित्र 16)। इसी प्रकार कूपन दर और प्रांतीय राजकोषीय घाटे में भी कोई संबंध नहीं है (रेखाचित्र 17)। इसका कुछ दायित्व तो ऋण नीलामी प्रक्रिया पर भी है। यदि राज्य सरकारों को वित्तीय अनुशासनबद्ध करना है तो उक्त नीलामी प्रक्रिया की समीक्षा भी आवश्यक होगी।

6.36 सबसे बड़ी बात तो यह है कि राज्यों के अच्छे निष्पादन की प्रेरणाएं गढ़ने से पूर्व केन्द्र को स्वयं अच्छे राजकोषीय प्रबंधन का उदाहरण पेश करना होगा। यदि हम पिछले दो वर्षों को अलग रखे तो विगत 15 वर्षों के भारत के राजकोषीय उच्चावचनपूर्ण इतिहास में राज्यों द्वारा विवेकपूर्ण किन्तु केन्द्र के उच्छृंखलतापूर्ण व्यवहार की ही झलक मिलती है। राज्यों का आरोप है कि केन्द्र उन

रेखाचित्र 16 : राज्य विकास ऋण (SDL) प्रसार और राज्यों के बकाया ऋण

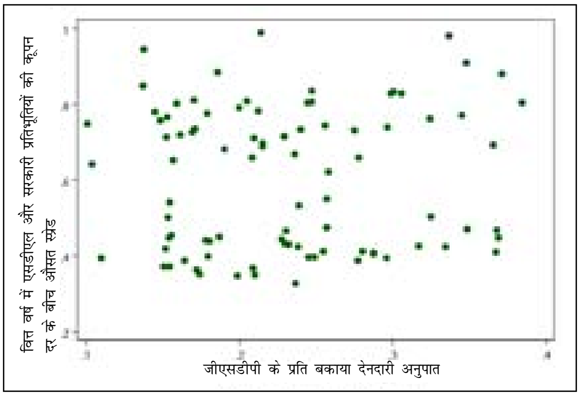

रेखाचित्र 17 : राज्य विकास ऋण (SDL) प्रसार और राजकोषीय घाटा (GSDP अनुपात)

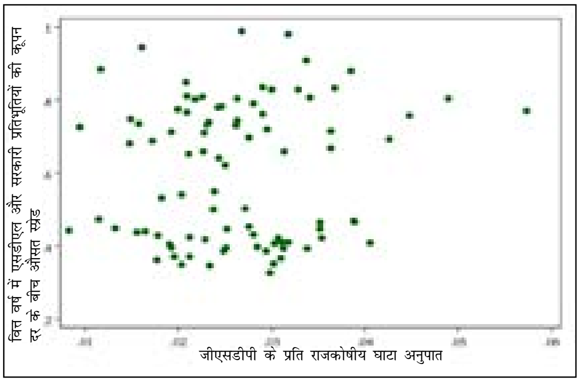

पर तो विवेक और अनुशासन थोंपना चाहता है जबकि स्वयं वह विवेकहीन व्यवहार में ही लिप्त है। हमारा यह अध्याय स्पष्ट कर रहा है कि राज्यों के व्यवहार की विवेकशीलता पर अनावश्यक रूप से अधिक आग्रह किया गया है, फिर भी केन्द्र-राज्य व्यवहारों में कुछ असममिति तो अवश्य है। इसी कारण वर्तमान सरकार द्वारा अपनाया गया राजकोषीय विवेक का मार्ग न केवल अपने आप में निर्णायक रूप से महत्वपूर्ण होगा, बल्कि प्रांत सरकारों के समक्ष भी एक आदर्श प्रस्तुत कर सकेगा।

संदर्भ ग्रन्थादि

1. Chakraborty, Pinaki and BharateeBhusana Dash (2013). *"Fiscal Reforms,Fiscal Rule and Development Spending:How Indian States have Performed?",Working Paper, National Institute of PublicFinance and Policy*

2. Simone, Alejandro and Petia Topalova (2009). *"India's Experience with FiscalRules: An Evaluation and the WayForward", IMF Working Paper*

3. Poterba, James (1996). *"Do Budget RulesWork?",NBER Working Paper Series. No.5550*

4. Reserve Bank of India (various years,1994-2016). *"State Finances: A Study of Budgets"*

5. Comptroller and Auditor General (2016),various states, *"Monthly Indicators:March Preliminary, 2015-16"*

6. Power Finance Corporation (2016). *"Performance Report of State PowerUtilities"*

7. Government of India (2016). *"Expenditure Budget.Volume I."*

8. Fourteenth Finance Commission (2015). *"Report of the Fourteenth Finance Commission".*

परिशिष्ट

रेखाचित्र 1: राजस्व प्राप्तियाँ (GSDP का %)

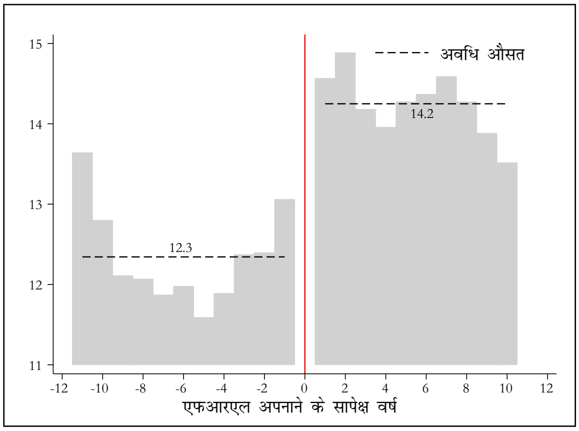

रेखाचित्र 2: निजीकर राजस्व (GSDP का %)

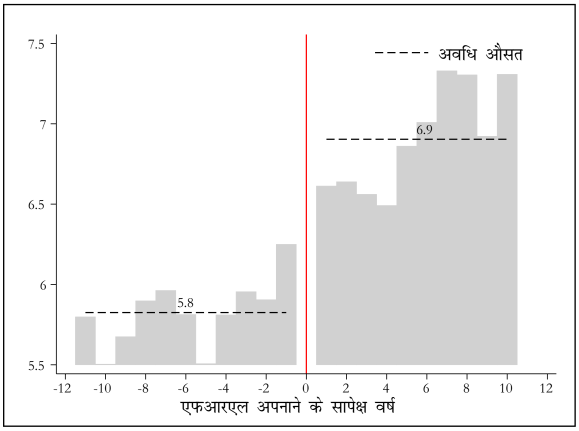

रेखाचित्र 3: केन्द्रीय अंतरण (GSDP का %)

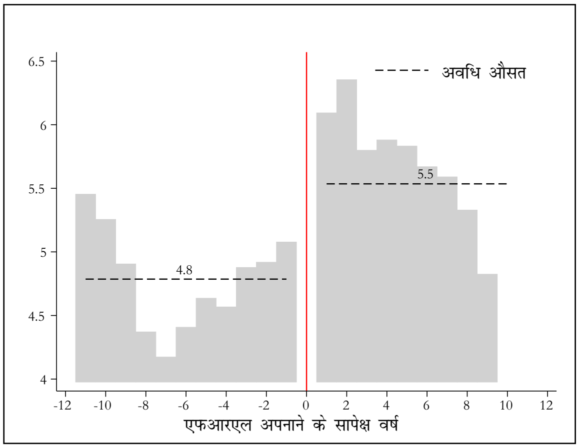

रेखाचित्र 4: ब्याज का भुगतान (GSDP का %)

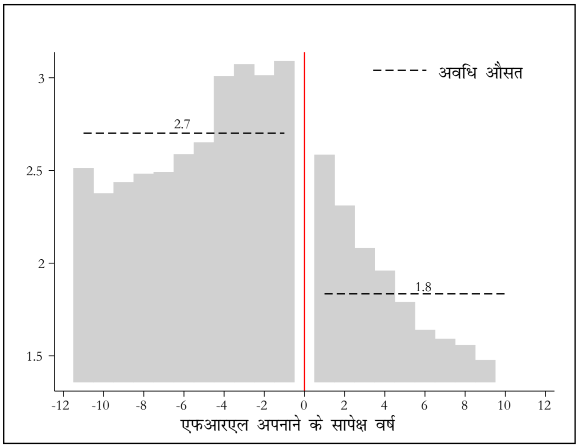

रेखाचित्र 5: गैर ब्याज राजस्व व्यय (GSDP का %)

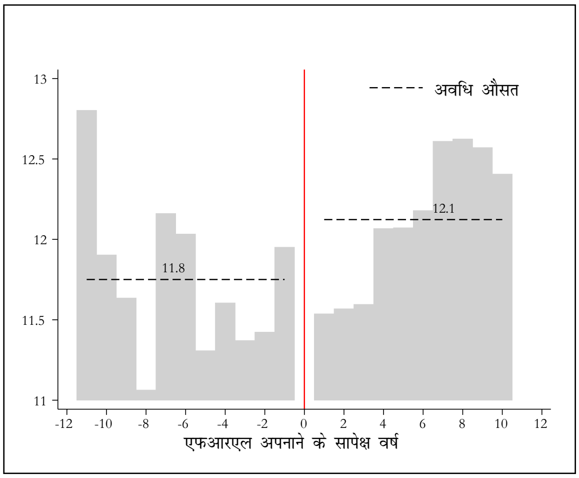

रेखाचित्र 6: पूंजी व्यय (GSDP का %)

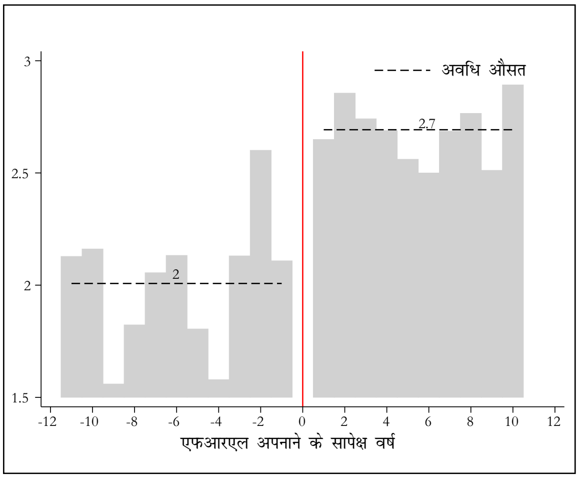

रेखाचित्र 7 : राजकोषीय घाटे और GSDP के अनुपात में परिवर्तन से तीन वर्ष पूर्व और तीन वर्ष पश्चात की तुलना)

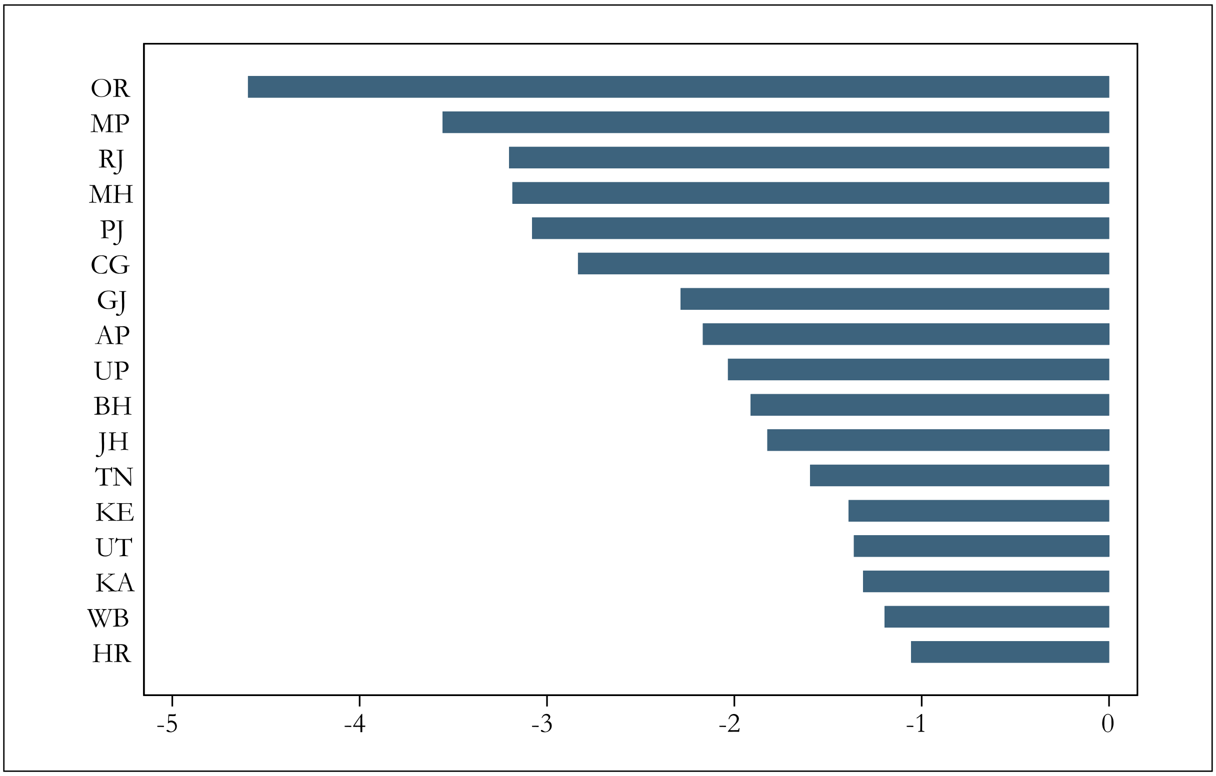

रेखाचित्र 8 : राजस्व घाटा - GSDP अनुपात में परिवर्तन (FRL से 3 वर्ष पूर्व तथा 3 वर्ष पश्चात की तुलना)

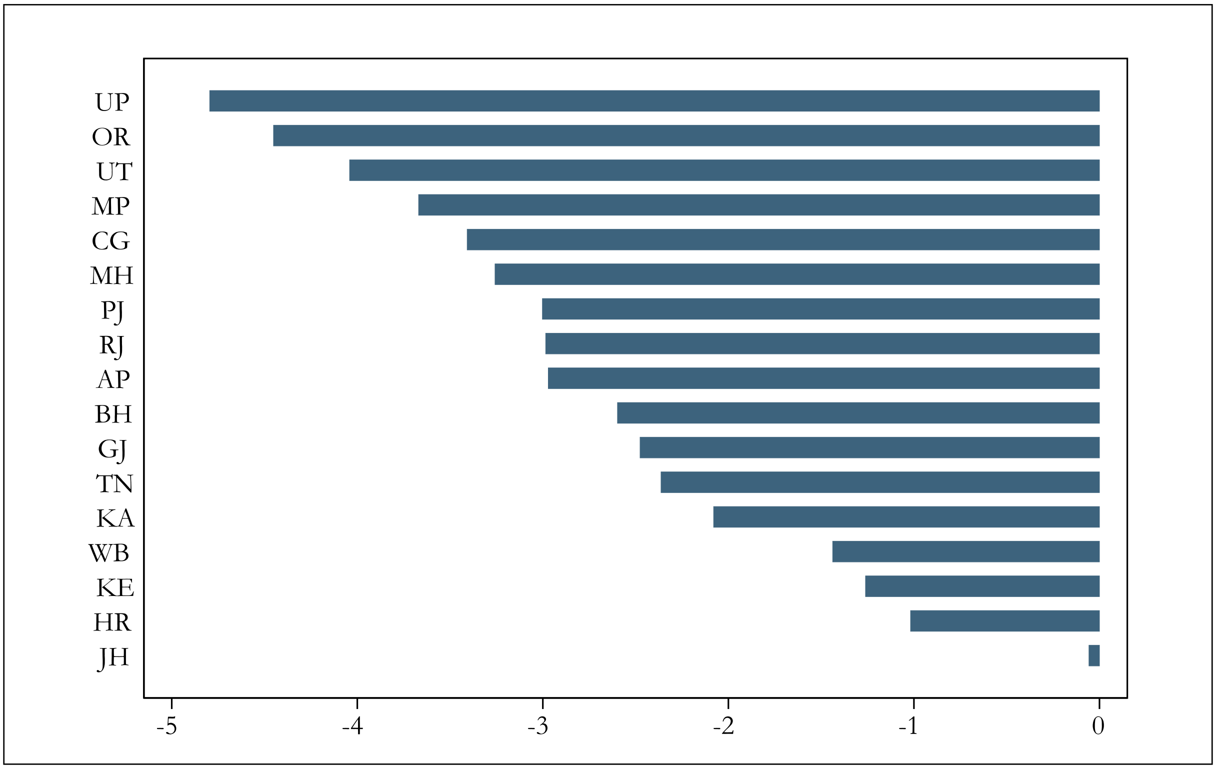

तालिका 1 : राज्यों के वित्त पर FRL के प्रभाव

	राजस्व घाटा	राजकोषीय घाटा	प्राथमिक घाटा	राजस्व	निजी कर राजस्व	राजस्व व्यय	पूंजी व्यय	ब्याज भुगतान	गैर ब्याज राजस्व व्यय	गारंटियों का प्रवाह
0 से 2	-0.0086**	-0.0068***	-0.0041	0.0105***	0.0044***	0.0019	0.0015	-0.0032**	0.0046	-0.0082
	[0.0038]	[0.0023]	[0.0032]	[0.0031]	[0.0013]	[0.0047]	[0.0051]	[0.0011]	[0.0042]	[0.0083]
3 से 5	-0.0082	-0.0019	0.0033	0.0087	0.0068**	0.0005	0.0048	-0.0060***	0.0057	-0.007
	[0.0097]	[0.0055]	[0.0049]	[0.0050]	[0.0027]	[0.0078]	[0.0081]	[0.0017]	[0.0065]	[0.0082]
6 से 8	-0.0089	0.0017	0.0092*	0.0078	0.0085*	-0.0011	0.0083	-0.0086**	0.0064	0.0026
	[0.0130]	[0.0060]	[0.0045]	[0.0072]	[0.0044]	[0.0091]	[0.0105]	[0.0034]	[0.0069]	[0.0064]
9+	-0.006	0.0005	0.0088	-0.0055	0.0054	-0.0116	0.0064	-0.0099	-0.0033	0.0094
	[0.0163]	[0.0104]	[0.0073]	[0.0160]	[0.0064]	[0.0148]	[0.0138]	[0.0062]	[0.0106]	[0.0120]
R-squared	0.72	0.6	0.45	0.86	0.87	0.82	0.57	0.8	0.8	0.25
एन	278	278	278	278	273	278	278	279	278	245

कोष्ठक मानक त्रुटि दर्शा रहे हैं। *P<0.1, ** P <0.05 A *प्रयुक्त नियंत्रक चर हैं : राज्य विशिष्ट और काल अपरिवर्ती प्रभाव, VAT के लिए तदर्थ चर तथा GSDP संवृद्धि। मानक त्रुटियां राज्य स्तर पर संगुछित हैं।*

तालिका 2 : केन्द्रीय अंतरणों के समंजन के बाद राज्य वित्त पर FRL के प्रभाव

	राजस्व घाटा	राजकाषीय घाटा	प्राथमिक घाटा	राजस्व	कर राजस्व की प्राप्ति	राजस्व व्यय	पूंजी व्यय	ब्याज अदायगियां	ब्याज-भिन्न राजस्व-व्यय	गारंटियों का प्रवाह
0 से 2	-0.0071**	-0.0070**	-0.0044	0.0071	0.0038**	-0.0001	0.0004	-0.0026*	0.0025	-0.0086
	[0.0032]	[0.0024]	[0.0033]	[0.0041]	[0.0017]	[0.0063]	[0.0047]	[0.0015]	[0.0057]	[0.0083]
3 से 5	-0.0092	-0.0025	0.0024	0.0126*	0.0075**	0.0034	0.0059	-0.0049**	0.0083	-0.0087
	[0.0077]	[0.0050]	[0.0046]	[0.0060]	[0.0028]	[0.0115]	[0.0068]	[0.0020]	[0.0101]	[0.0095]
6 से 8	-0.0111	-0.0001	0.007	0.0153**	0.0100**	0.0041	0.0102	-0.0071*	0.0113	0.0128
	[0.0104]	[0.0058]	[0.0044]	[0.0055]	[0.0038]	[0.0135]	[0.0084]	[0.0038]	[0.0108]	[0.0103]
9+	-0.0084	0.0036	0.0103*	0.0065	0.0071	-0.0019	0.0113	-0.0067	0.0048	0.0341**
	[0.0131]	[0.0080]	[0.0055]	[0.0092]	[0.0053]	[0.0165]	[0.0109]	[0.0059]	[0.0114]	[0.0144]
R-squared	0.75	0.64	0.5	0.94	0.88	0.86	0.62	0.82	0.85	0.29
एन	273	273	273	273	273	273	273	273	273	219

*कोष्ठक मानक त्रुटि दर्शा रहे हैं। * $P < 0.1$, ** $P < 0.05$ A प्रयुक्त नियंत्रक चर हैं : राज्य विशिष्ट और काल अपरिवर्ती प्रभाव,* VAT *के लिए तदर्थ चर तथा* GSDP *संवृद्धि। मानक त्रुटियां राज्य स्तर पर संगुच्छित हैं।*

परिधान और पदत्राण (जूते) : क्या भारत निम्न कौशल विनिर्माण पर पुनः अधिकार कर सकता है?

07

अध्याय

''औद्योगिक क्रांति के बाद से कोई भी देश औद्योगिक शक्ति बने बिना बड़ी अर्थव्यवस्था नहीं बन पाया है''

- ली कुआन यू

रोजगार सृजन की चुनौतियों का सामना करने के लिए श्रमसघन क्षेत्रों की ओर ध्यान देना ही होगा। परिधान एवं पदत्राण उद्योग नीति-निर्माताओं का ध्यान पाने की बहुतसी वांछनीय विशेषताओं से परिपूर्ण हैं : इनमें रोजगार बहुत होते हैं, वह भी विशेषकर महिलाओं के लिए और साथ ही इन दोनों उद्योगों के लिए निर्यात बाजारों में बहुत संवृद्धिशील संभावनाएं विद्यमान हैं। श्रम लागतों में वृद्धि का परिणाम है कि चीन इन उद्योगों में अपने वर्चस्व से धीरे-धीरे परे हट रहा है और भारत के लिए कुछ सुअवसर पैदा हो रहे हैं। यदि इन अवसरों को बंगलादेश और वियतनाम जैसे प्रतिद्वन्द्वियों के हाथों सौंपना नहीं है तो हमें श्रम नियमों की जकड़ कुछ ढ़ीली करनी होगी। यूरोपीय संघ और ब्रिटेन जैसे बड़े व्यापार भागीदारों के साथ कुछ मुक्त व्यापार अनुबंधों पर सौदेबाजी करनी होगी और ध्यान रखना होगा कि जीएसटी के अंतर्गत वर्तमान कर नीति के उन प्रावधानों को तर्क संगत बनाया जाएगा जो गत्यात्मक उद्योगों के विरूद्ध कार्य कर सकते हैं।

I. विषय प्रवेश

7.1 आज अधिक श्रमिकों के लिए रोजगार के अवसरों का सृजन भारत के लिए एक चुनौति बन गया है। नीतिगत प्रयासों का एक अंग तीव्र आर्थिक संवृद्धि की रचना करना है, निवेश संभव बनाने वाले वातावरण को सुनिश्चित करना दूसरा तथा लक्षित कदम उठाना तीसरा अंग है। तीसरे अंग से भारत की ऐसे रोजगार के अवसरों के सृजन की आवश्यकता है जो औपचारिक एवं उत्पादक हो, जिनमें निवेश पर व्यय के अनुपात में अधिक लोगों को काम प्रदान करने की संभावना भी अच्छी तरह से भरी हो। साथ ही उन रोजगार सृजन क्षेत्रों में व्यापक स्तर पर सामाजिक परिवर्तन की संभावनाओं के साथ-साथ संवृद्धि तथा निर्यात संवर्धन की क्षमता भी होनी चाहिए। परिधान और चर्म एवं पदत्राण उद्यमों में हमारी उपर्युक्त सभी या अधिकांश कसौटियों का अनुपालन करने की क्षमता है। अत: इन्हीं पर लक्ष्य साधने की आवश्यकता है। इसी बात को पहचानकर सरकार ने परिधान उत्पादन एवं निर्यात को संप्रेरणाएं प्रदान करने के उद्देश्य से कई महत्वपूर्ण कदमों की घोषणाएं (भारत सरकार, जून, 2016) की हैं। चर्म उद्योग के विषय में ऐसी ही नीतिगत पहलों पर अभी गहन विचार मंथन चल रहा है।

II. परिधान और पदत्राण ही क्यों?

7.2 महायुद्धोपरांत पूर्वी एशिया का अनुभव बताता है कि लगभग सभी सकल आर्थिक संवृद्धि यात्राएं परिधान और पदत्राण के निर्यात में तीव्र वृद्धि के साथ प्रारंभ हुई है (रेखाचित्र-1, तालिका 3)।

7.3 सफल रही पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं (जहां संवृद्धि उत्कर्ष में जीडीपी वृद्धि की दरें 7-10 प्रतिशत रही हैं) में इन दो उद्योगों के निर्यात में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। औसत परिधान निर्यात संवृद्धि दर 20 प्रतिशत वार्षिक रही, कुछ मामलों में तो यह 50 प्रतिशत के निकट थी। चर्म पदार्थों और जूतों के निर्यात की औसत वृद्धि दर भी 25 प्रतिशत से अधिक रही है।

रेखाचित्र 1 : उत्कर्ष प्रारंभ होने के बाद परिधान, चर्म एवं पदत्राण निर्यात

रेखाचित्र 1क : परिधान निर्यात प्रारंभिक वर्ष = 100

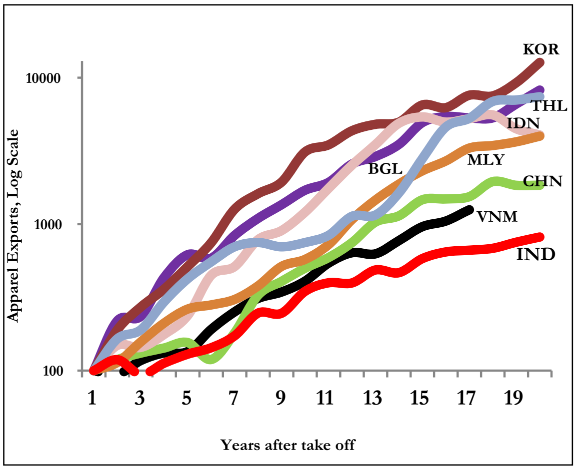

रेखाचित्र 1ख : चर्म एवं पदत्राण निर्यात प्रारंभिक वर्ष = 100

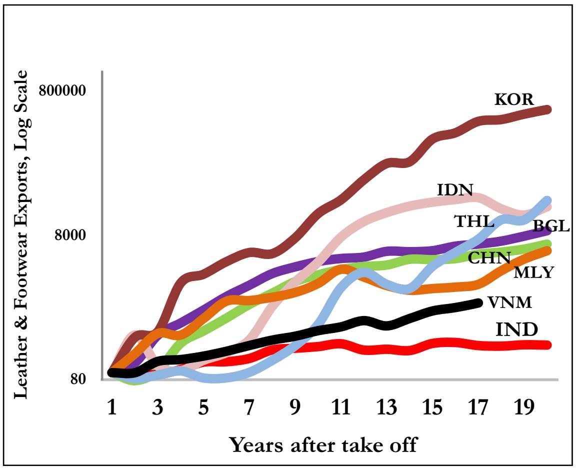

स्रोत : Johnson, Ostry, Subramanian 2010, और World Bank Database

तालिका 1 : उत्कर्ष प्रारंभ के बाद परिधान, चर्म एवं पदत्राण निर्यात

देश	उत्कर्ष आरंभ वर्ष	उत्कर्ष पश्चात, 20 वर्षों में वार्षिक औसत निर्यात वृद्धि (%) परिधान	उत्कर्ष पश्चात, 20 वर्षों में वार्षिक औसत निर्यात वृद्धि (%) चर्म एवं पदत्राण	वार्षिक औसत आर्थिक संवृद्धि 20 वर्ष तक उत्कर्ष पश्चात
कोरिया	1962	30.4	69.9	9.0
बांग्लादेश	1985	27.9	29.8	5.2
थाइलैंड	1960	53.8	44.1	7.5
इंडोनेशिया	1967	65.8	48.6	7.0
मलेशिया	1970	33.4	27.5	6.9
चीन	1978	18.6	27.7	9.8
वियतनाम	1985	17.8	16.1	6.6
भारत	1980	12.7	5.4	5.6

स्रोत : **World Bank Database.**

रोजगार, विशेषकर महिलाओं के लिए

संवृद्धि के प्रारंभिक उत्थान काल में भारत का निष्पादन पूर्वी एशियाई स्पर्धियों की अपेक्षा फीका रहा है, यह फीकापन भी चर्म उद्योग में विशेषकर दिखाई दिया है।

7.4 परिधान और चर्म उद्योग महिलाओं के लिए तो रोजगार के अवसर विशेष रूप से बहुत बड़े स्तर पर सृजित करते हैं। तालिका 2 में रोजगार प्रति निवेश इकाई के रूप में श्रम प्रधानता की तुलना प्रमुख विनिर्माण क्षेत्रों में स्त्रीश्रम सघनता के साथ की गई है। आंकड़े स्पष्ट कर रहे हैं कि परिधान उद्योग सबसे अधिक श्रम सघन है और दूसरे क्रम पर जूता उद्योग की बारी आती है। परिधानों की श्रम सघनता वाहन उद्योग से 80 गुनी है तो यह इस्पात उद्योग की तुलना में 240 गुना अधिक रोजगार प्रदान करता है। चर्म उद्योग के लिए ये तुलनीय अंक क्रमशः 33 और 100 हैं। ध्यान रहे, ये विशेषता परिधान उद्योग की है, वस्त्र उद्योग की नहीं, साथ ही चर्म पदार्थों और जूता उद्योग के लिए आंकलन किया गया है, चमड़ा उतारने और उसे साफ करने के लिए

तालिका 2 : चुनींदा उद्योगों में रोजगार-निवेश अनुपात

क्षेत्रक	निवेश (रू. करोड़)	रोजगार (लाख में)	प्रति एक लाख निवेश पर रोजगार	स्त्री रोजगार (लाख)	प्रति एक लाख निवेश पर स्त्री रोजगार
Apparels (NIC 14))	3156	75.4	23.9	25.9	8.2
Leather & Footwear (NIC 15)	1624.5	11.6	7.1	5.5	3.4
Of which					
Tanning and Dressing of Leather & Fur (NIC 1511)	470.8	2.2	4.6	1.1	2.4
Leather Goods (NIC 1512)	218.3	2.2	9.9	0.8	3.9
Footwear (NIC 1520)	935.4	7.2	7.7	3.6	3.8
Textiles (NIC 13)	17814.7	71.3	4	22.5	1.3
Food Processing (NIC 10)	21119	50.2	2.4	27.9	1.3
Autos (NIC 2910 & 2930)	29647.6	7.6	0.3	3	0.1
Steel (NIC 2410 & 2431)	70528.3	7.8	0.1	3.7	0.05

स्रोत: ASI 2012-2013, NSSO 68th round

टिप्पणी: *Investment is Gross Fixed Capital Formation

नहीं। विश्व बैंक के रोजगार लोचशीलता के आंकड़ों का प्रयोग करते हुए हमने अनुमान लगाया है कि निर्यात में तीव्र वृद्धि अकेले 5,00,000 रोजगार के नए अवसर प्रतिवर्ष सृजित कर सकती है।

7.5 महिलाओं के लिए विशेष रूप से अधिक रोजगार से सृजन का अर्थ है ये क्षेत्र एक सामाजिक परिवर्तन का माध्यम भी बनेंगे। परिधान उद्योगों में नारी के कार्य करने से उसकी वित्तीय निर्णय प्रक्रिया में बृहतर भागीदारी में सुधार होगा। यह सुधार एक अन्य रूप भी धारण करेगा, घरेलू काम काज में पुरूष वर्ग योगदान देने लगेगा। बंगलादेश में परिधान उद्योग के विकास के साथ-साथ नारी शिक्षा, नारी की श्रमशक्ति में भागीदारी में वृद्धि तथा गर्भाधान दरों में गिरावट के प्रमाण मिले हैं।

एक ऐतिहासिक सुअवसर : चीन स्थान खाली कर रहा है, किन्तु इसे भारत नही अन्य देश भर रहे हैं।

7.6 चीन में मजदूरी दरों में वृद्धि के कारण वह परिधान, चर्म एवं पदत्राण उत्पादों के बाजार से बाहर होता जा रहा है (रेखाचित्र 2-4)।

7.7 तालिका-3 में चीन, पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं और भारत के बड़े प्रांतों में मजदूरी दरें दिखाई गई है। भारत के अधिकांश प्रांतों में मजदूरी दरें चीन से काफी कम होने के कारण वह चीन की स्पर्धा क्षमता में निरंतर ह्रास का लाभ उठाने की स्थिति में रहा है। किन्तु यह नहीं हो पा रहा, उतना तो नहीं जितना होना चाहिए था। परिधानों में चीन द्वारा खाली स्थान को वियतनाम और बंगलादेश बड़ी तेजी से भर रहे हैं; तो इंडोनेशिया और वियतनाम चर्म एवं जूता उत्पादों के बाजार पर अधिकार करते जा रहे हैं (रेखाचित्र 2ख, 3ख और 4)। वस्तुत: भारतीय परिधान और चर्म उत्पादक फर्में अपना करोबार बंगलादेश, वियतनाम, म्यांमार और यहां तक कि इथोपिया को भी पुन: स्थापित कर रही हैं। सुयोग द्वार बंद होते जा रहे हैं। यदि भारत को इन उद्योगों में स्पर्धाक्षमता प्राप्त करनी है तो इसे तुरंत काम करना होगा। यही करना आज अत्यावश्यक हो रहा है।

रेखाचित्र 2 : वैश्विक परिधान निर्यात में (%) अंश (HS Code 61 और 62)

रेखाचित्र 2क : विश्व परिधान निर्यात में अंश

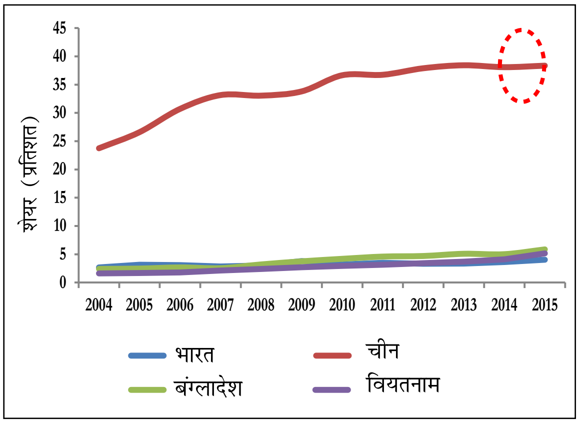

रेखाचित्र 2ख : विश्व परिधान निर्यात में अंश

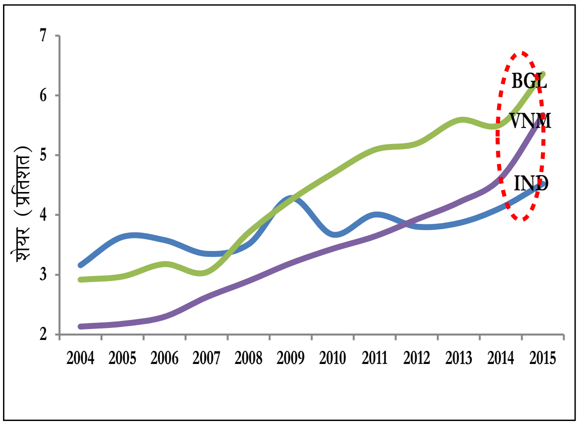

रेखाचित्र 3 : विश्व पदत्राण निर्यात में अंश (प्रतिशत) (HS Code 64)

रेखाचित्र 3क : विश्व पदत्राण निर्यात में अंश

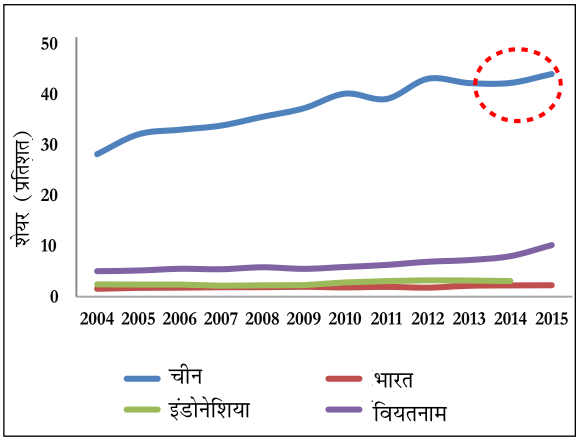

रेखाचित्र 3ख : विश्व पदत्राण निर्यात में अंश

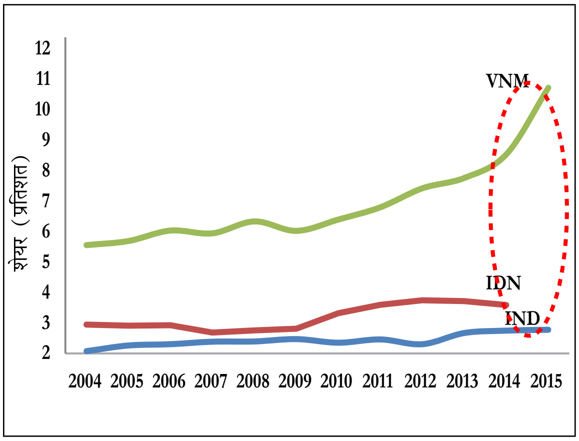

रेखाचित्र 4 : विश्व चर्म निर्यातों में अंश (प्रतिशत) (HS Code 42)

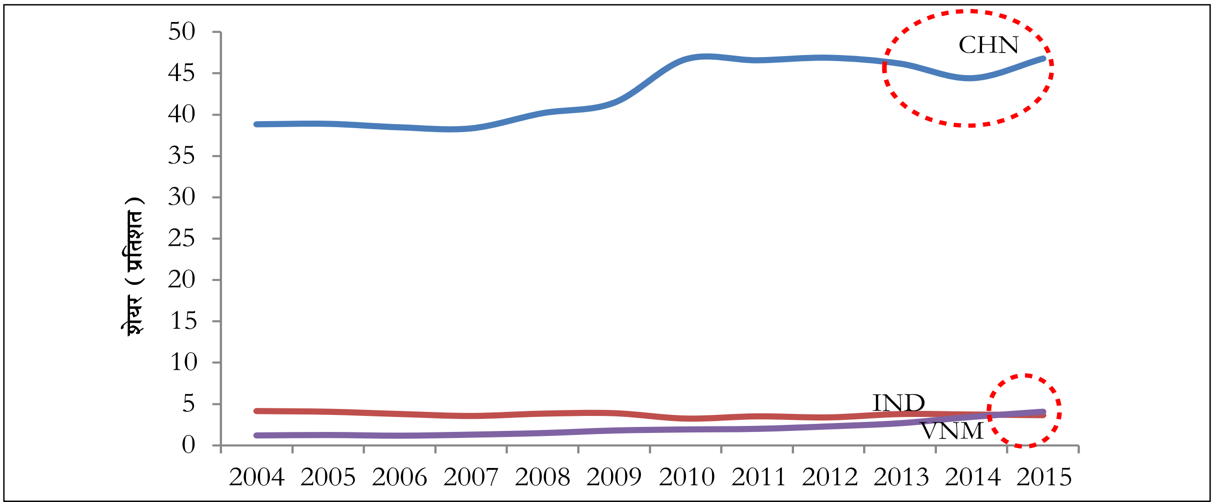

स्रोत : World Bank Database.

तालिका 3 : अर्द्ध कुशल श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी

	वर्ष	मासिक मजदूरी (अमेरिकी डॉलर)
आन्ध्र प्रदेश	2016	81
बिहार	2016	84
ओडिशा	2016	86
झारखण्ड	2016	90
तमिलनाडु	2016	93
उत्तर प्रदेश	2016	95
कर्नाटक	2016	105
पश्चिम बंगाल	2016	109
गुजरात	2016	114
मध्य प्रदेश	2016	115
महाराष्ट्र	2016	118
हरियाणा	2016	119
बंगलादेश	2013	80-120
वियतनाम	2015	180- 250
चीन	2013	250 - 300
इंडोनेशिया	2013	120 - 150

***स्रोत:* ILD, राज्य श्रम कार्यालय**

III. चुनौतियां

7.8 स्पष्टत: अभी भारत के पास सस्ती और प्रचुर श्रम शक्ति के रूप में संभावित तुलनात्मक लाभ है। किन्तु कुछ अन्य कारक उन लाभों को निरस्त कर उसे अपने स्पर्धियों की अपेक्षा कम स्पर्धाक्षम बना देते हैं।

7.9 परिधान एवं चर्म क्षेत्रों को एक जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। संभार तंत्र, श्रम नियम और कर तथा सीमा शुल्क नीतियां स्पर्धी देशों की तुलना में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार परिवेश से व्युत्पन्न कठिनाइयां मिलकर इन उद्यमों की स्पर्धा क्षमता को क्षीण कर रही हैं। साथ ही चर्म एवं पदत्राण उद्योगों के संदर्भ में प्रचुर रूप में उपलब्ध पशुधन की तुलनात्मक लाभ संभावना को व्यवहारिक बनाने में अनेक नीतियां बाधक हो रही हैं। हम आगे इन पर विस्तार से चर्चा कर रहे हैं।

(क) सांझी चुनौतियां

7.10 संभार तंत्र के पटल पर भारत अनेक तरीकों से अपने स्पर्धियों से पिछड़ जाता है। तालिका-4 दिखा रही है कि यहां फैक्ट्रियों से माल को गन्तव्य स्थान पर पहुँचाने में लगने वाली लागत और समय बहुत अधिक हैं। यही नहीं, बहुत कम बड़ी क्षमता वाले कंटेनर पोत भारतीय बंदरगाहों तक आते हैं। इसीलिए हमारे निर्यातकों को अपना माल कोलंबो के रास्ते भेजना पड़ता है। इससे लागतों में वृद्धि होती है और उत्पादनकर्ताओं के हाथ बंध जाते हैं।

श्रम नियम

7.11 भारत के तुलनात्मक लाभ का मुख्य स्रोत श्रम लागत है किन्तु वह भी भारत के पक्ष में काम करता नहीं प्रतीत होता। समस्या तो जानी पहचानी हैं : न्यूनतम ओवर टाईम भुगतान की दरें, और बड़े वैधानिक योगदान (भविष्य निधि, पेंशन फंड आदि) तो छोटी फर्मों में काम करने वाले निम्न मजदूरी श्रमिकों पर लगने वाले करों का रूप धारण कर जाते हैं। परिणामस्वरूप उनकी निर्वर्त्य मजदूरी आय 45 प्रतिशत तक कम रह जाती है

तालिका 4 : संभार तंत्र की लागतें

देश	संभार लागत + प्रति किलोमीटर, सड़क परिवहन	बंदरगाह एवं जहाजी ढुलाई में लगे दिन	
		सीमाशुल्क/बंदरगाह अनुपालन	बन्दरगाह से गंतव्य स्थान अमेरिकी पूर्वी तट पर
भारत	7.0	6.0	21-0 (JNPT)_ 28-0 (Chennai/ Tuticorin)
चीन	2.4-2.5	1.5	14.0
बंगलादेश	3.9	10.0	21.0
वियतनाम	7.0	6.0	14.0
श्रीलंका	3.0	3.0	23.0

***स्रोत:* CLE और एवं परिधान उद्योग स्रोत**

(इस विषय में आर्थिक समीक्षा, 2015–16 के प्रथम खंड के अध्याय 10 में सप्रमाण विवरण दिया गया था)। कई स्थानों पर अंशकालिक कार्य में नम्यता के अभाव और उच्च न्यूनतम मजदूरी भी बाधक सिद्ध हो रहे हैं। ओवर टाइम मजदूरी को लेकर न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के प्रावधान बहुत ही सख्त है, यहां श्रमिक की सामान्य मजदूरी दर से दोगुना भुगतान की व्यवस्था है।

7.12 श्रम बाजार की समस्याओं के कारण ही भारत के परिधान एवं चर्म उत्पाद फर्मों के आकार चीन, बंगलादेश और वियतनाम की फर्मों से समक्ष बहुत छोटे रह जाते हैं। भारत में तो 78 प्रतिशत फर्मों में 50 से कम कर्मी कार्य कर रहे हैं, मात्र 10 प्रतिशत में 500 से अधिक कर्मी हैं। चीन में ये अनुपात क्रमश: 15 प्रतिशत और 28 प्रतिशत हैं।

कर एवं सीमाशुल्क नीतियां

7.13 परिधान और पदत्राण, दोनों के विषय में कर और सीमा शुल्क नीतियां ऐसी विकृतियों से भरी हैं कि भारत निर्यात स्पर्धा क्षमता नहीं पा सकता। परिधान क्षेत्र में दो प्रकार की नीतियां हैं जो मानव निर्मित कपड़े में स्पर्धा की हानि करती है और सूती कपड़े पर आधारित निर्यात को प्रोत्साहन देती हैं। यह एक गंभीर समस्या है, विश्व भर में मांग अब मानव निर्मित रेशे से बने परिधान की ओर उन्मुख है, सूती वस्त्रों के निर्यात पर इसका दुष्प्रभाव ही पड़ा है (रेखाचित्र 5)।

7.14 दूसरी ओर सूत और रेशे पर लगे उच्च सीमा शुल्कों के कारण वस्त्र निर्माण की लागत अधिक हो जाती है। भारत मानव निर्मित रेशे पर 10 प्रतिशत तथा सूत–कपास पर 6 प्रतिशत आयात कर लगता है। किसी सीमा तक तो इन शुल्कों का निर्यात पर प्रभाव नहीं होना चाहिए क्योंकि निर्यातकों को आदान शुल्क लौटा दिए जाते हैं। किन्तु यह शुल्क वापसी आयातित रेशे से देश में निर्मित धागे/सूत पर लागू नहीं होती, वह तो कपड़े की लागत को अधिक कर ही देती है। वैसे भी, देश के भीतर परिधानों की बिक्री पर भी शुल्क वापसी का लाभ नहीं मिल पाता। यह भी निर्यातकर्ता की सकल स्पर्धाशीलता को दुष्प्रभावित करता है।

7.15 दूसरी ओर देश की आन्तरिक कर व्यवस्था भी कपास आधारित उद्योग के पक्ष में है। जिस पर 7.5 प्रतिशत कर लगता है, जबकि मानव निर्मित रेशों से बने माल पर 8.4 प्रतिशत कर देय होता है। ऐसी ही समस्या पदत्राण उद्योग में भी विद्यमान है : चमड़े के जूतों पर 20.5 प्रतिशत और गैर चमड़ा आधारित जूतों पर 27 प्रतिशत कर लगाए जाते हैं (तालिका 5)। इस कारण से उन आन्तरिक नीतियों को तर्कशील बनाने की आवश्यकता है जो वैश्विक मांग के स्वरूप के साथ संगतिपूर्ण नहीं है।

रेखाचित्र 5 : विश्व निर्यात में सूती एवं मानव निर्मित वस्त्रों और परिधानों के अंश (प्रतिशत)

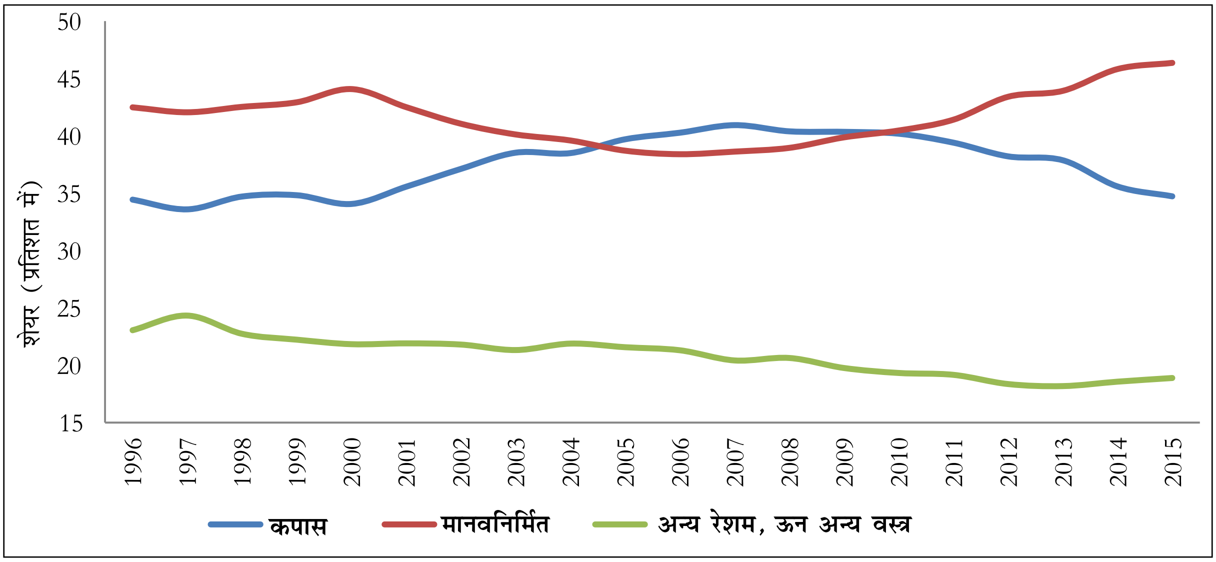

स्रोत: World Bank Database.

तालिका 5 : परिधानों और जूतों पर प्रभावी कराधान दरें (प्रतिशत)

	प्रभावी कराधान दरें (%)
कपास रेशे	7.5
मानव निर्मित रेशे	8.4
चमड़े के जूते	20.5
गैर चमड़ा आधारित जूते	27.0

स्रोत : उद्योग के अनुमान

***ये अनुमान राज्यानुसार एवं पदार्थानुसार आदान-उत्पाद संबंधों में अन्तरों के कारण अलग-अलग हो सकते हैं।**

7.16 विश्व भर में अब चमड़े से इतर सामग्रियों से बने जूतों की मांग में ही वृद्धि हो रही है (तालिका 6)। इस बदलाव के कई कारण संभव है : भौतिक आराम, देखने में सुन्दर और कम कीमतें। ये सब गैर चर्मजूतों के पक्ष में और चमड़े के जूतों के विरूद्ध रहते हैं। भारत चमड़े के जूतों का परंपरागत निर्यातक रहा है। विश्व बाजार में इसका चमड़े के जूतों का अंश गैर चर्म जूतों से दुगुने से अधिक (रेखाचित्र-6)। चीन से निर्यात शिथिल होने से सुलभ बाजार पर कब्जा करने के लिए भारत को गैर चर्म जूतों के निर्यात को प्रोत्साहन देना चाहिए।

तालिका 6 : चर्म एवं गैर चर्म पदत्राणों के विश्व निर्यात में अंश (प्रतिशत)

वर्ष	चमड़ा जूता	गैर चमड़ा जूता
2004	55.0	45.0
2005	55.5	44.5
2006	55.1	44.9
2007	55.0	45.0
2008	52.6	47.4
2009	50.0	50.0
2010	47.2	52.8
2011	45.6	54.4
2012	43.2	56.8
2013	43.2	56.8
2014	42.1	57.9
2015	39.5	60.5

स्रोत: World Bank Database.

निर्यात बाजारों में भेदभाव

7.17 कम से कम दो बड़े आयात बाजारों, संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोपीय संघ में भारत के प्रतिस्पर्धी परिधान

रेखाचित्र 6 : भारत का चर्म एवं गैर चर्म पदत्राण निर्यात में अंश (प्रतिशत)

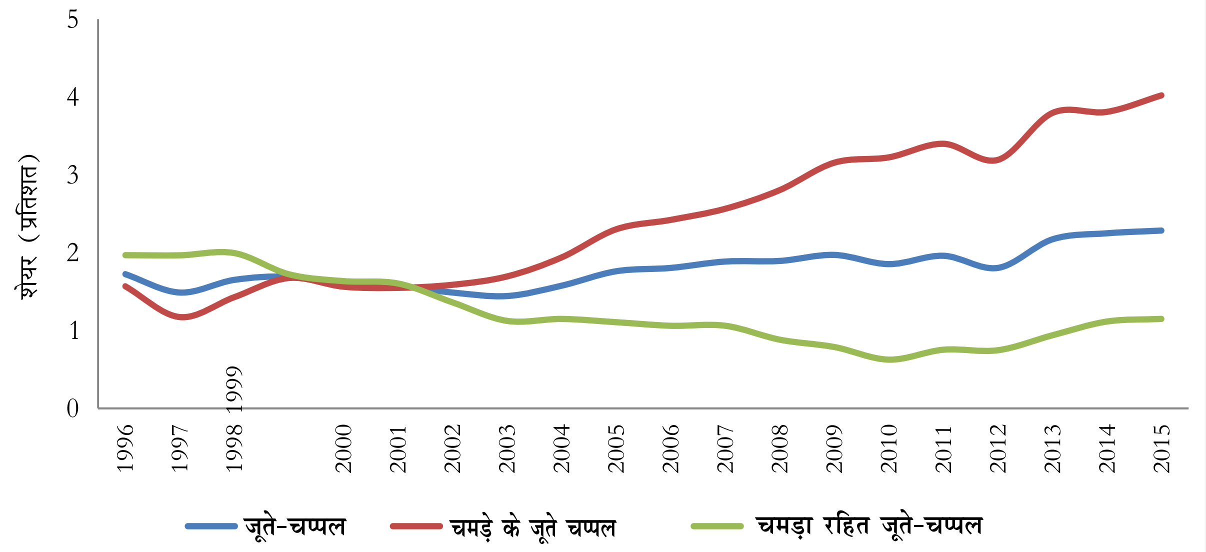

स्रोत: World Bank Database

एवं चर्म निर्यातक देशों को बेहतर बाजार तक पहुँच की सुविधा मिली है, या तो उन देशों से परिधान आयात पर शुल्क दर शून्य है या भारत की अपेक्षा निम्न है। तालिकाएं 7 और 8 भारत द्वारा अपने स्पर्धियों की तुलना में चुकानी पड़ रही शुल्क दरें दिखाई गई हैं। यूरोपीय संघ में बंगलादेश के निर्यात एक कम विकसित देश के उत्पादन के नाम पर शून्य प्राय: शुल्क के साथ प्रवेश पा जाते हैं। भारत के निर्यात पर औसतन 9.1 प्रतिशत शुल्क देय होता है। यूरोप वियतनाम मुक्त व्यापार समझौता लागू होने पर उक्त क्षेत्र में वियतनामी निर्यात भी शुल्क मुक्त प्रवेश पा जाएंगे। अमेरिका में भारत को 11.4 प्रतिशत की ऊंची दर से सीमा शुल्क देना होता है। इथोपिया, जो एक नया उभरता हुआ स्पर्धी है, अमेरिका, यूरोप और कनाडा के बाजारों में शुल्क मुक्त प्रवेश पा रहा है।

सारणी 7. भारतीय कपड़ा निर्यातकों द्वारा वहन किए जा रहे शुल्क (HS Code 61 एवं 62)

			प्रतिशत
	यूरो संघ	**कनाडा**	**सुंक्त राज्य**
बंगलादेश	0	0	11.9
चीन	11.4	16.5	11.4
इथियोपिया	0	0	0
भारत	9.1	16.5	11.4
इंडोनेशिया	9.2	16.4	11.6
वियतनाम	9.2	16.2	11.6

स्रोत: World Bank Database.

7.18 भारत के चर्म एवं गैर चर्म जूतों के निर्यात पर भी व्यापार भागीदार देश उच्च दर से सीमा शुल्क लगाते हैं। जापान में तो यह एक बड़ी बाधा बन जाती है।

7.19 यूरोपीय संघ तथा ब्रिटेन के साथ मुक्त व्यापार समझौतों का लाभ हो सकता है। परिधानों के विषय में तो बंगलादेश, वियतनाम और इथोपिया की तुलना में लाभहीनता का निवारण हो सकता है। चमड़े के पदार्थो के विषय में ये समझौते भारत की वर्तमान तुलनात्मक लाभ स्थिति को और सुदृढ़ कर सकते हैं। दोनों ही मामलों में अतिरिक्त लाभ सकारात्मक ही होगा।

(ख) क्षेत्र विशिष्ट चुनौति : चर्म एवं पदत्राण क्षेत्रक

पशुधन प्रचुरता का तुलनात्मक लाभ

7.20 चर्म एवं चर्म पदत्राण उद्योग मवेशियों, भैंसों, बकरियों, भेड़ों एवं अन्य अनेक छोट पशुओं के खाल को कच्चे माल की तरह प्रयोग करता है। अपने अधिक टिकाऊपन और अच्छी गुणवत्ता के कारण मेवशियों के चमड़े से बने सामान की विश्व बाजार में अधिक मांग है। अनुमान है कि मवेशी चर्म विश्व निर्यात भैंसों के चर्म के निर्यात से 8 से 9 गुना अधिक है। किन्तु बहुत बड़ी मवेशी जनसंख्या होने के बावजूद भारत का विश्व मवेशी संख्या तथा विश्व मवेशी चर्म निर्यात निम्न है और उसमें गिरावट भी आ रही है (रेखाचित्र 7, 8)। इसका कारण भारत में कत्ल के लिए उपलब्ध सीमित मवेशी संख्या हो सकती है। अत: एक प्रचुरता से उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन से संभावित तुलनात्मक लाभ से देश वंचित रह जाता है।

तालिका 8 : भारतीय चर्म एवं पदत्राण निर्यात पर लग रहे सीमा शुल्क (प्रतिशत)

देश	यूरो संघ			जापान			संयुक्त राज्य		
	चमड़े का सामान	चमड़े के जूते	गैर चमड़े के जूते	चमड़े का सामान	चमड़े के जूते	गैर चमड़े के जूते	चमड़े का सामान	चमड़े के जूते	गैर चमड़े के जूते
बांग्लादेश	0	0	0	3.1	0	4.1	7.9	5.0	12.0
चीन	4.6	7.9	12.0	10.1	25.1	12.6	7.3	4.3	13.9
इथोपिया	0	0	0	8.8	0	-	1.0	0	0
भारत	1.0	4.4	7.5	5.7	24.3	13.3	5.5	4.7	12.2
इंडोनेशिया	1.0	4.4	7.5	1.7	25.0	10.0	5.8	5.0	13.4
वियतनाम	1.1	4.4	7.5	3.9	25.0	11.4	7.6	4.3	12.7

स्रोत: **World Bank Database**

रेखाचित्र 7 : भारतीय मवेशी संख्या का निवेश में अंश (%)

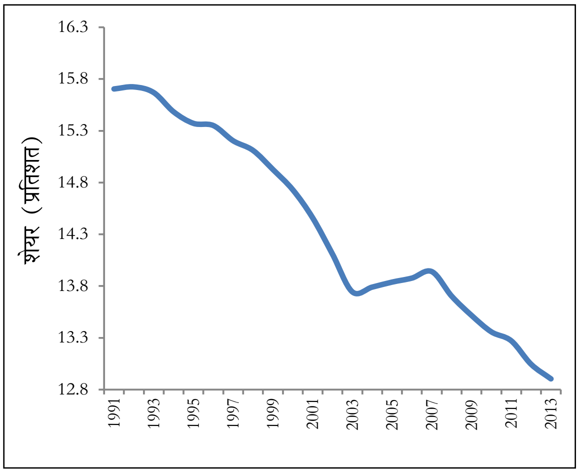

स्रोत: **FAO Statistics**

रेखाचित्र 8 : विश्व के मवेशी चर्म निर्यात में भारत का अंश (प्रतिशत)

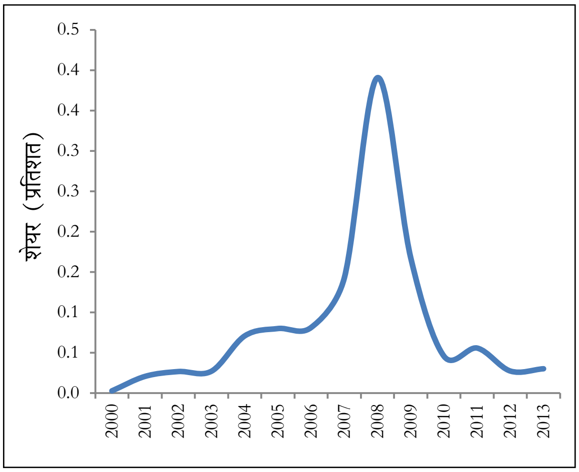

स्रोत: **FAO Statistics**

IV. नीतिगत प्रतिक्रिया और निष्कर्ष

7.21 जून 2016 में सरकार द्वारा परिधान और वस्त्र उद्योग के लिए स्वीकृत पैकेज में कई कदम सम्मिलित है। उनका तर्क आधार हमारी उल्लिखित चुनौतियों का सामना करना ही है। ये नीतियां सभी चुनौतियों का समाधान तो नहीं कर पाएंगी, फिर भी परिधान उद्योग को सुदृढ़ बनाने की दिशा में इनका बड़ा योगदान होगा। निर्यातों में निहित प्रांतीय करों के प्रभाव को निरस्त करने के लिए परिधान निर्यातकों को राहत दी जाएगी। इन करों का मान निर्यात मूल्य के 5 प्रतिशत के समान रहता है। चर्म निर्यात के लिए भी ऐसी ही व्यवस्था बहुत लाभप्रद होगी। यह सब्सिडी नहीं है, यह तो एक प्रकार की शुल्क वापसी है, यह निर्यात पर कर निवारण है और इसे WTO की व्यवस्थाओं के अनुरूप माना जाना चाहिए।

7.22 यही नहीं वस्त्र एवं परिधान निर्माता फर्मों को रोजगार बढ़ाने के लिए सब्सिडी भी जाएगी। इसका स्वरूप सरकार द्वारा नियोकता की ओर से कर्मचारी भविष्य निधि में 12 प्रतिशत का योगदान होगा। सरकार पहले ही 8.3 प्रतिशत+ का योगदान दे रही है। यह राशियां उससे अलग होंगी।

7.23 किन्तु इन कदमों के साथ कुछ और भी किया जाना चाहिए। सरकार विदेशी बाजारों में भारतीय निर्यातकों की अलाभिता की स्थिति को लेकर बहुत गंभीर है। फिर भी भारत को यूरोपीय संघ तथा ब्रिटेन के साथ मुक्त व्यापार समझौतों के लिए सौदेबाजी में बहुत सतर्क रहना होगा। किन्तु हमारे आंकलन में परिधान और संभवत: चर्म उत्पादों के निर्यात में वृद्धि के देश में रोजगार वृद्धि पर संभावित प्रभावों को अन्य क्षेत्रों पर प्रभावों पर वरीयता मिलनी ही चाहिए। वर्ष 2016 में किए गए एक आंतरिक मूल्यांकन में अनुमान लगा है कि परिधान, चर्म और जूता उद्योग में क्रमश: प्रतिवर्ष 108029, 23156 और 14347 रोजगारों का अतिरिक्त सृजन हो सकता है (तालिका 9)। और कितने ही अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर भी पैदा होंगे, किन्तु उनका अनुमान लगा पाना कठिन है।

7.24 दूसरे, वस्तु एवं सेवाकर, जीएसटी, व्यवस्था का प्रारंभ आंतरिक अप्रत्यक्ष करों को तर्क संगत बनाने का एक अच्छा सुअवसर प्रदान कर रहा है, ताकि प्राकृतिक और मानव निर्मित रेशे से बने वस्त्रों के बीच भेदभाव समाप्त हो सके, साथ ही जूता उद्योग में भी चमड़े और चमड़े से इतर सामग्रियों से बने जूतों पर कराधान में अनावश्यक भेदभाव का समापन भी हो सके (यदि ऐसा हो रहा हो)।

7.25 तीसरे इन क्षेत्रों में रोजगार सृजन की बाधाएं हटाने के लिए श्रम कानूनों में कुछ सुधार करने होंगे। इनमें से कुछ हैं :

- अभी तक निम्न आय वर्ग (रू. 20,000 मासिक से कम पाने वाले) को अपने वेतन का मात्र 55 प्रतिशत मिल पाता है। 45 प्रतिशत तो अनेक प्रकार

तालिका 9 : EU/UK मुक्त व्यापार समझौते से भारत में संभावित रोजगार

	परिधान		चर्म पदार्थ		पदत्राण	
	अतिरिक्त निर्यात $ mn.	रोगार वृद्धि संख्या	अतिरिक्त निर्यात $ mn.	रोगार वृद्धि संख्या	अतिरिक्त निर्यात $ mn	रोगार वृद्धि संख्या
यूरो क्षेत्र	1483.6	76853	416.9	18542	217	9966
ब्रिटेन	603.3	31176	103.8	4615	95.3	4381
जोड़	**2086.9**	**108029**	**520.7**	**23156**	**312.3**	**14347**

की वैधानिक कटौतियों में चला जाता है अर्थात कर्मचारी भविष्य निधि, कर्मचारी पेंशन योजना, श्रम कल्याण कोष, कर्मचारी जमा संबंधित बीमा योजना और कर्मचारी बीमा योजना आदि।

- निम्न मजदूरी कर्मचारियों की क्षमता 45 प्रतिशत बचत करने की नहीं होती, अत: वे तो इस राशि से भविष्य के संभावित लाभ पाने के इच्छुक नहीं होंगे, वे आज ही सारी आमदनी पाना चाहेंगे।
- दो सबसे बड़ी कटौतियां तो भविष्य निधि और ESI की है, इनसे कर्मचारी को अपना धन का पूरा मूल्य मिलना जरूरी नहीं होता। कर्मचारी भविष्य निधि संगठन कार्यालय के पास 400 लाख खाते हैं और यह कर्मचारियों के योगदान कर 3.5 प्रतिशत तो अपनी फीस के रूप में ही वसूल कर लेता है (यह विश्व की उच्चतम फीस की दर है)। ESI भी एकत्र योगदान का मात्र 45 प्रतिशत अंश ही लाभ के रूप में उन्हें लौटाता है (भारत में शायद ही किसी निजी या सार्वजनिक स्वास्थ्य बीमा पॉलीसी में दावे का अनुपात 90 प्रतिशत से कम हो)।

7.26 रोजगार पाने के समय कर्मचारियों को इन तीन में से चयन की सुविधा मिलने पर औपचारिक रोजगार में वृद्धि हो सकती है :

- यह तय करें कि वह 12 प्रतिशत का कर्मचारी योगदान कटवाना चाहते हैं या नहीं।
- यह तय करें कि रोजगार दाता का 12 प्रतिशत अंशदान EPFO के पास जाएगा या राष्ट्रीय पेंशन योजना में।
- यह तय करें कि उनका स्वास्थ्य बीमा योगदान ESI को जाएगा या उनके किसी चुनींदा स्वास्थ्य बीमा प्रदाता को।

7.27 यह चयन कर्मचारियों को करना है, रोजगारदाता को नहीं, तथा आज की वर्तमान अवस्था को ही चुनने का विकल्प सभी कर्मचारियों को सुलभ रहेगा। मुख्य बात तो कर्मचारियों को विकल्प चुनने की सुविधा देना है। इससे EPFO और ESI जैसे सेवा प्रदाताओं को भी स्पर्धा का सामना करना पड़ेगा।

7.28 अत: अधिक ETAS, जीएसटी प्रेरित कर तर्क संगति और श्रम कानूनों में सुधार मिलकर वस्त्र परिधान और पदत्राण क्षेत्रों में रोजगार सृजन की संभावनाओं का बहुत संवर्धन कर सकते हैं। किसी क्षेत्र विशेष को बढ़ावा देने वाली प्रत्येक औद्योगिक नीति में कुछ जोखिमें तो होती ही हैं। किन्तु रोजगार, निर्यात और सामाजिक परिवर्तन के बाह्यता सृजक प्रभावों के कारण, परिधान और पदत्राण क्षेत्रकों में भारत की अंतर्भूत तुलनात्मक लाभ प्रदता इन जोखिमों को उठाने योग्य बना देती है। और यह भी ध्यान रहे कि कितने ही FTA, कर विवेकशीलता और श्रम कानून सुधारों के अर्थव्यवस्था व्यापी विस्तृत प्रभाव भी होंगे।

संदर्भ

1. Government of India (22nd June2016), Ministry of Textiles, PIB *"Cabinet Approves Special Package for Employment Generation and Promotion of Exports in Textiles and Apparel Sector"*

2. Government of India, *Ministry of Commerce, Council For Leather Exports Database*
3. Food and *Agriculture Organisation (FAO), Stat*
4. FAO, World Statistical Compendium forraw hides and skins, leather and leatherfootwear 1993 – 2012
5. Simon Johnson & Jonathan D Ostry & Arvind Subramanian, (2010). "Prospectsfor Sustained Growth in Africa: Benchmarking the Constraints," IMF Staff Papers, vol 57(1)
6. World Bank, World Integrated Trade Solutions
7. World Trade Organisation Database
8. World Bank (2016) "Stiches to Riches? Apparel Employment, Trade, andEconomic Development in South Asia".

आर्थिक घटनाक्रम की समीक्षा

08
अध्याय

आर्थिक समीक्षा, 2015-16 ने वर्ष 2016-17 में जीडीपी में 7-7.5 प्रतिशत की दर से संवृद्धि का पूर्वानुमान लगाया था। अर्थव्यवस्था वास्तव में इसी पथ का अनुसरण कर रही थी और CSO के अनुमानों के अनुसार वर्ष के पूर्वार्द्ध में संवृद्धि दर 7.2 प्रतिशत रही भी। किन्तु नवंबर में उठाए गए रू. 500 और रू. 1000 के नोटों के विमुद्रीकरण के क्रांतिकारी कदम के प्रभाव स्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था की संवृद्धि में कुछ शिथिलता अपेक्षित है। यह CSO के प्रारंभिक अनुमान से कुछ धीमी दर पर ही संवृद्धि कर पाएगी। जनवरी 2017 के प्रारंभ में जो प्रारंभिक अनुमान जारी किए गए थे, वे तो विमुद्रीकरण से पहले की जानकारी, अर्थात वित्त वर्ष के शुरू के 7-8 महीनों की जानकारी पर आधारित थे और वे उसी अवधि की आर्थिक दशाओं को अभिव्यक्त कर पाते हैं। किन्तु भारत की संवृद्धि दर में कटौति के अनुमान तो 1/4 से 1/2 प्रतिशत अंक के ही है। यह भी संवृद्धि के मूल अनुमान को वैश्विक अर्थव्यवस्था की दुर्बलता और अस्थिरता (जहां 2016 में केवल 3 प्रतिशत की संवृद्धि हुई थी) के परिवेश में भारत की 7 प्रतिशत के निकट की संवृद्धि दर को बहुत ही महत्वपूर्ण स्वरूप प्रदान कर देती है। यही नहीं, यह उच्च संवृद्धि दर की प्राप्ति कई अन्य बड़ी बातों के साथ-साथ संभव हुई है : विमुद्रीकरण हुआ, विश्व भर में मंदी जैसा वातावरण रहा, अपेक्षाकृत निम्न स्फीति दर का समष्टि परिदृश्य रहा (पिछली सभी उच्च संवृद्धि घटनाएं तो उच्च स्फीति के साथ जुड़ी रही हैं), चालू खाते पर घाटा भी सामान्य स्तर पर रहा और डालर से रूपए की विनिमय दर भी स्थिर प्राय: रही है। अर्थव्यवस्था अपने राजकोषीय परिदृश्य को भी सुदृढ़ बना रही है। इन सबके बावजूद उच्च संवृद्धि दर का होना वास्तव में प्रशंसनीय है। सितंबर 2016 के अंत में सभी विदेशी ऋण सूचकों में भी सुधार ही दिखाई दे रहे थे ।

किन्तु अभी चुनौतियां भी विद्यमान हैं। निवेश जीडीपी अनुपात न केवल वांछनीय से निम्न स्तर पर है बल्कि इसमें पिछले कई वर्षों से निरंतर कमी आ रही है। तीव्र आर्थिक संवृद्धि को चिर स्थायी बनाने के लिए इस प्रक्रिया को शीघ्र ही परिवर्तित करना होगा। इसी प्रकार बचत की दर बढ़ानी होगी, ताकि बिना अधिक बाहरी वित्त के ही निवेश की दर में वृद्धि संभव हो सके। पिछले दो वर्षों तक स्थिरता के बाद विश्व में तेल कीमतें फिर ऊपर उठने लगी हैं। ये कोयले जैसी और चीजों के दामों में वृद्धि के साथ मिलकर स्फीतिकारी रूप धारण कर सकती हैं, इनसे व्यापार और राजकोषीय संतुलन पर दुष्प्रभावों की आशंका भी हो सकती है। आगामी वित्त वर्ष में जैसे-जैसे मुद्रा का परिचलन सामान्य होगा और सरकार द्वारा महत्वपूर्ण सुधार कार्य बल पकड़ेंगे, संवृद्धि में सुधार के आसार भी पैदा होते जाएंगे ।

I. विषय प्रवेश

8.1 CSO के प्रथम अग्रिम अनुमान के अनुसार भारत में 2016-17 में जीडीपी ने 7.1 प्रतिशत की संवृद्धि दर दर्ज की है (वैसे आगे चल कर अपने नए अनुमानों में CSO द्वारा इस संवृद्धि अनुमान को कुछ कम किए जाने की आशा है)। वर्ष 2016-17 के उत्तरार्द्ध में संवृद्धि दर 7 प्रतिशत रहने का अनुमान अक्टूबर 2016 तक (किसी-किसी मामले में नवंबर तक भी) की जानकारी पर आधारित हैं। अत: ये मुख्य रूप से वर्ष के प्रारंभिक 7-8 महीनों की प्रवृत्तियां ही दिखा रहे हैं।

रेखाचित्र 1: सकल घरेलू उत्पाद (GDP) तथा सकल मूल्य वृद्धि (GVA) में स्थिर कीमतों पर संवृद्धि (प्रतिशत)

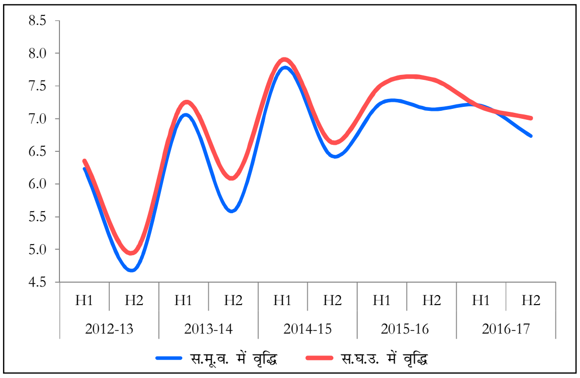

स्रोत : सीएसओ

8.2 प्रथम अग्रिम अनुमान के अनुसार स्थिर कीमतों पर सकल मूल्य वृद्धि (GVA) 7 प्रतिशत है, जबकि 2015-16 में यह 7.2 प्रतिशत रही थी। वर्ष 2016-17 के उत्तरार्द्ध में यह संवृद्धि 6.7 प्रतिशत रहने का अनुमान है, जबकि पूर्वार्द्ध का अनुमान 7.2 प्रतिशत रहा है (रेखाचित्र 1)। क्षेत्रवार ब्यौरा तालिका-1 में दिया गया है।

8.3 आइए अब अर्थव्यवस्था के मुख्य क्षेत्रों पर विचार करें। वर्ष 2016-17 में कृषि और अनुषांगिक क्षेत्रों की संवृद्धि में बहुत सुधार हुआ है। इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि वर्ष 2014-15 और 2015-16 में मानसून पर्याप्त नहीं था, किन्तु इस वर्ष जलवृष्टि बहुत अच्छी रही है। अत: 2016-17 में कृषि में अच्छी संवृद्धि में आश्चर्य वाली कोई बात नहीं है। एक ओर खरीफ फसल के उत्पादन के प्रारंभिक अनुमान और दूसरी ओर रबी की अच्छी बुआई के आंकड़े इसी तथ्य की ओर इंगित कर रहे हैं। औद्योगिक क्षेत्र (जिसमें खनन, खान, विनिर्माण, विद्युत, गैस और जल आपूर्ति और निर्माण सम्मिलित हैं) ने 2015-16 में 7.4 प्रतिशत दर पर अच्छी संवृद्धि दर्ज की थी, किन्तु वर्तमान वर्ष में कुछ

तालिका 1 : GVA की संवृद्धि दर, विभिन्न क्षेत्रकों की आधार कीमतों के अनुसार (प्रतिशत)

क्षेत्र	2012-13[a]	2013-14[a]	2014-15[b]	2015-16[c]	2016-17[d]	2016-17	
						H1	H2
कृषि, वान्यिकी और मत्स्यन	1.5	4.2	-0.2	1.2	4.1	2.5	5.2
उद्योग	3.6	5.0	5.9	7.4	5.2	5.6	4.9
खनन-खदान	-0.5	3.0	10.8	7.4	-1.8	-0.9	-2.6
विनिर्माण	6.0	5.6	5.5	9.3	7.4	8.1	6.7
बिजली, गैस, जल आपूर्ति आदि	2.8	4.7	8.0	6.6	6.5	6.4	6.6
निर्माण	0.6	4.6	4.4	3.9	2.9	2.5	3.4
सेवा क्षेत्र	8.1	7.8	10.3	8.9	8.8	9.2	8.4
वाणिज्य, होटल, परिवहन, भंडारण	9.7	7.8	9.8	9.0	6.0	7.6	4.5
वित्तीय, भवन संपदा और व्यावसायिक सेवाएं	9.5	10.1	10.6	10.3	9.0	8.8	9.2
लोकप्रशासन, प्रतिरक्षा	4.1	4.5	10.7	6.6	12.8	12.4	13.2
आधारिक कीमतों पर ळटए।	5.4	6.3	7.1	7.2	7.0	7.2	6.7

स्रोत: *सीएसओ*

नोट : a= दूसरा संशोधित अनुमान, b= पहला संशोधित अनुमान, c= अनंतिम अनुमान, d= पहला अग्रिम अनुमान

शिथिलता दर्शाई है। इसका मुख्य कारण पूंजीगत पदार्थ विनिर्माण और गैर स्थायी उपभोग पदार्थों के उत्पादन के औद्योगिक उत्पादन सूचक (IIP) में काफी कमी आना है। खान-खनन में तीखी गिरावट का कारण कच्चे तेल और गैस के उत्पादन में कमी हैं। किन्तु मूल्यवृद्धि के पटल पर औद्योगिक क्षेत्र निष्पादन IIP पर आधारित उपलब्धियों से बहुत भिन्न हैं। पिछले वर्षों की भांति इस वर्ष भी सेवा क्षेत्र संपूर्ण अर्थव्यवस्था की संवृद्धि में योगदान देने वाला प्रधान क्षेत्र रहा है। लोक प्रशासन, प्रतिरक्षा और अन्य सेवाओं में सातवें वेतन आयोग की सिफारिशें लागू होने पर एक बड़ा उछाल आया है। अत: 2016-17 में भी सेवा क्षेत्र की संवृद्धि दर 2015-16 के समान ही रहने की अपेक्षा है (तालिका-1)।

8.4 अचल/स्थिर निवेश (सकल स्थिर/अचल पूंजी निर्माण) का जीडीपी से अनुपात (चालू कीमतों पर) 2016-17 में 26.6 प्रतिशत रहने की आशा है। यह 2015-16 में 29.3 प्रतिशत था। किन्तु स्थिर कीमतों पर यह निवेश जीडीपी अनुपात 2015-16 के 3.9 प्रतिशत से घटकर 2016-17 में ऋणात्मक (-)0.2 प्रतिशत रह गया। वर्ष 2011-12 से ही अचल निवेश दर निरंतर कम हो रही है (रेखाचित्र 2) और मध्यम एवं दीर्घकालिक आर्थिक संवृद्धि के हितों का तकाजा है कि इस गिरावट की प्रवृति को शीघ्रतिशीघ्र उलटा जाए। निवेश और संवृद्धि को बढ़ावा देने के ध्येय से ही सरकार ने रिजर्व बैंक और अन्य पणधारियों के साथ मिलकर अनेक ऐसे कदम उठाए हैं जिनसे व्यवसाय करने की सुविधा का उन्नयन हो और बैंकों तथा फर्मों के तुलनपत्रा में भी सुधार दिखाई दें।

8.5 वर्तमान वर्ष में जीडीपी संवृद्धि के मांग पक्ष का मुख्य उत्प्रेरक स्रोत सरकार के अंतिम उपभोग व्यय में 23.8 प्रतिशत की वृद्धि है (तालिका-2)। इस वर्ष में निजी उपभोग में भी अच्छी वृद्धि होने का पूर्वाकलन रहा है। स्वर्ण और चांदी के आयात में गिरावट यह संकेत दे रही है कि परिवारों द्वारा मूल्यवान वस्तुओं की खरीदारी में कमी होगी। वर्ष 2016-17 में आयात में कटौती निर्यात संकुचन की अपेक्षा अधिक गहरी रही है। इसी के कारण व्यापार घाटे में भारी गिरावट आई है। सेवा

रेखाचित्र 2 : जीडीपी के प्रतिशत के रूप में सकल अचल पूंजी निर्माण (GFCF)

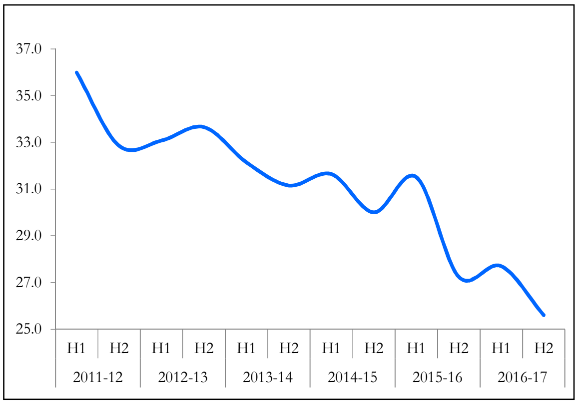

स्रोत: सीएसओ

तालिका 2: स्थिर कीमतों पर जीडीपी की संवृद्धि दर और उसके घटक

घटक	2012-13[a]	2013-14[a]	2014-15[b]	2015-16[c]	2016-17[d]	2016-17	
						H1	H2
सरकारी अंतिम उपभोग	0.5	0.4	12.8	2.2	23.8	16.9	32.4
निजी अंतिम उपभोग	5.3	6.8	6.2	7.4	6.5	7.1	6.0
सकल अचल पूंजी निर्माण	4.9	3.4	4.9	3.9	-0.2	-4.4	4.2
स्टॉक परिवर्तन	-3.8	-18.6	20.3	5.5	5.2	5.9	4.6
मूल्यवान पदार्थ	2.6	-42.2	15.4	0.3	-33.5	-47.9	-19.3
वस्तुओं और सेवाओं के निर्यात	6.7	7.8	1.7	-5.2	2.2	1.7	2.6
वस्तुओं और सेवाओं के आयात	6.0	-8.2	0.8	-2.8	-3.8	-7.5	-0.1
जीडीपी	**5.6**	**6.6**	**7.2**	**7.6**	**7.1**	**7.2**	**7.0**

स्रोत: सीएसआर

नोट : a= दूसरा संशोधित अनुमान, b= पहला संशोधित अनुमान, c= अनंतिम अनुमान, d= पहला अग्रिम अनुमान

क्षेत्र के निर्यात में कुछ शिथिलता दिखी है, किन्तु वस्तु निर्यात के कारण व्यापार घाटे में कमी ने वस्तुओं और गैर-साधन सेवाओं के निवल निर्यात की (राष्ट्रीय आय लेखे में) स्थिति में सुधार किया है।

II. राजकोषीय घटनाक्रम

8.6 बजट 2016-17 ने सरकार की राजकोष व्यवस्था को सुदृढ़ करने की प्रतिबद्धता को दोहराया है और राजकोषीय घाटा पिछले वर्ष के 3.9 प्रतिशत से घटकर जीडीपी के 3.5 प्रतिशत के समान रह जाने का पूर्वानुमान है। इस सुदृढ़ीकरण की प्राप्ति के लिए सकल कर राजस्व में 11.9 प्रतिशत की वृद्धि (2015-16 के अंतिम अनुमान की तुलना में) और गैर कर राजस्व तथा गैर ऋण पूंजी प्राप्तियों में भारी वृद्धि की आशा की गई है। यह सब उस समय किया गया है जब सातवें वेतन आयोग की सिफारिशें लागू करने के बाद सरकार की व्यय करने की विवशता में भारी वृद्धि हुई है।

8.7 केन्द्र सरकार की गैर ऋण प्राप्तियों (जिनमें निवल कर राजस्व, गैर कर राजस्व और गैर ऋण पूंजी प्राप्तियां सम्मिलित है) में अप्रैल-नवंबर 2016 में आया उत्प्लवन राजकोषीय शुचिता का समर्थक रहा है (तालिका 3)। अप्रैल-नवंबर 2016 में गैर ऋण प्राप्तियों में 25.8 प्रतिशत की वृद्धि तो पिछले वर्ष के अनंतिम प्राप्ति की वृद्धि के अनुमान से कहीं आगे निकल गई। गत वर्ष की तुलना में पूरे वर्ष में 16.4 प्रतिशत की वृद्धि का अनुमान बजट में लगाया गया था।

तालिका 3 : केन्द्र सरकार की गैर ऋण प्राप्तियां

	अप्रैल-नवंबर (ब.अ. के प्रतिशत के रूप में)		अप्रैल-नवंबर में वृद्धि (प्रतिशत)	
	2015-16	2016-17	2015-16	2016-17
सकल कर राजस्व	53.0	57.2	20.8	21.5
कर (केन्द्र को निवल)	50.5	58.9	12.5	33.6
कर-भिन्न राजस्व	78.1	54.2	34.9	1.0
ऋण-भिन्न पूंजी प्राप्तियां	25.8	48.5	180.3	57.1
कुल ऋण-भिन्न प्राप्तियां	53.9	57.4	20.0	25.8

स्रोत: सीजीए

नोट: बीई=बजट अनुमान

रेखाचित्र 3 : केन्द्रीय करों में वृद्धि (प्रतिशत)

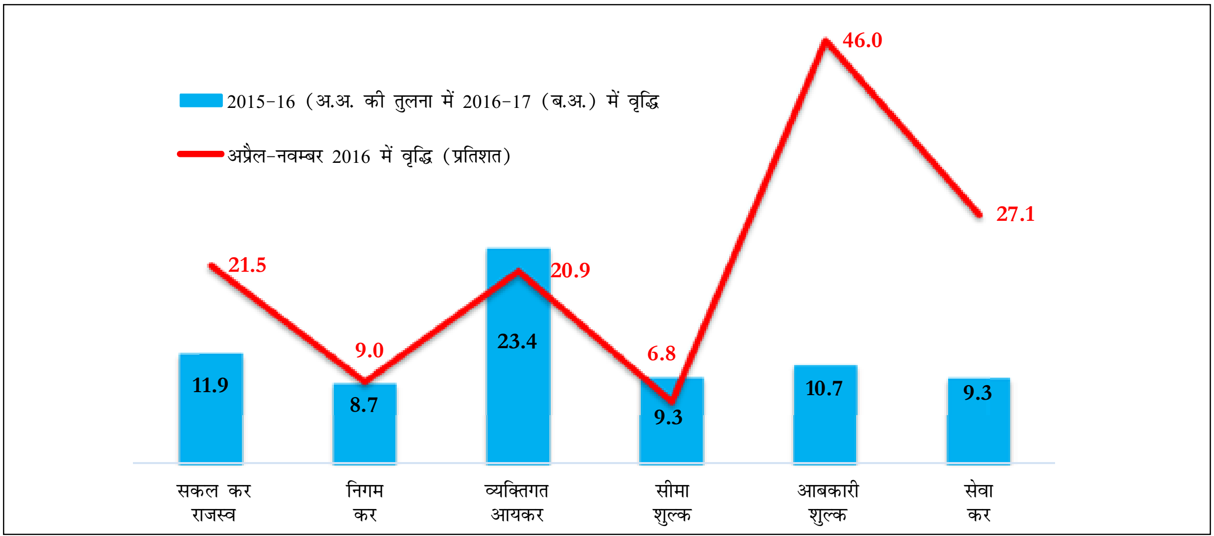

स्रोत: सीजीए

टिप्पणी: अ.व अनंतिम वास्तविक

8.8 कुल मिलाकर नवंबर 2016 तक कर संग्रह, विशेषकर केन्द्रीय उत्पादन शुल्क और सेवाकर, में उत्प्लवन रहा है (रेखाचित्र 3)। उच्च मूल्य करेंसी नोटों की विधिग्राह्यता के समापन के अस्थायी दुष्प्रभाव के बाद भी नवंबर मास में अप्रत्यक्ष करों के राजस्व में 36.4 प्रतिशत का उछाल दिखाई दिया। अतिरिक्त कर प्रयासों द्वारा संसाधन जुटाने की नीति पर आचरण इस उत्प्लवन का आधार रहा है।

8.9 पिछले 5 वर्षों में सकल कर राजस्व का औसतन 34.5 प्रतिशत वर्ष की अंतिम तिमाही में ही एकत्र होता रहा है (वर्ष 2011-12 से 2015-16) इससे संकेत मिल रहे हैं कि इस वर्ष के बजट अनुमान प्राप्त करने में सफलता एक महत्वपूर्ण रूप में अंतिम तिमाही में आर्थिक गतिविधियों के स्तर और राजस्व संग्रह पर निर्भर रहेगी। इस तिमाही में आर्थिक गतिविधियों के स्तर पर उच्च मूल्य नोटों के विमुद्रीकरण तथा पुन: मुद्रीकरण के प्रति अर्थतंत्र की प्रतिक्रियाओं के प्रभाव अवश्य दिखाई देंगे।

8.10 अप्रैल-नवंबर 2016 में वर्ष 2016-17 के बजट अनुमानों के अंश के रूप में उगाहे गए सकल राजस्व का अनुपात पिछले वर्ष से कहीं अधिक रहा (तालिका 3)। राज्यों और संघशासित प्रदेशों को अन्तरण भी कर संग्रह के अनुरूप ही चला (रेखाचित्र 4)। कर अन्तरण, गैर योजना अनुदान और केंद्रीय सहायता के रूप में निवल संसाधान अन्तरण वर्ष भर के प्रस्तावित अनुमान के 58 प्रतिशत के समान रहा। यह पिछले वर्ष की तुलना में मामूली सा कम था।

8.11 अप्रैल-नवंबर 2016 में राजस्व खाते पर व्यय में देखने में बहुत वृद्धि हुई है (तालिका 4)। किन्तु इसे अन्य अनेक घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में देखना अधिक उचित होगा। सबसे पहले तो राजस्व खाते पर व्यय में 'वेतन' मद का अंश सातवें वित्त आयोग की अनुशंसाओं पर आचरण के कारण बजट प्रावधान के अनुरूप ही 23.2 प्रतिशत अधिक हो गया। दूसरे वर्तमान वर्ष में प्रस्तावित मुख्य सब्सिडी मदों में 5.9 प्रतिशत की कटौति के स्थान पर अप्रैल-नवंबर 2016 में 5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है (और वह भी पैट्रोलियम तथा उर्वरक सब्सिडी में गिरावट के बावजूद)। इसका मुख्य कारण खाद्य सब्सिडी में 21.6 प्रतिशत की वृद्धि है। यह इस वर्ष के आरंभ में अग्रिम के रूप में वितरित राशि है। और इसका प्रभाव वर्ष भर में धीरे-धीरे कम रह जाएगा। राजस्व व्यय में भारी वृद्धि का तीसरा कारण पूंजी परिसंपदा निर्माण हेतु अनुदान (GCCA) में इस अप्रैल-नवंबर 2016 की अवधि में 39.5 प्रतिशत की वृद्धि है। राज्य एवं केन्द्रशासित प्रदेशों को दिए गए सभी अनुदान, भले ही इनका एक अंश

रेखाचित्र 4 : अप्रैल-नवबंर में राज्यों और संघशासित क्षेत्रों को अंतरण

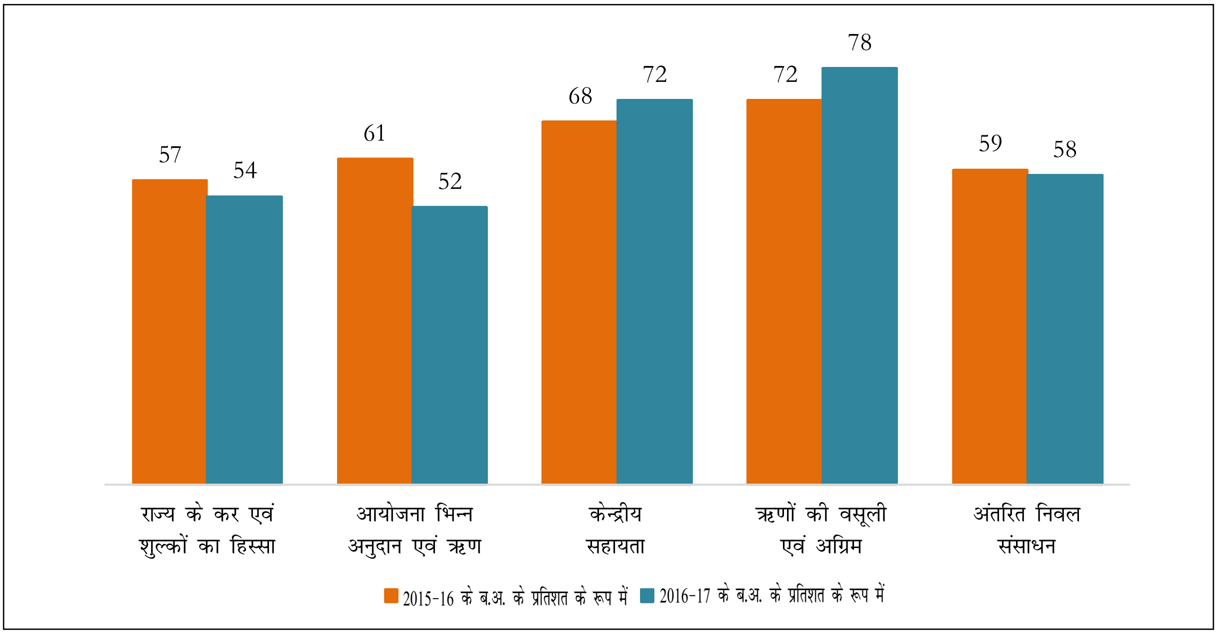

स्रोत: सीजीए

रेखाचित्र 5 : केन्द्र सरकार की बकाया देयताएं, जीडीपी के प्रतिशत के रूप में

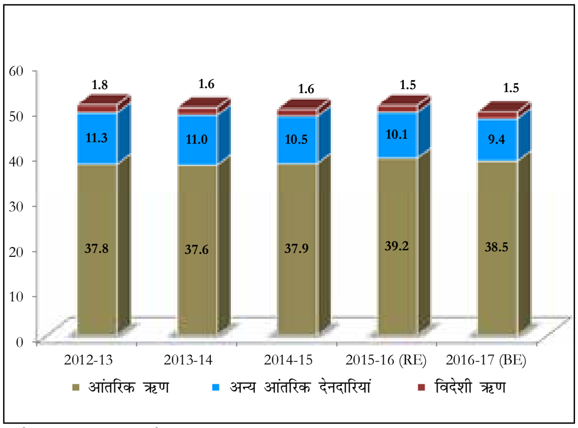

स्रोत: नियंत्रक महालेखा परीक्षक
टिप्पणी: RE-संशोधित अनुमान

पूंजी निर्माण के निमित्त हो, केन्द्र सरकार के राजस्व व्यय खाते में ही दिखाए जाते हैं। केन्द्र सरकार द्वारा अर्थव्यवस्था में पूंजी निर्माण को दिए गए बढ़ावे का सही आकलन करना तो उक्त राशियों को राजस्व व्यय से घटाकर पूंजी व्यय में सम्मिलित करने पर ही संभव हो पाएगा। यह समंजन पूंजी एवं राजस्व व्ययों की संवृद्धि में विशाल खाई को भी कम कर सकता है।

8.12 केन्द्र सरकार की सकल वर्तमान देयताओं में सम्मिलित हैं : आंतरिक ऋण, भविष्य निधि और लघु बचतों में जमा राशियों जैसी अन्य आंतरिक देयताएं तथा बाह्य ऋण। वर्ष 2014-15 और 2015-16 में केन्द्र सरकार की सकल देयताओं में वृद्धि दरें समान प्राय: रही : क्रमश: 10.1 प्रतिशत और 10.4 प्रतिशत। किन्तु फिर भी केन्द्रीय सरकार के आंतरिक ऋण के जीडीपी से अनुपात में 2015-16 में वृद्धि हुई थी (रेखाचित्र 5)। इसका कारण ऋण वृद्धि क्रम में उछाल नहीं था, यह तो मौद्रिक जीडीपी की संवृद्धि में उस वर्ष में आयी कमी का प्रभाव था। ध्यान रहे कि उस वर्ष स्फीति दर में महत्वपूर्ण कमी के कारण वास्तविक जीडीपी की संवृद्धि तो अधिक उच्च दर पर रही थी। बजट में अनुमान लगाया गया है कि 2016-17 में सकल देयताएं पिछले वर्ष के 10.4 प्रतिशत से बहुत अधिक गिरकर मात्र 7.9 प्रतिशत रह जाएंगी।

III. कीमतें

8.13 लगातार तीसरे वर्ष उपभोक्ता कीमत सूचक (CPI) द्वारा मापित आधारिक स्फीति नियंत्रण में ही रही है। यह 2014-15 के 5.9 प्रतिशत से घटकर 2015-16 में 4.9 प्रतिशत रह गई थी। अप्रैल-दिसंबर 2016 में यह 4.8 प्रतिशत रही। वर्ष 2016-17 के प्रारंभिक महीनों में स्फीति दर में दालों और सब्जियों की कीमतों में वृद्धि के कारण कुछ सख्ती दिखाई दी थी, किन्तु दिसंबर 2016 में यह गिरकर अपने दो वर्षों के न्यूनतम स्तर 3.4 प्रतिशत तक पहुँच गई। यह कमी भी खाद्य कीमतों में गिरावट का परिणाम रही है (रेखाचित्र 6)।

8.14 थोक कीमत सूचक (WPI) के अनुसार स्फीति

तालिका 4 : केन्द्र सरकार के व्यय के मुख्य वर्ग

	अप्रैल-नवंबर ब.अ. के प्रतिशत के रूप में		अप्रैल-नवंबर वृद्धि (प्रतिशत)	
	2015-16	2016-17	2015-16	2016-17
कुल व्यय	64.3	65.0	6.3	12.6
राजस्व व्यय	64.0	66.1	3.2	16.4
ब्याज भुगतान	55.4	54.1	8.6	5.6
प्रमुख सब्सिडियां	82.9	85.3	-3.6	5.0
पेंशन	68.3	65.7	(-)1.4	34.1
वेतन	43.6	42.4	NA	23.2
पूंजी आस्तियों के सृजन हेतु अनुदान	73.2	67.7	-0.8	39.5
पूंजीगत व्यय	65.8	57.6	30.8	-10.4
समायोजित राजस्व व्यय	63.3	65.9	3.6	14.3
समायोजित पूंजीगत व्यय	68.1	61.7	18.1	6.4

स्रोत: महालेखा नियंत्रक
नोट :- समायोजित राजस्व और पूंजीगत व्यय का परिकलन राजस्व व्यय से पूंजी आस्तियों के सृजन हेतु अनुदान को घटाकर और इसे पूंजी व्यय में जोड़कर किया गया है।

दर 2015-16 में (-)2.5 प्रतिशत हो गई थी, जबकि 2014-15 में यह दर 2 प्रतिशत थी। यह गिरावट वर्तमान वर्ष में दो कारणों से विपरीत रूप धारण कर गई है। एक तो विश्व स्तर पर वस्तुओं की कीमतें ऊपर उठने लगी हैं और दूसरे तुलना का आधार बहुत कम (वास्तव में ऋणात्मक) है। IMF के कीमत सूचकों के अनुसार विश्व वस्तु और ऊर्जा कीमतों में 2016 के पहले 11 महीनों में क्रमशः 18 और 23 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है। WPI स्फीति दर दिसंबर 2016 में 3.4 प्रतिशत थी (रेखाचित्र 7) और अप्रैल-दिसंबर 2016 में इसकी औसत दर 2.9 प्रतिशत रही।

8.15 भारत में बार-बार इनीगिनी खाद्य वस्तुओं के कारण स्फीति में तीखे उतार-चढ़ाव आ जाते हैं। दालें खाद्य स्फीति का मुख्य कारण बनी रही (रेखाचित्र 8ख। दालों, विशेषकर अरहर और उड़द की कीमतें मध्य 2015 से मध्य 2016 की अवधि में बहुत ऊंची रही। इसका मुख्य कारण आन्तरिक तथा वैश्विक आपूर्ति में कमी रहा है। जुलाई 2016 के बाद से चने की दाल को छोड़ शेष सभी दालों की कीमतें गिर रही हैं। इसके कारण है सामान्य प्रायः मानसून, रबी में दालों की अच्छी बुआई और सरकार द्वारा दालों के सुरक्षित भंडार की रचना। चीनी के दाम भी कम उत्पादन और विश्व चीनी बाजार

रखाचित्र 6 : उपभोक्ता कीमत सूचक (CPI) में आधार प्रभाव और कीमत प्रभाव प्रतिशत बिन्दुओं में)

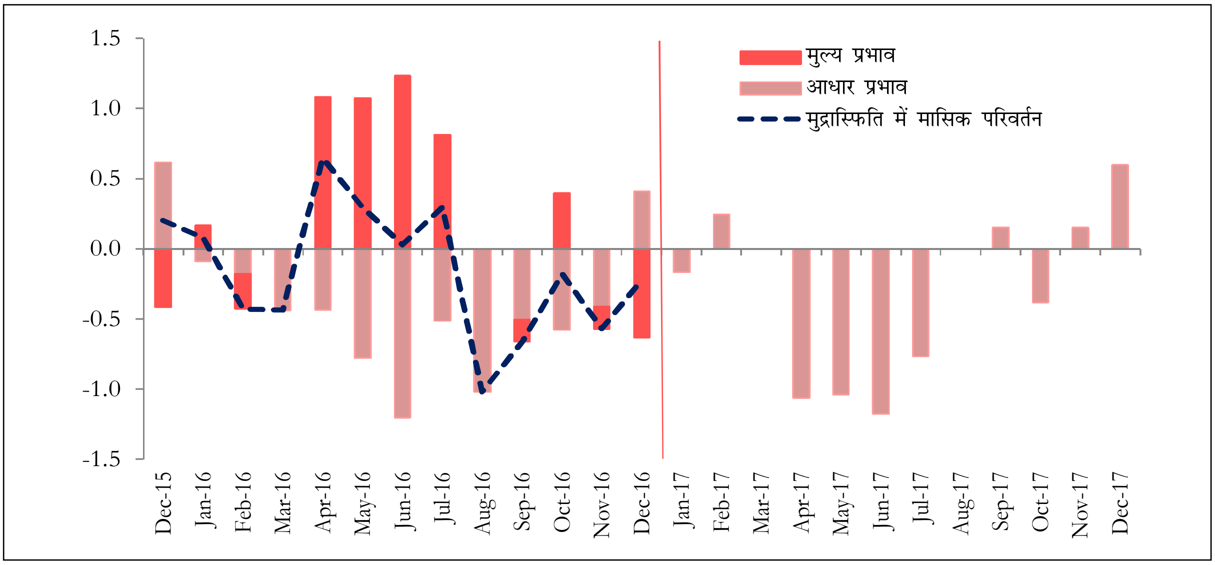

स्रोतः सीपीआई और सीएसओ के आंकड़ों को प्रयोग करने के बाद परिकलित

रेखाचित्र 7: WPI तथा CPI पर संयुक्त रूप से आधारित स्फीति दर (प्रतिशत)

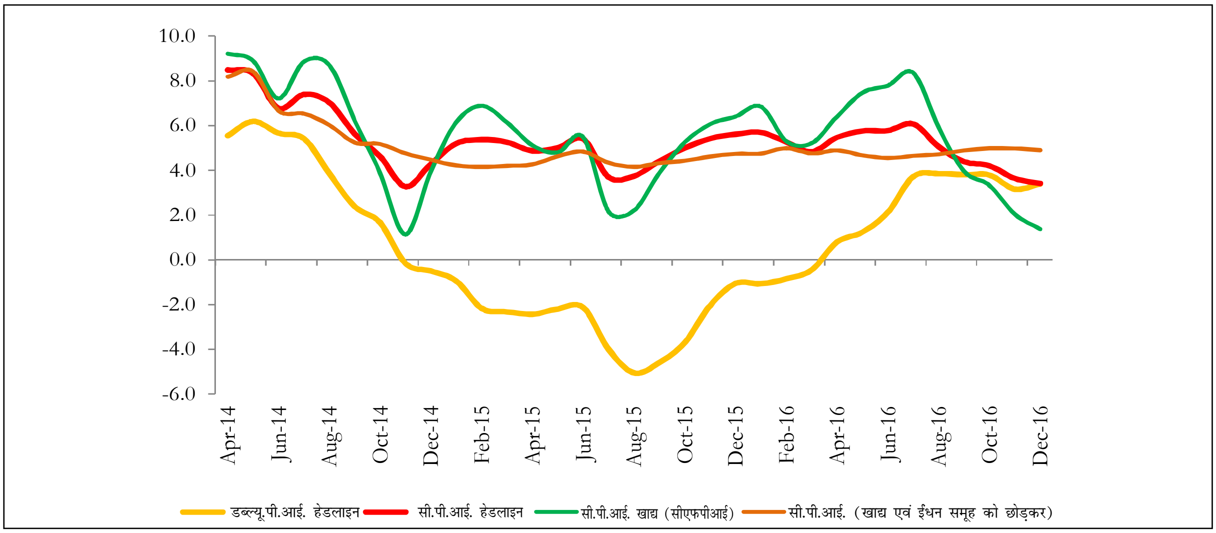

स्रोतः सीएसओ एवं डीआईपीपी

में दृढ़ता के कारण अधिक रहे हैं। सब्जियों के दाम गर्मियों में तो आसमान छू रहे थे, किन्तु मानसून के बाद और सर्दी की सब्जियों की आपूर्ति बाजार में पहुँचने पर इनकी कीमतों में तीखी गिरावट आई है। उपभोक्ता खाद्य स्फीति सूचक (CFPI) घटकर दिसंबर 2016 में दो वर्षों के न्यूनतम स्तर 1.4 प्रतिशत को छू गया है। दालों और उनके उत्पादों की स्फीति दर दिसंबर 2016 में (–)1.6 हो गई। सब्जियों की स्फीति दर तो सितंबर 2016 से ही ऋणात्मक चल रही है।

आधारभूत स्फीति अचल है

8.16 कुछ महीनों से तुलनात्मक आधार पर स्फीति दर में तीखी गिरावट आंकलित हो रही है किन्तु खाद्य एवं ईंधन समूह को छोड़कर CPI आधारित मूल स्फीति वर्तमान वित्तवर्ष में अभी तक तो अचल रही है (तालिका 5)। CPI आधारित परिष्कृत मूल स्फीति (खाद्य एवं ईंधन समूह पैट्रोल, डीजल को छोड़कर) वर्तमान वित्त वर्ष में अभी तक 5 प्रतिशत की औसत दर पर जमी हुई है। पान, तंबाकू, नशीले पदार्थ, परिधान, जूते आदि तथा आवास एवं शिक्षा समूहों की स्फीति भी अभी 5 प्रतिशत से अधिक है। और ये सभी आधारभूत स्फीति में एक बड़ा योगदान दे रहे हैं। परिवहन एवं संचार समूह में स्फीति दर विश्व तेल कीमतों में उछाल और उसकी आन्तरिक पैट्रोल-डीजल कीमतों में प्रतिध्वनि के कारण वृद्धिशील है। भारतीय खरीद वाले कच्चे तेलों के समुच्चय की कीमत अप्रैल 2016 में $39.9 से बढ़कर दिसंबर 2016 में $52.7 प्रति बैरल हो चुकी है। इसी प्रकार विश्व बाजार में सोने की उच्च कीमत का भी आधारभूत स्फीति दर की अचलता में योगदान रहा है।

स्फीति कुछ अपेक्षाएं

8.17 वर्तमान वित्तवर्ष के उत्तरार्द्ध में अभी तक महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थों की थोक और खुदरा कीमतें शिथिल पड़ती रही हैं। अतः CPI स्फीति दर के 5 प्रतिशत से कम हो जाने की आशा है। अगले वित्त वर्ष में वैश्विक वस्तु कीमतों, विशेषकर कच्चे तेल, में उछाल एवं स्फीति वृद्धि की आशंका को जन्म दे रहा है। हां रबी में अच्छी बुआई और दालों एवं मुख्य कृषि उत्पादों के वैश्विक उत्पादन में सुधार तथा सरकार द्वारा बेहतर खाद्य प्रबंधन और कीमतों की निगरानी के आधार पर खाद्य पदार्थों में स्फीति पर अंकुश रहने की आशा है।

IV. मौद्रिक प्रबंधन और वित्तीय मध्यस्थी

8.18 वर्तमान वित्त वर्ष में सरकार ने भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 में संशोधन किया। इस संशोधन के अनुसार स्फीति के लक्ष्य सरकार निर्धारित करेगी, किन्तु यह कार्य रिजर्व बैंक से परामर्श करने के बाद पांच वर्ष में एक बार किया जाएगा। साथ ही एक अधिकार प्राप्त मौद्रिक नीति समिति (MPC) के गठन का भी प्रावधान किया गया है। नए मौद्रिक नीति परिवेश में

तालिका 5 : WPI और CPI में मापित त्रैमाकि स्फीति (प्रतिशत में)

	भारांश	2015-16				2016-17		
		Q1	Q2	Q3	Q4	Q1	Q2	Q3 (P)
डब्ल्यूपीआई आधारिक	**100.0**	**-2.3**	**-4.6**	**-2.3**	**-0.8**	**1.4**	**3.8**	**3.4**
सीपीआई आधारिक	**100.0**	**5.1**	**3.9**	**5.3**	**5.3**	**5.7**	**5.2**	**3.7**
I. खाद्य एवं पेय पदार्थ	45.9	5.4	3.3	5.9	5.8	7.0	6.0	2.8
II. पान, तम्बाकू आदि	2.4	9.5	9.5	9.4	8.7	7.7	6.8	6.6
III. परिधान एवं पदगाण	6.5	6.1	5.9	5.7	5.6	5.3	5.2	5.0
IV. आवास	10.1	4.6	4.6	5.0	5.3	5.4	5.3	5.1
V. ईंधन और प्रकाश	6.8	5.8	5.5	5.3	4.5	3.0	2.8	3.2
VI. विविध	28.3	3.8	3.3	3.7	4.1	4.0	4.2	4.7
सीएफपीआई*	39.1	5.1	2.7	5.9	5.8	7.2	6.1	2.2
खाद्य और ईंधन को छोड़कर सीपीआई	47.3	4.6	4.3	4.6	4.8	4.7	4.7	5.0

स्रोत: **डीआईपीपी, कें.सां.का.**

नोट: **P: अनंतिम *सीएफपीआई: उपभोक्ता खाद्य मूल्य सूचकांक**

रेखाचित्र 8 : CPI आधारिक, खाद्य एवं आधार स्फीति के प्रचालक (प्रतिशत बिन्दु योगदान)

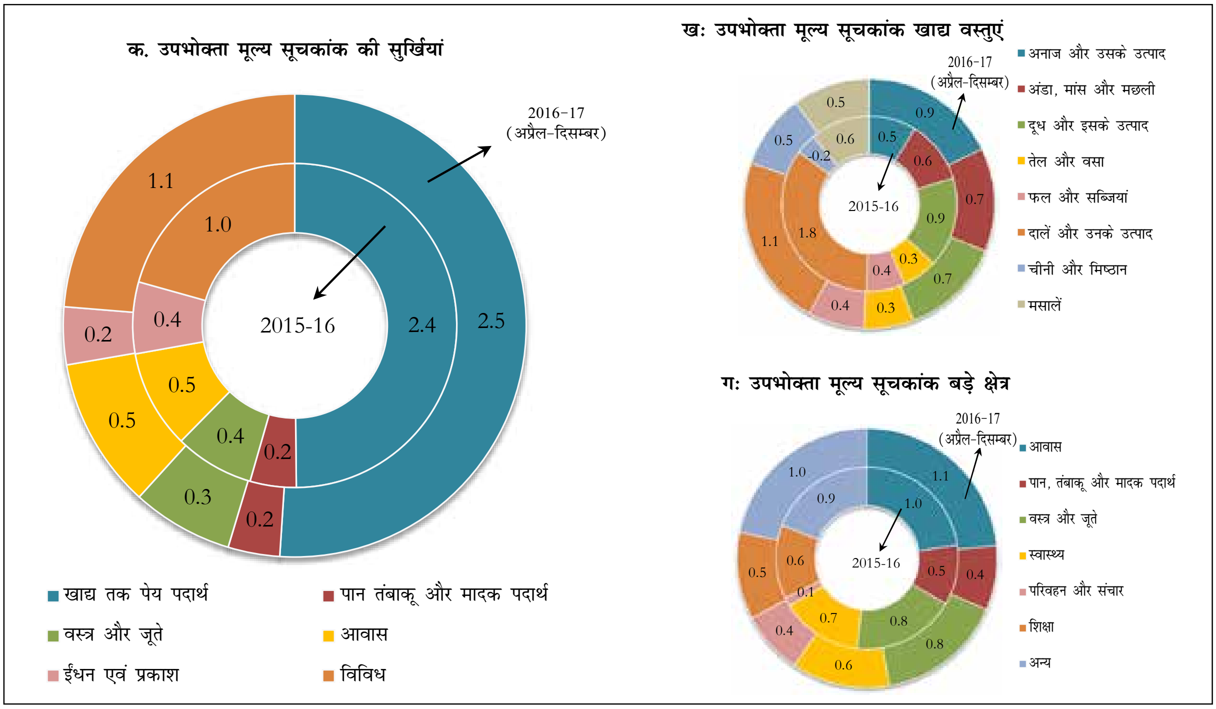

स्रोतः **सीपीआई और सीएसओ के आंकड़ों के आधार पर परिकलित**

सरकार ने स्फीति का लक्ष्य 4 प्रतिशत रखा है। इसमें ऋणात्मक/धनात्मक 2 प्रतिशत अंकों का उतार चढ़ाव स्वीकार्य घोषित किया गया है, अवधि 5 अगस्त 2016 से 31 मार्च 2021 तक रहेगी। सरकार ने सितंबर 29, 2016 को MPC का गठन भी अधिसूचित कर दिया है। अभी तक MPC की दो बैठकें हो चुकी हैं। पिछली बैठक दिसंबर 7, 2016 को हुई थी, उसने सुविधाकारी मौद्रिक नीति परिप्रेक्ष्य को बनाए रखा है किन्तु नीति आधारित दरों में कोई परिवर्तन नहीं किए। अक्टूबर 4, 2016 की पहली बैठक ने नीति दर को 0.25 प्रतिशत घटाकर 6.25 कर दिया था। अतः तरलता समंजन सुविधा (LAF) के अंतर्गत विपरीत रेपो दर 5.75 प्रतिशत और सीमांत स्थायी सुविधा (MSF) दर 6.75 प्रतिशत बनी हुई है।

8.19 रिजर्व बैंक ने भी अप्रैल 2016 में अपनी मौद्रिक नीति की रूपरेखा को और परिष्कृत किया है। इसके लक्ष्य नियमित सुविधाओं के माध्यम से तरलता की अल्पकालिक जरूरतें पूरी करना (घर्षणीय और मौसमी असंतुलन दूर करने के लिए नीतियों में सूक्ष्म स्तरीय फेरबदल करना और इसके तुलनपत्र में निवल विदेशी एवं निवल आंतरिक परिसंपदा के बीच संतुलन लाकर तरलता में अधिक स्थायी रूप से सुधार करना था। अभी तक MPC अपने लिए निश्चित कार्यविधि का ही पालन कर रही है।

तरलता की अवस्था

8.20 रिजर्व बैंक अपनी तरलता प्रबंधन रूपरेखा के अनुसार ही कार्य कर रहा है (रेखाचित्र 9)। इसने प्रारंभिक तरलता की स्थितियों को निष्पक्षता के निकट लाने के लिए खुले बाजार की प्रक्रियाओं (OMOs) के माध्यम से स्थायी तरलता का प्रसार किया है। पूर्वनिर्दिष्ट नोटों की वापसी के बाद रिजर्व बैंक ने अभूतपूर्व कदम उठाकर बाजार से परिवर्ती विपरीत रेपो दर के माध्यम से तरलता को सोखने का काम किया है। रिजर्व बैंक के कार्य में सहयोग देते हुए इसकी बाजार स्थायित्वकरण निक्षेप सीमा को रू. 30,000 करोड़ से बढ़ाकर रू. 6 लाख करोड़ कर दिया है। वर्ष 2016-17 की प्रारंभिक तिमाही में तरलता की दशा में काफी कसाव था। आगे

के महीनों में एक दो घटनाओं को छोड़ इसमें बहुत नम्यता आई है। भारित औसत अविलम्ब राशि (WACR) नीति दर की उच्च एवं निम्न सीमाओं के बीच उनका उल्लंघन किए बिना ही मंडराती रही है।

8.21 अप्रैल 2016 में रेपोदर में 25 आधरिक बिन्दुओं की कटौती के बाद 91 दिनों की राजकोषीय हुन्डियों पर प्रति प्राप्ति दर में तीखी गिरावट दिखाई दी थी। किन्तु 10 वर्षीय सरकारी प्रतिभूतियों पर इस दर की कटौति का कोई विपरीत प्रभाव नहीं दिखाई पड़ा। वास्तव में इन पर प्रतिप्राप्तियों में हल्का सा सुधार ही हुआ था (रेखाचित्र 10)। हां, इन प्रतिभूतियों पर दर में जून 2016 के बाद कुछ नरमी आना शुरू हो गई है। दिसंबर 30, 2016 के दिन 10 वर्षीय सरकारी प्रतिभूतियों पर प्रति प्राप्ति दर 6.63 प्रतिशत आंकी गई है।

8.22 किन्तु दरों में कटौति का आगे की ओर प्रसार पूरी तरह से नहीं हो पाया है। आधारिक उधार दर अप्रैल 2016 के 9.30/9.70 से घटकर दिसंबर 30, 2016 तक 9.30/9.65 ही हो पायी है। वस्तुत: एक वर्ष से अधिक की सावधी जमाओं पर ब्याज दर इसी अवधि में 7.00/7.50 प्रतिशत से घटकर 6.50/7.00 रह गई हैं।

बैंक क्षेत्रक

8.23 बैंक क्षेत्रक, विशेषकर सार्वजनिक बैंको, का निष्पादन वर्तमान वित्तवर्ष में फीका ही रहा है। बैंकों की परिसंपदा गुणवत्ता में और ह्रास हुआ है। सभी अनूसूचित व्यापारिक बैंकों का सकल निष्पादनहीन परिसंपदाओं का सकल उधार/साख से अनुपात मार्च से सिंतबंर, 2016 की अवधि में ही 7.8 प्रतिशत से बढ़कर 9.1 प्रतिशत हो गया। वर्षानुगत आधार पर कर पश्चात् लाभ (PAT) जोखिमों के प्रावधान, ऋण माफी और निवल ब्याज आय में कमी के कारण 2016-17 के पूर्वाद्ध में संकुचन दर्शा रहा है।

साख/उधार की संवृद्धि

8.24 बकाया गैर खाद्य उधार (NFC) की वृद्धि सभी महीनों में 10 प्रतिशत से कम रही। केवल सितंबर 2016 ही अपवाद था (रेखाचित्र 11)। औद्योगिक क्षेत्र को साख वृद्धि की दर तो निरंतर 1 प्रतिशत से कम रही है, अगस्त और अक्टुबर में तो इसमें संकुचन भी हुआ है। बैंकों के कृषि एवं अनुषांगिक कार्यों, और व्यक्तिगत ऋण के वर्ग गैर-खाद्य साख में वृद्धि में मुख्य योगदान कर रहे हैं।

निगम बाँड बाजार को सुदृढ़ करने के उपाय

8.25 भारत के निगम क्षेत्र के बाँडों के बाजार को

रेखाचित्र 9 : तरलता की अवस्था (हजार करोड़ रूपयों में)

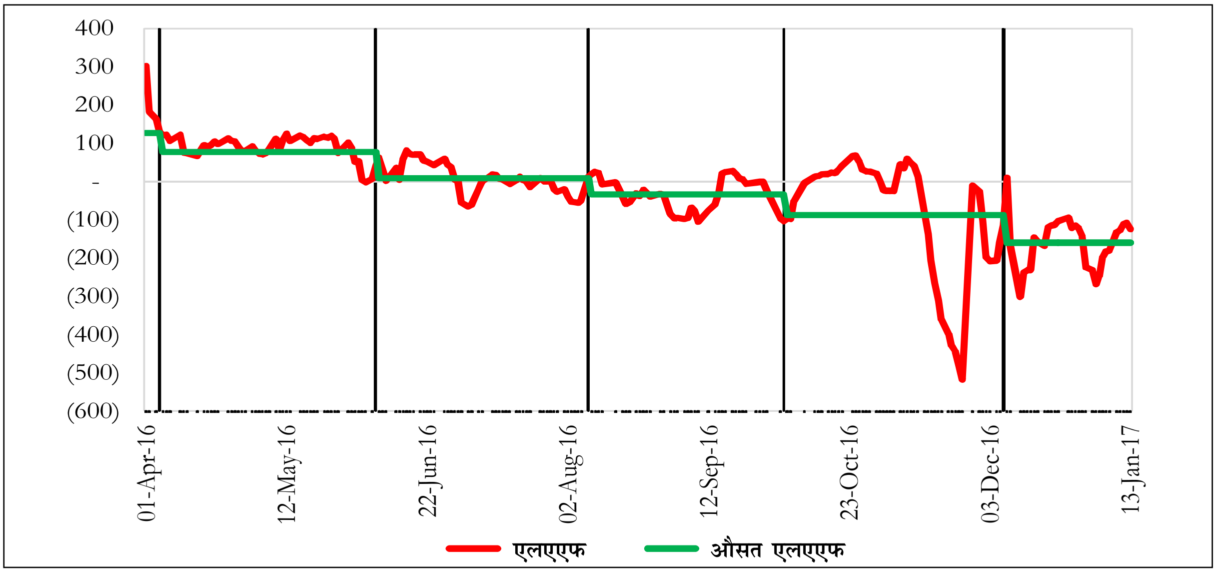

स्रोत: आर.बी.आई.

रेखाचित्र 10 : मुख्य दरों के उतार-चढ़ाव (प्रतिशत)

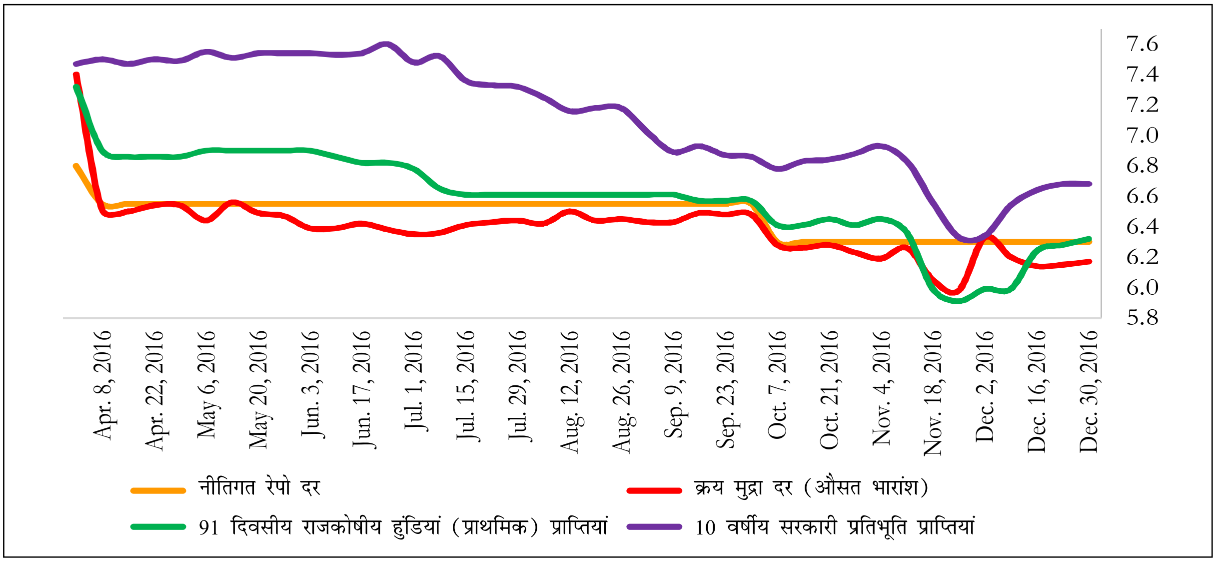

स्रोतः आर.बी.आई.

सुदृढ़ करने के लिए रिजर्व बैंक ने अनेक कदम उठाए हैं। इन बांडों के बाजार में तरलता बढ़ाने और निवेशकों की भागीदारी बढ़ाने के लिए इसने खान समिति की अनेक सिफारिशों को स्वीकार किया है। रिजर्व बैंक द्वारा घोषित नए कदम इस प्रकार हैं : (क) व्यापारिक बैंक अपनी पूंजीगत जरूरतों तथा संरचना वित्तीयन एवं सस्ते आवास खंडों के वित्तीयन के लिए विदेशों में रूपयों में मान्य बाँड (मसाला बाँड) जारी कर सकते हैं; (ख) भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड के पास पंजीकृत वे दलाल जो निगम बाँड बाजार में कार्य करने हेतु अनुमोदित हैं, निगम ऋण पत्रों की रेपो और विपरीत रेपो संविदाएं भी स्वीकार कर सकते हैं। इससे निगम बाँड चिरभोग्य स्वरूप धारण कर लेंगे और इनके द्वितीयक बाजार में लेनदेन में वृद्धि होगी; (ग) बैंक निगम बाँड निर्गम हेतु 20 प्रतिशत नहीं 50 प्रतिशत अग्रिम साख प्रदान कर सकते हैं। यह अपेक्षाकृत निम्न गुण निगम बाँडों को भी बाजार तक पहुँचने में सहायक कदम होगा; (घ) प्राथमिक विक्रेताओं को सरकारी बाँडों के

रेखाचित्र 11 : NFC और इसके घटकों में प्रतिशत वृद्धि

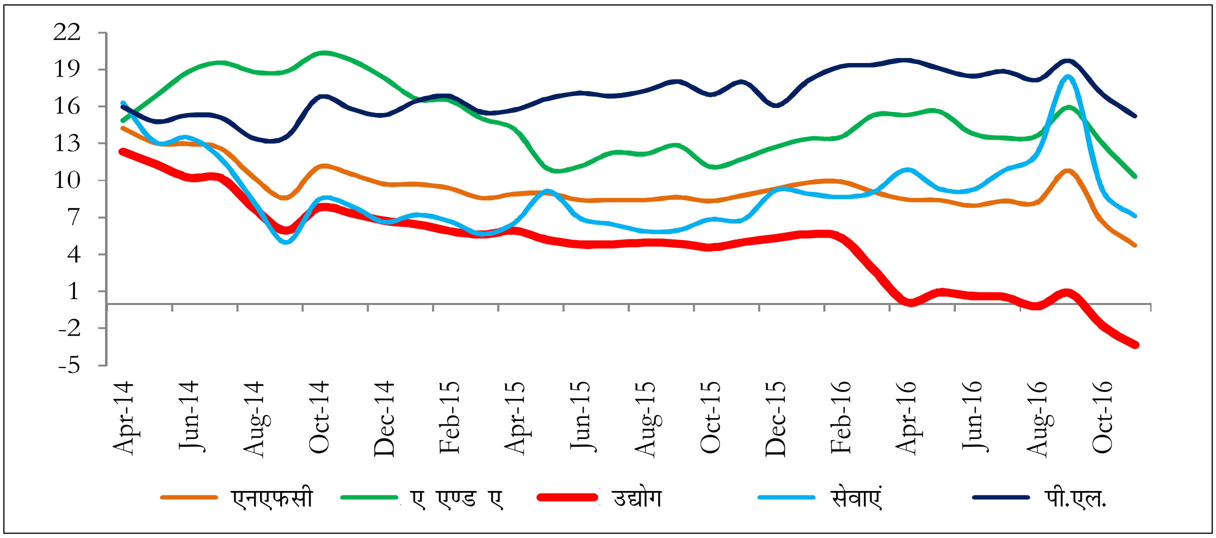

स्रोतः आर.बी.आई.

बाजार निर्माता के रूप में काम करने की अनुमति, यह सरकारी प्रतिभूतियों को खुदरा निवेशकों तक पहुँचाने में सहायक होगा; और (च) काऊंटर पर और एक्सचेंज में विक्रीय करेंसी व्युत्पन्न निक्षेपों की पूर्वोपायी कार्य के लिए विदेशी मुद्रा बाजार तक पहुँच सरल बनाने के लिए रिजर्व बैंक ने विनिमय दर जोखिम के अधीन निकायों को अमेरीकी $30 मिलियन तक के पूर्वोपायी लेनदेन किसी भी समय कर लेने की छूट दी है।

भारतीय बाजारों का निष्पादन

8.26 वर्ष 2016 में भारतीय बाजारों के निष्पादन में सामान्य संवृद्धि दिखाई दी है। सेंसेक्स में यह 1.95 तथा निफ्टी में 3 प्रतिशत रही है (वर्ष 2015 में तो घाटा ही रहा था)।

8.27 भारतीय बाजारों में यह उत्थान क्रम सितंबर 2016 तक चला किन्तु बाद में शिथिल पड़ गया (रेखाचित्र 12)। इसका मुख्य कारण उदीप्यमान बाजारों से विदेशी पूंजी का पलायन रहा। वैश्विक और आन्तरिक कारकों के भारतीय पूंजी बाजार पर बड़े महती प्रभाव रहे। कुछ अधिक सतर्कतापूर्वक अवलोकित घटनाक्रमों में ब्रेक्जिट, अमेरीकी राष्ट्रपति चुनाव तथा अमेरिकी संघीय रिजर्व व्यवस्था और भारतीय रिजर्व बैंक की घोषणाएं रहीं। बाजार की भावनाओं को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों में ओपेक द्वारा तेल उत्पादन विषयक नीति निर्णय भी रहे।

विदेशी पत्राक निवेश (FPI)

8.28 वर्ष 2008 में वित्तीय संकट के बाद पहली बार निवल विदेशी पत्रक निवेश ऋणात्मक हुआ है, अर्थात भारत के पूंजी बाजार से रू. 23079 करोड़ की राशियों का पलायन हुआ है (तालिका 6)। यह FPI पलायन केवल भारत से नहीं हुआ, विदेशी निवेशकों ने बड़े स्तर पर सभी उदीप्यमान बाजारों से अपनी पूंजी निकाली है, क्योंकि उन्नत देशों में उन्हें अधिक प्रति प्राप्ति दर की संभावनाएं दिखाई देने लगी हैं।

V. भारत का वस्तु व्यापार

निर्यात

8.29 वैश्विक संवृद्धि और व्यापार के साथ-साथ भारत के निर्यात में भी 2014-15 और 2015-16 में क्रमशः 1.3 प्रतिशत और 15.5 प्रतिशत की कमी हुई है। वर्ष 2016-17 में यह ऋणात्मक प्रवृत्ति कुछ बदली है। अप्रैल-दिसंबर 2016 में निर्यात में 0.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यह 2015-16 के इन्हीं महीनों की तुलना में

रेखाचित्र 12 : भारतीय पूंजी बाजार के आधारभूत सूचक : सेनसेक्स और निफ्टी (एक जनवरी 2016 से 31 दिसंबर 2016 की अवधि के दैनिक उच्चावचन)

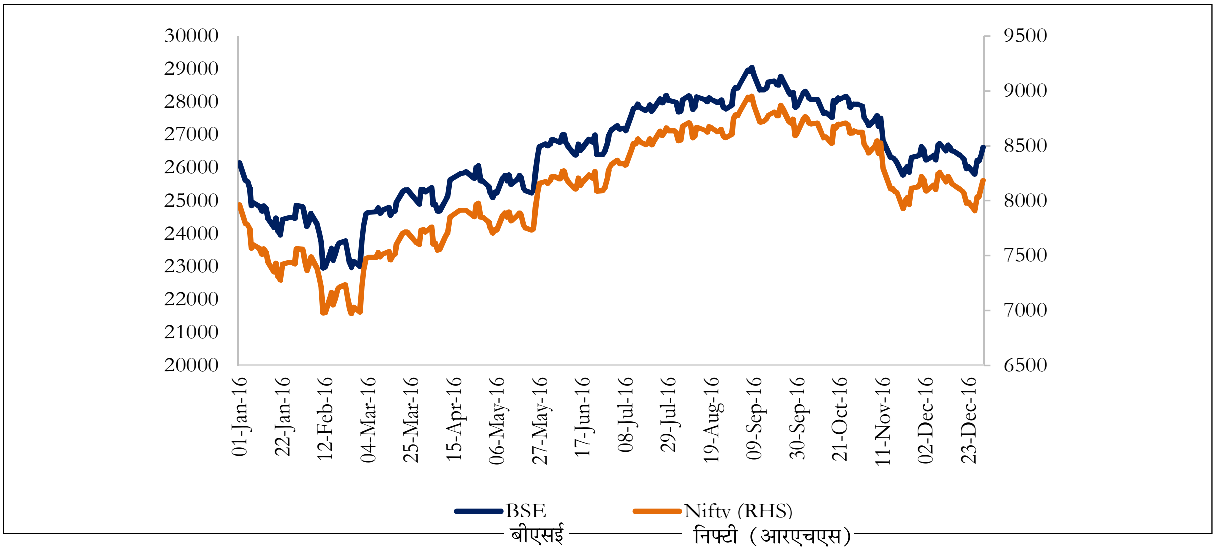

स्रोतः निफ्टी, सेन्सेक्स

$197.3 बिलियन से अधिक होकर $198.8 बिलियन हो गया। वर्ष 2016-17 (अप्रैल-दिसंबर) में पैट्रोलियम तेल और तैलीय (POL) पदार्थ निर्यात (जो देश के कुल निर्यात के 11.1 प्रतिशत हैं) में 9.8 प्रतिशत की गिरावट होकर यह $22.0 बिलियन ही रह गए। गैर POL निर्यात में 2.2 प्रतिशत की वृद्धि के साथ उनके आंकड़े $176.8 बिलियन पर पहुँच गए। वर्ष 2015-16 की तुलना में अप्रैल-दिसंबर 2016 में बहुत से निर्यात क्षेत्रक पुनः ध नात्मक संवृद्धि दिखाने लगे हैं (तालिका 7)।

8.30 भौगोलिक क्षेत्रनुसार विचार करें तो यूरोप, अफ्रीका, अमेरिका, एशिया, सीआई एस और बाल्टिक देशों को भारत के निर्यात में 2015-16 में कमी आई थी। किन्तु अप्रैल-नवंबर 2016-17 में यूरोप, अमेरिका और एशिया का हमारे निर्यात क्रमशः 2.6, 2.4 और 1.1 प्रतिशत अधिक हुए हैं, जबकि अफ्रीका को निर्यात में 13.5 प्रतिशत की कमी रही है। भारत से निर्यात की लदाई संयुक्त राज्य अमेरिका, संयुक्त अरब गणराज्य और हांगकांग के लिए इसी क्रम के अनुसार हुई है।

आयात

8.31 वर्ष 2014-15 के $448 बिलियन की तुलना में आयातों का मूल्य 2015-16 में घटकर $381 बिलियन रह गया था। इसका मुख्य कारण कच्चे तेल की कीमतों में भारी गिरावट थी, उसके कारण POL आयात मूल्य में बड़ी भारी कमी आई थी। अप्रैल-दिसंबर 2016 में आयात में पिछले वर्ष की इसी अवधि की तुलना में 7.4 प्रतिशत की और कमी होकर ये आंकड़े $275.4 बिलियन रह गए। POL आयात में तो 10.8 प्रतिशत की कमी आई थी। सोना और चांदी का आयात 35.9

तालिका 6: 2010-16 में भारत में निवल FPI/FII निवेश (करोड़ रूपयों में)

प्रकार	2010	2011	2012	2013	2014	2015	2016
अंश पूंजी	133266	-2714.3	128360	113136	97054	17808	20568
ऋण पूंजी	46408	42067	34988	-50849	159156	45857	-43647
सकल	**179674**	**39352.9**	**163348**	**62286**	**256213**	**63663**	**-23079**

***स्रोत:* एनएसडीएल**

तालिका 7 : कुल महत्वपूर्ण क्षेत्रों का निर्यात निष्पादन

	2015-16	2010 (अप्रैल-नवम्बर (P)
सकारात्मक संवृद्धि	रसायन एवं अनुषांगिक उत्पाद (0.6)	खनिज एवं अयस्क (35.3) सागरीय उत्पाद (20.6) जवाहरात और आभूषण (11.6) इलैक्ट्रॉनिक सामान (3.0) इंजिनियरी उत्पाद (0.9)
ऋणात्मक संवृद्धि	वस्त्र (-3.2) जवाहरात एवं आभूषण (-4.8) इलैक्ट्रॉनिक सामान (-5.3) चमड़ा (-10.3) सागरीय उत्पाद)-13.5) अयस्क एवं खनिज (-16.4) इंजिनियरी उत्पाद (-17.0) कृषि एवं अनुषांगिक उत्पाद (-17.6) पैट्रोलियम उत्पाद (-46.2)	रसायन एवं अनुषांगिक उत्पाद (-0.5) कृषि एवं अनुषांगिक उत्पाद (-3.0) चमड़ा (-4.8) वस्त्र (-5.2) पैट्रोलियम उत्पाद (-9.8)

***स्रोत:* वाणिज्य विभाग**

नोट : कोष्टक के अंक वर्षानुगत संवृद्धि दर्शा रहे हैं।

P: अनंतिम, त्वरित अनुमान निर्दिष्ट हैं।

प्रतिशत कम हुआ। लेकिन गैर POL और गैर सोना चांदी आयात के मूल्य में केवल 2 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई है। मोतियों एवं अर्द्ध कीमती रत्नों का आयात 19.0 प्रतिशत अधिक हुआ तो खाद्य एवं अनुषांगिक उत्पाद आयात में 1.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई। पूंजीगत पदार्थों का आयात 8.8 प्रतिशत कम किया गया।

8.32 भारत के यूरोप, अफ्रीका, अमेरिका, एशिया तथा CIS-बाल्टिक क्षेत्रों से आयात में 2015-16 में कमी आई थी। किन्तु अप्रैल-नवंबर 2016 में CIS और बाल्टिक क्षेत्र से आयात में 10.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जबकि अन्य चार क्षेत्रों से आयात में कमी ही हुई है। भारत के शीर्ष तीन आयात स्रोत क्रमशः चीन, संयुक्त अरब अमीरात और संयुक्त राज्य अमेरिका रहे (अप्रैल-नवंबर, 2016)।

व्यापार घाटा

8.33 वर्ष 2015-16 में (पिछले वर्ष की तुलना में) व्यापार घाटा 13.8 प्रतिशत कम होकर $118.7 बिलियन रह गया था। यही नहीं यह 2015-16 की तुलनीय अवधि के $100.1 बिलियन की तुलना में अप्रैल-दिसंबर 2016 में मात्र $76.5 बिलियन ही रह गया था।

VI. भुगतान शेष

चालू खाता (CAD)

8.34 भारत के निर्यात में कुछ कमी के बावजूद देश के बाह्य क्षेत्र की स्थिति संतोषजनक रही है, चालू खाते का घाटा 2012-13 से निरंतर कम हो रहा है। उस वर्ष में यह जीडीपी के 4.8 प्रतिशत अर्थात $88.2 बिलियन स्तर पर था। यह 2015-16 में घटकर केवल $22.2 बिलियन रह गया (जीडीपी का 1.1 प्रतिशत)। वर्ष 2016-17 के पूर्वार्द्ध में यह CAD और घटकर जीडीपी का 0.3 प्रतिशत रह गया है। इस व्यापार घाटे की तीखी कमी निर्यात से प्राप्तियों में कमी को कहीं न कहीं छुपा लेती है। अंतर्राष्ट्रीय कच्चे तेल की कीमतों में निरंतर कमी से तेल आयात बिल में 18 प्रतिशत कमी आई। साथ ही सोने के आयात में भारी गिरावट ने BoP आधार पर भारत के सकल आयात को बहुत घटा दिया। सेवा क्षेत्र की निवल प्राप्तियों में 2016-17 के पूर्वार्द्ध में 10 प्रतिशत की कमी रही। यद्यपि सेवा प्राप्तियां तो इस अवधि में 4 प्रतिशत अधिक थीं, किन्तु सेवाओं के लिए भुगतान में 16 प्रतिशत का उछाल आ गया था। फिर भी, सॉफ्टवेयर से प्राप्तियों में मामूली सुधार था और वित्तीय सेवाओं से प्राप्तियाँ तो कम ही हुई थीं। खाड़ी क्षेत्र के देशों में तेल कीमत में कमी के कारण आर्थिक वातावरण मंद था और उसके कारण वहां कार्य कर रहे भारतीय समुदाय द्वारा प्रेषित राशियां भी निरंतर कम हो रही थीं। ये निजी खाते के अंतरण 2015-16 के पूर्वार्द्ध के $32.7 बिलियन से कुछ घटकर 2016-17 के पूर्वार्द्ध में $28.2 बिलियन रह गए।

पूंजी/वित्त खाता

8.35 विदेशी ऋणों पर अधिक ब्याज, बैंकों द्वारा विदेशी करेंसी साधन एकत्र करने से उनकी निवल पूंजी में ह्रास, अनिवासी भारतीयों की निवल जमाओं में कमी के बावजूद प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और निवल विदेशी पत्रक निवेश के प्रबल प्रवाहों ने न केवल CAD का वित्तीय प्रबंधन कर दिया बल्कि 2016-17 के पूर्वार्द्ध में विदेशी पूंजी के सुरक्षित भंडार में वृद्धि कर दी। निवल FDI प्रवाह $21.3 बिलियन रहा और इसमें पिछले वर्ष की इसी अवधि की तुलना में 29 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसी प्रकार इसी अवधि में पत्राक निवेश के निवल प्रवाह के रूप में $8.2 बिलियन आगमन हुआ। जबकि गत वर्ष उसी अवधि में $3.5 बिलियन का पलायन हुआ था। बैंकों द्वारा विदेशी करेंसी संसाधान खरीदने के फलस्वरूप बैंकों की पूंजी में से $6.8 बिलियन विदेशों को प्रवाहित हो गए और बाह्य व्यापारिक ऋणों की वापसी पर भी 2016-17 के पूर्वार्द्ध में $4.6 बिलियन खर्च हुए। किन्तु फिर भी निवल पूंजी प्रवाह का आगमन CAD से अधिक रहा और BoP आधार पर भारत के विदेशी मुद्राकोष में निवल वृद्धि ही हुई (तालिका 8 और परिशिष्ट A1)।

विदेशी मुद्रा कोष

8.36 वर्ष 2016-17 के पूर्वार्द्ध में भारत के विदेशी मुद्रा कोष में $15.5 बिलियन की वृद्धि हुई (यह BoP आधार पर वृद्धि थी, अर्थात यह मूल्यांकन प्रभावों से इतर वृद्धि थी)। यदि मूल्यांकन प्रभावों सहित मौद्रिक रूप

में आंकलन करें तो इस वृद्धि का मान $11.8 बिलियन था। यह $3.7 बिलियन की हानि मुख्यत: विश्व की प्रमुख करेंसियों की तुलना में डालर के मान में वृद्धि का परिणाम थी।

विनिमय दर

8.37 FIIs के खाते पर, विशेषकर अंशपूंजी भाग में आगमन और संकुचित CAD के कारण एक सकारात्मक भावना का सृजन 2016-17 के पूर्वार्द्ध में हो रहा था। इसने रूपए में उतार-चढ़ाव को सीमित रखा। आगे के महीनों में रूपए के विनिमय मान में कमी के कारणों में प्रमुख थे : विश्व पटल पर डालर में सुधार, अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव और वहां की मौद्रिक नीति में संघीय रिजर्व द्वारा कसाव। अप्रैल-दिसंबर 2016-17 में वर्षानुगत आधार पर रूपए का विनिमय मूल्य डालर की तुलना में 3.4 प्रतिशत कम हुआ, जबकि मैक्सिको का पैसो 14.4 प्रतिशत, दक्षिण अफ्रीका का रैंड 8.6 प्रतिशत तथा चीन का रेनमिन्नी 6.3 प्रतिशत कम हुआ था। अप्रैल-दिसंबर 2016-17 में रूपया 6 और 36 करेंसियों के स्थिर समूहों की तुलना में निवल प्रभावी विनिमय दर (NEER) के रूप में कम हुआ था। किन्तु 6 और 36 करेंसी के REER (व्यापार आधारित, आधार वर्ष 2004-05=100) में तो रूपए के मान में 6.1 तथा 5.6 प्रतिशत की क्रमश: वृद्धियां दर्ज हुईं। यह वृद्धि मार्च 2016 के अंत से दिसंबर 2016 के अंत की अवधि में दर्ज की गई है।

VII. बाह्य ऋण

8.38 सितंबर, 2016 के अंत में भारत का बाह्य ऋण $484.3 बिलियन था, यह मार्च 2016 के अंत के ऋण से $0.8 बिलियन कम था। इसका मुख्य कारण व्यापारिक ऋणों और अल्पकालिक बाह्य ऋणों में कमी था। किन्तु यदि समय क्रम के हिसाब से चलें तो सितंबर 2016 का यह ऋणभार जून 2016 के अंत से $4.8 बिलियन अधिक भी था।

8.39 बाह्य ऋण में सरकारी (सार्वभौमिक) और गैर सरकारी ऋणों के अंश क्रमश: 20.1 और 79.9 प्रतिशत थे। अमेरीकी डालर में निर्दिष्ट ऋण भारत के सकल विदेशी ऋणों का 55.6 प्रतिशत (सितंबर अंत, 2016) थे। इनके बाद रूपयों में निर्दिष्ट (30.1 प्रतिशत) विशेष आहरण (3DRs) 5.8 प्रतिशत, जापानी येन, 4.8 प्रतिशत, पौंड स्टर्लिंग 0.7 प्रतिशत, यूरो 2.4 प्रतिशत और अन्य 0.6 प्रतिशत आंके गए थे।

8.40 यदि परिपक्कवता की दृष्टि से देखें तो भारत के बाह्य ऋणों में दीर्घकालिक उधार की ही बहुतायत है। सितंबर अंत, 2016 में दीर्घकालिक बाह्य ऋण कुल का 82.2 प्रतिशत था। परिपक्कवता की बची हुई अवधि की दृष्टि से अल्पकालिक ऋण सकल बाहरी ऋण का 42 प्रतिशत भाग थे और ये विदेशी मुद्रा भंडार के 54.7

तालिका 8 : भुगतान शेष खाते का सार ($ बिलियन)

	2013-14	2014-15	2015-16	2015-16	2016-17
		(अप्रैल-मार्च)		छमाही1	छमाही2
व्यापार संतुलन	-147.6	-144.9	-130.1	-71.3	-49.5
सेवाएं निवल	73.1	76.5	69.7	35.6	32.0
अदृश्य मदें (निवल)	115.2	118.1	107.9	56.7	45.7
चालू खाते का संतुलन	-32.4	-26.9	-22.2	-14.7	-3.7
सकल पूंजी/वित्त खाता (निवल)	47.9	88.3	40.1	25.3	19.2
सुरक्षित परिवर्तन ((-)वृद्धि, + कमी)	-15.5	-61.4	-17.9	-10.6	-15.5
व्यापार शेष/जीडीपी (प्रतिशत)	-7.9	-7.1	-6.3	-7.1	-4.6
अदृश्य शेष/जीडीपी (प्रतिशत)	6.2	5.8	5.2	5.7	4.3
चालू खाता शेष/जीडीपी (प्रतिशत)	-1.7	-1.3	-1.1	-1.5	-0.3
निवल पूंजी प्रवाह/जीडीपी (प्रतिशत)	2.6	4.3	1.9	2.5	1.8

स्रोत: आर.बी.आई.

प्रतिशत अंश के भी समान थे। सितंबर और जून 2016, दोनों के अंत में रियायती दरों पर मिले विदेशी ऋण का अंश 9 प्रतिशत था। बाह्य ऋण के मुख्य सूचक सितंबर 2016 में मार्च से इस दशा में सुधार के संकेत दे रहे हैं (तालिका 9)। सितंबर 2016 में सकल बाह्य ऋणों में अल्पकालिक ऋण का अंश 16.8 प्रतिशत रह गया था और देश का विदेशी विनिमय कोष सकल बाह्य ऋण के भंडार के 76.8 प्रतिशत का भुगतान करने में समर्थ था। अन्य सूचक भी कुछ न कुछ सुधार ही दिखा रहे थे।

8.41 विश्व बैंक के वार्षिक प्रकाशन अंतर्राष्ट्रीय ऋण सांख्यिकी International Debt Statistics, 2017 में विभिन्न देशों के बाह्य ऋणों ने 2015 के आंकड़े संकलित हैं। यह दिखा रहे हैं कि भारत विश्व के कम दुर्बलताग्रस्त देशों के वर्ग में है। अन्य ऋण ग्रस्त विकासशील देशों की तुलना में भारत के प्रमुख ऋण सूचक बेहतर दृश्य का चित्रांकन कर रहे हैं।

VIII. वर्ष 2017-18 में अर्थव्यवस्था की संभावनाएं

8.42 CSO ने अपने पहले अग्रिम अनुमान (AE) में इस वर्ष वर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर 7.1 प्रतिशत रहने की बात की है। किन्तु उसने यह भी स्पष्ट किया है कि यह अनुमान पहले 7 से 8 महीनों की जानकारी पर आधारित हैं। अत: इनके वितान से निश्चित रूप से विमुद्रीकरण का प्रभाव छूट ही गया होगा। वैसे जीडीपी पर उसके प्रभाव का सटीक अनुमान लगाना कठिन है फिर भी CSO अपने संशोधित/परिष्कृत आंकलन में जीडीपी और सकल मूल्य वृद्धि के अनुमानों को कुछ घटा सकती हैं यही नहीं स्फीति की दर भी प्रथम AE में निहित जीडीपी अपस्फायक से कम रह सकती है।

8.43 आशा है कि वर्ष 2017-18 में संवृद्धि दर अपने पुराने पथ पर लौट आएगी क्योंकि नए नोटों के रूप में पर्याप्त नकदी उपलब्ध हो जाएगी और विमुद्रीकरण के बाद वाले आवश्यक कदम उठा लिए जाएंगे। संवृद्धि क्रम को बनाए रखने में सहायक कारकों में संभावित सामान्य मानसून, वैश्विक संवृद्धि में पूर्वानुमानित वृद्धि के फलस्वरूप निर्यात में वृद्धि और अन्य सभी बातों से बढ़कर सरकार द्वारा अर्थव्यवस्था को और सुदृढ़ करने के लिए अपनाए जाने वाले सुधार शामिल होंगे। वैसे संवृद्धि के पथ में आने वाली कुछ बाधाएं भी है। उदाहरण के लिए कच्चे तेल के दामों में वृद्धि प्रारंभ हो चुकी है और यह क्रम अगले वर्ष भी जारी रहने वाला है। अनुमान बताते हैं कि तेल कीमतें 2016-17 के स्तर से 16-17 प्रतिशत अधिक हो सकती है। इसका संवृद्धि पर कुछ नकारात्मक प्रभाव होगा। कई वर्षो से अर्थव्यवस्था में अचल पूंजी में निवेश (विशेषकर निजी क्षेत्र द्वारा), निरंतर कम हो रहा है। अर्थव्यवस्था की

तालिका 9 : भारत के बाह्य ऋणों के प्रमुख सूचक (प्रतिशत)

वर्ष	बाह्य ऋण +बिलियन	बाह्य ऋण जीडीपी अनुपात	ऋण सेवा अनुपात	रियायती ऋण सकल ऋण अनुपात	विदेशी मुद्राकोष और ऋण अनुपात	अल्पकाल विदेशी ऋण का विदेशी मुद्राकोष से अनुपात	अल्पकालिक ऋण और सकल विदेशी ऋण का अनुपात
2007-08	224.4	18.0	4.8	19.7	138.0	14.8	20.4
2013-14	446.2	23.9	5.9	10.4	68.2	30.1	20.5
2014-15	474.7	23.2	7.6	8.8	72.0	25.0	18.0
2015-16(PR)	485.0	23.4	8.8	9.0	74.3	23.1	17.2
सितम्बर, 2016 की समाप्त अवधि (त्वरित अनुमान)	484.3	*	*	9.4	76.8	21.8	16.8

स्रोत: अर्थशास्त्र एवं सांख्यिकी निदेशालय, कृषि सहकारिता और कृषक कल्याण विभाग
टिप्पणी: A = उत्पादन 170 किलोग्राम प्रत्येक की मिलियन गांठों में हैं।
खरीफ और रबी फसलों के अंतर्गत भूक्षेत्र

संवृद्धि दर को ऊपर उठाने के लिए निवेश की इस प्रवृति को वापस मोड़ना अत्यंत आवश्यक रहेगा, पिछले कुछ वर्षों में वैश्विक व्यापार और निवेश प्रवाहों में भी शिथिलता आई है। वैसे अभी तक भारत इस शिथिलता से अछूता रहा है, किन्तु विदेशी पत्राक निवेश की वृद्धि कम रह जाने की पूरी आशंका है (इसका एक कारण तो यही है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में ब्याज की दरों में सुधार होने लगा है)।

8.44 कुल मिलाकर पूरी-पूरी संभावना है कि 2017-18 में भारतीय अर्थव्यवस्था फिर से 6 (3/4) से 7 (1/2) प्रतिशत के संवृद्धि पथ पर लौट आएगा।

IX. कृषि और खाद्य प्रबंधन

8.45 सीएसओ के प्रथम अग्रिम अनुमान के अनुसार 2016-17 में कृषि की संवृद्धि दर 4.1 प्रतिशत रहेगी। विवरण तालिका 10 में है।

उत्पादन

8.46 कृषि और कृषक कल्याण मंत्रालय द्वारा 22 सितंबर, 2016 को जारी पहले अग्रिम अनुमान के अनुसार वर्ष में खरीफ की फसल में खाद्य उत्पादन 135.0 मिलियन टन रहेगा। यह 2015-16 के 124.1 मिलियन टन से अधिक है (तालिका 10)।

तालिका 10 : प्रमुख खरीफ फसलों के उत्पादन (मिलियन टनों में)

फसलें	2015.16 (First AE)	2016.17 (First AE)
सकल खरीफ, खाद्य फसलें	124.1	135.0
चावल	90.6	93.9
सकल मोटे अनाज	27.9	32.5
सकल दालें	5.6	8.7
सकल तेलीय बीज	19.9	23.4
गन्ना	341.4	305.2
कपास	33.5	32.1

स्रोत: अर्थशास्त्र एवं सांख्यिकी निदेशालय, कृषि सहकारिता और कृषक कल्याण विभाग

टिप्पणी : a = उत्पादन 170 किलोग्राम प्रत्येक की मिलियन गांठों में हैं।

खरीफ और रबी फसलों के अंतर्गत भूक्षेत्र

8.47 अक्टूबर 14, 2016 तक सभी खरीफ फसलों के अंतर्गत क्षेत्रफल 1057.7 लाख हेक्टेयर रहा। यह पिछले वर्ष (2015-16) के 1039.7 लाख हैक्टेयर से 3.5 प्रतिशत अधिक है (परिशिष्ट 2)। अरहर में 2016-17 के खरीफ में पिछले वर्ष की तुलना में सबसे अधिक वृद्धि दर्ज की गई है।

8.48 रबी की बुआई अभी चल रही है। जनवरी 13, 2017 तक 616.21 लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल पर बुआई हो चुकी है। यह पिछले वर्ष के इसी सप्ताह तक, से 5.9 प्रतिशत अधिक क्षेत्रफल है (रेखाचित्र 13)। इसी 13 जनवरी तक गेहूँ की फसल पिछले वर्ष की तुलना में 7.1 प्रतिशत अधिक क्षेत्रफल पर लगाई गई है। चने की खेती भी इसी प्रकार पिछले वर्ष से 10.6 प्रतिशत अधिक भूमि पर हो रही है (रेखाचित्र 13, अध्याय 1)।

8.49 वर्ष 2016 के दक्षिण पश्चिम मानसून काल (जून-सितंबर) में पूरे देश में दीर्घकालिक औसत (LPA) के 97 प्रतिशत के समान वर्षा हुई। इस अवधि में वास्तव में 860.0 मिलीमीटर वर्षा हुई है, जबकि LPA 887.5 मिलीमीटर है। क्षेत्रवार वर्षा का विवरण तालिका 11 में दिया गया ह। देश के 36 मौसम उपसंभागों में से 4 में अतिवृष्टि हुई, 23 में सामान्य और शेष 9 में कुछ वृष्टि अभाव रहा।

तालिका 11 : दीर्घकालिक औसत बनाम वास्तविक दक्षिण पश्चिम मानसून वर्षा (जून-सितंबर 2016)

क्षेत्र	LPA (mm)	Rainfall (mm) (Actual)	Rainfall (% of LPA)
भारत वर्ष	887.5	862.0	97
उत्तर-पश्चिम भारत	615.1	584.2	95
मध्य भारत	975.3	1034.1	106
उत्तर-पूर्वी भारत	1437.8	1281.5	89
दक्षिण प्रायद्वीप	715.6	661.5	92

स्रोत: भारतीय मौसम विभाग

मुख्य फसलों का सिंचाई के अधीन क्षेत्रफल

8.50 सिंचाई कृषि में उत्पादिता सुधार के लिए एक निर्णायक आदान होता है। सिंचित क्षेत्र के फसलानुसार वितरण में बहुत भारी अन्तर देखे जा सकते हैं (रेखाचित्र 14)।

कृषि उत्पादों के लिए कीमत नीति

8.51 सरकार की मुख्य फसलों के लिए कीमत निर्धारण नीति के ध्येय है : किसान को लाभप्रद कीमत दिलाना, उच्चतर निवेश और उत्पादन को प्रोत्साहन देना और उचित दाम पर कृषि उत्पादों की आपूर्ति सुलभ कराते हुए उपभोक्ता के हितों का संरक्षण करना। दालों की कीमतों में उच्चावचन के कारण ''न्यूनतम समर्थन कीमत के माध्यम से दालों के उत्पादन की प्रेरणाएं प्रदान करने'' के उद्देश्य से मुख्य आर्थिक सलाहकार डॉ. अविन्द सुब्रमण्यम की अधयक्षता में एक समिति का सार गठन किया गया और उसने अपनी रिपोर्ट (सितंबर 16, 20; क,ख) सरकार को सौंप दी थी। समिति की मुख्य सिफारिशें परिशिष्ट में A3 दी गई हैं। पूरी रिपोर्ट http://mof.gov.in/reports/Pulses_report_16th_sep_2016.pdf पर उपलब्ध है। दालों की उत्पादिता बढ़ाने के लिए अरहर की अति अगेती, उच्च उत्पादिता किस्म (पूसा अरहर-II) का विकास हो चुका है और अगले खरीफ के मौसम में वह बीज किसानों को उपलब्ध हो जाएंगे।

8.52 परिशिष्ट A-4 में सभी प्रमुख फसलों की न्यूनतम समर्थन कीमतों का विवरण दिया गया है। वर्ष 2016-17 में किसानों को दालें उत्पादित करने का प्रोत्साहन देने के लिए उनकी समर्थन कीमतों में अच्छी खासी वृद्धि की गई है (रेखाचित्र 15)।

खाद्यान्न भंडार और केन्द्रीय अन्न भंडार के लिए प्रापण

8.53 खाद्यान्न प्रबंधन में चावल और गेहूं के सुरक्षित भंडारण के नियमों का पालन करते हुए इन उत्पादों की बाजार से फसल के मौके पर सरकार द्वारा खरीदारी महत्वपूर्ण होती है। दिसंबर 1, 2016 को चावल और गेहूं के भंडार 43.5 मिलियन टन थे, यह वर्ष पूर्व 50.5 मिलियन टन से कम थे। किन्तु सुरक्षित भंडार मानको (अक्टुबर 1, 2015) के अनुसार इनका 30.77 मिलियन टन होना ही पर्याप्त रहता (रेखाचित्र 16क, 16ख)। जनवरी 6, 2017 को रबी 2016-17 के बाजार आने पर चावल की 23.2 मिलियन टन मात्र की खरीदारी सरकार कर चुकी थी। उपभोक्ता के हितों की दृष्टि से केन्द्र द्वारा अपने भंडार से माल जारी करते समय चावल और गेहूँ के दाम जुलाई 1, 2002 से अपरिवर्तित रहे हैं।

कृषि साख/ऋण

8.54 कृषि उत्पादन एवं उत्पादिता को सुधारने के लिए साख सुविधा एक महत्वपूर्ण आदान होती है। कृषि की ओर साख प्रवाह बढ़ाने के लिए 2016-17 में कृषि साख लक्ष्य 9 लाख करोड़ रूपए रखा गया है। यह गत वर्ष के 8.5 लाख करोड़ के लक्ष्य से अधिक है (रेखाचित्र 17)। इस लक्ष्य की दिशा में सितंबर 2016 तक 84 प्रतिशत साख वितरण हो चुका था। यह भी 2015 के सितंबर के 59 प्रतिशत से कहीं अधिक है।

रेखाचित्र 13 : रबी की फसलों की बुआई (मिलियन हैक्टेयर)

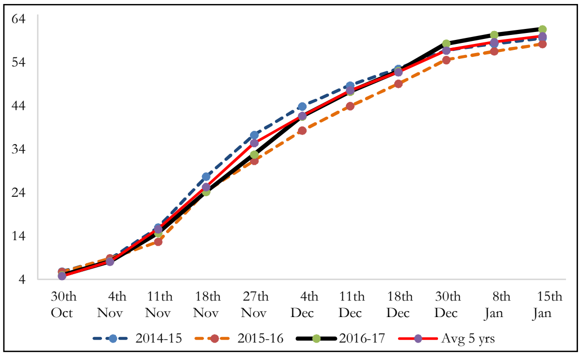

स्रोत: आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय

रेखाचित्र 14 : मुख्य फसलों के अधीन सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत फैलाव, 2013-14 राज्यवार

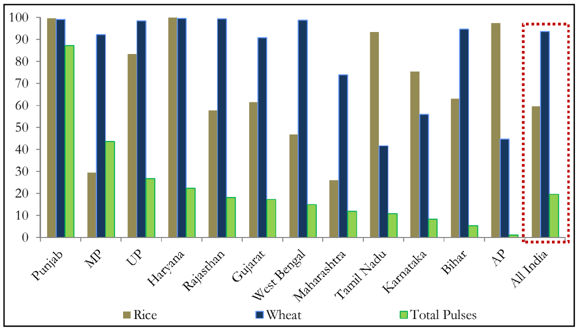

स्रोत: आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय

X. औद्योगिक, निगम और संरचना क्षेत्रक

8.55 सीएसओ के प्रथम अग्रिम अनुमान के अनुसार खान खदान, विनिर्माण, विद्युत और निर्माण उद्योगों की संवृद्धि दर 2015-16 की 7.4 प्रतिशत से घटकर 2016-17 में 5.2 प्रतिशत रह जाने की आशंका है (देखें तालिका-1, अनुच्छेद 8.3)। अप्रैल-नवंबर 2016-17 में औद्योगिक उत्पादन सूचक में मामूली सी वृद्धि, 0.4 प्रतिशत, दिखाई दी है। यह एक परिमाण सूचक है, जिसका आधार वर्ष 2004-05 है। यह बिजली उत्पादन में तीव्र दर से वृद्धि किन्तु खनन और विनिर्माण में कुछ शिथिलता का मिलाजुला परिणाम रहा है (तालिका 12)। प्रयोजन आधारित वर्गीकरण पर ध्यान दें तो हम पाते हैं कि आधारिक वस्तुओं, मध्यवर्ती और उपभोक्ता दीर्घोपयोगी वस्तुओं में सामान्य सी वृद्धि हुई है। किन्तु इनके विपरीत पूंजीगत पदार्थों में तीखी और गैर दीर्घोपयोगी उपभोक्ता वस्तुओं में सामान्य गिरावट आई है (अप्रैल-नवंबर 2016-17, तालिका 12)।

8.56 आठ प्रमुख आधार संरचना समर्थक उद्योगों अर्थात कोयला, कच्चा तेल, प्राकृतिक गैस, परिशोधन उत्पाद, उर्वरक, इस्पात, सीमेंट और बिजली का IIP में 38 प्रतिशत भारमान है और इन उद्योगों में 4.9 प्रतिशत दर से अप्रैल-नवंबर 2016-17 में संचयी संवृद्धि हुई है, जबकि गत वर्ष की इसी अवधि में यह संवृद्धि मान 2.5 प्रतिशत रहा था। परिशोधन उत्पादों, उर्वरकों, इस्पात, बिजली और सीमेंट के उत्पादन में बहुत वृद्धि हुई है किन्तु इस अप्रैल-नवंबर 2016-17 की अवधि में कच्चे तेल और प्राकृतिक गैस के उत्पादन में कमी आई है। इसी अवधि में कोयले की संवृद्धि दर भी कम रही है।

तालिका 12 : IIP के आधार पर प्रमुख क्षेत्रीय वृद्धि दरों के उपभोग आधारित वर्गीकरण (प्रतिशत)

	2014-15	2015-16	अप्रैल-नवंबर 2015.16	अप्रैल-नवंबर 2016-17
सामान्य सूचक	2.8	2.4	3.8	0.4
खनन	1.5	2.2	2.1	0.3
विनिर्माण	2.3	2.0	3.9	-0.3
विद्युत	8.4	5.7	4.6	5.0
आधारभूत वस्तुएं	7.0	3.6	3.9	4.1
पूंजीगत पदार्थ	6.4	-2.9	4.7	-18.9
मध्यवर्ती वस्तुएं	1.7	2.5	2.0	3.4
उपभोक्ता वस्तुएं	-3.4	3.0	4.1	1.8
स्थायी प्रयोग वस्तुएं	-12.6	11.3	11.8	6.9
गैर स्थायी वस्तुएं	2.8	-1.8	-0.5	-1.8

***स्रोत :* CSO**

8.57 संरचना क्षेत्रक संबंधी सभी गतिविधियों ने 2016-17 के पूर्वार्द्ध में प्रसार का प्रदर्शन किया है। ताप विद्युत उत्पादन ने 6.9 प्रतिशत से संवृद्धि कर सकल विद्युत उत्पादन के स्तर को ऊंचा उठा दिया है, जबकि इसी अप्रैल-सितंबर 2016 की अवधि में जल एवं नाभिकीय ऊर्जा उत्पादन में कुछ संकुचन ही हुआ था (रेखाचित्र 18)।

8.58 जनवरी 2017 की रिजर्व बैंक की जानकारी के अनुसार निगम क्षेत्र के निष्पादन की बड़ी विशेषता 2016-17 की दूसरी तिमाही में बिक्री में 1.9 प्रतिशत की वृद्धि रही। पहली तिमाही में तो यह नगण्य प्रायः 0.1 प्रतिशत पर ही टिकी रही थी। दूसरी तिमाही में कार्य से लाभ की संवृद्धि कुछ धीमी होकर 5.5 प्रतिशत रह गई, जबकि पिछली ही तिमाही में वह 9.6 प्रतिशत थी। ब्याज व्यय में वर्षानुगत आधार आंकलित वृद्धि दूसरी तिमाही में समतल ही रही। जबकि पहली तिमाही में इसमें 5.8 प्रतिशत की वृद्धि हो चुकी थी। हां, 2016-17 की दूसरी तिमाही में निवल लाभ में बहुत शानदार 16 प्रतिशत वृद्धि हुई है। यह पहली तिमाही की 11.2 प्रतिशत से भी उच्चतर है।

8.59 सरकार ने प्रतिरक्षा, रेल संरचना, निर्माण और औषध आदि क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की नीति को सरल और उदार बना दिया है। अप्रैल-सितंबर 2016 में FDI शेयर पूंजी के रूप में $21.7 बिलियन की राशियों का देश में प्रवाह आया, जबकि 2015 में उसी अवधि में $16.6 बिलियन राशियां आई थीं। यह 30.7 प्रतिशत का बड़ा उछाल है। सेवा, निर्माण विकास, कम्प्यूटर के हार्ड एवं सॉफ्टवेयर तथा दूर संचार क्षेत्रों ने अधिकतम FDI शेयर पूंजी प्रवाहों को आकर्षित किया है।

रेखाचित्र 15 : चुनी हुई फसलों की न्यूनतम समर्थन कीमत में प्रतिशत परिवर्तन (2015-16 की तुलना में 2016-17 में)

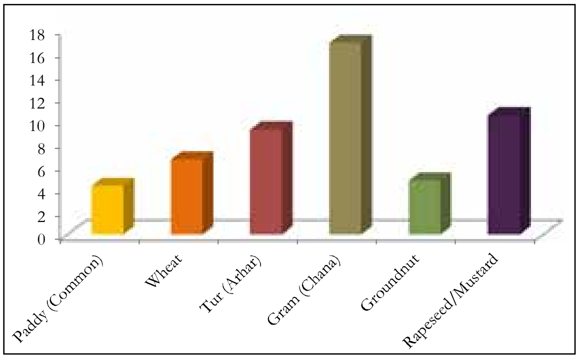

स्रोतः कृषि लागत एवं मूल्य आयोग (सीएसीपी)

8.60 सरकार ने देश में निवेश/व्यापार करने को सुविधाजनक बनाने की दिशा में कई नए कदम उठाए हैं। इनमें प्रमुख हैं : भारत में निर्माण करो, निवेश भारत, स्टार्टअप इंडिया और राष्ट्रीय ई-प्रशासन योजना के अंतर्गत e-biz मिशन प्रकल्प। व्यवसाय व्यापार को सुविधापूर्ण बनाने की दृष्टि से औद्योगिक सहमति पत्र की e-biz वेबसाईट के जरिए उद्यमियों को 22x7 कार्य कर पाने की सुविधा दी गई है। साथ ही इन दोनों कार्यों के लिए आवेदन पत्रों को सरल बनाने तथा विदेश व्यापार महानिर्देशन द्वारा निर्यात आयात की अनुमति हेतु मांगे जाने वाले दस्तावेजों को तीन तक सीमित करने के साथ-साथ निवेश भारत के अंतर्गत निवेशक सुविधा प्रकोष्ठ की स्थापना कर व्यवसाय के पूरे जीवन चक्र में निवेशकों को मार्गदर्शन और साथ देने की व्यवस्था बनाई गई है।

XI. सेवाओं का क्षेत्र

8.61 सीएसओ के प्रथम अनुमान ने 2016-17 में सेवा क्षेत्र की संवृद्धि 8.8 प्रतिशत रहने की आशा व्यक्त की है, यह लगभग 2015-16 वाली ही दर है (देखें तालिका 1, अनुच्छेद 8.3)। विश्व व्यापार संगठन के अनुसार भारत का व्यापारिक सेवा निर्यात 2005 के $51.9 बिलियन से बढ़कर 2015 में $155.3 बिलियन हो चुका है। विश्व सेवा निर्यात में भारत का अंश 2014 के 3.1 प्रतिशत से बढ़कर 2015 में 3.3 प्रतिशत हो गया, जबकि 2014 की 5 प्रतिशत संवृद्धि के स्थान पर 2015 में तो संवृद्धि दर (-) 0.2 प्रतिशत ही रही थी। इसका कारण विश्व सेवा निर्यात में 2015 में कहीं अधिक भारी

रेखाचित्र 16क : गेहूं के भंडार तथा सुरक्षित भंडार मानक (मिलियन टनों में)

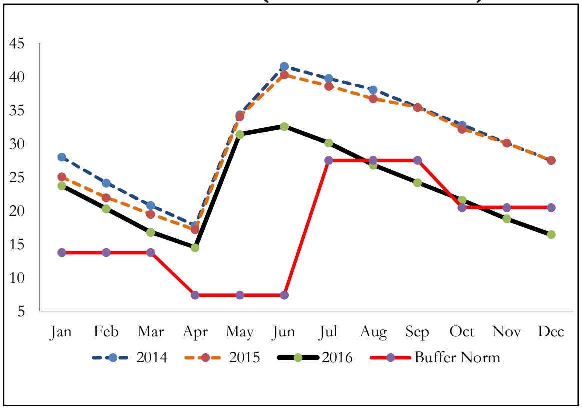

स्रोत : भारतीय खाद्य निगम

रेखाचित्र 16ख : चावल भंडार और सुरक्षित भंडार मानक (मिलियन टनों में)

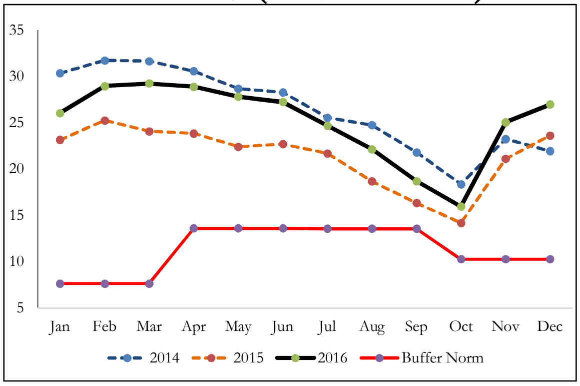

स्रोत : भारतीय खाद्य निगम

रेखाचित्र 17: कृषि साख (लाख करोड़ रूपए में)

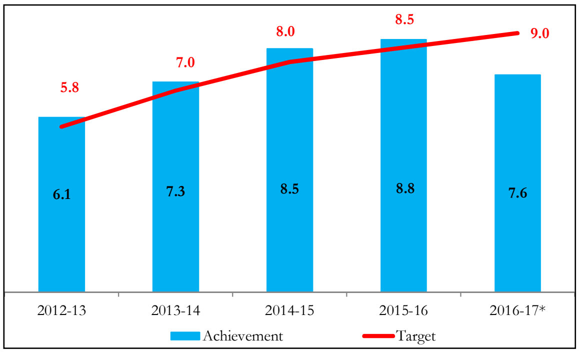

***स्रोत :* नाबार्ड**

***टिप्पणी :* *वर्ष 2016-17 के लिए लक्ष्य पूर्ण वर्ष को दर्शाता है जबकि उपलब्धि पहली छमाही के लिए है।**

गिरावट (-)6.1 प्रतिशत होना था। रिजर्व बैंक के BoP आधार के आंकड़ों के अनुसार 2015-16 में भारत के सेवा निर्यातों में 2.4 प्रतिशत की कमी आई थी। इसका कारण विश्व उत्पादन एवं व्यापार में शिथिलता बताया

रेखाचित्र 18 : वर्ष 2016-17 के पूर्वार्द्ध में संरचना संबंधि कार्यों में वृद्धि (प्रतिशत)

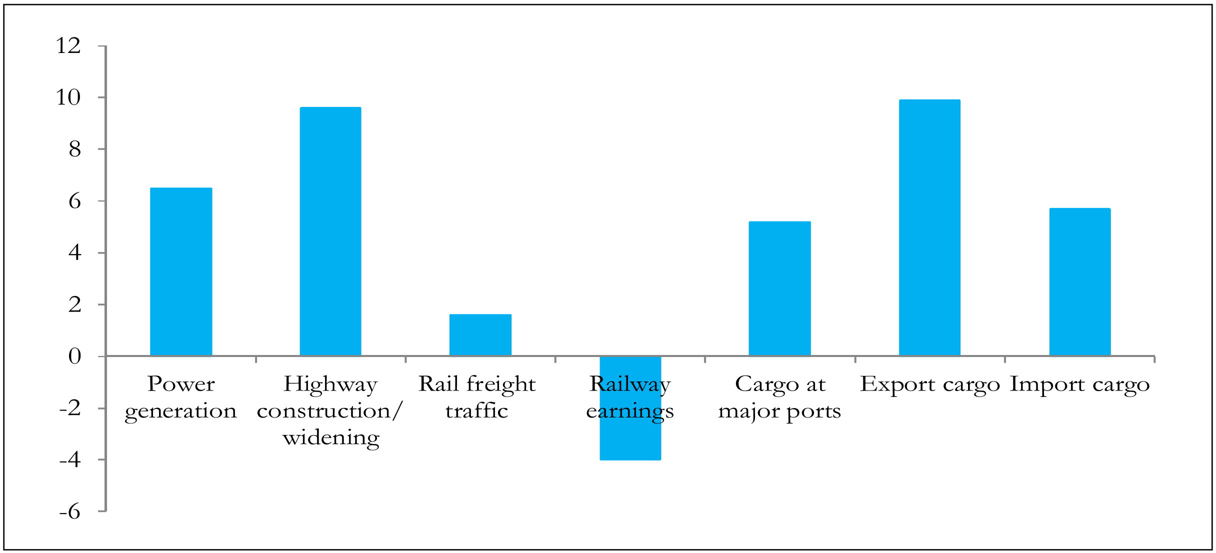

***स्रोत:* एमओएसपीआई**

गया था। किन्तु 2016-17 के पूर्वार्द्ध में सेवा निर्यात में 4.0 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो पिछले वर्ष की इसी अवधि की 0.3 प्रतिशत वृद्धि से कई गुना अधिक है। भारत के वस्तु व्यापार शेष के घाटे की भरपाई करने वाले मुख्य निवल सेवा निर्यात क्षेत्र में 2015-16 के पूर्वार्द्ध में (-)9.0 प्रतिशत और 2016-17 में (-)10.0 की ऋणात्मक संवृद्धि हो पाई है। इसका मुख्य कारण देश में सेवाओं के आयात में आया उछाल है। सेवा निर्यात में 48.1 प्रतिशत योगदान देने वाले सॉफ्टवेयर उपक्षेत्रक की संवृद्धि दरें तो 2015-16 और 2016-17 के पूर्वार्द्धों में क्रमश: बहुत ही निराशाजनक, 1.4 प्रतिशत और 0.1 प्रतिशत ही रही।

8.62 भारत के पर्यटन क्षेत्र ने भी विदेशियों के आगमन में अच्छी वृद्धि दर्ज की है। वर्ष 2015 में 8.2 मिलियन विदेशी पर्यटक भारत आए। यह पिछले वर्ष से 4.5 प्रतिशत की वृद्धि थी। पर्यटकों से विदेशी मुद्रा की कमाई भी 4.1 प्रतिशत वृद्धि के साथ $21.1 बिलियन हो गई थी। जनवरी-दिसंबर 2016 में भारत में 8.9 मिलियन विदेशी सैलानी आए। यह 10.7 प्रतिशत की वृद्धि रही है। उन पर्यटकों का भारत के व्यय पिछले वर्ष से 9.8 प्रतिशत अधिक, अर्थात $23.1 बिलियन रहा।

8.63 निक्केई मार्कइट सर्विसेज का PMI भारत के लिए जनवरी 2013 में एक उच्चमान, 57.5 दिखा रहा था। यह नवंबर 2016 में 46.8 पर आ गया जबकि एक मास पहले ही इसका मान 56.5 था। फिर भी दिसंबर में यह थोड़ा सा सुधार कर 46.8 हो गया। बल्टिक ड्राई सूचक वस्तु व्यापार और जहाजरानी सेवाओं के परिवर्तन दर्शाता है। इसमें नवंबर 18, 2016 तक कुछ वृद्धि हो रही थी किन्तु जनवरी 13, 2017 को यह कम होकर 910 रह गया था (रेखाचित्र 19)।

XII. सामाजिक उपरि संरचना, रोजगार और मानवीय विकास

सामाजिक क्षेत्रीय व्यय की प्रवृत्तियां

8.64 रिजर्व बैंक के आंकड़ों के अनुसार केन्द्र और राज्यों का सामाजिक क्षेत्र पर व्यय जीडीपी के 7.0 प्रतिशत के समान रहने का अनुमान 2016-17 के बजट में रखा गया था। इसमें शिक्षा का अंश 2.9 प्रतिशत और स्वास्थ्य का अंश 1.4 प्रतिशत रखा गया था (तालिका 13)। हमारे पास वर्ष 2014-15 के वास्तविक व्यय के आंकड़े उपलब्ध है और ये रिजर्व बैंक द्वारा दर्शाए गए स्तर से काफी कमी दिखा रहे हैं। इसका मुख्य कारण राज्यों द्वारा सामाजिक क्षेत्र पर अपने संशोधित अनुमानों से भी कम व्यय करना रहा।

रेखाचित्र 19 : बल्टिक ड्राई सूचक

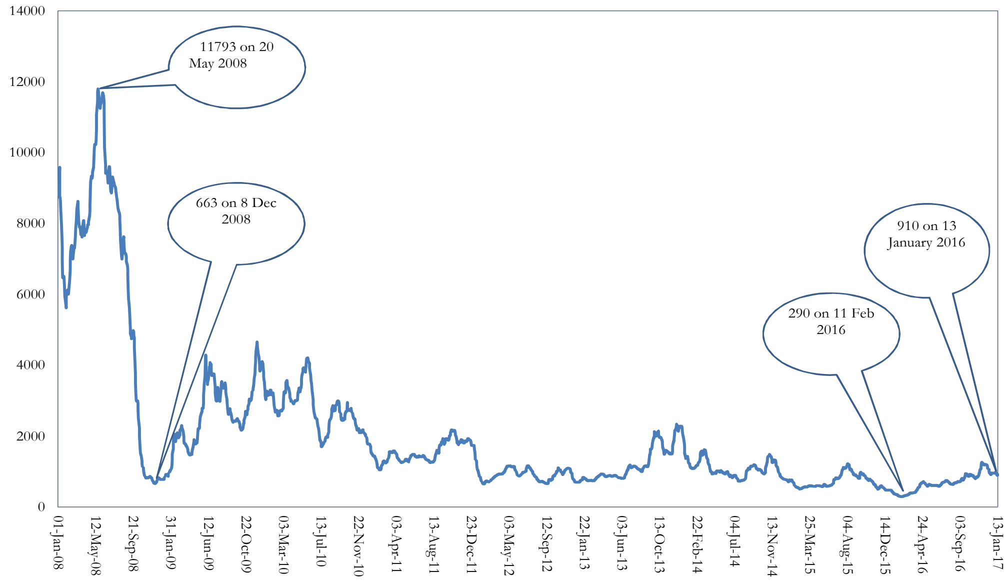

Source: http://in.investing.com/indices/baltic-dry-historical-data

रोजगार परिदृश्य

8.65 श्रम ब्यूरो द्वारा दिसंबर 2015 में कुछ चुने हुए श्रम सघन और निर्यातोन्मुखी क्षेत्रों का त्रैमासिक तुरंत सर्वेक्षण कर दिसंबर 2014 की स्थिति से तुलना करते हुए रोजगार में 135 हजार की वृद्धि का अनुमान लगाया था (रेखाचित्र 20)। इसमें योगदान देने वाले क्षेत्र रहे आईटी/ बीपीओ, वस्त्र-परिधान और धातु। किन्तु जवाहरात और आभूषण, पॉवरलूम/हैंडलूम, चर्म उद्योग, वाहन निर्माण और परिवहन में इस अवधि में रोजगार में कमी ही हुई थी।

8.66 वार्षिक रोजगार और बेरोजगारी सर्वेक्षण EUS (इन्हें भी श्रम एवं रोजगार मंत्रालय के श्रम ब्यूरो द्वारा ही आयोजित किया जाता है) श्रम रोजगार संबंधी आंकड़ों के लिए कहीं अधिक व्यापक सूचना सूत्रों का प्रयोग करते हैं। नवीनतम EUS की 2015-16 की जानकारी तालिका 14 में प्रस्तुत की गई है। सामान्य मुख्य अवस्था की कसौटी के अनुसार अखिल भारतीय स्तर पर श्रम शक्ति में भागीदारी दर 50.3 प्रतिशत आंकी गई है। महिलाओं की श्रम शक्ति में भागीदारी दर पुरूषों की तुलना में बहुत कम है। इस महिला भागीदारी में राज्यानुसार भी बहुत अन्तर स्पष्ट होते हैं। उत्तर पूर्वी एवं दक्षिणी राज्यों में श्रम शक्ति में महिलाओं की भागीदारी दर उत्तरी राज्यों की अपेक्षा कहीं अधिक है। EUS 2015-16 के अनुसार शहरी और ग्रामीण, दोनों क्षेत्रों में महिलाओं की बेरोजगारी दर पुरूषों की अपेक्षा अधिक थी (तालिका

तालिका 13 : सामाजिक क्षेत्र पर व्यय में प्रवृत्तियां

मदें	2009-10	2013-14	2014-15	2015-16 स.अ.	2016-17 ब.अ.
		स.घ.उ. के प्रतिशत के रूप में			
कुल व्यय	28.6	26.6	25.1	28.2	28.4
सामाजिक सेवाओं पर व्यय	6.9	6.6	5.7	6.9	7.0
जिनमें से					
शिक्षा	3.0	3.1	2.6	2.9	2.9
स्वास्थ्य	1.4	1.2	1.1	1.3	1.4
अन्य	2.5	2.3	2.0	2.7	2.7

स्रोत: भारतीय रिजर्व बैंक

14)। बेरोजगारी दरों में भी राज्यानुसार बहुत अंतर है (देखें रेखाचित्र 21)।

8.67 EUS सर्वेक्षण दर्शा रहे हैं कि रोजगार संवृद्धि धीमी रही है। यही नहीं जिन प्रदेशों में विनिर्माण उद्यमों का अनुक्रम उच्च है, वहां बेरोजगारी भी कम है। वैसे तो राज्य निवेश आकर्षित करने और रोजगार सृजन के साथ जुड़ी संप्रेरणाए प्रदान करने के पटल पर परस्पर स्पर्धा कर रहे हैं, फिर भी रोजगार संवर्धन के लिए निरंतर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

8.68 रेखाचित्र 22क और ख में रोजगार को क्षेत्रों और वर्गों के अनुसार अंकित किया गया है। प्राथमिक से द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रकों की ओर रूझान बहुत स्पष्ट दिखाई दे रहा है। वर्गानुसार रोजगार संवृद्धि में अनियमित और ठेका मजदूरों की संख्याओं में वृद्धि बहुत स्पष्ट है (रेखाचित्र 22ख)। इसके मजदूरी दरों, रोजगार में स्थायित्व और कर्मचारियों के लिए सुलभ सामाजिक सुरक्षा के लिए बहुत ही नकारात्मक निहित प्रभाव रहते

रेखाचित्र 20 : आठ चुने हुए क्षेत्रों में रोजगार परिवर्तन के अनुमान (दिसंबर, 2014 से दिसंबर 2015 तक)

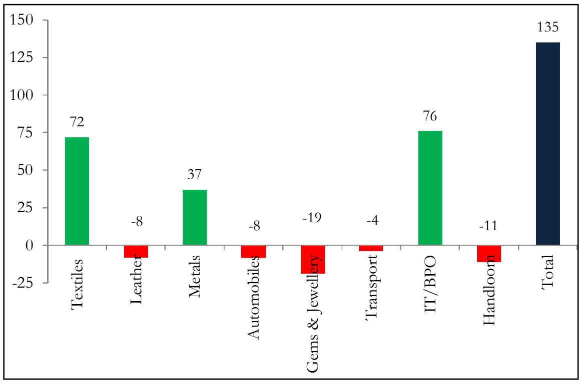

स्रोत : श्रम ब्यूरो

हैं, क्योंकि यह रोजगार तो स्वयं ही अस्थायी प्रकृति का होता है। यह रोजगार दाताओं की श्रम कानूनों से बचकर निकलने की युक्तिगत वरीयता भी दिखाता है।

8.69 श्रम कानूनों की बहुलता और उनके अनुपालन में आने वाली कठिनाइयां औद्योगिक विकास और रोजगार संवर्धान में बाधाक रही हैं। इस समय देश में केन्द्रीय स्तर पर 39 श्रम कानून चल रहे है जिन्हें कार्यों के आधार पर 4 या 5 श्रम संहिताओं में वर्गीकृत करने के सुझाव दिए गए हैं, साथ ही छोटी विनिर्माण इकाइयों के लिए विशेष कानून होना चाहिए। व्यवस्था का संपूर्ण रूप से पालन, रोजगार सृजन की आवश्यकता को समझने और श्रमिकों के स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं सभी कर्मियों के लिए सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए व्यवसाय करना सरल बनाने के लक्ष्य को लेकर बड़ी पहल करते हुए सरकार ने अनेक श्रम सुधार उपाय सुझाए हैं।

शिक्षा क्षेत्र

8.70 स्कूली शिक्षा के संदर्भ में प्राय: शिक्षार्थियों के निम्न ज्ञान को लेकर एक महत्वपूर्ण चिन्ता बार-बार व्यक्त की गई है। यह ASER, 2014 सहित अनेक अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है। शिक्षार्थियों के स्कूल में पहुँच पाने और उनके व्यवस्था से जुड़े रहने में तो सुधार हुए हैं पर इस विषय में अभी भी चिंताएं हैं कि क्या उनमें से अधिकांश कुछ सीख भी पाते हैं। प्राथमिक स्तर पर शिक्षा की गुणवत्ता के निम्न स्तर के लिए उत्तरदायी कारणों में शिक्षकों की अनुपस्थिति और प्रशिक्षित शिक्षकों के अभाव प्रमुख पाए गए हैं।

8.71 यद्यपि सर्व शिक्षा अभियान पर व्यय में 'शिक्षक' पर खर्च का अंश 2011-12 के 35 प्रतिशत से बढ़कर 2014-15 में 59 प्रतिशत हो चुका है, फिर भी शिक्षक

तालिका 14 : LFPR, WPR तथा UR% सामान्यमुख्य दशानुसार (UPS) 2015-16

मानदंड	ग्रामीण			शहरी			कुल		
	M	F	P	M	F	P	M	F	P
LFPR	77.3	26.7	53.0	69.1	16.2	43.5	75.0	23.7	50.3
WPR	74.1	24.6	50.4	66.8	14.3	41.4	72.1	21.7	47.8
UR	4.2	7.8	5.1	3.3	12.1	4.9	4.0	8.7	5.0

स्रोत: पांचवी वार्षिक EUS रिपोर्ट, श्रम ब्यूरो, 2015-16

नोट: LFPR = श्रमशक्ति भागीदारी दर, WPR = श्रमिक जनसंख्या अनुपात, UR = बेरोजगारी दर, M = पुरूष, F = महिलाएं, P = व्यक्ति

रेखाचित्र 21 : 2015-16 में विभिन्न राज्यों में 15 वर्ष से अधिक आयुवर्ग में न्ै विधि के अनुसार बेरोजगारी दरें (प्रतिशत)

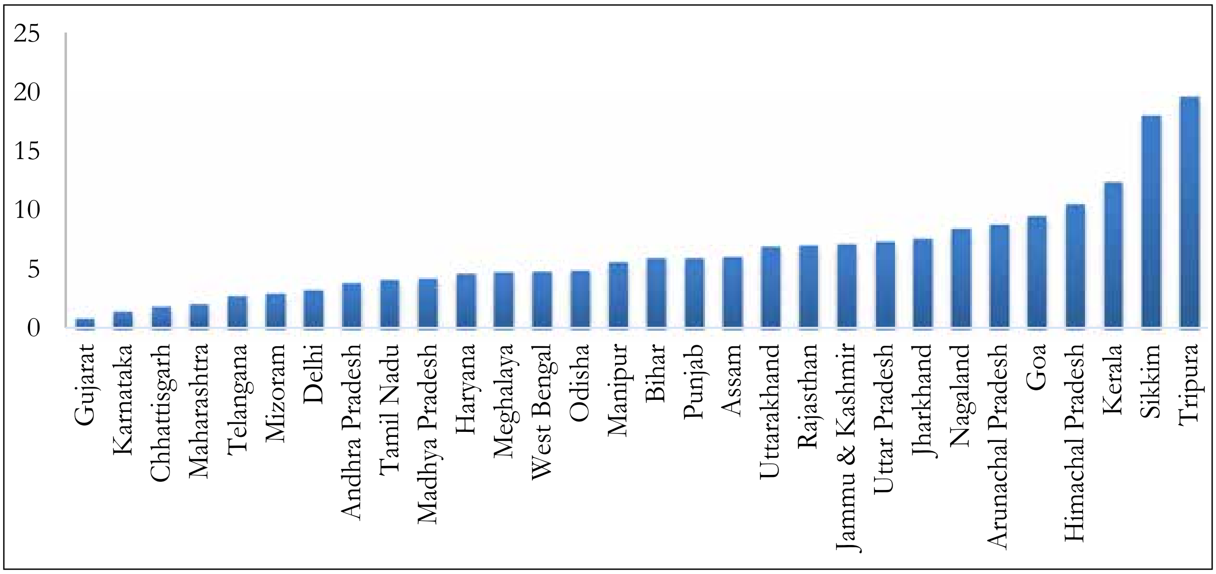

स्रोत: 5वें वार्षिक ईयूएस, 2015-16 संबंधी रिपोर्ट (श्रम ब्यूरो)

रेखाचित्र 22क एवं ख :रोजगार के क्षेत्र और वर्गानुसार न्ै विधि से भारत भर में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों का आबंटन (प्रतिशत)

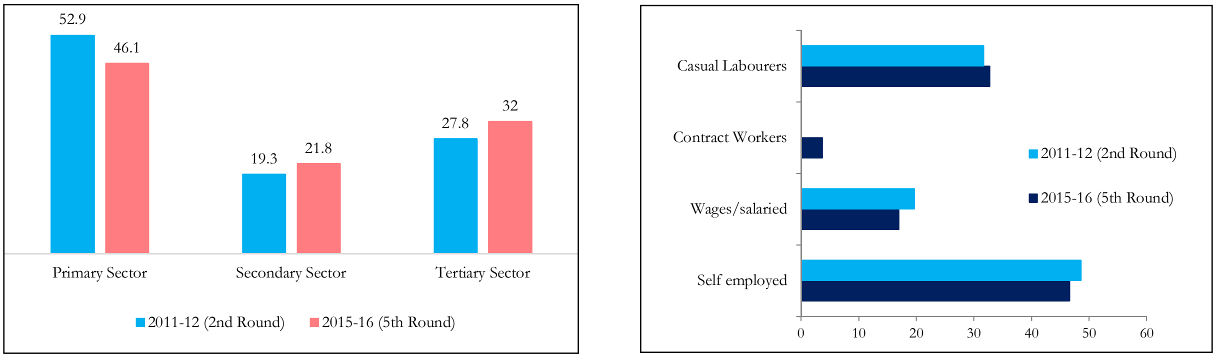

स्रोत: 5वें वार्षिक ईयूएस, 2015-16 संबंधी रिपोर्ट (श्रम ब्यूरो)

की अनुपस्थिति एवं व्यवसायिक रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों के अभाव की समस्या अभी ज्यों की त्यों बनी हुई है। सर्व शिक्षा अभियान के 2014-15 के बजट के घटक रेखाचित्र 23 में दिखाए गए हैं।

8.72 शिक्षकों की अनुपस्थिति की समस्या का एक समाधान प्राथमिक स्कूलों के प्रत्येक शिक्षक की सभी निर्धारित कक्षाओं/आख्यानों/कार्यों में उपस्थिति की बायोमैट्रिक प्रणाली अपनाने का सुझाव हो सकता है। यह उस वर्तमान व्यवस्था से अलग हो सकता है, जहां सुबह शाम शिक्षक के आने और जाने का तो हिसाब रहता है, पर उसने दिन भर क्या किया और क्या नहीं किया पर कोई नियंत्रण नहीं होता। सभी राज्यों के एक-एक जिलों में 6 महीनों के लिए इस प्रकार के अध्ययन प्रकल्प चलाए जा सकते हैं और परिणाम अच्छे रहने पर उसे तीन वर्षों में सभी जिलों में लागू किया जा सकता है। इस बायोमैट्रिक उपस्थिति पर स्थानीय समुदाय और अभिभावकों की निगरानी के साथ-साथ इस जानकारी को सार्वजनिक भी किया जाना चाहिए। इनके साथ-साथ पर्याप्त शिक्षण सामग्री एवं उपस्कर, पहले से ही रिकार्ड किए गए लैक्चर/आख्यान आदि भी तैयार होने चाहिए ताकि किसी शिक्षक के नहीं आने पर भी शिक्षण-अध्ययन चल सके। सारे प्रकल्प के संचालन में स्कूल पर नम्यता भी होनी चाहिए ताकि इसका हाल भी

कभी ऊपर से संचालित 'आदर्श विद्यालयों' जैसा नहीं हो। शिक्षकों की बायोमैट्रिक उपस्थिति रिकार्ड करने के शिक्षार्थियों के ज्ञान अर्जन पर प्रभावों की भी समीक्षा होनी चाहिए।

सबके लिए स्वस्थता

8.73 भारत की स्वास्थ्य नीति एक समेकित विधि अपनाने पर आग्रह करती है जो समाज के सीमांत एवं अभावग्रस्त वर्गों को कम खर्चीली एवं समतापूर्ण स्वास्थ्य सेवाएं सहज सुलभ करा पाए। धारणीय विकास लक्ष्य-3 ने सभी के लिए अच्छे स्वास्थ्य और खुशहाली का विचार इस प्रकार निरूपित किया है, "सभी के लिए सभी आयु बिन्दुओं पर अच्छा स्वास्थ्य और खुशहाली सुनिश्चित करें"। इस विचार का भारत के 'जनांकीय लाभांश' के हितलाभ प्राप्त करने के लिए निश्चित किए गए लक्ष्यों के साथ समन्वय किया जाना चाहिए।

8.74 यद्यपि सरकार द्वारा सभी के वह (कम खर्चीली) स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने में अनेक समस्याएं/बाधाएं आयी हैं किन्तु उनके बाद भी स्वास्थ्य क्षेत्र में कुछ उल्लेखनीय उपलब्धियां भी हुई हैं। जीवाशा में वृद्धि हुई है और शिशु मृत्यु दर एवं अपरिष्कृत मृत्यु दरों में भारी कमी आई है। भारत की सकल गर्भाधान दर (TFR) निरंतर घटती रही है। यह 2014 में 2.3 रही (शहरों में 1.8, गांवों में 2.5)। शिशु मुत्यु दर (IMR) 2011 की 44 प्रति हजार जीवित जन्म से घटकर 2015 में 37 रह गई है। अब सबसे बड़ी चुनौति शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के बड़े अंतर का दूर करने की है : शहरों में IMR 25 प्रति हजार हो चुका है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी यह 41 प्रति हजार जीवित जन्म पर अटका हुआ है।

8.75 प्रसव मृत्यु दर (MMR) प्रति एक लाख जीवित प्रसव का स्तर 2001-03 में 301 था। यह 2011-13 में घटकर 167 रह गया है। किन्तु MMR के स्तर में क्षेत्रीय विविधताएं बहुत विशाल हैं (रेखाचित्र 24), असम, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, ओडिशा, मध्य प्रदेश और बिहार जैसे राज्यों की यह MMR राष्ट्रीय औसत 164 से कहीं अधिक है। अत: SDR-3 के अनुरूप महिलाओं के स्वस्थता और पोषण में सुधार के साथ अखिल

रेखाचित्र 23 : सर्वशिक्षा अभियान के बजट के घटक (प्रतिशत अंश), 2014-15

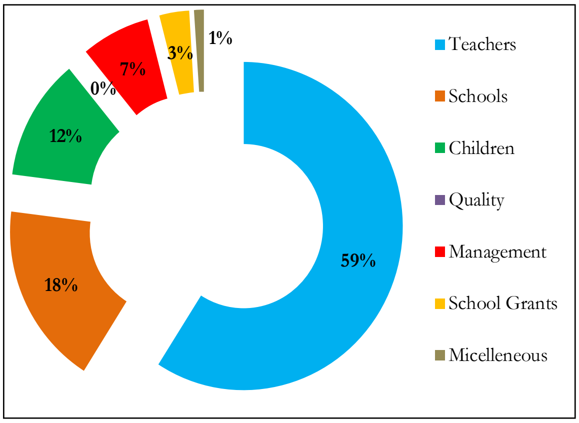

स्रोत: एसएसए पोर्टल, एएसईआर पोर्टल

भारतीय MMR में और कमी लाने के साथ-साथ हमें उच्च MMR वाले प्रांतों में इस दर को तेजी से घटाकर राष्ट्रीय औसत के निकट लाने पर अधिक ध्यान देना होगा।

8.76 आयु वर्ग 15-45 की महिलाओं में रक्ताल्पता (खून की कमी) के उच्च स्तर का MMR से सीधा सहसंबंध रहता है। हरियाणा और पश्चिम बंगाल में 60 प्रतिशत महिलाएं रक्ताल्पता से ग्रस्त हैं (रेखाचित्र 25)। भारत सरकार ने राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के अंतर्गत रक्ताल्पता की समस्या के समाधान के लिए स्वास्थ्य-पोषण शिक्षा, भोजन में विविधाता, लौह फोलिएट समृद्ध भोजन और लौह तत्व को शरीर में समाहित करने वाली खाद्य सामग्री को प्रचलित बनाने की ओर विशेष ध्यान दिया है।

सरकार की समाहनकारी नीतियां

8.77 भारत सरकार का जीवन दर्शन है कि सीमांत, अभावग्रस्त और कमजोर वर्गों को एक उत्पादक, सुरक्षित और सम्मानपूर्ण जीवन सुलभ कराते हुए समाज के सभी वर्गों को संवृद्धि एवं विकास के समतापूर्ण अवसर सुलभ कराए जाएं। इसी ध्येय की प्राप्ति के लिए भारत सरकार ने सुगम्य भारत अभियान जैसे कार्यक्रमों का सूत्रपात किया है (बॉक्स-2)।

8.78 अल्पसंख्यक समुदायों के सदस्यों के आर्थिक एवं सामाजिक सशक्तिकरण के लिए सरकार ने अनेक योजनाएं चला रखी है। अल्पसंख्यक समाज की

रेखाचित्र 24 : प्रसव मृत्यु दर, राज्यानुसार (प्रति 100000 जीवित जन्म पर) 2011-13

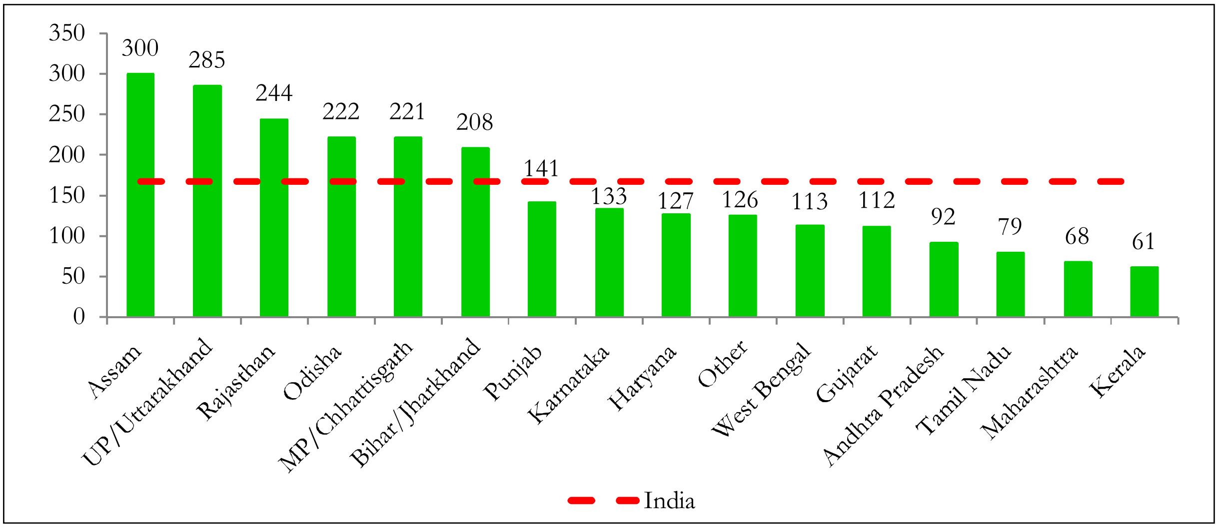

स्रोत: **एमएमआर बुलेटिन 2011-13, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय**

महिलाओं के सामाजिक सशक्तिकरण के लिए नई रोशनी, अल्पसंख्यक समुदाय के शिक्षार्थियों को विदेशों में उच्च शिक्षा के लिए ऋण पर ब्याज में सब्सिडी के लिए 'पढ़ो परदेस' जैसी योजनाएं लागू की जा रही है। अल्पसंख्यकों के कौशल विकास और आर्थिक सशक्तिकरण के लिए 'सीखो और कमाओ' 'परंपरागत कलाओं/हस्तकलाओं के विकास हेतु 'कौशल उन्नयन एवं प्रशिक्षण' तथा 'नई मंजिल' योजनाएं अल्पसंख्यक युवाओं को शिक्षा एवं कौशल प्रशिक्षण पदान करने के लिए चलाई जा रही हैं।

XIII. जलवायु (मौसम चक्र) परिवर्तन

अंतर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन विचार विमर्श में उच्चावचन

8.79 दिसंबर 12, 2015 के दिन संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन महासंधि रूपरेखा से जुड़े पक्षो (UNFCC) ने ऐतिहासिक पैरिस समझौते को स्वीकार किया। यह सभी राष्ट्रों को जलवायु परिवर्तन का सामना करने और ऐसे कार्य एवं निवेश करने को एक जुट कर रहा है, जिनसे

रेखाचित्र 25 : विभिन्न राज्यों में रक्ताल्पताग्रस्त पुरूष एवं स्त्रियों में प्रतिशत

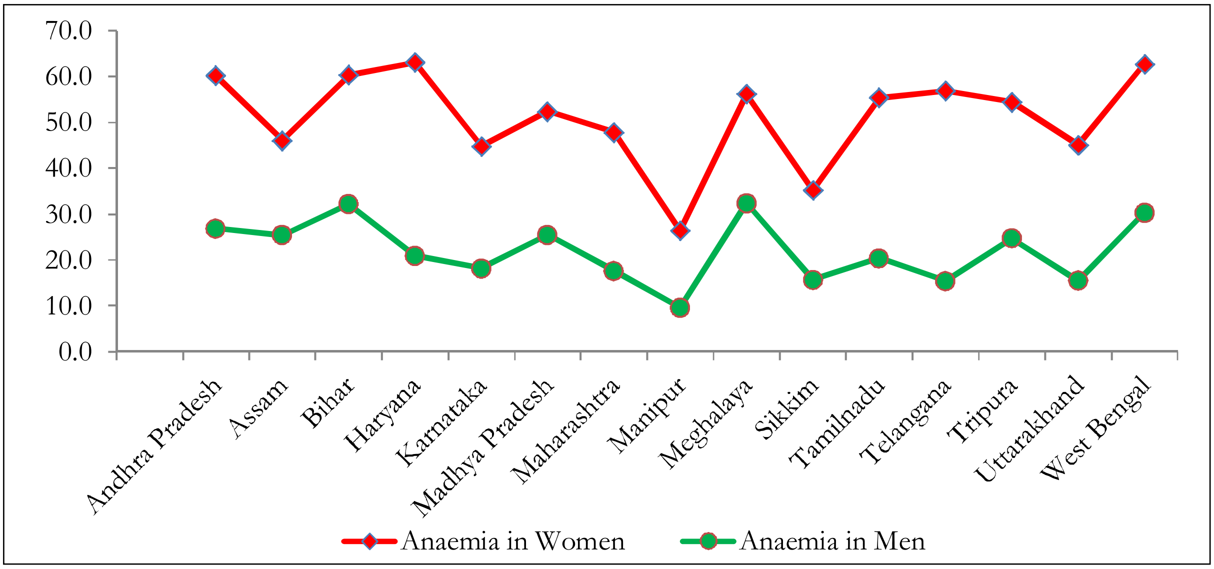

स्रोत : **राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-4) 2015-16, राज्यानुसार विवरण**

नोट : **यह महिलाओं के आंकड़ों में गर्भवती महिलाएं शामिल नहीं हैं।**

सरकार की समाहनकारी नीतियां

बॉक्स 1 : प्रयोगात्मक स्वस्थता परिणाम सूचक

एक वर्ष की आयु पर जीवाशा (LE1) IMR और MMR सूचकों का प्रयोग कर एक प्रयोगात्मक स्वस्थता परिणाम सूचक (HO1) का आंकलन किया गया है। जहां 2010-14 के LE1, तथा अधिकांश प्रांतों के लिए IMR और MMR के आंकड़े 2011-13 की अवधि के हैं। अठारह राज्यों के लिए उपर्युक्त तीनों सूचकों के मानकीकरण से प्राप्त HO1 को रेखाचित्र B1 में अंकित किया गया है।

रेखाचित्र B1 : स्वस्थता परिणाम सूचक

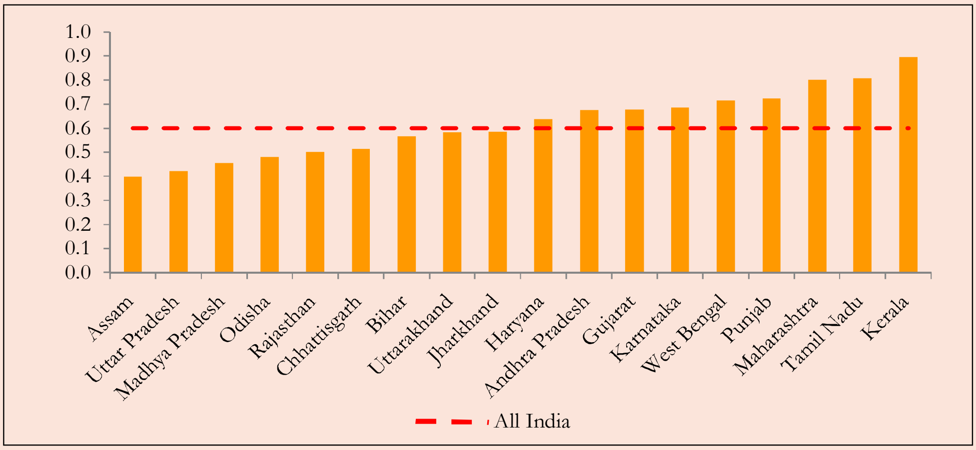

स्रोत : **प्रतिदर्श पंजीकरण तंत्र के आंकड़ों के आधार पर आंकलित, भारत के महापंजीकार और जनगणना का कार्यालय**

नोट : मानकीकृत LE1 = (वास्तविक मान – न्यूनतम मान)/(अधिकतम मान – न्यूनतम मान)

मानकीकृत IMR = (अधिकतम मान – वास्तविक मान)/(अधिकतम मान – न्यूनतम मान)

मानकीकृत MMR = (अधिकतम मान – वास्तविक मान)/(अधिकतम मान – न्यूनतम मान)।

यहां अंकित आंध्र प्रदेश के आंकड़ों में तेलंगाना की जानकारी भी सम्मिलित है। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार असम के स्वस्थता परिणाम न्यूनतम और केरल का सूचक उच्चतम है। अठारह में से 9 राज्यों के सूचक राष्ट्रीय औसत (0.6) से उच्च पाए गए हैं। न्यूनतम स्वस्थता सूचक वाले प्रदेश असम में MMR का स्तर उच्चतम है (देखें रेखाचित्र 24)।

निम्न कार्बन उत्सर्जक, सशक्त एवं धारणीय भविष्य का निर्माण हो सके। पैरिस समझौता 2020 के बाद से कार्य आधारित राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदानों (NDS) का मार्ग प्रशस्त कर रहा है। यह पेरिस समझौता नवंबर 4, 2016 से लागू हो गया है।*

8.80 UNFCC से संबद्ध पक्षों का 22वां अधिवेशन सत्र (COP-22) मार्केश, मोरक्को में नवंबर 7-19, 2016 के बीच रहा। इस COP-22 का मुख्य आग्रह पेरिस समझौते को व्यवहारिक बनाने के लिए आवश्यक नियमों का विकास और व्यवहारिक कार्य योजना बनाना था ताकि 2020 से पहले करने योग्य कार्यों की दिशा में प्रगति हो सके। COP-22 में नियम निर्माण के लिए 2018 तक कार्य पूरा करने पर सहमति बनी है। विवरण में NDCs की लेखा पद्धति, स्वीकृति/अनुमोदन के संप्रेषण, पारदर्शिता प्रणाली का निर्माण और प्रत्येक पांचवे वर्ष वैश्विक समीक्षा आदि सम्मिलित हैं।

8.81 COP-22 का मुख्य निर्णय 'हमारे जलवायु एवं धारणीय विकास हेतु मार्केश कार्य उद्घोषणा' रहा। यह जलवायु परिवर्तन को लेकर तुरंत कुछ करने की चिंता को बहुत अच्छी तरह से अभिव्यक्त करता है। मार्केश कार्य उद्घोषणा ने गरीबी उन्मूलन, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और कृषि की धारणीयता का संवर्धन करने के प्रयासों का समर्थन एवं उन्हें और सबल बनाने पर भी आग्रह किया है। वर्ष 2020 से पूर्व किए जाने वाले कार्यों में प्रतिवर्ष $100 बिलियन जुटाना इस उद्घोषणा का एक महत्वपूर्ण तत्व है।

* संयुक्त राज्य अमेरिका के नवनिर्वाचित राष्ट्रपति ने अपने देश को इस समझौते से अलग कर लिया है।

बॉक्स 2 : सुगम्य भारत अभियान

एक समाज के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने सभी अपंगताग्रस्त सदस्यों के लिए समान मानवाधिकारों और मूलभूत स्वतंत्रताओं को भोग पाने को सुनिश्चित करने के आवश्यक उपाय करे 'ताकि वह वर्ग भी अपने अंतर्भूत सम्मान सहित जीवन यापन कर सके' (संयुक्त राष्ट्र अपंगताग्रस्त व्यक्तियों के अधिकारों पर महासंधि)। जनगणना 2011 के अनुसार भारत की 2.2 प्रतिशत जनसंख्या ''दिव्यांग'' है। दिव्यांग सशक्तिकरण विभाग ने एक राष्ट्र व्यापि आंदोलन के रूप में सुगम्य भारत अभियान प्रारंभ किया है। इसका ध्येय दिव्यांग वर्ग के लिए सभी स्थानों को सुगम्य बनाना है। इस अभियान के तीन आग्रह ''उपयुक्त पर्याव्यवस्था की रचना, सार्वजनिक परिवहन और सूचना एवं संप्रेषण प्रौद्योगिकी'' के विकास पर है।

सरकार द्वारा प्रारंभ ''समाहन एवं सुगम्यता सूचक'', जो इस अभियान का एक अंग है, उद्योगों एवं निगमों को ऐच्छिक आधार पर अपने कार्यस्थलों की दिव्यांग वर्ग के लिए उपयुक्तता की समीक्षा करने को प्रोत्साहित करता है। यह सूचक देश की एक अनुपम पहल है और दिव्यांगों के मुख्य धारा से जुड़ने, समाहित होने में एक बड़ी भूमिका निभा सकता है। यह सूचक विभिन्न निकायों/संस्थानों को अपनी दिव्यांग वर्ग नीतियों तथा संगठनात्मक संस्कृति, उन्हें रोजगार देने व उनकी विशेष आवश्यकताओं को पूरा करने की तत्परता की आत्मालोचनपूर्ण समीक्षा करने योग्य बनाता है।

यही नहीं, ''दिव्यांग अधिकार विधेयक 2016'' को संसद ने पारित कर दिया है। यह भी उनके अधिकारों एवं अधिकारिताओं को सुनिश्चित एवं संवर्धित करने के विचार से प्रेरित है। विधोयक ने सरकारी निकायों/उपक्रमों में दिव्यांग जन आरक्षण को 3 से बढ़ाकर 4 प्रतिशत करने का निर्णय किया है। यह लाभ सुनिश्चित दिव्यांगता और विशेष सहायता की आवश्यकता वाले व्यक्तियों के लिए होगा। इस विधेयक का विवरण यहां उपलब्ध है: http://pib.nic.in/nwwsite/PrintRelease.aspx?relied=155592

भारत के हरित प्रयास

8.82 भारत ने पेरिस समझौते का अक्टूबर 2, 2016 के दिन अनुमोदन कर दिया है। भारत का संपूर्ण NDC लक्ष्य GDP की उत्सर्जन गहनता को 2005 के 35 प्रतिशत से घटाकर 2030 तक 33 प्रतिशत करना है। साथ ही गैर जीवाश्म ईंधन आधारित विद्युत उत्पादन को सकल स्थापित विद्युत क्षमता के 40 प्रतिशत तक ले जाना और अतिरिक्त संचयी 2.5 से 3 Gt CO_2e के समान कार्बन धारण क्षमता की रचना अतिरिक्त वृक्ष एवं वन रोपण द्वारा (2030 तक) करना है।

8.83 भारत के नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में इस समय बहुत बड़ा परिवर्तन चल रहा है और 2020 तक इस ऊर्जा सृजन की क्षमता 175 GW तक पहुँच जाने का लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सौर-पार्क, सौर सुरक्षा योजना, केन्द्रीय सार्वजनिक उपक्रमों के लिए सौर योजना, नहर तटों और नहरों के ऊपर सौर फोटो वोल्टेक विद्युत संयंत्र, सौर पंप, सौर छत जैसे अनेक कार्यक्रम प्रारंभ किए गए हैं। पिछले ढाई वर्षों में ग्रिड से जुड़े नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादक 14.3 GW क्षमता की स्थापना कर चुके हैं। इसमें से 5.8 GW सौर ऊर्जा 7.04 GW पवन ऊर्जा, 0.53 GW छाटी जल विद्युत योजनाओं और 9.93 जैव ऊर्जा स्रोतों से प्राप्त हो रही है। उचित दिशा में उठाए गए सही कदमों के फलस्वरूप आज भारत विश्व का चौथे क्रम का पवन विद्युत क्षमता स्थापित करने वाला देश बन चुका है। इसका क्रम चीन, सं.रा. अमेरीका और जर्मनी के बाद आता है। अक्टूबर 31, 2016 तक भारत 46.3 GW ग्रिड संवेदी विद्युत क्षमता की स्थापना कर चुका था तो ग्रिड संबंधित क्षमता 7.5 GW थी। छोटे जल विद्युत संयंत्रों की क्षमता 4.3 GW थी। इनके साथ-साथ 92305 सौर पंप भी लगाए जा चुके थे। देश में रू. 38,000 करोड़ की लागत से एक 'हरित ऊर्जा पथ' की रचना की जा रही है, जिससे नवीकरणीय ऊर्जा को उत्पादन बिन्दु से प्रयोक्ताओं तक पहुँचाया जा सके।

8.84 जनवरी 2016 में सरकार ने राष्ट्रीय विद्युत शुल्क नीति में संशोधन किया है। ये संशोधन पर्यावरण पक्षों पर केंद्रित हैं। इनमें हैं : (1) मार्च 2022 तक जल विद्युत के अतिरिक्त विद्युत उपभोग में 8 प्रतिशत के समान बिजली अन्य नवीकरणीय स्रोतों से प्राप्त की जाएगी; (2) नवीकरणीय सृजन दायित्व के अंतर्गत नए कोयला/लिग्नाईट आधारित ताप विद्युत संयंत्रों को एक तिथि

के बाद नवीकरणीय ऊर्जा की क्षमता/खरीदारी/प्रापण भी करना होगा; (3) नवीकरणीय ऊर्जा का उन संयंत्रों से प्राप्त ऊर्जा के साथ संबंध बनाना होगा; जिनके साथ ऊर्जा खरीद अनुबंध अपनी व्यवहारिक आयु/अवधि पार कर चुके हैं; (4) सौर और पवन ऊर्जा पर कोई अंतर्राज्यीय संप्रेषण शुल्क नहीं लगेगा; (5) कचरे से सृजित सारी ऊर्जा की खरीद अनिवार्य होगी; (6) नवीकरणीय ऊर्जा कार्यक्रम के संवर्धान के लिए ग्रिड के कार्यों में सहायक सेवाएं प्रदान की जाएंगी, आदि।

8.85 भारत की पहल पर अंतर्राष्ट्रीय सौर संगठन (ISA) प्रारंभ हुआ है। यह सौर ऊर्जा समृद्ध देशों की ऊर्जा की विशेष जरूरतों को पूरा करने के ध्येय से त्रुटियों की पहचान कर एक सांझे कार्यक्रम के अनुसार कार्य को बढ़ावा देगा। अभी तक 24 देश इस IDS के सहमति पत्र पर हस्ताक्षर कर चुके हैं। यह हस्ताक्षर कार्य नवंबर 15, 2016 से ही प्रारंभ हुआ है। पंद्रह देशों के हस्ताक्षर के बाद ISA को संयुक्त राष्ट्र के अधिपत्र की धारा 102 के अंतर्गत पंजीकृत कराकर इसे एक अंतर्सरकार संधि का रूप दे दिया जाएगा। इसके विधायी पक्ष की रचना के बाद यह भारत में अवस्थित एक बड़ा अंतर्राष्ट्रीय संगठन बन जाएगा।

8.86 भारत ने जलवायु परिवर्तन हेतु राष्ट्रीय अनुकूलन कोष की स्थापना कर ली है। यह राज्यों एवं संघ शासित प्रदेशों का जलवायु परिवर्तन के अनुकूल प्रकल्प कार्य योजनाएं लागू करने में सहायता प्रदान करेगा। अभी तक इस कोष से कृषि, पशुपालन, जल संसाधान, तटीय क्षेत्रों, जैव विविधता और परिस्थिति की सेवाओं से जुड़े प्रकल्पों के लिए रू. 182.3 करोड़ की राशियां प्रदान की जा चुकी हैं।

8.87 भारत कोयले पर कर लगाने वाले इनेगिने देशों में एक है। संघीय बजट 2016-17 में इस कोयला अधिभार का नाम ''स्वच्छ पर्यावरण अधिभार'' कर दिया गया है। यह राष्ट्रीय स्वच्छ पर्यावरण कोष के लिए धन जुटाता है। बजट 2016-17 में स्वच्छ पर्यावरण अधिभार की दर रू. 200 प्रतिटन से बढ़ाकर रू. 400 प्रति टन कर दी गई है। राष्ट्रीय स्वच्छ पर्यावरण कोष की राशियों का प्रयोग संप्रेषण क्षेत्रक, नमामि गंगे, हरित भारत मिशन, सौर सैल प्रकाश इकाइयों, छोटी प्रकाश इकाइयों, जल पंप हेतु SPV, और SPY आधारित विद्युत संयंत्रों तथा ग्रिड संबंधित छत पर लगे SPV विद्युत उत्पादन संयंत्रों के लिए किया जा रहा है।

परिशिष्ट

A1. भुगतान शेष का सार ($ BILLION)

	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16	2015-16	2016-17
		(अप्रैल-मार्च)			H1	H1
निर्यातए f.o.b	306.6	318.6	316.5	266.4	135.6	134.0
आयात, c.i.f	502.2	466.2	461.5	396.4	206.9	183.5
व्यापार शेष	-195.7	-147.6	-144.9	-130.1	-71.3	-49.5
सेवा निर्यात	145.7	151.8	158.1	154.3	77.0	80.1
सेवा आयात	80.8	78.7	81.6	84.6	41.4	48.0
सेवा निवल	64.9	73.1	76.5	69.7	35.6	32.0
आय (निवल)	-21.5	-23.0	-24.1	-24.4	-11.3	-14.1
निजी अंतरण (निवल)	64.3	65.5	66.3	63.1	32.7	28.2
अधिकारिक अंतरण (निवल)	-0.3	-0.2	-0.6	-0.5	-0.3	-0.4
अदृश्य (निवल)	107.5	115.2	118.1	107.9	56.7	45.7
चालू खाता शेष	-88.2	-32.4	-26.9	-22.2	-14.7	-3.7
पूंजी खाता बाह्य सहायता (निवल)						
व्यापारिक उधार (निवल)	1.0	1.0	1.7	1.5	0.2	0.5
विदेशी निवेश (निवल)	8.5	11.8	1.6	-4.5	-1.3	-4.6
प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (निवल)	46.7	26.4	73.5	31.9	13.0	29.4
प्रवाह	19.8	21.6	31.3	36.0	16.5	21.3
अप-प्रवाह	39.8	43.6	51.8	59.9	26.8	38.3
पत्रक निवेश (निवल)	20.0	22.0	20.5	23.9	10.3	17.0
विदेशी संस्थागत निवेश (निवल)	26.9	4.8	42.2	-4.1	-3.5	8.2
गैर आवासी जमाएं (निवल)	27.6	5.0	40.9	-4.0	-3.8	7.9
रूपए ऋण सेवा	14.8	38.9	14.1	16.1	10.1	3.5
अन्य पूंजी प्रवाह (निवल)	-0.1	-0.1	-0.1	-0.1	-0.1	-0.1
अल्पकालिक साख (निवल)	21.0	-30.1	-2.5	-4.8	3.3	-9.5
बैंकिंग पूंजी (निवल)	21.7	-5.0	-0.1	-1.6	-2.5	-0.5
भूल-चूक	16.6	25.4	11.6	10.6	18.3	-6.8
अन्य (निवल)	2.7	-1.0	-1.0	-1.1	-1.5	-0.6
सकल पूंजी / वित्त खाता (निवल)	-19.9	-49.7	-13.0	-12.7	-11.0	-1.6
सुरक्षित परिवर्तन: (-) वृद्धि और (+) कमी	92.0	47.9	88.3	40.1	25.3	19.2
व्यापार शेष /GDP (प्रतिशत)	-3.8	-15.5	-61.4	-17.9	-10.6	-15.5
अदृश्य शेष /GDP (प्रतिशत)	-10.7	-7.9	-7.1	-6.3	-7.1	-4.6
चालू खाता /GDP (प्रतिशत)	5.9	6.2	5.8	5.2	5.7	4.3
निवल पूंजी प्रवाह/GDP (प्रतिशत)	-4.8	-1.7	-1.3	-1.1	-1.5	-0.3
शुद्ध पूंजी प्रवाह/जीडीपी (प्रतिशत)	5.0	2.6	4.3	1.9	2.5	1.8

***स्रोत:* भारतीय रिज़र्व बैंक**

A2. चुनींदा खरीफ फसलों के अधीन क्षेत्रफल 14 अक्टुबर 2016

क्रम सं॰		फसलें	बुवाई क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)		पिछले वर्ष की तुलना में प्रतिशत परिवर्तन
			2016-17	2015-16	2015-16
1.		चावल	391.24	381.09	2.66
2.		दालें	146.24	113.21	29.18
	a.	अरहर	52.81	37.66	40.24
	b.	उड़द	35.68	28.51	25.15
	c.	मूंग	34.11	25.63	33.08
3.		मोटे अनाज	190.50	185.83	2.52
	a.	जवार	19.59	19.88	-1.48
	b.	बाजरा	70.43	70.50	-0.10
	c.	रागी	10.40	11.69	-11.01
	d.	खरीफ मक्का	84.43	77.91	8.37
4.		तेलीय बीज	190.31	185.19	2.77
	a.	मूंगफली	47.07	36.79	27.95
	b.	सोयाबीन	114.78	116.29	-1.29
	c.	सूरजमुखी	1.69	1.50	12.41
5.		गन्ना	46.13	49.61	-7.01
6.		पटसन और मेस्टा	7.59	7.73	-1.86
7.		कपास	103.69	117.09	-11.44
		योग	**1075.71**	**1039.74**	**3.46**

स्रोत: आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग

A3: दाल उत्पादन को संप्रेरित करना : सिफारिशों की संक्षिप्त सूची

		नीति	समय सीमा
I.	**न्यूनतम समर्थनकीमत और प्राप्ण**		
	(क)	सरकारी प्राप्ण तन्त्र को पूरी तरह तैयार होकर इस मौसम में घोषित MSP पर खरीफ की 29 दालों की खरीदारी सुनिश्चित करनी चाहिए।	तुरन्त
	(ख)	प्रभावी प्राप्ण के लिए एक उच्च स्तरीय समिति का गठन हो, जिसमें वित्त, कृषि और उपभोक्ता मामलों के मंत्री और प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव शामिल हों। क्षेत्र में कार्य कर रही एजेंसियां साप्ताहिक आधार पर इस समिति को रिपोर्ट देंगी। प्राप्ण के वास्तविक भंडारों का सत्यापन भी होना चाहिए।	तुरंत
	(ग)	दालों के 2 मिलियन टन का भंडार बनाया जाए, जिसमें अरहर का 3.5 लाख टन और उड़द का 2 लाख टन का लक्ष्य हो। ये भंडार धीरे-धीरे, जब कम दाम पर खरीदारी का अवसर मिले, बनाना चाहिए।	तुरंत
	(घ)	अल्पकाल में तैयार होने वाले अरहर को बाजार में लाते समय खरीफ 2018 में MSP को रू. 70 प्रतिकिलो ग्राम तक पहुँचाना। किसानों को सिंचाई वाले क्षेत्रों में 10-15 रूपए किलोग्राम सब्सिडी सीधे लाभ अन्तरण द्वारा करने के प्रयास किए जाएं।	प्रारंभिक सुझाव 2018 की खरीफ से। किन्तु यह शीघ्र शुरू होने वाला है।
	(च)	कृषि लागत एवं कीमत आयोग को अपनी MSP निर्धारण व्यवस्था की रूपरेखा की समीक्षा करते हुए इस रिपोर्ट में बताई गई जोखिम और सामाजिक बाह्यताओं को शामिल करने का निर्देश दिया जाए।	तुरंत
II.	**अन्य कीमत प्रबंधन नीतियां**		
	(क)	दालों पर भंडार सीमाएं और निर्यात प्रतिबंध तुरंत निरस्त किए जाएं (कम से कम थोक विक्रेताओं पर कोई स्टॉक सीमा लागू नहीं हो। सरकार की भंडार सीमा जितनी अधिक होगी, उतनी गंभीरता से प्राप्ण कार्य कर (MSP से ऊपर) बाजार कीमतों को स्थायी बनाने का कार्य होगा। किसान के लिए सबसे पीड़ादायक वह स्थिति होती है, जब प्राप्ण तंत्र कमजोर हो और उसे स्टॉक सीमाओं के कारण अपना ज्यादा से ज्यादा माल MSP से बहुत कम दामों पर बेचने को विवश होना पड़ रहा हो। अधिक व्यापक रूप में आन्तरिक कीमतों पर नियंत्रण के लिए विदेश व्यापार नीति का प्रयोग उचित नहीं है। यह नीतिगत स्तर पर अस्थिरता पैदा कर सकती है।	तुरंत
	(ख)	राज्य सरकारों को प्रोत्साहन दिया जाए कि वह दालों को कृषि उपज विपणन समितियों से मुक्त कर दें	तुरंत
	(ग)	आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 और कृषि उपजों के वायदा बाजार की समीक्षा हो, इसमें मूल उद्देश्यों को बनाए रखते हुए उन्हें प्राप्त करने के अधिक प्रभावी और कम खर्चीले उपाय तलाश किए जाने चाहिए।	जब उचित पाया जाए
III.	**प्राप्ण-भंडारण-संभरण संस्थाएं**		
	(क)	सार्वजनिक निजी भागीदारी में एक नई संस्था का गठन हो जो प्राप्ण और दालों के संभरण में अभी काम कर रही संस्थाओं से स्पर्धापूर्वक कार्य करें।	इस पर तुरंत कार्य प्रारंभ हो ताकि रबी 2016 तक यह पूरी तरह से काम करने लगे। केबिनेट के विचार के लिए उपयुक्त प्रस्ताव 4 सप्ताह में तैयार किया जाए
	(ख)	भंडारों से संभरण के स्पष्ट नियम बनाए जाएं	
IV.	**विपरीत प्रभावों को न्यूनतम किया जाए**		
	(क)	जैविक परिवर्तन वाली प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा दिया जाए। दालों की स्वदेश विकसित किस्मों को शीघ्र स्वीकृति प्रदान की जाए।	आवश्यकतानुसार

A4. प्रमुख उपजों की न्यूनतम समर्थन कीमतें (रूपए प्रति क्विंटल)

वस्तु समूह	2015-16	2016-17
खरीफ फसलें		
धान-साधारण	1410	1470
धान (A ग्रेड)	1450	1510
जवार (संकर)	1570	1625
जवार (मालडंडी)	1590	1650
बाजरा	1275	1330
रागी	1650	1725
मक्का	1325	1365
अरहर	4625^	5050*
मूंग	4850^	5225*
उड़द	4625^	5000*
मूंगफली	4030	4220$
सूरजमुखी बीज	3800	3950$
सोयाबीन (पीली)	2600	2775$
तिल	4700	5000#
राम तिल्ली	3650	3825$
कपास (मध्यम रेशा)	3800	3860
कपास (लम्बा रेशा)	4100	4160
रबी फसलें		
गेहूँ	1525	1625
जौ	1225	1325
चना	3425^^	4000**
मसूर	3325^^	3950##
तोरिया/सरसों	3350	3700**

स्रोत : कृषिक लागत और कीमत आयोग

नोट : *कोष्ठक प्रतिशत वृद्धि दर्शाते हैं। ^ : रू. 200 प्रति क्विंटल का बोनस शामिल है, *: रू. 425 प्रति क्विंटल बोनस सहितए $: रू. 100 प्रति क्विंटल बोनस सहितए # : रू. 200 प्रति क्विंटल बोनस सहितए ^^ : रू. 75 प्रति क्विंटल बोनस सहितए ** : रू. 200 प्रति क्विंटल बोनस सहितए ## : रू. 100 प्रति क्विंटल बोनस सहित*

सार्वलौकिक आधार आय : महात्मा से चिन्तन मनन

09

अध्याय

''मैं आपको एक मंत्र दे रहा हूँ। जब कभी आप संशय में हों या आपके लिए 'मैं' बहुत भारी हो जाए, तो कसौटी आजमा कर देखें। उस गरीबतम एवं दुर्बलतम पुरूष (स्त्री) का चेहरा याद करने की कोशिश करें जिसे आपने कभी देखा हो। फिर अपने आप से यह प्रश्न करें, 'क्या मैं जो करने की सोच रहा हूं वह उसके किसी काम आएगा? क्या उसे कोई लाभ पहुंचेगा? क्या वह उस काम के जरिए अपने जीवन और तकदीर पर अपना नियंत्रण पुन: स्थापित कर पाएगा? दूसरे शब्दों में क्या वह शारीरिक और आध्यात्मिक भुख से बिलबिला रहे लाखों देशवासियों को स्वराज दिला पाएगा? तभी आपको तुरंत यह अनुभूति होगी कि आपके संशय और अहम के भाव पिघल कर बह रहे हैं।''

–महात्मा गांधी

''मेरी अहिंसा किसी ऐसे स्वस्थ व्यक्ति को मुफ्त में खाना खिलाना सहन नहीं पाएगी जिसने उसे पाने के लिए ईमानदारी से काम नहीं किया हो और यदि मेरे पास शक्ति हो तो मैं ऐसे प्रत्येक सदाव्रत को तुरंत बंद करवा दूंगा जहां मुफ्त में खाने के लिए दिया जाता है। इसने राष्ट्र का पतन किया है, सुस्ती, निठल्लेपन, दम्भ-आडंबर, यहां तक कि अपराध को भी बढ़ावा दिया है। ऐसी दिग्भ्रमित धर्मिष्ठता से देश की दौलत में कोई वृद्धि नहीं होती, न भौतिक में और न ही आध्यात्मिक में। यह तो दानदाता को सद्कर्म करने का मिथ्या भ्रममात्र देती है। ये कितना अच्छा और समझ भरा कार्य होता यदि ये दानी स्वस्थ-स्वच्छ परिवेश में उन स्त्री-पुरूषों को भोजन कराते जो उनके लिए काम करते हों, वहां बस एक ही नियम होता : श्रम नहीं तो भोजन नहीं।''

–महात्मा गांधी

''सार्वलौकिकता, नि:शर्तता और बृहत्तर (सामाजिक) भूमिका'' किसी भी सार्वलौकिक आधारिक आय UBI कार्यक्रम के प्रमाण चिन्ह होते हैं। इन्हीं पर आधारित, ''प्रत्येक आँख के आँसू'' पोछने का विचार सैद्धांतिक स्तर पर बहुत आकर्षक है। किन्तु इसे लागू करने में अनेक चुनौतियां आएंगी, सबसे बड़ी जोखिम तो यही है कि UBI अभी चल रहे गरीबी निवारक कार्यक्रमों का प्रतिस्थापन करने के स्थान पर उनके साथ ही जुड़ जाएगा। इस प्रकार यह राजकोषीय अर्थक्षमता के लिए असह्य हो जाएगा। फिर वर्तमान कार्यक्रमों की बहुलता, लागतें और संदेहास्पद प्रभावोत्पादकता तथा निरंतर तेजी से JAM संरचना तंत्र के विकास को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि UBI वर्तमान सामाजिक दशा में एक बड़ा सुधार ला सकता है। यह अध्याय UBI कार्यक्रम की संभावित लागतों का एक अनुमान दे रहा है (जीडीपी के 4 से 5 प्रतिशत के बीच), साथ ही व्यवहारिक कठिनाइयों की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए उन अनेक विचारों को भी प्रस्तुत कर रहा है जो UBI को आगे बढ़ा सकते हैं। राजनीतिक पटल के दोनों छोरों को UBI का विचार सुहा रहा है। अत: लगता है यह ऐसा विचार है जिसके व्यवहारिक रूप धारण करने का समय आ गया है। भले ही तुरंत क्रियान्वयन का नहीं, किन्तु गंभीर सार्वजनिक मंथन एवं विमर्श का ही सही। महात्मा गांधी संभवत: इस विचार पर कुछ उद्वेलित अवश्य होते, किन्तु अंत में सहमत भी हो जाते।''

I. विषय प्रवेश

9.1 भले ही भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के समय के गरीबी अनुपात को 70 से घटाकर 22 प्रतिशत (तेंदुलकर समिति), (वर्ष 2011-12), तक ले आया हो किन्तु 'प्रत्येक आँख के आँसू पोछने' का विचार तो कुछ एक कैलोरिया खा भर लेने से कही अधिक व्यापक है। और महात्मा ने उसे सभी मार्क्सवादियों, बाजार के मसीहाओं, भौतिकवादियों तथा व्यवहारवादियों से पहले, बेहतर और अधिक गहराई से समझ लिया था। उन्होंने इसे अंतर्निहित रूप से सम्मान, दौर्बल्यहीनता, आत्मसंयम एवं स्वातंत्र्य तथा बौद्धिक-मानसिक बोझ से मुक्ति का स्वरूप प्रदान कर दिया था। उस दृष्टि से नेहरू का यह आह्वान कि "जब तक आँसू (बह रहे हैं) कष्ट है, हमारा कार्य संपूर्ण नहीं होगा" आज स्वतंत्रता के 70 वर्ष बाद भी उतना ही सत्य प्रतीत होता है।

9.2 गांधी जी के लक्ष्य की प्राप्ति का एक विकल्प आज भारत ही नहीं सारे विश्व के नीति-निर्माताओं को आन्दोलित कर रहा है। यह है सार्वलौकिक आधारिक आय, संक्षेप में UBI का विचार। इस UBI के तीन घटक हैं : सार्वलौकिकता, नि:शर्तता और बृहतर भूमिका (अर्थात नकद अन्तरण द्वारा समाज के सदस्यों के चयनों का सम्मान करना, उनपर अपने आदेश थौंपना नहीं)। हमने अध्याय का आरंभ ही गांधी जी के दो कथनों के उद्धरण से किया है। हमें लगता है कि वे इस विचार पर उद्वेलित अवश्य हो उठते। हमारा यह अध्याय UBI को महात्मा गांधी के साथ एक संवाद के रूप में प्रस्तुत कर रहा है। वास्तव में ऐसे संवाद के रूप में जो गांधी जी स्वयं से करते यदि उन्हें UBI का सुझाव दिया गया होता।

II. UBI : सैद्धांतिक और दार्शनिक आधार

9.3 UBI सामाजिक न्याय और उत्पादन अर्थव्यवस्था विषयक चिन्तनों में एक अत्यंत ही क्रांतिकारी परिवर्तन का विचार है। यह 21वीं शती के लिए वही रूप धारण कर सकता है जो 20वीं शती में नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों का रहा है। इसका आधार इस मान्यता पर टिका है कि एक न्यायपूर्ण समाज को अपने प्रत्येक सदस्य को व्यक्तिगत रूप से इतनी आय अवश्य सुलभ करानी चाहिए जिसपर वह भरोसा कर सके और जो उसे जीवन के लिए आवश्यक भौतिक पदार्थ और सुविधाओं के साथ-साथ उस जीवन को सम्मानपूर्वक व्यतीत करने योग्य बनाने में समर्थ हो। अनेक अधिकारों की भांति UBI भी नि:शर्त और सार्वलौकिक है। इसका आग्रह है कि प्रत्येक व्यक्ति को, नागरिक होने मात्र से, उसकी आवश्यकताएं पूर्ण करने योग्य आय पाने का अधिकार है। अनेक कारणों से UBI पर चिन्तन मनन करने का समय आ गया है।

सामाजिक न्याय : UBI एक न्यायपूर्ण और शोषण मुक्त समाज की पहल और सर्वोच्च कसौटी है। टॉम पेन से लेकर जॉन राउल्स तक, प्राय: सभी न्याय सिद्धांतों का तर्क है कि जो समाज सभी नागरिकों को अच्छी न्यूनतम आय की गारंटी नहीं दे पाता वह न्याय की कसौटी पर खरा नहीं उतरेगा। यह तो सभी को सहज स्पष्ट होना ही चाहिए कि जो समाज अपने सभी सदस्यों को भागीदारी (पणधारिता) प्रदान नहीं कर पाता वह न न्यायपूर्ण होगा और न ही उसकी संरचना स्थायित्वपूर्ण रह पाएगी।

एक सार्वलौकिक आधारिक आय व्यक्ति को स्वतंत्र और समान मान कर उसका सम्मान करने वाले समाज के अनेक आधारभूत जीवन मूल्यों का संवर्धन-पोषण करती है। यह पितृवाद विरोधी होने के कारण स्वातंत्र्य को बढ़ावा देती है और श्रम बाजार में नम्यता की संभावना का सूत्रपात करती है। सरकारी अन्तरणों में बर्बादी घटाकर यह दक्षता में वृद्धि करती है। यही नहीं, कतिपय परिस्थितियों में तो यह उत्पादिता में भी वृद्धि कर सकती है। यह कोई आकस्मिकता नहीं है कि वाम एवं दक्षिण पंथी विचारकों (दोनों) ने इस UBI के विचार को अंगीकार कर लिया है।

गरीबी निवारण : यदि एक सुचारू रूप से चल रही वित्त व्यवस्था विद्यमान हो तो UBI गरीबी निवारण की सबसे शीघ्र प्रभावी कार्य विधि हो सकती है। यही नहीं, भले ही यह बात विस्मयपूर्ण लगे, भारत जैसे देश में तो UBI सबसे अधिक व्यवहारिक गरीबी निवारण विधि भी बन सकती है : इसे अपेक्षाकृत निम्न आय स्तर पर नियत करने पर भी अतिविशाल स्तर पर क्षेम लाभ संभव है।

बृहतर भूमिका : भारत में गरीबों को सरकारी नीति की 'विषय वस्तु' मात्र माना गया है। हमारे वर्तमान क्षेम तंत्र की भावना भले ही उचित हो, किन्तु वह गरीबों को अपने जीवन के उपयुक्त आर्थिक निर्णय लेने की क्षमता से हीन मान कर उनपर एक अपमान भी आरोपित कर

देता है। यदि उन्हें शर्तहीन रूप से नकदी का अन्तरण होता है तो वह स्वयं अभिकर्ता बन जाते हैं, विषय वस्तु नहीं रहते। UBI व्यवहारिक रूप से भी उपयोगी है। व्यक्तियों को गरीबी के पाश में बांधे रखने वाली परिस्थितियां अलग-अलग हो सकती हैं, जिन जोखिमों एवं संक्षोभों का उन्हें सामना करना पड़ता है उनमें भी बड़े अन्तर हो सकते हैं। सरकार यह निर्णय करने की श्रेष्ठतम अवस्था में नहीं होती कि किस जोखिम का निवारण किया जाए और व्यक्ति स्तर पर वरीयताएं किस प्रकार निर्धारित की जाएं। UBI नागरिकों को सरकार के साथ माई-बाप और भृत्य के रिश्ते से मुक्त कर देती है। हितलाभिता की इकाई व्यक्ति है, परिवार नहीं, यह दृष्टिकोण व्यक्ति, विशेषकर नारी, की परिवार के भीतर भूमिका को भी बृहतर स्वरूप प्रदान कर सकता है।

रोजगार : अब यह भी स्वीकार किया जा चुका है कि रोजगार सृजन की अनिश्चित संभाव्यता के परिवेश में तो UBI द्वारा न्यूनतम जीवन स्तर की गारंटी देने के सामाजिक दायित्व का वहन भी हो जाता है।[1] यही नहीं, UBI श्रम बाजार में नई संभावनाओं का प्रवर्तन भी कर सकती है। व्यक्तियों को हितलाभ गंवाने की आशंका के बिना श्रम बाजार से अपना संबंध आंशिक या क्रमिक बनाने की नम्यता मिल जाती है। इससे जो सौदेबाजी क्षमता उन्हें मिलती है उसमें उनके शोषण की संभावना कम रह जाती है। अब व्यक्ति का गुजारा तो हो ही रहा है। अत: उसे किसी भी प्रकार की शर्तें स्वीकार कर काम पाने की विवशता नहीं रहती।

प्रशासनिक दक्षता : भारत में वर्तमान क्षेम कार्यों में छाए हुए अप आवंटन, क्षरण और गरीबों के उनसे बाहर रह जाने की गंभीर त्रुटियों के कारण UBI अपनाने के पक्ष का तर्क और भी सशक्त हो गया है। जब जनधन, आधार और मोबाईल की त्रिमूर्ति (JAM) पूर्ण रूप से समाज में स्थापित हो जाएगी तब तो UBI को लागू करना प्रशासकीय दृष्टि से और भी सरल एवं दक्ष हो जाएगा। किन्तु प्रशासन विषयक तर्क देते समय कुछ और सतर्क रहने की आवश्यकता है। आधार की रचना एक पहचान पत्र के रूप में की गई है। यह स्वमेव में किसी कार्यक्रम के हितलाभों को लक्षित नहीं कर पाएगा। यह ध्यान रखना भी जरूरी है कि UBI लागू करने से सरकार के तंत्र की क्षमताओं के विकास की आवश्यकता कम नहीं हो जाएगी : उसे अभी भी अनेक जनसेवाएं प्रदान करने की अपनी क्षमताओं का विकास-संवर्धन करना होगा। UBI प्रशासन तंत्र की क्षमता की प्रतिस्थापक नहीं हैं, यह तो केवल इतना सुनिश्चित करती है कि सरकार के क्षेम अंतरण अधिक दक्षतापूर्ण हो जाए और वह अन्य सार्वजनिक पदार्थों की रचना सुदृढ़ करने पर अपना ध्यान केंद्रित रख सके।

III. UBI के विरूद्ध संकल्पनागत तर्क

9.4 आर्थिक दृष्टि से एक UBI के विरूद्ध तीन मुख्य एवं परस्पर संबंधित तर्क दिए जा सकते हैं। सबसे प्रमुख बात तो यह है कि क्या UBI से कार्य करने की संप्रेरणा कम होगी। यह विश्व जीवन दर्शन गांधीजी के पूर्वउद्धृत कथन में निहित रहा है; आलोचक तो संभावी कर्मियों द्वारा अपनी योग्यताओं-क्षमताओं को व्यर्थ ही गंवाने के चित्र का भी निरूपण कर देते हैं। यह तर्क ज्यादा ही बढ़ा-चढ़ा (अतिशयोक्तिपूर्ण) है (अधिक साक्ष्य भाग-1 में)। पहली बात तो यही है कि जिस स्तर पर UBI नियत होगी, वह तो हद से हद एक न्यूनतम गारंटी का स्तर होगा। यह कार्य करने की संप्रेरणाओं को समाप्त या कम नहीं कर पाएगा। ऐसे विचार भी सामने आ सकते हैं कि यह कहना कि मनुष्य केवल अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए काम करता है, उसका अपमान है और कि इस विवशता के जुए को उसके कंधों से उतारने भर से वह सुस्त हो जाएगा। ऐसे ही तर्क उच्च मजदूरी के विरूद्ध भी दिए जाते थे कि मजदूरी दर एक स्तर से अधिक होने पर तो श्रमिक आराम पसंद हो जाएंगे। किन्तु उक्त विचार की पुष्ट करने के लिए कोई साक्ष्य सुलभ नहीं हैं।[2]

1. परंपरा से अधिकांश समाजों में आय और रोजगार में सीधा संबंध रहता है, क्षेम हितलाभ उपाय भी रोजगार मिलने तक की अवधि में काम चलाने के उपाय ही होते हैं। कुछ अपवाद छोड़कर, अब रोजगार न मिलना व्यक्ति के प्रयास में कमी होने का परिणाम नहीं रह गया है। सभी देशों को पूर्ण रोजगार का लक्ष्य लेकर ही चलना चाहिए। किन्तु जहां सामूदायिक प्रयास रोजगार मिलने की गारंटी नहीं दे पाते वहां आय और रोजगार का समन्वय दुर्बल पड़ जाता है। इक्कीसवीं शती में रोजगार के साथ समन्वय कर सामाजिक सुरक्षा या न्यूनतम समर्थन की गारंटी दे पाना संभव नहीं रहेगा।

2 यह भी कहा जा सकता है कि कार्य की संप्रेरणा तो उसी समय मुक्त होती है, जब व्यक्ति जरूरतों की मजबूरी से आजाद हो जाए। यदि काम/रोजगार आवश्यकता के कारण संभावित शोषण से स्वतंत्र होगा, तभी एक अधिक सटीक रूप से उत्पादक एवं सृजनाशील समाज की कल्पना संभव हो पाएगी।

9.5 दूसरी चिन्ता यह है : क्या आय का रोजगार से नाता तोड़ देना चाहिए? इसका ईमानदारीपूर्ण आर्थिक उत्तर तो यही है कि समाज आज भी यही तो कर रहा है, किन्तु केवल धनिक एवं विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों के लिए। कोई ऐसा समाज, जो उत्तराधिकार और बिना काम के आय स्वीकार करने की अनुमति देता हो, पहले ही आय और रोजगार का संबंध विच्छेद कर चुका है। अत: सरकार से छोटी सी अनार्जित आय पाना समाज द्वारा अनुमित विशाल एवं विविधतापूर्ण अनार्जित आयों की अपेक्षा कही कम आर्थिक एवं नैतिक दुविधापूर्ण होना चाहिए।

9.6 तीसरा तर्क, चिन्ता तो प्रतिचिन्ता ही है। यदि समाज सचमुच एक ''सामाजिक सहयोग तंत्र'' है तो क्या आय को नि:शर्त होना चाहिए? इसका व्यक्तियों के समाज के लिए योगदान से कोई संबंध नहीं होना चाहिए। संक्षिप्त सा उत्तर यही है कि व्यक्ति पूर्व उल्लेखित रूप में समाज को अपना योगदान देते ही रहेंगे। वस्तुत: UBI के हम समाज के प्रति गैर-मजदूरी योगदान की अभिस्वीकृति भी मान सकते हैं।[3] उदाहरण के लिए वर्तमान समय में गृहणियों का परिवार के निर्माण एवं संचालन में योगदान आर्थिक दृष्टि से अनाभिस्वीकृत ही रह जाता है, क्योंकि उनका काम किसी मजदूरी अनुबंध पर आधारित नहीं होता। यह बात भी महत्वपूर्ण है कि UBI की रचना धनी से गरीब को अंतरण की नहीं है। यह बहुत ही अलग है। UBI इस विचार को एक स्थूल रूप प्रदान करती है कि हम सभी नागरिक होने मात्र से एक न्यूनतम आय पाने के अधिकारी हो जाते हैं। यह एक सांझे प्रकल्प के रूप में समाज की अभिस्वीकृति मात्र है। यह अधिकारिता आग्रह करती है कि समाज की आर्थिक रचना का निरूपण इस प्रकार हो कि प्रत्येक व्यक्ति को आधारिक आय अवश्य प्राप्त होती रहे।

9.7 ये सभी तर्क वस्तुत: यही कह रहे हैं कि UBI वास्तव में सार्वलौकिक[4] एवं नि:शर्त हो और इसे सीधे अंतरण द्वारा ही लागू किया जाए।

9.8 तालिका 1 में UBI के पक्ष और विपक्ष के सैद्धांतिक एवं व्यवहारक तर्कों को बहुत स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है। हम आगे चलकर इनमें कुछ (सबके लिए नहीं) साक्ष्य भी प्रस्तुत करेंगे। हम वर्तमान कार्यक्रमों को लक्षित करने की प्रभावोत्पादकता की संख्याओं के माध्यम से सावलौकिकता के विषय में सबसे अधिक ज्वलंत साक्ष्य प्रस्तुत करेंगे। वित्तीय समाहन के लिए इसके निहितार्थों पर उसके बाद चर्चा होगी। अन्त में UBI की लागतों को स्पष्ट करने वाला आंकलन किया जाएगा। यह अध्याय इस विचार को और आगे बढ़ाने विषयक विचारों की चर्चा से समाप्त किया जाएगा। ये विचार दो बड़ी चुनौतियों से हमारा सामना कराते है : UBI की लागतों से और उस राजनीतिक आर्थिक तंत्र से जो वर्तमान कार्यक्रमों के विस्तार प्रसार को कम करने में बाधक है।

9.9 किसी UBI का प्रारंभिक संदर्भ बिन्दु तो वर्तमान यथास्थिति ही होगी। वर्तमान कार्यक्रम गरीबों की सहायता कर पाने में किस प्रकार और किस सीमा तक सफल हो पा रहे हैं?

तालिका 1 : UBI के पक्ष-विपक्ष में तर्क

पक्ष	विपक्ष
गरीबी और भेद्यता का निवारण एक साथ ही गरीबी और भेद्यता समाप्त हो जाएंगी।	**दिखावापूर्ण व्यय** परिवार, विशेषकर उनके पुरूष सदस्य, इस आय को दिखावे पर खर्च कर डालेंगे
चयन UBI हितभागियों को अभिकर्ता मानकर नागरिकों को क्षेम व्यय का अपनी दृष्टि से श्रेष्ठतम प्रयोग करने का दायित्व देती है, वस्तु रूपी अन्तरणों में यह होना आवश्यक नहीं है।	**नैतिक द्वन्द्व (श्रम आपूर्ति में कमी)** एक न्यूनतम आय की गारंटी से लोग सुस्त हो जाएंगे और वे श्रम बाजार से पलायन कर जाएंगे।

3. ग्रीस के पूर्व वित्तमंत्री यान्निस वरोफ्कीस का तो आग्रह था कि समाज के धन का उत्पादन सदस्यों के सामूहिक प्रयास से होता है, अत: UBI का वित्तीयन कराधान से नहीं बल्कि सामाजिक पूंजी के प्रवाह के रूप में होना चाहिए (Project Syndicate 2016)

4. या, जैसे कि हम आगे तर्क देंगे, कम से कम अर्द्ध सार्वलौकिक अवश्य हो जो अधिकांश परिवारों को सुलभ हो।

निर्धनों का बेहतर लक्षित करना क्योंकि सभी व्यक्तियों को लक्षित किया जाता है छूट जाने की त्रुटि शून्य है (निर्धन छोड़ दिए जाते हैं) यद्यपि समावेशन की त्रुटि 60 प्रतिशत है[5] (समृद्धि की पहुंच स्कीम तक होती है)	**नकदी द्वारा उत्पन्न लिंग विसंगति** परिवार के भीतर लिंग संबंधी मानदंड यूबीआई की हिस्सेदारी को नियंत्रित कर सकते हैं - यूबीआई खर्च करने पर पुरुषों का नियंत्रण हो सकता है। यह अन्य वस्तु अंतरणों के मामलों में हमेशा नहीं हो सकता है।
आघातों के लिए बीमा यह आय आधार स्वास्थ्य, आय और अन्य आघातों के लिए सुरक्षा नेट प्रदान करेगा।	**कार्यान्वयन** निर्धनों के बीच वित्तीय सुलभता की मौजूदा स्थिति को देखते हुए, यूबीआई बैंकिंग पद्धति पर बहुत अधिक दबाव डाल सकती है।
वित्तीय समावेशन में सुधार -भुगतान-अंतरण से बैंक लेखाकरण का अधिकाधिक उपयोग प्रोत्साहित होगा, फलस्वरूप बैंकों को अधिक लाभ होगा वित्तीय समावेशन में समानान्तर और अकारण ही सुधार होगा -ऋण कम आय स्तरों से ऋण की सुलभता की बाधा को वर्धित आय समाप्त करेगी।	**इस व्यवस्था से बाहर निकलने की राजनैतिक अर्थव्यवस्था को देखते हुए राजकोषीय लागत** एक बार शुरू की जाए तो असफल होने पर सरकार के लिए यूबीआई को समाप्त करना कठिन हो जाएगा।
मनोवैज्ञानिक लाभ -गारंटीशुदा आय दैनिक आधार पर बुनियादी आजीविका पाने के दवाब को कम करेगी।	**सर्वजनीनता के लिए राजनैतिक अर्थव्यवस्था - स्व-अपवर्जन के विचार** समृद्ध व्यक्यिों को अंतरण के प्रावधान से विपक्ष आपत्ति कर सकता है क्योंकि इससे समता और निर्धनों के लिए राज्य कल्याण के विचार को काटने जैसा लग सकता है।
प्रशासनिक दक्षता अल्प सरकारी स्कीमों की भरमार के स्थान पर यूबीआई राज्य का प्रशासनिक भार कम करेगा।	**बाजार जोखिमों के सम्पर्क में आना (नकद बनाम खाद्य)** खाद्य सब्सिडियों के विपरीत जो उत्तार चढ़ाव वाले बाजार मूल्यों के अधीन नहीं होते, नकदी अंतरण की क्रम शक्ति में बाजार के उतार-चढ़ाव से घोर कटौती की जा सकती है।

रेखाचित्र 1 : केंद्र प्रायोजित और केंद्रीय उपयोजनाएं : बजट आबंटन के अनुसार 2016-17 में जीडीपी का 5.2 प्रतिशत अंश

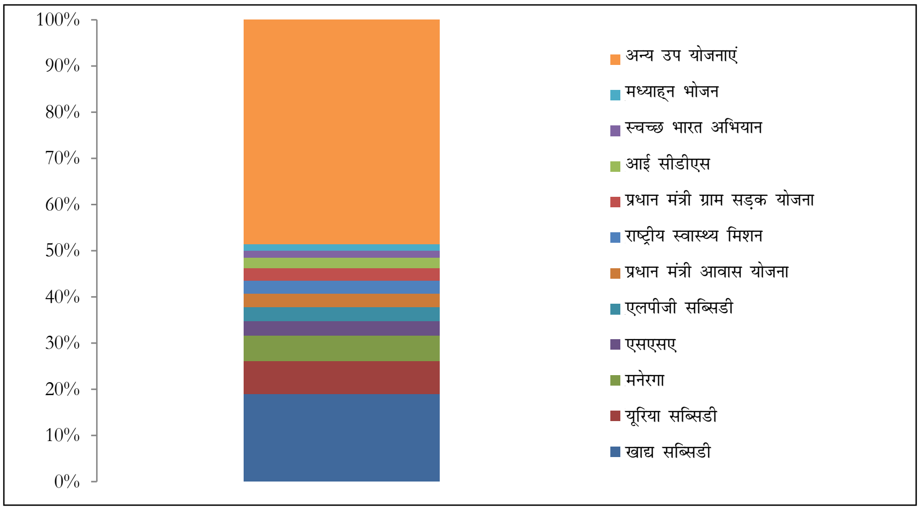

स्रोत: **बजट 2016-17**

5. हम इसी अध्याय में समाज के उपभोग व्यय की दृष्टि से निम्नतम 40 प्रतिशत सदस्यों को गरीब मान रहे हैं। UBI के सार्वलौकिक स्वरूप से 60 प्रतिशत गैर गरीब वर्ग को इसका लाभ मिल जाएगा, इसीलिए हमने अमीर समोहन की त्रुटि का मान 60 प्रतिशत आंका है।

गरीबों की बेहतर लक्षिता

जब सभी व्यक्तियों को इसका लाभ दिया जाएगा तो किसी भी गरीब के इससे वंचित रह जाने का प्रश्न ही नहीं रहता। हां धनियों के भी इसका लाभ पा जाने की संभावना 60 प्रतिशत होती है।[6]

संक्षोभों के प्रति बीमा

यह निम्नतम आय स्तर स्वास्थ्य, आय और अन्य संक्षोभों के विरूद्ध बीमे की भूमिका निभाएगा।

वित्तीय समाहन में सुधार

भुगतान का सीधे अंतरण बैंक खातों के अधिक प्रयोग को प्रोत्साहित करेगा, उससे बैंकिंग सहयोगियों के लाभ में वृद्धि होगी और वित्तीय समाहन व्यवस्था आन्तरिक रूप से सुदृढ़ होगी।

साख : अतिरिक्त आय से निम्न आय वर्ग की साख पा सकने की क्षमता में सुधार होगा।

मनोवैज्ञानिक लाभ

एक निश्चित प्राप्ति की गारंटी से दैनिक आधार पर कुछ पाने की दौड़धूप से मुक्ति मिल जाएगी।

प्रशासकीय दक्षता

अनेक राजकीय योजनाओं का स्थान एक UBI को देने से सरकार का प्रशासकीय भार हल्का होगा।

नकद प्रेरित लिंग विषमता

परिवार की अपनी लिंग आधारित मानक व्यवस्था UBI के लाभों के आन्तरिक वितरण को प्रभावित कर सकती है। पुरूष उस राशि के खर्च पर अपना हक जमा सकते हैं। जबकि वस्तु रूपी अंतरणों में यह सदैव संभव नहीं हो पाता।

क्रियान्वयन

अभी तक गरीब वर्ग की बैंक व्यवस्था से जुड़ाव की स्थिति से लगता है UBI का बैंकों पर अधिक बोझ पड़ेगा।

इसका त्याग करने की राजनीतिक अर्थतांत्रिक राजकोषीय लागत

एक बार प्रारंभ करने के बाद असफल रहने पर UBI को बंद कर पाना सरकार के लिए बहुत कठिन सिद्ध होगा।

सार्वलौकिकता का राजनीतिक अर्थशास्त्र : ऐच्छिक त्याग का विचार

धनिकों को भी अंतरण के विचार का विरोध संभव है। यह समता और गरीबों के लिए राजकीय क्षेम लाभ के विचार का विरोधी प्रतीत होता है।

बाजार की जोखिमों की आशंका (नकद बनाम खाद्य सामग्री)

खाद्य सब्सिडी का प्रावधान तो बाजार कीमतों के उच्चावचन से मुक्त रहता है, किन्तु नकद राशियों का अन्तरण उनसे अप्रभावित नहीं रह पाएगा।

9.10 पहला सबसे चौकाने वाला तथ्य तो सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं और कार्यक्रमों की विशाल संख्या है। बजट 2016-17 में 950 केन्द्र चालित योजनाएं, उपयोजनाएं चर्चित है जो कुल मिलाकर बजट आवंटन के अनुसार जीडीपी के 5 प्रतिशत राशियों का प्रयोग कर लेती हैं (रेखाचित्र 1)। इनमें अधिकांश का आकार बहुत छोटा है, सबसे बड़ी 11 योजनाओं पर ही समस्त आवंटित धन राशि का 50 प्रतिशत खर्च हो जाता है। जैसे कि रेखाचित्र 1 दिखा रहा है, खाद्य वितरण व्यवस्था में निहित सब्सिडी सबसे बड़ा कार्यक्रम है। इसके बाद यूरिया सब्सिडी और महात्मा गांधी ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का क्रम आता है। अन्य योजनाओं में फसल बीमा, छात्रवृत्तियां, राष्ट्रीय हथकरघा विकास कार्यक्रम आदि है। हां एक बात अवश्य स्वीकार करनी चाहिए कि कार्यक्रमों में से अधिकांश के विविध लाभ तुरंत गरीबी निवारण तक सीमित नहीं रहते। उदाहरण के लिए छात्रवृत्तियों में तो अन्तर्पीढ़ी आदि के प्रभाव भी निहित हैं।

9.11 यदि राज्यों द्वारा संचालित योजनाओं को भी गिन लिया जाए तो यह संख्या अतिविशाल हो जाएगी। यही

[6] पशुपालन डेरी और मत्स्य पालन विभाग तो मवेशी स्वास्थ्य एवं रोग नियंत्रण नाम की योजना 96 वर्षों से चला रहा है। इसके लिए बजट 2015-16 में 251 करोड़ रूपयों का प्रावधान किया गया था।

रेखाचित्र 2क : विभिन्न जनपदों में बसे गरीब जनसमुदाय के अनुपात

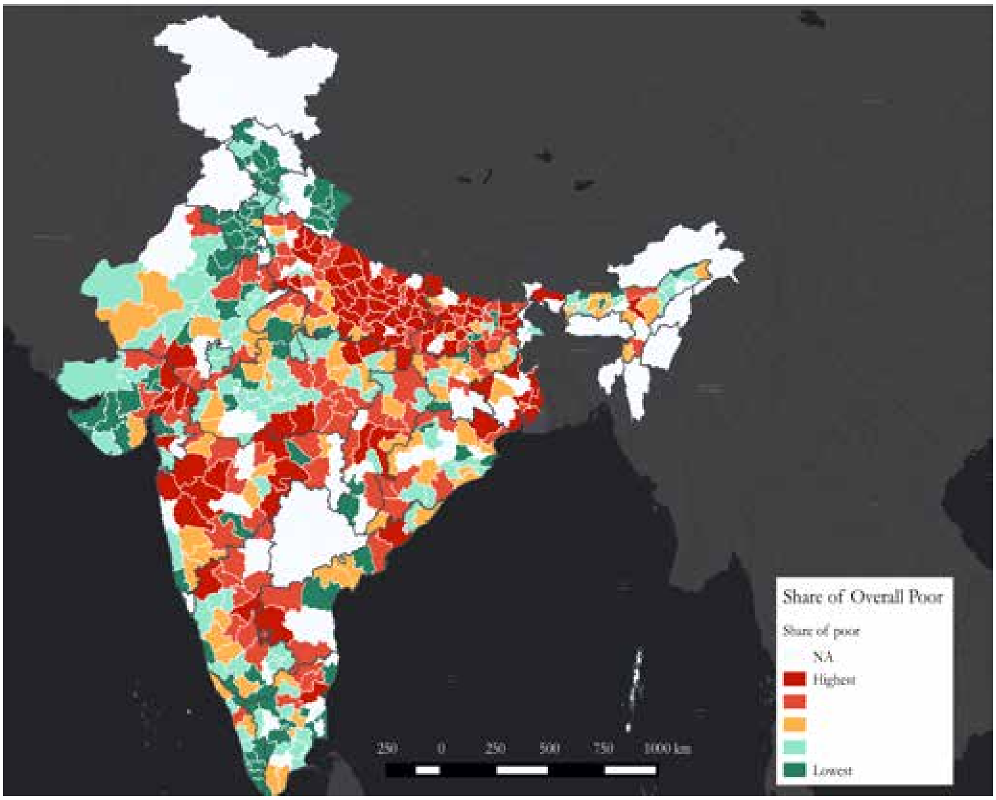

स्रोत : NSS- 2011-12, समीक्षा की गणनाएं

रेखाचित्र 2ख : अप-आबंटन : गरीबों के लिए आबंटन में त्रुटि

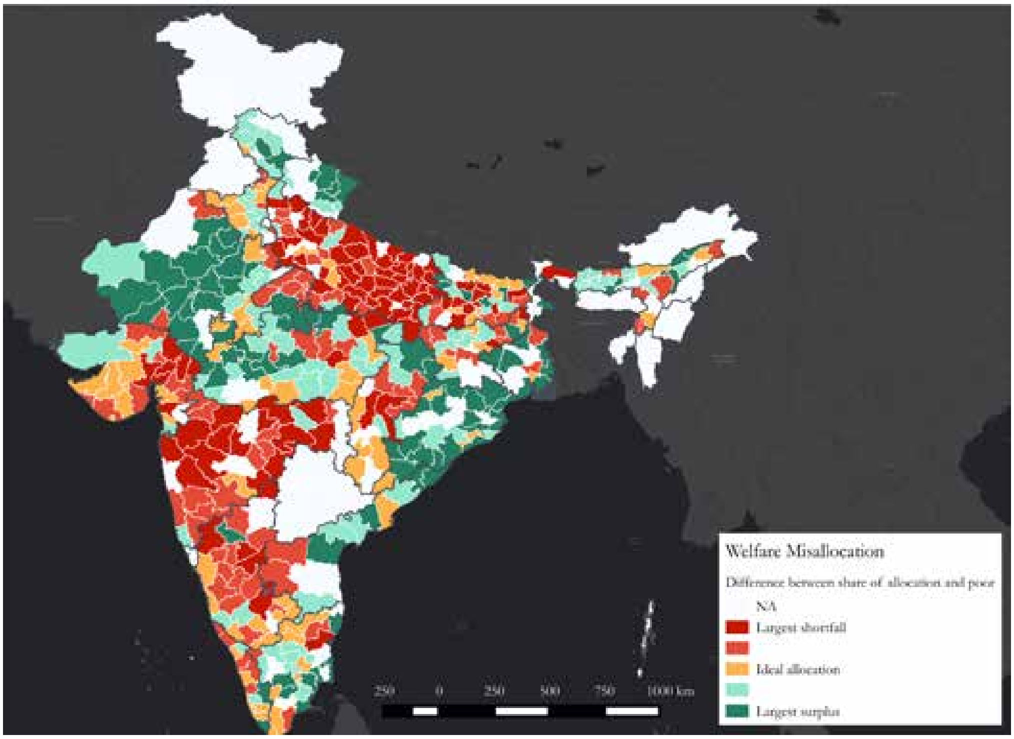

स्रोत : कार्यक्रम प्रशासन के आंकड़े, NSS- 2011-12, समीक्षा की गणनाएं

रेखाचित्र 2ग : देश के सकल गरीब जन समुदाय के 40 प्रतिशत के निवास जनपदों को आबंटित बजट का अंश (2015-16)

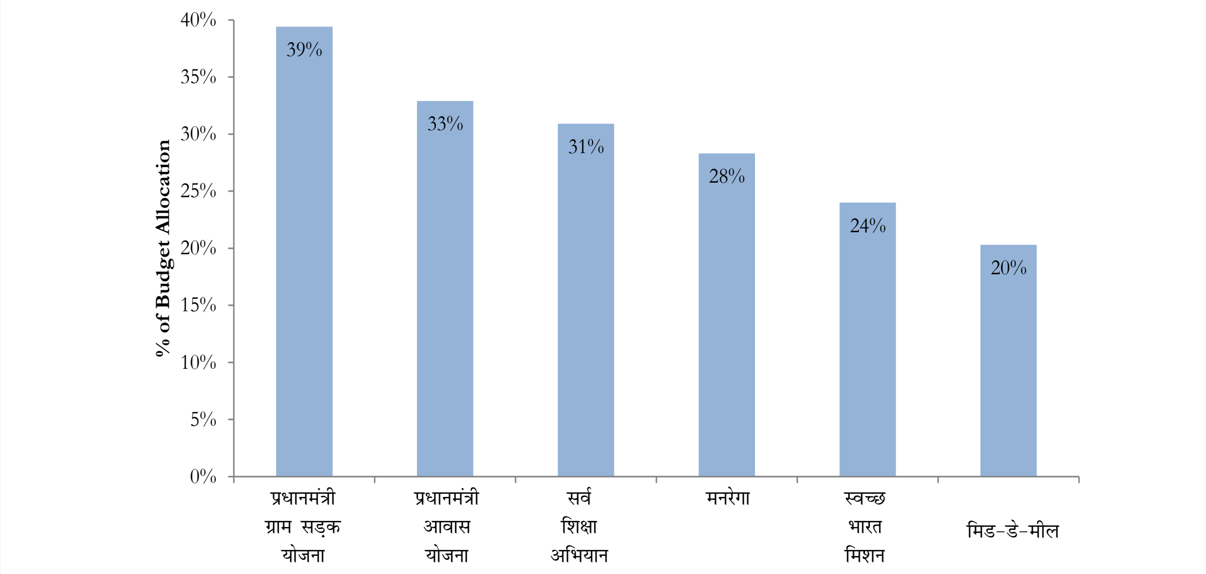

स्रोत : कार्यक्रम प्रशासन आंकड़े, समीक्षा गणनाएं

नहीं, ये योजनाएं चिरंजीवी रहती है। पिछले वर्ष की समीक्षा में यह सत्य दर्ज किया गया था कि अधिकांश योजनाएं कम से कम 15 वर्षों से चल रही थी, आधी तो 25 वर्षों से निरंतर चल रही थीं।[7]

9.12 इनकी प्रभावोत्पादकता की बात को अलग रखें तो भी इनमें से कितनी ही योजनाओं के स्थान पर एक UBI आ जाने पर नौकरशाही पर व्यय और उसके समय में भारी बचत संभव है।

9.13 किन्तु इन कार्यक्रमों की गरीबतम व्यक्ति को राहत पहुँचाने में प्रभावोत्पादकता ही सबसे बड़ा प्रश्न है। इस पर वर्तमान अध्याय कुछ नए साक्ष्य/प्रमाण प्रस्तुत करने जा रहा है।

9.14 सात सबसे बड़े केन्द्रचालित क्षेम कार्यक्रमों पर विचार करें। ये हैं : सार्वजनिक वितरण प्रणाली- खाद्य एवं घासलेट, मनरेगा, सर्व शिक्षा अभियान (SSA), मध्यान्ह भोजन योजना (MDM), प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना, और स्वच्छ भारत मिशन। कार्यक्रम प्रशासनिक आंकड़े (2015-16) तथा परिवार स्तरीय सर्वेक्षण (राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण, NSS, और भारतीय मानव विकास सर्वेक्षण, IHDS) के 2005-06 और 2011-12 के आंकड़ों का प्रयोग कर इन कार्यक्रमों की लक्ष्य दक्षता के अनुमान लगाए गए हैं।

(क) जनपदों के बीच संसाधनों का अपआबंटन

9.15 सरकारी संसाधनों के अपआबंटन पर आंकड़ों पर विचार करें। यह अप-आबंटन इसी बात को दर्शाता है कि देश के गरीबतम क्षेत्रों का पास पहुँचने वाले संसाधनों का अंश धनिक क्षेत्रों की अपेक्षा कम रह जाता है।

9.16 आगे दो रेखाचित्र 6 शीर्ष संवर्धन कार्यक्रमों, PMAY, SSA, MDM, PNGSY, मनरेगा और SBM पर व्यय के जनपदों के बीच अप-आबंटन पर नए साक्ष्य प्रदर्शित कर रहे हैं। रेखाचित्र 2क एक नवीन मानचित्र है जो 2011-12 में प्रत्येक जनपद में बसे गरीबों के जनसंख्या में अंश दिखा रहा है। लाल रंग की अधिक गहराई गरीबों की उच्चतर संख्या इंगित करती है। रेखाचित्र 2ख प्रत्येक जनपद के लिए शीर्ष 6 योजनाओं में 2015-16 में व्यय और गरीबों के अंश के बीच

7. इन रंगों द्वारा गरीबों के अंश और संसाधन अंश एवं गरीबों को मिल रहे अंश के परिमाण सूचक अंकित किए गए हैं। NSO, 2011-12 द्वारा प्रत्येक जनपद में प्रांत के गरीबों का अंश दिया गया था। यद्यपि छै आंकड़ों को जनपद स्तर का सही प्रतिनिधि नहीं माना जाता फिर भी जनपद स्तरीय उपभोग के आंकड़े वास्तविक औसत से भिन्न होने पर भी उनसे निर्मित गुणात्मक क्रमिकता, प्रतिनिधि आंकड़ों पर आधारित क्रमकिता, से अधिक भिन्न नहीं होगी। इस तुरंत अंकित मानचित्र में 434 जनपदों की जानकारी समाहित है, शेष के विषय में कोई जानकारी सुलभ नहीं थी।

बॉक्स 1 : लक्षिता का संक्षिप्त इतिहास

UBI की राजकोषीय लागतों की चिन्ता का एक तुरंत एवं आकर्षक समाधान इसे लक्षित UBI का स्वरूप प्रदान करना हो सकता है। यह केवल गरीबों और पात्र वर्गों के लिए ही एक आधारिक आय को सुनिश्चित करने वाला कार्यक्रम हो सकता है। किन्तु भारत में केवल गरीबों को लक्षित करने वाले क्षेम कार्यक्रमों का इतिहास गंभीर संदेहों से भरा है। यह लक्षित करने का कार्य 1992 में स्व-घोषित आय के आधार पर गरीबों की सूचियां बनाने से आरंभ हुआ था। आगे 1997 और 2002 में बहु आयामी कसौटियों के आधार पर सर्वेक्षणों का प्रयोग किया गया। 2002 की गरीबी रेखा से नीचे की पहचान की कसौटी सबसे कठिन थी, किन्तु इसको लेकर भी अनेक आलोचनाएं हुई है। अध्ययनों और सरकार के अपने अंकेक्षणों ने आंकड़ों की हेराफेरी, भ्रष्टाचार को स्पष्ट करते हुए बताया है कि वास्तविक BPL परिवारों को व्यवस्था से बाहर धकेल कर इनके लाभ धनियों की ओर प्रवाहित होते रहे हैं। लक्षिता न केवल दक्षताहीन रही बल्कि विषमताकारी भी बन गई। यह तो धोखाधड़ी का एक ऐसा लाइसेंस बन गई जिसने बिचोलियों और छोटी-छोटी हेराफेरियों से भरा एक पूरा तंत्र पैदा कर लिया। इस बात की पहचान कर उस समय की सरकार ने सरलता से पहचाने जाने वाले लक्षणों के आधार पर और सामाजिक आर्थिक जाति सर्वेक्षण (2011) की सरल अंक निर्धारण कसौटी को आधार मान गरीबों का आंकलन करने का प्रयास किया। साथ ही व्यक्ति स्तर पर लक्षिता की कठिनाइयों को जानते हुए तमिलनाडु और छत्तीसगढ़ जैसे प्रांतों ने PDS और कुछ अन्य सरकारी योजनाएं सार्वलौकिक बना दीं। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 तो एक संक्षिप्त से जन समुदाय तक ही हितलाभ लक्षित करने के विचार को पूरी तरह नकार रहा है। इसने लगभग 70 प्रतिशत परिवारों को त्त्वै से जोड़ दिया है, केवल प्रत्यक्ष रूप से समृद्ध वर्ग इससे बाहर रखे गए हैं। बहिष्कृति की समस्या से निपटने की यह समाहन त्रुटि स्वीकार करने की विधि गांधी जी के मंत्र के अधिक अनुरूप है, यहां गरीबतम को अधिकतम लाभ होता है। इस विचार के समर्थन में कुछ तथ्यात्मक साक्ष्य भी हैं, हिमांशु और सेन, 2013, ने PDS के वितान और उससे क्षरण के सहसंबंध का निरूपण करते हुए पया है कि वितान जितना विस्तृत होता है, क्षरण उतना ही कम रहता है।

अन्तर को अंकित कर रहा है (अन्तर = सकल व्यय में अंश (–) सकल रूप से गरीबों का जनसंख्या में अंश। इस अंतर को ही हम अप-आबंटन का मापक मानते हैं। आदर्श रूप से जिस जनपद में 20 प्रतिशत गरीबों की संख्या बसी हो, वहां पर कुल व्यय का 20 प्रतिशत अंश ही खर्च होना चाहिए (रेखाचित्र 2ख के ये जनपद पीले रंग से चित्रित हैं)। यदि यह अंतर धनात्मक हो तो इसका अर्थ है कि इस जनपद को मिलने वाला संसाधन अंश जनसंख्या में गरीबों के अनुपात से अधिक है (हरा रंग)। ऋणात्मक अन्तर द्वारा यही सूचित होता है कि उस जनपद में गरीबों पर हो रहा व्यय अपर्याप्त है। इन दोनों चित्रों की तुलना से यह बात तुरंत स्पष्ट हो जाती है कि गरीबतम जनपद संसाधनों की अपर्याप्तता से जूझ रहे हैं। उत्तर प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड के कुछ भाग, पूर्वी महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और कर्नाटक में गरीबों का जनसंख्या अंश उच्च है, किन्तु इन्हें संसाधनों का समान से कम अंश मिल रहा है, दोनों मानचित्रों में ये क्षेत्र लाल रंग से चिन्हित हैं। उड़ीसा और राजस्थान के कुछ अधिक गरीब निवासियों वाले जनपदों को अनुपात से अधिक संसाधन इन 6 योजनाओं पर व्यय के लिए मिल रहे हैं।

9.17 इस प्रकार मिल रही अप-आबंटन विषयक अंतर्दृष्टि का परिमाण निर्धारण करने के लिए हम एक अपआबंटन मापक की परिभाषा कर रहे हैं। यह है राज्य द्वारा पिछड़े जनपदों को आबंटित संसाधनों का अनुपात। इन्हीं जनपदों में गरीबजन अनुपात अधिकतम है और यह 40 प्रतिशत गरीबजन समुदाय के समान बन जाता है। रेखाचित्र 2ग में पिछड़े जनपदों को 2015-16 में इन्हीं योजनाओं के अंतर्गत आबंटित धन राशियां अंकित की गई हैं। इन आबंटनों के प्रतिगामी स्वरूप को आप सहज ही समझ जाएंगे। किसी योजना के अंतर्गत गरीबतम जनपदों को सकल संसाधनों का 40 प्रतिशत अंश नहीं मिल पाया। वस्तुतः MDM तथा SBM के लिए तो उनका अंश 25 प्रतिशत से भी कम रहा (परिशिष्ट-1 में चित्रित ऐसे ही तुरंत चित्रित मानचित्र इसी बात पर और बल दे रहे हैं : इनमें विभिन्न जनपदों की गरीब जनसंख्या और उनमें प्रति गरीब व्यय की तुलना की गई है, साथ ही इसमें प्रत्येक योजना के अंतर्गत अप-आबंटन पर भी विस्तृत जानकारी का चित्रांकन किया गया है)।

9.18 अप-आबंटन की एक बड़ी व्याख्या प्रांत की संसाधन उपयोग क्षमता है, जनपदों को आबंटित राशियां उनकी खर्च कर पाने की क्षमता पर निर्भर रहती है : धनी जनपदों में योजनाएं लागू करने की प्रशासन क्षमता अधिक विकसित होती है।

9.19 पिछले कुछ समय से जनपदानुसार आबंटन में कुछ सुधार दिखाई दे रहे हैं; संभवतः प्रशासन व्यवस्था की क्षमता सुधर रही है। प्रधानमंत्री आवास योजना के अंतर्गत गरीबतम जनपदों को आबंटित राशियां अब 32

बॉक्स 2 : मनरेगा में 2014-15 में आए सुधार

मनरेगा योजना ने अपने पिछले दो वर्षों के विकास क्रम में स्थाई उत्पादक परिसंपदाओं के निर्माण और आजीविका के अवसरों की विविधता को बढ़ावा दिया है। PMGSY और PMAY जैसे संरचना कार्यक्रमों के साथ कदम मिलाते हुए सार्वजनिक निर्माण के कार्यों पर ध्यान देने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और कृषि एवं अनुषांगिक कार्यों जो इस योजना में अपनाया गया है।

यह कार्यक्रम स्वलक्षित है। प्राय: अभावग्रस्त परिवारों के दिहाड़ी मजदूरी पर निर्भर रहने वाले श्रमिक ही इसे अपनाते हैं। अकाल प्रभावित क्षेत्रों में तो अब यह कार्यक्रम 100 की बजाय 150 दिनों तक रोजगार प्रदान कर रहा है। पिछले दो वर्षों में इस कार्यक्रम में ये प्रौद्योगिकीय और कार्यविधिगत सुधार किए गए हैं :

- 10.9 करोड़ सक्रिय कर्मियों के मनरेगा कार्य कार्ड डिजिटलाइज किए गए और 8.7 करोड़ कर्मियों के आधार कार्ड उसके साथ जोड़ दिए गए।
- चार करोड़ कर्मियों को परिश्रमिक आधार भुगतान सुविधा के माध्यम से होने लगा है।
- सितंबर 2016 के बाद से 39 लाख के लगभग मनरेगा निर्मित परिसंपदाओं का भौगोलिक चिन्हांकन पूर्ण हो गया है। ये उत्तरदायित्व की भावना और पारदर्शिता को बढ़ावा देने के लिए सभी को स्पष्ट रूप से बता दिए गए हैं।
- 95 प्रतिशत मनरेगा मजदूरी हितभागियों के खातों में सीधे जमा होने लगी है। अब मजदूरी की राशियों के मनरेगा तंत्र से बाहर क्षरण की संभावनाएं कम हो गई हैं।
- लगभग 68 प्रतिशत सक्रिय मनरेगा कार्डों की जांच और उनकी जानकारी का नवीकरण हो चुका है।

परिणामस्वरूप पूरे हो गए कार्यों की संख्या 25-30 लाख वार्षिक से वर्तमान वर्ष में 48 लाख तक पहुंच चुकी है। इनमें से 70 प्रतिशत प्रकल्प तो कृषि एवं अनुषांगिक कार्यों के हैं। यह भी 2013-14 के 50 प्रतिशत से ऊपर उठा हुआ अनुपात है। साथ ही मनरेगा में महिलाओं की भागीदारी 2006-07 के 40 प्रतिशत से बढ़कर 2016-17 में 56 प्रतिशत हो चुकी है।

प्रतिशत से बढ़कर 33 प्रतिशत हो गई है (यह 3.1 प्रतिशत की वृद्धि है)। अन्य योजनाओं में भी संभव है इसी प्रकार के सुधार हो रहे हों।

(ख) अप-आबंटन के दुष्परिणाम : अधिक पात्र हितभागी वर्ग का वंचित रह जाना

9.20 अपआबंटन के संसाधनों को गरीब समाज की ओर लक्षित करने पर गंभीर निहित प्रभाव रहते हैं। इस अपआबंटन के एक स्वभाविक परिणाम को आर्थिक रचनाओं में 'बहिष्कृति त्रुटि' का नाम दिया गया है। अर्थात जो वास्तव में गरीबजन हैं, वे कार्यक्रम के हितलाभों तक पहुँचने से वंचित रह जाते हैं। यदि एक अधिक गरीबजन समुदाय वाले राज्य या जनपद को कम साधन आबंटित होंगे तो यह निश्चित प्राय: है कि कितने ही पात्र गरीब परिवार उस योजना से बाहर ही रह जाएंगे।[8] उदाहरण के लिए बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश प्रांतों पर विचार करें। इनमें देश के समस्त गरीबजन समुदाय का आधा अंश बसा है किन्तु, 2015-16 में मनरेगा पर देश भर खर्च राशि का केवल तीसरा अंश ही इन राज्यों को प्राप्त हो पाया था।[9] इसका एक निहितार्थ तो निश्चित है : अनेकों गरीब परिवार इसके लाभ से वंचित रह गए। वर्ष 2011-12 का इस प्रकार की बहिष्कृतित्रुटि का एक अनुमान बता रहा है कि जनसंख्या का निम्नतम 40 प्रतिशत भाग सार्वजनिक वितरण प्रणाली का लाभ नहीं उठा पाता।[10] इसी वर्ष के मनरेगा के बहिष्कृत के आंकड़े 65 प्रतिशत थे (पीडीएस तथा मनरेगा से 2011-12 में अपप्रवाह का विस्तृत आंकलन परिशिष्ट 2 में किया गया है)।

9.21 लक्षिता की दक्षता में 2011-12 के स्तर से बहुत बड़े सुधारों की आवश्यकता है और यहां बहिष्कृति की त्रुटियों के निवारण की दिशा में दो सबसे बड़े कार्यक्रमों, PDS और मनरेगा में हुई प्रगति को भी स्वीकार करना

---

[8] वैकल्पिक रूप से हम कह सकते हैं कि इन जनपदों में प्रतिव्यक्ति लाभ अन्य की अपेक्षा कम रहा।

[9] तकनीकी दृष्टि से तो मनरेगा का स्वरूप सार्वलौकिक होने के कारण इसमें कोई बहिष्कृति त्रुटि नहीं होनी चाहिए। यह कागज पर तो सवयं लक्षित प्रकल्प है, मांग चालित है, कोई भी व्यक्ति जो योजना की मजदूरी दर पर काम करने को तैयार हो 100 दिन तक का काम पा सकता है।

[10] यह चावल, गेहूँ और घासलेट की बहिष्कृति त्रुटियों की भारित औसत है।

चाहिए। बॉक्स 1 ने देश में लक्षिता को लेकर आई समस्याओं और PDS के विभिन्न राज्यों में प्रसार विस्तार पर उपलब्ध साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं। इसने बहिष्कृति त्रुटियों को कम किया है और संभव है कि PDS व्यवस्था से क्षरण भी कम हुआ है। हिमांशु और सेन (2013) का अनुमान है कि PDS से क्षरण अब 54 प्रतिशत से घटकर 34.6 प्रतिशत रह गया है। लगभग 20 प्रतिशत बिन्दुओं की यह गिरावट 7 वर्षों (2004-2011) के बीच संभव हुई है। इसी के रेखीय बाह्य प्रेक्षण से 2016 तक और आगे 20.8 प्रतिशत की कमी की संभावना प्रतीत होती है।[11] गिरावट का यह आंकड़ा भी एक न्यूनांकन सिद्ध हो सकता है। यह पिछले 5 वर्षों की प्रौद्योगिकी के परिवर्तन और व्यवस्था के प्रसार की तो गणना ही नहीं कर रहा। कुछ सर्वेक्षण दिखा रहे हैं कि समाज के निम्नतम 40 प्रतिशत को प्राप्त हो रही PDS सब्सिडी का अंश 2011-12 के बाद से बहुत सुधरा है। भारत के 6 राज्यों के 3600 परिवारों के सर्वेक्षण का अनुमान है कि 2016 में PDS लाभार्थी अपनी अधिकारिता के 92 प्रतिशत के समान खाद्यान्न प्राप्त कर पा रहे थे।[12]

9.22 इसी प्रकार मनरेगा भी पिछले कुछ समय से बहुत बदला है। बॉक्स 2 इसकी निगरानी की प्रौद्योगिकी, परिसंपदा सृजन और रोजगार सृजन में पिछले दो वर्षों में आए परिवर्तनों की समीक्षा कर रहा है।

V. एक UBI इन समस्याओं पर किस प्रकार पार पा सकता है?

9.23 **कम गरीब निवासियों वाले जनपदों को अधिक आबंटन :** UBI अपनी रचना के कारण ही इस प्रकार के अपआबंटन की समस्या को निपटा सकता है। हमारे वर्तमान अध्याय में प्रस्तुत रूपरेखा के अनुसार तो UBI ऊपर से अन्तरण मात्र होगा।[13] इसे पाने के लिए हितभागियों को दौड़धूप नहीं करनी होगी।[14] यह प्रक्रिया बेहद सरल होगी : हितभागियों को जब वे चाहें, अपने बैंक खाते से रूपए निकालने भर का 'कष्ट' उठाना होगा। उन्हें किसी नौकरशाही तंत्र में चक्कर नहीं काटने होंगे। इस अत्यंत सरलता का एक और भी अर्थ होगा, योजना की सफलता अन्य कार्यक्रमों की भांति स्थानीय नौकरशाही की कुशलता पर निर्भर नहीं होगी। यही नहीं सार्वलौकिक स्वरूप के कारण UBI प्रशासन के उस भार को भी समाप्त कर देता है, जहां उसे गरीबों की गैर-गरीब वर्गों से पृथक रूप से पहचान करनी होती थी।

9.24 **तंत्र से क्षरण :** संकल्पना से ही UBI में क्षरण की संभावना नहीं होती।[15] यह रकमें सीधे ही सभी हितभागियों के खातों में जमा हो जाती हैं। क्षरण की संभावना इसलिए भी घट जाती है कि इसमें प्रशासन के पास 'अपना विवेक' प्रयोग करने की गुजाइश नहीं होती। यही नहीं, UBI का विशाल वितान सरकार को अधिक नागरिकों के प्रति उत्तरदायी बनाता है। इसलिए भी क्षरण कम होगा और अंत में, क्षरण की निम्न संभावना के कारण भी UBI की निगरानी अन्य योजनाओं से सरल होगी।

9.25 हां, एक समस्या 'अंतिम मील' के अन्तर की रहती है। हितभागियों को अपने खाते से धन निकालने बैंक शाखा, डाकघर BC का सहारा लेना होगा। भाग VII ने इस 'अंतिम मील' की समस्या पर विस्तार से चर्चा की है। अंततः JAM तंत्र का प्रयोग प्रत्येक व्यक्ति को सीधे खाते में अन्तरण के लिए हो सकता है (देखें भाग X घ, यहां जनधन तथा आधार संबंधित खातों के प्रसार के विषय में जानकारी दी गई है)।

9.26 **बहिष्कृति की त्रुटि :** अपआबंटन और बहिष्कृति के बीच गहरा नाता रहा है। अतः संसाधन आबंटन प्रणाली को सरल बनाने वाला UBI कार्यक्रम बहिष्कृति की त्रुटियों का भी निवारण कर सकता है। यही नहीं, इस कार्यक्रम के सार्वलौकिक होने के कारण UBI के अंतर्गत बहिष्कृति अन्य लक्षित योजनाओं की अपेक्षा बहुत कम रह पाएगी (देखें बॉक्स 1)।[16]

---

11 यह आंकड़ा 2013 में दस राज्यों के सर्वेक्षण में अनुमानित क्षरण (20 प्रतिशत) के बहुत निकट लगता है।

12 छत्तीसगढ़, ओडिशा, बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश और पं. बंगाल

13 राजकोषीय प्रभाव और केन्द्र राज्य सौदेबाजी पर भाग ग्घ में देखें।

14 एक कार्यशील JAM तंत्र धन को सीधे हित भागियों के खातों में जमा कर देगा।

15 अभी कुछ कार्यक्रमों में सीधे खाते में रकम जमा कराना प्रारंभ होने से भ्रष्टाचार में कमी के प्रमाण मिल रहे हैं। देखें बैनर्जी आदि, 2016, नाइहोज आदि, 2016

16 UBI में बहिष्कृति का कारण व्यक्तियों की पहचान का सत्यापन हो सकता है। देखें X घ, यहां आधार द्वारा सत्यापन की वर्तमान अवस्था बताई गई है।

VI. जोखिम के विरूद्ध बीमा और मनोवैज्ञानिक लाभ

9.27 गरीब परिवारों (वास्तव में तो गरीबी रेखा से ऊपर के बहुत से परिवारों को भी) अचानक विचित्र संक्षोभ भुगतने पड़ जाते हैं। स्वास्थ्य खराब होना, नौकरी छूट जाना और प्राकृतिक आपदाएं तथा राजनीतिक जोखिमें इन्हीं में हैं। एक अध्ययन के अनुसार भेद्यता का गरीबी घटक (अचानक आय/उपभोग में कमी) विचित्र एवं सकल घटकों पर भारी पड़ता है (स्वैन और फ्लोरो, 2008), सकल भेद्यता का 80 प्रतिशत अंश गरीबी का ही परिणाम होता है। झा, नागराजन और प्रधान (2012) ने बताया है कि देश भर के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा आय से कुछ अधिक वाले परिवार एकाधिक संक्षोभों को झेलते ही रहते हैं। इनमें भी सबसे अधिक भार सकल स्तरीय संक्षोभों, फसल की हानि, जल संक्रमित रोग, संपत्ति की हानि, चक्रवाती तूफान, अकाल आदि का पड़ता है। उनके आंकड़ों के अनुसार 60 प्रतिशत व्यक्ति अपनी बचत की राशियों का प्रयोग कर इन संक्षोभों का सामना करते हैं। सरकारी सहायता एक बहुत कम अंश वाली द्वितीय सुरक्षा है और मुश्किल से 10 प्रतिशत परिवारों को इसका लाभ मिल पाता है। तीसरा सहायता स्रोत मित्रों से उधार है, इसका योगदान 6 प्रतिशत रहता है। ऐसे संक्षोभों की निरंतर बनी विभीषिका के कारण एक गारंटीपूर्ण आधार की आय समाज के गरीबजन समुदाय के लिए तो बीमा सिद्ध हो सकता है।

9.28 साथ ही एक UBI के कुछ मनौवैज्ञानिक लाभ भी रहते हैं। विश्व विकास रिपोर्ट, 2015 का तर्क है कि गरीबी में ही जीवन बिता रहे लोगों को (क) जीवन की दैनिक समस्या से इतना जूझना पड़ता है कि उनके पास महत्वपूर्ण निर्णयों का आधार बन सकने वाले संसाधन ही नहीं बच पाते; (ख) उनका अपना आत्मबोध इस प्रकार कुंठित हो जाता है कि उनकी महत्वाकांक्षाएं/अपेक्षाएं भी मृत प्राय: हो जाती हैं; और (ग) कुछ सामाजिक पूंजी में निवेश के मानक तो उनके लिए निजी सुअवसरों को ही अलभ्य बना देते हैं।

9.29 उपर्युक्त सभी कथनों को लेकर कुछ प्रमाण उपलब्ध हैं। मणी और अन्य, 2013 ने दिखाया है कि किस प्रकार फसल की कीमत नहीं पा सके तमिलनाडू के गन्ना किसान उद्भ्रांत चित्त हो अनेक प्रकार की पहचान/बूझ की परीक्षाओं में असफल हो जाते हैं (उनके प्रज्ञालब्धि अंक 10 बिन्दु कम रह जाते हैं)। फसल के दाम मिलने पर वह सामान्य हो जाते हैं। उस समय उनपर कर्ज का बोझ नहीं रहता और उनकी जेब में धन भी होता है। अनेक लेखकों ने विभिन्न परिवेशों में किसानों की ऐसी ही स्थिति पाई है।

9.30 गरीबी के कारण निम्न प्रज्ञा-संज्ञान पटल का स्वभाविक परिणाम निर्णय क्षमता की हानि होता है। अत: गरीबी का परिणाम अधिक गरीबी के रूप में मिलता है। वास्तव में हौशोफर और शपीरो (2015) ने कीनिया में निशर्त नकद अन्तरण के अध्ययन में पया है कि इसका सबसे बड़ा सकारात्मक प्रभाव खुशी, जीवन से संतुष्टि और तनाव मुक्ति द्वारा मापित मनौवैज्ञानिक क्षेम पर पड़ता है। दैनंदनिक निर्वाह के जुगाड़ में व्यस्त मानव मस्तिष्क को निश्चित आय अन्य कार्यों के लिए मुक्त कर देती है, फिर तो वह अपने कौशल उन्नयन और बेहतर रोजगार की तलाश के बारे में भी सोचने लगता है।

VII. बेहतर वित्तीय समाहन

(क) बैंकों के लिए अधिक लाभप्रद[17]

9.31 आंकलन दिखा रहे हैं कि यदि भारत में रू. 12000 प्रतिव्यस्क प्रतिवर्ष की UBI व्यवस्था हो तो निकटतम व्यापार सहयोगी (BC) से अन्तर मात्र 2.5 किलोमीटर रह जाएगा। यह UBI की राशि आधी होने पर अन्तर, अर्थात 4.5 किलोमीटर के आधे के निकट है। वास्तव में यह प्रभाव और अधिक सशक्त होगा, क्योंकि UBI कार्यक्रम केवल वयस्कों तक सीमित नहीं रहता।

9.32 प्रधानमंत्री जनधन योजना के प्रारंभ के बाद देश में वित्तीय समाहन के स्तर में बहुत सुधार आया है (FII-2015) वित्तीय समाहन अंतदृष्टि के अनुसार अब देश के दो तिहाई वयस्कों के अपने बैंक खाते खुल चुके हैं और उनमें से 40 प्रतिशत अपने खातों का नियमित प्रयोग भी करने लगे हैं।[18] यदि पूरे देश में बैंक खाता स्वामियों का वितरण देखें तो 50 प्रतिशत वयस्कों के खाते हैं, किन्तु मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार और कुछ उत्तरपूर्वी राज्य इस राष्ट्रीय औसत से कुछ पीछे हैं। किन्तु यदि सक्रिय प्रयोग की बात करें तो प्राय: सभी राज्यों में इस प्रयोग

[17] गेट्स प्रतिष्ठान से प्राप्त जानकारी के आधार पर

[18] पिछले 90 दिनों में कम से कम एक लेनदेन अवश्य हुआ है।

का अनुपात 50 प्रतिशत से कम ही है। और अधिक गहराई से देखें तो सक्रिय प्रयोग पुरूषों में, शहरी क्षेत्रों में और गरीबी से ऊपर वाले वर्गों में अपेक्षाकृत अधिक है। हमें लगता है कि सक्रिय प्रयोग में दो बाधाएं होती हैं : व्यक्तियों की बैंक शाखाओं से भौतिक दूरी तथा दूसरे, प्रति बैंक ग्राहकों की संख्या।

9.33 **अन्तर (फासला) :** रेखाचित्र 3 दिखा रहा है कि 2015 में अधिकांश राज्यों में व्यक्ति किसी भी बैंकिंग संपर्क बिन्दु से 3-5 किलोमीटर के अन्तर पर रहते थे (बैंक शाखाएं, ATMs और BCs)। मध्य प्रदेश और राजस्थान में तो किसी भी औपचारिक वित्तीय सेवा के लिए 5 किलोमीटर से अधिक चलकर जाना पड़ता था। आश्चर्य की बात है कि इस मामले में उत्तर प्रदेश, बिहार और छत्तीसगढ़ जैसे प्रायः पीछे रहने वाले प्रांत औसत से बेहतर चित्र प्रस्तुत कर रहे हैं। यहां व्यक्ति बैंकों के अधिक निकट बसे हैं। इसका कारण, जैसा कि अगले अनुच्छेद में बताया जा रहा है, इन राज्यों की अधिक जनघनता हो सकती है।

रेखाचित्र 3 : निकटतम बैंक संपर्क बिन्दु से दूरी (निकटतम बैंक शाखा से किलोमीटरों में दूरी)

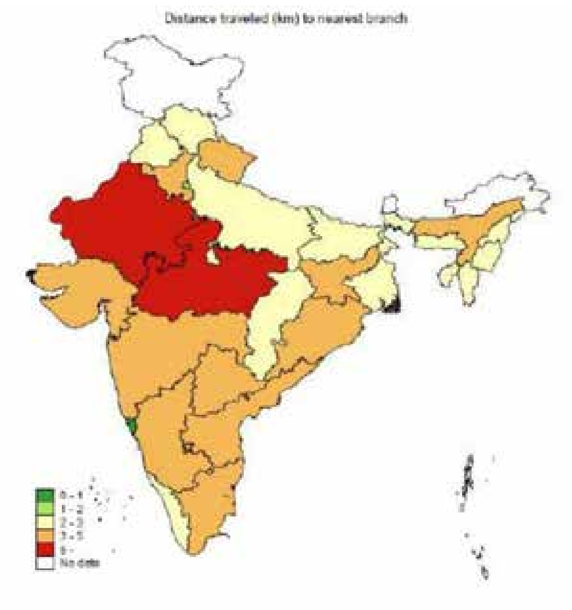

स्रोत : **Financial Indusion Insights, 2015**

9.34 **व्यक्ति प्रति बैंक :** रेखाचित्र 4 में वर्तमान वर्ष के प्रांत स्तर पर प्रति बैंक व्यक्तियों की संख्या का योग दिया गया है। यह संख्या जितनी अधिक होती है, बैंक व्यवस्था पर उतना ही अधिक भार होता है। यह औसत बैंक के संपर्क में आ सकने वाले जन समुदाय का

रेखाचित्र 4 : प्रति बैंक व्यक्तियों की संख्या (2016)

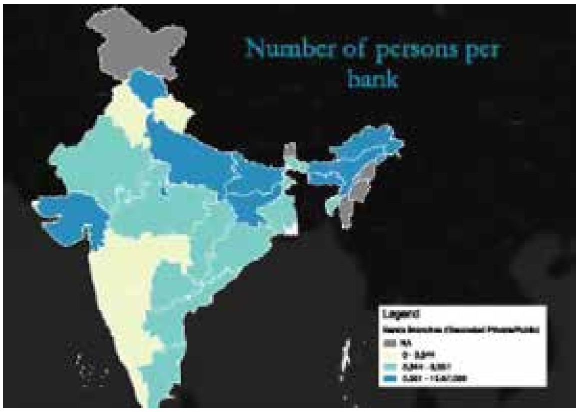

स्रोत : **भारत सरकार**

सूचक है। यहां मध्य प्रदेश, असम, अरूणाचल प्रदेश, मेघालय, हिमाचल प्रदेश, आंध्र प्रदेश तथा यूपी, बिहार जैसे अधिक जनसघन राज्यों का निष्पादन औसत से हीन पाया गया है।

9.35 कुल मिलाकर दोनों रेखाचित्र यह दिख रहे हैं कि बैंक सेवाओं के प्रसार के बावजूद उनमें कही अधिक सुधार करने की आवश्यकता बनी हुई है। सभी गरीबों का बैंकों से सीधा संपर्क बनाने की मंजिल अभी दूर है।

9.36 भुगतान पक्ष पर वित्तीय समाहन का संवर्धन मांग और आपूर्ति पक्षों की दोहरी चुनौति है। मांग पक्ष पर तो खाता धारियों के सामान्य व्यवहार में बदलाव आना चाहिए ताकि वे अपने खातों का अधिक बार प्रयोग करना प्रारंभ करें। आपूर्ति पक्ष पर बैंकों के लिए बैंकिंग सेवाएं प्रदान करना लाभप्रद होना चाहिए। बैंक अब BCs का प्रयोग कर अधिकाधिक स्तर पर 'अंतिम मील' की सेवाएं प्रदान करने लगे हैं। आधार प्रयोगी एकीकृत भुगतान संरचना (UPI) पर एक कार्यदल ने BCs को दिए जा रहे कमीशन को बढ़ाने की सिफारिश की है ताकि उनके काम में भी लाभ संभव हो सके। यह लाभ प्रदता प्रति BC संभव बनाए गए लेनदेनों की संख्या पर ही निर्भर करती है और ऐसे परिदृश्य की रचना हो सकती है जहां इन लेनदेनों में वृद्धि के माध्यम से वित्तीय समाहन हो सके। यह एक स्वीकार्य संकल्पना प्रतीत होती है कि जैसे व्यक्तियों को एक UBI प्रदान किया जाता है, वैसे ही लेनदेन की संख्याओं और सरकारी अंतरणों से प्राप्ति में एक अंतरंग वृद्धि होगी। इससे BCs की अचल लागतें कम होंगी और लाभप्रदता में सुधार होगा।

यह उनकी सेवाओं का और प्रसार संभव बनाएगा।

9.37 रेखाचित्र 5 इन परिदृश्यों का प्रतिनिधित्व करता है : सार्वलौकिक वित्तीय समाहन (एक BC तक पहुँच) करने के लिए प्रतिव्यक्ति रू. 4800 का वार्षिक अन्तरण ही पर्याप्त रहेगा, किन्तु यहां कमीशन दर बहुत उच्च अर्थात 10 प्रतिशत रखनी होगी। एक उच्च UBI होने पर कम कमीशन दर से भी काम चल जाएगा। इसी के समतुल्य एक परिदृश्य है जहां 90 प्रतिशत वित्तीय समाहन के लिए UBI अंतरण रू. 4800 से रू. 12000

रेखाचित्र 5 : वित्तीय समाहन, अन्तरण का आकार तथा प्रतिव्यक्ति आधार पर BC का कमीशन

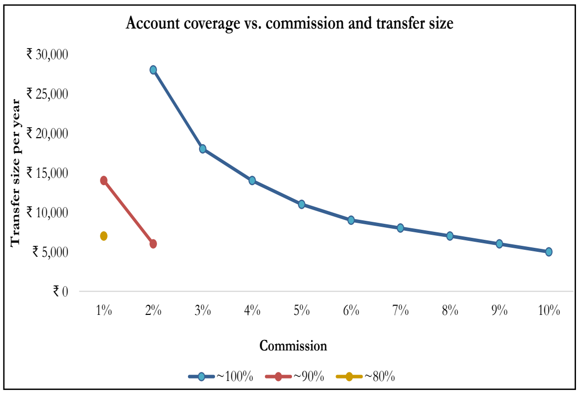

स्रोत: गेट्स फाउंडेशन कैल्कुलेशन

करना होगा ओर औसत ग्राहक का निकटतम BC से फासला 4.5 से घटकर 2.5 किलोमीटर रह जाएगा। यह भी स्पष्ट है कि उच्चतर UBI पर तो मात्र 1 प्रतिशत की कमीशन दर भी वित्तीय समाहन में नाटकीय सुधार कर सकती है।

(ख) औपचारिक साख सुविधा तक पहुँच

9.38 एक UBI उच्च आय के रूप में साख संरोधों को शिथिल कर सकता है। ऋण एवं निवेश सर्वेक्षण के नवीन, अभी-अभी जारी आंकड़ों (2013) के अनुसार हम जैसे-जैसे उपभोग के स्तरानुसार आगे बढ़ते हैं, यह देखा गया है कि अनौपचारिक ऋण लेने वाले किसानों का अनुपात गिरता जाता है और औपचारिक ऋण लेने वालों के अनुपात में वृद्धि होती है। विभिन्न शतमंकों में किसानों के अनुपात और ऋणों के औसत आकार में समानता ही है, 78वें शतमंक में पहुंच कर ऋण के माध्यिका आकार में एक उच्च स्तर की ओर दिग्वर्तन होता है। इस स्तर तक ऋण का माध्यिका मान शून्य था, किन्तु यहां पहुँचकर औपचारिक ऋण अंश में अचानक उछाल आ रहा है (रेखाचित्र 7)। इस प्रकार की विसंगति का एक महत्वपूर्ण निहितार्थ है : यदि सभी का उपभोग इस स्तर पर बढ़ा दिया जाए तो औपचारिक ऋण तक

रेखाचित्र 6 : व्यय के साथ-साथ औपचारिक बैंकिंग में वृद्धि

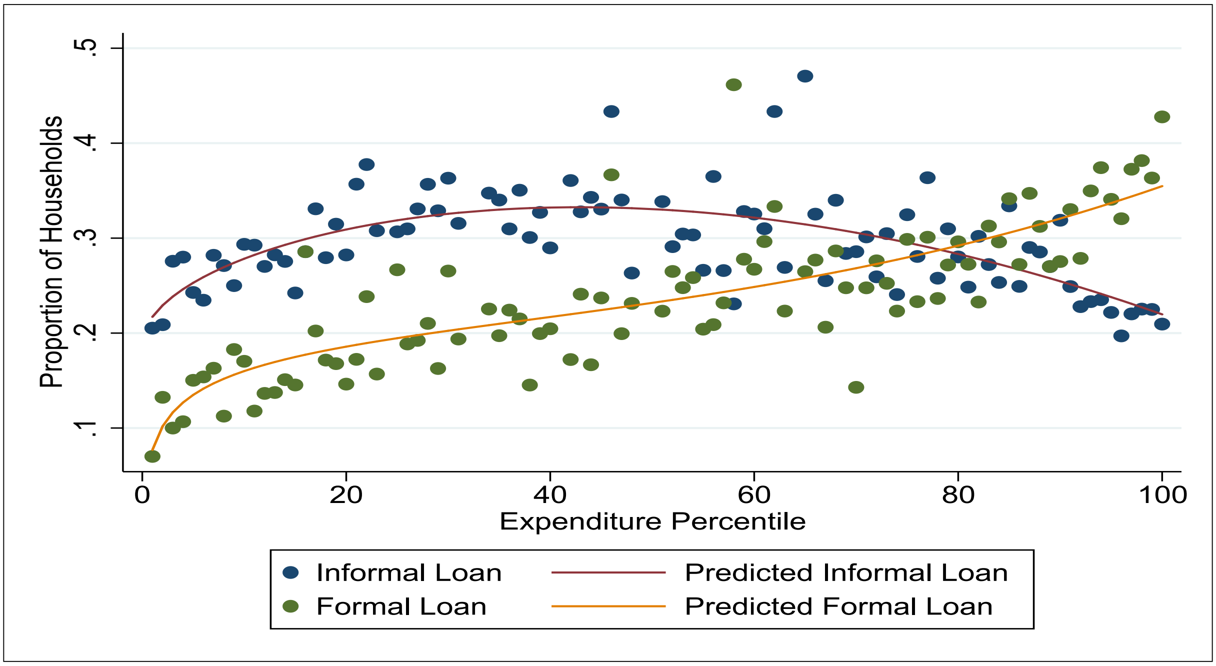

स्रोत: ऋण और निवेश सर्वेक्षण, एनएसएस 2012-13, सर्वेक्षण परिकलन

रेखाचित्र 7 : व्यय शतमंकानुसार ऋण की माध्यिका राशियां

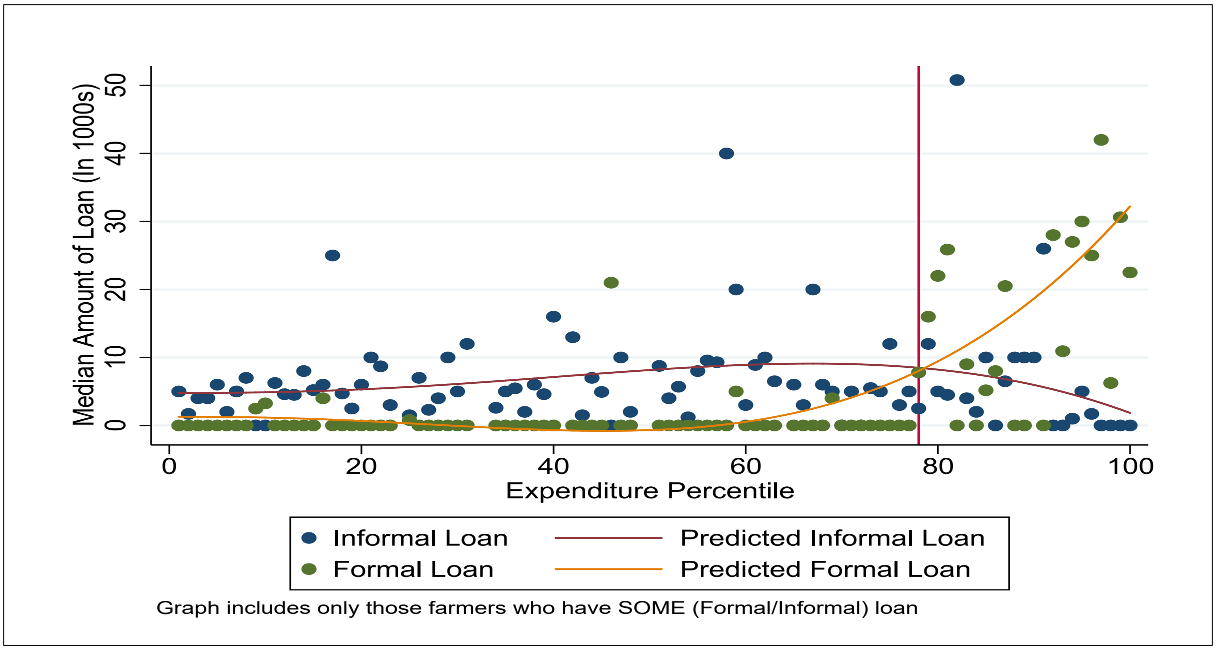

स्रोत : **ऋण और निवेश सर्वेक्षण, NSS 2012-13, समीक्षा गणनाएं**

पहुँच में महत्वपूर्ण उछाल आ सकता है।

9.39 रेखाचित्र 8 में UBI की राशियों और इस संभाव्यता का दृश्यांकन किया गया है कि उक्त UBI के सहारे कोई 78वें शतमंक की रेखा को पार कर जाएगा। यहां स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि UBI की राशि में वृद्धि से उपभोग व्यय द्वारा साख संरोधित होने की संभाव्यता कम होती है।[19] हां एक बात का अवश्य ध्यान रखना होगा, यह 78वें शतमंक की न्यूनतम सीमा स्वयं भी UBI की सार्वलौकिकता के कारण ऊपर की ओर खिसक सकती है। उससे UBI द्वारा साख संरोध

रेखाचित्र 8 : साख संरोध निरस्ति की संभाव्यता और UBI

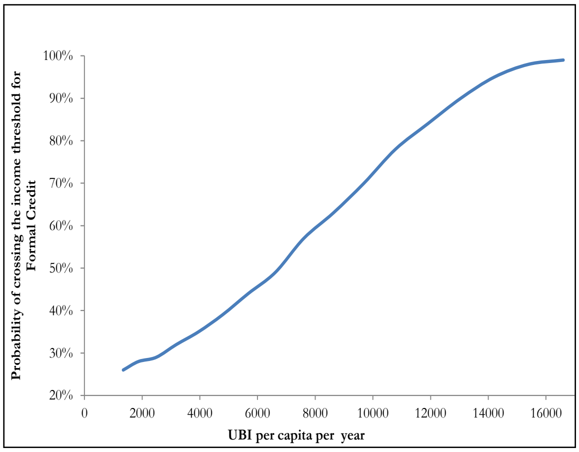

स्रोत : समीक्षा की गणनाएं

रेखाचित्र 9 : प्रलोभक पदार्थ बनाम उपभोग व्यय

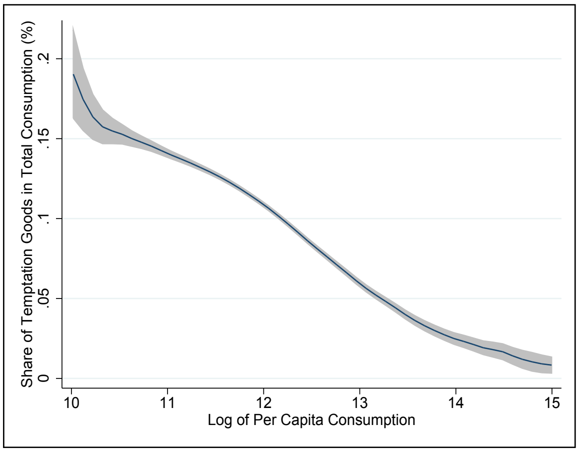

स्रोत : NSS 2011.12, समीक्षा की गणनाएं

---

19 यह एक व्याख्यात्मक कथन है, कारण प्रभाव कथन नहीं : बहुत संभव है कि 78वें शतमंक से जो लोग ऊपर हैं वे अपने वित्तीय व्यवहार में भिन्नता के कारण ही वहां पहुंच हो (बचत और ऋण दोनों के पक्षों पर)। अत: केवल व्यक्तियों की आय/उपभोग को इस स्तर पर लाने के लिए इस अपेक्षित बदलाव के लिए शायद पर्याप्त नहीं रहे।

के निवारण का प्रभाव धूमिल पड़ सकता है।

VIII. प्रलोभक पदार्थ : क्या UBI से दुराचार को प्रोत्साहन मिलेगा?

9.40 UBI के आलोचकों का तर्क रहता है कि ऐसा नकद अन्तरण कार्यक्रम दिखावे पर खर्च और सामाजिक रूप से तजाज्य वस्तुओं, शराब और तंबाकू आदि पर व्यय को बढ़ावा दे सकता है। अनेक रचनाओं में ऐसी धारणा स्पष्ट हो रही है कि नकदी में मिल गई राशियां इसी प्रकार की प्रलोभक वस्तुओं पर खर्च हो जाती हैं (मूर, 2008, इकिआरा 2009 और देवेरौ, 2002)। यह बात उस समय तो बहुत ही महत्वपूर्ण रूप धारण कर सकती है जब UBI अभी तक चल रहे वस्तु रूप PDS आदि का स्थान लेने वाली हो। इस तर्क की समीक्षा के लिए हमने NSS-2011-12 के आंकड़ों का प्रयोग किया है। आप शराब, तंबाकू और पान के उपभोग को प्रलोभक वस्तुओं पर खर्च मान सकते हैं। हमारा मुख्य निष्कर्ष यह है जैसे-जैसे उपभोग का स्तर बढ़ता है, इन अप-पदार्थों पर होने वाले व्यय का अंश कम हो जाता है (रेखाचित्र 9)। इससे हमें संकेत मिलता है कि केवल UBI के सहारे आय की वृद्धि प्रलोभक पदार्थों का उपभोग नहीं बढ़ाएगी। यह निष्कर्ष इवान्स और पोपोवा (2016) के बृहतर अध्ययन के अनुरूप भी है। उन्होंने 30 ऐसे अध्ययनों की समीक्षा की है जिनमें नकद अंतरणों के प्रलोभक पदार्थों के उपभोग पर प्रभाव का आंकलन किया गया था। परिशिष्ट-3 में इसी विषय पर भारत के कुछ साक्ष्य प्रस्तुत किए गए हैं।

IX. नैतिक द्वन्द्व : क्या UBI से श्रम की आपूर्ति कम होगी?

9.41 UBI के विरूद्ध एक तर्क तो गांधी जी द्वारा धर्मार्थता के विरूद्ध प्रवर्तित नैतिक द्वन्द्व ही है, मुफ्त में मिला पैसा व्यक्तियों को सुस्त बना देता है और वे श्रम बाजार से पलायन कर जाते हैं। एक सीधी सी व्याख्या तो यही है : वस्तु अंतरण के स्थान पर नकद अन्तरण से परिवार द्वारा अभी तक आपूर्ति की गई श्रम इकाईयों के 'प्रतिफल' में सुधार आ जाता है और वह अपनी आय का स्तर बनाए रखते हुए भी कम श्रम प्रदान कर अपना काम चला सकता है। देखने में यह बात चाहे जितनी स्वीकार्य लगे, किन्तु वास्तव में ऐसा होता नहीं है।

9.42 बैनर्जी, हान्ना, क्रेंइन्डलर और ऑल्केन (2015) ने 6 विकासशील देशों में सरकारी अन्तरणों के 7 नियंत्रित प्रयोगों का बृहत स्तरीय अध्ययन किया है (वे देश हैं : होन्डरूआस, मोरक्को, मेक्सिको, फिलिपींस, इन्डोनेशिया और निकारागुआ)। परिशिष्ट 4 में उनके उक्त अध्ययन पत्र की जानकारी का संक्षिप्त स्वरूप दिया गया है। ये अधिकांश सशर्त नकद अंतरण कार्यक्रम हैं और इनका आकार पारिवारिक उपभोग के 4 प्रतिशत (होन्डरूआस) से लेकर 20 प्रतिशत (मोरक्को) तक रहा है। उन्होंने श्रम की आपूर्ति पर कोई विशेष विपरीत प्रभाव नहीं पाया (न घर के भीतर, न बाहर), न पुरूषों द्वारा न महिलाओं द्वारा। यह निष्कर्ष अल्बुआ, क्रूसेज और रिजानी (2010) के निष्कर्षों के भी अनुरूप है, उन्होंने तीन लैटिन अमेरीकी देशों के वयस्क रोजगार कार्यक्रमों का बहुत संक्षिप्त नकारात्मक, किन्तु सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वहीन प्रभाव आंकलित किया था।

9.43 भारतीय संदर्भ में परिशिष्ट-3 मध्यप्रदेश, भारत के कुछ गांवों में परिवर्तित और यादृच्छिक रूप से नियंत्रित UBI की श्रम की आपूर्ति पर प्रभावहीनता के साक्ष्य प्रस्तुत कर रहा है।

X. आगे का रास्ता

9.44 UBI जैसे सशक्त विचार की अपरिमित प्रतीत होने वाली शक्तियों को भी वास्तविकताओं के अचल पर्वत के प्रतिरोध का अवश्य सामना करना होगा। तो फिर आगे का रास्ता क्या होगा? ध्यान रहे कि आंकलन की कसौटी यह नहीं होगी कि क्या UBI एक संपूर्ण एवं दोषरहित कार्यक्रम है, कसौटी तो यह होगी कि क्या यह वर्तमान यथास्थिति में कुछ बड़े सुधार ला सकने वाला कार्यक्रम हो सकता है?

(क) गरीबी निवारण : संभावित राजकोषीय लागत का एक उद्धरण

9.45 एक UBI कार्यक्रम की संभावित लागत (या उसपर खर्च) क्या होगी? इस की गणना कर पाना सहज नहीं है, यह अनेक प्रकार के उद्देश्यों और मान्यताओं पर आधारित होगी। इसे हम इस प्रकार, ध्यानपूर्वक समझा सकते हैं।

रेखाचित्र 10 : UBI के निहित अर्थ : गरीबी और भेद्यता पर इसके प्रभाव

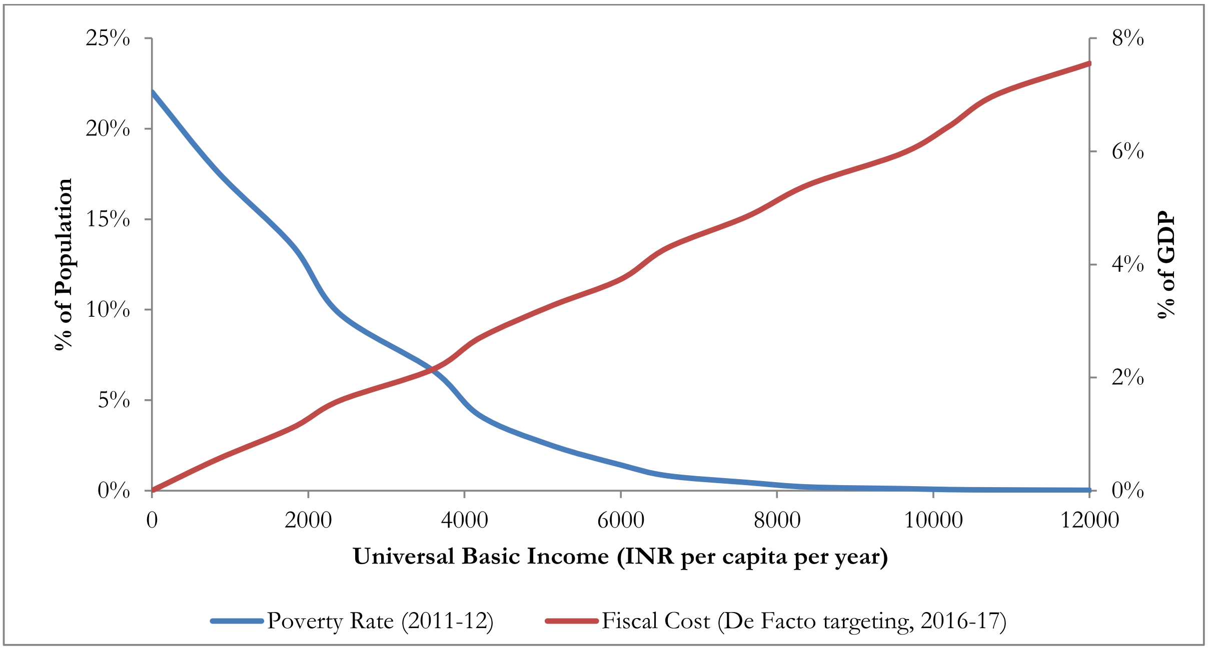

स्रोत: NSS 2011.12, बजट 2016-17, समीक्षा की गणनाएं

9.46 वर्ष 2011-12 के गरीबी के आवंटन के आधार पर यह तो बहुत स्पष्ट हो जाता है कि बहुत निम्न स्तर से उठकर गरीबी का पूर्ण उन्मूलन कर पाना तो अत्यंत ही खर्चीला कार्य सिद्ध होगा (रेचाचित्र A-4, परिशिष्ट 5)। उपभोग का संचयी संभाविता आबंटन गरीबी के शून्य से 0.45 प्रतिशत स्तरों के बीच समतल रहता है। अत: गरीबी का एक लक्षित स्तर 0.45 प्रतिशत चुना गया है। फिर 2011-12 के लिए उक्त स्तर पर विद्यमान व्यक्ति के उपभोग का प्राकलन किया गया है। फिर उसे 893 रूपए[20] प्रतिमाह[21] की गरीबी रेखा से ऊपर ले जाने के लिए आवश्यक आय का आंकलन किया गया है। यह मान 5400 रूपए वार्षिक होता है। आगे चलकर इस संख्या को 2011-12 से 2016-17 के बीच हुई स्फीति के आधार पर पुन: मूल्यांकित किया गया है। यह राशि 7620 रूपए वार्षिक है। यही 2016-17 में UBI का मान होना चाहिए। समीक्षा ने कुछ कारणों का हवाला देते हुए कहा है कि व्यवहार में कोई भी कार्यक्रम सार्वलौकिकता की प्राप्ति पर ही पूर्ण आग्रह नहीं कर सकता (कारण बाद में बताए जाएंगे)। अत: अर्द्ध-सार्वलौकिकता का लक्ष्य 75 प्रतिशत मान लिया गया है। इसे आगे चलकर वास्तविकतापूर्ण UBI का नाम दिया जाएगा। अत: UBI की अर्थव्यवस्था व्यापी लागत होगी UBI संख्या गुना 75 प्रतिशत (जनसंख्या)। यह आंकड़ा जीडीपी के 4.9 प्रतिशत के समान बनता है।[22]

9.47 एक और अहम बात का ध्यान रखें। यह UBI आंकलन गरीब जनों की संख्या की गणना के लिए किसी प्रकार की मान्यता का प्रयोग नहीं कर रहा। यहां तो गरीबी के सीमांत पर अवस्थिति (0.45 के स्तर पर) उपभोग के आंकड़े मात्र और गरीबी रेखा का प्रयोग करता है। रेखाचित्र 10 में विभिन्न लक्षित गरीबी स्तरों के लिए तत्संबंधी राजकोषीय लागतों का चित्रण किया गया है।

9.48 आंकलन की एक मान्यता है कि निजी उपभोग की रचना में कोई परिवर्तन नहीं आया है। इसका अभिप्राय होगा कि 2016-17 में 0.45 के गरीबी स्तर पर टिके हुए गरीबों की आय में 2011-12 से अब तक कोई

[20] यह राज्यवार शहरी ग्रामीण तेन्दुलकर गरीबी रेखा की जनसंख्या भारित औसत है (2011-12)।

[21] तेन्दुलकर गरीबीरेखा का आधार 2011-12 की छैउपभोग जानकारी है। ये मानना चाहिए कि यह रेखा कुछ काल्पनिक सी है और इसे कुशल क्षेत्र की सही कसौटी मानने में जरा सतर्क रहने की आवश्यकता है।

[22] परिशिष्ट 5 में UBI की लागत निर्धारण की वैकल्पिक विधि दी गई है। वह गरीबी और भेद्यता निवारण के सीमांत लाभों पर आधारित है।

परिवर्तन नहीं हुआ है। यह बात ठीक होना संभव प्रतीत नहीं होती। अत: सरकार के लिए UBI की वास्तविक लागत कम भी हो सकती है।[23] उदाहरण के लिए यदि सीमांत अवस्थित गरीब की वास्तविक आय में भी औसत GDP प्रति व्यक्ति वाली दर (2 प्रतिशत के लगभग) पर वृद्धि हुई हो तो UBI के लिए आवश्यक राशियां घटकर 6540 रूपए प्रति व्यक्ति, प्रतिवर्ष रह जाएगी। फिर तो कुल लागत जीडीपी के 4.2 प्रतिशत के समान ही रहेगी।

9.49 ये गणनाएं 2011-12 के उपभोग के आंकड़ों के आगे की ओर प्रक्षेपण पर आधारित है, इसीलिए इनकी एक निहित मान्यता है कि UBI गरीबों के वर्तमान उपभोग से आगे होगी, अर्थात PDS, मनरेगा आदि कार्यक्रमों से सुलभ उपभोग से ऊपर UBI का लाभ मिलेगा। क्या यह उचित और व्यवहारिक होगा?

9.50 एक तरफ से यह तर्क दिया जा सकता है कि वर्तमान कार्यक्रम तो बहिष्कृति की त्रुटियों से ग्रस्त हैं और इसका गरीबों में भी सबसे गरीब पर सबसे गंभीर दुष्प्रभाव रहता है। अत: यह विधि अनुचित नहीं होगी।

9.51 किन्तु ऐसे भी बहुत से मामले होंगे जहां PDS और उर्वरक सब्सिडी के लाभ अधिकांश हितलाभियों को मिल रहे होंगे और यदि UBI की रचना एक प्रतिस्थापक कार्यक्रम के रूप में की जानी है तो उन सब सब्सिडियों का भी हिसाब लगाना होगा। यह तो एक बहुत जटिल कार्य हो जाएगा। इसमें अनेक व्यापक संतुलन प्रभाव होंगे जिनका समन्वय करना होगा। उदाहरण : PDS हटाने का अर्थ होगा कि गरीबों के समक्ष अनाज की कीमतें अधिक हो जाएंगी। इसी प्रकार धीरे-धीरे मनरेगा को बंद करने के कारण ग्रामीण क्षेत्र में दिहाड़ी मजदूरी में गिरावट हो सकती है। इन प्रभावों का आंकलन कर सब्सिडियों के परिमाण का सटीक मूल्यांकन UBI की लागत के अनुमानों को और परिष्कृत करने में सहायक होगा।

9.52 किन्तु जैसा हमने पहले देखा है, UBI अपआबंटन रोकने में वर्तमान कार्यक्रमों की अपेक्षा अधिक प्रभावी होगा, इसमें क्षरण और बहिष्कृति की त्रुटियां भी बहुत कम होगी। उस दशा में कहा जा सकता है कि इसके द्वारा विस्थापित कार्यक्रमों की गणना नहीं होने पर भी UBI की लागत में कोई विशेष अंतर नहीं आएगा। आखिर एक रूपए की उर्वरक सब्सिडी के स्थान पर UBI में एक रूपए से कम राशि ही जुड़ेगी।

9.53 UBI के परिमाण का निर्धारण कोई एक ही बार में करने वाला काम भी नही हैं। यह एक नकद अन्तरण है और इसका वास्तविक मान अर्थव्यवस्था की स्फीति दर द्वारा निर्धारित होता है। समय बीतने पर पहले जितनी राशि से पहले जितनी वस्तुएं खरीद पाना संभव नहीं रहेगा। अत: इसको कीमत सूचकों के साथ संबद्ध करना आवश्यक है ताकि समय-समय पर UBI अन्तरण राशियां भी परिवर्तित होती रहें। जब भी इस राशि को पुन: निर्धारिण करना होगा, उसी समय की राजनीति भी इसमें एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने को लालायित होगी।[24] अत: इस कार्य के लिए एक राजनीति से अप्रभावित रहने वाली प्रक्रिया की रचना आवश्यक होगी। रे (2016) का सुझाव है कि UBI को GDP के एक निश्चित अंश पर नियत कर देने से इस समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है।

(ख) राजकोष में UBIDS वित्तीयन के लिए गुंजाइश कहां है?

9.54 तालिका 2 में केन्द्र द्वारा संचालित विभिन्न क्षेम कार्यक्रमों और सेवाओं को प्रदान करने की लागतों का विवरण दिया जा रहा है। किसी भी सरकार को UBI के वित्तीयन के लिए विभिन्न व्यय कार्यक्रमों का वरीयता क्रम तो निर्धारित करना पड़ेगा। तालिका का निम्नतम भाग तो उसे संपूर्ण रखने की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है और उन कार्यक्रमों का प्रतिस्थापन करना संभवत: उचित नहीं रहेगा। दूसरे शब्दों में भले ही UBI गरीबी निवारण का सबसे छोटा मार्ग हो किन्तु इसे ऐसा स्वरूप नहीं मिलना चाहिए कि यही एक सुचारू रूप से चल रही सरकार के सारे बजट को डकारने लग जाए।

9.55 तालिक 2 की आरंभिक पंक्तियां गैर-गरीब/मध्यम वर्गीय परिवारों को दी जा रही सब्सिडी है। ये जीडीपी

---

[23] इसकी गणना तेन्दुलकर गरीबी रेखा एनएसएस 2011-12 के उपभोग आकड़ों के आधार पर की जाती है-यह कहा जा सकता है कि एक तरह से यह काल्पनिक रेखा है और इस रेखा की उपयुक्ता को सही ढंग से मापने के बारे में महत्वपूर्ण निर्णय लेते समय किसी को भी सावधानी बरतनी चाहिए।

[24] परिशिष्ट 5 में, गरीबी के कारण मिलने वाले मामूली लाभों और पिछड़ेपन को दूर करने संबंधी यूबीआई आधारित लागत के वैकल्पिक तरीको पर चर्चा की गई है।

के एक प्रतिशत के समान है।[25] सूची में अगले वर्ग में जीडीपी के 2.7 प्रतिशत अंश के समान सब्सिडी वर्ग है (यह 2014-15 के बजट के वास्तविक आंकड़े हैं।[26] प्रांत सरकारों का इन्हीं मदों पर व्यय 2011-12 में भी जीडीपी के 6.9 प्रतिशत के समान था (सुदीप्त और सिकंदर, 2017)। इन सभी मदों पर ध्यान दें तो पता चलता है कि उर्वरक, पैट्रोलियम और खाद्य सब्सिडी ही विशालतम राशियां है। हम इसी अध्याय में पहले यह चर्चा कर चुके हैं कि सरकार बहुत सी योजनाएं चला रही है और उनमें सबसे ऊपर वाली दस केन्द्रीय/केन्द्र प्रायोजित योजनाओं पर (सब्सिडी को निकालकर) जीडीपी के 1.4 प्रतिशत के समान राशियां खर्च होती हैं (2014-15, वास्तविक व्यय)। शेष 904 योजनाओं पर भी जीडीपी का 2.4 प्रतिशत अंश खर्च किया जाता है। इसी तालिका में हम आगे चलकर शिक्षा, स्वास्थ्य, पेंशन, पुलिस प्रतिरक्षा और ब्याज भुगतान पर व्यय दिखा रहे हैं।[27]

तालिका 2 : केन्द्रीय सरकार की वर्तमान योजनाओं की राजकोषीय लागत (2015-16)

अप्रत्यक्ष मध्यम वर्ग सब्सिडीयां[28] (स.घ.उ. का प्रतिशत)[29]	**Total**
एलपीजी	**0.21**
रेलवे-1 (एसी)	**0.01**
रेलवे-2 (स्लीपर श्रेणी)	**0.07**
विमानन टर्बाइन ईंधन	**0.01**
उर्वरक (यूरिया)	**0.04**
व्यक्तिगत आयकर छूट	**0.44**
किसानों के लिए ब्याज सहायता योजना	**0.1**
मूद्रा ब्याज सब्सिडी	**0.11**
स्वर्ण	**0.08**
उप जोड़	**1.05**
विद्यमान सामाजिक क्षेत्र के कार्यक्रम / योजनाएं (2014-15, स.घ.उ. का प्रतिशत)[30]	
कुल सब्सिडी	2.07
- उर्वरक	0.57
- पेट्रोलियम	0.48
- भोजन	0.94
योजनाएं (केन्द्रीय क्षेत्र और केन्द्र प्रायोजित)	3.7
- शीर्ष दस योजनाएं [31]	1.38
शिक्षा	0.49
चिकित्सा, लोक स्वास्थ्य, स्वच्छता	0.1
परिवार कल्याण	0.13
राज्य तथा संघ राज्य क्षेत्रों को अनुदान	0.62
पेंशन	0.75
पुलिस	0.38
रक्षा	1.10
ब्याज भुगतान	3.22

[25] जीडीएस में सीबीटी हेतु केन्द्र और राज्य के सौदेबाजी के कई प्रभाव पहले से ही मौजूद हैं। यहां देखें http//www.financialexpress.com/market/commodities/puducherry-MhohVh लाभार्थियों के लिए चावल की सब्सिडी बढ़ाने के लिए कहा गया/399995/

[26] यहां कुछ दोहरी गणना हो रही है, मध्यमवर्ग को दी गई यूरिया पर सब्सिडी का कुछ अंश ऊपर वाली पंक्तियों में भी आ चुका है।

[27] यहां भी कुछ दोहरी गणना है। इसी कारण हम कोई 'सकल आंकड़ा नहीं' दे रहे। उदाहरण शिक्षा पर कुछ व्यय शीर्ष 10 योजनाओं में भी शामिल है यही बात स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मदों में भी है।

[28] परिशिष्ट 8 में इन सब्सिडियों की आंकलन विधि दी गई है, यह राजस्व का त्याग भी दिखाया गया है।

[29] राजस्व त्याग के ये घटक नहीं दिखाए जा रहे हैं : (1) निगम कर में दी जा रही छूटें बंद होने वाली हैं; (2) आयात शुल्कों में छूट भारत के मुक्त व्यापार अनुबंधों का अंश है, उन्हें हटाया नहीं जा सकता; (3) अभी चल रही कुछ छूटें तो जीएसटी का हिस्सा बन जाएंगी; और (4) यह भी संभव है कि अप्रत्यक्ष करों में कुछ वर्तमान छूटें गरीब जनों को ही लाभ पहुँचा रही हों।

[30] दोहरी गणना संभव है। एलपीजी पर निहित सब्सिडी सकल सब्सिडी में भी जुड़ जाती है। इसी प्रकार शिक्षा पर व्यय शीर्ष 10 योजनाओं पर केन्द्रीय व्यय में भी शामिल है।

[31] बजट अनुमान, 2014-15

9.56 यहां स्पष्ट हो जाता है कि मध्यम वर्ग को मिलने वाली सब्सिडी का मान भी UBI की 3240 रूपए प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष लागत के समान होगा। यदि यह सभी महिलाओं को ही प्रदान किया जाए। इसकी लागत जीडीपी के एक प्रतिशत से कुछ ज्यादा अर्थात मध्यम वर्ग को दी जा रही सब्सिडी से थोड़ी ही अधिक होगी। किन्तु किसी भी सरकार के लिए मध्यम वर्ग को दी जा रही सब्सिडी को वापस लेना आसान नहीं होता। अत: यह स्पष्ट है कि राजकोष में एक प्रभावी रहने वाला UBI कार्यक्रम प्रारंभ करने की गुंजाइश तो है किन्तु इसके अर्थव्यवस्था व्यापी बृहतर प्रभावों को स्पष्ट रूप से समझे बिना राजनीतिक और प्रशासकीय प्रश्न इसे लागू करना कठिन बना देते हैं।

(ग) UBI रचना की स्थापना के लिए ''निर्देशक सिद्धांत''

9.53 संकल्पनागत रूप से एक सुचालित UBI की रचना हो सकती है। किन्तु भारत जैसे विशाल विविधतापूर्ण और जटिल सामाजिक रचना वाले देश में उसे लागू करने का प्रयास किस प्रकार होना चाहिए? जब विचार को व्यवहार में ढ़ालने का प्रयास होता है तो विपरीत दिशाओं में खींचने वाले तनाव उभर कर आते हैं : सार्वलौकिकता का सहज आकर्षण है किन्तु राजकोषीय लागतों को सीमित रखने की भी चुनौती है। साथ ही वर्तमान कार्यक्रमों का समापन कर उनसे छुट्टी पाना सरल नहीं हैं और भारतीय प्रशासन तंत्र कितने ही संरोधों से ग्रस्त हो, इस पैमाने पर इस कार्यक्रम को लागू करना इसकी क्षमता से बाहर तो नहीं ही है।

9.58 हम तीन बड़े सिद्धांतों का उल्लेख कर रहे हैं जो इस दिशा में चिन्तन का मार्ग दर्शन कर सकते हैं।

(i) विविध सार्वलौकिकता, व्यावहारिक/वास्तविक सार्वलौकिकता

9.59 यदि सार्वलौकिकता का आकर्षण बहुत सशक्त है तो इसका प्रतिरोध भी कम नहीं होगा। विमुद्रीकरण के प्रति जन प्रतिक्रिया ने यही बात स्पष्ट की है कि अपेक्षाकृत खुशहाल वर्ग प्रत्येक व्यवस्था को अपने पक्ष में मोड़ लेता है। इस प्रकाश में राजकोषीय लागतों का ध्यान रखते हुए उस धनिक वर्ग को कुछ भी अन्तरण बहुत कठिन सिद्ध होगा।

9.60 अत: ऐसे विचार पर ध्यान देना होगा जो स्पष्टत: धनिक वर्ग को इस UBI से परे ही रख सके। अर्थात अपात्रता पर विचार कर उन्हें बहिष्कृत रखने के परिप्रेक्ष्य पर ध्यान देना होगा। अभी तक सभी योजनाओं का चिन्तन परिप्रेक्ष्य तो सुपात्र वर्गों का समाहन रहा है। यहां अनेक संभावी विकल्प हैं जैसे कि ये चार[32]:

1. किन्हीं निश्चित परिसंपदाओं, जैसे कि एयर कंडीशनर[33], वाहन या फिर बैंक खातों में एक रकम से अधिक राशियां होना अपात्रता की कसौटी हो सकता है।
2. एक स्वेच्छया त्याग की योजना चलाई जाए जहां अ-पात्र स्वयं ही UBI से बाहर रहने की घोषणा करें और उन्हें इसका श्रेय भी दिया जाए जैसे LPG सब्सिडी के मामले में किया गया था।
3. UBI हितलाभियों की सूचियां जारी करने की व्यवस्था बनाई जाए, यह उसमें सम्मिलित अ-पात्रों को शर्मिंदगी का करण बन सकती है।
4. **स्व-लक्षिता:** ऐसी व्यवस्था हो कि लाभार्थी समय-समय पर अपना सत्यापन करें तभी उन्हें UBI का लाभ मिले। मान्यता यही है कि धनिक वर्ग के लिए उनके समय की अवसर लागत कहीं अधिक है। वे इस प्रक्रिया पर अपना समय बर्बाद नहीं करना चाहेंगे जबकि गरीब स्वयं को लक्षित कर इस योजना में भागीदार हो जाएंगे। किन्तु यह विचार JAM के सत्व का विरोधी है, वहां तो सरकारी हितलाभों के लागत रहित सीधे अंतरण का ही आकर्षण है।

(ii) अनुक्रमवाद

9.61 अनुक्रमवाद भी एक सिद्धांत हो सकता है : UBI को जानबूझ कर कुछ चरणों में, धीरे-धीरे अपनाया जाए। यह विधि सुधार को एक उत्तरोत्तरता प्रदान करेगी, प्रत्येक सोपान पर इसके हितलाभों और इसकी लागतों की समीक्षा हो पाएगी। किन्तु इस अनुक्रमवाद में भी

---

32 यह राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक 2013 में निहित बहिष्कृति सूत्र से भिन्न नहीं है।

33 परिसंपदा स्वामित्व का एक सूचक स्रोत तो सामाजार्थिक जाति जनगणना की ग्रामीण जनता की जानकारी है।

एक मार्गदर्शिका का निर्माण तो करना ही होगा। हम यहीं पर UBI को धीरे-धीरे स्वीकार करने की कुछ विधियां बता रहे हैं। प्रत्येक विधि का अन्तिम ध्येय तो एक व्यवहारिक एवं वास्तविक UBI का मार्ग प्रशस्त करना ही है।

सहमत करने का चयन और प्रतिस्थापन और 'अतिरिक्त नहीं', के सिद्धांत की स्थापना करना

9.62 UBI को वर्तमान योजनाओं से अतिरिक्त रूप में प्रारंभ करने से कही बेहतर उनके हितभागियों को उन्हें छोड़कर UBI से जुड़ने का अवसर प्रदान करना हो सकता है। दूसरे शब्दों में हम हितभागियों को अपनी वर्तमान अधिकारिताएं छोड़कर UBI चुनने को आमंत्रित कर सकते हैं। इस युक्ति में कई लाभ होंगे, जो लागतों को सीमित रखने से कहीं अधिक सिद्ध होंगे। यह व्यक्तियों को केवल चयन नहीं प्रदान करती, उन्हें एक बृहतर भूमिका भी प्रदान करती है, वे उन प्रशासकों से सौदेबाजी कर सकेंगे जो अभी तक उनके दाता बने बैठे थे। यह धमकी (या घुड़की) स्पष्ट या निहित, दोनों ही स्वरूपों में वर्तमान योजनाओं के प्रशासकों को अपने कार्य सुधारने को विवश कर देगी। एक उर्वरक वितरण केन्द्र की बात ही लें, उस विक्रेता को यह स्पष्ट समझ आ जाएगा कि यदि उसने चावल किसान को नहीं दिया तो किसान UBI के साथ जुड़ जाएगा। फिर तो उसकी एजेंसी को मिलने वाले उर्वरक का कोटा कम रह जाएगा।

9.63 इस प्रकार रचित UBI के परिणाम स्वरूप न केवल जीवन स्तर में सुधार होंगे बल्कि वर्तमान कार्यक्रमों की प्रशासनिक लागतों और उन योजनाओं से संसाधनों के क्षरण में भी कमी होगी।

9.64 किन्तु उल्लेखित प्रक्रिया से जुड़ी दो समस्याएं भी हैं : UBI को वर्तमान कार्यक्रमों का विकल्प बनाने पर उन कार्यक्रमों में निहित लक्षिता की समस्याएं और सुदृढ़ हो सकती हैं। इस प्रकार तो अपआबंटन की समस्या ज्यों की त्यों बनी रहेगी[34] अर्थात धनि जनपदों को अधिक क्षेम हितलाभ मिलते रहेंगे। यही नहीं जो अभी तक क्षेम तंत्र से बाहर छूटे हुए हैं उनके पास तो नई व्यवस्था से जुड़ने से पूर्व छोड़ने के लिए कुछ भी नहीं होगा। अतः जो धनिक अ-पात्र होते हुए भी अभी तक लाभ उठा रहे हैं, उन्हें ही यह अधिकार बना रहेगा।

9.65 एक अन्य समस्या प्रशासनिक जटिलता की होगी। कहने को तो उर्वरक सब्सिडी त्यागने वालों की सूची बस एक बार में ही बन जाएगी किन्तु वास्तव में यह भ्रष्ट कार्यकर्ताओं के लिए एक और हेराफेरी का अवसर बन जाएगा।

महिलाओं के लिए UBI

9.66 महिलाओं को अपने दैनिक जीवन प्रायः प्रत्येक पटल पर निकृष्टतम परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है (चाहे रोजगार के अवसरों की बात हो या शिक्षा, स्वस्थता अथवा वित्तीय समाहन की)। साथ ही साथ नारी को बेहतर विकास प्रदान करने के उच्चतर सामाजिक तथा बहु पीढ़ी लाभ के साक्ष्य भी बहुत विशाल हैं। अतः केवल महिलाओं को ही UBI प्रदान करने से न केवल कुल राजकोषीय भार (लागत) आधी रह जाएगी, वरन् इसके परिवार स्तर पर गुणक पद्धति से बड़े महत्वपूर्ण प्रभाव भी होंगे। हाथ में रूपया-पैसा आने पर परिवार में महिला की सौदा और निर्णय क्षमता में वृद्धि होती है और धन की दिखावे की वस्तुओं पर बर्बादी रूकती है। UBI कार्यक्रम परिवार के बच्चों को भी शामिल कर महिलाओं को अधिक राशियां प्रदान कर सकता है। किन्तु इस अतिरिक्त संयोजन में तीन समस्याएं भी संभव है : एक किसी परिवार में बच्चों की अलग से पहचान कठिन हो सकती है, दूसरे, यह परिवारों को अधिक बच्चे पैदा करने का प्रोत्साहन दे सकती है; और तीसरे 18 वर्ष की आयु पाने पर लड़कों को हितभागी वर्ग से दूर करने की निगरानी कर पाना भी कठिन रहेगा।

केवल कुछ समुदायों/ समूहों पर सार्वलौकिकीकरण

9.67 एक और विधि UBI को किन्हीं अधिक भेद्यताग्रस्त समूहों-विधवाओं, गर्भवती माताओं, वृद्ध और शारीरिक दृष्टि से बाधित पर पहले लागू करना है। यह सरकार को सबसे निर्बल असहाय वर्गों के प्रति अपने

[34] PDS से जुड़ा एक प्रशासनिक प्रश्न और है : क्या चयन उपलब्ध हो जाने पर काम घटने पर च्वै डिपो संचालक के लिए काम करते रहना लाभप्रद रहेगा?

वचन और विधिक दायित्वों का निर्वहन का अवसर भी प्रदान करेगा।[35] यही नहीं, ये ऐसे व्यक्ति समूह हैं जिन्हें तुरन्त पहचाना जा सकता है। पिछले कुछ अध्ययन बता रहे है कि वृद्धावस्था पेंशन में क्षरण बहुत कम हैं (मुरूगाई आदि, 2010) किन्तु प्रसूता हितलाभों के प्रारंभिक प्रायोगिक प्रयासों ने क्रियान्वयन में कठिनाइयां स्पष्ट की है (सिन्हा आदि 2016)। हां ऐसे संकेत अवश्य है कि इसने गरीब परिवारों को चिकित्सा व्यय के वहन में अवश्य सहायता की है।

9.68 किन्तु आज की यथास्थिति यही है कि इन दोनों योजनाओं में बहिष्कृति की त्रुटि विद्यमान है। इन व्यक्तियों के बैंक खाते होने की संभावना कम होती है और ये JAM से भी बहुत दूर पाए जाते हैं।

UBI और राज्यों को पुन:वितरणात्मक अंतरण

9.69 हमारा अध्याय-13 यह विस्तार से समझा रहा है कि अनेक राज्य सरकारों[36] को बड़ी रकमों का अंतरण होता है और इस अन्तरण से संवृद्धि या उपभोग किसी में वृद्धि की आशा नही होती। UBI इस समस्या से बचने का एक रास्ता सुझा रहा है : केन्द्र एक प्रारंभिक प्रकल्प के रूप में उन अन्तरणों का एक भाग सीधे हितभागियों के खातों में जमा करा सकता है।

9.70 किन्तु ये अन्तरण प्राप्त कर रहे राज्य इस प्रयोग के लिए बहुत कष्ट भरे प्रदेश साबित हो सकते हैं। ये राज्य प्राय: गरीब पिछड़े हुए जिलों के समूह होते हैं और यहां प्रशासनिक क्षमताएं भी न्यून होती हैं। हमारे रेखाचित्र 11, 12 फिर भी यही दर्शा रहे हैं कि इन राज्यों ने जनधन और आधार संबंद्ध खातों की दिशा में बहुत अच्छी प्रगति की है।

शहरी क्षेत्रों में UBI

9.71 हमारा उपर्युक्त विवेचन यह संकेत दे सकता है कि संभवत: शहरी क्षेत्रों में UBI का प्रयोग करना बेहतर होगा, ये क्षेत्र बैंकिंग सुविधा से हीन नहीं होते, और यहां बिना खाते वाले व्यक्तियों का अनुपात भी कम रहता है। शहरी क्षेत्रों में एक और भी लाभ होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में तो गरीब प्राय: सरकार के ही सहारे होते हैं और उस कारण से वहां सब कुछ बदलने वाला UBI कार्यक्रम लागू करना संशयापन्न हो सकता है (किन्तु शहरी क्षेत्र में ऐसा नहीं होता)।

9.72 फिर भी UBI तो नहीं, हां PDS के स्थान पर दो शहरी क्षेत्रों, चंडीगढ़ और पुडुचेरी में सीधे अन्तरण के प्रयोग से कुछ सावधानी बरतने की चेतावनी मिल रही है। यह DBT[37] पुडुचेरी में प्रारंभ करने के दो महीने में ही वापस ले लिया गया और पुन: कुछ समय बाद दुबारा लागू किया गया। क्षरण में कमी के कुछ संकेत तो मिले हैं फिर भी स्वतंत्र रूप से किए गए मूल्यांकन यही सुझा रहे हैं कि डिजिटल वित्तीय संरचना, इन शहरी प्राय: क्षेत्रों में भी सुधारे जाने की आवश्यकता है[38] (Microsave, 2016)।

9.73 परिशिष्ट 6 में पूर्ववर्ती विवेचन का सारांश दिया गया है और वह प्रत्येक उपर्युक्त अनुक्रमवादी विचार की सफलता और निष्फलता की व्याख्या की विधियां सुझा रहा है।

(घ) पूर्व शर्तें/पूर्व ग्रह्यताएं

I. JAM

9.74 UBI की सफलता में प्रभावपूर्ण वित्तीय समाहन की भूमिका निर्णायक रहती है। अभी भी भारत के एक तिहाई वयस्कों के बैंक खाते नहीं है और उनके इस प्रकल्प से बाहर ही रह जाने की आशंका है। इन व्यक्तियों के ही समाज के गरीबतम समुदायों महिलाओं, अनुसूचित जातियों/जनजातियों, वृद्ध और अपंग समाज के सदस्य होने की संभावना भी अधिक होती है। उन्हीं को सरकार प्रदत्त सब्सिडियों का अधिकतम लाभ मिल रहा होता है।

---

[35] वस्तुत: राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम का आदेश है कि प्रत्येक गर्भवती महिला को अपने गर्भावस्था में रू. 6000 मिलेंगे। इसी प्रकार केन्द्र सरकार रू. 200 प्रतिमाह की पेंशन भी देती है, यह आंकड़ा 10 वर्ष से संशोधित नहीं हुआ है।

[36] यह विशेष वर्ग के राज्यों को दिए जाते हैं, ये राज्य हैं : जम्मू कश्मीर, असम, मणिपुर, मिजोरम, नागालैंड, अरूणाचल प्रदेश, त्रिपुरा, सिक्किम, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड।

[37] यादव, 2015, scroll.in

[38] चंडीगढ़ के DBT संबंधी मुद्दों के लिए देखें : Singh (2016)

9.75 अभी तक, अधिकारिक आंकड़ों के अनुसार 26.5 करोड़ जनधन खाते खुले हैं। यह जनसंख्या के मात्र 21 प्रतिशत के समान हैं। कई अपेक्षाकृत गरीब राज्यों में इन खातों की प्रतिव्यक्ति घनता अधिक है (रेखाचित्र 11), छत्तीसगढ़ में तो इनकी पैठ सर्वाधिक है। इन 26.5 करोड़ जनधन खातों में से 57 प्रतिशत आधार संबंद्ध हो चुके हैं (रेखाचित्र 12 आधार संबद्ध खाते, प्रति व्यक्ति)। उत्तरपूर्व के कुछ प्रदेश और जम्मू कश्मीर इस मामले में पिछड़े हुए हैं। JAM के लिए तैयार होने की दिशा में काफी तेजी से काम हो चुका है किन्तु अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

9.76 आधार कार्ड जारी होने की रफ्तार बहुत उत्साहवर्धक रही है। अबतक सौ करोड़ से अधिक आधार जारी किए जा चुके हैं, किन्तु कई राज्यों से सत्यापन/प्रमाणिकता की गंभीर विफलताओं की जानकारी आ रही है। झारखंड में विफलता दर 49 प्रतिशत, गुजरात में 6 प्रतिशत, आंध्र के कृष्णा जनपद में 5 प्रतिशत तो राजस्थान में 37 प्रतिशत रही है।[39] सही लाभार्थियों के सत्यापन में विफलता का अर्थ बहिष्कृति की त्रुटियां होता है।

9.77 एक अन्य समस्या क्षरण की है। भारतीय संदर्भ में वस्तु रूपी अंतरणों को ही सार्वलौकिक बनाने के पक्ष में बहुत प्रबल साक्ष्य है जो इस विधि से क्षरण न्यूनतम रह जाने का दावा करते हैं और यह स्पष्ट नहीं है कि सार्वलौकिक नकद अंतरण क्या सचमुच क्षरण को कम कर देगा। यदि UBI के माध्यम से अंतरित नकद राशियों के आकार परिमाण पर विचार करें और नकदी के नम्य स्वरूप पर ध्यान दें तो यह कल्पना करना संभव है कि UBI एक विकृतिपूर्ण संतुलन का कारण बन सकता है, जिसमें भ्रष्ट तत्व बहुत बड़ी राशियां डकार सकते हैं। यह प्रश्न भी बना हुआ है कि क्या आज UBI वास्तव में वर्तमान वस्तु अंतरण क्षेम कार्यक्रमों को सार्वलौकिक बनाने से बेहतर सिद्ध हो पाएगा। यह एक बार पुनः सर्व सुलभ एवं सुरक्षित वित्तीय संरचना की भूमिका पर आग्रह करता है। UBI की सफलता वस्तुतः JAM की सफलता पर ही निर्भर होगी।[40]

ii. केन्द्र राज्य सौदेबाजी

9.78 ऐसे कार्यक्रम की सफलता में UBI की प्रति व्यक्ति राशियों का महत्व निर्णायक होगा। एक महत्वपूर्ण प्रश्न इसकी वित्त व्यवस्था में केन्द्र और राज्यों के अंशदान का होगा। यह जीएसटी की भांति संघीय व्यवस्था के पणधारियों के बीच लंबी और जटिल सौदेबाजी के बाद

रेखाचित्र 11 : प्रतिव्यक्ति जनधन खाते

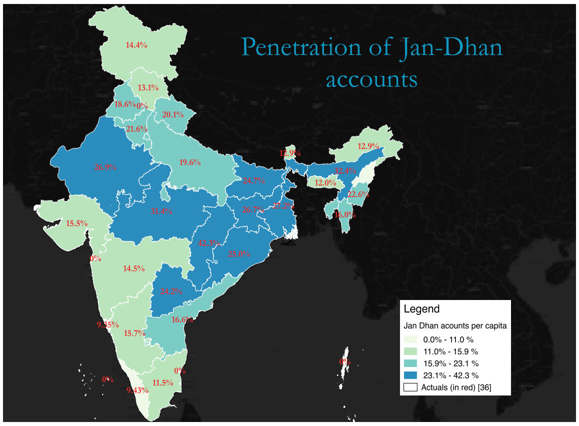

स्रोत : **भारत सरकार, समीक्षा की गणनाएं**

रेखाचित्र 12 : आधार संख्या से जड़े खाते-प्रतिव्यक्ति

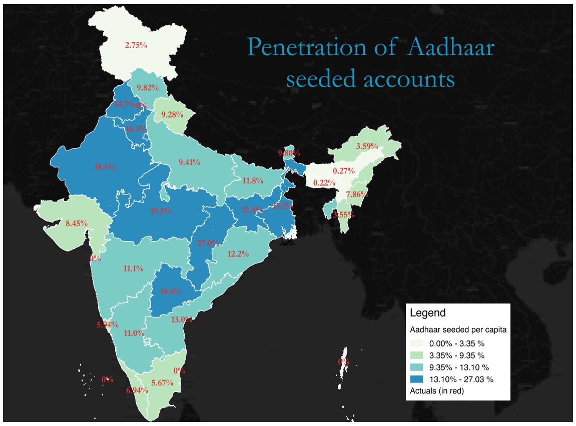

स्रोत : **भारत सरकार, समीक्षा की गणनाएं**

---

[39] यादव, 2016 scroll.in

[40] यह सत्य है कि UBI के अंतरण का माध्यम केवल जनधन खाते नहीं होंगे। कोई भी आधार संबंध खाताधारी UBI का अधिकारी होगा। इस अध्याय में जनधन खातों पर ही ध्यान इसलिए केन्द्रित किया गया है कि यह गरीब जनसमुदाय के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

ही तय हो पाएगा। प्रारंभ में 'न्यूनतम' UBI केन्द्र अपने संसाधनों से ही आरंभ कर सकता है। आगे चलकर केन्द्र राज्य सरकारों द्वारा व्यय के समान राशियां और देने की व्यवस्था अपना सकता है।

XI. निष्कर्ष

9.79 यदि, जैसा प्रतीत हो रहा है, वाम एवं दक्षिण पंथ के विचारक UBI के पक्षधर हो गए हैं, तो लगता है भले ही यह सशक्त विचार अभी तुरंत क्रियान्वयन के लिए तैयार नहीं हो, यह निश्चित रूप से गंभीर चिंतन मनन् के लिए अवश्य तैयार है। हम बड़ी सरलता से महात्मा (गांधी जी) को एक न्यायपूर्ण मध्यस्थ मान सकते हैं जो दोनों पक्षों के तर्कों पर विचार मंथन करेंगे। नैतिक सद्विवेक के साक्षात मूर्तीमान स्वरूप के रूप में महात्मा सहज ही UBI में उन आदर्शों, जिनके लिए उन्होंने जीवन भर संघर्ष किया था, प्राप्त कर सकने की क्षमता की संभावना अवश्य पाएंगे। किन्तु उनका नैतिक आग्रहपूर्ण व्यक्तित्व बिना प्रयास/परिश्रम के मिलने वाले पुरूस्कार को सहज भाव से स्वीकार नहीं कर पाएगा (वह उसे उत्तरदायित्व विहिनता ही मानेंगे)। समष्टि आर्थिक दृष्टि से वह एक पुरातन पंथी अर्थात संतुलनवादी थे। अतः वे UBI की अनुमति तभी देंगे जब उन्हें विश्वास हो जाए कि यह समष्टि आर्थिक स्थायित्व को बाधित नहीं करेगा। बाद में ऐसे उद्यम से निकल पाने की कठिनाइयों को भांप कर उन जैसा राजनीतिक रूझानों का निष्णात अध्येता इस बात को लेकर अवश्य चिन्तित होगा कि कहीं UBI भी एक अतिरिक्त सरकारी कार्यक्रम बन कर नहीं रह जाए। किन्तु अन्ततः वे UBI लागू करने की अनुमति दे सकते हैं।

9.80 संभवतः हम, अस्थाई रूप से ही सही, ऐसा निष्कर्ष निकाल सकते हैं।

परिशिष्ट-1 : संसाधन अप-आबंटन : कार्यक्रमानुसार आंकलन

यहां सभी 6 कार्यक्रमों में लक्षित लाभार्थियों के अनुसार सभी जिलों में अपआबंटन दिखया गया है।[41] Y-अक्ष पर सकल कार्यक्रम राज्यों में जिलों के अंश हैं।

रेखाचित्र A1 : विभिन्न कार्यक्रमों के आंकलित अप-आबंटन

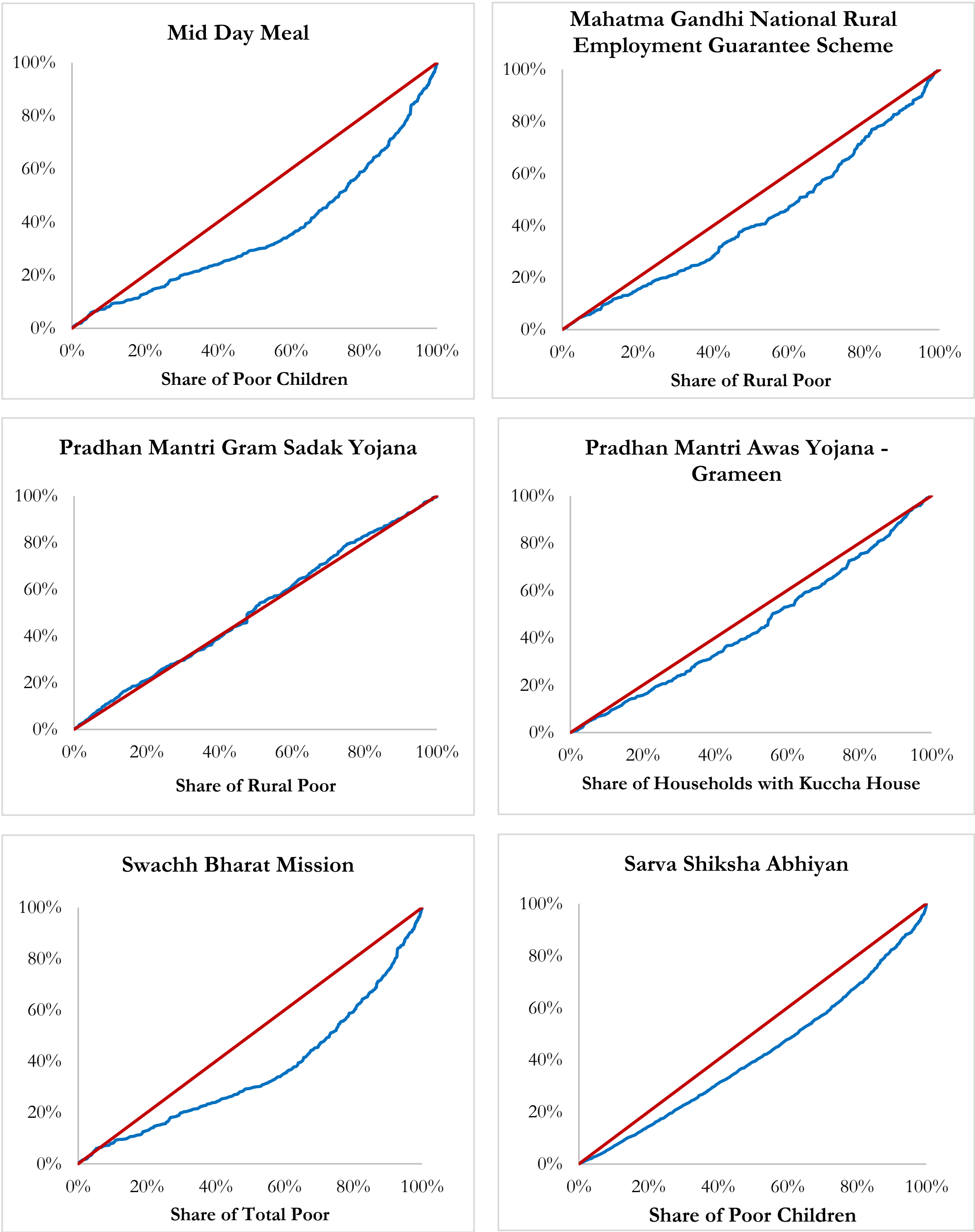

स्रोत : प्रत्येक कार्यक्रम के प्रशासनिक आंकड़े, NSS 2011-12, SECC 2011, समीक्षा गणनाएं

41 जैसा कि रेखाचित्र दिखा रहे हैं, हमने अप-आबंटन का लक्षित लाभार्थी वर्गों के अनुसार आंकलन किया है, या फिर हम गरीबों के अंश के अनुसार अप-आबंटन का आंकलन कर रहे हैं।

रेखाचित्र A2 : अप आबंटन की रैखिक प्रस्तुति

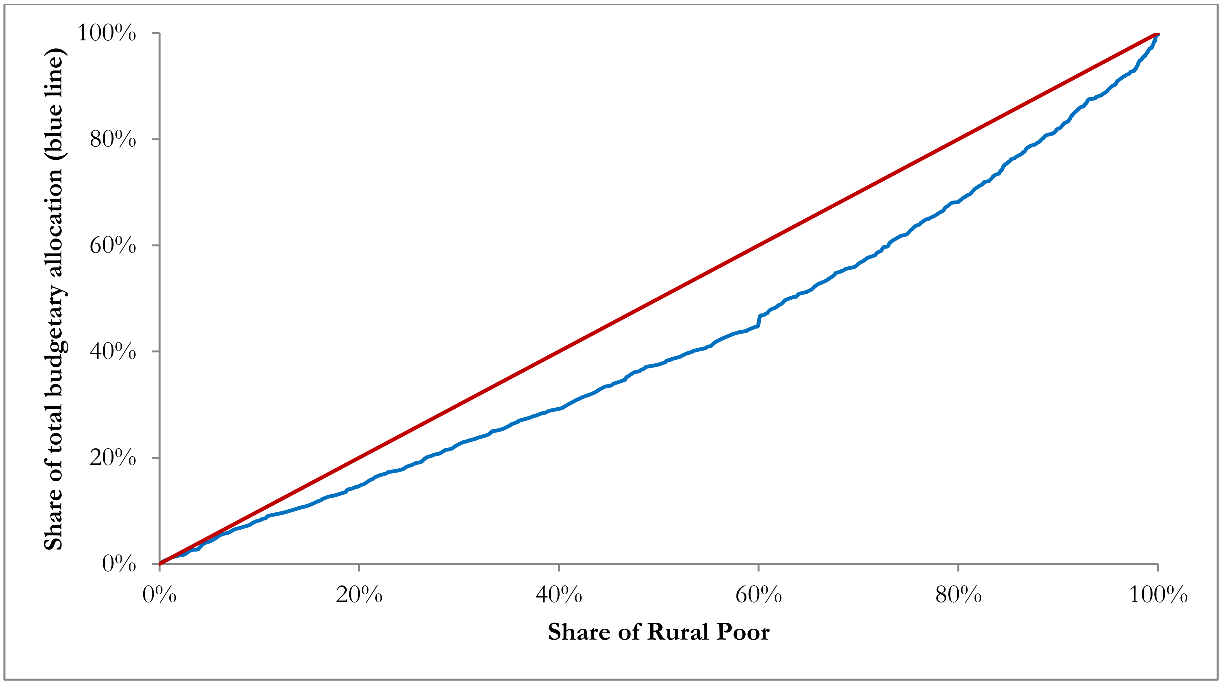

स्रोत : प्रत्येक कार्यक्रम के प्रशासनिक आंकड़े, NSS 2011-12, SECC 2011, समीक्षा गणनाएं

उपर्युक्त चर्चित 6 योजनाओं में अपआबंटन के स्तर का आंकलन करने के लिए हम गिनि गुणांक का आंकलन कर रहे हैं। यहा X-अक्ष पर जनपदों के ग्रामीण गरीब जनों का संचयी अनुपात दर्शाया गया है। हम सबसे अधिक गरीब से सबसे कम गरीब जनपद की ओर चल रहे हैं। Y-अक्ष पर इन जनपदों को आबंटन के इन कार्यक्रमों पर सकल बजट प्रावधान में संचयी अंश दिखाए गए हैं। यदि रेखाचित्र की जानकारी पढ़ें तो ज्ञात होता है कि गरीबतम 20 प्रतिशत जनपदों के हिस्से में केवल 15 प्रतिशत संसाधन आए हैं तो 40 प्रतिशत गरीबों को 29 प्रतिशत और 50 प्रतिशत को इन योजनाओं पर हुए व्यय से 38 प्रतिशत ही मिल पाया है। कुल मिलाकर कर अपआबंटन का गिनि गुणांक 17 प्रतिशत है। यह रेखाचित्र में लाल और नीली रेखाओं के बीच का अंतर है। विभिन्न कार्यक्रमों में इस गुणांक के मानों में बहुत विभिन्नता पाई गई है।

अगले दो रेखाचित्र 6 शीर्ष क्षेम कार्यक्रमों में जनपदों के बीच अपआबंटन को रेखांकित कर रहे हैं। ये कार्यक्रम हैं PMAY, SSA, MDM, PMGSY, मनरेगा और SBM. रेखाचित्र A3 वर्ष 2011–12 में सभी जनपदों में गरीबों के व्यक्तिगणना अनुपात का तुरंत अंकन दिखा रहा है। रेखाचित्र A4 ने उन्हीं 6 कार्यक्रमों पर उन जनपदों में प्रति गरीब जन व्यय अंकित किए हैं। गरीबी और प्रति गरीब क्षेम व्यय के बीच एक तीखा असमन्वय स्पष्ट दिखाई दे रहा है। यह विभिन्न जनपदों के रंगों में अंतर द्वारा स्पष्ट होता है। यह बात उत्तर प्रदेश तथा बिहार और मध्य प्रदेश के कुछ भागों में बहुत ही स्पष्ट है। दूसरे शब्दों में, अधिक गरीब जनपद क्षेम कोषों के अभाव की मार भी झेल रहे हैं।

रेखाचित्र A3 : व्यक्ति गणना अनुपात (जनपदानुसार) 2011-12

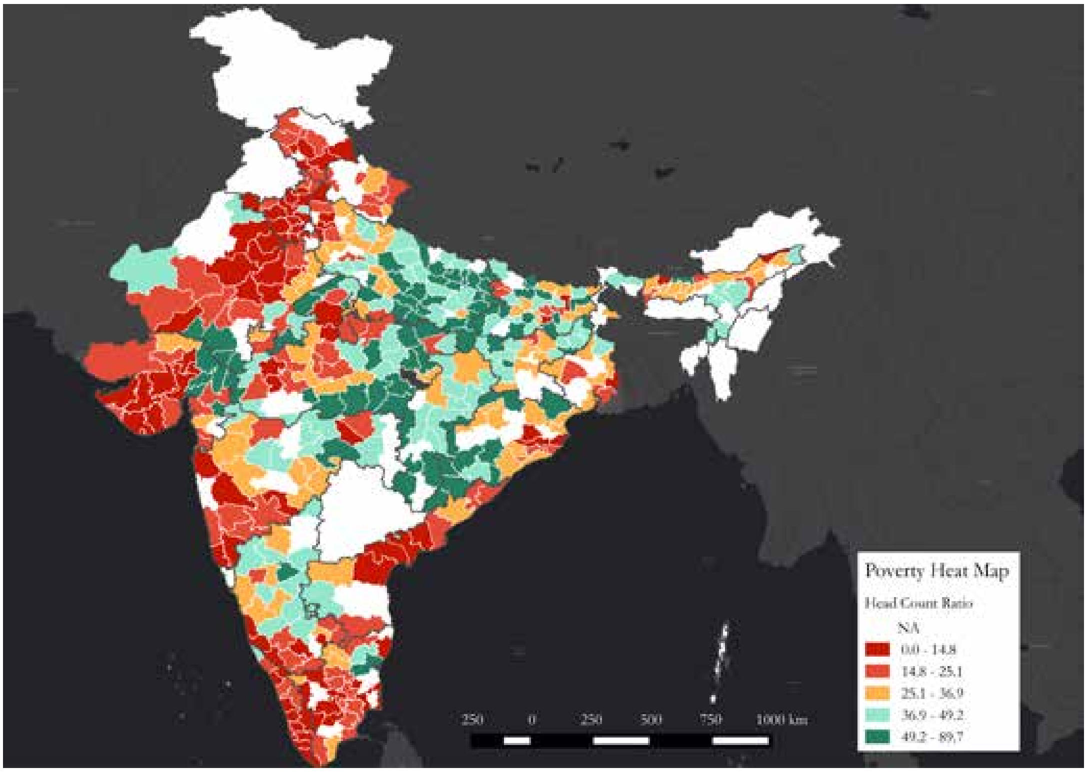

स्रोत : NSS 2011-12, समीक्षा की गणनाएं

रेखाचित्र A4 : विभिन्न जनपदों में प्रति गरीब क्षेम व्यय

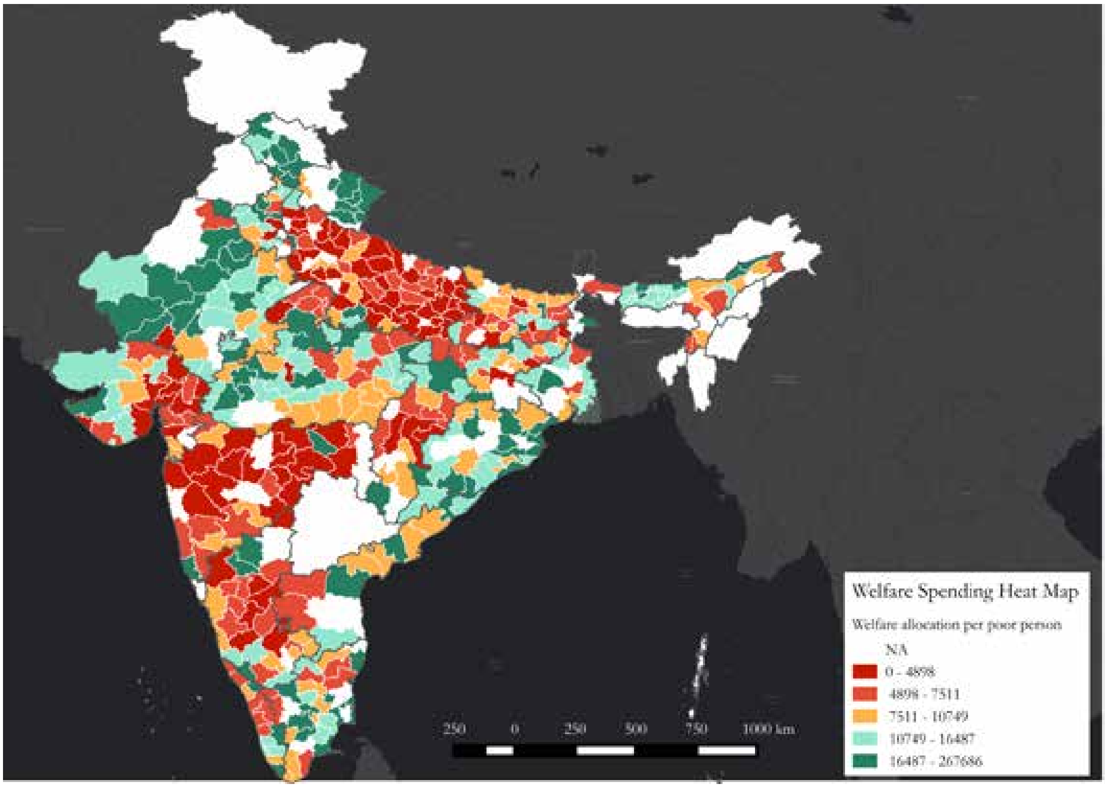

स्रोत: कार्यक्रम प्रशासन आंकड़े, NSS-2011-12, समीक्षा की गणनाएं

परिशिष्टि-2 वर्तमान केन्द्रीय एवं केन्द्र प्रायोजित योजनाओं की लक्षिता

कार्यविधि

लक्षिता की दक्षता के विश्लेषण में 4 प्रकार की लक्षिता त्रुटियों को समाहित किया गया है : व्यवस्था से संसाधन क्षरण, विभिन्न जनपदों के बीच अप-आबंटन, गैर गरीब वर्ग को लाभ होना तथा गरीब वर्ग का व्यवस्था से बाहर रह जाना। 'गरीब' की परिभाषा जनसंख्या के 40 प्रतिशत गरीबतम या आय के वितरण में सबसे नीचे के 40 प्रतिशत से की गई है। रेखाचित्र ।3 में 2011-12 में PDS और मनरेगा की लक्षिता दक्षता दर्शाई गई है। उसका आंकलन निम्न विधि से किया गया है।

लक्षिता त्रुटि	PDS चावल, गेहूं और घासलेट (तीनों के लिए)	मनरेगा
व्यवस्था से क्षरण	सभी लाभार्थियों के लिए आबंटित और उन्हें वास्तव में मिली मात्राओं के बीच अंतर ***स्रोत* : आर्थिक समीक्षा, 2015-16**	इम्बर्ट एंड पैप (2014)
प्रभाव (शीर्ष 60%)	चावल, गेहूँ और घासलेट के PDS के सकल परिमाण का शीर्ष 60 प्रतिशत पर प्रभाव ***स्रोत* : IHDS, 2011-12**	मनरेगा आय का शीर्ष 60 प्रतिशत द्वारा प्राप्त अंश ***स्रोत* : IHDS, 2011.12**
बहिष्कृति त्रुटि	निम्नतम 40 प्रतिशत का वह अंश जिन्हें PDS से आपूर्ति नहीं मिल पातीं। ***स्रोत* : IHDS, 2011-12**	निम्नतम 40 प्रतिशत में उनका अंश जिनके पास मनरेगा कार्ड नहीं है। ***स्रोत* : NSS 2011**

रेखाचित्र A5 : PDS और मनरेगा लक्षिता, 2011-12

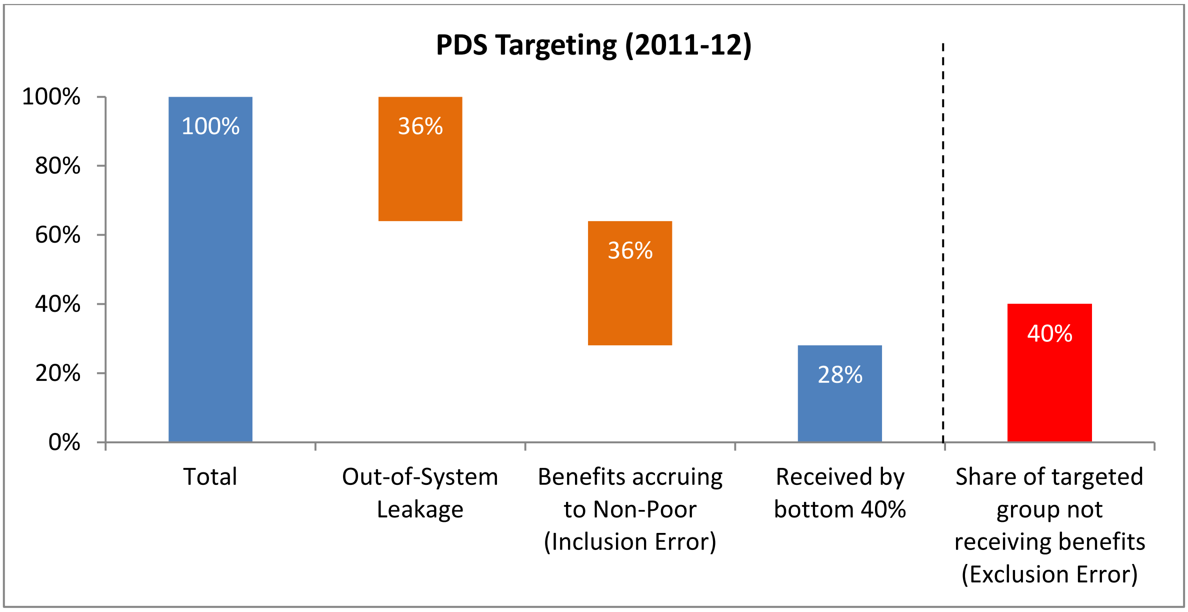

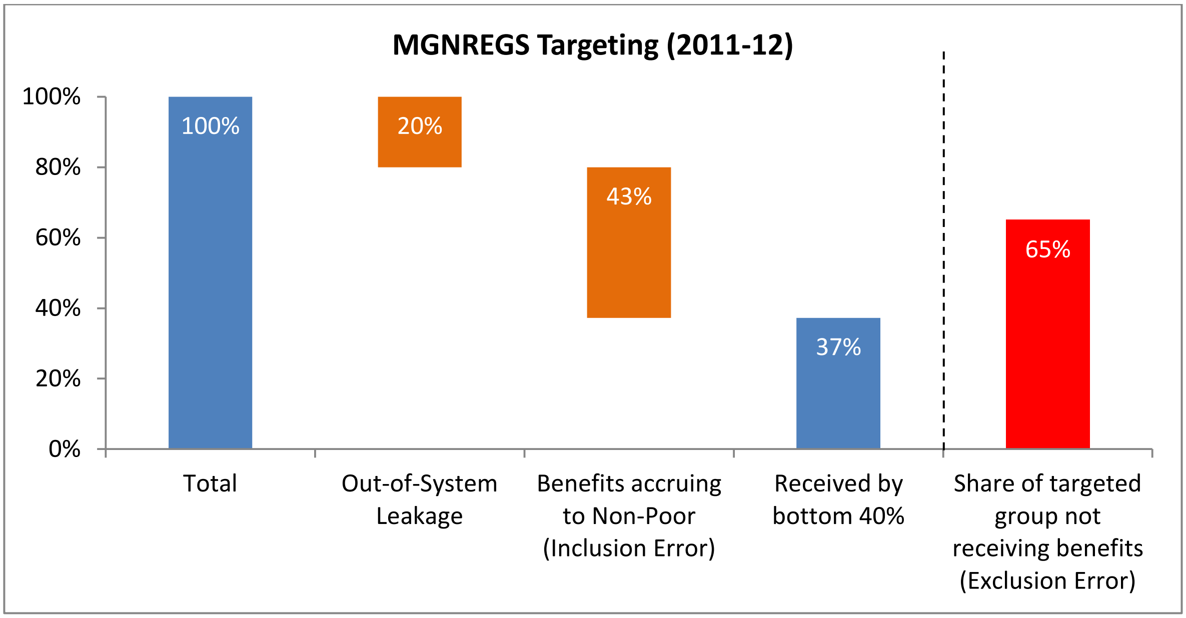

परिशिष्ट 3 : सेवा भारत - यूनीसेफ

आधारिक आय अंतरणों पर एक अध्ययन[42]

1. UBI के परिणाम स्वरूप श्रम आपूर्ति से जुड़ा नैतिक द्वन्द्व

विभिन्न राष्ट्रीय परिवेशों में यह प्रश्न प्रायः उठाया गया है। यदि निःशर्त आधारिक आय दी गई तो यह कार्य करने के लिए एक बड़ी अप-प्रेरणा बन जाएगी। लोग मुफ्त में मिल रही रकम लेंगे और सुस्ती में पड़े रहेंगे। किन्तु डावला आदि (आगे से हम इसे एमपी अध्ययन ही कहेंगे) ने स्पष्ट किया है कि भारत के मध्य प्रदेश में तो ऐसा कुछ नहीं हुआ। इस अध्ययन का एक बड़ा निष्कर्ष तो यह है कि ग्रामीण गरीबजन अब कहीं मजदूरी की खोज में भटकने के स्थान पर स्वयं खेती करने लगे हैं। यहां निष्कर्ष यही है कि छोटे सीमांत किसान आधारिक आय के आश्वस्त हो जाने पर अपनी खेती में अधिक निवेश कर पाते है। परिणाम स्वरूप कृषित भूमि और कृषि उत्पादन में बड़ा सकारात्मक उछाल आया है। इस परिवर्तन का एक सकारात्मक प्रभाव छोटे एवं सीमांत किसानों की सत्वर ऋणग्रस्तता में कमी रहा है। अब वह महाजन से कम उधार लेते हैं। उक्त क्षेत्र के महाजन की सूद की दर 2 से 10 प्रतिशत मासिक रही है। संक्षेप में, जब आधारिक आय मिलने लगती है तो व्यक्ति अधिक उत्पादक हो जाते हैं।

दूसरे, आधारिक आय अपनी परिभाषा से ही अन्य प्रकार के रोजगार की प्रतिस्थापक नहीं है। केवल इस आधारिक आय के सहारे तो गुजारा नहीं हो सकता। यह तो अतिदुर्गम अवस्था में भी जीवित रह पाने का कुछ सहारा मात्र है।

और अंत में, यह अध्ययन बताता है कि यदि आधारिक आय के रूप में एक सही राशि दी जाती है तो उसके सकारात्मक प्रभाव सामान्य समय में उक्त राशि के मौद्रिक मूल्य मान से बहुत अधिक बढ़े चढ़े होते हैं। दूसरे शब्दों में आधारिक आय का बाधिता विमोचक प्रभाव उसके मौद्रिक मूल्यमान से कई गुना अधिक विशाल होता है।

2. दिखावे के उपभोग और अपपदार्थों पर व्यय पर UBI के प्रभाव

यह प्रश्न उठाते समय व्यक्ति के मन में दो बाते चल रही होती हैं :

i. नकद तो बहुत नम्य स्वभाव का होता है, उसका वांछित क्षेम प्रभावों के लिए खर्च होना आवश्यक तो नहीं, अतः जरूरी नहीं कि सामाजिक नीति निर्माताओं द्वार कल्पित भोजन और पोषण, वस्त्र, शिक्षा आदि अभी तक गरीबों की पहुँच से बाहर रही चीजों/सुविधाओं पर ही इसका व्यय होगा।

ii. परिवार के उत्तरदायित्व विहीन पुरूष मुखिया सारी सहायता राशियां बर्बाद कर पूरे परिवार को भीख मांगने को विवश कर सकते हैं। किन्तु अध्ययन से व्युत्पन्न आंकड़े यही दर्शाते हैं कि ये दोनों मान्यताएं पूर्वाग्रह मात्र हैं। इनका वास्तविकता से कोई नाता नहीं है। एक तो आर्थिक दृष्टि से अप-पदार्थ मानी जाने वाली चीजों, शराब और तंबाकू के उपभोग में वृद्धि का कोई प्रमाण नहीं मिला है। इसके विपरीत भील आदिवासी गांवों में तो अब किसानों को कृषि आदान खरीदना आसान लगने से उनका शराब पर खर्च कम हो गया है। इसी के सहारे कृषि उत्पादिता और 'अपनी खेती' की प्रवृत्ति में सुधार आया है।

---

[42] India network for Basic Income vkSj SEWA Bharat द्वारा, डावला आदि के अध्ययन (2015) के आधार।

परिशिष्ट 3 : बैनर्जी, हाना, क्रैंडलर और ऑलकेम 2015 में मेटा एनालिसिस के लिए उपयोग की गयी सात अध्यनों का विवरण

देश	कार्यक्रम	मूल्यांकन वर्ष	परिवारों की संख्या	लक्षिता विधि	अंतरण का प्रकार और राशि	अन्तरण/उपभोग
होन्डुआस	Programa de Asignacion Familiar – Phase II (PRAF II)	2000–2002	3265	भौगोलिक और पारीवारिक जनांकीय	परिवार की रचना के अनुसार 4 से 23 डालर मासिक	4 प्रतिशत
मोरक्को	Ysuddot	2008.2010	4277	भौगोलिक	CCT तथा चिन्हित CCT का मान 8 से 13 डालर प्रतिमाह प्रति बालक, उनकी आयु के अनुसार	5 प्रतिशत
मैक्सिको	Progresa	1998–99	20908	भौगोलिक और PMT	CCT $12.5 मासिक $ $8 से $35 प्रति बालक (बच्चे की कक्षा के अनुसार) + $1.1-$20.5 तक स्कूल सामग्री हेतु अनुशासन। यह भी प्रति बालक था। किन्तु प्रति बालक सकल राशि $75 मासिक से अधिक नहीं होती थी।	20 प्रतिशत
मैक्सिको 1	Programa de Apoyo Alimentario (PAL)	2004–05	2986	भौगोलिक	UCT : $ 13 मासिक	11.5 प्रतिशत
फिलीपिन्स	Pantawid Pamilyang Pillpino Program (PPPP)	2009–2011	1418	भौगोलिक और PMT	बच्चों की संख्यानुसार $11 से $30 का CCT प्रतिमास	11 प्रतिशत
इंडोनेशिया	Program Keluarga Harapan (PKH)	2007–09	14750	भौगोलिक और PMT	CCT : $44 से $161 वार्षिक	17.50 प्रतिशत
निकारागुआ	Red de Proteccion Social (RPS)	2000–02	1397	भौगोलिक : वाहन स्वामी 6 प्रतिशत को छोड़कर या जिनके पास 14 हैक्टेयर से अधिक भूमी थी	CCT : $224 वार्षिक + $112 वार्षिक (स्कूल जाने पर) + $21 प्रति बालक वार्षिक	20 प्रतिशत

टिप्पणियां : अध्ययन प्रयोग में दो प्रकार भेद थे : भोजन अन्तरण और नकद अंतरण। हमने नकद अंतरण पर ही ध्यान दिया है।

स्रोत : Honduras: Galiani and McEwan (2013), Glewwe and Olinto (2004), Morocco: Benhassine, Devoto, Duflo, Dupas, and Pouliquen (2015), Mexico Progresa: Parker and Skoufias (2000), Skoufias and di Maro (2008), Maxeco PAL: Skoufias, Unar, and Gonzalez Cossio (2013), Philipinnes: Chaudhury, Friedman and Onishi (2013), Indonesia: World Bank Office Jakarta (2011), Nicaragua: Maluccio and Flores (2005)

परिशिष्ट 4 : गरीबी और भेद्यता का आंकलन : UBI के विभिन्न मानों के अनुसार

UBI के प्रत्येक स्तर के अनुसार गरीबी और भेद्यता का आंकलन करने के लिए IHDS 2005-06 और रेखांशीय सर्वेक्षण, 2011-12 का प्रयोग किया गया है। साथ ही NSS 2011-12 की जानकारी का प्रयोग गरीबी के स्तर के आंकलन के लिए किया गया है।

मान्यताएं और सावधानियां

1. गरीबी और भेद्यता में कमी का अनुमान यथास्थिति की मान्यता के अनुसार लगाया गया है। दूसरे शब्दों में हम यह मानकर काम कर रहे हैं कि वर्तमान क्षेम योजनाएं और सब्सिडी व्यवस्था पूर्ववत चलते हुए ही सरकार ने अतिरिक्त रूप से UBI प्रारंभ की है। अत: यदि UBI को अन्य कार्यक्रमों का प्रतिस्थापक बनाया गया तो हमारे ये गरीबी निवारण के आंकड़े वास्तविकता से कहीं अधिक हो जाएंगे।

2. ये अनुमान UBI को केवल उपभोग का एक स्रोत मान रहे है जबकि इस UBI की राशि का प्रयोग परिसंदा संवर्धन में हो सकता है, वह आगे चलकर उच्चतर आय और उपभोग को संभव बना देगा। अत: इन अनुमानों द्वारा UBI के माध्यम से गरीबी और भेद्यता निवारण के सही प्रभावों का न्यूनांकन हो रहा होगा।

3. यह माना गया है कि 2016-17 का समष्टि (जनसंख्या) उपभोग व्यय आबंटन बिल्कुल वैसा ही है जैसा 2011-12 में था। जबकि वास्तव में यह मान्यता अधिक उचित होगी कि उपभोग आबंटन में गरीबी रेखा की अपेक्षा अधिक तेजी से उन्नयन हुआ है और गरीबी का अनुमान 2011-12 के 16 प्रतिशत (NSS 2011-12 के 22 प्रतिशत) से कहीं नीचे चला गया है। जनसंख्या के निम्नतम 40 प्रतिशत और गरीब समुदाय के उपभोग स्तर समान प्राय: ही हैं, जैसे कि निम्नांकित उपभोग आबंटन रेखाचित्र से स्पष्ट हो रहा है। यहां लाल उर्द्धव रेखा गरीबी है और हरी उर्द्धव रेखा गरीबी रेखा से दुगुने उपभोग को दर्शाने वाली रेखा है। लगभग 40 प्रतिशत परिवारों का उपभोग स्तर इन दो रेखाओं के बीच में (उर्द्धव और क्षैतिज रेखाओं के विभाजन क्षेत्र के बीच) में है।

रेखाचित्र A6 : उपभोग का आबंटन (2011-12)

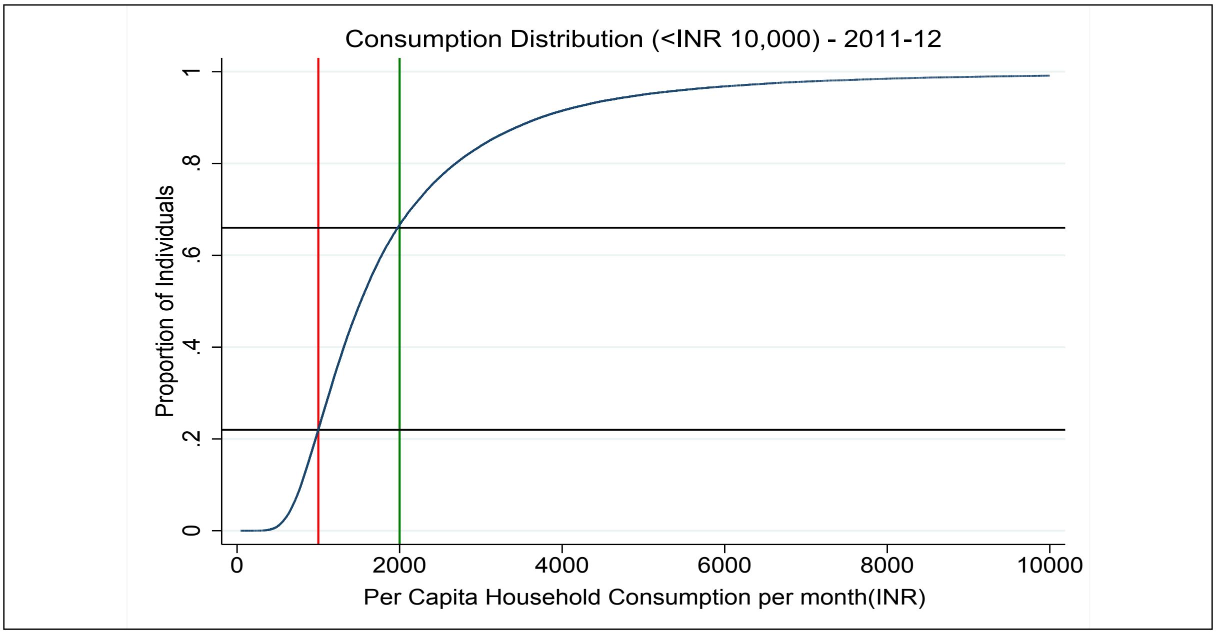

स्रोत : NSS 2011.12, समीक्षा गणनाएं

गरीबी की दर : प्रति व्यक्ति मासिक UBI राशि X मिलने पर UBI उपरांत उपभोग होगा कुल प्रति व्यक्ति उपभोग अर्थात (NSS-2011-12+X)। यह प्रत्येक परिवार के लिए आंकलित करने बाद हम देखते हैं कि अब भी कितने परिवार गरीबी की रेखा से नीचे रह गए हैं। यही आंकलन 1+1DS-2011-12 के आंकड़े प्रयोग करके दोहराया गया था।

भेद्यता : प्रति व्यक्ति मासिक UBI राशि X होने पर पहले की भांति UBI उपरांत कुल प्रति व्यक्ति उपभोग का आंकलन केवल 1+1DS-2011-12 के आंकड़ों के अनुसार गया है, इसका कारण यही है भेद्यता के अनुमान रेखांशानुसार लगाए गए हैं। फिर हम 2005-06 में (UBI अंतरण के बाद के) उन गैर गरीबों का अनुपात ज्ञान करते हैं जो 2011-12 में पुन: गरीब वर्ग में फिसल गए हों (अन्तरण के बाद भी)।

गरीबी में सीमांत कमी : प्रत्येक UBI रूपए के अंतरण के अनुसार गरीबी में प्रतिशत अंक की कमी।

भेद्यता में सीमांत कमी : प्रत्येक UBI रूपए के अंतरण के अनुसार भेद्यता में प्रतिशत अंक की कमी।

UBI की अंतिम (पूर्ण रूपेण) लागत : वर्ष 2011-12 के आंकड़ों का स्फीति दर के आधार पर समंजन कर 2016-17 में UBI के परिमाण का आंकलन करें। इस संख्या को सकल जनसंख्या से गुणा करके हम UBI की सकल लागत का आंकलन कर सकते हैं। उस सकल लागत को सकल GDP से भाग देकर (बजट अनुमान 2016-17) हम UBI को GDP के अंश के रूप में दिखा सकते हैं।

रेखाचित्र A7 : UBI की राजकोषीय लागत और सीमांत गरीबी एवं भेद्यता निवारण पर प्रभाव

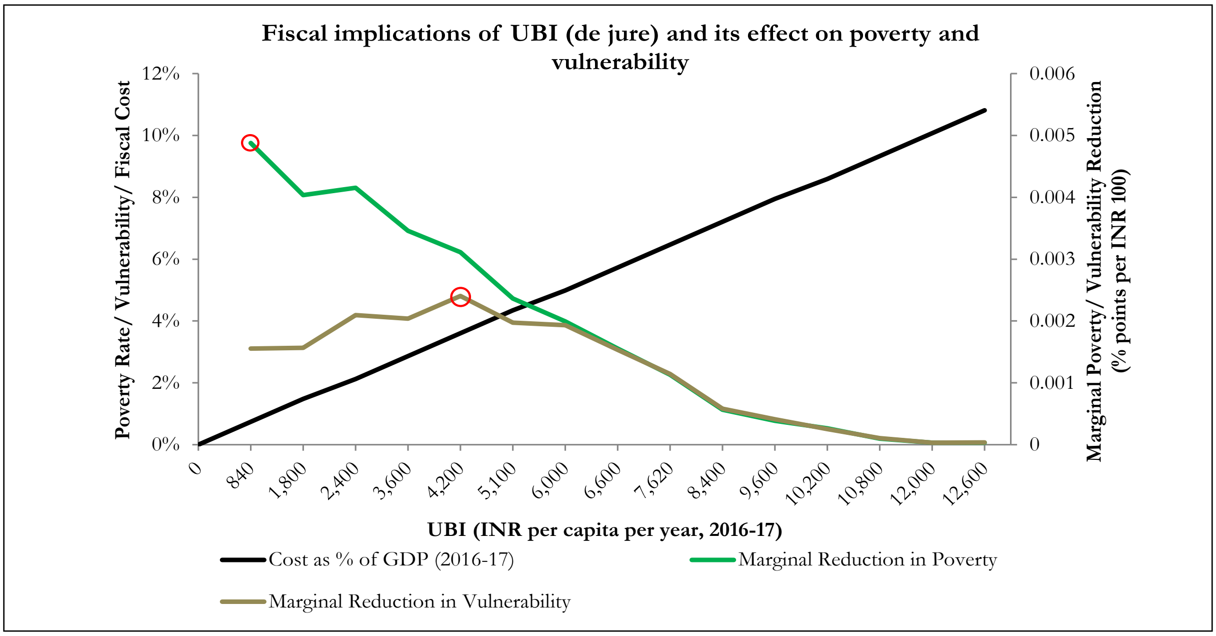

स्रोत : IHDS 2005-06, NSS 2011-12 और समीक्षा की गणनाएं

UBI : रूपए की सही कीमत की वसूली : रेखाचित्र A5 में अधिकतम 'कीमत' की वसूली के आधार पर UBI के रूप खर्च हुए प्रत्येक रूपए से गरीबी और भेद्यता में आई कमियों को अंकित कर अंतत: उस UBI राशि का निर्धारण करता है जिस पर ये दोनों कमियां एक साथ संभव अधिकतम स्तर पर हो। यहां प्रयुक्त वक्र सीमांत गरीबी और सीमांत भेद्यता कमी वक्र ही है। इन्हें हरी और स्लेटी रंग की रेखाओं द्वारा दिखाया गया है। इन दो वक्रों पर विचार करने पर स्पष्ट हो रहा है कि UBI की लागत पर अधिकतम वसूली गरीबी निवारण के लिए रू. 600

प्रतिव्यक्ति वार्षिक तथा भेद्यता के लिए रू. 300 प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष (2011-12) पर होती है। स्फीति समंजन के बाद ये आंकड़े क्रमश: रू. 840 और रू. 4200 हो जाते हैं। इन्हें रेखाचित्र A5 में लाल चक्रों द्वारा दिखाया गया है। इन दोनों आंकड़ों की औसत UBI रू. 2520 पर ले आती है। यह जीडीपी का मात्र 2.2 प्रतिशत होता है। आइए हम आय वितरण में से जनसंख्या के शीर्षस्थ 25 प्रतिशत को छोड़ शेष 75 प्रतिशत के लिए सार्वलौकिक UBI पर विचार करें। इसकी लागत तो GDP का मात्र 1.6 प्रतिशत रह जाती है। इसी (मामूली सी) जीडीपी लागत पर ही गरीबी की दर में 9 प्रतिशत और भेद्यता दर में 7.5 प्रतिशत की कमी आती है। यदि यह सार्वलौकिकता सभी वय वर्गों की महिलाओं (और लड़कियों) तक ही सीमित रखी जाती है तो जीडीपी लागत मात्र 0.85 प्रतिशत रह जाएगी।

तालिका 3 : UBI की राशियां, गरीबी दर (NSS और IHDS, 2011-12) तथा लागत जीडीपी अनुपात (प्रतिशत)

UBI, रूपए प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 2011-12	UBI, रूपए प्रतिव्यक्ति प्रतिवर्ष 2016-17	गरीबी दर 2011-12 NSS	गरीबी दर 2011-12 IHDS	राजकोषीय लागत जीडीपी का प्रतिशत 2016-17 NSS	राजकोषीय जीडीपी प्रतिशत वास्तविक लक्षिता 2016-17, NSS
0	0	22.03%	16.86%	0.0%	0.0%
600	874	17.62%	13.93%	0.7%	0.6%
1200	1747	13.54%	11.51%	1.5%	1.1%
1800	2496	9.78%	9.02%	2.1%	1.6%
2400	3370	6.63%	6.94%	2.9%	2.1%
3000	4243	4.14%	5.08%	3.6%	2.7%
3600	5117	2.52%	3.66%	4.3%	3.3%
4200	5866	1.42%	2.46%	5.0%	3.7%
4800	6739	0.82%	1.53%	5.7%	4.3%
5400	7613	0.45%	0.85%	6.5%	4.9%
6000	8486	0.20%	0.51%	7.2%	5.4%
6600	9360	0.11%	0.28%	8.0%	6.0%
7200	10109	0.06%	0.12%	8.6%	6.4%
7800	10982	0.04%	0.06%	9.3%	7.0%
8400	11856	0.02%	0.05%	10.1%	7.6%
9000	12730	0.00%	0.03%	10.8%	8.1%
9600	13603	0.00%	0.02%	11.6%	8.7%
10200	14352	0.00%	0.02%	12.2%	9.1%
10800	15226	0.00%	0.01%	12.9%	9.7%
11400	16099	0.00%	0.00%	13.7%	10.3%
12000	16973	0.00%	0.00%	14.4%	10.8%

परिशिष्ट 6 : UBI के पथदर्शी विचार और स्तर विस्तार के लिए निहितार्थ

निम्न तालिका के भाग 1 और 2 में खंड XC में चर्चित प्रत्येक अनुक्रमवादी विधि के लिए उसके सफल या असफल रहे पर राष्ट्रव्यापी UBI के विस्तृत निहितार्थ प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

किसी UBI पथदर्शी कार्यक्रम की सफलता की परिभाषा यही है कि वह क्षरण मुक्त हो प्रत्येक लाभार्थी समूह तक पूर्णत लक्षित हितलाभ पहुँचा रहा हो।

I. सफलता

यदि यह विचार सफल रहें तो इन वर्गों के लिए निहितार्थ				हम इसका स्तर विस्तार कैसे कर पाएंगे?
UBI विचार	लाभार्थी की सटीक पहुंचा	सुचारू JAM व्यवस्था	प्रशासकीय व्यवहार्यता	
UBI : महिलाओं के लिए	हां, केवल महिलाओं के लिए UBI की सफलता के बाद विस्तार में लाभार्थी वर्ग की पहचान में कोई कठिनाई नहीं होगी।	हां, महिला तक लक्षिता में UBI की सफलता JAM की हितलाभ प्रेषण में सफलता का पर्याप्त प्रमाण है।	हां, सभी महिलाओं को UBI का लाभ पहुँचा सकने वाला प्रशासन सभी व्यक्तियों तक भी यह लाभ पहुँचा सकता है। पैमाना दुगुना अवश्य होगा किन्तु अचल लागत तंत्र तो पहले ही निर्मित हो चुका है।	सभी व्यक्तियों से पूर्व केवल महिलाओं के लिए UBI का प्रारंभ होना चाहिए।
वर्तमान लाभों के स्थान पर UBI पाने के चयन की सुविधा	नहीं, यह विधि तो पहले से ही अप-आबंटन पहचान को और सुदृढ़ कर देगी।	किसी सीमा तक ही- यह स्पष्ट करती है कि व्यवस्था से जुड़े व्यक्तियों के लिए JAM प्रभावोत्पादक है।	हां, सकल चयन विधि कोष अन्तरण की प्रशासकीय समस्याएं सुलझा देगी यह प्रशासन तंत्र को यह भी बता देगी कि किसने पुरानी योजनाओं का त्याग किया है और किसने नहीं।	इस चयन के बाद धीरे-धीरे सभी को UBI में सम्मिलित होने का अवसर मिलना चाहिए, भले ही उन्होंने अन्य हितलाभों को त्याग नहीं किया हो।
सभी भेद्यताग्रस्त समूहों के लिए	नहीं, इन समूहों की यहां पहचान स्पष्ट होने का यह अर्थ नहीं है कि यह कार्य अन्य समूहों में भी सहज ही संपन्न हो जाएगा।	हां, यह JAM की सामर्थ्य का एक प्रबल प्रमाण होगा कि वह बहिष्कृति त्रुटि का शोधन कर सकता है, क्योंकि ये समुदाय सामान्यत: बहिष्कृत ही रहते रहे हैं।	किसी सीमा तक ही- ये समुदाय UBI के हितभागियों का एक छोटा अंश है। अत: इनका प्रशासन तंत्र पर भार संपूर्ण UBI जितना विशाल होगा।	यह स्पष्ट नहीं है कि उन समूहों तक कैसे पहुँचा जाएगा जिन्हें सरलता से पहचाना नहीं जा पाता

राज्य को सहायता के स्थान पर	हां, यह क्षेत्र के सभी निवासियों को प्राप्त होगा	हां, यह JAM की संकल्पना का बहुत ही प्रबल प्रमाण होगा, क्योंकि ये क्षेत्र वित्तीय समाहन में पिछड़े है।	हां, यदि निम्न राजकोषीय क्षमता वाले क्षेत्र में भी UBI सफल रहे तो बेहतर क्षमता क्षेत्रों में सफलता निर्विवाद रहेगी।	धीरे-धीरे सभी राज्यों पर विस्तार
शहरी क्षेत्र	किसी सीमा तक : शहरी धनिकों को व्यवस्था से बाहर रखना सरल है, किंतु ग्रामीण क्षेत्रों में यह कार्य कठिन हो जाता है।	ग्रामीण क्षेत्रों में JAM की तैयारी निम्न होने से बाधा संभव है।	किसी निश्चित सीमा तक स्पष्ट करता है कि शहरी क्षेत्रों में तो UBI एक अच्छे स्तर तक संभव है, किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों की प्रशासन व्यवस्था भिन्न होती है।	ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तार में सावधानी रखें- शहरी क्षेत्रों से सीखे सभी सबक ग्रामीण क्षेत्रों में व्यवहार्य नहीं होते।

(2) विफलता

UBI का विचार	**यदि यह सफल नहीं हो पात तो फिर इसका UBI के लिए क्या अर्थ है?**
केवल महिलाओं के लिए	इसका अर्थ होगा कि सभी व्यक्तियों के लिए UBI की रचना और क्रियान्वयन बहुत चुनौती भरा होगा
वर्तमान लाभों के स्थान पर UBI के चयन की सुविधा	चयन आधारित UBI लागू करना संभवतः श्रेष्टतम मार्ग नहीं है। इससे चयनहीन UBI के विषय में कुछ सीख या संकेत भी नहीं मिलते।
केवल भेद्यता ग्रस्त समूहों को	इनमें से एक या अधिक का संकेत मिलता है : (क) सफलता के लिए UBI को कहीं बड़े समुदाय पर लागू करना चाहिए (ख) JAM संरचना या फिर राज्य की प्रशासन क्षमताएं अत्यंत भेद्य समूहों तक भी UBI पहुँचाने के लिए पर्याप्त नहीं है।
राज्य को सहायता	यहां विफलता की संभावना सबसे अधिक होती है। अतः इसके शेष देश में UBI की सफलता को लेकर कोई बड़े निहितार्थ नहीं होंगे।
शहरी क्षेत्र	यहां विफलता की संभावना न्यूनतम है, यहां JAM संरचना बेहतर होगी और प्रशासकीय क्षमता भी। अतः शहरों में विफल रहने पर तो भारत के लिए UBI की व्यवहार्यता पर ही प्रश्न चिन्ह लग जाएंगे।

परिशिष्ट 7 : मध्यम वर्ग के लिए निहित सब्सिडी के आंकलन पर एक टिप्पणी
सरकारी सब्सिडी/व्यय/सहायता : मध्यम वर्ग के लिए (व्याख्या सहित)

सरकारी सब्सिडियां/खर्च करना/मध्य वर्ग की सहायता
(व्याख्यात्मक टिप्पणियों सहित)

योजना (2015-16)	निहित सब्सिडी (रू. करोड़)	स्रोत
LPG	28,219	आर्थिक समीक्षा, एनएसएस 2011-12, अंतरराष्ट्रीय स्वर्ण परिषद और रेलवे मंत्रालय
रेलवे-1 (केवल AC)	1,115	
रेलवे-2 (शयनयान)	9,002	
विमान ईंधन	762	
स्वर्ण	10,800	

NSS-2011-12 के आंकड़ों के आधार पर व्यय आबंटन के शीर्ष 40 प्रतिशत जनसमुदाय को मध्यम वर्ग माना गया है। प्रभावी सब्सिडी दर गुणवाची कराधान दर (विमान ईंधन और LPG के लिए 50 प्रतिशत, रेलवे के लिए सेवाकर 14 प्रतिशत और स्पर्ण पर 6 प्रतिशत) तथा वास्तविक कर/सब्सिडी दर के बीच अंतर द्वारा मापित है। प्रभावी सब्सिडी दर को मध्यम वर्ग द्वारा किए गए उपभोग से गुणा करने पर हमें निहित सब्सिडी प्राप्त होती है। हितलाभियों की संख्या छै सर्वेक्षण के आधार पर किसी वस्तु के उपभोगकर्ता परिवारों की वास्तविक संख्या है। विमान ईंधन के लिए समस्त आन्तरिक विमान यात्रियों की संख्या को सब्सिडी के आंकलन के लिए प्रयोग किया गया है। रेलवे 1=AC प्रथम वर्ग, AC शयनयान और AC कुर्सीयान यात्रियों की संख्या। रेलवे 2=शयनयान (M और E) में यात्रियों की संख्या। यात्रियों की संख्या में उपनगरीय यात्री भी सम्मिलित है।

वैयक्तिक आयकर	निहित सब्सिडी (करोड़ रूपए)	स्रोत
2015-16	59,928.33	केन्द्रीय बजट, 2016-17

वैयक्तिकर आयकर में छूट के कारण राजस्व के त्याग को गैर गरीब वर्ग को दी गई सब्सिडी माना गया है। यह जनसंख्या के शीर्ष आय अर्जक वर्गों को ही लाभावित करती है।

उर्वरक (2015-16)	सब्सिडी (करोड़ रु.)	स्त्रोत
सभी बड़े किसानों को	5433	बजट, 2016-17, आर्थिक समीक्षा, कृषि सांख्यिकी : एक दृष्टि

बड़े किसानों की संख्या का आंकलन भारत में कृषक परिवारों की दशा पर NSS के 70वें दौर की जानकारी पर आधारित है। पांच हैक्टेयर या अधिक भूमि वाले किसान को बड़ा किसान माना गया है। निवल सब्सिडी के आंकलन में दक्षताहीन आंतरिक उत्पादन को बढ़ावा देने वाली राशियों और व्यवस्था से बाहर की ओर क्षरित होने वाली राशियों को शामिल नहीं किया गया है।

	निहित लाभ (करोड़ रूपए)	**स्रोत**
कर छूट सीमा	9,181	आर्थिक समीक्षा और राजस्व विभाग

छोटे और सीमांत करदाताओं और वरिष्ठ नागरिकों को राहत देने के लिए वर्तमान सरकार ने अपने पहले बजट में (2014-15) वैयक्ति आयकर से छूट की सीमा में 50000 रूपए की वृद्धि कर उसे 60 वर्ष से कम आयु वाले करदाताओं के लिए 2 लाख रूपए से बढ़ाकर 2.5 लाख रूपए कर दिया। इसी प्रकार वरिष्ठ नागरिकों की कर छूट 2.5 लाख रूपए से 3 लाख रूपए कर दी गई। वर्ष 2015-16 के बाद से यह कर छूट की अधिकतम एक साथ वृद्धि रही है। इस कदम से लगभग 1.84 करोड़, 10 से 30 प्रतिशत कर देने वाले, करदाताओं को लाभ पहुँचा है। प्रति व्यक्ति कर लाभ का अनुमान, सभी कर वर्गों के लिए 5 हजार रूपया प्रत्येक है, क्योंकि इससे केवल न्यूनतम आयकर वाला, 10 प्रतिशत का, वर्ग 2 लाख से 2.5 लाख तक परिवर्तित हुआ है। अन्य सभी कर वर्ग अपरिवर्तित रहे हैं।

	ब्याज सब्सिडी (रू. करोड़)	**स्रोत**
ब्याज राजसाहाय्य योजना (2015-16)	13000	**NABARD**

वर्ष 2015-16 में किसानों की संख्या को 2013-14 की संख्या के आधार पर 6.8 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर मानकर पूर्वांकलित किया गया है। हम मान रहे हैं कि 2014-15 और 2015-16 के बीच संवृद्धि दर पिछले वर्ष जितनी ही रही है। उसी को हमने 68 प्रतिशत माना है। ब्याज सब्सिडी के आंकड़े NABARD और भारत सरकार के बजट से लिए गए हैं।

मुद्रा	**संवितरण (करोड़ में)**	**स्रोत**
2015-16	1,32,955	मुद्रा की वेबसाइट
मुद्रा खाते पर ब्याज सब्सिडी		
	ब्याज सब्सिडी (करोड़ रूपये)	**Source**
2015-16	14,678	वित्तिय सेवायें विभाग द्वारा प्राप्त सूचनाओं के आधार पर

मुद्रा खातों पर ब्याज सब्सिडी का आंकलन करने के लिए हमने अनौपचारिक क्षेत्र में ब्याज की दर 25 प्रतिशत मानी है (यह महाजनों द्वारा वसूली जा रही ब्याज दर का अनुमान है)। वित्तीय सेवा विभाग (DFS) जानकारी के अनुसार भारित ब्याज दर 13.96 प्रतिशत थी। इन दोनों दरों के बीच अंतर ही ब्याज सब्सिडी की दर है। यदि अनौपचारिक क्षेत्र की ब्याज दर को 20 प्रतिशत मान लिया जाए तो भी प्रति खाता आधार पर ब्याज सब्सिडी की राशि रूपए 2294 (प्रति खाता) बनती है।

संदर्भ

Alzua, Maria Laura, Guillermo Cruces and Laura Ripani (2010), *"Welfare Programs and Labour Supply in Developing Countries, Experimental Evidence from Latin America", CEDLAS Working Paper 0095, CEDLAS, Universidad Nacional de La Plata*

Banerjee, Abhijit (2016), *"The Best Way to Welfare", Indian Express (http://indianexpress. com/ article/opinion/columns/swiss-voted-against-the-idea-of-a-universal-basic-income-utthe-debate-continues-2859528/).*

Banerjee, Abhijit, Rema Hanna, Gabriel Kreindler and Benjamin A. Olken (2016), *"Debunking the Stereotype of the Lazy Welfare Recipient: Evidence from Cash Transfer Programs", Forthcoming, World Bank Research Observer*

Banerjee, Abhijit, et al. *"Can e-governance reduce capture of public programs? Experimental evidence from a financial reform of India's employment guarantee." economics.mit. edu/ files/10557 (2016).*

Bardhan, Pranab (2016), *"Could Basic Income Help Poor Countries?",Project Syndicate (https://www. project-syndicate.org/commentary/developing-country-basic-income-by-pranabbardhan-2016-06).*

Davala, Sarath,RenanaJhabvala Guy Standing and SoumyaKapoor Mehta (2015). *"Basic income: A transformative policy for India",Bloomsbury Publishing.*

Devereux, Stephen (2002), *"Social Protection for the Poor: Lessons from Recent International Experience", Institute of Development Studies Working Paper 142*

Dreze, Jean (2016), *"Decoding the Universal Basic Income", NDTV, (http://www.ndtv.com/ opinion/ decoding-universal-basic-income-for-india-1649293?pfrom=khome-lateststories)*

Evans, David K. and Anna Popova (2014), *"Cash Transfers and Temptation Goods: A Reviewof Global Evidence", World Bank Policy Research Working Paper 6886*

Haushofer, Johannes and Jeremy Shapiro (2016), *"The Short-Term Impact of Unconditional Cash Transfers to the Poor: Experimental Evidence From Kenya", Forthcoming, iQuarterly Journal of Economics*

Himanshu and AbhijitSen (2013), *"In-kind food transfers—I: impact on poverty", Economic & Political Weekly Volume 48 Issue No. 45-46*

Himanshu and AbhijitSen (2013), *"In kind food transfers—II: impact on nutrition and implications for food security and costs", Economic & Political Weekly Volume 48 Issue No.47*

Hirway, Indira (2003), *"Identification of BPL households for poverty alleviation programmes", Economic & Political Weekly Volume 38 Issue No. 45*

Ikiara, Gerrishon K (2009), *"The Political Economy of Cash Transfers in Kenya", Overseas Development Institute*

Imbert, Clément and John Papp (2015), *"Estimating leakages in India's Employment Guarantee: An Update", Rice Institute Working Paper*

Jalan, Jyotsna and Murgai, Rinku (2007), *"An effective 'targeting shortcut'? An assessment of the 2002 below-poverty line census method", The World Bank*

Jha, Raghbendra, Woojin King, Hari K. Nagarajan and Kailash C. Pradhan (2012), *"Vulnerability and Responses to Risk in Rural India", Australia South Asia Research Centre Working Paper 2012/05*

Jhabvala, Renana, and Guy Standing (2010), *"Targeting to the'Poor': Clogged Pipes and Bureaucratic Blinkers", Economic & Political Weekly Volume 45 Issue No. 26-27*

Joshi, Vijay (2016), *"Universal Basic Income is worth fighting for, even against the long odds of its implementation", The Economic Times (Blogs) (http://blogs.economictimes.indiatimes.com/et-commentary/universal-basic-income-is-worth-fighting-for-even-against-the-long-odds-inits-implementation/)*

Khera, Reetika, (2016) *"A Phased Approach Will Make a Basic Income Affordable for India", The Wire(https://thewire.in/88350/basic-income-phased-approach/).*

Mani, Anandi, Sendhil Mullainathan, Eldar Shafir, and Jiaying Zhao (2013), *"Poverty Impedes Cognitive Function", Science 341: 976–80.*

Moore, Charity (2009), *"Nicaragua's Red de Protección Social: An Exemplary but Short-Lived Conditional Cash Transfer Programme", International Policy Center for Inclusive Growth Country Study Number 17*

Ministry of Finance (2012), *"Report of the Task Force on an Aadhar Enabled Unified Payments Structure"*

Mukherjee, Neela (2005), *"Political corruption in India's below the poverty line (BPL) exercise: Grassroots' perspectives on BPL in perpetuating poverty and social exclusion", Development Tracks in Research, Training & Consultancy*

Mundle, Sudipto (2016), *"Universal Basic Income: An idea whose time has come?",Mint (http://www.livemint.com/Opinion/6KbaEPNHIpfdpoloXwb69O/Universal-basic-income-anidea-whose-time-has-come.html)*

Mundle, Sudipto and SatadruSikdar (2017), *"A Note on Budget Subsidies in India and 14 major states", NIPFP.*

Muralidharan, Karthik, Paul Niehaus, and Sandip Sukhtankar.*"Building state capacity: Evidence from biometric smartcards in India." The American Economic Review 106.10 (2016): 2895-2929.*

Ray, Debraj (2016), *"The Universal Basic Share", livemint.com*

Saxena, N. C. (2009), *"Report of the expert group to advise the Ministry of Rural Development on the methodology for conducting the below poverty line (BPL) census for 11th five-year plan", Ministry of Rural Development, Government of India, New Delhi*

Singh, PratapVikram (2016), *"DBT Chandigarh: An idea whose time hasn't come", GOVERNANCE Now.*

Sivalingam, Isvary and Lokesh Singh (2016), *"Feeding India's Poor: Plugging Leakages Without Doing Any Harm", Microsave Policy Brief #4*

Sundaram, K. (2003), *"On identification of households below poverty line in BPL census 2002: Some comments on proposed methodology", Economic & Political Weekly Volume 38 Issue No. 9*

Swain, Ranjula Bali and Maria Floro (2008), *"Effect of Microfinance on Vulnerability, Poverty and Risk in Low Income Households", Department of Economics Working Paper Series 2008-02, American University*

World Bank (2015), *"World Development Report 2015: Mind, Society, and Behaviour"*

Yadav, Anumeha (2016), *"Government presses on with Aadhaar in ration system despite glitches, delayed food law", scroll.in.*

Yadav, Anumeha (2015), *"Modi government's cash for food experiment gets a quiet burial in Puducherry", scroll.in.*

आय, स्वास्थ्य और प्रसवन दर : अभिसृति की पहेलियां

10
अध्याय

''भारत के किसी कोने में (भी) तब तक वास्तविक विकास नहीं हो पाएगा, जबतक अन्य (क्षेत्र) पर ध्यान नहीं दिया जाएगा''

- पंडित जवाहर लाल नेहरू

समष्टि स्तर पर तीव्र दर से संवृद्धि के बावजूद हमें अपसरण या देश के विभिन्न प्रांतों के बीच आय और उपभोग के स्तरों में बढ़ते हुए अन्तरों के आकट्य प्रमाण मिल रहे हैं। यह बात चीन और विश्व के अन्य भागों के अनुभव के बिल्कुल विपरीत लग रही है। यह घटना एक अन्य दृष्टि से भी हैरान करने वाली है : दो समताकारी शक्तियां - वस्तुओं का व्यापार और जनशक्ति का आवागमन तो भारत के भीतर अन्य देशों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रबल है और ये निरंतर और अधिक प्रबल हो रही हैं। इससे यही संदेह उत्पन्न हो रहे हैं कि संभवत: प्रशासकीय गड्ढ़े ही भारत में आन्तरिक स्तर पर समता की प्रवृत्तियों की यात्रा को बाधित कर रहे हैं। इसके विपरीत भारत भर में स्वस्थता परिणामों में अभिसृति स्पष्ट हो रही है। अंतर्राष्ट्रीय मानकों की तुलना में और आय के स्तरों का हिसाब रखते हुए भारत का जीवाशा निष्पादन सराहनीय है। यद्यपि शिशु मृत्यु दर अभी इतनी उन्नत (कम) नहीं हो पायी है, किन्तु प्रसवन दर में कमी (यही सुधार है) सराहनीय है।

I. विषय प्रवेश

10.1 जैसे कि हमने अध्याय 1 में दर्ज किया है, सकल स्तर पर भारत का आर्थिक निष्पादन बहुत शानदार रहा है। एक संघ के रूप में इसकी सफलता प्रत्येक घटक प्रांत की प्रगति पर निर्भर करती है। प्रांतों के निष्पादन के आंकलन का कोई उचित मापदंड क्या हो सकता है? अंतर्निहित रूप से दो मापकों की ओर सहज ही ध्यान जाता है : प्रांतों की समयानुसार आर्थिक और स्वस्थ्ता/जनांकीय प्रगति को उनके अच्छे निष्पादन की कसौटी माना जा सकता है। हम अपना विश्लेषण 1980 से प्रारंभ कर रहे हैं। इसके दो कारण हैं : एक तो हमें अपेक्षाकृत दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य मिल जाएगा; और दूसरे यह प्रो. राजकृष्णा की प्रसिद्ध उक्ति ''हिन्दू संवृद्धि दर'' से संरचनात्मक संबंध विच्छेद के बाद की अवधि है (डी लोंग, 2001, विलियमसन और झेगा, 2002, रोड्रिक और सुब्रमण्यम, 2004)

10.2 रेखाचित्र 1 में 1983-2014 की अवधि के सकल राज्य घरेलू उत्पाद (GSDP) के वास्तविक प्रति व्यक्ति मान अंकित किए गए हैं। 2014 ही वह नवीनतम वर्ष है जिसके लिए पूरी जानकारी उपलब्ध है। स्पष्ट है कि पिछले दशक में पूरे पटल पर सुधार आया है। यह पूरे आबंटन के दाहिने ओर खिसकने में झलक रहा है। उदाहरण के लिए 1984-2014 की अवधि में सबसे कम विकसित प्रांत त्रिपुरा ने भी अपनी प्रतिव्यक्ति GSDP को 5.6 गुना बढ़ा लिया है। यह 1984 के 11537 रूपए से बढ़कर 2014 में 64712 रूपए हो गई है। यही नहीं माध्यिका पर स्थित राज्य हिमाचल प्रदेश ने भी अपने आप के स्तर में 4.3 गुना वृद्धि दर्ज की है।

10.3 रेखाचित्र 2क, 2ख और 2ग भारतीय राज्यों की जीवाशा, शिशु मृत्यु दरों, और सकल प्रसवन दरों को अंकित किया गया है।[1] जन्म के समय जीवाशा (LE)

[1] 2011-12 की कीमतों पर। इस अध्याय के हम 'आय' तथा 'प्रतिव्यक्ति सकल राज्य घरेलू उत्पाद' को पर्यायवाची मान रहे हैं।

रेखाचित्र 1 : सभी भारतीय राज्य : आय के स्तर, विभिन्न समय बिन्दुओं पर

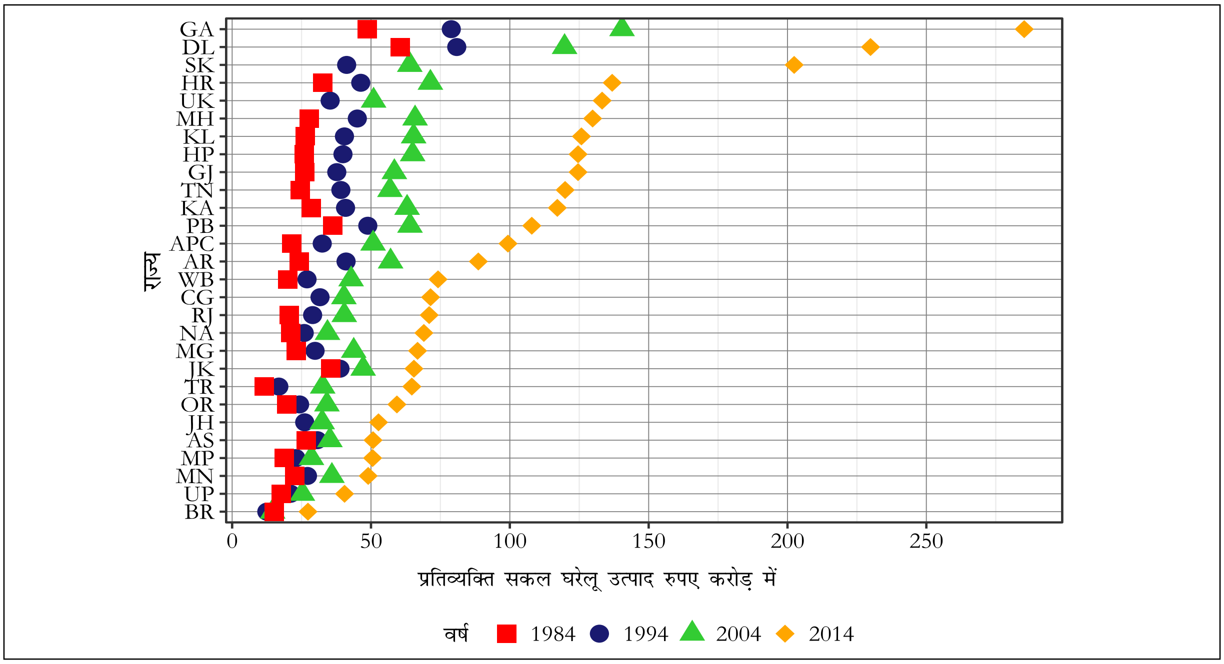

स्रोत : **समीक्षा की गणनाएं**

रेखाचित्र 2क : भारत में जीवाशा के स्तर – विभिन्न समय बिन्दुओं पर

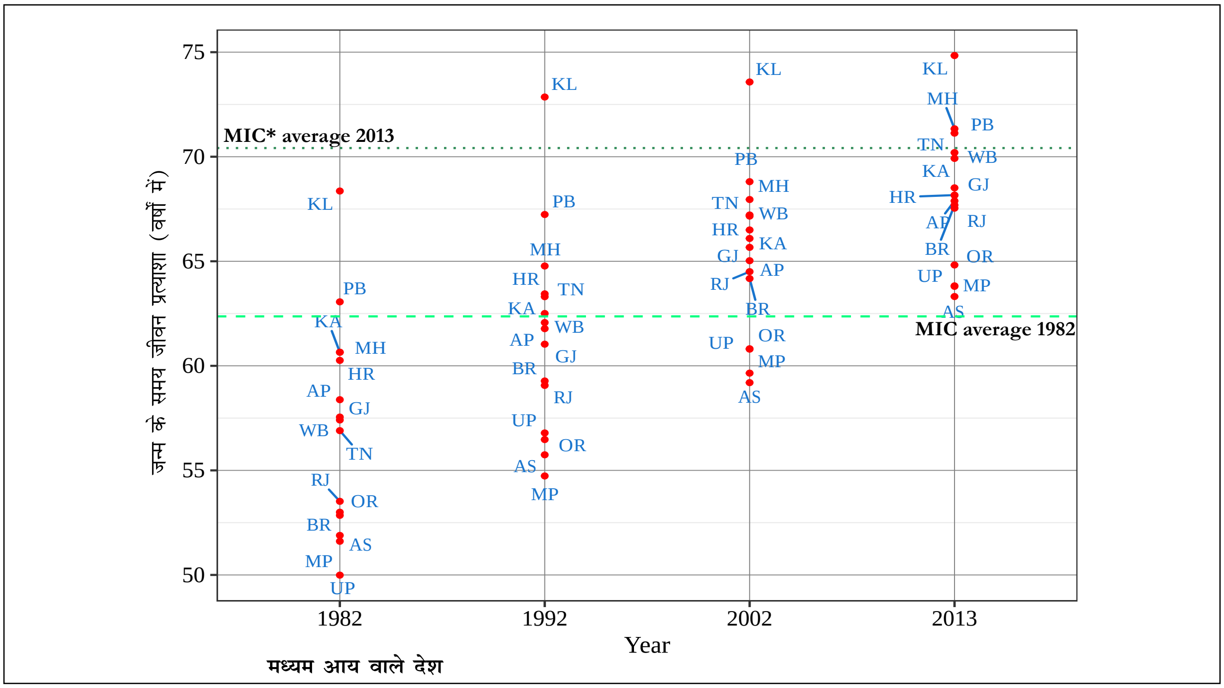

यह बताती है कि वर्तमान मरणशीलता की परिस्थितियां उस बच्चे के जीवन भर बनी रहीं तो वह कितने वर्ष जीवित रह पाएगा।[2] इसी प्रकार शिशु मृत्यु दर (IMR) प्रत्येक 1000 जीवित जन्में बच्चों में से उस संख्या को दर्शाती है जो एक वर्ष पूरा नहीं जी पाएंगे। सकल प्रसवन दर (TFR) उन बच्चों की संख्या है, जिन्हें

[2] हम स्थान तथा जानकारी पा सकने की सुविधा के लिए ही इन सकल स्वस्थता सूचकों पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। संभव है बाल विकास बाधिता या प्रसव मृत्यु दरें हमारे इन सूचकों का साथ नहीं दे पाएं। पिछले वर्ष की समीक्षा (खंड 1, अध्याय 5) में 'मां और बच्चा' विषय पर विस्तृत व्याख्या दी गई थी। वहां बाल विकास बाधिता और गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य पर भी चर्चा की गई थी।

रेखाचित्र 2ख : भारत में शिशु मृत्यु दर (IMR) के स्तर (विभिन्न समय बिन्दुओं पर)

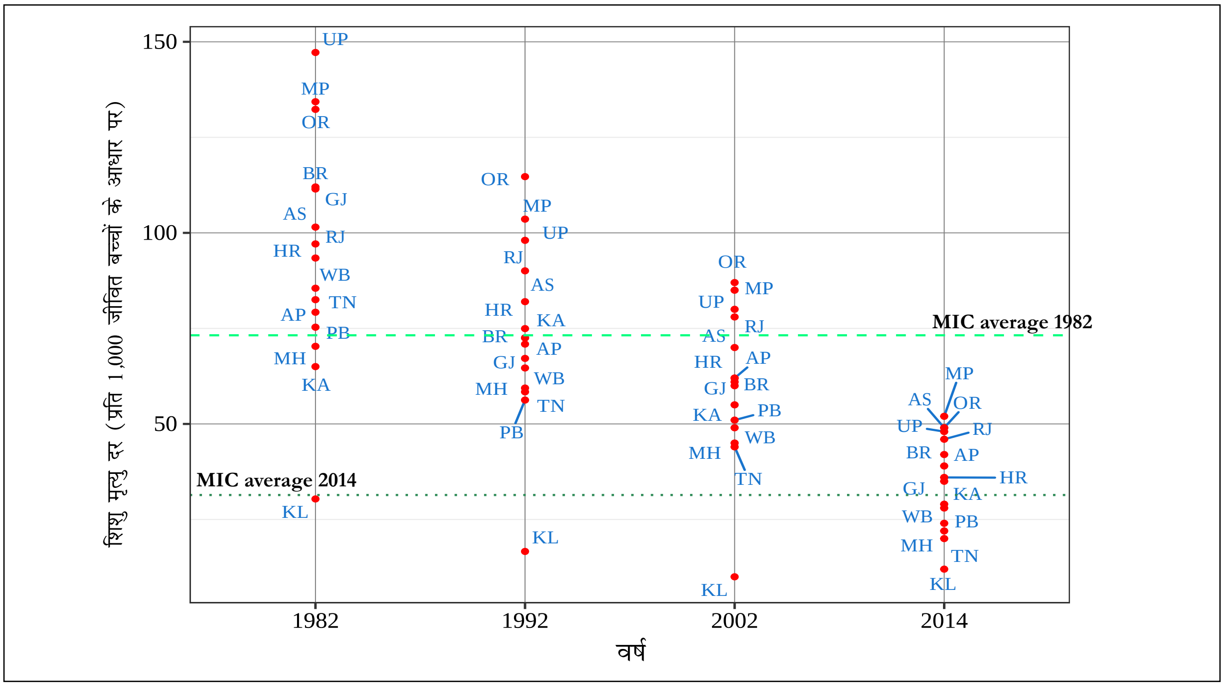

स्रोत : समीक्षा की गणनाएं

रेखाचित्र 2ग : भारत में सकल प्रसवन दर (TFR), विभिन्न समय बिन्दुओं पर

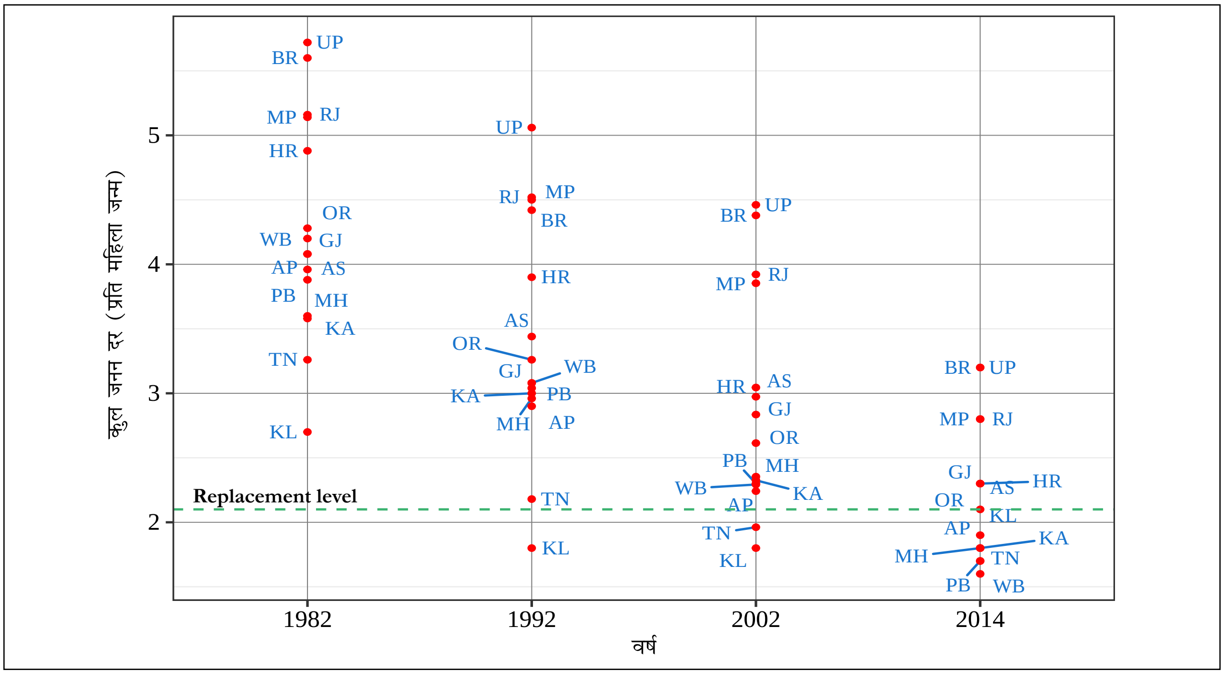

स्रोत : प्रतिदर्श पंजीकरण व्यवस्था/तंत्र

कोई महिला अपनी समस्त प्रजनन आयु में वयविशिष्ट गर्भाधान क्रम का अनुसरण करते हुए एक वर्ष में जन्म देगी।

10.4 इन सभी स्वस्थता एवं जनांकीय सूचकों में पिछले 3 दशकों में बहुत नाटकीय सुधार हुए हैं। सबसे निकृष्ट निष्पादक राज्य उत्तर प्रदेश में भी जीवाशा में 13.8 वर्ष का सुधार, IMR में 99 बिन्दुओं की कमी और TFR में 2.5 बिन्दुओं की कमी दर्ज हुई है। अब यहां TFR का स्तर 3.2 (2014 में) रह गया है। माध्यिका राज्य पश्चिम बंगाल में जीवाशा वृद्धि 12.5 वर्ष, IMR

गिरावट 36 बिन्दु (कर्नाटक) और TFR गिरावट 1.8 बिन्दु (असम) नोट की गई है।

10.5 ये विकासक्रम उत्साहवर्धक तो हैं फिर भी इनका संपूर्ण रूप से विश्लेषण कर पाना संभव नहीं रहता, क्योंकि तुलना का आधार स्तर तो अज्ञात ही है। हम नहीं जानते कि ओडिशा और केरल का निष्पादन अन्य राज्यों की तुलना में कैसा रहा है। आर्थिक सिद्धांत ऐसी तुलनाओं का एक 'मापक' हमें सुझाते है। (अभिसृति या नि:शर्त अभिसृति)।

10.6 अभिसृति का अर्थ है, यदि कोई राज्य प्रारंभ में किसी महत्वपूर्ण निष्पादन आयाम में पिछड़ा हुआ हो तो समय के साथ-साथ उसके इस आयाम पर निष्पादन में अधिक तेजी से सुधार होता है और वह प्रारंभ में उच्च स्तर पर रहे राज्यों के निकट जा पहुँचता है। उदाहरण: 1984 में ओडिशा की प्रतिव्यक्ति GSDP केरल से 25 प्रतिशत कम थी। अत: हमारा परंपरागत अभिसृति सिद्धांत यह सुझाएगा कि धीरे-धीरे ओडिशा में संवृद्धि दरें उच्चतर होंगी और वह दोनों प्रांतों के बीच के अन्तर को कम करने में सफल हो जाएगा।

10.7 इस प्रकार अभिसृति परम एवं सापेक्ष निष्पादन का एक सहज समझ आने वाला मापक बन जाता है। इसके अनुसार हम अंतर्देशीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर तुलना कर सकते हैं। यह सन्निकटन की दर को मापता है कि क्या कम विकसित क्षेत्र धनी क्षेत्रों के निकट पहुँच रहें हैं और अत: क्या क्षेत्रीय परिव्यापन में वृद्धि हो रही है?

10.8 इस अध्याय में हम दो व्यापक आर्थिक सूचकों पर ही अपनी चर्चा को केन्द्रित रखेंगे : आय और उपभोग। साथ ही स्वस्थता और जनांकी आधारित तीन सूचकों पर चर्चा करेंगे : जीवाशा, शिशु मृत्यु दर और सकल प्रसवन दर। इन पर आधारित हमारे तीन मुख्य निष्कर्ष इस प्रकार हैं।

II. निष्कर्ष-I : आय/उपभोग का (भारत में) परिव्यापन

10.9 आय की अभिसृति को लेकर भारतीय राज्य शेष विश्व और विशेषकर चीन में चल रहे सन्निकटन से बहुत ही अलग प्रवृत्ति दिखा रहे हैं। रेखाचित्र 3 ने 2004-14 की अवधि में हुई अपसृतियों को दिखाया है। इसने भारत चीन और विश्व में आय की अभिसृति को अंकित किया है। Y-अक्ष पर प्रतिव्यक्ति जीडीपी की संवृद्धि दरें तथा क्रयशक्ति तुल्य प्रतिव्यक्ति जीडीपी के प्रारंभिक मान के लघुगणक X-अक्ष पर दर्शाए गए हैं। अभिसृति के माध्यम से सन्निकटन के लिए यह संबंध ऋणात्मक होना चाहिए। सबसे सटीक संबंध (प्रतीपगमन) रेखा को दाहिने ओर ढलवां होना चाहिए। सिद्धांत का आग्रह है कि यदि आप प्रारंभ में अल्पविकसित रहे हैं तो आपको तीव्रतर दर पर विकास करते हुए अन्य देशों के निकट पहुँचना चाहिए। यहां

रेखाचित्र 3 : आय की अभिसृति : भारत, चीन और विश्व, 2004-14

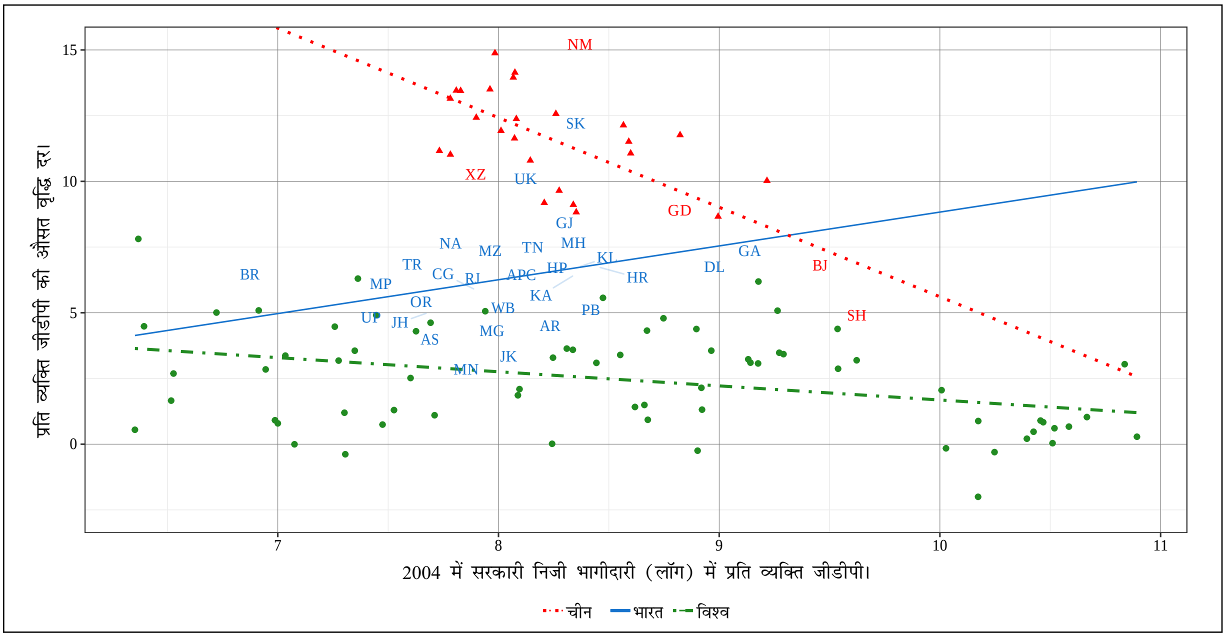

नीली, लाल और हरी रेखाएं क्रमशः भारत, चीन और विश्व के लिए ये संबंध दर्शा रही हैं।

10.10 यह चित्र स्वयं अपनी कहानी कह रहा है : यह संबंध विश्व और चीन के लिए प्रबल रूप से ऋणात्मक किन्तु भारत के लिए कुछ धनात्मक ही है। गरीब देश अमीरों के निकट पहुँच रहे हैं, चीन के गरीब प्रांत अमीर प्रांतों की निकटता कर रहे हैं कि भारत के कम विकसित प्रांत अधिक विकसित प्रांतों के निकट पहुँचने के स्थान पर और पिछड़ते जा रहे हैं।

10.11 अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर 1820 के दशक से प्रतिव्यक्ति जीडीपी संवृद्धि दरों के बीच अंतरों का विस्तार हुआ था और उसी के परिणाम स्वरूप हमें विकसित और विकासशील देशों के बीच बड़ी खाई दिखाई देने लगी थी (प्रिट्चेट, 1997)। किन्तु 1980 के बाद से इस दीर्घकालिक प्रवृत्ति में दिग्वर्तन हुआ है और अब गरीब देश अमीरों के निकट पहुँचने लगे हैं (रॉय आदि, 2016)। किन्तु इन सबके विपरीत भारत में तो आंतरिक दृष्टि से अपसृति का क्रम क्षेत्रीय विषमताओं को और अधिक गंभीर बना रहा है।

10.12 एक बात ध्यान देने योग्य है : अभिसृति क्रम का विकास कैसे चला है? 1990 के दशक में अभिसृति के स्वरूपों में विशेष अंतर नहीं थे। रेखाचित्र 4 में 1990 के दशक में विश्व, चीन और भारत की ये प्रवृत्तियां अंकित की हैं और इनमें हमें मामूली अभिसृति या कुछ अपसृति ही दिखाई दे रही है। हां, 2000 के प्रथम दशक[3] में विश्व और चीन के परिदृश्य बहुत बदल गए, किन्तु भारत में बदलाव नहीं आया। यह उस समय हुआ है जबकि कम विकसित बिहार, मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ के सापेक्ष निष्पादन में सुधार[4] से एक आशा की किरण जागृत हुई थी। किन्तु आंकड़े दिखा रहे हैं कि वे विकास या तो बहुत कमजोर हैं या इतने स्थायी नहीं हैं कि अपसृति या विषमतावृद्धि के क्रम को उलट सकें।

10.13 उपभोग के विषय में भी इसी प्रकार आंकलन किया गया है। NSS के चार सघन दौरों (1983, 1993-14, 2004-05 और 2011-12) के आंकड़ों का प्रयोग कर विभिन्न राज्यों के बीच तथा राज्यों के अंदर उनके विभिन्न क्षेत्रों के बीच अभिसृति की जांच की गई है। रेखाचित्र 5 में तीन दशकों के उपभोग अभिसृति के प्रतीपगमन अंकित किए गए हैं। यहां भी 2000 के प्रथम दशक में किसी प्रकार की अभिसृति के चिन्ह नहीं मिले। वस्तुतः नब्बे के दशक की जामुनी रेखा और 2000-11 की भूरी रेखा यही दिखा रही हैं कि पिछले दो दशकों में उपभोग में अपसृति ही आई है।[5]

रेखाचित्र 4 : आय की अभिसृति : भारत, चीन और विश्व, 1994-2004

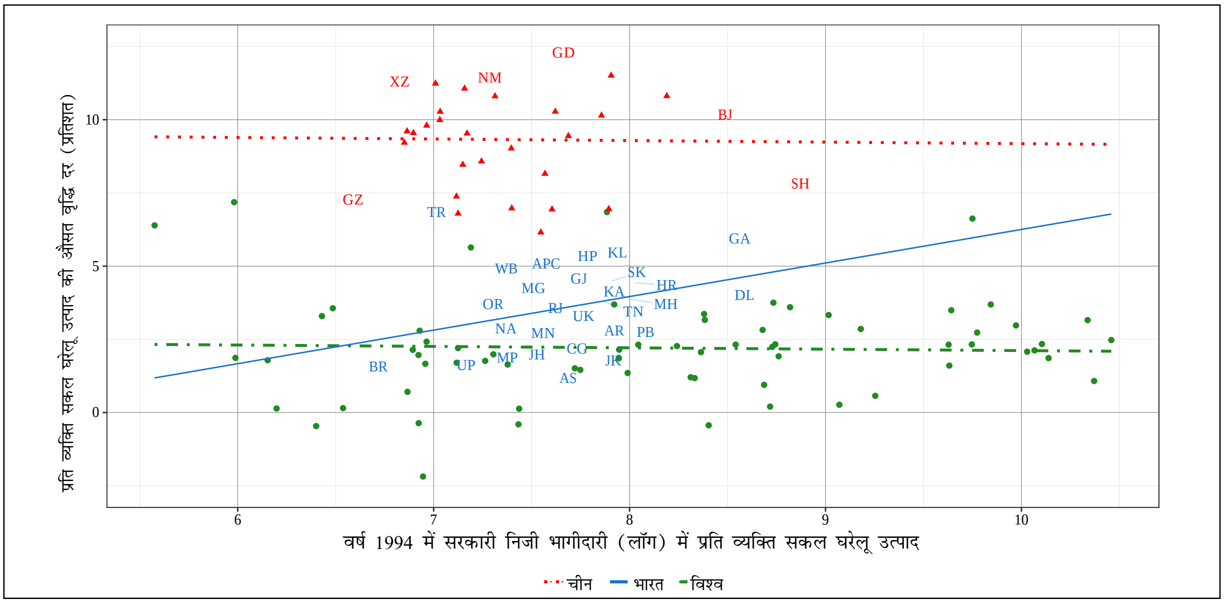

3 यह विश्लेषण बता रहा है कि विश्व और चीन में प्रतिव्यक्ति आय महत्वपूर्ण रूप से अभिसृति है।

4 देखें परिशिष्ट 2

5 तीन दशकों के उपभोग अभिसृति के स्वरूप के लिए परिशिष्ट 2 रेखाचित्र 4 देखें।

10.14 प्रतिदर्शों की सटीकता का परीक्षण किया गया था। उपर्युक्त चर्चित आंकड़े भारत के मुख्य राज्यों से हैं और देश की 98 प्रतिशत जनसंख्या तथा 93 प्रतिशत जीडीपी (2011-12) से संबंधित हैं। परिशिष्ट 2 में सभी राज्यों से लिए गए एक प्रतिदर्श पर इसी अभिसृति को प्रदर्शित किया गया है। यहां भी वही पुराना अपसृति वाला ही चित्र उभर रहा है।

10.15 अन्त में एक और परीक्षण किया गया, समय अवधि को बढ़ा दिया गया। अभिसृति मूलतः एक दीर्घकालिक प्रवृत्ति होती है, इसी आधार पर छोटी-छोटी अवधियों के स्थान पर कई दशकों के समय परिप्रेक्ष्य पर आंकलन दोहराया गया, किन्तु 1970-2014 की अवधि में भी भारत में प्रतिव्यक्ति निवल राज्य घरेलू उत्पाद (NSDP) में अभिसृति का कोई साक्ष्य नहीं मिल पाया।

10.16 बैरो और सला-ई-मार्टिन ने आंकलन किया है कि संयुक्त राज्य अमेरिका तथा जापान में आन्तरिक अभिसृति लंबी अवधियों तक चली थी और आय की औसत वार्षिक अभिसृति दर लगभग 2 प्रतिशत थी।[6] इसका अर्थ यह है कि देश को इस सीमांत तक पहुँचने में लगभग 35 वर्ष लग जाएंगे। 2000-10 की अवधि में चीन में आय में 3 प्रतिशत की दर पर अभिसृति चली अर्थात गरीबतम प्रांत भी समृद्धतम के स्तर के आधे तक 23 वर्षों में पहुँच जाएगा। भारत में अभी तक तो इस प्रकार का सन्निकटन अलभ्य ही बना है।

10.17 भारत के परिणाम चीन और शेष विश्व से उलट होना अपने आप में एक अबूझ गहन पहेली बन गया है। अभिसृति मुख्यतः व्यापार और संसाधनों के संचलन के माध्यम से प्रभावी होती है। यदि कोई राज्य/देश गरीब हो तो वहां पूंजी की प्रति प्राप्ति दर अधिक होगी और यह अन्य क्षेत्रों से पूंजी तथा श्रम को आकर्षित करने में सफल होगा। इस प्रकार उक्त गरीब क्षेत्र में उत्पादिकता में वृद्धि होगी और वह धनिक राज्यों/देशों के निकट पहुँचने लगेगा। सैम्युलसन बहुत पहले ही यह बता चुके हैं कि तुलनात्मक लाभ पर आधारित व्यापार वस्तुतः उन वस्तुओं के निर्माण में लगे संसाधनों के ही छद्मरूप में अंतरण का दूसरा नाम है। एक अल्प विकसित देश,

रेखाचित्र 5 : भारत में उपभोग में अभिसृति, 1993-2004, 2004-2014

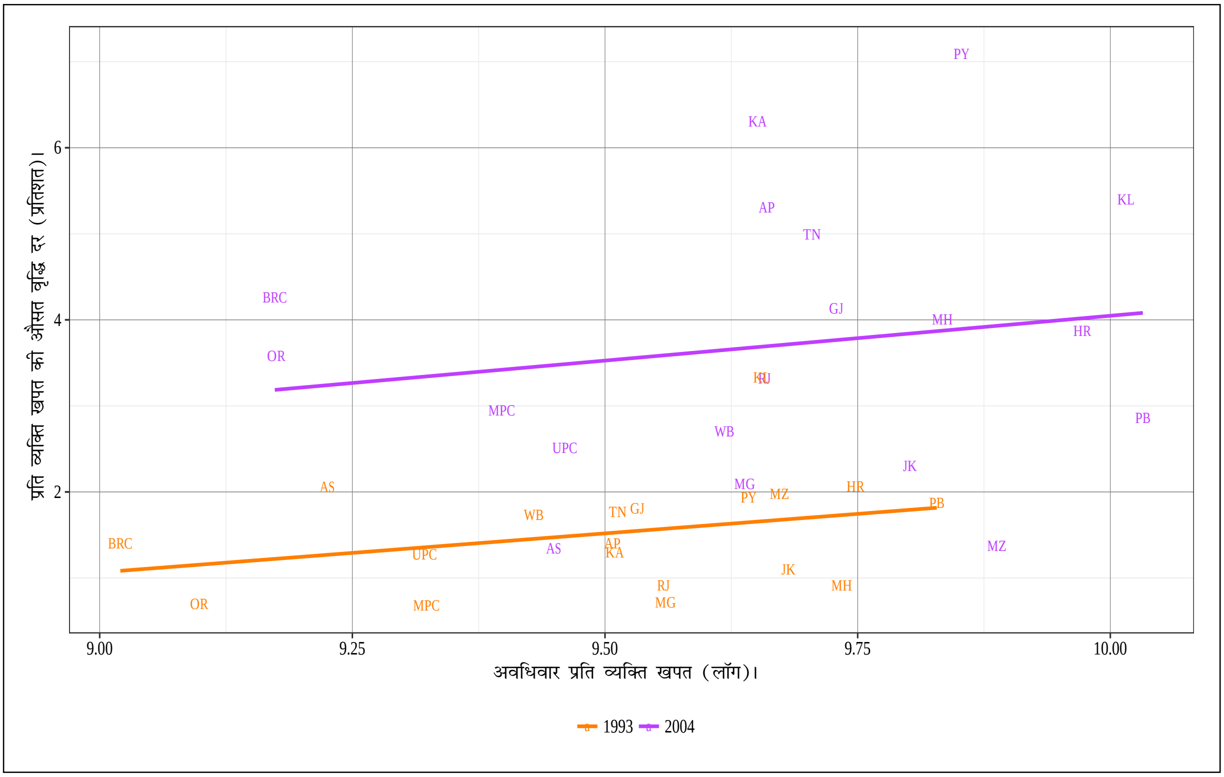

---

[6] इसका आंकलन इस प्रकार हो सकता है : मान लें कि ऋणात्मक दर (γ) के अनुसार संवृद्धि चर की अर्द्ध-आयु है t^* अर्थात $e^{-\gamma t^*}=0.5$ । अतः लघुगणक का प्रयोग कर $t^*=k0.69\gamma$ ।

जहां पूंजी का अभाव और श्रम की प्रचुरता हो सहज ही श्रम सघन वस्तुओं के निर्यात के माध्यम से अपने कौशल रहित श्रम का ही निर्यात करता है। इस द्वारा पूंजी सघन पदार्थों का आयात वस्तुत: पूंजी को आकर्षित करने के ही समान होता है।

10.18 मुख्य निष्कर्ष यही है कि भारत एक अपवाद है। भारत के भीतर प्रांतों की सीमाएं बाधारहित हैं, यहां अभिसृति सफल नहीं रही जबकि चीन में यह प्रक्रिया सफलतापूर्ण दिखाई देती हैं। विभिन्न देशों के बीच तो व्यापार, पूंजी और श्रम के आवागमन के लिए बाधाएं और अधिक गहन होती है और उनके बीच अभिसृति की गत्यात्मकता बहुत सफल दिखाई देती है। चीन में आन्तरिक स्तर पर श्रमिकों ने खेती से पलायन कर तटीय प्रदेशों के विनिर्माण क्षेत्र में रोजगार की तलाश की है। इसी से भीतरी गरीब प्रदेशों में उत्पादिता और मजदूरी के स्तर में धनी प्रदेशों से तीव्रतर सुधार आए हैं और यही वहां अभिसृति की संचालक शक्ति का रूप धारण कर गया है।

10.19 भारतीय पहेली अभी भी सुलझ नहीं पा रही। अध्याय 11 का विवेचन यह भी सुझा रहा है कि देश के विभिन्न प्रांतों-क्षेत्रों के बीच व्यापार, सामान्य धारणाओं के विपरीत, बहुत उच्च स्तर पर रहा है। वही अध्याय यह भी बता रहा है कि व्यक्तियों का आवागमन भी तेजी से बढ़ा है। यह 2000-10 की अवधि में दुगुना हो गया है। यह भारत की आन्तरिक सीमाओं की छिद्राविष्ट दशा को दर्शाता है। वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रवाह तो बहुत हुए हैं, किन्तु अभिसृति नहीं हो पाई।

10.20 यद्यपि इसके कारणों को समझने के लिए अभी आगे शोध-अन्वेषण की आवश्यकता है किन्तु एक संभावी अवधारणा यह हो सकती है : ''प्रशासकीय अथवा संस्थागत बाधाओं के कारण अभिसृति नहीं हो पाती''। यदि ऐसा हो तो पूंजी का अधिक उत्पादिता वाले भौगोलिक क्षेत्रों की ओर प्रवाह नहीं होगा। यह उत्पादिता की अधिकता वास्तविक नहीं, केवल मौद्रिक अधिक होगी। प्रशासन की दुरावस्था पूंजी-दुर्लभ प्रांतों में भी पूंजी पर जोखिम समंजित प्रति प्राप्ति दर को निम्न बना सकती है। यही नहीं, श्रम की उच्च गतिशीलता का अर्थ इन क्षेत्रों से श्रमिकों का पलायन होगा। अपेक्षाकृत अधिक कौशल संपन्न श्रम शक्ति का पलायन तो इन प्रांतों में प्रशासन की अवस्था को भी दुष्प्रभावित कर सकता है।

10.21 एक दूसरी अवधारणा भारत के विकास के स्वरूप या प्रतिमान से जुड़ी है। एशिया में संवृद्धि सफलता के अन्य उदाहरणों के विपरीत भारत ने कौशल सघन क्षेत्रकों के विकास के सहारे संवृद्धि का मार्ग चुना है। यहां निम्न कौशल उद्योग प्रसार ने प्रगति-रथ का वहन नहीं किया है (यह बात न केवल देश में सेवा क्षेत्र की प्रबलता से स्पष्ट हो रही है) बल्कि विनिर्माण उद्यमों में भी विशिष्टता का स्वरूप यही प्रमाण दे रहा है। अत: यदि कौशल की उपलब्धता ही संवृद्धि पथ पर बाधक संरोध हो तो फिर पूंजी दुर्लभ क्षेत्रों में श्रम की उत्पादिता का स्तर उच्च होने का कोई कारण नहीं रहता। जब तक कम विकसित क्षेत्रों में आवश्यक कौशल का विकास नहीं होगा (और साथ में प्रशासन के स्तर में सुधार नहीं होगा) हमें अभिसृति के दर्शन नहीं हो पाएंगे।

10.22 ये दोनों ही अवधारणाएं अंतत: संतोषजनक सिद्ध नहीं हो पाती; ये तो कहीं अधिक गहन राजार्थनीतिक पहेली को जन्म दे देती हैं। राज्यों के बीच स्पर्धा को देखते हुए, जहां अधिक सफल राज्य अन्यों को लिए अनुकरणीय आदर्श भी बन जाते हैं और शेष देश से अपनी ओर सभी पूंजी, कौशल, व्यक्ति रूपी संसाधनों को आकर्षित करने वाले 'चुम्बकीय' केन्द्र भी बन जाते हैं; वहां यह समझ नहीं आता कि पिछड़े रह गए राज्य अपने प्रशासन को सुधार कर स्वयं को आकर्षक क्यों नहीं बना पाते। दूसरे शब्दों में, राज्यों के बीच निरन्तर चल रही अपसृति तो स्पर्धी संघीयता की आधारभूत धारणा-प्रेरणा के विपरीत जा रही है, जिसे वास्तव में अभिसृति का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए था।

III. निष्कर्ष-II : भारत में स्वास्थ्य आयाम में अभिसृति हुई है किन्तु शेष विश्व के मानकों की तुलना में यहां अभी और सुधार की गुंजाइश है।

10.23 भारत के स्वास्थ्य और शिक्षा पर निम्न व्यय की आलोचना होती रही है। अत: राज्यों के स्तर पर 1980 के समय से स्वस्थता और जनांकीय उपलब्धियों/प्रवृत्तियों को समझने के प्रयास अवश्य होने चाहिएं। इस संदर्भ में दो महत्वपूर्ण सूचक हैं, जन्म के समय जीवाशा और शिशु मृत्यु दर।

10.24 इन दो मुख्य स्वस्थता सूचकों में अभिसृति की आशा करने के दो मूल कराण हैं। अंतर्निहित रूप से

ही प्रारंभ में आर्थिक दुर्दशाग्रस्त प्रांतों/क्षेत्रों में तीव्र प्रगति इसलिए तो संभव नहीं हो जाएगी कि विश्व और भारत में एंटीबायोटिक्स (कृमि रोग नाशक) और अन्य प्रकार की चिकित्सीय प्रौद्योगिकियां सुलभ हो गई हैं।

10.25 दूसरा मुद्दा मापन का भी है : स्वस्थता सूचकों की कुछ सीमाएं है, जिनसे आगे तो अभिसृति एक स्वभाविक परिमाण रहती है। उदाहरण : यदि कोई देश शिशु मृत्यु दर को घटाकर शून्य के पास ले जाने में सफल हो गया है तो उसके लिए कोई और बड़ी कटौति कर पाना मूल रूप से असंभव प्राय: होगा, जबकि अन्य देशों/क्षेत्रों में सुधार कर पाने की (अर्थात अपनी उच्च मृत्यु दरों को घटा पाने की) संभावनाएं बहुत विशाल होती हैं। इस प्रकार की LE और IMR में उपलब्ध प्राकृतिक सीमाएं आय और उपभोग के आयाम पटल पर तो सुलभ नहीं होती।

10.26 रेखाचित्र 6क और 6ख ने LE और IMR के भारतीय राज्यों और विश्व के देशों की अभिसृति का चित्रांकन किया है।[7] Y-अक्ष 2000–10 की अविध में LE में प्रतिशत वृद्धि दर तथा IMR के स्तर में परिवर्तन के रूप में आए वार्षिक औसत परिवर्तन दिखा रहा है और X-अक्ष पर LE के प्रारंभिक मान के लघुगणक तथा IMR का प्रारंभिक स्तर दिखाया गया है।[8]

10.27 इन दोनों ही स्वस्थता सूचकों में अभिसरण होने के सशक्त प्रमाण मिल रहे हैं। केरल ने 2002 में जीवाशा के उच्च स्तर अर्थात 73.5 वर्ष से आरंभ किया था, अगले 11 वर्षों में इस प्रांत में 1.27 वर्षों की प्रगति हुई है। इसके विपरीत उत्तर प्रदेशों ने 2002 में निम्न जीवाशा, 60.8 वर्ष से प्रारंभ कर उसी अवधि में केरल से दुगुनी अर्थात तीन वर्षों की वृद्धि कर पाने में सफलता पाई है। इसी प्रकार IMR में एक दशक भर में केरल में बहुत नगण्य परिवर्तन हो पाया है जबकि ओडिशा 49 बिंदुओं की कमी, वस्तुत: 87 को घटाकर 38 पर लाने में सफल रहा है। प्रमुख स्वस्थता सूचकों में अभिसृति का संभव होना यही सुझा रहा है कि प्रौद्योगिकियों के देशभर में निर्बंध प्रवाह को लेकर जिस प्रकार के संरोधों की पहले कल्पना की गई थी वे वास्तव में मौजूद नहीं है।

10.28 यह प्रगति वैश्विक पटल पर कैसी प्रतीत होती है? यहां एक बड़ा विपर्यय दिखाई पड़ता है। LE में तो विश्व स्तर अभिसृति के सशक्त प्रमाण मिल रहे

रेखाचित्र 6क : जीवाशा अभिसृति : भारत और विश्व, 2000 के वर्ष

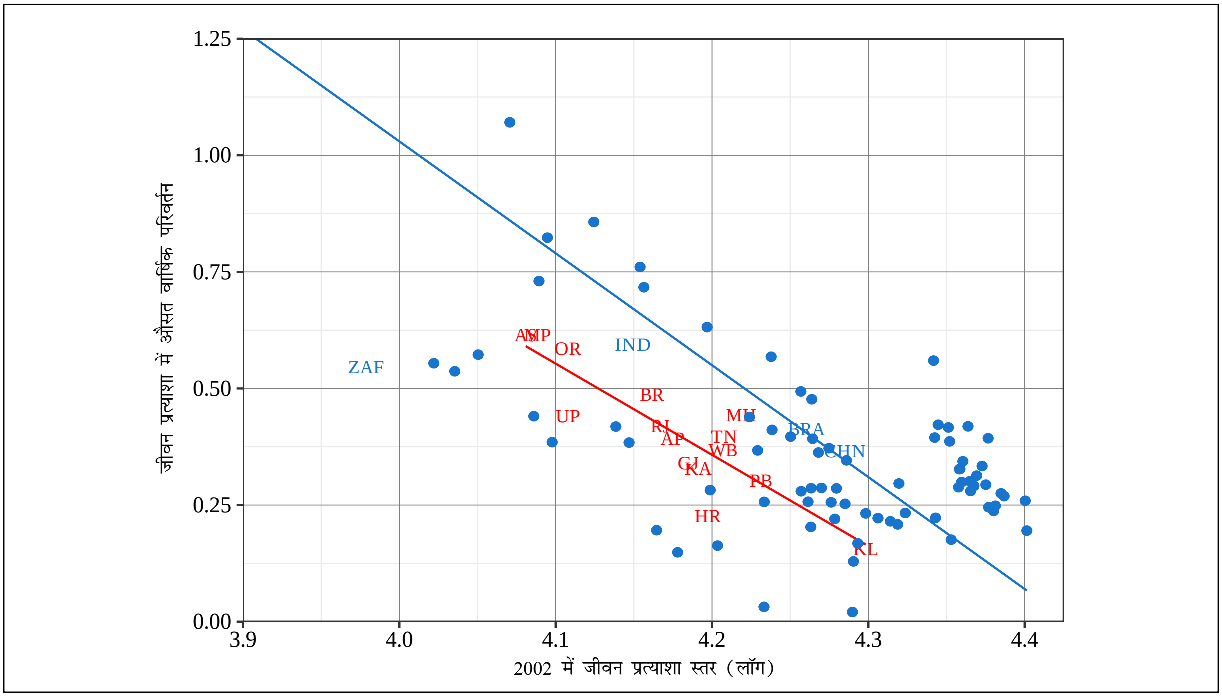

---

7 पूर्ववर्ती अवधियों के पैटर्न समान हैं, इसलिए हम उनको टेक्टेबिलिटी के लिए प्रस्तुत नहीं करते हैं

8 परिशिष्ट 1 देखें

रेखाचित्र 6ख : शिशु मृत्यु दर (IMR) अभिसृति : भारत और विश्व, 2000 के वर्ष

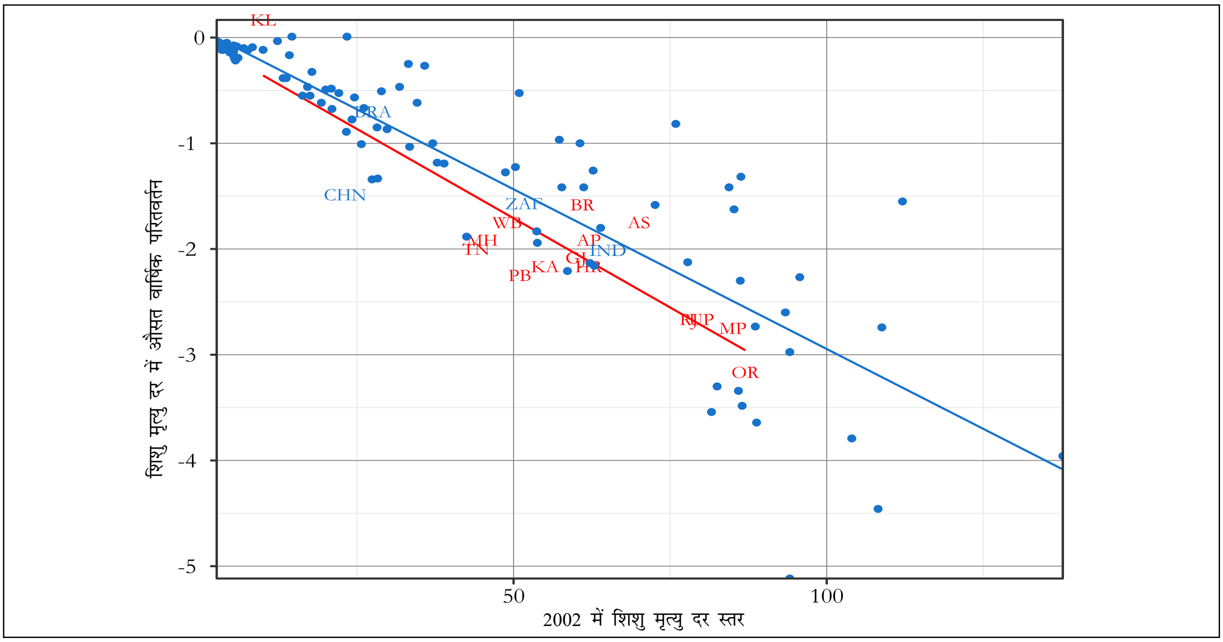

हैं, किन्तु, सभी भारतीय प्रांत श्रेष्ठतम प्रतीपगमन रेखा से नीचे ही अवस्थित है। इसका अभिप्राय यही है कि भारत के प्रांत किसी भी अन्य औसत देश की अपेक्षा धीमी गति से प्रगति कर पा रहे हैं। उदाहरण के लिए 11 वर्षों में केरल में LE 1.7 प्रतिशत का सुधार हुआ है जबकि एक प्रतिनिधि माना जा सकने वाला देश, जो प्रारंभ में केरल के ही स्तर पर था, कहीं बेहतर प्रदर्शन कर पा रहा है। यही बात शेष सभी भारतीय राज्यों पर भी लागू रही है। और आगे विश्लेषण बता रहा है कि 1990 के दशक में भारतीय प्रांतों का निष्पादन न्यून नहीं था, किन्तु इसका कारण सहरेतर अफ्रीका में फैली एड्स की महामारी थी, जिसने उसे सारे क्षेत्र की जीवाशा को बहुत घटा दिया था। विश्व 2000–10 की अवधि में उस आघात से उबर आया है और उसकी जीवाशा उपलब्धियां भारतीय राज्यों की अपेक्षा अधिक सशक्त रही हैं।

10.29 किन्तु IMR के आयाम पर व्याख्या एकदम उलट जाती है। रेखाचित्र 6ख यही दर्शा रहा है। यहां भी प्रायः सभी भारतीय राज्य प्रतीपगमन रेखा से नीचे रहे हैं, अर्थात उन्होंने अन्य देशों की तुलना में IMR में अधिक कमी कर पाने में सफलता अर्जित की है। उदाहरण के लिए ओडिशा ने 2000–10 में IMR में 49 बिन्दुओं की कमी दर्ज की है जबकि एक औसत देश (जिसकी IMR 2012 में ओडिशा के सामान प्रायः थी) तो केवल 28 बिन्दुओं की कमी कर पाया है। भारत में बिहार राज्य 2002 में माध्यिका अवस्थित था, वहां IMR 61 था जो कि 2014 में घटकर 42 हो गया है।

10.30 अतः भारत में इन दो स्वस्थता सूचकों में अभिसृति हो रही है और 2000 के वर्षों में भारत का निष्पादन अन्य देशों से बहुत बुरा नहीं रहा है। एक अन्य स्तर पर तुलना अधिक दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य में तुलना का आभास देती है। यह है इन दो सूचकों के परिणामों को देश की प्रतिव्यक्ति आय के स्तर के अनुसार प्रस्तुत करना।

10.31 रेखाचित्र 7क, 7ख में LE और IMR को भारतीय राज्यों और विश्व के प्रतिव्यक्ति जीडीपी स्तरों के अनुसार दर्शाया गया है। यहां LE के स्तर पर भारतीय राज्य औसत अंतर्राष्ट्रीय इकाइयों के समान या बेहतर ही निष्पादन करते दिखाई दे रहे हैं (अधिकांशतः भारतीय राज्य प्रतीपगमन रेखा से ऊपर ही हैं)। किन्तु ये प्रांत IMR के पटल पर भी प्रतीपगमन रेखा से ऊपर ही रहे हैं, अर्थात उनका निष्पादन शेष विश्व के औसत से पिछड़ गया है। ये निष्कर्ष पिछले वर्ष की आर्थिक समीक्षा की स्थापना के अनुरूप ही है: ''संभवतः स्वास्थ्य व्यवस्था की त्रुटियों का अधिक भार महिलाओं और बच्चों पर ही पड़ता है।''

10.32 संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भारत जीवाशा के

रेखाचित्र 7क : जीवाशा और प्रतिव्यक्ति जीडीपी : भारत और विश्व, 2013

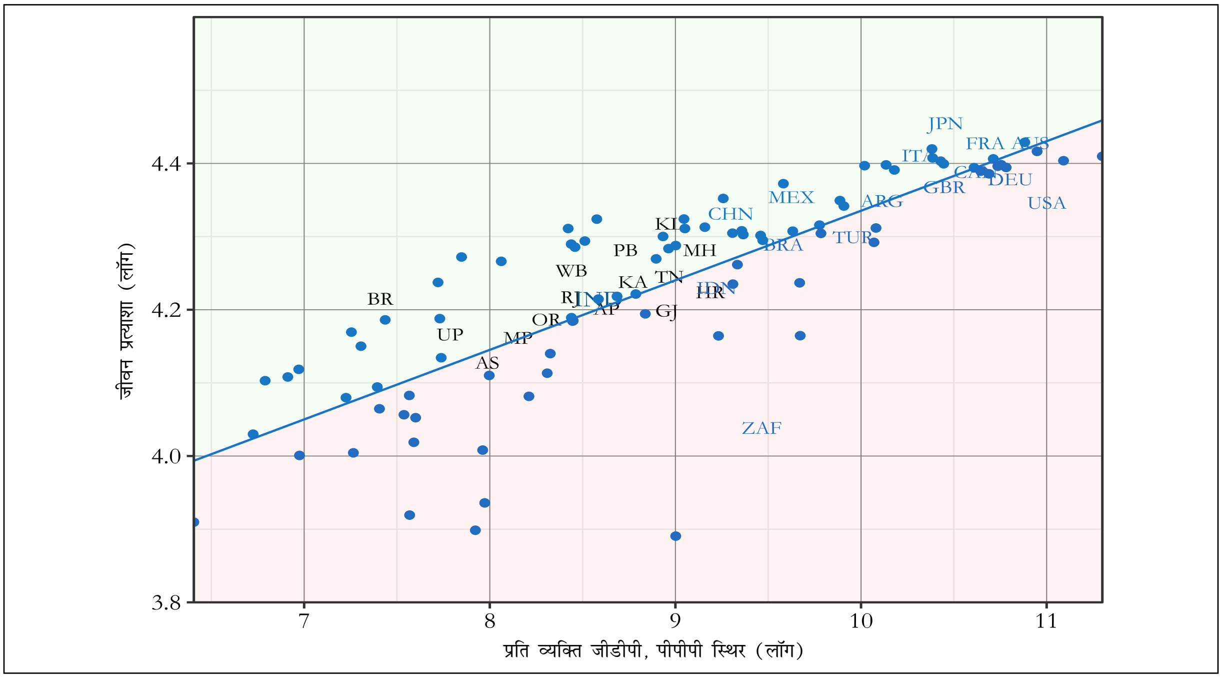

रेखाचित्र 7ख : शिशुमृत्यु दर (IMR) और प्रतिव्यक्ति जीडीपी : भारत और विश्व 2014

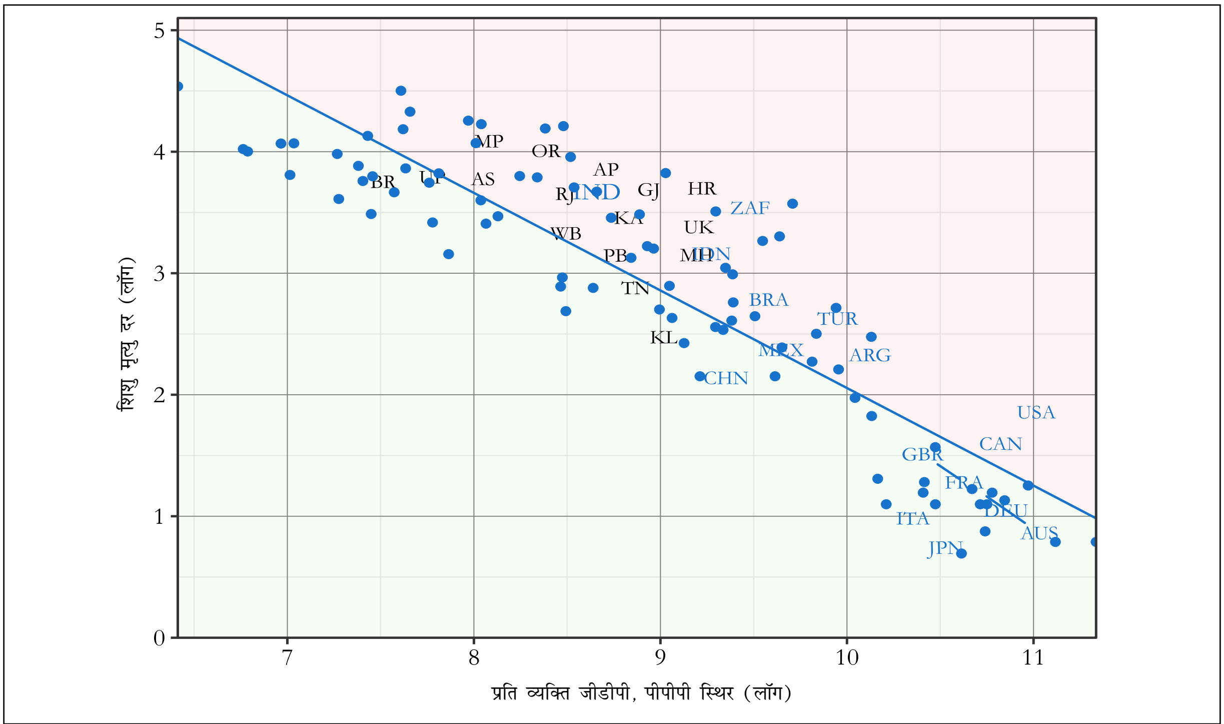

पटल पर शेष विश्व की तुलना में अच्छा ही निष्पादन कर रहा है, किन्तु IMR के स्तर पर और अधिक सुधार की आवश्यकता बनी हुई है।

10.33 संभवतः पिछले दशक में सबसे अधिक प्रभावशाली परिवर्तन प्रसवनता में आया है। सबसे पहली बात तो यही है कि सूचना दे पा रहे 23 भारतीय राज्यों में से 12 की प्रसवन दरें प्रतिस्थापन दरों (2.1) से नीचे जा चुकी है। दूसरे, LE तथा IMR की भांति किन्तु आय के विपरीत, विभिन्न राज्यों के बीच सशक्त अभिसृति के प्रबल प्रमाण मिल रहे हैं। रेखाचित्र 8क में पिछले दशक में जो चित्र दिखा है वह अस्सी और नब्बे के

दशकों से बहुत अलग है। उदाहरण के लिए 2002–14 के बीच उत्तर प्रदेश ने अपनी सकल प्रसवन दर में 1.3 बिन्दुओं की कमी दर्ज कराई है, जबकि तमिलनाडू में बहुत नगण्य–सी कमी आई है और केरल में तो इस दर में वृद्धि दिखाई दी है।

10.34 एक बार फिर, केरल के अपवाद को छोड़ दें तो सभी भारतीय प्रांत प्रतीपगमन रेखा से नीचे हैं, इससे यही संकेत मिल रहा है कि उनका निष्पादन औसत देशों की तुलना में बेहतर है। वे प्रसवन दर में अधिक तेजी से कमी कर पर रहे हैं। वे किस सीमा तक बेहतर निष्पादन कर रहे हैं, यह भी बहुत महत्वपूर्ण है, विशेषकर उच्च TFR प्रांतो, बिहार, यूपी, मध्यप्रदेश और राजस्थान के आंकड़े बहुत ही ध्यान देने योग्य हैं। इन प्रदेशों द्वारा TFR में कमी के आंकड़े औसत देशों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रभावशाली रहे हैं।

10.35 ये सभी निष्कर्ष भारतीय राज्यों की अंतर्राष्ट्रीय समतुल्य इकाईयों से तुलना से पुनः परिपोषित होते हैं। रेखाचित्र 8ख में प्रतिव्यक्ति जीडीपी के अनुसार भारतीय राज्यों और अन्य देशों के TFR स्तर अंकित किए गए हैं। यह रेखाचित्र भारतीय राज्यों के अति उत्कृष्ट निष्पादन को प्रमाणित कर रहा है। ये सभी राज्य प्रतीपगमन रेखा से नीचे हैं। अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ से देखें तो अपने आर्थिक विकास के स्तर के परिप्रेक्ष्य में भारतीय राज्यों की प्रसवन दरें बहुत कम हैं।

10.36 इन प्रसवन दर परिवर्तनों के आगे चलकर जनांकीय लाभांश, जिस पर हमने पहले अध्याय में चर्चा की थी, पर गंभीर प्रभाव होने वाले हैं।

V. निष्कर्ष

10.37 औसतन तीव्र संवृद्धि के बावजूद भारतीय राज्यों के बीच क्षेत्रीय विषमता में वृद्धि के चिन्ह दिखाई पड़ रहे हैं। यह विस्मयकारी है क्योंकि समताकारी आधारभूत शक्तियां मानी जाने वाली दोनों बातें, वस्तुओं और सेवाओं के अंतर्राज्यीय आवागमन, में तो बहुत सशक्त एवं तीव्र सुधार स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। एक संभव अवधारणा प्रशासकीय त्रुटियों के पाश की हो सकती है जो सन्निकटन की प्रक्रिया को बाधित कर सकती है। यदि ऐसी बाधाएं हैं तो श्रम और पूंजी के पलायन से वर्तमान विषमताएं और अधिक गहरी हो सकती हैं। किन्तु जब स्पर्धी संघवाद पिछड़े रह गए राज्यों को अधिक तेजी से बदलने को विवश कर रहा है फिर भी उनका पिछड़े रह जाना विस्मयकारी ही है।

10.38 इनके विपरीत स्वास्थ्य और जनांकीय आयामों में देश भर में 2000 के वर्षों में अभिसृति के सशक्त

रेखाचित्र 8क : सकल प्रसवन दर (TFR) अभिसृति : भारत और विश्व, 2000 के वर्ष

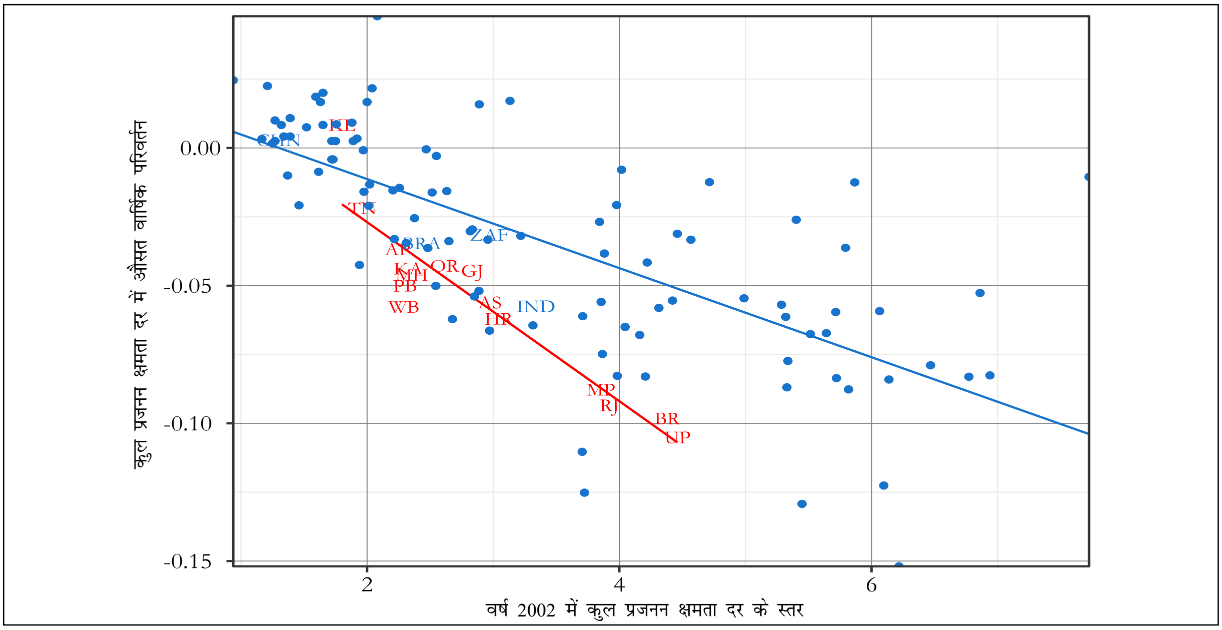

रेखाचित्र 8ख : सकल प्रसवन दर और प्रतिव्यक्ति जीडीपी : भारत और विश्व 2014

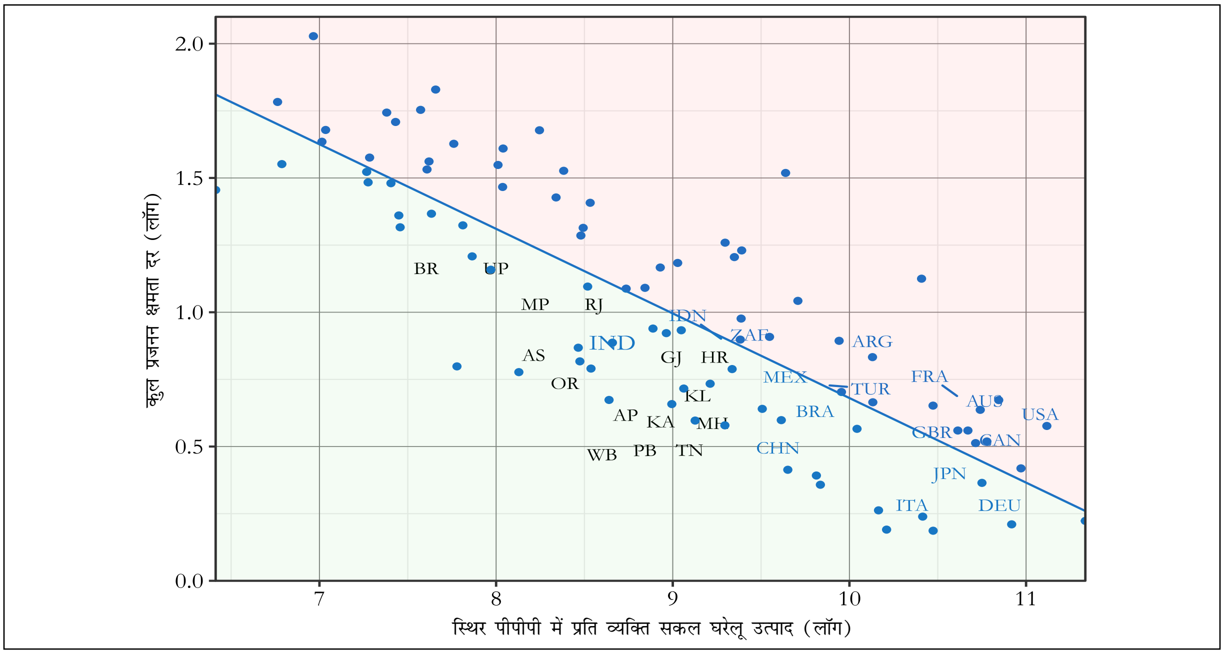

साक्ष्य मिले हैं। पिछले दशकों में IMR और प्रसवन दर के विषय में यह नहीं हो पाया था, यहां भी अंतर्राष्ट्रीय तुलना चौंकाने वाली है। आज भारत के राज्य जीवाशा के उस स्तर को प्राप्त कर चुके हैं जो उनके आर्थिक विकास स्तरों के अनुरूप है। किन्तु IMR में ऐसा नहीं हो पाया है। यह पिछले वर्ष की समीक्षा के उस निष्कर्ष की पुष्टि करता है कि स्वास्थ्य सेवाओं की त्रुटियों के सबसे गंभीर दुष्प्रभाव मां और बच्चों पर ही पड़ते हैं। हां, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसवन दर की तुलना एक और बहुत बड़ी बात को स्पष्ट कर रही है, इस मापक में भारत के राज्य विश्व के अन्य देशों से कहीं आगे निकल गए है। प्रसवन दरों में इन असामान्य रूप से अधिक गिरावटों के भविष्य में जनांकीय लाभांश पर बहुत प्रबल और सकारात्मक प्रभाव होने वाले हैं।

संदर्भ

1. Barro, Robert J., and Xavier Sala-i-Martin, *"Convergence," Journal of Political Economy, C (1992), 223-251.*

2. DeLong, J. Bradford. 2001. *"India Since Independence: An Analytic Growth Narrative," in Dani Rodrik (ed.) Economic Growth: Analytical Country Narratives. Princeton, NJ: Princeton University Press.*

3. Pritchett, Lant (1997) *"Divergence, Big Time" Journal of Economic Perspectives,11, 3-18.*

4. Rodrik, Dani, and Subramanian, Arvind (2004). *"From Hindu Growth to Productivity Surge: The Mystery of the Indian Growth Transition," IMF Working Paper, May*

5. Roy, S., Kessler, M., and Subramanian A. (2016). *"Glimpsing the End of Economic History? Unconditional Convergence and the Missing Middle Income Trap", CGD Working Paper 438*

6. Williamson, John and R. Zagha, 2002, "From the Hindu Rate of Growth to the Hindu Rate of Reform," Working Paper No. 144, Stanford Center for International Development.

परिशिष्ट I

प्रतिव्यक्ति जीडीपी की अभिसृति

1. विश्लेषण के लिए 1980 से 2014–15 तक केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन (CSO) की राज्य जीडीपी की सह–बंधित आंकड़ों की श्रृंखला का प्रयोग हुआ। यह सह–बंधन सारे आंकड़ों को 2011–12 की कीमतों पर व्यक्त करने के लिए किया गया है।

2. दशकानुसार (1981, 1991, 2001, 2011) की राज्य स्तरीय जनसंख्या का विश्लेषण में प्रयोग हुआ है। प्रत्येक दशक के मध्यवर्ती वर्षों के लिए रेखिक अन्तर्वेशन कर जनसंख्या के अनुमान प्राप्त किए गए हैं। उन्हीं अनुमानों का प्रतिव्यक्ति GSDP के आंकलन में प्रयोग किया गया है।

3. विभिन्न राज्यों, देशों और क्षेत्रों के लिए प्रतिव्यक्ति जीडीपी की अभिसृति जानने के लिए नि:शर्त प्रतीपगमन विधि अपनाने के लिए चक्रवर्धी वार्षिक संवृद्धि दर (Compound Annual Growth Rate [CAGR]) का प्रयोग किया गया है।

4. अंतर्राष्ट्रीय प्रतिव्यक्ति आय के आंकड़े WDI आंकड़ा कोष और WEO आंकड़ा कोष से लिए गए हैं।

5. BRC, MPC, UPC और APC द्वारा क्रमशः संयुक्त बिहार (बिहार+झारखंड), संयुक्त मध्य प्रदेश (मध्य प्रदेश + छत्तीसगढ़), संयुक्त उत्तर प्रदेश (उत्तर प्रदेश + उत्तराखंड) और संयुक्त आंध्र प्रदेश (आंध्र प्रदेश + तेलंगाना)) को निर्दिष्ट किया गया है। इन इकाइयों की प्रतिव्यक्ति आय का आंकलन इनकी विभाजन पश्चात अवधि में, दोनों नए राज्यों की GSDPs के योग को उनकी जनसंख्या के योग से विभाजन द्वारा किया गया है।

6. पश्चिम बंगाल की GSDP श्रृंखला 2011–12 की कीमतों पर सुलभ नहीं है। इसका 2011–12 का सह–बंधन गुणंक शेष सभी प्रांतों की 2011–12 की GSDPs के योग से (2004–05 कीमतों पर) को उनकी 2011–12 की प्रचलित कीमतों पर GSDPs के योग से विभाजिक कर प्राप्त किया गया है।

7. वित्तीय वर्षानुसार उपलब्ध (अप्रैल से मार्च) के जीडीपी के आंकड़ों को कैलेंडर वर्ष (जनवरी–दिसंबर) के आंकड़ों में परिवर्तित करने के लिए प्रत्येक वर्ष के लिए (0.25)/(0.75) अनुपातों का प्रयोग किया गय है। उदाहरण : 2011 का GSDP का आंकड़ा है। [(0.25)* 2010–11 GSDP + (0.75)* 2011–12 GSDP]

8. बड़े राज्य वह है जिनकी जनसंख्या 2011 में 10 मिलियन या अधिक थी। नि:शर्त अभिसृति विश्लेषण में केवल इन्हीं प्रांतों के आंकड़ों का प्रयोग किया गया है। यदि सभी राज्यों के आंकड़ों का प्रयोग किया जाता है तो भी परिणाम इतने ही स्पष्ट और सबल रहते हैं।

9. दीर्घकालिक अभिसृति (1970 से 2014) के लिए हमने इक्नॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली प्रतिष्ठान (EPW Foundation) के आंकड़ों का प्रयोग किया है। इस अवधि के लिए CSO के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

10. चीन, भारत और विश्व की तुलना के लिए प्रचलित अंतराष्ट्रीय \$2011 कीमतों के लिए क्रय शक्ति तुल्य (PPP) जीडीपी प्रतिव्यक्ति आंकड़ों की श्रृंखला का प्रयोग किया गया है। चीन के लिए प्रतिव्यक्ति जीडीपी का आंकलन RMB में समाहित प्रदेशों के लिए किया गया है। इसे 2011 के लिए RMB PPP परिवर्तन गुंणक से विभाजित कर लिया गया है (3.506)। भारत के लिए प्रांतीय GDP प्रतिव्यक्ति का आंकलन भारतीय रूपयों में हुआ है। फिर इसे Rupee PPP परिवर्तन गुणक 2011 (15.109) से विभाजित किया गया है।

11. विश्लेषण के लिए 87 देशों का एक संतुलित पैनल प्रयोग किया गया है। एक मिलियन से कम जनसंख्या और तेल के धनी देशों को इस पैनल में शामिल नहीं किया गया।[9]

उपभोग अभिसृति

1. मासिक प्रतिव्यक्ति उपभोग व्यय (MPCE) के आंकलन के लिए NSSO के इन दौरों के उपभोग सर्वेक्षण के आंकड़ों का प्रयोग किया गया है : 38वां (1983), 50वां (1993-94), 61वां (2004-05) तथा 68वां (2011-12)। विश्लेषण में समान पुनःस्मरण अवधि आधारित MPCE के आंकड़े ही प्रयोग हुए हैं।

2. CPI अपस्फायकों का प्रयोग कर वास्तविक मासिक प्रतिव्यक्ति व्यय का आंकलन किया गया है। सकल स्तरीय अपस्फायक का आंकलन करने के लिए ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या द्वारा भारित CPI-AL तथा CPI-IW का औसत लिया गया है।

3. 38वें दौर को छोड़ NSSO के सभी सर्वेक्षणों की अवधि जुलाई से जून रही है। इस दौर (38वें) की अवधि जनवरी 1983 से दिसंबर 1983 थी। वास्तविक MPVR के संगत आंकड़ों केक आंकलन के लिए संगत अवधियों के CPI अपस्फायकों का आंकलन किया गया है।

4. वास्तविक MCPEs का जुलाई 2011 से जून 2012 की CPI आधार कीमतों के अनुसार अपस्फायन किया गया है।

5. वास्तविक MPCE के आंकड़ों के आधार पर दिल्ली और चंडीगढ़ बहिष्शायी है। अत: इन्हें विश्लेषण में सम्मिलित नहीं किया गया है।

6. एक मिलियन से कम जनसंख्या वाले प्रदेश लक्षद्वीप, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, दमण और द्वीव, दादर और नगर हवेली तथा सिक्किम को भी विश्लेषण से बाहर रखा गया है।

7. नि:शर्त अभिसृति प्रतीपगमन के लिए CAGR मानों का संवृद्धि दर के आंकलन में प्रयोग किया गया है।

8. सारी अवधि के दौरान विश्लेषणाधीन प्रांतों के समूह को यथावत् रखने के लिए ही बिहार, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश के संयुक्त स्वरूपों का ही विश्लेषण किया गया है। इनके लिए वास्तविक MPCE के आंकड़े प्राप्त करने के लिए क्रमश: बिहार और झारखंड, मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड तथा आंध्र प्रदेश और तेलंगाना की जनसंख्या भारित औसतों का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार राज्य स्तरीय विश्लेषण की तुलनीयता बनाए रखी गई है।

स्वस्थता सूचक अभिसृति

1. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्लेषण के लिए विभिन्न देशों के एक संतुलित समूह का, प्रत्येक स्वस्थता सूचक के लिए विश्व बैंक के आंकड़ों के आधार पर निर्माण किया गया है। TFR पैनल में 103 देश हैं और जीवाशा तथा IMR पैनलों में 101 देश ही हैं।

2. एक मिलियन से कम जनसंख्या वाले देशों और तेल धनी देशों को विश्लेषण से बाहर रखा गया है।

---

[9] वर्ष 2011 में एक मिलियन से कम आबादी वाले देश: एन्टीगुआ और बारबुडा, बहामास, बेलीज, बरमुडा, बारबाडोस, ब्रुनेई, दारूस्सलाम, भूटान, कोमोरोस, केपवर्डे, साइप्रस, जीबूती, डोमिनिका, फीजी, इक्वेटोरियलगिनीया, ग्रेनाडा, आइसलैंड, सेन्टकिट्स, एण्ड नेविस, सेन्टलूसिया, लग्जमबर्ग, मकाओ, मालदीव, माल्टा, मोन्टेनिग्रो, साओटोम एण्ड प्रिंसिपे, सूरीनाम, सेन्टविन्सेंट एण्ड ग्रेनाडाइन्स।

तेल निर्यातक देश: अल्जीरिया, अंगोला, चाड, कोंगो, कुवैत, गबोन, नाइजीरिया, सूडान, कजाकिस्तान, रूसी संघ, लीबिया, ओमान, सउदी अरब, तुर्कमेनिस्तान, अजरबैजान, संयुक्त अरब अमीरात, यमन, ईरान, कतर, बहरीन, इक्वाडोर, बेनेजुएला, त्रिनिदाद एण्ड टोबैगो।

3. भारतीय राज्यों के लिए प्रतिदर्श पंजीकरण व्यवस्था (SRS) की रिपोर्टों और बुलेटिनों द्वारा प्रदान किए गए आंकड़ों का प्रयोग हुआ है।

4. वर्ष 2014 के LE के अनुमान उपलब्ध नहीं है। इसलिए विश्लेषण को 2013 तक सीमित रखा गया है। अन्य दो मापकों के लिए 2014 तक का विश्लेषण संभव रहा है।

5. झारखंड, छत्तीसगढ़ और उत्तराखंड के लिए SRS की रिपोर्टों ने जीवाशा के आंकड़ें नहीं दिए हैं। अतः हम उक्त प्रांतों को विश्लेषण में सम्मिलित नहीं कर पाए हैं। राज्यों के इसी समूह के IMR के आंकड़ों में बहुत उतार-चढ़ाव दिखाई दिए हैं। इसी कारण IMR के विश्लेषण में भी इन राज्यों को स्थान नहीं मिल पाया है। TFR की इन तीन राज्यों की जानकारी तो 2004 से ही सुलभ हो पाई है।

6. विभाजनपूर्व के तीन स्वस्थता सूचकों के लिए अविभाजित बिहार, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के आंकड़ों का प्रयोग हुआ है। पुनर्गठन पश्चात् अवधि में वर्तमान बिहार, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के आंकड़े प्रयुक्त किए जा रहे हैं।

7. जीवाशा की संवृद्धि दर का मापन CAGR द्वारा किया गया है और IMR तथा TFR की संवृद्धि दरें उनके अंतरों की वार्षिक औसतों द्वारा मापी गई है। इसका आधार यही है कि TFR तथा IMR तो पहले से ही दरें हैं, उनका निम्न सीमाबंध शून्य है, जबकि जीवाशा एक स्तर सूचक संख्या है।

8. भारतीय राज्यों के IMR आंकड़ों की रचना में त्रैवार्षिक चल औसत का प्रयोग हुआ है तो TFR के आंकड़े मध्यवर्ती वर्षों के लिए अंतर्वेशन विधि अपनाई गई है।

9. भारतीय राज्यों के LE के मान अवधि के अनुसार अंतरालों के लिए तैयार किए गए हैं। माना गया है कि ये मान उक्त अवधियों के लिए स्थिर रहते हैं। हां एक से दूसरे अवधि अन्तराल में परिवर्तन संभव है।

10. IMR तथा TFR को अनुपातों के रूप में व्यक्ति किया गया है जबकि LE तो एक स्तर को सूचित करती है। अतः LE के लिए CAGR का आंकलन किया गया है और IMR तथा TFR की वार्षिक औसतें ही पर्याप्त मानी गई हैं।

शब्द संक्षेपण

STATECODE	
APC	तेलंगाना + आंध्र प्रदेश
AR	अरूणाचल प्रदेश
AS	असम
BR	बिहार
BRC	बिहार + झारखंड
CG	छत्तीसगढ़
DL	दिल्ली
GA	गोआ
GJ	गुजरात
HR	हरियाण
HP	हिमाचल प्रदेश
JK	जम्मू और कश्मीर
JH	झारखंड
KA	कर्नाटक
KL	केरल
MP	मध्य प्रदेश
MPC	मध्य प्रदेश + छत्तीसगढ़
MH	महाराष्ट्र
MN	मणिपुर
MG	मेघालय
MZ	मिजोरम
NA	नागालैंड
OR	ओडिशा
PB	पंजाब
RJ	राजस्थान
SK	सिक्किम
TN	तमिलनाडु
TR	त्रिपुरा
UP	उत्तर प्रदेश
UPC	उत्तर प्रदेश + उत्तराखंड
UK	उत्तराखंड
WB	पश्चिम बंगाल

परिशिष्ट-II

1. भारत में आय की अभिसृति, 1984-1994

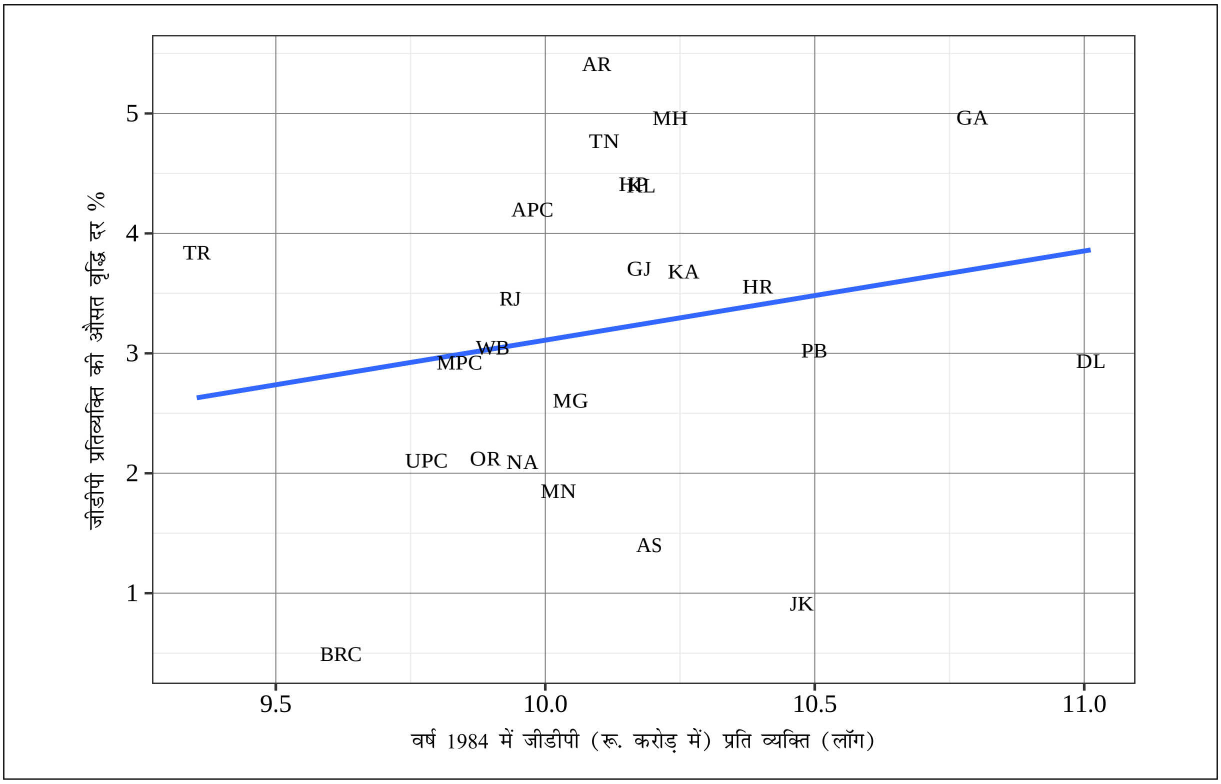

2. भारत में आय की अभिसृति, 1994-2004

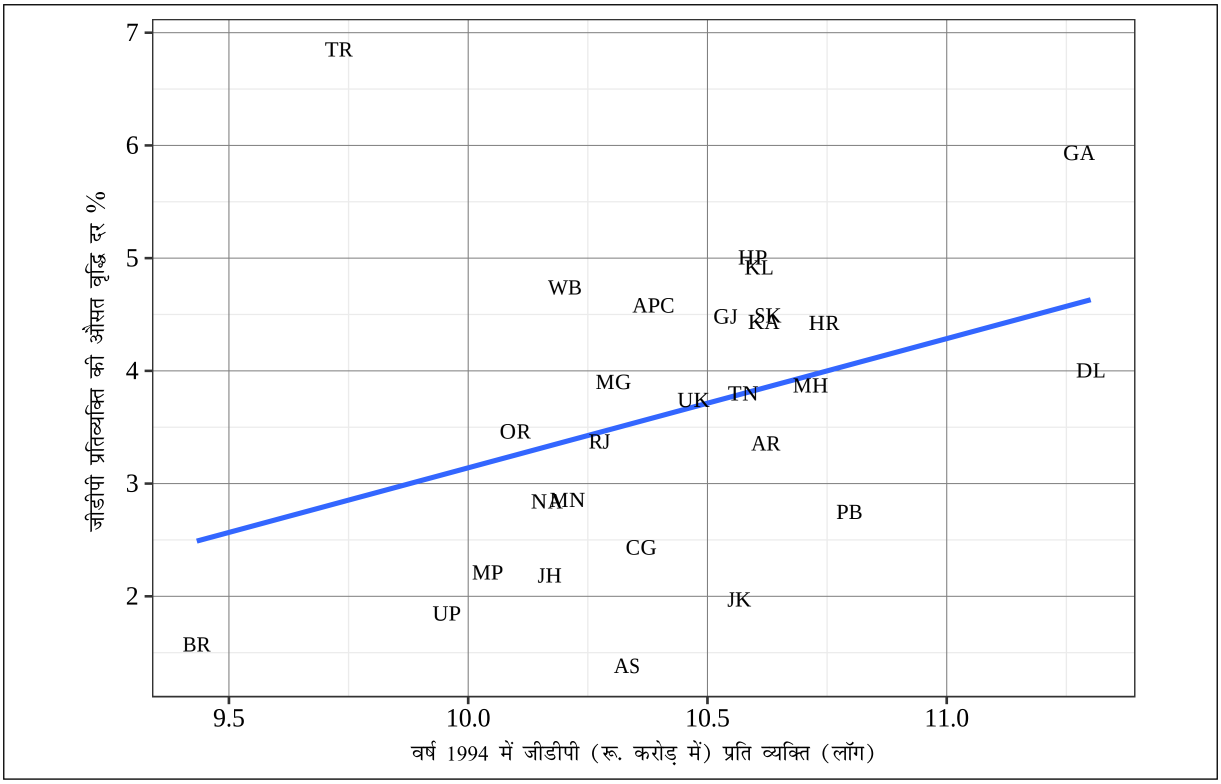

3. भारत में आय की अभिसृति, 2004-14

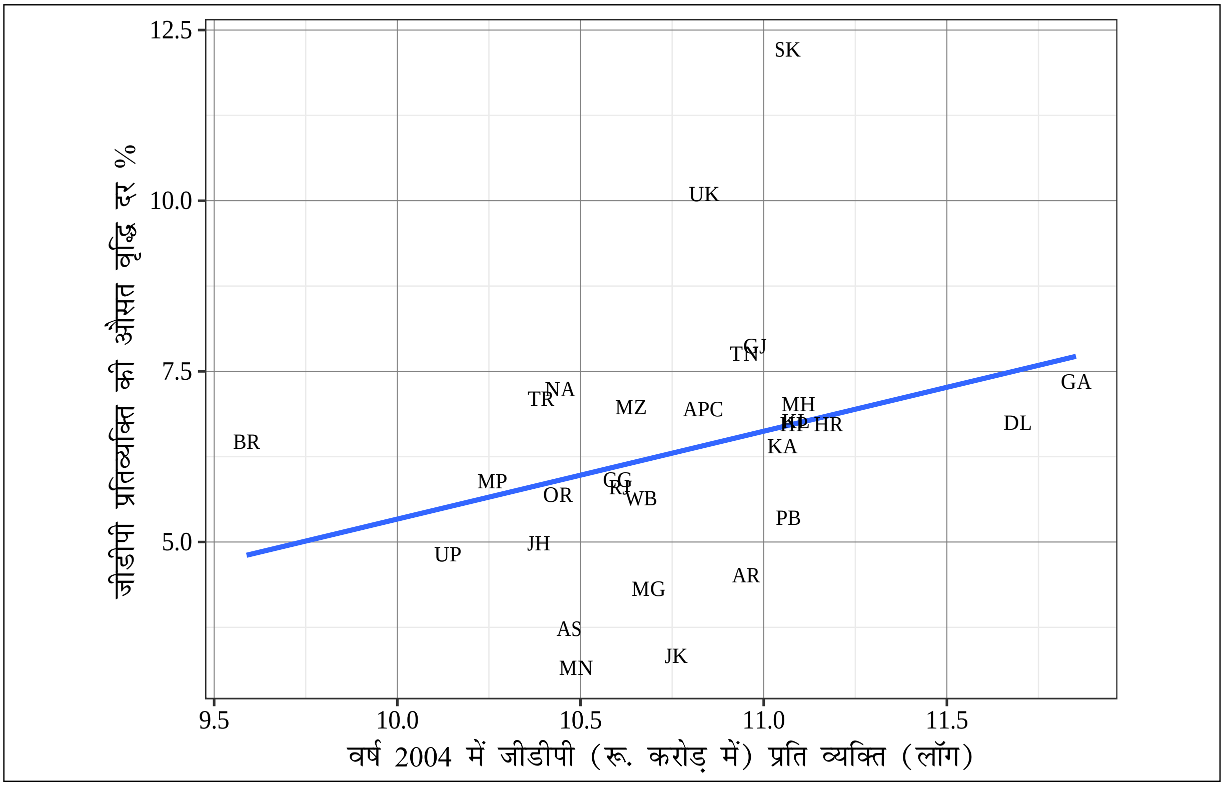

4. भारत में उपभोग की अभिसृति : 1983-93, 1993-94, 2004-11

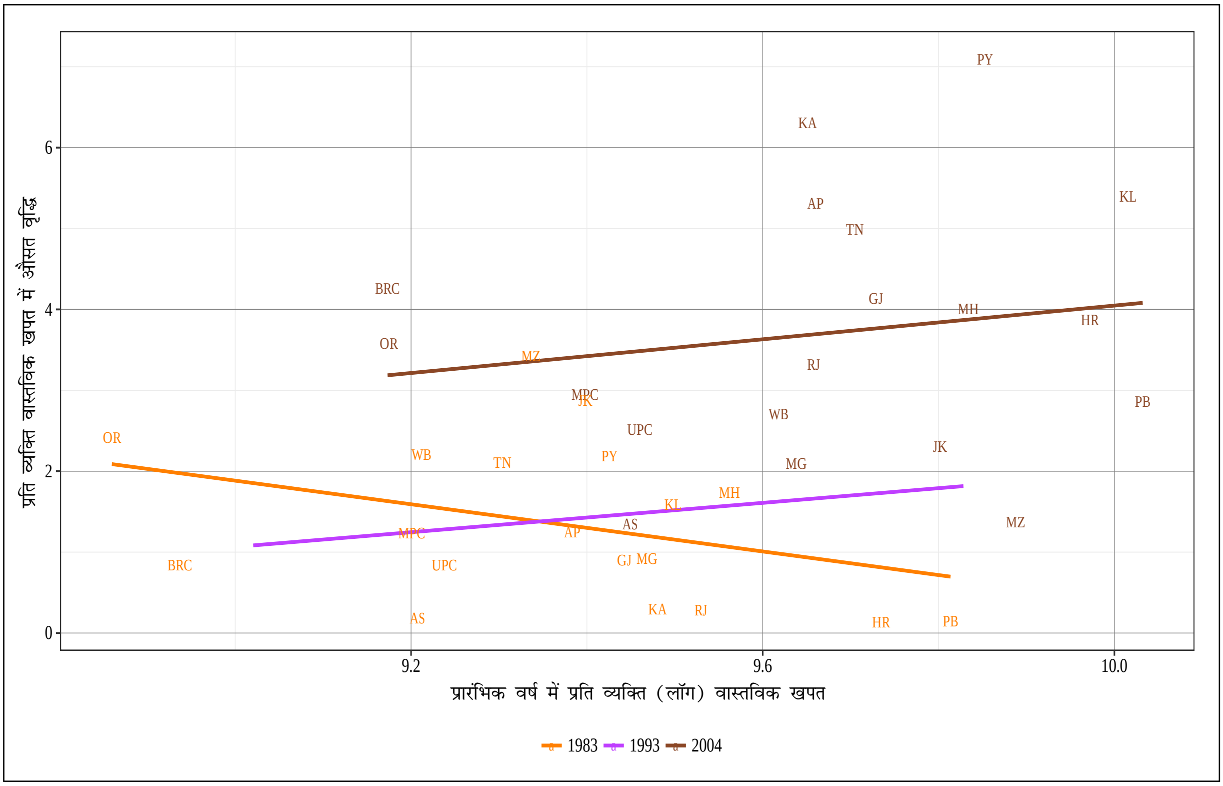

भारत एक है : वस्तुओं के लिए भी और संविधान की दृष्टि से भी

11
अध्याय

''कहां घरों की छोटी-छोटी दीवारों ने दुनिया को टुकड़े-टुकड़े नहीं किया है?''

-रवीन्द्रनाथ टैगोर

सामान्य धारणा यही है कि भारत राजनीतिक दृष्टि से तो एक हो चुका है किन्तु अभी पर्याप्त आर्थिक एकीकरण नहीं हो पाया है। वस्तु एवं सेवा कर नेटवर्क (GSTN) के बीजक या चालान स्तर एक अभिनव विषद जानकारी स्रोत के आधार पर हमारा यह अध्याय वस्तुओं के विशाल स्तरीय आंतरिक व्यापार की व्याख्या कर रहा है। भारत का आंतरिक व्यापार जीडीपी अनुपात 54 प्रतिशत है और यह विश्व के बड़े देशों के समतुल्य ही है। इस अध्याय में विभिन्न राज्यों के बीच व्यापार प्रवाहों को भी कलमबंद किया है। यहां मूलत: पूर्व अपेक्षाओं जैसा ही चित्र उभरता है, किन्तु कुछ चौंकाने वाले तथ्य भी स्पष्ट हो रहे हैं। उदाहरण के लिए उत्तर प्रदेश विनिर्मित वस्तुओं का निवल निर्यातक है। अत: यह विनिर्माण उद्योगों में स्पर्धाशील है। अध्याय के अंतिम भाग में हम यह चर्चा कर रहे हैं कि एक भारत के निर्माण में संविधान की व्यवस्थाओं का कितना सहयोग रहा है।

विषय प्रवेश

11.1 दशकों पूर्व जब राजकपूर ने बहुत मनोभावपूर्ण गीत गाया था– ''फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी'' वह संभवत: अनजाने में ही तुलनात्मक राष्ट्रीय विकास की एक गहन अंतरानुभूति को व्यक्त कर रहे थे। कभी बिस्मार्क ने कहा था, ''हमने यूरोप तो बना लिया है, अब यूरोपीय व्यक्तियों को पैदा करने की जरूरत है''। उसके प्रत्युत्तर में राजकपूर का कहना है, ''भारत के आधार निर्माताओं ने निश्चित रूप से सोच विचार कर भारतीयता भरे समाज और राजनीतिक चिंतन की रचना कर दी थी।[1] हां इस प्रश्न पर विचार अभी बाकी है कि क्या उन्होंने एक आर्थिक भारत की भी रचना कर दी थी, जिसका एक बाजार वस्तुओं और व्यक्तियों के निर्बाध आवागमन का स्वागत करता हो। संविधान एवं संविधान सभा की चर्चाओं के सतर्कतापूर्ण अध्ययन से अनिश्चितता के संकेत मिलते हैं, हां सरसरी तौर पर ऐसा लगता है कि एक आर्थिक भारत के निर्माण की आवश्यकताओं को राज्यों की संप्रभुता बनाए रखने के तकाजों के अधीन छोड़ दिया गया था (देखें भाग–2 आगे)।[2]

11.2 यह अध्याय समीक्षा कर रहा है कि जिस भारत ने बार-बार अपने एक भारतीयता के राजनीतिक चिन्तन को दोहराया और सिद्ध किया है, वह किस सीमा तक एक आर्थिक भारत बन पाया है। एक ऐसे समय में जहां अंतर्राष्ट्रीय एकीकरण के विचार पर प्रहार हो रहे हैं वहीं भारत एक विशद् युगांतकारी सुधार लागू कर ''एक भारत, एक बाजार, कर कर'' रहा है। वस्तु एवं सेवा कर (GST) को लागू करते समय यह प्रश्न पूछना स्वाभाविक ही है कि अब तक भारत मं किस स्तर तक आर्थिक एकीकरण हो पाया है। एक बात स्पष्ट कर दें

---

1 यह इटली के एकीकरण के बाद उस देश के एक राजनेता मस्सीमो द एजग्लियो के प्रसिद्ध कथन-हमने इटली बना लिया है, अब हमें इटली वाले लोग बनाने हैं, का ही परिवर्तित रूप है।

2 यूरोप के एकीकरण की कठिनाइयां, ब्रेक्जिट और पहले यूरो की रचना पर कटुतापूर्ण बहस से तो प्रतीत होता है कि भारत में उठाए गए कदम न केवल अनुपयुक्त नहीं थे, बल्कि वे तो भविष्य के दूर्ज्ञान से पूर्ण थे।

: इस अध्याय में, यदि अलग से कुछ नहीं कहा गया हो, तो व्यापार का अर्थ भारत के विभिन्न राज्यों के बीच व्यापार से ही होगा।

11.3 हम अपनी समीक्षा GSTN के बीजक आधारित अन्तर्राज्यीय वस्तु प्रवाहों के विषद् आंकड़ा समुच्च्य के आधार पर कर रहे हैं। इन आंकड़ों की रचना की विस्तृत जानकारी तो बॉक्स 1 में आपको मिल पाएगी। अभी तो हम उन मुख्य बातों को संक्षेप में समझा रहे हैं जो उन आंकड़ों से उभर कर आ रही है।

11.4 (कुछ क्षेत्रों में व्याप्त) धारणाओं एवं कुछ नवीन अनुमानों के विपरीत भारत आंतरिक रूप से बहुत ही एकीकृत है। यहां वस्तुओं और व्यक्तियों के निरंतर चलते रहने वाले प्रवाह बहुत विशाल हैं। मुख्य बातें इस प्रकार हैं :

- अंतर्राज्यीय व्यापार प्रवाह के सर्वप्रथम आंकलित अनुमान दर्शा रहे हैं कि उन राज्यों की सीमाओं के आरपार तथा विभिन्न फर्मों के बीच लेनदेन जीडीपी के कम से कम 50 प्रतिशत अंश के समान अवश्य है। इसका अर्थ है कि देश का आंतरिक व्यापार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से 1.7 गुणा अधिक है। दो दोनों आंकड़े शेष अधिकार क्षेत्रों से बेहतर ही सिद्ध होते हैं। व्यवहारिक रूप से ही सही, भारत में आन्तरिक रूप से सुदृढ़ एकीकरण विद्यमान है। अधिक तकनीकि स्तर का आंकलन भी इसी बात की पुष्टि कर रहा है कि भारत में भी व्यापार की लागतें उसी स्तर पर व्यापार में कमी ला देती हैं जिस पर अन्य देशों में (यह कमी) हो रही है।
- एक अन्य उत्साहजनक अवलोकन के लिए अभी हमारे पास प्रारंभिक आधार तो है, निश्चयात्मक नहीं। उसके अनुसार राजनीतिक सीमाएं भले ही व्यक्तियों के प्रवाहों को कुछ बाधित कर रही हों, किन्तु भाषा मूलत: हिन्दी वस्तुओं के प्रवाहों के मार्ग में बाधा के रूप में दिखाई नहीं देती।
- वस्तु प्रवाहों का स्वरूप पूर्वापेक्षाओं के अनुरूप ही लगता है, किन्तु यहां कुछ आश्चर्यजनक तथ्य भी स्पष्ट हुए हैं :
  - ○ यदि GSDP से व्यापार के अनुपात की बात करें तो उत्तराखंड, हिमाचल और गोआ जैस छोटे राज्य अधिक व्यापार करते हैं। विनिर्माण शक्ति केन्द्र तमिलनाडू और गुजरात निवल निर्यातक हैं तो मुख्यत: कृषि प्रधान माने जाने वाले उत्तर प्रदेश और हरियाणा भी नोयडा और गुरूग्राम के दम पर औद्योगिक शक्ति केन्द्र बन गए हैं। इन प्रदेशों के ये दो जनपद तो बृहतर दिल्ली के विशाल शहरी क्षेत्र का हिस्सा बन गए लगते हैं।अगली महत्वपूर्ण जानकारी यह है कि व्यक्तियों के आवागमन की लागत वस्तुओं से दुगुनी हैं (अध्याय 12)।
  - ○ भारत में आंतरिक वस्तु व्यापार के उच्च अनुमानों के लिए एक आशंका भी है। यह वर्तमान अप्रत्यक्ष कर व्यवस्था का एक संभावी परिणाम है। यह व्यवस्था अंतर्राजकीय वस्तु प्रवाह को अंत:राज्यीय प्रवाह पर वरीयता दे रही है। ऐसा अन्तिम उपभोग वस्तुओं, कर मुक्त वस्तुओं और 30 वस्तुओं के विषय में विशेषकर हो रहा है जिनके लिए आदान पर लगे कर का लाभ नहीं मिलता। यदि यह सत्य है तो जीएसटी इन विद्रूपताओं का निवारण कर अंतर्राजकीय व्यापार को सामान्य बना देगा।[3]
  - ○ **एक अन्तिम अवलोकन :** हम केवल विभिन्न फर्मों के बीच अंतर्राजकीय व्यापार का ही परिणाम निर्धारण नहीं कर पा रहे, हमारे आंकलन में एक से अधिक राज्यों में कार्य कर रही फर्मों की शाखाओं के बीच हो रहा व्यापार भी सम्मिलित है। यह व्यापार बहुत महत्वपूर्ण है, एक शाखा से दूसरी शाखा के बीच व्यापार फर्मों के सकल व्यापार का 68 प्रतिशत है और इस पर व्यापार की लागतों का प्रभाव विभिन्न फर्मों के बीच व्यापार की अपेक्षा अधिक गहरा पड़ता है। यह इस कारण से भी हैरानी की बात है कि हमारा संविधान तो एक बाजार पर राज्य की संप्रभुता अक्षुण्ण बनाए रखने की बात करता है।

11.5 अध्याय की रचना इस प्रकार की गई है; भाग-1 में हम व्यापार पर अपने अवलोकन और निष्कर्ष दर्ज कर रहे हैं। भाग-2 में अन्य प्रतिमानों से तुलना करते हुए आंतरिक एकीकरण पर संवैधानिक व्यवस्थाओं की समीक्षा की गई है। यहां चर्चा का विषय है : क्या कानून भारत के आर्थिक एकीकरण को अधिक सक्रिय रूप से सहज बना सकते हैं?

---

3 जीएसटी बेहतर अनुपालन, स्पर्धी संवर्धक लाभों एवं अन्य मार्गों से कर संग्रह में वृद्धि भी कर सकता है।

भाग 1 : एक भारत : वस्तुओं का आंतरिक व्यापार

रेखाचित्र 1 : एक राज्य की सीमा पर सामान ला रहे ट्रकों की भीड़

(© Yann Forget / Wikimedia Commons / CC-BY- SA-3.0)

11.6 राज्यों की सीमाओं पर ट्रकों की लम्बी-लम्बी कतारें और उनके चालकों के अधिकारिक अनुमति के लिए अफसरों से बहस या उनसे की जा रही गैर कानूनी उगाही (घूसखोरी) के नजारे तो अब सुविख्यात हो चुके हैं (देखें चित्र 1)। इनके परिणाम स्वरूप व्यापार और आर्थिक गतिविधियों पर होने वाले अघातों को भी भली प्रकार रिकार्ड किया जा चुका है। किन्तु क्या भारत के इस प्रकार के निकृष्ट चित्रण में कुछ वास्तविकता भी है?

11.7 व्यापार में अंतर्राष्ट्रीय बाधाओं का तो बहुत अध्ययन हुआ है किन्तु देशों के भीतर विद्यमान व्यापार तंत्रों और राजनीतिक-सांस्कृतिक बाधाओं की ओर कम ध्यान दिया गया है। विस्तृत अंतर्राज्यीय व्यापार के सूचना आधार के अभाव में भारत में विद्यमान अंत:राष्ट्रीय व्यापार बाधाओं का अध्ययन विश्लेषण अभी तक एक बड़ा चुनौति भरा कार्य बना हुआ था। यह अध्याय एक अभिनव सूचना स्रोत का प्रयोग कर आंतरिक व्यापार का सर्वप्रथम अनुमान आंकिलत करने का प्रयास कर रहा है। यह स्रोत है केन्द्रीय विक्रय कर के संग्रह की वह जानकारी, जो कर सूचना अंतरण प्रणाली (TINXSYS) द्वारा अंकित हो जाती है।[4] ये आंकड़े परिवहन की सभी विधियों/माध्यमों (सड़क सहित), से हो रहे व्यापार को समाहित कर रहे हैं/पहले ऐसा नहीं हो पाता था।

I. क्या भारत अन्य देशों की अपेक्षा अधिक व्यापार करता है?

11.8 तालिका 1 में भारत के अंतर्राष्ट्रीय और आंतरिक व्यापार प्रवाहों की अन्य देशों के प्रवाहों से तुलना की जा रही है। परिणाम बहुत आश्चर्यजनक हैं : भारत का अंतर्राज्यीय व्यापार (जीडीपी का 54 प्रतिशत) संयुक्त राज्य अमेरिका के 78 प्रतिशत और चीन के 73 प्रतिशत जितना तो नहीं है लेकिन कनाडा के प्रादेशिक तथा यूरोपीय संघ

---

4 अभी तक भारत में अन्त:राष्ट्रीय व्यापार का एक मात्र अध्ययन कोलकाता स्थित व्यापारिक अन्वेषण एवं सांख्यिकी महानिर्देशक द्वारा ही हुआ है। इसमें केवल रेल, वायु और आंतरिक जलमार्गों से व्यापार की जानकारी है- सड़क व्यापार का सबसे बड़ा घटक इससे छूट जाता है। यही नहीं, यह केवल परिमाण के आंकड़े हैं- रूपयों में व्यापार के मूल्य की जानकारी यहां नहीं मिल पाती देखें http://www.dgciskol.nic.in/vaanijya/Indiapercent20Internalpercent20Trade.pdf

के देशों के बीच व्यापार से कहीं अधिक है (यूरोपीय संघ देशों के बीच व्यापार पर ''चार स्वतंत्रताएं'' भी लागू हैं, उनके कारण वस्तुओं, सेवाओं, पूंजी और जनशक्ति का एक सदस्य से दूसरे में प्रवाह निर्बंध रहता है)। भारत में तो एक और विलक्षणता भी है : हमारे आंकड़े केवल निर्मित वस्तुओं के आंकड़ें है, इनमें कृषि उत्पाद सम्मिलित नहीं है। अत: ये आंकड़े आंतरिक व्यापार का न्यून अंकन ही कर पाते हैं।[5] भारत के राज्यों के बीच व्यापार का एक बड़ा हिस्सा, लगभग आधा, तो फर्मों के भीतर (विभिन्न शाखाओं/कार्यालयों के बीच) स्टॉक का अंतरण ही है। दूसरे शब्दों में फर्मों का आंतरिक लेनदेन उनके बीच लेनदेन से कहीं अधिक है।[6]

11.9 व्यापार के परिणाम को जांचने की एक अन्य

तालिका 1 : अंतर्राष्ट्रीय और अंतर्राज्यीय व्यापार प्रवाहों की तुलनाएं

देश	वर्ष	अंतरराज्यीय/GDP	अंतरराष्ट्रीय/(GDP)	अंतर्राज्यीय से अंतर्राष्ट्रीय का अनुपात
ब्राजील[e]	1999	76%	14%	5.4
संयुक्त राज्य अमरीका[a]	2015	78%	31%	2.5
भारत (C+F form)	2015	54%	32%	1.7
भारत (C Form)	2015	32%	32%	1
चीन[d]	2009	74%	45%	1.6
कनाडा[b]	2012	20%	62%	0.3
यूरोपीय संघ[c]	2015	20%	84%	0.2
इंडोनेशिया[f]	2005	12%	63%	0.2

a: Freight Analysis Framework Data Tabulation Tool, b: Statistics Canada, c: Eurostat, d: Xing, Whalley and Li(2015), e: Vasconcelos (2001), f: Firdaus and Widiyasanti (2010)

रेखाचित्र 2 : अंतर्राज्यीय और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का अनुपात : क्षेत्रफल के लघुगणकानुसार

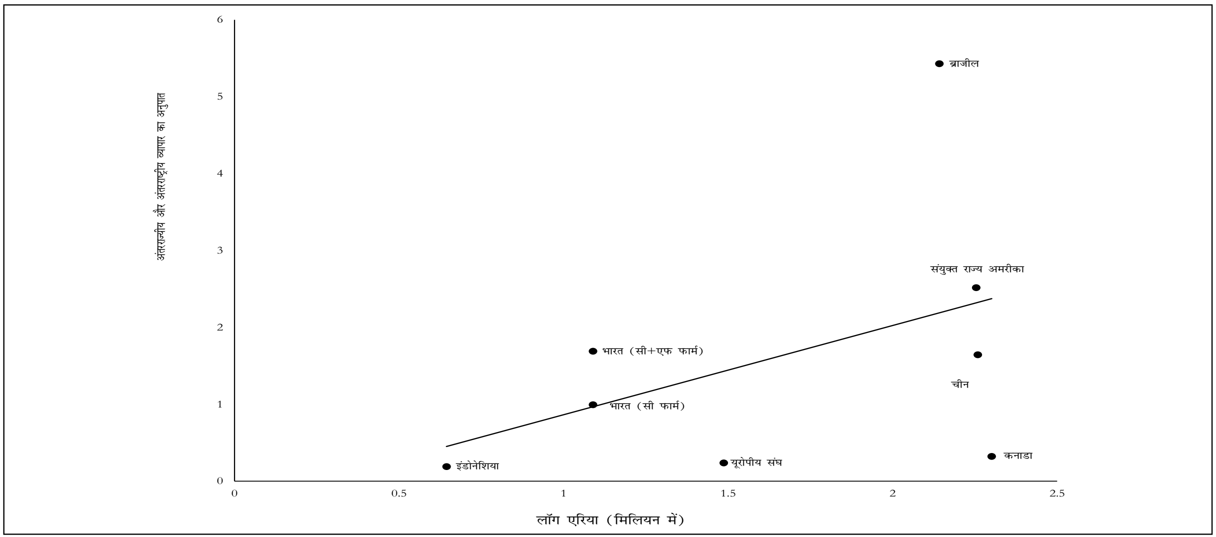

---

[5] वर्तमान अध्ययन भी उन्हीं वस्तुओं तक सीमित है जिन पर केन्द्रीय विक्रय कर लगता है। मोटेतौर पर यहां दर्शाया गया व्यापार का स्वरूप विनिर्मित वस्तुओं का ही है, कृषिक और सेवा क्षेत्र इससे बाहर रह जाते हैं। बॉक्स 1 में हमारी TINXSYS की जानकारी को अंतर्राज्यीय व्यापार के विश्लेषण के योग्य बनाने की युक्तियों-विधियों की रूपरेखा दर्शाई गई है।

[6] आगे वाले भागों में हम फर्मों के बीच व्यापार को C-फॉर्म तथा आन्तरिक व्यापार को F-फॉर्म व्यापार का नाम दे रहे हैं। यह विभाजन CST व्यवस्था के प्रशासन द्वारा थोंपी गई प्रक्रियागत विवशता का परिणाम है। C-फॉर्म के अंतर्गत व्यापार पर 2 प्रतिशत दर से केन्द्रीय विक्रय कर लगता है जबकि F-फॉर्म के अंतर्गत तो स्टॉक का फर्म की एक शाखा या उसके एक गोदाम से दूसरे को अंतरण होता है, उस पर कोई कर देयता नहीं होती।

विधि विभिन्न देशों के आंतरिक व्यापार की उनके अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से तुलना की विधि है। भारत का आंतरिक व्यापार इसके विदेशी व्यापार से 1.7 गुना है (यहां विदेशी व्यापार जीडीपी का 32 प्रतिशत है)। इस कसौटी के अनुसार भारत की व्यापार रचना चीन जैसी ही है, जहां यह अनुपात 1.6 बनता है। किन्तु भारत का अनुपात संयुक्त राज्य अमेरिका से कम रह जाता है जहां आंतरिक व्यापार विदेशी व्यापार से 2.5 गुणा है।

11.10 व्यापार के मानक गुरूत्वाकर्षण सिद्धांत से एक अनुभूति प्राप्त होती है : बड़े देश अपने बड़े आंतरिक बाजार के कारण अपनी सीमाओं के भीतर ही अधिक व्यापार करते हैं (विदेशों से कम)। रेखाचित्र 2 में भारत और अन्य देशों लिए आंतरिक-अंतर्राष्ट्रीय व्यापार अनुपातों को उन देशों के अपने-अपने आकार के साथ अंकित किया गया है। इस कसौटी पर दो देश बहिष्शायी प्रतीत होते हैं : कनाडा, जिसका यह अनुपात उसके आकार की अपेक्षा बहुत कम है और मैक्सिको, जहां व्यापारों का अनुपात उसके अपने आकार की तुलना में बहुत अधिक है। इनके विपरीत भारत में तो यह अनुपात मानक या अपेक्षित अनुपात के निकट ही है। अब भारत विदेशी व्यापार से असंबद्ध देश तो नहीं रहा है (रेखाचित्र 1ख, अध्याय 2) और न ही इसे आंतरिक दृष्टि से व्यापार बाधित कहा जा सकता है।

II. अन्तर्राज्यीय व्यापार और विनिर्माण के बीच संबंध

11.11 रिखाचित्र 3 में विभिन्न राज्यों के GSDP में विनिर्माण क्षेत्र के अंश के अनुसार उनके C-फॉर्म और F-फॉर्म व्यापार प्रवाह राज्य GSDP के अनुपात के रूप में अंकित किए गए हैं।[7] राज्य की GSDP में विनिर्माण के अंशों तथा व्यापार परिमाणों (GSDP के अनुपात के रूप में) के बीच सशक्त सह संबंध है। यह अपेक्षा के अनुरूप ही है, क्योंकि हमारे आंकड़ों में केवल विनिर्माण उद्योग के उत्पाद शामिल है।[8] इस चित्र में एक अन्य विशेष बात स्पष्ट हो रही है :

उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और गोआ की GSDP में विनिर्माण शक्ति अन्य राज्यों के साथ इनके अधिक व्यापार में भी झलक रही है। इसके कारणों पर हम अगले अनुच्छेदों में चर्चा करने जा रहे हैं।

रेखाचित्र 3 : अंतर्राज्यीय व्यापार और विनिर्माण उत्पादन के बीच संबंध

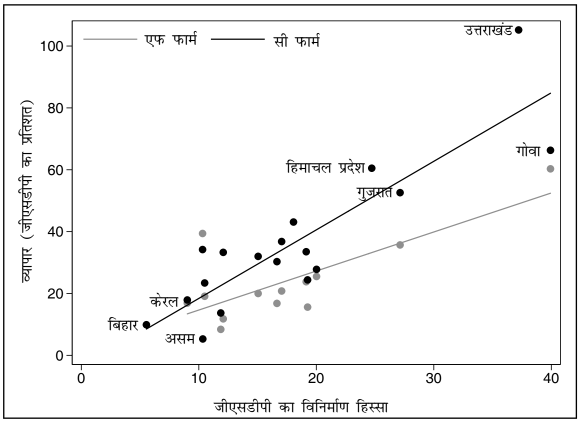

III. अंतर्राज्यीय व्यापार के स्वरूप : विभिन्न फर्मों के बीच व्यापार[9]

अंतर्राज्यीय व्यापार के लिए खुलापन (निर्यात + आयात)

11.12 रेखाचित्र 4 में भारतीय राज्यों के आंतरिक व्यापार को उनके GSDP के अनुपात के रूप में अंकित किया गया है। इस कसौटी पर सबसे खुलेपन वाले राज्य उत्तराखंड, गोआ और हिमाचल प्रदेश हैं। उनके बाद गुजरात, असम, बिहार और उत्तर प्रदेश का क्रम है जो पीछे की ओर से शुरू होता है। महाराष्ट्र और तमिलनाडू जैसे उच्च GSDP राज्य तो इन अनुक्रम में शिखर के आसपास भी नहीं फटकते, वैसे उनके व्यापार GSDP अनुपात भी अच्छे खासे हैं, 33 प्रतिशत और 24 प्रतिशत। यह भारत की आंतरिक सीमा रेखाओं के छिद्र भरे स्वरूप के प्रथम सूचक हैं। ये छिद्र इसके जटिलता भरे नियमों-सन्नियमों का परिणाम अधिक लगते हैं।

11.13 हम यह बात दो सकारात्मक बहिष्शायी राज्यों,

---

7 GSDP में विनिर्माण का अंश सरल औसत है और इसे CSO-2011-12 पर आधारित श्रृंखला से 2012-15 वर्षों के आंकड़ों से आंकलित किया गया है।

8 यह संबंध GSDP में निर्यात के अंश तथा GSDP में विनिर्माण के अंश के बीच भी मान्य रहता है।

9 C-फॉर्म आधारित व्यापार प्रवाह सारे राज्यों के सम्मिलित व्यापार के बहुत निकट होगा, हां, इसमें उत्तर पूर्वी राज्य, पंजाब और केन्द्रशासित राज्यों की जानकारी नहीं है।

रेखाचित्र 4 : अंतर्राज्यीय व्यापार (GDP का प्रतिशत)

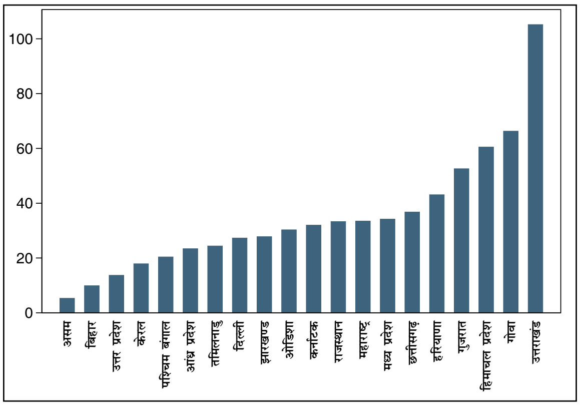

हिमाचल और उत्तराखंड के उदाहरण द्वारा स्पष्ट कर रहे हैं, इनके अतिउच्च व्यापार परिमाण में एक बड़ा योगदान यहां चल रही विनिर्माण इकाइयों को केन्द्रीय उत्पादन शुल्क से मुक्ति का हो सकता है।[10] इन राज्यों के बहिष्शायी स्वरूप की और अधिक पुष्टि उस समय होगी, जब हम अगले अनुच्छेदों में 'गुरूत्वाकर्षण' संबंधों पर चर्चा करेंगे कि क्या (सचमुच) छोटे प्रांत बड़ों की अपेक्षा अधिक व्यापार करते हैं।

11.14 निम्न निष्पादन के पक्ष के बहिष्शायी प्रांत हैं : असम (5.3 प्रतिशत), बिहार (9.9 प्रतिशत) और केरल (17.9 प्रतिशत)। इनका व्यापार के प्रति खुलापन उनके आकार की अपेक्षा कम है। किन्तु यदि रेखाचित्र 3 की जानकारी पर एक बार पुन: विचार करें तो यह विचित्र नहीं लगता। इन प्रांतों में विनिर्माण का GSDP में अंश भी कम है। एक अन्य संभव कारण भी है : हमारे विश्लेषण में उत्तरपूर्वी राज्यों को स्थान नहीं दिया गया है और संभव है कि वे असम तथा बिहार के महत्वपूर्ण व्यापारी सहयोगी राज्य हों।

11.15 रेखाचित्र 5 में भारत, कनाडा और संयुक्त राज्य के प्रांतों के बीच (आंतरिक) व्यापार तथा उनके भूक्षेत्रों के लघु गणकों के बीच संबंध दर्शाया गया है। भारतीय राज्य अपने आकार और अन्त: तथा अन्तर्फर्म व्यापार के प्रति खुलेपन के बीच ऋणात्मक संबंध दर्शा रहे हैं। किन्तु भारत के विपरीत कनाडा और संयुक्त राज्य के प्रांतों में भूक्षेत्र और व्यापार के प्रति खुलेपन में एक निर्बल-सा सह संबंध दिखाई दिया है। प्रतीपगमन रेखा संयुक्त राज्य में प्राय: X- अक्ष के समांतर ही है। अत: भारत के राज्य इस कथन का अधिक समर्थन कर रहे हैं कि छोटी भौगोलिक व्यवस्थाएं अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर अधिक व्यापार करती हैं (कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका में इसकी पुष्टि नहीं हो पा रही)। अत: इस संबंध को स्वीकार करते हुए उत्तराखंड, हिमाचल और गुजरात का अन्य समानप्राय: राज्यों की अपेक्षा अधिक व्यापार कर पाना कहीं न कहीं उनकी आंतरिक कर प्रणालियों का परिणाम हो सकता है।

रेखाचित्र 5 : भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा के अंतर्राज्यीय व्यापार (GDP के अनुपात में)

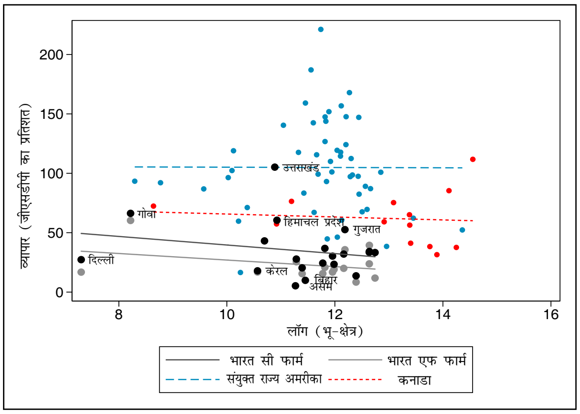

11.16 यदि निर्यात और आयात का योगफल किसी राज्याधिकार क्षेत्र के खुलेपन का मापक है तो उस राज्य का व्यापार शेष किसी न किसी रूप में उसके विनिर्माण क्षेत्र की स्पर्धाशीलता का सूचक बन सकता है। व्यापार के प्रति वाणिज्यवादी दृष्टिकोण तो निर्यात को 'अच्छा' और आयात को 'बुरा' मानता रहा है। अत: किसी भी राज्याधिकार क्षेत्र के आर्थिक सामर्थ्य का मापक इसके निवल व्यापार का संतुलन (स्तर) होगा। यहां निवल निर्यात 'सामर्थ्य' का तथा निवल आयात सामर्थ्यहीनता का प्रमाण माना जाएगा।

11.17 रेखाचित्र 6 में अंतर्फर्म व्यापार प्रवाहों के राज्यानुसार व्यापार शेष को GSTN आंकड़ा सार के आधार पर प्रदर्शित किया गया है।[11] इस कारण से

---

[10] हिमाचल में बद्‌दी/सोलन/गुरू माजरा क्षेत्रों में लगी औद्योगिक इकाइयों तथा उत्तराखंड में SIDCULके क्षेत्रों से व्यापार के प्रवाह बहुत प्रबल हैं। इन्हीं क्षेत्रों में इन राज्यों में बहुत से उद्योग संकुलित भी हैं।

[11] C-फॉर्म और F-फॉर्म की जानकारी देने की बाध्यताएं भिन्न होने के कारण अन्त: और अन्तर्फर्म व्यापार के राज्य स्तरीय प्रतिदर्श अलग-अलग रह जाते हैं। राज्यों के लिए F-फॉर्म आंकड़े TINXSYS पर दर्ज करने की कोई बाध्यता नहीं है। अत: इनके आयात प्रवाह आंकड़ा सार में दिखाई ही नहीं देते। इनके व्यापार प्रवाह को सकल आंकलन से बाहर रखते हुए आयातक निर्यातक राज्यों का एंसा संतुलित समूह चुना गया है जो दोनों प्रकार की जानकारी दर्ज करा रहा है।

उत्तराखंड में GSDP के 45 प्रतिशत के समान व्यापार घाटा तो हरियाणा में GSDP के 25 प्रतिशत के समान व्यापार अतिरेक दिखाई दे जाता है।

रेखाचित्र 6 : व्यापार संतुलन (निवल निर्यात का जीडीपी से अनुपात, प्रतिशत)

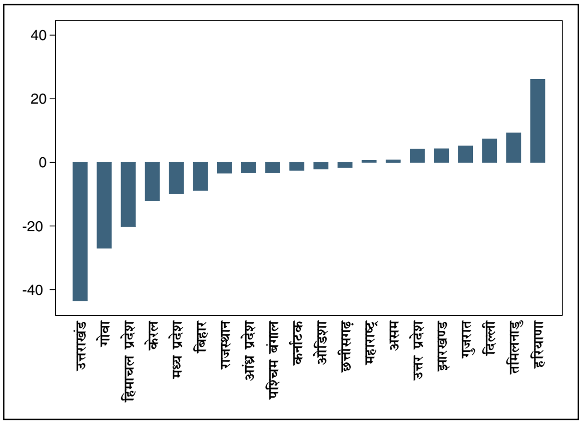

11.18 बड़े विनिर्माण कर्ता राज्यों, गुजरात, महाराष्ट्र और तमिलनाडू का धनात्मक व्यापार शेष उनकी विनिर्माण क्षमताओं की स्पर्धा शक्ति का सूचक है। यह धनात्मक व्यापार शेष दिल्ली (7.4 प्रतिशत), हरियाणा (26.1 प्रतिशत) और उत्तर प्रदेश (4.2 प्रतिशत) की एक विशेषता की ओर संकेत कर रहा है : राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में सम्मिलित गुरूग्राम और नोएडा कृषि प्रधान हरियाणा और उत्तर प्रदेश को भी विनिर्माण शक्ति केन्द्रों (भारतीय मानकों के अनुसार) के रूप में प्रतिष्ठित कर देते हैं।

11.19 उच्चतम व्यापार GSDP अनुपात दर्शाने वाले उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और गोआ तो मुख्यत: व्यापार घाटे वाले राज्य निकलते हैं। संभवत: इसका कारण अन्त:फर्म व्यापार प्रवाह के आयात पक्ष का अवलोकन से छूट जाना ही है। संभव है कि कर छूट आदि की ''विशेष'' सुविधा से लैस ये प्रदेश उत्पादन प्रक्रिया के कुछ मध्यवर्ती कार्यों को ही अपने क्षेत्र में बढ़ावा दे रहे हों और बस इस प्रकार अर्द्धनिर्मित माल का अन्त:फर्म आयात-निर्यात हो रहा हो। किन्तु निवल आधार पर अन्त:फर्म निर्यात प्रवाह का आंकलन नहीं हो पाता। हालांकि इस व्यापार के निर्यात पक्ष के आंकड़े तो F-फॉर्मो से मिल सकते हैं, किन्तु इन राज्यों ने तत्संगत आयात के आंकड़े बताए ही नहीं हैं।

IV. अन्तर्राज्यीय व्यापार के स्वरूप : अन्त:फर्म व्यापार

11.20 रेखाचित्र 7 में हमने विभिन्न राज्यों की GSDP के अनुपात के रूप में उनके अन्त:फर्म व्यापारों के स्वरूपों का चित्रण किया है। इन आंकड़ों के आंकलन की विधि बॉक्स 1 में समझाई गई है। गोआ, गुजरात और महाराष्ट्र में अंत:फर्म व्यापार उतनी ही स्वतंत्रता से चल रहा है जितनी अंर्तफर्म व्यापार को सुलभ है। अंत:फर्म व्यापार की न्यून स्वतंत्रता के छोर पर हैं : उत्तर प्रदेश (8.4 प्रतिशत), राजस्थान (11.8 प्रतिशत) और पश्चिम बंगाल (15.5 प्रतिशत)। इन प्रांतों में कंपनियां स्थापित करने की उच्च लागतें संभवत: इनमें संभावित अंत:फर्म व्यापार प्रवाहों को बाधित कर रही हैं।

रेखाचित्र 7 : GSDP के प्रतिशत में अन्त:फर्म व्यापार

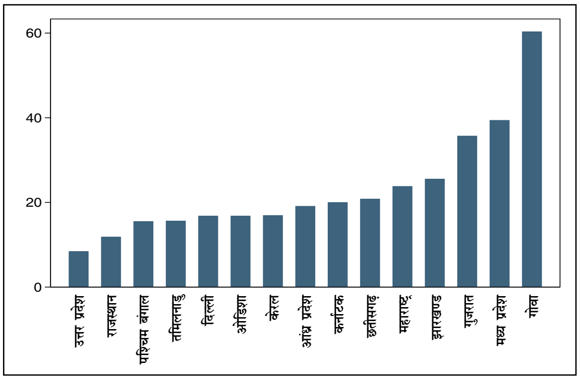

11.21 इसी प्रतिदर्श के अंत:फर्म और अन्तर्फर्म व्यापार की तुलना रेखाचित्र 8 में की गई है।[12] इन दो प्रकार के व्यापारों में कोई सह संबंध नहीं दिखाई देता अर्थात यह आवश्यक नहीं कि अंत:फर्म व्यापार के उपयुक्त वातावरण वाला प्रांत अंतर्फर्म व्यापार के लिए भी उतने ही खुलेपन का परिचय दे रहा हो। मध्य प्रदेश तो अंत:फर्म व्यापार के अंश में अंतर्फर्म व्यापार अंश पर अधिकता का एक बड़ा उदाहरण है। संभवत: देश के मध्य भाग में स्थित यह प्रांत संभरण तंत्र के लिए बहुत उपयुक्त रहा है।

11.22 इस प्रकार के व्यापारों के अंश में भिन्नता का

[12] यहां के प्रतिदर्श में राज्यों के युग्म रेखाचित्र 4 के युग्मों से भिन्न हैं। इसीलिए यहां सापेक्ष अनुक्रम भी भिन्न है। यहां अंतर्फर्म व्यापार से तुलना करने के लिए 15 ग 15 राज्य युग्मों की जानकारी प्रयोग हो रहा है। ये वही राज्य हैं जहां F-फॉर्म वाले आंकड़े उपलब्ध है।

एक कारण यह भी हो सकता है कि इन दो प्रकार के प्रवाहों में सम्मिलित वस्तुओं में भी भारी अंतर

रेखाचित्र 8 : GSDP के प्रतिशत के रूप में अन्त:फर्म और अन्तर्फर्म व्यापार

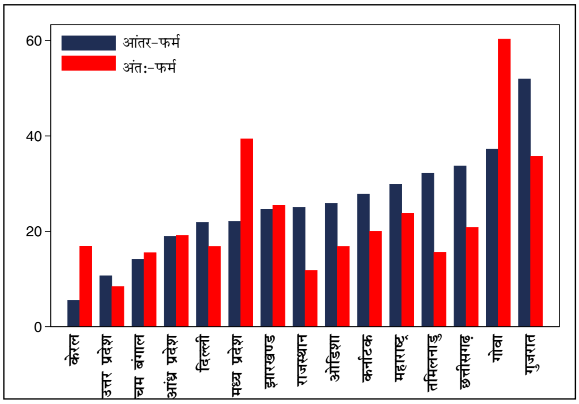

हो। बर्नार्ड आदि (2007) ने इस प्रकार के वस्तुओं के अन्तर पर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के संदर्भ में विचार किया है। हमारी तालिका 4 में वित्त वर्ष 2015 में आंध्र प्रदेश और तेलंगाना में अन्त: और अन्तर्फर्म व्यापार में मूल्यानुसार शीर्षस्थ 15-15 वस्तुओं की जानकारी दी गई है (इन दो राज्यों में वस्तु स्तरीय जानकारी अच्छे स्तर की है)। इनमें से केवल 5 वस्तुएं (हरे रंग द्वारा दिखाई गई) ही दोनों सूचियों में सांझी हैं। अत: विभिन्न राज्यों में अन्त:फर्म प्रवाह में राज्य में उत्पादित वस्तुओं के प्रकार, उनकी F-फॉर्म के माध्यम से अन्तरण के लिए उपयुक्कता तथा सब्सिडियरी फर्म स्थापित कर पाने मी अचल लागते मिलकर निर्णायक

बॉक्स 1 : भारत में अंतर्राज्यीय व्यापार : आंकड़ों को तैयार करना और इस कार्य में चुनौतियां

अन्तर्राज्यीय व्यापार के मूल्य और व्यापार शेष के अनुमान TINXSYS की जानकारी के आधार पर तैयार किए गए हैं। यह TINXSYS वस्तु एवं सेवा कर तंत्र (GSTN) द्वारा रचित और प्रशासित है। TINXSY में दो राज्यों के बीच व्यापार पर CST के बीजकों की जानकारी होती है। ये आंकड़ों का भंडार विभिन्न राज्यों द्वारा अपने-अपने स्तर पर विभिन्न CST फॉर्मो की जानकारी दर्ज किए जाने पर आधारित रहते हैं। दूसरे शब्दों में किसी राज्य द्वारा दर्ज कराए गए व्यापार मूल्य उस राज्य में आयात की गई वस्तुओं के मूल्य होते हैं। आयातक राज्य ही CST फॉर्म जारी करता है। आदर्श रूप से प्रत्येक CST फॉर्म पर निर्यातक और आयातक फर्मों की कर-अभिज्ञान संख्याएं (TIN) होनी चाहिए, साथ ही बीजक संख्या, उसका मूल्य, CST फॉर्म जारी करने की तिथि, फर्मो की प्रकृति (स्वरूप), वस्तु के लिए कूट संख्या, ओर उस वाणिज्य कर कार्यालय की कूट संख्या भी होनी चाहिए, जहां वे फर्में पंजीकृत हैं। किन्तु प्राय: सारी जानकारी इस प्रारूप के अनुसार नहीं दर्ज कराई जाती। यहां तक कि आंकड़ों के एक निर्णायक अंग, निर्यातक राज्य का नाम या कूट या फिर निर्यातक फर्म का TIN भी कम से कम 5 प्रतिशत फॉर्मों पर अंकित नहीं होता। यह जानकारी को सटीक रूप से दर्ज नहीं करने की त्रुटियां राज्यानुसार भिन्न-भिन्न पाई गई हैं। हां, गुजरात (10 प्रतिशत) में ये अधिकतम हैं।

हम जानते ही हैं कि अंतर्राज्यीय व्यापार स्वरूप को ठीक से समझने के लिए किसी भी व्यापार प्रवाह के उद्गम और लक्ष्य की जानकारी आवश्यक होती है। अत: हम, जहां जानकारी नहीं होती, वहां कई तकनीकें अपना कर निर्यातक राज्य का नाम आंकलित करने के प्रयास करते हैं। सबसे पहले तो आंकड़े दर्ज करते समय TIN संख्याओं में असावधानीवश भरे गए अंकों विशेष कूट चिन्हों को दूर करते हैं। इस प्रकार से त्रुटिहीन की गई 11-इकाइयों वाली TIN संख्याएं निर्यातक राज्य की सही पहचान करा देती हैं। TIN की पहली दो इकाइयां राज्य की जनगणना कूट ही होती हैं।

अन्य प्रकार की जानकारीगत त्रुटियों के निवारण के लिए हम विशेष क्रमांक और श्रृंखला क्रमांकों की GSTN की वेबसाईट पर खोज करते हैं कि क्या राज्यों ने स्वयं निर्यातक फर्मों के पते दर्ज करे हैं। उन पतों को लेकर एक अपूर्वनिर्धारित वर्णक्रम को विभिन्न जनपदो/उपजनपदों तथा नगरों के जनगणना विभाग द्वारा नियम नामों से मिलान करके देखते हैं। जहां यह मिलान हो जाता है, वहां जनगणना से हमें संबद्ध राज्यों के नाम पता चल जाते हैं।

तीसरे दौर में भी विलुप्त दिख रही प्रविष्टियों के सत्यापन के लिए API के भौगोलिक सूचना तंत्र (GIS) का प्रयोग कर जहां तक संभव हो सके फर्मों के स्थान को जानने का प्रयास किया जाता है। इन स्थानों को फिर QGIS अर्थात GIS सॉफ्टवेयर का प्रयोग करते हुए राज्यों के आकार वाले मानचित्र पर अंकित कर निर्यातक राज्यों के नाम निर्धारित किए जाते हैं। अन्तिम दौर में बहिष्शायी प्रविष्टियों को निकाल देने के लिए राज्य की GSDP के एक प्रतिशत की कसौटी का प्रयोग किया जाता है अर्थात इस से बड़े आकार की सभी प्रविष्टियों को आंकड़ों की तालिका से निकाल दिया जाता है। यह युक्तियां आंकड़ों की सभी त्रुटियों को तो दूर नहीं कर सकती, पूर्णत: त्रुटिमुक्त आंकड़े पाने के लिए तो प्रत्येक बड़े आकार के लेनदेन की पूर्ण समीक्षा करनी पड़ेगी। समय बचाने के लिए ऐसा नहीं किया गया है। फिर भी इस प्रयास में राज्यों द्वारा बताए गए CST के 85 प्रतिशत अंश वाले लेनदेन अवश्य शामिल हैं। यह 85 प्रतिशत का आंकड़ा उनके अपने प्रशासनिक सूत्रों द्वारा वास्तविक व्यापार के आंकलित आंकड़ों के अनुसार निर्धारित किया गया है।

भूमिका निभाती हैं।

V. क्या भारतीय अन्तर्राज्यीय व्यापार असमान्य है? एक गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान से प्राप्त औपचारिक प्रमाण

11.23 अभी तक स्पष्ट हो रही जानकारी तो यही बता रही है कि जैसा लोग मानते रहे हैं, उसके विपरीत, भारत का आन्तरिक व्यापार बहुत कम नहीं है। किन्तु उस व्यापार पर अंतर या फासलों की लागत क्या रहती है? आंकड़ों पर आधारित विश्लेषण व्यापार के गुरूत्वाकर्षण प्रतिमानों को श्रेष्ठतम संबंध निरूपक और सैद्धांतिक दृष्टि से उपयुक्त सिद्ध करते हैं। इन प्रतिमानों में व्यापार की लागतों का अनुमान और उनके व्यापार प्रवाहों पर प्रभावों की समीक्षा के लिए सैद्धांतिक दृष्टि से कुशल तकनीकों का प्रयोग किया जाता है।[13] मूल अंतर्ज्ञान हैं : 'जो दो अधिकार क्षेत्र जितने समृद्ध होंगे, जितने निकटतर होंगे, और नीतिगत बाधाओं से जितने मुक्त होंगे, उनमें उतना ही अधिक परस्पर व्यापार होगा'।

11.24 ये सभी पूर्वाकलित धारणाएं भारतीय आंकड़ों से पुष्ट होती है। तालिका 2 दिखा रही है कि देश के धनिक राज्य परस्पर अधिक व्यापार करते हैं, निकस्थ स्थिति वाले राज्यों के बीच अधिक व्यापार होता है, निकटस्थता के साथ-साथ व्यापारिक सहभोगियों के बीच फासले या अंतर भी व्यापार को प्रभावित करते हैं। आप की रूचि हो तो आप परिशिष्ट तालिका 5 में विभिन्न गुणंकों की व्याख्या और उनकी प्रबलता की समीक्षा देख सकते हैं।

11.25 तालिका 2 का प्रथम प्रतिमान गुरूत्वाकर्षण निरूपण कर रहा है : अन्तर्फर्म व्यापार के लघुगणकों का राज्यों की आर्थिक राजधानी से अंतर, एक हिन्दी भाषी व्यापारिक भागीदारों के लिए कल्पित अंक और निर्यातक एवं आयातक राज्यों की जीडीपी पर प्रतीपगमन आंकलित किया गया है। प्रतिमान 2 समय गैर संवेदी राज्य स्तरीय अनावलोकनीय विशेषताओं, जो उनकी GSDP को भी प्रभावित करते हैं, के लिए स्थिर प्रभावों का प्रयोग करता है। प्रतिमान-4 में इसी स्थिर प्रभाव का अन्त:फर्म व्यापार के लघुगणक पर प्रतीपगमन किया गया है। प्रतिमान 3 में अन्तर्फर्म प्रवाहों को निर्भर चर माना गया है किन्तु उन्हीं राज्यों की जानकारी का प्रयोग किया गया है जिनके अन्त:फर्म प्रवाह भी ज्ञात हैं। प्रतिमान 5 और 6 में अमेरीकी आंकड़ों पर गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान

तालिका 2 : गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान के प्रतीपगमन गुणंक

निर्भर चर : आयात मूल्य का लघुगणक	भारत				संयुक्त राज्य	
		अंतर्फर्म		*अंत:फर्म*	*कृषि को छोड़कर*	
	(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
Log (फासला): केन्द्र	-0.928***	-0.565***	-0.539***	-0.810***	-0.965***	-0.938***
	(0.169)	(0.0952)	(0.116)	(0.1674)	(0.024)	(0.068)
साथ लगते राज्य का तदर्थ चर	0.349*	0.638***	0.704***	0.495**	0.994***	0.937***
	(0.193)	(0.117)	(0.123)	(0.1999)	(0.072)	(0.097)
हिन्दी का तदर्थ चर	-0.391**	-0.0225	-0.037	0.406*		
	(0.187)	(0.133)	(0.16)	(0.2330)		
Log (आयातक GSDP)	0.816***				1.101***	
	(0.0934)				(0.017)	
Log (निर्यातक GSD)	0.958***				0.928***	
	(0.0568)				(0.017)	
आयातक राज्य FE	No	Yes	Yes	Yes	No	Yes
निर्यातक राज्य FE	No	Yes	Yes	Yes	No	Yes
R-squared	0.522	0.903	0.91	0.83	0.83	0.9
अवलोकन	380	380	210	210	2450	2450

कोष्ठक में मानक त्रुटियां हैं।

$*** p<0.01$, $** p<0.05$, $* p<0.1$

[13] गुरूत्वाकर्षण की रूप रेखाएं आर्थिक समीक्षा, 2015-16 के सांख्यिकीय परिशिष्ट में दी गई हैं।

का अनुमान लगाया गया है और उसके गुणंकों के साथ भारत की तुलना की गई है।[14] प्रतिमान 2, 4, 6 को हम अन्तर्फर्म व्यापार, अन्त:फर्म व्यापार और संयुक्त राज्य अमेरीका में आन्तरिक व्यापार के लिए बेहतर मान रहे हैं।

- ***अन्तर :*** *सबसे विलक्षण निष्कर्ष यह है कि भारत की व्यापार प्रवाह की अन्तर के प्रति लोचशीलता अपेक्षित से बहुत कम है। आर्थिक राजधानियों के बीच अंतर में 10 प्रतिशत अंकों की वृद्धि से व्यापार में केवल 5.65 प्रतिशत की गिरावट आती है।[15] जरा भारत से कहीं बेहतर परिवहन संरचना वाले संयुक्त राज्य अमेरीका से तुलना करें : वहां तो अंतर में 10 प्रतिशत की वृद्धि से व्यापार प्रवाह में 9.3 प्रतिशत की कमी हो जाती है। भाग VI में भारत की इस अंतर लोचशीलता के संयुक्त राज्य अमेरिका से कम होने की एक संभावित व्याख्या करने का प्रयास किया गया है।*
- ***राज्य जीडीपी के गुणंक :*** *व्यापार के प्रवाह की आय के स्तर से लोच धनात्मक है। आयातक या निर्यातक की जीडीपी में 10 प्रतिशत की वृद्धि से व्यापार प्रवाह में 8.2 और 9.6 प्रतिशत बिन्दुओं की वृद्धि होती है। अमेरीका में आय में 10 प्रतिशत वृद्धि के फलस्वरूप यह आय लोच क्रमश: 11 और 9 प्रतिशत आंकी गई हैं।*
- ***निकटस्थता गुणंक :*** *भारत में परस्पर साथ लगते राज्यों के बीच व्यापार दूरवर्ती राज्यों की अपेक्षा 90 प्रतिशत[16] अधिक होता है।[17] यह प्रभाव संयुक्त राज्य अमेरीका की तुलना में कमजोर है, वहां अंतर्राज्यीय व्यापार में निकटस्थ राज्यों के बीच व्यापार की प्रबलता आंकलित हो रही है।*
- ***भाषा (हिन्दी) गुणंक :*** *अंतर्राष्ट्रीय व्यापार साहित्य में भाषा के तदर्श चर का मान सदैव धनात्मक और महत्वपूर्ण पाया गया है। इसका अर्थ है कि एक ही भाषा में काम करने वाले देशों के व्यापारी परस्पर अधिक व्यापार करते हैं (अन्य भाषा-भाषियों की तुलना में)। सुब्रहमण्यम और वेई (2007) का आंकलन है की स्व-भाषाई देशों के बीच व्यापार अन्य भाषाइयों की तुलना में 16 प्रतिशत अधिक होता है। वहीं रोज (2003) का निष्कर्ष था कि एक ही भाषा का प्रयोग करेन वाले के बीच व्यापार 30 प्रतिशत अधिक होता है। किन्तु हैरानी की बात है कि भारत में इस धारणा की पुष्टि के लिए पर्याप्त प्रमाण नहीं मिल रहे। अन्र्राज्यीय अन्त:फर्म व्यापार में हिन्दी का गुणक 'महत्त्वहीन' है तथा अन्तर्फर्म व्यापार के लिए यह धनात्मक किन्तु अपेक्षाकृत कमजोर रूप से महत्वपूर्ण आंकलित हुआ है।[18]*

VI. पहेली की व्याख्या : भारत इतना अधिक व्यापार क्यों करता है?

11.26 इन प्रतिमानों के परिणामों की इस प्रकार व्याख्या की जा सकती है :

11.27 पूर्वधारणाओं के विपरीत भारत में तो व्यापार के पक्ष में रूझान लगता है। ऐसा क्यों हो सकता है? एक संभव कारण तो आन्तरिक कर संरचना है, क्षेत्र आधारित कर छूटों के प्रावधान भी अधिक आंतरिक व्यापार के पक्ष में वातावरण का निर्माण करते हैं।

क्षेत्र आधारित कर छूट

11.28 हमारे प्रयुक्त आंकड़े वस्तुत: कर अनुपालन के लिए घोषित किए गए आंकड़े हैं। अत: यह कर छूट का विषय बहुत सटीक हो जाता है।

11.29 केन्द्रीय उत्पादन शुल्क कुछ राज्यों में उत्पादन को कर मुक्त छोड़ देता है। ये राज्य हैं : सभी उत्तरपूर्वी राज्य, सिक्किम, जम्मु कश्मीर, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश

---

14 हमने उत्पादों की तुलना भारतीय डेटा सेट से करने के लिए अमेरिका डेटा से कृषि प्रवाहों को अलग कर दिया है।

15 अन्त:फर्म व्यापार के संदर्भ में दो राज्यों के बीच अंतर में 10 प्रतिशत की वृद्धि होने पर यह व्यापार 8.1 प्रतिशत कम हो जाता है। यह अनुमान अन्तर्फर्म प्रवाह की अन्तर के अनुसार लोच से अधिक है, जबकि हमने दोनों के लिए एक ही प्रतिदर्श का प्रयोग किया है (प्रतिमान-3)। परिशिष्ट इसकी संभाव्यता की समीक्षा कर रहा है।

16 Exp(0.638) – 1 =k 0k892

17 अन्त:फर्म के बारे में भी निकटस्थ राज्यों के बीच व्यापार दूरस्थ की अपेक्षा 63 प्रतिशत अधिक रहता है।

18 अन्त:फर्म व्यापार के लिए यह गुणंक 90 प्रतिशत आश्वस्ति स्तर पर महत्वपूर्ण है। प्रतीत होता है, सांझी भाषा वाले राज्यों में फर्म के लिए अपनी सब्सिडियरी की स्थापना करना आसान रहता है। वे राज्य की कानूनी आवश्यकताएं पूरी कर पाना सुगम मानती हैं। किन्तु अन्य फर्मों से व्यापार के मामले में यह भाषा निर्भरता सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वहीन रह जाती है।

और गुजरात का कच्छ क्षेत्र।[19] यह छूट वास्तविक या घोषित उत्पादन को इन क्षेत्रों में दिखाने को प्रोत्साहित करती है। यह प्रोत्साहन तुलनात्मक लाभ, व्यापार की लागतों और व्यापार तथा फर्म की अवस्थिति के अन्य सभी निर्धारकों से अतिरिक्त और प्रबल हो सकता है।

सीएसटी और वीएटी

11.30 वर्तमान कर प्रणाली में राज्य सरकारें अपने अधिकार क्षेत्रों में बिक रही अधिकांश वस्तुओं पर मूल्यवृद्धि कर (वैट-VAT) लगाती हैं और केन्द्र द्वारा उत्पादन पर उत्पादन शुल्क लगाया जाता है। यह वैट-योग्य-सम कर होता है। किसी दूसरे राज्य में बिक्री पर उत्पादनकर्ता राज्य में वैट देय नहीं होता। इस बिक्री पर तो गैर-वैट-योग्य केन्द्रीय बिक्री कर CST (सीएसटी) लगाया जाता है। यह सीएसटी अन्तर्राज्यीय व्यापार पर एक हतोत्साहक कर बनने के स्थान पर कई मामलों में राज्यों में आन्तरिक विक्रय पर अधिक उच्च दर से लगने वाले वैट से बचाव रूपी लाभ कमाने का माध्यम बन सकता है।

11.31 सीएसटी के सीमाशुल्क स्वरूप धारणा करने का निर्णायक निर्धारक यह है कि क्या क्रेता इस आदान पर कर श्रेय (ITC) प्राप्त कर सकता है, विशेषकर जब यह खरीदारी राज्य के भीतर ही की गई हो।[20] आदान कर श्रेय वैट व्यवस्था की एक मौलिक विशेषता है। इसके अभाव में तो आप केवल मूल्यवृद्धि नहीं समस्त विक्रय मूल्य पर कर चुकाने को बाध्य हो जाते हैं। ऐसी दशा में क्रेता किसी अन्य राज्य से खरीदारी करते हुए उच्च वैट दर चुकाने के स्थान पर मात्र 2 प्रतिशत सीएसटी भरना बेहतर समझेगा। यह बात उस समय मुख्य स्वरूप धारण कर लेती है, जब क्रेता फर्म या तो उक्त वस्तुओं की अन्तिम उपभोक्ता हो या फिर वह कर मुक्त वस्तुओं का उत्पादन कर रही हो।[21] ये कोई कभी-कभी होने वाली घटना नहीं है। पैट्रोल, डीजल, निर्माण सामग्री और कई प्रकार की मशीनरी जैसे बहुत अधिक सकल मूल्य परिमाण की चीजें इसी वर्ग में सम्मिलित हैं। साथ ही राज्यों ने एक ''नकारात्मक सूची'' भी बनायी होती है, जिसमें वस्तुओं पर आदान कर श्रेय उन राज्यों में नहीं दिया जाता। इस ''नकारात्मक सूची'' में आंध्र प्रदेश में आयातित में से कम से कम 22 प्रतिशत वस्तुएं सम्मिलित हैं।[22] इनमें से भी केवल वाहन और वाहनों के कलपुर्जो का आंध्र के आयात मूल्य में 16 प्रतिशत अंश बन जाता है। इसी प्रकार ITC के लिए अमान्य चीजें ओडिशा के आयात का 30 प्रतिशत अंश अवश्य है।[23]

11.32 अन्य सभी वस्तुओं पर राज्य से बाहर से खरीदारी करने का अर्थ ITC गंवाना होगा। इससे लागतें अधिक हो जाएंगी और उत्पादन करना लाभप्रद नहीं रहेगा। अतः यद्यपि हमें कोई विपरीत तथ्य उपलब्ध नहीं है और हम यह नहीं कह सकते कि किस सीमा तक, किन्तु कर प्रावधानों की ये विसंगतियां अर्न्राज्यीय व्यापार को पनपने से रोकती अवश्य है। फिर भी भारत में फासलों के प्रति निम्न लोचशीलता (होने के बावजूद) और भारत के व्यापार के अंतर्राष्ट्रीय मानकों के तुल्य ही रहने से एक संकेत अवश्य मिल रहा है : भारत का व्यापार के पक्ष में रूझान व्यापार पर ''दुष्प्रेरणाओं'' पर भारी पड़ता है।

11.33 यदि ऐसा है तो इन विकृतियों का निवारण करते

---

19 उत्पादन शुल्क भी उत्पादन की स्थिति में लगा मूल्य वृद्धि कर है। यह फैक्टरी के दरवाजे से माल बाहर निकालते समय घोषित मूल्य वृद्धि पर लगता है।

20 इन संभव मामलों की विस्तृत समीक्षा परिशिष्ट में है।

21 इनका विवरण भी परिशिष्ट में देखें।

22 APVAT अधिनियम का नियम 20(2)। यह ITC हेतु अमान्य वस्तुओं का संभलकर लगाया गया अनुमान है। उदाहरण के लिए भवनों के निर्माण और रखरखाव की सामग्री ITC के लिए अमान्य है। लोहा और इस्पात यहां सम्मिलित हो सकते हैं किन्तु किसी ठेके का काम करने पर प्रयोग किए गए लोहे और इस्पात पर ITC उपलब्ध है। कई बीजकों में वस्तु की पहचान के कूट नहीं होते। अतः आशंका है कि यह संख्या हमारे अनुमान से भी अधिक रहे। और अंत में, कर मुक्त वस्तुओं के उत्पादन में लगे आदान पर भी ITC अमान्य रहता है। किन्तु इन्हें भी इस 22 प्रतिशत में नहीं गिना गया है। यह तय नहीं हो पाता कि इनका कितना अंश कर मुक्त उत्पादन में काम आ रहा है।

23 https://odishatax.gov.in/Schedules/VAT/VAT-SCHEDULE-D-20-01-2016.pdf,
https://odishatax.gov.in/Schedules/VAT/VAT-SCHEDULE-C-20-01-2016.pdf

हुए GST को लागू करने पर आन्तरिक व्यापार में एक 'सामान्यता' का संचार हो जाएगा।

VII. निष्कर्ष

11.34 कल्पित धारणाओं के विपरीत भारत में वस्तुओं का आन्तरिक व्यापार आश्चर्यजनक रूप से सुदृढ़ है। हम चाहे भारत के विदेशी व्यापार से तुलना करें या अन्य देशों के आन्तरिक व्यापार से या फिर गुरूत्वाकर्षण आधारित अमेरीकी व्यापार प्रतिमानों से, सभी दशाओं में हमारा उपर्युक्त निष्कर्ष सत्य सिद्ध होता है। उदाहरण के लिए भारत में फसलों के व्यापार पर प्रभाव कमजोर रहते हैं। प्रसन्नता का विषय तो यह है कि विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित भाषाई विविधता भी व्यापार में कोई बड़ी बाधा सिद्ध नहीं होती।

11.35 राज्यों के आन्तरिक व्यापार के स्वरूपों में बहुत बड़े अन्तर है। छोटे राज्य प्राय: अधिक व्यापार करते हैं तो तमिलनाडू, महाराष्ट्र और गुजरात जैसे बड़े विनिर्माता राज्यों के व्यापार शेष में आधिक्य रहता है (इनके निर्यातों के मूल्य आयात मूल्यों से अधिक रहते हैं)। हरियाणा और उत्तर प्रदेश अपने कृषिक स्वरूप को झुठलाते हुए राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की सन्निकटता के कारण विनिर्माण शक्ति केन्द्रों के रूप में उभर कर आ रहे हैं।

11.36 यह विश्लेषण इस संभावना का द्वार खुला छोड़ रहा है कि भारत में आन्तरिक व्यापार के अंश का आधार कर विकृतियों पर टिका हुआ हो। वह भी जीएसटी लागू होने पर सामान्यीकृत हो जाएंगे। 'एक बाजार और समन्वित कर नीतियां'' किन्तु साथ ही कम आन्तरिक व्यापार की दुराशंका एक आश्चर्यजनक संभावना का निर्माण कर रहे हैं। देखते हैं, आगे क्या होता है!

भाग 2: एक भारत : कानून के समक्ष

I. विषय प्रवेश

11.37 वस्तु एवं सेवाकर का 'एक कर, एक बाजार, एक भारत' की रचना की ओर कदम के रूप में प्रचार उचित ही था। किन्तु यह विचार करना भी आवश्यक है कि भारत अभी उस आदर्श से कितना दूर है। अनेक प्रांतों ने वस्तुओं पर तरह-तरह के कर-उपकर थोंपे हुए हैं, जैसे कि चुंगीकर, प्रवेश शुल्क, केन्द्रीय बिक्री कर आदि, जो सब मिलकर वस्तुओं के प्रवाहों को बाधित करते हैं। सबसे विद्रूप तो अन्य प्रांतों से आ रही सेवाओं पर कर है। जिसका उदाहरण है अंतर्राज्यीय विद्युत कर, यह विद्युत उत्पादन की लागत को बढ़ाता है, बाजार को विखंडित करता है और राज्यों में आन्तरिक स्तर पर विद्युत को अनेक प्रकार से कुछ उपभोक्ताओं से अधिक दाम वसूलकर अन्य को सब्सिडी देने का उपक्रम चलाए रखता है। कृषि उत्पाद विपणन समितियां अभी भी बनी हुई हैं और कृषि उत्पादों के विभिन्न राज्यों के बीच क्रय-विक्रय में बाधा उत्पन्न कर रही हैं। परिणाम स्वरूप जिन किसानों के हितों की रक्षा का दावा किया जाता है, उन्हीं को अच्छी आय से वंचित कर ये भारत में कृषि उत्पादिता को घटा ही रही हैं। कृषि एवं वस्तुओं और सेवाओं के व्यापार के पटल पर चल रही ये व्यवस्थाएं ''आर्थिक दृष्टि से एक भारत'' के विचार का मखौल उड़ाती प्रतीत होती हैं।

11.38 एक सांझे भारतीय बाजार की रचना में सहायक संवैधानिक व्यवस्थाओं पर विचार करना आवश्यक है। संविधान पर सभी चर्चाएं प्राय: आन्तरिक पटल पर केन्द्रित होकर रह जाती हैं, किन्तु यहां हमें अन्य देशों से तुलना पर विशेष ध्यान देना है। बड़ी संघीय व्यवस्थाओं और अनेक राष्ट्रों तक विस्तृत तंत्रों में सार्वजनिक नीतियों के संकल्पनागत उद्दश्यों में एक सांझापन होता है : ये सभी एक बड़े बाजार की रचना के विचार से प्रेरित होते हैं ताकि सभी उत्पादकों और उपभोक्ताओं को समान व्यवहार मिल सके तथा संघीय इकाइयों की सार्वभौमिकता का भी अतिक्रमण नहीं हो। यहां तीन प्रकार की व्यवस्थाएं सहज ही तुलनीय प्रतीत होती हैं : अन्य संघीय देश जैसे कि संयुक्त राज्य अमेरिका; यूरोपीय संघ जैसी संघीय इकाइयां; और बहुपक्षीय व्यापार व्यवस्थाएं जैसे कि विश्व व्यापार संगठन (WTO)।

II. भारतीय संवैधानिक प्रावधान और न्यायशास्त्र

11.39 तुलना के लिए उन संवैधानिक प्रावधानों को समझना आवश्यक है जो सांझे बाजार के निर्माण की प्राप्ति में सहायक होते हैं और उसकी रचना की सीमाएं भी निर्धारित कर जाते हैं। धाराएं 301-304 में अधिकारों और दायित्वों की अनेक परतें विद्यमान हैं। धारा 301 में तो इस मूलभूत सिद्धांत की स्थापना की गई है कि भारत एक सांझा बाजार बनना चाहिए :

301. **व्यापार, वाणिज्य और संसर्ग की स्वतंत्रता :** इस भाग के अन्य प्रावधानों की सीमाओं में रहते हुए सारे भारतीय क्षेत्र में व्यापार, वाणिज्य और संसर्ग स्वतंत्र (निर्बन्ध) रहेंगे।

धारा 302-304 : इस सिद्धांत की व्याख्या करते हुए इस पर सीमाएं भी लागू करती हैं।

धारा 302 लोकहित के आधार पर विभिन्न प्रांतों के बीच स्वतंत्र व्यापार पर प्रतिबंध/नियमन लागू करने की शक्तियां संसद को प्रदान करती है।

302. **संसद की व्यापार-वाणिज्य और संसर्ग पर प्रतिबंध लगाने की शक्तियां।** संसद कानून बना कर एक प्रांत से दूसरे प्रांत में अथवा देश के किसी भाग में व्यापार वाणिज्य और संसर्ग की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध या रूकावटें लगा सकती है जो लोकहित में आवश्यक हों।

धारा 303(a) फिर संसद और राज्य विधान मंडलों पर 'सर्वाधिक वरीयता प्राप्त देश'' जैसा व्यवहार करने का एक दायित्व भी लागू करती हैं : कि ऐसा कोई कानून या नियम नहीं बनाया जाएगा जो एक राज्य को दूसरे से बेहतर व्यवहार प्रदान करता हो।

303. **व्यापार और वाणिज्य के संबंध में संघ और राज्यों की विधायी शक्तियों का नियमन**

धारा 302 में सातवी अनुसूची की किसी भी सूची में व्यापार और वाणिजय विषयक किसी भी प्रविष्टि के आधार पर की गई किसी भी व्यवस्था के बावजूद न संसद और न ही किसी राज्य की विधायिका को ऐसे

कानून बनाने की शक्ति प्राप्त होगी जो किसी एक राज्य को दूसरे पर वरीयता प्रदान करने का अधिकार प्रदान करता हो, या एक राज्य तथा दूसरे के बीच भेदभाव करने का अधिकार प्रदान करता हो।

फिर धारा 304 (संसद पर नहीं) राज्य विधान मंडलों पर एक राष्ट्र रूपी दायित्व लगाती है; किसी अन्य राज्य में उत्पादित वस्तुओं पर ऐसा कोई कर नहीं लगाया जाएगा जो अपने राज्य क्षेत्र में उत्पादित वस्तुओं पर नहीं लगाया जाता। यह धारा मुख्यत: करों के बारे में बात कर रही है। यह अन्य नियमों के विषय में नहीं है।

304. राज्यों के बीच व्यापार, वाणिज्य और संसर्ग पर प्रतिबंध

धारा 301 या धारा 303 के किसी भी प्रावधान के बावजूद एक राज्य का विधान मंडल कानून द्वारा (कर सकता है) :

a) किसी अन्य राज्य से आयातित वस्तुओं पर ऐसे कर लगा सकता है जो उस राज्य में (अपने क्षेत्र में) उत्पादित उसी प्रकार की वस्तुओं पर लागू हों, किन्तु यह कर आयातित और विनिर्मित/उत्पादित वस्तुओं के बीच भेदभावपूर्ण नहीं हो; और किन्तु धारा 304 लोकहित में व्यापार और वाणिज्य पर रोक लगाने के अधिकार राज्य विधान मंडलों को प्रदान करती है।

b) प्रांत में या प्रांतों के बीच व्यापार वाणिज्य या संसर्ग पर ऐसे उचित प्रतिबंध लगा सकते हैं जो जनहित में आवश्यक हों। किन्तु ऐसा कोई विधेयक या संशोधन किसी राज्य के विधान मंडल में राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना पेश नहीं किया जाएगा।

11.40 ध्यान देने योग्य है कि धारा 304(b) में राज्यों को दी गई यह स्वतंत्रता संसद को धारा 302 में दी गई स्वतंत्रता से इस रूप में भिन्न है कि जहां संसद प्रतिबंध/लगा सकती है वहां राज्य विधान मंडल केवल उचित प्रतिबंध लगा सकते हैं। साथ ही राज्य उन्हीं विषयों पर प्रतिबंध लगा सकते हैं जो राज्य सूची में हों या फिर समवर्ती सूची में।

11.41 इन सभी प्रावधानों का सार यही है कि केन्द्र और राज्यों को व्यापार और वाणिज्य पर अनेक प्रकार से प्रतिबंध लगाने की बहुत स्वतंत्रता मिली हुई है। यह ''एक भारत'' का निर्माण करने में बाधक है

11.42 यही नहीं न्यायशास्त्र एवं व्यवस्था तो (केन्द्र और राज्यों को) और अधिक स्वछन्दता देने के पक्ष में दिखाई दे रहे हैं। स्पष्टत: भाग XIII का उद्देश्य तो पूरे भारत वर्ष में निर्बन्ध व्यापार सुनिश्चित करना था, किन्तु व्यवहारिक स्तर पर इसकी व्यवस्थाओं का अनुपालन देश को उस उद्देश्य से बहुत दूर ले गया है। राज्यों द्वारा लगाए गए वित्तीय बंधन एक स्वतंत्र बाजार की रचना में मुख्य बाधक बन गए हैं। मोटर वाहनों पर कर, प्रदेश या किन्हीं क्षेत्रों में वस्तुओं के प्रवेश पर कर, किसी राज्य से बाहर उत्पादित वस्तुओं पर (अधिक) बिक्री कर तो कभी से चल रहे हैं। यही नहीं ऐसे ही अनेक कर भार लगते हैं और न्यायपालिका (सर्वोच्च स्तर पर) उन्हें वैध ठहराती आ रही है। उदाहरण के लिए श्री महावीर ऑयल मिल्स बनाम जम्मू एवं कश्मीर सरकार[24] मामलें में सर्वोच्च न्यायालय ने उस विज्ञप्ति को सिद्धांत रूप से वैध ठहराया है जो जम्मु एवं कश्मीर सामान्य विक्रय कर अधिनियम, 1962 के अंतर्गत जारी की गई थी। उसमें खाद्य तेलों के स्थानीय उत्पादकों के व्यवसाय बंद होने से बचाने के लिए उन्हें विक्रय कर से मुक्त रखा गया है। जबकि साथ ही साथ उस विज्ञप्ति ने अन्य राज्यों के खाद्य तेल उत्पादकों पर विक्रय कर की दर 4 प्रतिशत से बढ़ाकर 8 प्रतिशत भी कर दी है। चुनौति दिए जाने पर सर्वोच्च न्यायालय ने इस विज्ञप्ति को रद्द करने से इस इस आधार पर इंकार कर दिया कि यह तो राज्य में खाद्य तेल उद्योग की रक्षा के लिए आवश्यक है और यह संविधान के भाग XIII की व्यवस्थाओं के अनुरूप एक पर्याप्त उपाय है।[25] अनेक अन्य मामलों में जहां प्रवेश शुल्कों को चुनौति दी गई है वहां भी सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त करों का स्वरूप प्रतिकारात्मक बता कर उन्हें रद्द करने से मना किया है।

---

[24] (1996) 11 SCC 39.

[25] इस 'प्रतिकारात्मक कर सिद्धांत' का प्रतिपादन न्यायमूर्ति एस के दास ने ऑटोमोबाइल ट्रांसपोर्ट (राजस्थान) लिमिटेड बनाम राजस्थान सरकार, AIR 1962 SC 1406 में किया था। उन्होंने कहा था कि नियमन उपाय या प्रतिकारात्मक कर, व्यापारिक, सुविधाएं बढ़ाएं जाने के उद्देश्य से लगाए जाने पर धारा 301 में चर्चित बाधाओं के दायरे में नहीं आएंगे और ऐसे उपायों के लिए धारा 304(b) का अनुपालन आवश्यक नहीं होगा (अनुच्छेद 7)।

इसका अर्थ है कि इन कर राशियों का प्रयोग इन्हें लागू करने वाले राज्यों में व्यापार संवर्धन में हो रहा है।[26]

11.43 यह पूरी तरह अन अपेक्षित भी नहीं था। राज्य के राजस्व का बचाव करते हुए निर्बन्ध व्यापार सुनिश्चित करने की प्रक्रिया में ऐसा लेनदेन (सम प्रत्ययन) आवश्यक हो जाता है। सत्तर वर्षों का अनुभव यही बताता है कि इस 'सम प्रत्ययन' या संतुलन बिठाने की कोशिश में एक सांझा बाजार स्थापित करने का विचार पंगु हो कर रह गया है। वर्ष 2016 में सर्वोच्च न्यायालय ने ''प्रतिकारक कर'' का सिद्धांत तो निरस्त कर दिया है किन्तु प्रवेश कर लगाने के राज्यों के अधिकार को वैध ठहराया है।[27] यह कहा गया है कि न्यायालय का उक्त विचार पूरी तरह से भाग XIII की संवैधानिक व्यवस्था के अनुरूप है, जो संपूर्ण रूप से पढ़े जाने पर आर्थिक एकीकरण करते समय राज्यों को अपने उत्पादों को अन्य से विलक्षण निरूपित करने की पर्याप्त छूट देता है।

III. अन्य देशों में वैधानिक प्रावधान

11.44 अन्य अधिकार क्षेत्रों (देशों) से भारतीय परिवेश की तुलना कैसी लगेगी? संयुक्त राज्य अमेरीका के संविधान एक बड़ा सशक्त अंतर्राज्य व्यापार विषयक प्रावधान है। धारा-1 भाग 8, प्रनियम 3 ने कांग्रेस को दूसरे देशों और विभिन्न राज्यों तथा इंडियन जन-जातियों से वाणिज्य को विनियमित करने की शक्तियां प्रदान की हैं।

11.45 जेम्स मैडीसन ने अपने संघवादी दस्तावेजों में इस प्रावधान के तर्क की बहुत अच्छी व्याख्या की है। उसने लिखा है, 'इस शक्ति का एक महत्वपूर्ण ध्येय उन राज्यों, को जो अन्य राज्यों के क्षेत्रों से होकर अपने आयात और निर्यात करते हैं, इस रास्ते में पड़ने वाले राज्यों द्वारा मनमाने कर आदि की वसूली से राहत प्रदान करना था। यदि ये राज्य (रास्ते में पड़ने वाले) ही अंतर्राज्यीय व्यापार का नियमन करने को अधिकृत होते तो इन्होंने अपने क्षेत्र से आ जा रहे सामान पर ऐसे कर लाद दिए होते जिनका भार उन वस्तुओं के उपभोक्ता और उत्पादक वर्ग पर ही पड़ता। पिछले अनुभव हमें आश्वस्त करते हैं कि ऐसा कार्य करने के प्रयास भविष्य में अवश्य हो सकते हैं और फिर मानवीय स्वभाव के विषय में यह भी जानी मानी बात है कि इसके कारण निरंतर वैर भाव ही पनपेगा और संभव है कि उससे लोक शांति के भंग होने की गंभीर आशंकाएं उत्पन्न हो जाएं।[28]

11.46 इसका पाठ संविधान के दसवें संशोधन के साथ मिलाकर होना चाहिए। उस संशोधन में व्यवस्था की गई थी ''जो शक्तियां संयुक्त राज्य को संविधान ने प्रदान नहीं की है या राज्यों के संघ के लिए वर्जित नहीं की हैं, वे सभी राज्य के ही अधिकार क्षेत्र का अंग है या जन सामान्य के पास हैं।''

11.47 इन दोनों प्रावधानों के एक साथ पाठ से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस संविधान में भी, जहां शेष शक्तियां राज्यों के अधिकार क्षेत्र में हों (भारत में तो शेष शक्तियां संघ या केन्द्र के अधिकार क्षेत्र में हैं), वहां भी राज्यों को अंतर्राज्यीय व्यापार-वाणिज्य का नियमन करने से वर्जित किया गया है। यही मान्यता थी कि यदि राज्यों को ये अधिकार दिए गए तो उससे व्यापार की निर्बंधता और वस्तुओं का आवागमन दुष्प्रभावित होगा।

11.48 संयुक्त राज्य के सर्वोच्च न्यायालय ने वाणिज्य प्रनियम की उदार व्याख्या करते हुए ध्यान रखा है कि कांग्रेस की अंतर्राज्यीय व्यापार के नियमन की शक्तियां कुंठित नहीं हो और कतिपय राज्य संरक्षणवादी कानून बनाने में नहीं जुट जाएं।[29] भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा श्री महावीर ऑयल मिल्स मामले के एकदम विपरीत

---

[26] देखें मीनाक्षी बनाम कर्नाटक सरकार, 1984 SYPP SSC 326 यहां सर्वोच्च न्यायालय ने कर्नाटक कराधान एवं अन्य कानून (संशोधन) अधिनियम 1979 के अंतर्गत बड़ी बसों, मिनि बसों और स्थान-स्थान से सवारी उठाने वाले वाहनों पर अधिक दर से कर लगाना उचित ठहराते हुए कहा था, 'कि इन करों का राजस्व सड़कों के निर्माण, रख-रखाव और वाहनों के आवागमन को सुगम बनाने की सुविधाएं तैयार करने पर होगा।'' किन्तु प्रतिकारक कराधान का यह न्यायशास्त्र जिन्दल स्टेनलैस स्टील बनाम हरियाणा राज्य, 2016, SSC Online SC, 1260 (जिन्दल स्टेनलैस) मामले में बहुमत निर्णय से निरस्त हो चुका है।

[27] देखें सर्वोच्च न्यायालय का आदेश, जिन्दल स्टेनलैस मामले में, (n.4) पैरा 6।

[28] फैड्रलिस्ट नं. 42, एलेक्जेंडर हैमिल्टन, जेम्स मैडीसन और जौन जॉय कृत रचना : द फैड्रलिस्ट, (द बेहनैय प्रैस, कैम्ब्रिज, 2009)

[29] इस न्यायिक दृष्टिकोण का आधार 'मुख्य प्रभाव' की वह कसौटी थी जिसे राष्ट्रीय श्रम संबंध बोर्ड बनाम जोन्स एंड लाफ्लिन स्टील कॉर्प, 301, 451 में न्यायालय ने घोषित किया था। यह थी, भले ही कोई काम किसी राज्य तक सीमित हों, किन्तु यदि उसका अंतर्राज्यीय व्यापार से बड़ा नाता या प्रभाव हो तो कांग्रेस अपने वाणिज्य प्रनियम के अधीन कानून बना सकती है।

अमेरीकी सर्वोच्च न्यायालय का वैस्टलिन क्रीमरी इंकार्पोरेटड बनाम हीली प्रकरण में आया फैसला है।[30] हीली में मेसाचुसेट्टस कीमत निर्धारण आदेश ने सभी दुग्ध विक्रेताओं को एक समानीकरण कोष में अधिभार जमा करना आवश्यक बनाया था। यद्यपि यह आदेश सभी दुग्ध विक्रेताओं पर लागू था किन्तु सर्वोच्च न्यायालय ने इसे वाणिज्य प्रनियम का उल्लंघन माना, क्योंकि इस कोष की धनराशियों का प्रयोग उक्त राज्य की सीमा में कार्य कर रहे दुग्ध उत्पादकों को 'क्षतिपूर्ति' के नाम पर बांटा जाना था। अत: इसे यह कहकर रद्द कर दिया गया कि इसका निर्विवाद प्रभाव उच्च लागत पर उत्पादन कर रहे मैसाचुसेट्ट्ष के डैरी किसानों को अन्य राज्यों के निम्न लागत पर काम करने वाले किसानों से स्पर्धा करने योग्य बनाना था।[31]

11.49 हां कुछ व्यवहारिक बाधाएं भी है, विशेषकर सेवा क्षेत्र में। यह राज्य स्तरीय लाईसेंस या प्रत्यायन की व्यवस्था में स्पष्ट हो जाती हैं। फिर, कई निर्णयों में वाणिाज्य प्रनियम की अधिक सीमित व्याख्या भी हुई है।[32] किन्तु ये एक अमेरीकी बाजार बनाए रखने के व्यापक नियम के अपवाद स्वरूप ही हैं।

11.50 मास्ट्रिष्ट संधि ने यूरोपीय सांझा बाजार की रचना की है। उसके बाद से यह स्वीकार किया जा रहा है कि बहुत ही सीमित संकीर्ण दशाओं के अतिरिक्त यूरोपीय समुदाय वस्तुओं, सेवाओं, पूंजी और व्यक्तियों के आवागमन की चार स्वतंत्रताओं पर कोई बाधा नहीं लगाएंगे। अब यह तर्क दिया जा सकता है कि संयुक्त राज्य और यूरोप संघ भारत से बहुत ही अलग हैं। इनका राष्ट्र के रूप में रहने का इतिहास बहुत लंबा है। कहा जा सकता है कि भारतीय राज्य अमेरीकी राज्यों की अपेक्षा अधिक विविधताओं से परिपूर्ण हैं। अत: इन्हें कर तथा नियमन की अधिक स्वतंत्रता होनी चाहिए। इसके विपरीत यह तर्क हो सकता है कि अमेरीकी राज्य अपनी सार्वभौमिकता को लेकर बहुत ही आशंकित थे और यही उस देश के संविधान में झलक रही है। दूसरे शब्दों में राज्यों के सशक्त होने के बावजूद वहां एक सशक्त अंतर्राज्यीय व्यापार कानून बन गया है। संभावना तो कम है, किन्तु यह भी तर्क दिया जा सकता है कि भारत के राज्यों को यूरोप के संप्रभुता संपन्न देशों से भी अधिक नियमन की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

IV. तुल्य विश्व व्यापार संगठन कानून

11.51 किन्तु एक कहीं अधिक क्षीण-से मानक भी हैं जिनके अनुसार भारतीय नियमों का मूल्यांकन होना चाहिए। ये हैं विश्व व्यापार संगठन के नियम। इस संगठन में 164 देश सदस्य हैं। इनके आय के स्तर और इनकी राजनीतिक व्यवस्थाओं में भी बहुत अंतर हैं। उदाहरण के लिए धनिकतम देशों की प्रतिव्यक्ति जीडीपी गरीबतम देशों से 60 गुना से अधिक है (जबकि भारत में यह अनुपात 5 से भी कम है)। WTO में संयुक्त राज्य तथा यूरोप जैसे लोकतंत्र हैं तो चीन जैसे गैरलोकतांत्रिक देश भी। किन्तु भारत के तो सभी राज्य एक जैसी लोकतांत्रिक व्यवस्था का अनुसरण कर रहे हैं। अत: यह तर्क देना तो विचित्र लगेगा कि भारतीय राज्यों को WTO द्वारा प्रदान की गई स्वतंत्रता से भी अधिक मिलनी चाहिए ताकि एक सांझा बाजार विकसित हो सके।

11.52 यदि यह बात उचित हो तो फिर WTO के नियमों और भारत के संविधान के प्रावधानों में तुलना करना अनुपयुक्त नहीं होगा। अर्थात WTO द्वारा सदस्यों के लिए सांझा बाजार और नियमन की स्वतंत्रता में संतुलन बिठाने की जो व्यवस्था बनाई है उसकी भारतीय संविधान में राज्यों को दी गई स्वतंत्रता से तुलना करना उचित ही होगा।

11.53 तो फिर तुल्य WTO नियम क्या हैं? WTO ने सर्वाधिक वरीयता प्राप्त देश और राष्ट्रीय तुल्य व्यवहार के नियम बनाए हैं। जैसा कि संविधान ने किया है। किन्तु संविधान से अंतर तो इन गैर संरक्षणवादी नियमों से परे हटने की स्वतंत्रता को लेकर है। यही विपरीत भाव तो धारा 302 और 304(b) तथा सीमा शुल्क एवं व्यापार महासंधि (GATT) WTO की धारा XX के बीच है।

---

[30] 512 ने 186,

[31] 5 वही, 194।

[32] एक उदाहरण स्वरूप देखें ज्ञपकक बनाम Peason, 128 USI. यहां न्यायालय ने कहा है कि अन्तर्राज्यीय शराब उत्पादन का नियमन वैध है, भले ही यह निर्यात के लिए हो रहा हो और यह वाणिज्य प्रनियम का उल्लंघन नहीं है।

धारा XX: सामान्य अपवाद

इस अनिवार्यता का पालन करते हुए कि ऐसे उपाय इस प्रकार लागू नहीं किए जाएंगे कि वे समानप्राय: देशों के बीच मनमाने या अन्यायपूर्ण भेदभाव का कारण बनेंगे या छद्म रूप में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर प्रतिबंध होंगे, इस संधि में ऐसा कुछ नहीं है जो इसके किसी भी हस्ताक्षरी पक्ष को ये उपाय लागू करने से रोकता हो जो :

(a) लोक नैतिकता की रक्षा के लिए आवश्यक हो;

(b) मानवीय, जीव या वनस्पति जीवन या स्वास्थ्य की रक्षा के लिए हो;

(c) स्वर्ण या चांदी के आयात-निर्यात से संबंधित हो;

(d) इस संधि के प्रावधान के संगत कानूनों-नियमों को लागू करने के लिए हो, जो सीमाशुल्क लागू करने धारा II के अनुच्छेद 4 के अंतर्गत एकाधिकार संचालित करने, पेटेंट अधिकारों की रक्षा करने, ट्रेड मार्क और स्वत्वाधिकार लागू करने और धोखे भरे व्यवहार को रोकने के लिए हो;

(e) बंदियों के श्रम उत्पादन से संबंधित हों;

(f) कलात्मक, ऐतिहासिक या पुरातात्विक राष्ट्रीय धरोहर की रक्षा के लिए हों;

(g) यदि आंतरिक उपभोग एवं उत्पादन पर प्रतिबंधों के साथ निर्वातनीय प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा हेतु बनाए गए हों;

(h) अनुबंध हस्ताक्षरी सदस्यों के लिए अनुमित अंतर-सरकारी दायित्वों के निर्वहन हेतु बनाए गए हों और जिन्हें अस्वीकार नहीं कर दिया गया हो;

(i) आन्तरिक उद्यमों को पर्याप्त आपूर्ति बनाए रखने के लिए आदानों के निर्यात पर प्रतिबंध हो। उस समय भी जब इनकी कीमतें अंतर्राष्ट्रीय स्तर से कम हों। हां, यह अवश्य है कि इन प्रतिबंधों के माध्यम से तैयार माल की लागत कम रख कर उस माल को निर्यात बढ़ाने से लिए प्रयोग नहीं किया जाएगा; या ऐसे आंतरिक उद्योगों का प्रदत्त संरक्षण महासंधि के भेदभाव युक्ति के प्रावधानों का उल्लंघन नहीं करेगा।

(j) सामान्य या स्थानिक रूप से दुर्लभ हो रहे पदार्थो की प्राप्ति और वितरण कके लिए आवश्यक हों; किन्तु यह भी इस नियम का पालन करते हुए होना चाहिए कि सभी अनुबंध हस्ताक्षरी पक्षों को ऐसे पदार्थों की अंतर्राष्ट्रीय आपूर्ति में उचित भाग पाने का अधिकार है और महासंधि के प्रावधानों के विपरीत ऐसे सभी प्रावधान उन्हें लागू करने का कारण बनी परिस्थितियों में सुधार होते ही निरस्त कर दिए जाएंगे ......

11.54 इन दोनों (भारतीय संविधान और WTO नियमावली) में दो बड़े अंतर हैं : पहला तो निर्बन्ध व्यापार। सांझा बाजार के नियमों से पलायन (अस्थाई) के लिए कारणों को WTO ने अधिक स्पष्ट और संकीर्ण रूप से निर्दिष्ट कर दिया है, भारतीय संविधान ने तो एक बहुत ही विस्तृत 'जनहित' की कसौटी की चर्चा मात्र की है। दूसरे, और अधिक महत्वपूर्ण वे कसौटियां हैं जिनका अनुपालन उक्त पलायन से पूर्व करना आवश्यक है। WTO की व्यवस्था के अनुसार उक्त उपाय में मनमाना भेदभाव नहीं होना चाहिए, संरक्षणवाद का छद्म रूप नहीं होना चाहिए और सबसे अधिक, ऐसा करना अनिवार्य हो गया हो, तभी होना चाहिए।

11.55 WTO के न्यायशास्त्र ने पिछले वर्षों में इन तीन तथा अन्य कसौटियों का भी विस्तार प्रसार किया है। उदाहरण : जो पक्ष 'अपवाद' के नाम पर बाजार से बाहर रहने की बात करता है उसी पर अपवाद को सिद्ध करने का दायित्व होगा। साथ ही अपनाए गए उपाय सुलभ विकल्पों में न्यूनतम प्रतिबंधकारी होने चाहिए और मनमानीपूर्ण तथा अन्यायपूर्ण भेदभाव को रोकने के लिए कड़े नियमों का पालन होना चाहिए।

11.56 मुख्य बात तो यह है कि WTO में एक सांझे बाजार से बहुत ही विविधतापूर्ण देशों को भी थोड़ा बहुत हटने की सुविधा पर कड़े प्रतिबंध हैं। जबकि भारतीय संविधान तथा संवैधानिक न्यायशास्त्र इन पलायनों को सहज ही क्षमा कर देता है।[33]

[33] कहा जा सकता है कि WTO सांझे बाजार के नियम के उल्लंघन पर कड़ा रूख धारण कर सकता है क्योंकि यह देशों को अपनी सीमा पर शुल्क के रूप में कर लगाने की अनुमति देता है। इसका भारत के भीतर समतुल्य तो राज्य सरकारों द्वारा लगाया गया प्रवेश शुल्क ही हो सकता है, जो सीमा शुल्क जैसा ही कर होगा।

11.57 आज जब भारत सहयोगी संघवाद के विचार को अपना रहा है, यह प्रश्न विचारणीय हो जाता है : यदि भारत एक बाजार के अमेरीकी एवं यूरोपीय संघ के कई मानकों को नहीं अपना पा रहा तो क्या इसे विश्व भर के देशों द्वारा एक सांझे विश्व बाजार की रचना के लिए गढ़ी गई व्यवस्था को नहीं अपना लेना चाहिए?

V. निष्कर्ष

11.58 संविधान की रचना के समय एक बड़े और विविधतापूर्ण राष्ट्र को एक रखने के प्रति बड़ी चिन्ता और राज्यों की संप्रभुता के सम्मान की मांग दोनों ही बहुत प्रबल थीं। आज 70 वर्ष बाद एक राष्ट्र और एकता की भावना बहुत प्रबल हो चुकी है और भौगोलिक अखंडता के प्रति चिन्ताएं धूमिल पड़ चुकी हैं। सहयोगी संघवाद अब प्रशासन तंत्र का एक महत्वपूर्ण पक्ष बन रहा है। इसी को परिलच्छित करते हुए देश में सर्व सम्मति से एक बड़ा संविधान संशोधन पारित कर जीएसटी लागू करने का निर्णय लिया है। इससे आन्तरिक बाजार में एक जैसे अप्रत्यक्ष कर संभव हो जाने चाहिए।

11.59 इसी को आधार बना देश इस एक भारतीय अर्थव्यवस्था के विचार को अन्य क्षेत्रों-आयामों में परिवर्धित कर सकता है। वस्तुतः जुलाई 14, 2014 के अपने बजट भाषण में माननीय वित्तमंत्री ने इस सिद्धांत को कृषि पर परिवर्धित करने के विचार का प्रतिपादन किया था, ''पूरे देश में स्पर्धा संवर्धन और बाजारों के एकीकरण से किसानों और उपभोक्ताओं के हितों का और आगे संवर्धन होगा....''

11.60 इस अध्याय में प्रस्तुत साक्ष्य और भारतीय इतिहास की समीक्षा सुझा रही है कि एक आर्थिक भारत के निर्माण की दिशा में प्रौद्योगिकी, अर्थशास्त्र और राजनीति बहुत तीव्र गति से अग्रसर हैं। संभवतः अब समय आ गया है कि संविधान भी आन्तरिक एकीकरण के इस उत्कर्ष को और सहायता प्रदान करने का मन बना लें।

संदर्भ

1. Directorate General of Commercial Intelligence Services (DGCIS), *"India's Internal Trade: A Review of Interstate Movement of Major Commodities", Report.*

2. Center for Transportation *Analysis, Freight Analysis Framework: http://faf.ornl.gov/fafweb/*

3. British Columbia Statistics, *http://www.bcstats.gov.bc.ca/Statistics BySubject/Exports Imports/ Data.aspx*

4. Eurostat, "International trade in goods", *http://ec.europa.eu/eurostat/ statisticsexplained/index.php/International_trade_in_goods*

5. Xing, Weibo, John Whalley and Shantong Li (2015), *"Value, Structure and Spatial Distribution of Interprovincial Trade in China', China & World Economy, 23 (4), pp. 84-103*

6. Firdaus, Muhammad and Amalia Widyasanti (2010), *"Indonesian Interprovincial Trade: What can be Revealed from a Gravity Modeling?", Conference paper presented at Indonesian Regional Science Association International Conference, July 2010.*

7. Vasconcelos, Jose (2001), *"Matriz fo Fluxo de Comercio Interestadual de Bens e Serviços no Brazil – 1999", Instituto de Pesquisa Econômica Aplicada, Discussion Paper.*

8. Anderson J.E., Wincoop, E. Van, *"Gravity with Gravitas: A Solution to the Border Puzzle." the American Economic Review, 2003*

9. Bernard, Andrew, Bradford Jensen, Stephen Redding, Peter Schott, (2007), *"Firms in International Trade", Journal of Economic Perspectives, 21 (3), pp. 105-130*

10. Rose, Andrew (2003), *"Do We Really Know that WTO Increases Trade?", American Economic Review, 94 (1) , pp.98-114*

11. Subramanian, Arvind and Shang-Jin Wei (2007), *"The WTO Promotes Trade, Strongly but Unevenly", Journal of International Economics, 72 (1), pp. 151-175*

12. Head, Keith and Thierry Mayer (2010), *"Illusory Border Effects : Distance Mismeasurement Inflates Estimates of Home Bias in Trade" in Brakman, Steven and Peter van Bergeijk eds. The Gravity Model in International Trade: Advances and Applications, Cambridge University Press.*

13. Baldwin, Richard and Daria Taglioni (2007), *"Trade effects of the euro: A comparison of estimators", Journal of Economic Integration, 22(4) pp.780–818*

14. Disdier, Anne-Celia and Keith Head (2008), *"The Puzzling Persistence of the Distance Effect on Bilateral Trade", The Review of Economics and Statistics, 90 (1), pp.37-48*

परिशिष्ट I

राज्यों के जोड़े/युग्म

परिशिष्ट तालिका 1 में अंतर्फर्म व्यापार का स्वरूप राज्य-युग्मों के अनुसार दिखाया गया है। रंग की गहराई ही दो राज्यों के एक युग्म के बीच व्यापार भागीदारी की गहनता दर्शा रही है। गहरा नीला रंग दिखाता है कि दोनों राज्य परस्पर एक-दूसरे के व्यापार आबंटन में उच्च क्रम पर स्थित हैं। गहरा लाल रंग इसके विपरीत स्थिति दिखा रहा है, अर्थात दोनों परस्पर व्यापार क्रमिकता में निम्न स्तर पर रह जाते हैं।

रंग कूट प्रत्येक अन्य राज्य के व्यापार प्रवाह में महाराष्ट्र की केन्द्रीय भूमिका को दर्शा रहे हैं : यह प्रत्येक राज्य की सर्वाधिक महत्वपूर्ण निर्यात भागीदार है और यह प्रायः सभी राज्यों से वस्तुओं का प्रमुख आयातक भी है। रंग वर्णक्रम के दूसरे छोर पर असम स्थित है : सभी राज्यों के साथ इसके आयात और निर्यात क्रम न्यून हैं। सामान्य रूप से राज्य अपने निकटवर्ती राज्यों के साथ ही अधिक व्यापार करते हैं तथा अपेक्षाकृत धनिक राज्यों का परस्पर व्यापार अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक होता है (यह बात अध्याय के मुख्य पाठ के निष्कर्षों की ही एक झलक है)।

परिशिष्ट तालिका 2 इन्हीं रंग कूटों का प्रयोग कर राज्य युग्म के बीच अन्तःफर्म व्यापार प्रवाहों को दर्शा रही है। इन अन्तर्राज्यीय प्रवाहों में भी महाराष्ट्र शीर्ष स्थान पर है (आयात में भी, निर्यात में भी)। यही बात हमने अन्तर्फर्म व्यापार के संबंध में भी देखी थी। इसके विपरीत लगता है फर्मों ने उत्तरपूर्वी राज्यों, पंजाब तथा छोटे संघशासित प्रदेशों में अपनी शाखाएं स्थापित नहीं की हैं। संघशासित प्रदेशों को लेकर दो अपवाद हैं : दिल्ली जो राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के हरियाणा और उत्तर प्रदेश के जनपदों के साथ F-फॉर्म व्यापार विधि का प्रयोग करती है; और दादरा व नगर हवेली, जो इतना बड़ा आयात केन्द्र तो नहीं है फिर भी आश्चर्यजनक रूप से महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान और मध्य प्रदेश के लिए एक निर्णायक निर्यात भागीदार बना हुआ है। इस व्यापार स्वरूप के कारण तुरंत स्पष्ट नहीं हो पा रहे।

तालिका 1 : राज्य युग्मों में अन्तर्फर्म व्यापार प्रवाह (C-फॉर्म, वित्त वर्ष 2015-16, रूपए करोड़)[34]

आयात करने वाले राज्य

निर्यात करने वाले राज्य	महाराष्ट्र	गुजरात	कर्नाटक	आन्ध्रा प्रदेश	उत्तराखंड	राजस्थान	मध्य प्रदेश	पश्चिम बंगाल	तमिल नाडु	केरला	ओडिशा	उत्तर प्रदेश	दिल्ली	छत्तीसगढ़	हिमाचल प्रदेश	हरियाणा	बिहार	झारखंड	गोवा	आसम
महाराष्ट्र		85679	40253	30734	22679	10215	23634	11409	18793	12336	5438	4380	6583	7783	7137	4006	3629	2957	7038	449
गुजरात	82044		12882	19679	11717	35627	22534	9664	11643	10618	6487	6464	3871	4799	4378	8105	1536	1457	4945	279
तमिलनाडु	40113	14463	40075	26217	3846	4984	7923	6520		19856	4385	2136	2879	3146	1490	1414	1136	1991	1126	331
हरियाणा	25267	15327	11534	8665	14124	15965	7049	7390	4761	6764	2898	6380	9469	2374	8227		3137	1882	969	871
कर्नाटक	32519	9828		20777	3430	3465	8229	5686	19300	13589	3332	2218	2117	2042	1158	1782	967	1535	3403	223
आन्ध्रा प्रदेश	25071	6345	18941		2092	9769	4514	4664	10614	5291	6901	1728	1138	2897	1794	692	1187	726	1276	161
उत्तर प्रदेश	10849	8521	4037	3225	26900	5569	5983	4133	1859	1514	1450		5848	1385	3488	4873	2141	968	271	162
राजस्थान	11307	33743	3501	3644	7714		4868	5058	2231	1778	1531	3149	3368	1014	2113	2776	2020	1102	308	231
दिल्ली	8203	9898	4519	2642	16912	7089	2684	2885	1628	2195	1377	8791		1511	6642	6729	1265	416	216	195
पश्चिम बंगाल	9716	6667	2995	4550	1783	2181	4066		2194	1219	8442	1516	1399	4929	807	911	7006	6632	129	951
मध्य प्रदेश	11181	6843	2267	3252	2650	7227		8540	2201	697	1288	3006	2086	3101	1008	726	1047	724	1057	55
उत्तराखंड	8691	3498	4007	2890		2910	3146	3083	1497	972	1265	3191	5646	1185	2655	1786	1958	1214	188	145
ओडिशा	7294	2385	2426	4301	1337	940	2090	9359	575	357		933	347	6832	174	311	1574	2172	34	187
छत्तीसगढ़	11062	4265	2421	5556	505	2866	5923	1635	687	412	2659	743	646		330	347	342	852	120	150
झारखंड	2092	1029	1347	1388	1750	1316	1174	10930	472	297	1796	2733	518	1657	421	1183	4670		35	48
हिमाचल प्रदेश	3295	1571	1368	1060	2410	1491	1630	919	481	309	302	1228	2388	243		1560	555	137	54	23
केरला	2830	1041	3820	1383	261	183	326	421	3559		221	208	338	73	160	89	72	82	90	5
गोवा	2756	716	1817	552	177	285	386	405	265	678	121	108	266	69	106	90	85	59		14
आसम	602	695	203	212	75	157	541	1777	33	22	169	266	188	236	21	158	608	96	0	
बिहार	121	44	42	38	110	85	136	417	67	3	85	267	59	96	32	15		464	0	12

[34] इन तालिकाओं में राज्यों के आयात-निर्यात मूल्य संतुलित युग्म तालिका में दिखाए गए आंकड़ों के अनुसार ही है। व्यापार का वास्तविक मूल्य कहीं अधिक है, क्योंकि अन्य राज्यों और संघशासित प्रदेशों से प्रवाह प्रस्तुति की सहजता के कारण यहां नहीं दिखाए गए हैं।

तालिका 2 : राज्य युग्मों में अन्तर्फर्म व्यापार प्रवाह (F-फॉर्म, वित्त वर्ष 2015-16, रूपए करोड़)[35]

आयात करने वाले राज्य

निर्यात करने वाले राज्य	महाराष्ट्र	मध्य प्रदेश	आन्ध्रा प्रदेश	कर्नाटक	पश्चिम बंगाल	राज स्थान	गुजरात	केरला	दिल्ली	तमिल नाडु	छत्तीसगढ़	दादरी एवं नगर हवेली	झारखंड	ओडिशा	उत्तर प्रदेश	गोवा	पुडुचेरी	दमन एण्ड दीयु	चंडीगढ़	नगालैंड	मणिपुर	मिजोरम	पंजाब
गुजरात	101038	99736	10346	9954	5671	8406		2937	4461	3578	5040	11615	298	629	3670	1135	305	2008	72	0	0	0	0
महाराष्ट्र		25693	23173	23814	15009	7415	36044	7762	7144	8429	7930	5449	1450	2477	1177	4390	529	1854	145	62	0	0	0
तमिलनाडु	23638	4672	27506	25173	7889	4050	5848	26102	2772		848	14232	888	999	644	481	6693	67	25	0	0	1	2
हरियाणा*	14987	6088	14833	8677	5247	14138	1164	1828	20889	2293	5204	148	1596	880	5353	83	62	76	176	103	1	0	0
आन्ध्रा प्रदेश	23665	2669		21273	6099	1891	4816	7312	599	7072	5760	156	946	5865	511	415	1301	18	14	0	0	0	0
उत्तर प्रदेश	13211	6440	4765	6764	6896	12272	1272	2344	13809	1780	1684	328	1202	1265		1066	60	54	72	24	1	0	1
कर्नाटक	27107	2365	13997		2842	2250	2763	9133	1267	7725	516	45	187	456	256	1429	563	61	48	0	0	0	1
पश्चिम बंगाल	9604	1987	6772	3107		1464	1210	1364	1576	1495	2086	582	8108	6188	797	1248	454	58	37	84	0	2	0
उत्तराखंड*	16109	4509	3867	2992	5015	3839	633	1285	3643	1319	1176	14	692	726	1026	62	92	27	99	1	0	0	0
दिल्ली	11260	4085	3051	4381	3718	10019	1524	1087		1746	851	53	633	551	3189	171	48	1	171	12	2	2	0
पंजाब	12724	2214	3704	7748	3450	4342	390	1162	2288	1193	868	3	604	638	1032	172	11	19	605	637	0	0	
मध्य प्रदेश	14664		2544	2688	2289	2701	4144	1394	753	870	2346	847	459	423	1374	177	20	31	13	0	4	0	0
झारखंड	10176	1554	1720	1285	11807	2148	1674	140	529	1413	897	2		1302	519	2	3	0	0	0	0	0	0
ओडिशा	4538	653	2949	1309	10142	994	1712	997	124	606	2684	1024	3340		446	83	8	1	134	0	0	0	0
आसम*	1221	276	1102	364	23304	0	0	32	684	87	42	154	644	248	46	2	4	0	1	135	275	273	0
केरला	2013	482	13229	5593	389	196	468		149	3405	110	27	90	113	8	481	725	6	1	0	0	0	0
दादरी एवं नगर हवेली	5334	4203	1052	734	430	2896	4295	236	225	1213	133		25	74	155	8	90	245	10	0	0	0	0
छत्तीसगढ़	4402	769	1105	1529	2867	963	740	696	191	650		1	2386	1144	278	69	1	0	1	0	0	0	0
राजस्थान	3747	2470	963	1887	1375		501	384	3376	543	451	10	222	152	861	162	3	9	46	9	0	0	0
गोवा	6818	845	1386	2992	563	597	790	930	223	579	158	23	65	168	58		33	7	5	2	0	2	0

---

35 ऐसे राज्यों को इंगित करता है, जिन्होंने आयात की कोई जानकारी नहीं दी है।

निर्यात करने वाले राज्य	महाराष्ट्र	मध्य प्रदेश	आन्ध्रा प्रदेश	कर्नाटक	पश्चिम बंगाल	राज स्थान	गुजरात	केरला	दिल्ली	तमिल नाडु	छत्तीसगढ़	दादरी एवं नगर हवेली	झारखंड	ओडिशा	उत्तर प्रदेश	गोवा	पुडुचेरी	दमन एण्ड दीयु	चंडीगढ़	नगालैंड	मणिपुर	मिजोरम	पंजाब
पुडुचेरी	1643	236	1317	2026	571	236	354	1600	126	2672	52	28	53	94	103	26		163	2	0	0	0	0
सिक्किम*	17	633	37	6	8753	3	49	6	9	152	1	0	1	10	0	14	0	8	0	0	0	0	0
बिहार*	318	425	82	161	2999	19	18	7	58	34	61	1	1023	327	405	2	3	0	0	0	0	0	0
दमन एण्ड दीयु	2556	127	211	260	343	89	1332	29	44	64	37	307	19	28	11	18	17		0	0	0	0	0
जम्मु एंड कश्मीर*	1292	190	601	255	303	182	28	52	307	34	93	2	17	50	114	4	0	0	3	0	0	0	0
चंडीगढ़	318	15	12	64	8	78	8	11	151	68	2	0	4	4	2	2	1	0		0	0	0	4
मेघालय*	0	0	0	1	74	0	0	0	0	0	0	0	1	0	0	0	0	0	0	22	92	39	0
त्रिपुरा*	3	1	0	0	111	31	4	1	17	0	0	0	35	0	11	0	0	0	0	0	0	0	0
नगालैंड	1	0	53	2	64	0	0	0	1	0	0	0	0	2	0	0	0	0	0		0	0	0
लक्ष्यदीप*	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	8	0	0	0	0	0	0	0	0
अरूणाचल प्रदेश*	0	0	0	0	6	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
मिजोरम	0	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	3	0	0	0	0	0	0	0		0
अंडमान एंड निकोबार आईलैंड*	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
मणिपुर	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0		0	0

1B. व्यापार निर्बन्धता (खुलापन) और व्यापार की स्पर्धाशीलता

मुख्य पाठ में प्रस्तुत रेखाचित्रों के साथ-साथ परिशिष्ट तालिका 3 व्यापार निर्बन्धता और व्यापार संतुलन को राज्य जीडीपी के प्रतिशत के रूप में अधिक राज्यों के लिए दर्शा रही है (इन अतिरिक्त राज्यों में F-फॉर्म में आयात दर्ज नहीं होते किन्तु इनके निर्यात की जानकारी सुलभ है)।

तालिका 3 : व्यापार का परिमाण और व्यापार संतुलन

व्यापार (निर्यात+आयात) GSDP के अनुपात में (C फॉर्म)

असम	5.30%
बिहार	9.90%
उत्तर प्रदेश	13.70%
केरल	17.90%
पश्चिम बंगाल	20.40%
आंध्र प्रदेश	23.40%
तमिलनाडू	24.40%
दिल्ली	27.30%
झारखंड	27.80%
ओडिशा	30.30%
कर्नाटक	32.00%
राजस्थान	33.30%
महाराष्ट्र	33.50%
मध्य प्रदेश	34.20%
छत्तीसगढ़	36.80%
हरियाणा	43.10%
गुजरात	52.60%
हिमाचल प्रदेश	60.50%
गोआ	66.30%
उत्तराखंड	105.20%
कुल	25.97%[36]

** व्यापार के मान वित्त वर्ष 2015 के, GSDP (2011-12) कीमतों पर वित्त वर्ष 2014 की है।*

व्यापार (निर्यात+आयात) GSDP के अनुपात में (F फॉर्म)

उत्तर प्रदेश	8.49
राजस्थान	11.84
पश्चिम बंगाल	15.55
तमिलनाडु	15.69
दिल्ली	16.83
ओडिशा	16.88
केरल	16.95
आंध्र प्रदेश	19.19
कर्नाटक	20.00
छत्तीसगढ़	20.80
महाराष्ट्र	23.87
झारखंड	25.54
गुजरात	35.76
मध्य प्रदेश	39.47
गोआ	60.34
कुल	15.76

** व्यापार के मान वित्त वर्ष 2015 के, GSDP (2011-12) कीमतों पर वित्त वर्ष 2014 की है।*

[36] सकल मान की विभाजक भारत की वित्त वर्ष 2015 की जीडीपी है।

व्यापार शेष GSDP के प्रतिशत के रूप में (C फॉर्म)

उत्तराखंड	-43.50%
गोआ	-27.00%
हिमाचल प्रदेश	-20.20%
केरल	-12.10%
मध्य प्रदेश	-9.90%
बिहार	-8.80%
राजस्थान	-3.40%
पश्चिम बंगाल	-3.30%
आंध्र प्रदेश	-3.30%
कर्नाटक	-2.50%
ओडिशा	-2.10%
छत्तीसगढ़	-1.60%
महाराष्ट्र	0.60%
असम	0.80%
उत्तर प्रदेश	4.20%
झारखंड	4.30%
गुजरात	5.20%
तमिलनाडु	9.30%
दिल्ली	7.40%
हरियाणा	26.10%

** व्यापार शेष वित्त वर्ष 2015, GSDP (2011-12) कीमतो पर वित्तवर्ष 2014 की है, पं. बंगाल के लिए 2004-05 की श्रृंखला के 2014 के आंकड़े प्रयोग किए गए हैं। ऋणात्मक मान का अर्थ है राज्य निवल आयातक है।*

व्यापार शेष GSDP के प्रतिशत के रूप में (F फॉर्म)

मध्य प्रदेश	-24.27
केरल	-6.81
राजस्थान	-6.25
छत्तीसगढ़	-5.74
महाराष्ट्र	-4.69
कर्नाटक	-4.29
पश्चिम बंगाल	-3.81
आंध्र प्रदेश	-2.33
दिल्ली	1.88
ओडिशा	2.86
उत्तर प्रदेश	5.84
झारखंड	6.86
तमिलनाडु	8.39
गोआ	10.67
गुजरात	21.59

** व्यापार शेष वित्त वर्ष 2015, GSDP (2011-12) कीमतो पर वित्तवर्ष 2014 की है, पं. बंगाल के लिए 2004-05 की श्रृंखला के 2014 के आंकड़े प्रयोग किए गए हैं। ऋणात्मक मान का अर्थ है राज्य निवल आयातक है।*

1C. C तथा F-फॉर्म व्यापार में सम्मिलित वस्तुओं में असमानता

जैसा कि हमने मुख्य पाठ में भी ध्यान दिलाया था, दो प्रकार के अन्तर्राजय व्यापारों में सम्मिलित वस्तुओं में बहुत अंतर हैं। परिशिष्ट तालिका 4 में दोनों व्यापारों में सांझी वस्तुओं के व्यापार मूल्य हरे रंग द्वारा दिखाए गए हैं। यहां आंध्र ओर तेलंगाना को एक साथ ही माना गया है।

तालिका 4 : प्रत्येक प्रसार के व्यापार में शीर्षस्थ 15 वस्तुएं

संयुक्त आन्ध्र प्रदेश में C-फॉर्म वाली शीर्षस्थ 15 वस्तुएं

वस्तुएं	आयात का मूल्य (रू. करोड़)
सभी मोटर वाहन, ट्रैक्टर छोड़कर	13983
लोहा और इस्पात	10104
वाहन पुर्जे	6485
रंग और रसायन	5575
बिजली के सामान, इंजनों/मोटरों को छोड़कर	4873
मशीनें	3224
कोयला	3198
परिधान और होजरी	3066
पैकिंग का सामान	2659
कपास	2583
प्लास्टिक का कच्चा माल	1606
सभी वनस्पति तेल	1545
कागज	1465
इलैक्ट्रोनिक्स	1246
तारकोल	1155

संयुक्त आंध्र प्रदेश में F-फॉर्म वाली 15 शीर्षस्थ वस्तुएं

वस्तुएं	आयात का मूल्य (रू. करोड़)
चांदी, जेवर कीमती रत्न	5268
ट्रैक्टर, पुर्जे और अन्य कृषि उपकरण	4064
ट्रैक्टर को छोड़ अन्य वाहन	1693
उपभोक्ता इलैक्ट्रोनिक्स	1392
लोहा और इस्पात	1142
कृषिनाशक	636
डीजल	544
उर्वरक	432
पैट्रोल	387
चिकने पदार्थ और अन्य पैट्रो उत्पादन	380
बिजली के सामान, ईंजन मोटर को छोड़कर	308
सभी गैर लौह धातुएं	292
इलैक्ट्रोनिक्स	259
तंबाकू और तंबाकू उत्पाद	249
परिधान और होजरी	183

1D. गुरूत्वाकर्षण रूपरेखा के प्रति दृढ़ता

इस परिशिष्ट में मूल पाठ में चर्चित गुरूत्वाकर्षण अनुमानों की दृढ़ता पर अधिक विस्तार से समीक्षा की जा रही है। रूपरेखा का पूर्ण विवरण तालिका 5 में दिया गया है। यहां भी उन्हीं चरों का प्रयोग हुआ है जो मूल पाठ में हैं। प्रतिमान (1) और (2) में फासलों का मापन क्रमश: राज्यों के व्यापार केन्द्र और प्रशासकीय राजधानियों से किया गया है। प्रतिमान (3), (4), (6), (8), (11) और (12) मुख्य पाठ की तालिका 2 के स्तंभ (1-6) के अनुरूप हैं। प्रतिमान (7) और (5) में क्रमश: अन्त:फर्म और अन्तर्फर्म व्यापारों के लघुगणकों से राज्य जीडीपी पर प्रतीपगमन आंकलित किए गए हैं (दोनों प्रवाहों के लिए समान राज्यों की जानकारी का प्रयोग किया गया है)। यहां प्रतीपगमन आंकलन में अन्य मानक गुरूत्वाकर्षण चर भी सम्मिलित हैं। प्रतिमान (9), (10) में अमेरीकी राज्यों के संपूर्ण प्रतिदर्श के आंकड़े (कृषिक उत्पादों सहित) तथा केवल वस्तुओं के लिए गुरूत्वाकर्षण मापन के लिए प्रयोग किए गए हैं।

A. राज्य जीडीपी के गुणांक

जैसा हमने मुख्य पाठ में देखा था व्यापार की आय लोच का व्यापार प्रवाहों से धनात्मक सह संबंध है। वहीं रेखाचित्र 3 में दिखाए गए सकल व्यापार प्रवाहों के साथ भी यह निष्कर्ष संगतिपूर्ण है, अर्थात उच्च आय राज्य अन्य राज्यों के साथ अधिक व्यापार करते हैं। आय के गुणांक फासलों के विभिन्न निरूपणों, विभिन्न प्रतिदशों भारत एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच विभिन्न प्रवाहों में भी दृढ़तापूर्ण सिद्ध होते हैं। स्तंभ-7 दर्शा रहा है कि एक राज्य की जीडीपी में 10 प्रतिशत की वृद्धि का अन्त:फर्म व्यापार के प्रवाह में 7.4 प्रतिशत की वृद्धि के साथ संबंध है। यह लोच का मान अन्तर्फर्म व्यापार (स्तंभ 5) से कुछ कम है। यह तथ्य भी मुख्य पाठ के रेखाचित्र 5 में दर्शाए गए स्वरूपों के साथ संगतिपूर्ण है।

B. सन्निकटता गुणांक

साथ लगते हुए राज्य के तदर्थ चर सांझी सीमा के व्यापार की संबंधों की प्रबलता के प्रभाव को ग्रहण कर लेते हैं। किन्तु अनुमानित संबंध में राज्यों के बीच फासलों के मापन के अनुसार परिवर्तन हो जाते हैं। (यदि हैड और मेयर, 2010 के निष्कर्षों पर ध्यान दें तो यह बात विचित्र भी नहीं है)। जैसे-जैसे अंतर का मापक वस्तुओं द्वारा तय किए गए वास्तविक अंतर (राज्यों की आर्थिक राजधानियों, न कि भौगोलिक केन्द्र बिन्दुओं) के निकट पहुँचता है तो सांझी सीमाओं वाले राज्यों के बीच व्यापार प्रवाह के आकार और अधिक महत्वपूर्ण हो जाते हैं। ऐसी ही हमारी अपेक्षा भी है। जब अन्तर का मापन राज्यों की आर्थिक राजधानियों के अनुसार होता है तो व्यापार प्रवाह 41 प्रतिशत[37] अधिक हो जाते हैं (देखें स्तंभ 3)। राज्यवार स्थिर प्रभाव हमें व्यापार की अनावलोकित राज्य विशिष्ट विशेषताओं को आंकलन में सम्मिलित करने में सहायक होते हैं। अत: इन्हें मुख्य पाठ तथा आगामी चर्चा में वरीयतापूर्ण रूपरेखा में स्थान दिया गया है।

[37] =exp(0.349)-1

तालिका 5 : गुरूत्वाकर्षण अनुमानों की सुदृढ़ता की जांच

आश्रित चर	भारत								संयुक्त राज्य अमेरिका			
स्वह (आयात मूल्य)	अंतर्फर्म				अंतर्फर्म केवल ४.फॉर्म		अंत:फर्म		कृषि सहित		कृषि रहित	
	(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
स्वह (फासला): केन्द्र	-1.480***											
	(0.186)											
स्वह (फासला): प्रशासकीय राजधानी		-1.253***										
		(0.160)										
स्वह (फासला): आर्थिक राजधानी			-0.928***	-0.565***	-0.692***	-0.539***	-0.7305***	-0.8180***	-0.984***	-0.974***	-0.965***	-0.938***
			(0.169)	(0.0952)	(0.221)	(0.116)	(0.2613)	(0.1674)	(0.024)	(0.069)	(0.024)	(0.068)
साथ लगते राज्य का तदर्थ चर	-0.0811	0.172	0.349*	0.638***	0.706***	0.704***	0.7442***	0.4949**	0.992***	0.902***	0.994***	0.937***
	(0.205)	(0.184)	(0.193)	(0.117)	(0.188)	(0.123)	(0.2429)	(0.1999)	(0.071)	(0.103)	(0.072)	(0.097)
हिन्दी का तदर्थ चर	-0.347*	-0.305*	-0.391**	-0.0225	-0.562***	-0.037	-0.4683*	0.4061*				
	(0.179)	(0.181)	(0.187)	(0.133)	(0.15)	(0.16)	(0.2508)	(0.2330)				
स्वह (आयातक GSDP)	0.826***	0.856***	0.816***		0.953***		0.7407***		1.062***		1.101***	
	(0.0914)	(0.0926)	(0.0934)		(0.0513)		(0.0778)		(0.017)		(0.017)	
स्वह (निर्यातक GSDP)	0.968***	0.998***	0.958***		0.790***		0.7743***		0.954***		0.928***	
	(0.0548)	(0.0577)	(0.0568)		(0.0717)		(0.0989)		(0.017)		(0.017)	
आयातक राज्य FE	No	No	No	Yes	No	Yes	No	Yes	No	Yes	No	Yes
निर्यातक राज्य FE	No	No	No	Yes	No	Yes	No	Yes	No	Yes	No	Yes
R-squared	0.548	0.543	0.522	0.903	0.72	0.91	0.57	0.83	0.83	0.9	0.83	0.9
अवलोकन	380	380	380	380	210	210	210	210	2450	2450	2450	2450

मानक त्रुटि कोष्ठकों में दर्शाई गई हैं।
**** $p<0.01$, ** $p<0.05$, * $p<0.1$*

C. भाषा का गुणांक

भाषा का तदर्थ चर यह जानने का प्रयास कर रहा है कि क्या हिन्दी भाषी प्रांत आपस में ही (अन्य भाषी प्रांतों की अपेक्षा) अधिक व्यापार करते हैं। जब हम स्थिर प्रभावों वाली वरीयतापूर्ण रूपरेखा का प्रयोग करते हैं तो पूर्ण और सीमित, दोनों ही प्रतिदर्शों में अन्तर्फर्म व्यापार में इस गुणंक का मान महत्वहीन रहता है। किन्तु यह गुणंक अन्त:फर्म व्यापार में 90 प्रतिशत आश्वस्ति पर महत्वपूर्ण है। साथ ही यदि हम राज्य जीडीपी को तुलना की कसौटी बनाएं, तब भी यह गुणंक महत्वपूर्ण हो जाता है।

D. अन्तर (फासले) का गुणांक

सबसे बड़ी जानकारी तो यह है कि भारत में व्यापार प्रवाह की अंतर के प्रति लोचशीलता अपेक्षा से काफी कम है। वरीयतापूर्ण रूपरेखा में (स्तंभ 4) आर्थिक राजधानियों के बीच अंतर में 10 प्रतिशत की वृद्धि से अन्तर्फर्म व्यापार में 5.65 प्रतिशत की गिरावट आती है। अन्त:फर्म प्रवाहों (स्तंभ 7) में 10 प्रतिशत की अंतर की वृद्धि से केवल 7.3 प्रतिशत की कमी होती है। यदि स्रोत और लक्ष्य राज्यों की सदैव अपरिवर्तनीय विशेषताओं को तुलना की कसौटी बनाकर चलें तो यह लोचशीलता 8.1 प्रतिशत हो जाती है। भारत में अन्त:फर्म व्यापार के लिए इस चर का गुणंक अन्तर्फर्म व्यापार की अपेक्षा अधिक है, उस समय भी जब उन्हीं राज्य युग्मों के आधार पर गुरूत्वाकर्ष प्रतिमान का आंकलन किया जाता है (स्तंभ 6)।

अन्त: और अन्तर्फर्म व्यापारों की फासलों की लागतों में अन्तर का एक संभावित कारण यह हो सकता है : अन्त:फर्म व्यापार के लिए तो स्रोत एवं लक्ष्य, दोनों स्थानों पर फर्म की मौजूदगी जरूरी है जबकि अन्तर्फर्म व्यापार में केवल एक इच्छुक क्रेता (विक्रेता) का होना पर्याप्त रहता है। फासले बढ़ने पर सहायक फर्म की स्थापना की लागतें व्यापार की इच्छुक किसी अन्य फर्म की तलाश की लागत से अधिक हो जाती हैं। फर्मों के बीच व्यापार पर (राज्य के भीतर और विभिन्न राज्यों के बीच) करों में अंतर भी अधिक व्यापार के पक्ष में संप्रेरणाओं को मोड़ सकता है। किन्तु अन्त:फर्म व्यापार में यह विकृति न तो राज्य के भीतर आती है और न ही राज्य की सीमा के बाहर आती है।

दो प्रकार के व्यापार प्रवाहों के गुणंकों में अंतर के बाद भी इन गुणंकों की अन्य देशों के भीतर ऐसे ही गुणंकों से तुलना करना बहुत अहम रहेगा। सौभाग्यवश हमें संयुक्त राज्य अमेरीका से ऐसे ही व्यापार की जानकारी मिल रही है। संयुक्त राज्य में दो राज्यों के बीच अंतर उनके सबसे अधिक जनसंख्या वाले शहरों के बीच के अंतर को माना जाता है। कृषि वस्तुओं से रहित एवं सहित दोनों प्रतिदर्शों पर अलग-अलग प्रतीपगमन आंकलन किया गया है (प्रतिमान (11) और (12))। कृषि उत्पाद रहित रूपरेखा दोनों देशों के वस्तु समूहों को तुल्य बना देती हैं। भारत जैसी ही प्रवृत्तियां संयुक्त राज्य में भी दिखाई दी हैं राज्यों के बीच व्यापार राज्यों की जीडीपी और उनकी सन्निकटता से सह संबंध दर्शा रहे हैं।

अमेरीकी प्रतिदर्श में राज्य जीडीपी की तुलना-कसौटी और विशिष्ट अचल प्रभावों वाली रूपरेखाओं के बीच फासले का गुणंक बहुत स्थिरतापूर्ण है। इससे संकेत मिलता है कि राज्य जीडीपी का मापक अधिकांश बार राज्यों के बीच अचल अंतरों के प्रभाव को भी समाहित कर लेता है। यह स्थायित्व (9) और (11) में आंकलित उच्च R वर्ग में भी झलक रहा है।

यहां चौकाने वाला परिणाम तो यह है कि अमेरीकी राज्यों में फासलों में 10 प्रतिशत की वृद्धि से व्यापार में औसतन 9.8 प्रतिशत से 9.3 प्रतिशत की कमी आ जाती है। यह परिणाम प्रतिदर्श चयन से अप्रभावित है। इसकी भारत से तुलना करें जहां अन्तर में इतनी ही वृद्धि 5.6 प्रतिशत से 8.1 प्रतिशत की अंतर्फर्म और अन्त:फर्म व्यापार में कमी का कारण बनती है। वह भी जब कि संयुक्त राज्य का परिवहन तंत्र भारत की अपेक्षा अधिक विकसित है। अत: हम कह सकते हैं कि भारत में आंतरिक व्यापार उतना बुरा नहीं है जितनी प्राय: आशंका कर ली जाती है।

आगे बढ़ने से पूर्व बाल्डविन (2007) के गुरूत्वाकर्षण विश्लेषण में होने वाले पूर्व रूझानों विषयक अध्ययन पर भी ध्यान देना आवश्यक है। वरीयता प्राप्त रूपरेखा में राज्य स्तरीय अचल प्रभावों का प्रयोग अनुमानों में से

समय-अपरिवर्ती रूझानों को कम कर देता है (इसे एंडरसन और बान विनकूप (2001) ने बहुपक्षीय व्यापार विरोध का नाम दिया है)। किन्तु राज्य युग्मानुसार अचल प्रभावों का योग संभव नहीं होता। इसी लिए प्रकृति विशिष्ट द्वि पक्षीय व्यापार प्रभाव परिणामों में कुछ रूझान पैदा करते रहते हैं (संभवत: छोटी जनसंख्याओं वाले राज्य आपस में ज्यादा अच्छी तरह व्यापार कर लेते हैं)। हमारे आंकड़े समय के अनुसार बदलने वाले प्रभावों को विभिन्न देशों के बीच सापेक्ष कीमतों को स्थिर रखने की अनुमति भी नहीं देते। इससे तो अन्तर का गुणंक रूझानपूर्ण हो जाएगा। जहां तक व्यापार वस्तुओं की सापेक्ष कीमतें व्यापार के मूल्य से ऋणात्मक संबंध युक्त होती हों, अनुमित गुणंकों के मान में कमी रहने का रूझान आ ही जाएगा।

E. अन्तर के गुणंक के लिए अन्य तुलना मानक

गुरूत्वाकर्ष गुणंकों की सैद्धांतिक व्याख्याओं की बहुलता के कारण हमारे उपर्युक्त प्रतीपगमनों से आंकलित अन्तर गुणकों की अन्य अन्त:राष्ट्रीय व्यापार लागतों से तुलना करना सहज नहीं रहता। लेखकगण प्राय: प्रतीपगमन के अंतर गुणंकों को दो लोचशीलताओं का गुणनफल मानते हैं (ये अंतर को व्यापार की सभी लागतों का एक निमित्त मान लेते है)। ये लोचशीलताएं हैं (क) व्यापार लागतों की फासले के साथ लोच; और (ख) व्यापार की अन्तर से लोच (डिजडीअर एंड हैड, 2008)। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न अध्ययनों में अंतर गुणंकों की व्याख्या में बहुत अंतर आ जाते हैं, इनके कारण होते हैं : स्थानिक समेकीकरण का स्तर, वस्तुओं के बीच प्रतिस्थापकता, उत्पादिता अपकिरणन का प्रसार या व्यापार की लागतों में फसलों के कारण आने वाले परिवर्तन। इस अध्याय के अनुमानों की अन्य अध्ययनों के साथ तुलना कर पाना न केवल इन अंतरों के कारण कठिन है बल्कि अन्य कोई तुलनीय आधार उपलब्ध नहीं होना भी कठिनाइयां बढ़ा देता है (ये अन्तर्राज्यीय व्यापार को अन्तर्राष्ट्रीय या अन्त:राज्यीय व्यापार प्रवाहों के सापेक्ष मापने की समस्याएं हैं जिन पर हम पहले भी ध्यान दे चुके हैं)।

भारतीय अनुमानों के अमेरीकी आंकड़ों के साथ तुलनीय आधार बनाने से पूर्व फासला गुणंक का एक अन्य निकट तुलनीय मापक हम इस अध्ययन की रूपरेखा की रचना को डिजडीअर और हैड (2008) के गुरूत्वाकर्षण प्रतिमानों के फासले के गुणंकों के बृहत अध्ययन में रखकर पा सकते हैं।[38] इस प्रयास-प्रयोग से पता चल रहा है कि बृहत प्रतीपगमन में औसत फासला गुणंक का मान (–)1.64 है, अर्थात फासले में 10 प्रतिशत की कमी से व्यापार के मूल्य का मान 16.4 प्रतिशत कम हो जाता है। इसकी भारत के फासला गुणंक 5.65 के साथ तुलना करते समय सावधानी बरतनी होगी, क्योंकि बृहत प्रतीपगमन में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार प्रवाहों के लिए पृथक तुलनीयता की कसौटी नहीं होती (वहां तो अन्तर्महाद्वीपीय प्रवाह के लिए ही तुलनीयता की कसौटी की कल्पना की गई है)। इसका अर्थ है कि राष्ट्रीय सीमाओं का प्रभाव इस (–)1.64 के मान में तो समाहित है, किन्तु भारत के अन्तर्राज्यीय अंतर गुणंक के अनुमान में नहीं है।

इस बृहत अध्ययन की इतनी अधिक सीमाओं को देखते हुए यह माना जा सकता है कि भारतीय अध्ययन को इतनी कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ेगा जितना पहले अनुमान था। इसका कारण विभिन्न क्षेत्रों में और वस्तुओं पर करों की रचना में विविधता है या राज्य की सीमाओं की छिद्रशीलता (जो व्यापार तंत्र की सहायक हो जाती है) के कारण है, यह तो अभी पूरी तरह नहीं कहा जा सकता, आशा है भविष्य में और अध्ययन इन दृश्य विरोधाभासों का निवारण कर पाएंगे।

1E. विरोधाभास के समाधान का एक प्रयास : व्यापार कर संबंधी विकृतियां

---

[38] ये विशेषताएं और इनके स्तर निर्धारक प्राचल हैं : क्या अध्ययन 1990 (=1) के बाद के वर्षों के लिए थी, एक महाद्वीप की थी (=1), केवल विकसित देशों का प्रतिदर्श था (=0), कोई विकसित देश नहीं था (=1), विखंडित आंकड़े थे (=0), सकल द्विपक्षीय व्यार था (=0) सड़क/समुद्री अंतर (=0), सन्निकटता कसौटी (=1), सांझी भाषा (=1), व्यापार समझौता (=0), दूरस्थता (=0) देश के अचल प्रभाव (1), शून्य प्रवाह भी शामिल है (=0), कोई शून्य प्रवाह नहीं (=1), पायजो अर्द्ध –ML (=0), जीडीपी की अन्तस्थता का सुधार (=0), अच्छे स्तर का (=1) रोजनामचा।

A. केन्द्रीय विक्रय कर (CST) और मूल्य वृद्धि कर (VAT)

भारत में वर्तमान अन्तर्राज्यीय व्यापार CST और अन्त:राज्यीय व्यापार लग रहे VAT अन्तर्राज्यीय व्यापार को राष्ट्रव्यापी GST की अपेक्षा विकृत कर रहे हैं। प्रश्न यह है कि वर्तमान कर प्रणाली ने आंतरिक व्यापार को बढ़ाया है या घटाया है। उत्तर इस बात पर निर्भर करता है कि क्या संभावी आयातक को अपनी खरीदारी पर राज्य के अंदर से ही खरीदारी करने पर भी आदान कर श्रेय प्राप्त होगा?

केस 1 : व्यापार संप्रेरणा की समाप्ति

आदान कर श्रेय (ITC) का प्रांत में आंतरिक रूप से खरीदे गए आदानों तक सीमित रहना अन्तर्राज्यीय व्यापार को हतोत्साहित करता है। राज्य से बाहर से खरीदारी पर ITC नहीं मिलना एक प्रकार से सीमा शुल्क के भुगतान का रूप ले लेता है। आइए इसे एक उदाहरण द्वारा समझाएं।

तीन फर्मों, A, B, C पर विचार करें। A तथा B एक ही राज्य में है तथा C किसी अन्य में। A को यह निर्णय लेना है कि किसी आदान की खरीदारी B से करे या C से। ये दोनों ही अपना उत्पाद 100 रूपए प्रति इकाई बेच रही है। हमारी तालिका 6 का स्तंभ (1) फर्म B से A तक और आगे एक उपभोक्ता तक की आपूर्ति श्रृंखला के प्रत्येक चरण पर कीमतें, लाभ और कर दर्शा रहा है। मान लेते हैं कि वैट की दर 10 प्रतिशत है, अत: B वैट के रूप में 10 रूपए जमा कराती है और A को B से खरीदारी पर 10 रूपए का आदान कर श्रेय मिल जाता है। मान लें कि A उपभोक्ता को वह वस्तु 110 रूपए में बेचती है। अब उसे 11 रूपए वैट के रूप में जमा करने होंगे। हमारे उपभोक्ता के लिए कर सहित कीमत 121 रूपए हो जाती है।

मान लें कि A ने B के स्थान पर यही वस्तु C से मंगाई होती। अब आपूर्ति श्रृंखला का स्वरूप B.A. उपभोक्ता से भिन्न हो सकता है, किन्तु दो मान्यताएं बनानी होंगी :

- यदि उपभोक्ता कीमत स्थिर (121 रूपए) रखी जाए तो श्रृंखला स्तंभ (2) वाली होगी।
- यदि A का लाभ स्थिर रखा जाए तो श्रृंखला स्तंभ (3) वाली होगी।

एक बात तो स्पष्ट है, यदि अंतिम उपभोक्ता कीमत स्थिर रहती है तो फर्म A को B से आपूर्ति प्राप्त करना अधिक लाभप्रद है। एक स्पर्धी बाजार में A किसी उपभोक्ता से 121 रूपए से अधिक कीमत नहीं मांग सकती। यदि वह ऐसा करती है तो कोई अन्य फर्म B से माल खरीद कर उपभोक्ताओं को बेचते हुए सारे खुदरा बाजार पर अधिकार कर लेगी (क्योंकि उसकी 121 रूपए होगी, जो A द्वारा मांगी जा रही कीमत से कम होगी)।

दोनों अवस्थाओं में C तो A को बिक्री पर 2 रूपए CST जमा कराएगी, किन्तु A को कोई ITC नहीं मिलेगा। यदि उपभोक्ता कीमत स्थिर रखते हैं तो A वैट के रूप में 10 प्रतिशत, अर्थात 10 रूपए जमा कराएगी, किन्तु यदि A द्वारा प्राप्त कीमत में समंजन करें तो यह राशि 11-20 रूपए हो जाएगी। अत: कीमत स्थिर रहने पर A का लाभ घटकर 8 रूपए रह जाएगा। यदि उपभोक्ता कीमत स्थिर रखने की बाध्यता नहीं हो, तो वह 123.20 रूपए हो जाएगी। हां A का लाभ 10 रूपए ही रहता है।

उपभोक्ता तो उसी फर्म से खरीदारी करना चाहेंगे जो कम कीमत, अर्थात 121 रूपए पर बेचने को तैयार हो। अत: विक्रेता फर्म A के हित में यही होगा कि वह B से आपूर्ति प्राप्त कर उपभोक्ता को कम कीमत पर सामान बेचे और स्वयं भी अधिक लाभ कमाए। यह उदाहरण स्पष्ट बता रहा है कि CST कैसे अंतर्राज्यीय व्यापार को हतोत्साहित करता है, क्योंकि वैट व्यवस्था में क्रेता फर्म आंतरिक फर्म से खरीदारी पर तो आदान कर श्रेय पा जाती है।

केस 2 : अन्तिम प्रयोक्ता के रूप में फर्म को आदान कर श्रेय नहीं मिलने पर

अब उस स्थिति पर विचार करें जहां फर्म A स्वयं ही अन्तिम उपभोक्ता हो। यहां तो सारा लेनदेन पंक्ति (3) में ही समाप्त हो जाता है। और हमारी तालिका स्पष्ट कर रही है कि अब तो इस फर्म को 'C' से माल मंगाना सस्ता रहता

है। राज्यों को वैट प्रणाली अनेक प्रकार के आदानों के लिए क्रेता फर्म को ही अंतिम उपभोक्ता मान लेती है। अतः उन्हें ITC कर लाभ नहीं मिल पाता। इस श्रेणी में आने वाली बड़ी-बड़ी चीजों में शामिल हैं : मोटर वाहन, पैट्रोल, डीजल, ल्यूब्रिकेंट, एयर कंडीशनर आदि। इनकी गणना अंतर्राज्यीय व्यापार के शिखर पर होती है (तालिका 6)।

केस 3: वैट मुक्त वस्तु विक्रेता फर्म को ITC नहीं मिलने पर अंतर्राज्यीय व्यापार को प्रोत्साहन

इस अवस्था में फर्म A वैट मुक्त वस्तुएं बेचती है। वैट मुक्त चीजों के विक्रेता अपनी किसी भी खरीदारी पर किसी आदान कर श्रेय के अधिकारी नहीं होते। अतः उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया अंतिम मूल्य ही विक्रेता फर्म को प्राप्त मूल्य होगा, किन्तु ITC नहीं मिलने के कारण आंतरिक रूप से प्राप्त आपूर्ति पर A का लाभ शून्य हो जाएगा। यही बात हम तालिका 7 में दिखा रहे हैं। यदि फर्म अपने आदान राज्य के भीतर से ही प्राप्त करती है और उसे उसी कीमत पर बेचती है तो उसे 8 रूपए का लाभ मिलता है (स्तंभ 1)। राज्य से बाहर से माल मंगा कर उतना ही लाभ कमाते हुए वह अंतिम उपभोक्ता को 102 रूपए में ही माल बेच सकती है। किन्तु यदि वह राज्य के भीतर से माल खरीद कर उपभोक्ता को बेचना चाहे तो उसे कहीं अधिक ऊँची कीमत, 110 रूपए की मांग करनी होगी (स्तंभ 3)। उदाहरण के लिए सूती धागा आंध्र प्रदेश में वैट मुक्त है। इन धागा उत्पादकों के लिए आदान कपास है, यह आंध्र में आयातित मूल्यानुसार शीर्षस्थ 15 वस्तुओं में सम्मिलित है (परिशिष्ट तालिका 4)।

तालिका 6 : फर्म को आदान पर ITC मिलता है

क्र.सं.		राज्य में B से आदान (1)	बाहर से C से आदान (2)	C से आदान, लाभ स्थिर रखते हुए (3)
(1)	विक्रेता B तथा C को प्राप्त कीमत	100	100	100
(2)	मध्यवर्ती स्तर पर कर (VAT या CST)	10	2	2
(3)	A द्वारा चुकायी गई कर सहित कीमत (1+2)	110	102	102.00
(4)	A को मिला ITC	10	0	0.00
(5)	A को उत्पादन पर प्राप्त कीमत	110	110	112.00
(6)	A द्वारा उपभोक्ता को अंतिम बिक्री कीमत पर कर	11	11	11.20
(7)	उपभोक्ता द्वारा चुकाई कर सहित कीमत (5+6)	121	121	123.20
(8)	प्रति इकाई लाभ (7-6+4-3)	10	8	10

सारणी 7: टैक्स छूट में अंतिम सामान ताकि बिक्रेता आगत पर आईटीसी प्राप्त नहीं करे।

क्र.सं.		राज्य में B से आदान (1)	बाहर से C से आदान (2)	C से आदान, लाभ स्थिर रखते हुए (3)
(1)	विक्रेता B तथा C को प्राप्त कीमत	100	100	100
(2)	मध्यवर्ती स्तर पर कर (VAT या CST)	10	2	2
(3)	A द्वारा चुकायी गई कर सहित कीमत (1+2)	110	102	102.00
(4)	A को मिला ITC	0	0	0.00
(5)	A को उत्पादन पर प्राप्त कीमत	110	110	102.00
(6)	A द्वारा उपभोक्ता को अंतिम बिक्री कीमत पर कर	0	0	0.00
(7)	उपभोक्ता द्वारा चुकाई कर सहित कीमत (5+6)	110	110	102.00
(8)	प्रति इकाई लाभ (7-6+4-3)	0	8	0

गतिशील एवं मंथनशील भारत : नए साक्ष्य

12

अध्याय

''एक आदर्श सामाज को गतिशील होना चाहिए, इसमें एक भाग में हो रहे परिवर्तनों को अन्य भागों तक पहुँचाने के अनेक मार्ग होने चाहिए।''

-डॉ. भीमराव अम्बेडकर

सामान्य धारणा है कि भारत में श्रम के प्रवाह अपेक्षाकृत कम हैं। यह अध्याय दो नए आंकड़ा समुच्च्यों और विधियों का प्रयोग कर यह पाता है कि भारत में कार्य के लिए आंतरिक प्रवसन के स्तर बहुत उच्च हैं। जनगणना के आंकड़ों के समवय समूहों में परिवर्तन के विश्लेषण से वार्षिक अन्तर्राज्यीय प्रवसन का मान 2001-2011 के बीच 5-6.5 मिलियन रहा है। रेलयात्री आंकड़े बताते हैं कि 2011 से वार्षिक अन्तर्राज्यीय प्रवसन प्रवाह 9 मिलियन हो चुका है। स्पष्टतः, 1980 के बाद से संवृद्धि दर में उन्नति के बाद से प्रवसन में तेजी आई है, बेहतर आर्थिक अवसरों के लाभ किसी अन्य स्थान पर जाकर रोजी कमाने की लागतों से अधिक हो गए हैं। यह अध्याय राज्यों और जनपदों के बीच यात्रियों के प्रवाहों के स्वरूप पर चर्चा कर रहा है। यहां कुछ तो पूर्वधारणाओं के ही अनुरूप हैं, किन्तु कुछ आश्चर्यपूर्ण भी हैं। एक ऐसा निष्कर्ष तो यही है कि भाषा आंतरिक आर्थिक समेकीकरण में गंभीर रूप से बाधक नहीं हैं और यदि यह सत्य है तो इससे देश के निर्माताओं की भाषाई विविधता के प्रति उदारता का ही सत्यापन अनुमोदन होगा। हां इस एवं पिछले अध्याय के अनेक अध्ययन परिणाम बहुत ही हैरान करने वाले हैं। भारत वर्ष में तीव्र दर पर चल रहे वस्तुओं, व्यक्तियों और पूंजी के आन्तरिक समेकीकरण के बावजूद आय और उपभोग की विषमताओं में वृद्धि हो रही है!

I. विषय प्रवेश : मुख्य परिणाम

12.1 चीनी नववर्ष पर 277 मिलियन प्रवासी[1] कर्मियों की विशाल संख्या जो देश की जनसंख्या का 25 प्रतिशत भाग है, अपने-अपने घरों को लौटने के लिए रेलों पर सवार हो जाती है। चीन में उच्च संवृद्धि दरों से आंतरिक ग्रामीण क्षेत्रों से बहुत विशाल स्तर पर तटीय प्रांतों में काम के लिए श्रमिकों का प्रवसन हुआ है।

12.2 ऐतिहासिक रूप से काम और शिक्षा के लिए व्यक्तियों का अन्यत्र जाकर बसना एक ऐसे घटनाक्रम के साथ-साथ चला है जिसमें अर्थव्यवस्थाओं में संरचनात्मक बदलाव आए हैं और निम्न उत्पादिता के कृषिक कार्यो से श्रम शक्ति 'मुक्त' होकर अधिक उत्पादिता भोग रहे क्षेत्रकों की ओर अग्रसर हुई है। इससे अभी भी पिछड़े क्षेत्रों में बसे हुए परिवार जनों के लिए धन प्रेषणों में वृद्धि ने उन (पिछड़े) क्षेत्रों के आर्थिक विकास में भी योगदान दिया है।

12.3 मान लेते हैं कि श्रम का अधिक प्रवसन होना देश के आर्थिक भविष्य के लिए एक शुभ संकेत हैं तो

[1] जनवादी गणतंत्र चीन के राष्ट्रीय सांख्यिकी ब्यूरो का एक अनुमान।

फिर भारत इस मामले में अपने पड़ोसी देश की तुलना में कहां है? वर्ष 2001 की जनगणना के सीधे पाठ से तो परंपरागत दृष्टिकोण की ही पुष्टि होती है कि भारत में प्रवासी कर्मियों की संख्या (33 मिलियन के आसपास) बहुत कम है, और इसमें तेजी से वृद्धि भी नहीं हो रही है। यह अध्याय 2011 की जनगणना और रेल मंत्रालय द्वारा प्रदान रेल यात्री प्रवाह की जानकारियों का प्रयोग कर एक अलग दृष्टिकोण अपना रहा है और हमारा आंकलन है कि भारत में श्रम का प्रवसन कहीं अधिक है।[2]

12.4 हां, जन प्रवाह के इस अध्ययन के कुछ निष्कर्ष तो परंपरागत ज्ञान के अनुरूप ही है : कम समृद्ध प्रांतों/प्रदेशों से अधिक लोग काम की तलाश में बाहर जाते हैं और अधिक समृद्ध प्रदेशों में ही वे व्यक्ति काम पाते हैं। व्यक्तियों के प्रवाह की लागत वस्तुओं के प्रवाह से दुगुनी रहती है। यह भी पुराने निष्कर्षों की प्रति पुष्टि ही है (हेल्लीबेल, 1997)। हमारे इस विश्लेषण से तीन महत्वपूर्ण निष्कर्ष स्पष्ट हो रहे हैं।

12.5 सबसे पहली बात तो भारत की गतिशीलता में निरंतर सुधार हो रहा है और यही बात भारतीय जन समुदाय के लिए भी सही है। एक समवय प्रसमूह आधारित प्रवसन मापक (CMM)[3] दिखा रहा है कि 2001-11 की अवधि में अन्तर्राज्यीय श्रम प्रवसन 5-6 मिलियन व्यक्ति वार्षिक रहा है। इसका अर्थ है कि इन्हीं वर्षों में इस प्रकार के प्रवासियों की संख्या लगभग 60 मिलियन हो गई थी और अन्तर्जनपद प्रवासियों की गणना करें तो वह संख्या भी 80 मिलियन है।[4] अवधि 2011-16 के लिए रेलवे आंकड़ों के आधार पर आंतरिक काम के लिए प्रवास का सबसे पहला हमारा अनुमान दिखा रहा है कि प्रतिवर्ष लगभग 9 मिलियन व्यक्ति इस अन्तर्राज्यीय प्रवासी वर्ग में शामिल हो रहे हैं। ये आंकड़े जनगणनाओं द्वारा सुझाए गए 3.3 मिलियन के अनुपात से तो बहुत अधिक हैं ही, ये अन्य अध्ययनों द्वारा अनुमानित प्रवसन से भी अधिक हैं।[5]

12.6 दूसरे, प्रवसन तीव्रतर हो रहा है : जनगणना के आंकलन के अनुसार 2001-11 में श्रम प्रवासियों की वार्षिक वृद्धि दर पूर्ववर्ती जनगणना के बाद से दुगुनी हो गई है। 1991-2001 के बीच यह दर 2.4 प्रतिशत थी और 2001-11 में यह 4.5 प्रतिशत तक पहुँच गई है। 20-29 वर्ष वय प्रसमूह में ही अपने राज्य से बाहर जाकर काम करने वाले व्यक्तियों की संख्या (प्रवासी स्टॉक) दुगुनी होकर 11.2 मिलियन हो गयी है। प्रवासन में यह तेजी अर्थव्यवस्था में उछाल के साथ-साथ आई है। नब्बे के दशक की तुलना में जैसे ही अगले दशक में संवृद्धि में सुधार आया, प्रवसन पर प्रतिप्राप्तियां इतनी बढ़ गई कि अपना घर छोड़कर आने की लागतों से आगे निकल गई। परिणाम स्वरूप प्रवसन का स्तर भी अधिक उच्चतर हो गया।

12.7 तीसरे, एक उत्साहवर्धक संभावनाओंपूर्ण परिणाम है, जिसके पक्के प्रमाण तो अभी नहीं मिले हैं, किन्तु उपलब्ध साक्ष्य यही संकेत कर रहे है कि भले ही देश के भीतर राज्यों की सीमाओं की बाधाएं प्रवसन की राह रोक रही हों, किन्तु 'भाषा' जन प्रवाह में बाधक बनती नहीं दिखाई देती। एक गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान से ऐसा संकेत मिल रहा है कि राजनीतिक सीमाओं से प्रवास प्रवाह संकुचित हो जाते हैं, क्योंकि राज्यों के आन्तरिक प्रवाह तो उनसे बाहर की ओर प्रवाहों से चार गुना अधिक है। किन्तु भाषा की बाधाएं वस्तुओं के प्रवाह में (भाषा के कारण) होने वाली कठिनाइयों से अधिक नहीं है (देखें अध्याय-1)। संविधान के निर्माताओं की दूरदर्शितापूर्ण उदारता ने देशभर पर एक भाषा न थोंपने का जो निर्णय लिया था उसने विभाजनों से ग्रस्त विविधतापूर्ण भारत में भाषा को ही एक कम महत्वपूर्ण विभाजक बनाने में सफलता पाई है (प्रारंभिक वर्षों में भाषाई विभाजनों को लेकर बहुत अधिक उद्विग्नता व्याप्त थी)।

---

2 यह अध्याय अंतर्राष्ट्रीय प्रवसन पर केन्द्रित नहीं है। कपूर आदि (2016) की एक नवीन पुस्तक में संयुक्त राज्य अमेरिका में भारतीय प्रवासियों पर एक शानदार चर्चा की गई है।

3 इस प्रसमूह आधारित प्रवसन मापक का विवरण परिशिष्ट 1 में है।

4 जनगणना एक प्रवासी की यह परिभाषा देती है, ''यदि जनगणना के समय किसी व्यक्ति की गिनती उसके जन्म स्थान पर नहीं कहीं अन्य ओती है तो वह प्रवासी माना जाता है। हमारा यह अध्याय अन्तर्राज्यीय प्रवसन पर केंद्रित है।''

5 मुंशी और रोजेनवीग के एक पूर्ववर्ती अध्ययन (2016) का विचार था कि आन्तरिक श्रम प्रवसन में कई महत्वपूर्ण बाधाएं आती हैं।

12.8 हां, ये सब रोचक परिणाम मिलकर एक गूढ़ पहेली को जन्म दे रहे हैं : जैसा हमने अध्याय-10 में दर्ज किया है, अधिक आन्तरिक एकीकरण के बावजूद राज्यों के बीच आय और उपभोग के अंतरों की खाइयां कम क्यों नहीं हो पा रहीं? आय और उपभोग में खाइयों का वस्तुओं, व्यक्तियों और पूंजी के समेकीकरण की समताकारी शक्तियों के साथ सहअस्तित्व होना एक ऐसा रहस्य है जिसे अभी सुलझाना आवश्यक है।

II. आधारिक जनगणना आंकड़े : प्रवसन के स्तर और संवृद्धि

12.9 नए अनुमानों और नई विधियों पर विस्तार से चर्चा से पूर्व जनगणना से प्राप्त आधारिक आंकड़े हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं। ये आंकड़े बहुत अधिक न्यूनांकलन कर रहे हैं (देखें बॉक्स-1) किन्तु ये भी श्रम की गतिशीलता में उसी आधारभूत उत्कर्ष का चित्रांकन कर रहे हैं।

12.10 तालिका 1 दिखा रही है कि 1991-2001 की अवधि में आर्थिक कारणों से प्रवसन की वृद्धि की दर श्रम शक्ति में वृद्धि की दर के समान, अर्थात 2.4 प्रतिशत वार्षिक थी। किन्तु जैसे ही अगले दशक में तीव्र आर्थिक संवृद्धि आई, इन दरों के बीच अपसृति दिखाई देने लगी है। प्रवसन की वृद्धि दर में तो शानदार वृद्धि हुई है। यह 4.5 प्रतिशत वार्षिक हो गई है, जबकि श्रमशक्ति की वृद्धि दर में तो वास्तव में कमी आई है। यदि इस प्रवसन का स्त्री-पुरूष वर्गों में विभाजन करें तो स्त्रियों के प्रवसन की वृद्धि में अधिक तेजी आई है। नब्बे के दशक तक महिलाओं का काम की तलाश में दूसरे स्थानों की ओर जाना बहुत ही कम होता था। स्त्री श्रम शक्ति में प्रवासी महिलाओं का अनुपात कम हो रहा था। किन्तु 2000-10 के दशक में तो सारा चित्र ही पूरी तरह से बदल गया, न केवल कार्य के लिए महिलाओं के प्रवसन में स्त्री श्रमशक्ति की वृद्धि से अधिक तेजी

तालिका 1 : श्रमशक्ति और आर्थिक कारणों में प्रवसन, जनगणना 1991-2011

					संवृद्धि %	
		1991	2001	2011	1991 से 2001	2001 से 2011
श्रम शक्ति (मिलियन)	कुल	317	402	482	2.4	1.8
	पुरुष	227	275	332	2.0	1.9
	महिला	90	127	150	3.5	1.7
प्रवासी, जिन्होंने प्रवास के आर्थिक कारण बताए (मिलियन)	कुल	26	33	51	2.4	4.5
	पुरुष	22	29	42	2.7	4.0
	महिला	4	4	9	0.4	7.5
आर्थिक कारण बताने वाले प्रवासी, श्रम शक्ति के अनुपात में प्रतिशत	कुल	8.1	8.1	10.5		
	पुरुष	9.6	10.4	12.7		
	महिला	4.4	3.2	5.7		
पिछले साल में ही आए प्रवासी आर्थिक कारण से (मिलियन)	कुल	1.4	2.2	3.5	57	59
	पुरुष	1.1	1.7	2.8	55	65
	महिला	0.3	0.5	0.7	67	40
प्रवाह/स्टॉक अनुपात (प्रतिशत) आर्थिक प्रवासियों के	कुल	5.4	6.7	6.9		
	पुरुष	5.0	5.9	6.6		
		7.6	12.1	8.2		

स्रोत: जनगणनाएं, 1991, 2001, 2011। 1991 के आंकड़े जम्मू-कश्मीर में जनसंख्या नहीं होने के लिए समंजित है। 2011 के प्रवास आंकड़े अनंतिम D-5 तालिकाओं से लिए गए हैं। आर्थिक कारणों में काम, रोजगार और व्यवसाय हैं। प्रवाह/स्टॉक अनुपात एक वर्ष से कम के प्रवास को सकल प्रवासी स्टॉक से भाग देकर ज्ञात किया गया है। स्टॉक के लिए वार्षिक चक्रवर्धी तथा वार्षिक प्रवाहों के लिए साधारण संवृद्धि दर ली गई है।

से वृद्धि हुई है, बल्कि यह पुरूष प्रवसन से दुगुनी गति से वृद्धिशील पाई गई है।

III. प्रवसन का पुनः आंकलन : दो समय अवधियां, दो आंकड़ा स्रोत और दो नई विधियां

12.11 इस भाग में भारत में आन्तरिक प्रवसन के मापन की दो नई विधियां प्रस्तुत की जा रही हैं। पहली विधि 2001 और 2011 की जनगणना अवधियों के समान प्रसमूहों की तुलना पर आधारित है। दूसरी विधि रेलवे द्वारा बिना पूर्व आरक्षण के यात्रा कर रहे यात्रियों की 2011-16 की जानकारी पर आधारित है। आइए इन पर बारी-बारी से विचार करें।

(क) प्रसमूह आधारित प्रवसन अर्थात (CMM)

12.12 श्रम गतिशीलता की नई प्रवृत्तियों का और विश्लेषण करने के लिए राज्य और जनपद स्तर पर निवल प्रवसन का आंकलन करने के लिए एक प्रसमूह आधारित प्रवसन मापी (CMM) की रचना की गई है।[6] यह मापक एक प्रारंभिक अवधि में 10-19 वर्ष की जनसंख्या में प्रतिशत परिवर्तन और उसी क्षेत्र में 10 वर्ष बाद 20-29 वर्ष प्रसमूह में आए अंतर को (मृत्यु दर के समंजन के बाद) निवल प्रवसन मानता है (देखें परिशिष्ट 1)।[7] इसमें कार्य हेतु प्रवसन का आंकलन ही संभव है, क्योंकि विवाह आदि के कारण द्विपक्षीय आवागमन तो हमारे मापन समीकरण में ही समंजित हो जाते हैं।[8]

बॉक्स 1 : भारत में प्रवासी श्रम शक्ति का आंकलन

भारत में श्रम गतिशीलता को निम्न ही माना जाता रहा है। इसमें वर्षों से कोई परिवर्तन नहीं होने की बात भी कही जाती है। जनगणना, 2001 के अनुसार देश में प्रवासी श्रमिकों की संख्या 33 मिलियन थी अर्थात भारत की सकल श्रम शक्ति के 8.1 प्रतिशत सदस्य आर्थिक कारणों से प्रवासी बने थे। इन प्रवासियों में भी 80 प्रतिशत से अधिक पुरूष ही थे। श्रम की गतिशीलता दर निम्न रहने का एक संभव कारण पिछले वर्षों से शहरीकरण की धीमी प्रगति भी रहा है। इसमें एक दशक में मात्र 3 प्रतिशत का परिवर्तन आया है (चाहे जिस प्रकार भी शहरीकरण की परिभाषा कर ली जाए)।

किन्तु अभी हुए कुछ शोध कार्यों ने इस पुरातन विश्वास पर प्रश्न उठाए हैं। प्रथमतः भारत में दीर्घ एवं अल्पकालिक श्रम प्रवसन का स्वरूप चक्रीय[9] रहता है और जनगणना के आंकड़े इस विशेषता को पूरी तरह नहीं दर्शा पाते। क्षेत्रकीय कार्यशक्ति के आंकड़ों का प्रयोग करते हुए देशिंगकर और अक्तर (2009) ने तर्क दिया है कि वास्तव में प्रवासी श्रमिक संख्या 100 मिलियन से अधिक है। इसी प्रकार NSS के 2007-08 के आंकड़े जो अल्पकालिक प्रवास को बेहतर दर्शाते हैं, प्रयोग करते हुए मजूमदार आदि (2013) ने भारत में 70 मिलियन से अधिक प्रवासी संख्या दर्ज की है। यह सर्वेक्षण वर्ष की श्रम शक्ति का 17 प्रतिशत है। दूसरे कार्य के लिए स्त्री प्रवसन के आंकड़े तो जो 'प्रवसन के कारण' बताए जाते हैं उसी में गुम होकर रह जाते हैं, क्योंकि प्रायः कह दिया जाता है कि विवाह के बाद या फिर परिवार के साथ यहां चली आई हूँ। NSS 2007-08 के आंकड़ों का प्रवसन और 'कर्मी अवस्था' के अनुसार अलग-अलग प्रयोग करने पर यह प्रतीत होता है कि प्रवासी श्रमिक तो श्रम शक्ति का 29 प्रतिशत हैं (भारत सरकार, 2017, श्रीवास्तव, 2011)। वैकल्पिक रूप से लगभग 20 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों का कम से कम एक सदस्य राजी कमाने बाहर गया हुआ था (2007-08 देखें तुम्बे, 2015 । तीसरे भारत में ग्राम से शहर को दैनिक रूप से काम के लिए जाने (और रात्रि को लौट आने) वाले श्रमिकों की संख्या भी बहुत बड़ी है। वर्ष 2009-10 में यह 10 मिलियन थी। चौथे, भारत में शहरीकरण का धीमापन ग्रामीण और शहरी जनांकीय वृद्धि दरों में अंतर का परिणाम अधिक है। यह प्रवसन की धीमी अथवा नगण्य प्रायः दर का परिणाम नहीं है (तुम्बे, 2014)।

जनगणना प्रवसन के आंकड़े प्रवास के कुछ आयामों को तो अच्छी तरह दिखा देते हैं किन्तु चक्रीय प्रवसन और कार्य हेतु स्त्री प्रवसन को सटीक रूप से दर्शा पाने में इनकी कुछ गंभीर त्रुटियां भी रहती हैं। ऊपर बताए गए वैकल्पिक अनुमानों के अनुसार तो सकल कार्य शक्ति के 17 से 29 प्रतिशत अंश प्रवासी श्रमिक हैं। जनगणना 2011 ने कार्यशक्ति को 482 मिलियन आंका और आगे प्रक्षेपण पर 2016 में यह मान 500 मिलियन को पार कर जाएगा। यदि सकल कार्य शक्ति में प्रवासियों का अंश 20 प्रतिशत भी मान लें तो 2016 में भारत में प्रवासी कार्य शक्ति का मान 100 मिलियन व्यक्ति हो जाएगा।

---

6 इस समीक्षा के प्रकाशन तक जनगणना के केवल अनंतिम D-5 प्रवसन तालिकाएं ही जारी की थी। इससे जनगणना आंकड़ों के विश्लेषण हेतु प्रयोग पर संरोध लग जाते हैं।

7 10-19 वर्ष प्रसमूह पर केन्द्रित रहना विवाह आदि के कारण प्रवसन को न्यूनतम करता है।

8 2001 की जनगणन के अनुसार किसी भी जनपद से बाहर पुरूषों के प्रवसन में आधे के लगभग आर्थिक कारणों से हो रहे थे। इस मापक में अंतर्राष्ट्रीय प्रवसन भी सम्मिलित है, किन्तु सकल जनसंख्या के अनुपात में इसका बहुत कम अनुपात रह जाता है। केरल एक अपवाद है, और इसके आंकड़ों में किया गया समंजन परिशिष्ट में समझाया गया है।

9 चक्रीय प्रवासि जन अस्थाई काम की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर जाते रहते हैं।

रेखाचित्र 1 : राज्य स्तरीय प्रसमूह आधारित प्रवसन मापक : 2001-11 बनाम 1991-2001

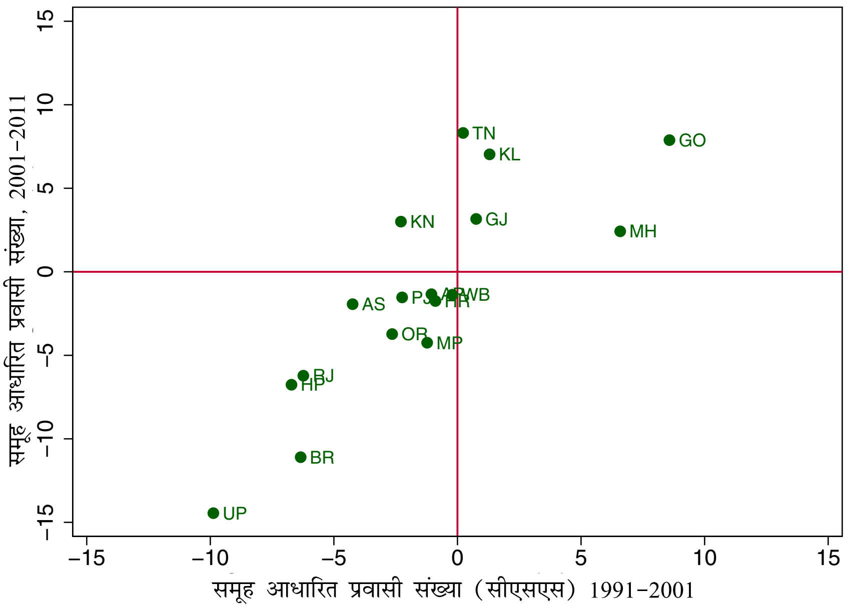

तालिका 2 : चुने हुए राज्यों में प्रसमूह आधारित प्रवसन मापक (CMM), 1991-2011

राज्य	सीएमएम 1991-2001 (%)	सीएमएम 2001-2011 (%)	20-29 समूह में निवल प्रवास 1991-2001 (हजार)	20-29 समूह में निवल प्रवास 2001-2011 (हजार)
दिल्ली	46.1	15.6	887	466
तमिलनाडू	0.2	8.3	26	1,013
गोआ	8.6	7.9	22	19
केरल	1.3	7.0	395	900
गुजरात	0.8	3.2	69	343
कर्नाटक	-2.3	3.0	-224	348
महाराष्ट्र	6.6	2.4	1,064	507
आंध्र प्रदेश	-1.1	-1.3	-148	-218
पश्चिम बंगाल	-0.2	-1.4	-30	-235
पंजाब	-2.2	-1.5	-99	-82
हरियाणा	-0.9	-1.7	-34	-86
असम	-4.2	-1.9	-209	-114
ओडिशा	-2.6	-3.7	-173	-290
मध्यप्रदेश*	-1.2	-4.2	-166	-765
राजस्थान	-6.2	-6.2	-602	-791
हिमाचल प्रदेश	-6.7	-6.8	-80	-90
बिहार*	-6.3	-11.1	-1,135	-2,695
उत्तर प्रदेश*	-9.9	-14.4	-2,955	-5,834
कुल (Major Sending States)			-5,855	-11,200

स्रोत : परिशिष्ट 1 में CMM रचना पर टिप्पणी देखें, केरल सं. अंतर्राष्ट्रीय प्रवसन का समंजन भी वहीं से, *अविभाजित राज्य

12.13 रेखाचित्र 1 और तालिका 2 में 1990 और 2000 के दशकों के CMM मानों में आए परिवर्तन दिखाए गए हैं। निवल प्रवास ग्रहण करने वाले राज्यों में कर्नाटक नया-नया शामिल हुआ है (देखें रेखाचित्र का उत्तर-पश्चिम चतुर्थ खंड)। महाराष्ट्र में आंतरिक दर कम हुई है किन्तु तमिलनाडु और केरल में इसमें वृद्धि हुई है। यह भारतीय आंतरिक प्रवसन में दक्षिणी प्रांतों के आकर्षण को दर्शा रहा है। मध्य प्रदेश, बिहार और उत्तर प्रदेश से बाहर की ओर प्रवसन में वृद्धि हुई है किन्तु असम में कमी आई है।

12.14 इस CMM विश्लेषण का एक उद्धरण दे रहे हैं : गुरूग्राम जनपद में बाहर से प्रवासी कर्मियों का आगमन बहुत होता है। यहां 2001-11 में 20-29 के वय प्रसमूह में 29 प्रतिशत का उछाल आया है जबकि पूर्वी उत्तर प्रदेश के प्रवास स्रोत माने जाने वाले जनपद आजमगढ़ में इसी अवधि में इस समूह में 24 प्रतिशत की कमी आई है। ये आंकड़े प्रसमूह मृत्युदर के समंजन के बाद प्राप्त हुए हैं। अत: इन जनपदों के CMM अंक क्रमश: 29 और (-)24 हैं। इसी प्रकार 2001-11 में राज्य स्तर पर CMM अंक (-)15 (उत्तर प्रदेश) और 15 (दिल्ली) आंकलित हुए हैं।

12.15 रेखाचित्र 2 राज्यों के CMM अंकों और उनकी प्रतिव्यक्ति आय के स्तरों में सशक्त धनात्मक संबंध दिखा रहा है। अपेक्षाकृत कम विकसित बिहार और उत्तर प्रदेश से प्रवासी प्रवाह होता है। अपेक्षाकृत अधिक विकसित राज्यों के धनात्मक CMM अंक वहां प्रवासियों के आगमन को सूचित कर रहे हैं। ये राज्य हैं : गोआ, दिल्ली, महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक।

12.16 सभी राज्यों में बाहर से आए हुए निवल 20-24 वर्ष आयु के प्रसमूह के व्यक्तियों की संख्या 2001-11 की अवधि में 11 मिलियन से अधिक रही। यह 1991-2001 की अवधि की 6 मिलियन संख्या से बहुत बड़ी वृद्धि है। इन दोनों ही अवधियों में प्रवासियों में 80 प्रतिशत से अधिक पुरूष ही थे।

रेखाचित्र 2 : CMM बनाम राज्यों की वास्तविक आय

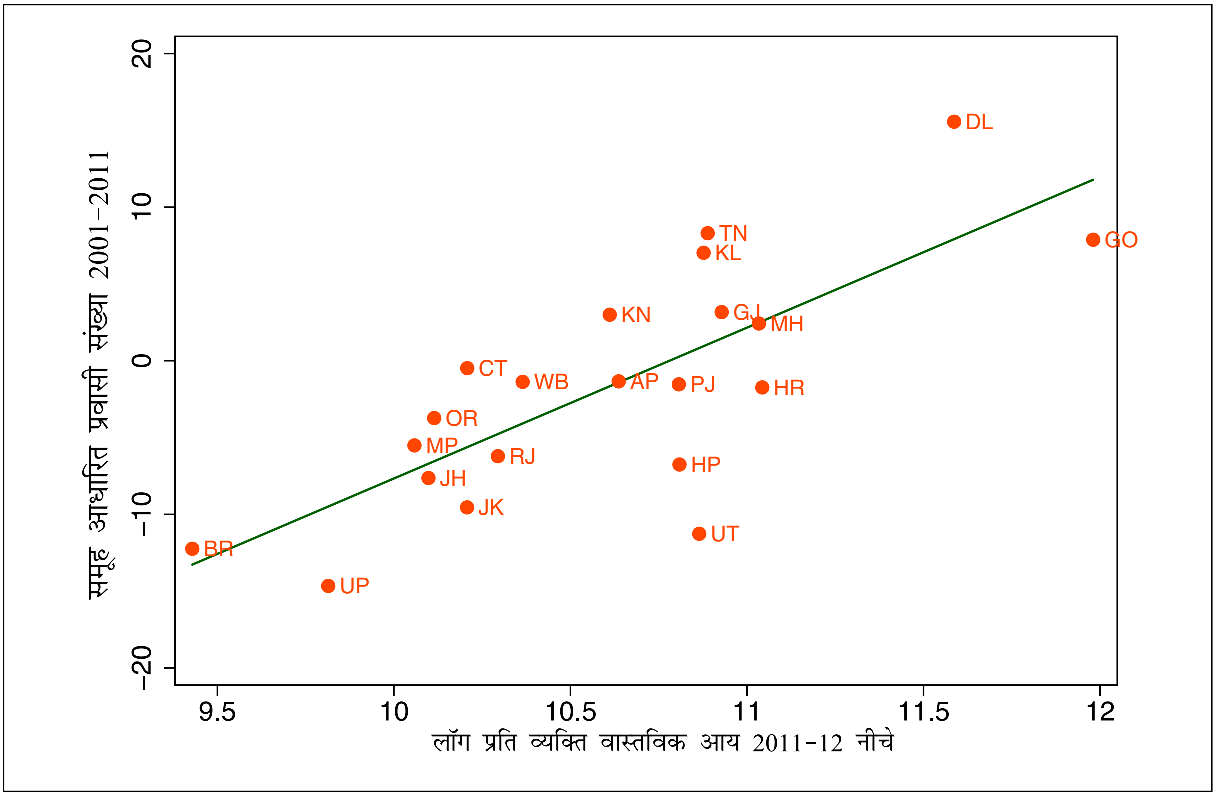

स्रोत: **परिशिष्ट 1 में ब्डड की रचना और केरल (KL) से अंतराष्ट्रीय प्रवसन के समंजन के लिए टिप्पणी देखें। वास्तविक आय के लिए CSO के आंकड़ों का प्रयोग किया गया है।**

12.17 जनगणना 2001 के अनुसार 20–29 वय प्रसमूह सभी प्रवासियों और आर्थिक कारणों से प्रसवन करने वालों का पाँचवां भाग ही था। अतः इस संख्या को पाँच से गुणाकर राज्य के बाहर से 2001–11 की अवधि में आए प्रवासियों की संख्या CMM विधि से 55 मिलियन अनुमानित होती है।

12.18 रेखाचित्र 3 में 1991–2001 तथा 2001–11 की अवधियों के जनपद स्तरीय CMM अंकों के आबंटन दिखाए गए हैं।[10] इस अवधि में यह CMM आबंटन बायीं ओर खिसक गया है। इससे संकेत मिल रहा है कि अब पहले की अपेक्षा अधिक जनपदों से लोग काम के लिए बाहर जाने लगे हैं। साथ ही इस आबंटन का प्रसार-विस्तार भी अधिक हो गया है, इसका आशय है कि अब उच्च गतिशीलता जनपदों (स्रोत और लक्ष्य) की संख्या में वृद्धि हो रही है।[11]

12.19 अवधि 2001–11 में जनपद से बाहर प्रवासियों की संख्या का योग 16 मिलियन से अधिक हो गया था और इनमें से 75 प्रतिशत से अधिक पुरूष थे। पिछले राज्य स्तरीय आंकलन की भांति अन्य प्रसमूहों तक इन आंकड़ों को विस्तृत करने के लिए इन्हें 5 से गुणा करने पर भारत में अपने मूल जनपद से बाहर काम करने वाले निवल प्रवासियों की संख्या 80 मिलियन से अधिक हो जाती है।

12.20 परिशिष्ट 1 की तालिका 1 में CMM के चर्म स्तरीय मानों के आधार पर देश के कुछ प्रमुख गतिशील जनपदों की सूची बनाई हैं। यह यही बता रही है कि इन जनपदों में अभी कुछ समय से अतिअधिक गतिशीलता दिखाई देने लगी है। बहुत अधिक प्रवासियों को स्वीकार करने वाले में गुरूग्राम, दिल्ली और मुम्बई क्षेत्र प्रमुख हैं। प्रवसन के स्रोत के रूप में अधिक सक्रिय जनपद उत्तर प्रदेश और बिहार में स्थित हैं।

12.21 एक और महत्वपूर्ण नवविकास महिला प्रवासियों की बढ़ती हुई भूमिका है। वर्ष 2000 के

रेखाचित्र 3 : जनपद स्तरीय CMM आबंटन

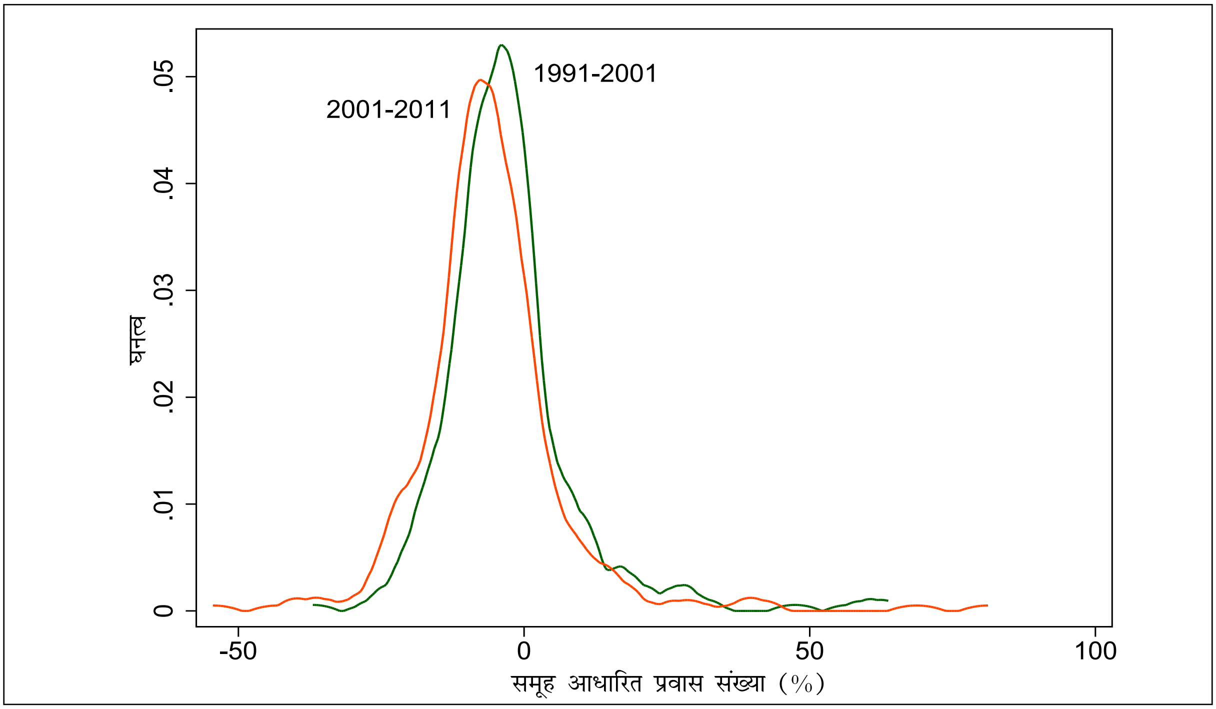

स्रोत : **CMM की रचना के लिए देखें परिशिष्ट** 1A

[10] प्रतिदर्श केवल 300 के लगभग जनपदों तक सीमित है, जिनकी सीमाएं 1991–2011 के बीच अपरिवर्तित रही है। ये भारत की जनसंख्या के लगभग 60 प्रतिशत के समान है।

[11] उच्च अंतर्राष्ट्रीय प्रवसन वाले जनपदों को निकाल देने के बाद भी परिणाम अप्रभावित रहते हैं, जैसा कि NSS 2007–08 के आंकड़ों में दिखाई दिया था।

रेखाचित्र 4 (क) : जनपद स्तर पर CMM आबंटन, महिलाएं

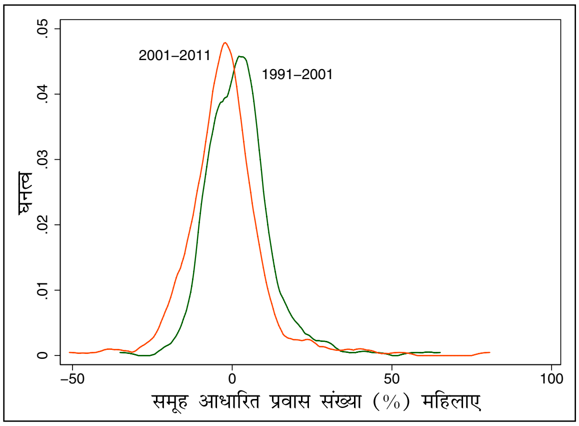

रेखाचित्र 4 (ख) : जनपद स्तर पर CMM आबंटन, पुरूष

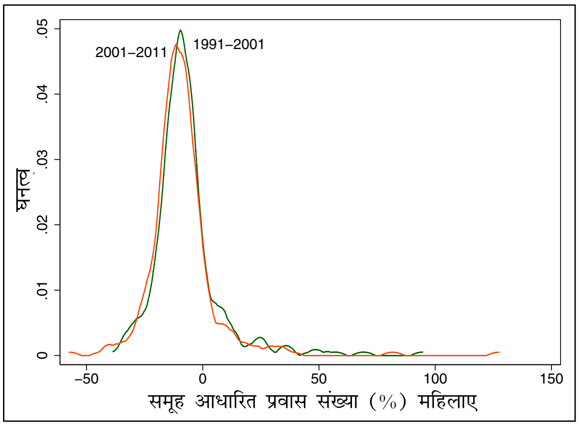

स्रोत: सीएमएम संरचना संबंधी नोट के लिए परिशिष्ट 1 देंखे।

प्रारंभिक वर्षो तक तो प्रवसन मूलत: पुरूष वर्ग से जुड़ी सामाजिक–आर्थिक घटना रहता था। किन्तु उसी दशक में एक बड़ा बदलाव आया है : अब महिलाएं भी प्रवासी कर्मियों की सूची में बढ़चढ़ कर शामिल होने लगी हैं। वस्तुत: इनके बाहर की ओर प्रवास में वृद्धि रूप बदलाव पुरूषों से भी अधिक रहा है। यह जनसंख्या आंकड़ों की समीक्षा से संबंधित भाग की चर्चा–व्याख्या (रेखाचित्र 4क और 4ख) के अनुरूप ही है।

(ख) रेलयात्री आंकड़ों पर आधारित प्रवसन मापन

12.22 रेल मंत्रालय से 2011–16 की अवधि में प्रत्येक स्टेशन युग्म के लिए बिना आरक्षण कराए यात्री परिवहन की मासिक जानकारी प्राप्त की गई थी। इसके विश्लेषण का विवरण तो परिशिष्ट 2 में है, किन्तु यहां हमारा विचार ऐसे आरक्षणहीन यात्रियों को काम के लिए प्रवास करने वाले व्यक्तियों के तुल्य मानने का है। ये यात्री

रेखाचित्र 5 : अखिल भारतीय स्तर पर कुल निवल प्रवाह

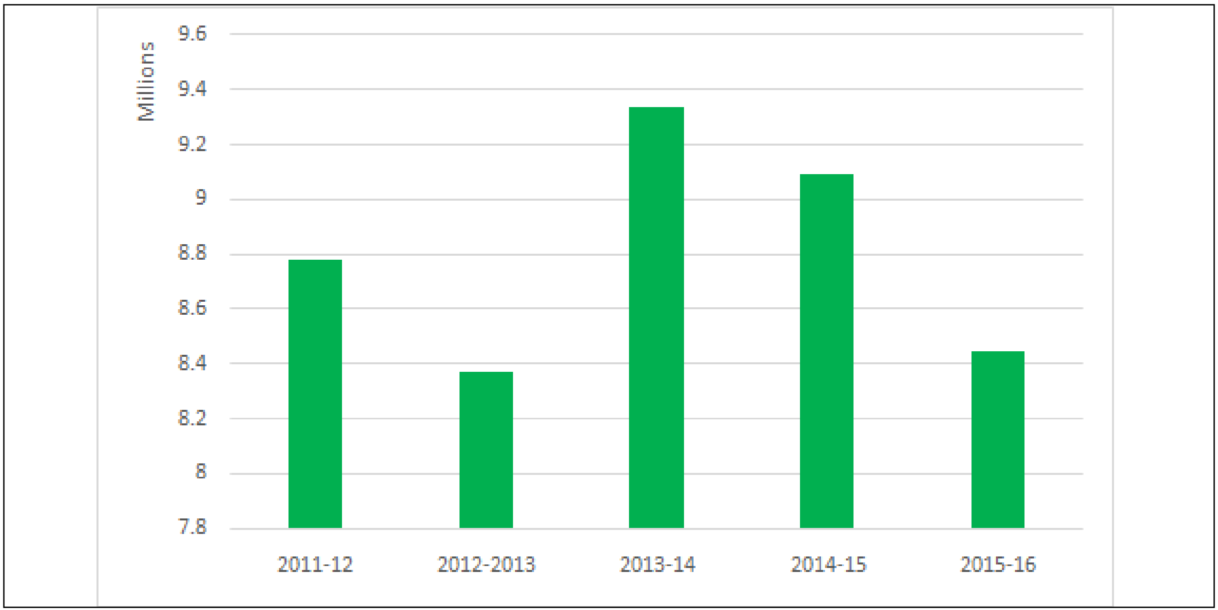

***स्रोत:* सभीक्षा की गणनाएं**

रेखाचित्र 6 : औसत निवल प्रवाह : राज्य स्तर पर

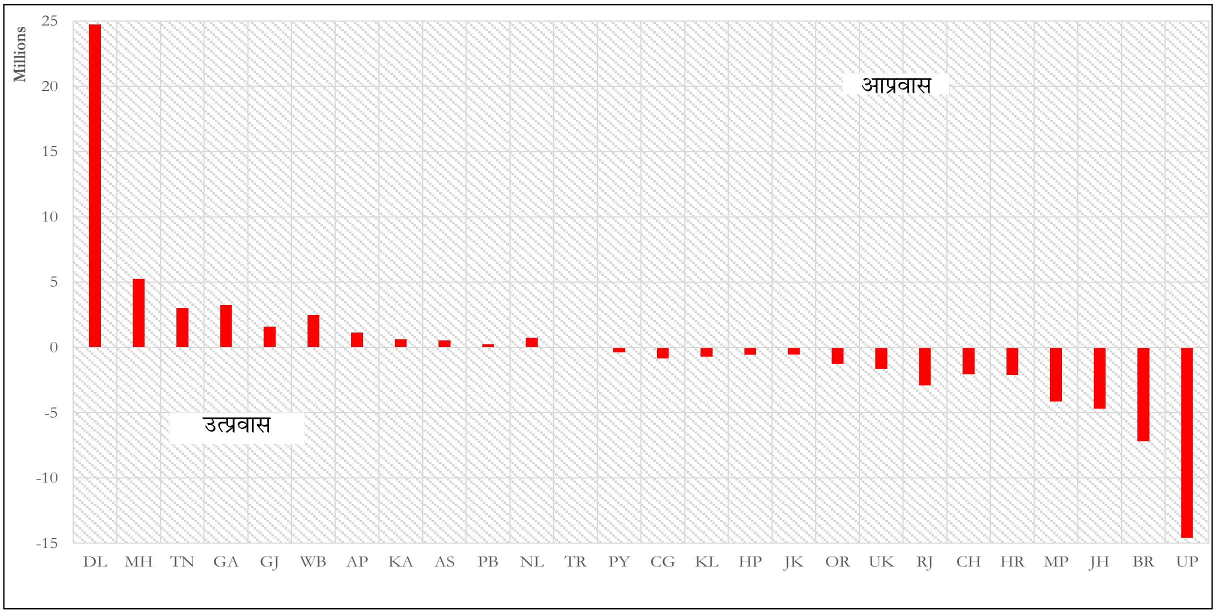

स्रोत: **समीक्षा की गणनाएं**

कम समृद्ध वर्ग के होते हैं जिनके काम की तलाश में यात्रा करने की संभावना अधिक होती है। यह वर्ग रेलवे की यात्री वहन क्षमता (गाड़ी में सीटों की संख्या) से भी कम प्रभावित होता है, अत: ये यात्री समूह यात्रा की मांग को दर्शाते हैं, जबकि आरक्षण पूर्ण यात्री वर्ग का आवागमन तो सीटों की उपलब्धता पर निर्भर रहता है। अगले कुछ अनुच्छेदों में हम इस विश्लेषण के मुख्य परिणामों का वर्णन कर रहे हैं।

प्रवसन का आकार और स्वरूप

12.23 रेखाचित्र 5 में 2011-12 के वित्त वर्ष से प्रारंभ कर पिछले 5 वर्षों के अखिल भारतीय स्तर पर निवल यात्री प्रवाह दिखाए गए हैं। अखिल भारतीय निवल प्रवाहों की औसत लगभग 9 मिलियन रही है।[12] इसका स्तर जनगणना द्वारा सुझाए गए स्तरों से कहीं उच्च पर 2013-14 में अपने शिखर स्तर को पा गया था।[13]

12.24 रेखाचित्र 6 में 26 राज्यों से निवल प्रवाह दर्शाए गए है, धनात्मक संख्याएं प्रवासियों के आगमन की अधिकता दर्शाती हैं तो ऋणात्मक प्रवासियों के जाने का अधिक प्रवाह दिखा रही हैं। सबसे बड़ा प्रवासी पाने वाला क्षेत्र दिल्ली और आसपास का रहा, जिसमें 2015-16 में देश भर के नए प्रवासी वर्ग के आधे से अधिक व्यक्तियों ने प्रवेश किया था। इसके दूसरी ओर, लगभग आधे नए नए प्रवासियों का मूल स्थान बिहार और उत्तर प्रदेश में ही स्थित था। महाराष्ट्र, गोआ, तमिलनाडू में निवल रूप से प्रवासी आगमन हुआ तो झारखंड और मध्य प्रदेश भी निवल प्रवासियों के मुख्य मूल स्थानों में सम्मिलित रहे।

12.25 परिशिष्ट 2 का रेखाचित्र 1 दर्शा रहा है कि प्रवसन के राज्य की श्रम आपूर्ति पर प्रभाव एक समान नहीं होते। बाहर की ओर प्रवास करने वाले श्रमिक राज्य की कार्य करने वाली आयु की जनसंख्या का एक बड़ा अंश होते हैं। यह बात गोआ, पुड्डुचेरी, नागालैंड और चंडीगढ़ जैसे छोटी जनसंख्या वाले राज्यों पर ही नहीं, विशाल राज्यों (उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड और मध्य प्रदेश) पर भी समान रूप से लागू होती है। पूरे भारत की लगभग एक प्रतिशत कार्यकारी आयु की जनसंख्या वार्षिक निवल प्रवसन प्रवाह में सम्मिलित रहती है।

[12] यह निवह प्रवासी प्राप्त करने वाले राज्यों की निवल संख्याओं का योग है। प्रत्येक राज्य से निर्यात और आयात के आंकड़े जोड़कर कुछ अन्य अनुपात संभव हैं। यदि ये विधि अपनाई जाए तो निवल अंतर्राज्जीय यात्री परिवहन 13 मिलियन पर पहुंच जाता है। समस्त आंकड़ा वितान पर निवल प्रवाह से औसत करने पर ये मान 8.8 मिलियन रह जाता है, जो हमारे इस अनुच्छेद के अनुमान के निकट ही है।

[13] हमने 200 किलोमीटर से कम चलने वालों की संख्या शामिल नहीं की है, यह न्यूनांकन का कारण बन सकता है।

रेखाचित्र 7 : शीर्ष अंतर्राज्यीय प्रवसन मार्ग, जिन पर यात्री घनता अधिकतम है

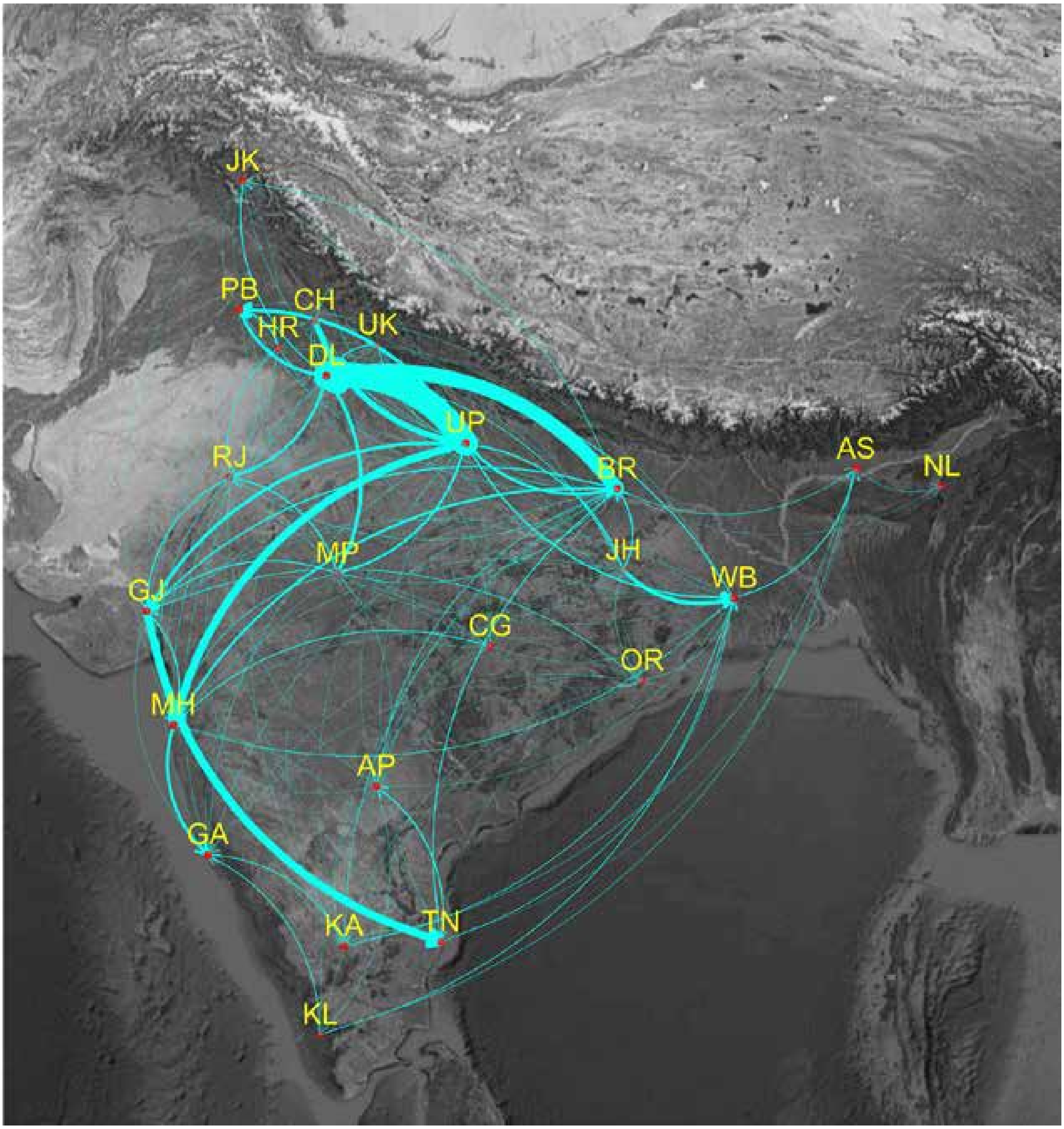

12.26 रेखाचित्र 7 में सबसे बड़े प्रवास मार्गों का मानचित्र बनाया गया है। दिल्ली, महाराष्ट्र, तमिलनाडू और गुजरात जैसे प्रांत उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश के हिन्दी भाषी क्षेत्रों से प्रवासियों के बहुत विशाल समुदायों को आकृष्ट करते हैं। पश्चिम बंगाल में कोलकाता निकटवर्ती झारखंड, ओडिशा और पूर्वी उत्तर प्रदेश से प्रवासियों को आकर्षित करता है। यह एक प्रकार से रैबेन्स्टीन (1885) के एक प्रवसन नियम की संपुष्टि करता है। वह नियम था, ''एक अवशोषण और संविलियन की प्रक्रिया चलती है, जिसमें पहले एक तीव्रगति से संवृद्धिशील नगर के आसपास से व्यक्तियों का एक प्रवाह आता है, उसके बाद जो कमियां रह जाती हैं उन्हें पूरा करने के लिए तब तक दूरस्थ क्षेत्रों से प्रवाह आते रहते हैं जबतक कि पूरी आकर्षण शक्ति का प्रयोग नहीं हो जाता।'' गुजरात और महाराष्ट्र के बीच एक रोचक गत्यात्मकता के दर्शन हो रहे हैं : अब सूरत नगर मुम्बई के लिए एक प्रति-आकर्षण केन्द्र बन गया है। यह अपने निकटवर्ती महाराष्ट्र के जनपदों से

रेखाचित्र 8 : राज्यानुसार यात्री प्रवाहों का तुरंत चित्रांकन, 2015-16

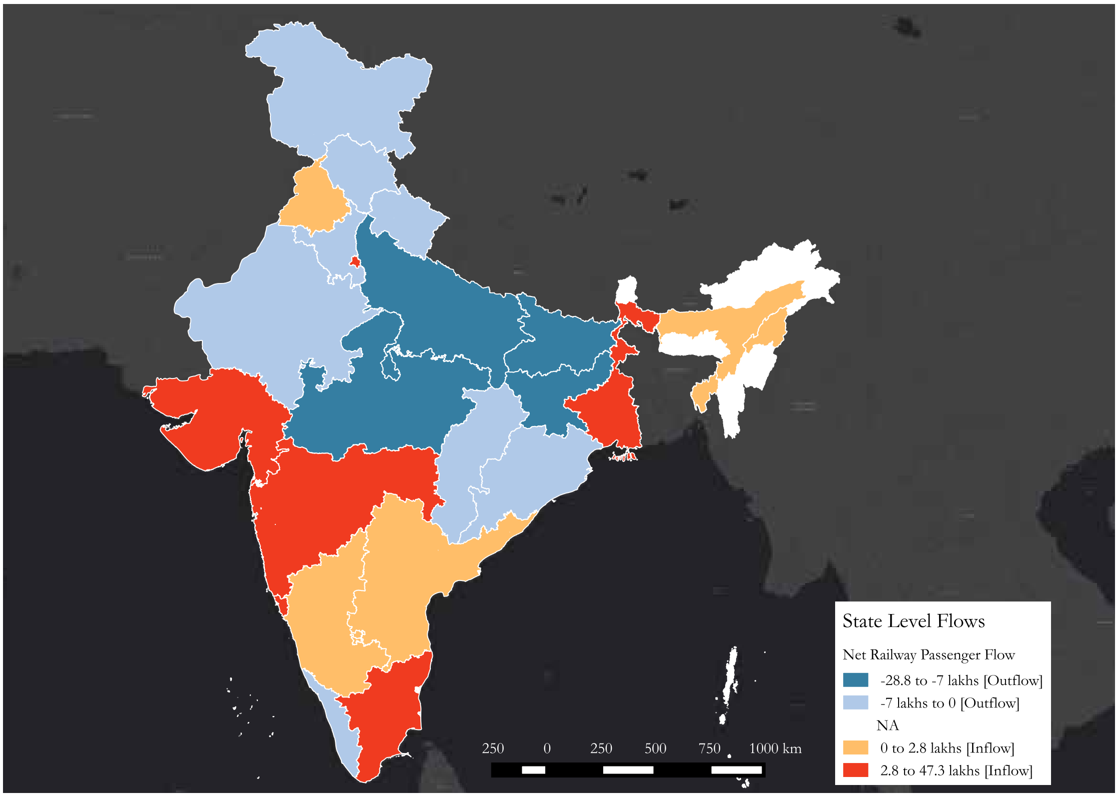

रेखाचित्र 9 : यात्री प्रवाहों का जनपदानुसार तुरंत चित्रांकन, 2015-16

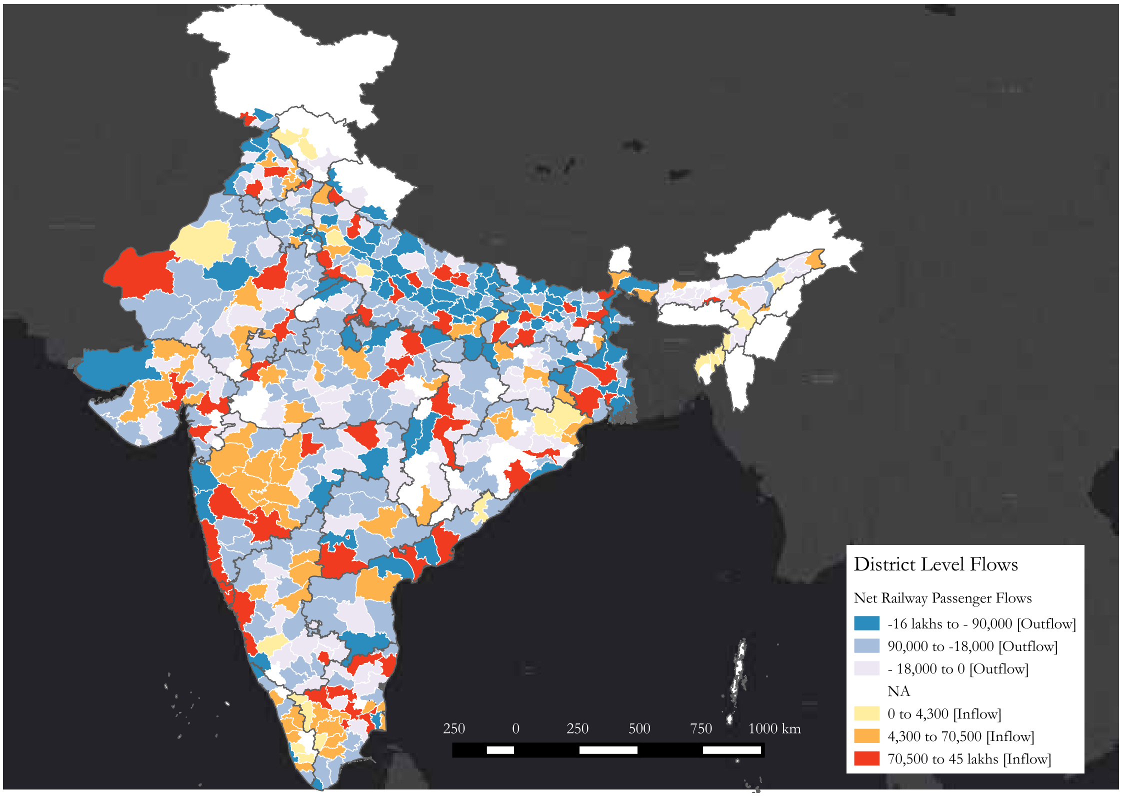

बॉक्स 2 : प्रवसन का गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान

वस्तुओं, सेवाओं और व्यक्तियों के प्रवाहों का विश्लेषण गुरूत्वाकर्षण प्रतिमानों के माध्यम से भी किया गया है। भारत के आंतरिक व्यापार पर इन प्रतिमानों के व्यवहारिक प्रयोग पर अध्याय 11 में चर्चा हुई थी। गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान एक आंकड़ा आधारित अवलोकन है। इसके अनुसार किन्हीं दो भू-क्षेत्रों के बीच प्रवासी/यात्री प्रवाह उन क्षेत्रों की आर्थिक गतिविधियों और जनसंख्या से प्रत्यक्षानुपाती होते हैं तथा उनके बीच के भौतिक अंतरों के विलोमानुपाती होते हैं। भूगोलशास्त्रियों ने पहले पहल इन प्रतिमानों का प्रवसन और गतिशीलता के स्वरूपों के अध्ययन के लिए प्रयोग किया था। रैवेन्स्टीन (1885) ने अपने अध्ययन में प्रवसन के स्वरूप का वैज्ञानिक विश्लेषण किया था। वाल्डो टोब्लर (1970) ने गुरूत्वाकर्षण के समीकरण को भूगोलशास्त्र का प्रथम नियम घोषित करते हुए लिखा है, ''प्रत्येक चीज का प्रत्येक अन्य चीज से संबंध है, किन्तु निकटवर्ती चीजों के साथ यह संबंध दूरवर्ती की अपेक्षा अधिक घनिष्टापूर्ण रहता है।''

अर्थशास्त्री भी विभिन्न देशों एवं भूक्षेत्रों के बीच प्रवासियों के प्रवाहों के अध्ययन और पूर्वाकलन के लिए गुरूत्वाकर्षण समीकरण का प्रयोग करते आ रहे हैं। नीडर्कोन, जे.ए, आदि (1969), राउल रामोस (2016), एंडरसन और वान विनकूप (2003) तथा एंडरसन (2010) ने इस विचार की आधारिक धारणाओं (यादृच्छिक उपयोगिता अधिकतमीकरण) का वर्णन किया है, जिनके सहारे अर्थशास्त्री प्रवसन प्रवाहों का अध्ययन और समीक्षा करते हैं।

आंकड़ों को विश्लेषण योग्य बनाने का विवरण परिशिष्ट 2 में है। तालिका 2 दिखा रही है कि स्तंभ 1, 2 में प्रतिमान का राज्य स्तर पर अनुमान लगाया जा रहा है और स्तंभ 3,4 में जनपद स्तर पर। यह रूपरेखा फासले[1], सांझी भाषा (हिन्दी[2], गैर-हिन्दी) तथा दो राज्यों के बीच सांझी सीमाओं[3] के प्रभाव का आंकलन कर रही है। राज्य स्तरीय आंकलन हमें यह भी समझा देता है कि सीमाएं जनप्रवाहों में किस सीमा तक बाधक होती है। परिणाम दिखा रहे हैं कि अंतर में 1 प्रतिशत की वृद्धि से प्रवाह में 1.66 प्रतिशत की कमी हो जाती है।[4] यह परिणाम अन्य निष्कर्षों के अनुरूप है और विभिन्न वर्षों के आंकड़ों को लेकर गणना करने पर भी यह सुदृढ़ बना रहता है। यह बात भी रोचक और आश्वस्तिकारी है कि इसका गुणक व्यापार प्रवाह के गुणक से अधिक है। अत: स्पष्ट होता है कि भारत में भी व्यक्तियों का प्रवाह वस्तुओं की अपेक्षा अधिक कठिनाईपूर्ण होता है।

जैसा अपेक्षित भी है, सन्निकटता या राज्यों की सीमाओं का मिलना एक सकारात्मक कारक है अर्थात साथ वाले राज्यों में प्रवसन, (राजधानियों के बीच अंतर के समंजन के बाद भी) अधिक होता है। साथ ही सांझी भाषा का तदर्थचर महत्वपूर्ण नहीं निकला, अर्थात स्रोत और लक्ष्य प्रांतों की भाषाओं के अंतर प्रवसन प्रवाह की व्याख्या में महत्वपूर्ण नहीं होते। दूसरे शब्दों में, भाषाओं के अंतर प्रवासी प्रवाह को बाधित नहीं करते। चाहे राज्य स्तर पर मापन करें या जनपद स्तर पर, सकल और निवल प्रवाहों के लिए अनुमान/परिणाम बहुत समान प्राय: ही हैं। दूसरे शब्दों में स्तंभ 1 और 3 के आंकलित गुणक क्रमश: 2 और 4 के गुणकों से मिलते जुलते ही हैं।

जनपद स्तर के अनुमान यह जांचने में सहायता करते हैं कि क्या राज्यों की सीमाएं प्रवसन में बाधक हैं। एक ही जनपद के लिए प्रयुक्त तदर्थ चर का मान धनात्मक है और महत्वपूर्ण भी : स्तंभ का गुणक सुझाता है कि राज्यों के भीतर अंत:राज्यीय प्रवाह अंतर्राज्यीय प्रवाहों से 4 गुणंक अधिक प्रबल हैं।[5, 6]

---

1 फासले के मापन राज्यों की राजधानियों के बीच बृहत वृत द्वारा होता है।

2 इस अध्ययन में बिहार, उ. प्रदेश, म. प्रदेश, छत्तीगढ़, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड और झारखंड को हिन्दी भाषी तथा अन्य राज्यों को अहिंदी भाषी माना गया है।

3 स्रोत और लक्ष्य राज्य/जनपद स्तरीय अचल प्रभावों का प्रयोग कर प्रवसन की आंचलिक विशेषताएं समाहित की गई हैं। अचल प्रभावों में जीडीपी और राज्यों जनपदों की जनसंख्या के अंतर के प्रभाव भी सम्मिलित हो जाते हैं।

4 राज्य स्तरीय प्रतीपगमन का आंकलन निवल आयात पर करें या निवल निर्यात पर, परिणाम वहीं रहते हैं। निवल अंक, अपनी रचना के अनुसार ही सममित होते हैं।

5 नए रेलमार्गो के खुलने, स्थान युग्मों के बीच नई ट्रेनें शुरू होने के प्रभाव इस आंकलन में सम्मिलित नहीं किए गए हैं। युग्मीय अचल प्रभाव भी समाहित नहीं किए गए, क्योंकि उनके बीच का अंतर तो अपरिवर्तित ही रहता है।

6 सुदृढ़ मानक त्रुटियों का अनुमान लगाने के लिए आयातक जनपदों के बहुस्तरीय संगुच्छ बनाए गए हैं। यह कार्य आयात वर्षों के लिए भी किया गया है।

व्यक्तियों को बड़ी संख्या में आकर्षित कर रहा है। इसी प्रकार के प्रति आकर्षण क्षेत्र प्रभाव दिल्ली को लेकर जयपुर और चंडीगढ़ में दिखाई दे रहे हैं।

12.27 अधिकांश चित्र तो पूर्वापेक्षाओं के अनुरूप ही हैं, किन्तु विश्लेषण से कुछ चौंकाने वाले रहस्योद्घाटन भी हुए हैं। उदाहरण के लिए गुजरात से ही तमिलनाडू को लगभग 7 लाख व्यक्तियों का वार्षिक प्रवाह चल रहा है।

तालिका 1: ग्रैविटी परावर्तन परिणाम

परिवर्ती लोग यात्री प्रवाह	राज्यस्तरीय यात्रियों का गौण[1]		जिला स्तरीय यात्री प्रवाह[2]	
	सकल प्रवाह	निवल प्रवाह	सकल प्रवाह	निवल प्रवाह
दूरी का लोग	**-1.858*** **	**-1.666*** **	**-1.924*** **	**-1.379*** **
	(0.049)	(0.087)	(0.045)	(0.044)
भाषा (हिन्दी) डमी	**0.150**	**-0.135**	**-0.123**	**-0.053**
	(0.104)	(0.191)	(0.094)	(0.091)
सामान्य सीमा डमी	**0.629*** **	**0.324** **	**0.538*** **	**0.390*** **
	(0.089)	(0.157)	(0.044)	(0.040)
समान राज्य डमी			**1.804*** **	**1.334*** **
			(0.086)	(0.084)
प्रेक्षण	3,165	1,584	597,395	337,065
आर-	0.88	0.78	0.54	0.50

1. निम्नलिखित के लिए नियत प्रभाव: आयात राज्य, निर्यात राज्य, वर्ष, आयात राज्य से परस्पर प्रभावित वर्ष, निर्यात राज्य से परस्पर प्रभावित वर्ष

2. निम्नलिखित के लिए नियत प्रभाव: आयात जिला, निर्यात जिला वर्ष, आयात जिले से परस्पर प्रभावित वर्ष, निर्यात जिले से परस्पर प्रभावित वर्ष

मानक गलतियां लघु कोष्ठकों में

**** p<0.01, ** p<0.05, * p<0.1*

12.28 रेखाचित्र 8 और 9 में वित्तवर्ष 2015-16 के निवल यात्री प्रवाहों का तुरंत अंकन किया गया है (ये क्रमशः राज्य और जनपद स्तर की जानकारी दे रहे हैं)। राज्य और जनपद स्तरों पर सकल और निवल, दोनों प्रकार के प्रवाहों का आंकलन किया गया है। भारत सरकार (2017) की प्रवसन पर कार्य दल की रिपोर्ट ने ऐसे 54 जनपदों की पहचान की है जहां से बड़े स्तर पर प्रवासियों की निकासी हो रही है। रेलयात्री परिवहन के आधार पर निवल प्रवाह के आंकलन ने भी इनमें से 40 जनपदों की सटीक रूप से पहचान की है (सफलता दर 75 प्रतिशत रही)। ऐसा ही प्रयास बाहर की ओर तथा अंदर की ओर प्रवसन वाले जनपदों के लिए CMM मापक (भाग II में) तथा रेलयात्री मापक के आधार पर किया गया है। यहां 72 में से 64, अर्थात बाहर की ओर प्रवसन वाले जनपदों में सफलता दर 89[14] प्रतिशत रही। साथ ही 23 में से 13, अर्थात 57[15] प्रतिशत अन्दर की ओर प्रवसन वाले जनपदों की पहचान में भी संगति रही।[16]

एक गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान का प्रयोग कर औपचारिक विश्लेषण

12.29 आइए अब अंत में बॉक्स 2 में व्याख्या किए गए आंकड़ों का प्रयोग कर व्यापार और प्रवसन का सांख्यिकी विश्लेषण करें। अंतर्राज्यीय प्रवाह का विश्लेषण करते समय श्रम प्रवाह पर अंतर का प्रबल नकारात्मक प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। यह प्रभाव वस्तु प्रवाहों पर प्रभाव से दुगुना सशक्त है (देखें अध्याय 11)। अन्तर्जनपद

[14] भागलपुर, बक्सर, गया, पटना, रोहतास, वैशाली (बिहार), रत्नागिरि, सिंधु दुर्ग (महाराष्ट्र), गंजम (ओडिशा), आगरा, अलीगढ़, इलाहाबाद, बस्ती, बुलंदशहर, गोंडा, मैनपुरी, मुरादाबाद, संत रवीदास नगर, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) जनपदों को भारत सरकार की समिति और ब्डड अंकों ने बाहर की ओर प्रवसन वाले जनपद माना है, किन्तु रेलयात्री मापक के अनुसार यहां अंदर की ओर प्रवसन चल रहा है।

[15] शोणितपुर (असम), चंडीगढ़, वल्साड (गुजरात), गुरूग्राम (हरियाणा), मुम्बई उपनगरीय (महाराष्ट्र), इन्दौर (मध्य प्रदेश), थिरूवल्लूर (तमिलनाडू), गौतम बु(नगर (उत्तर प्रदेश), वह जनपद हैं जिन्हें भारत सरकार की समिति और ब्डड अंको के आधार पर प्रवसन स्वीकारक माना गया है, किन्तु रेल यात्री सूचनाएं इन्हें प्रवसन का स्रोत बना देती है।

[16] इस त्रुटि की कारण इन जनपदों की प्रमुख रेल केन्द्रों के साथ निकटता हो सकती है। एक संकल्पना है कि इन जनपदों और रेल केन्द्रों के बीच का आवागमन मुख्यतः गैर रेल परिवहन द्वारा संपन्न होता है।

विश्लेषण में भी यही प्रभाव इसी रूप में स्पष्ट हुआ है। अर्थात हम कह सकते हैं कि सन्निकटता का प्रभाव बहुत प्रबल है। अन्तर या फासलों का समंजन करने के बाद भी जिन राज्यों की सीमाएं मिलती हैं उनके बीच प्रवसन प्रवाह अन्य राज्यों की अपेक्षा 65 प्रतिशत अधिक रहता है।

12.30 हमें एक सीमा प्रभाव भी मिला है अर्थात प्रांत की सीमाओं के भीतर प्रवासी प्रवाह (सीमाओं से बाहर की अपेक्षा) अधिक प्रबल है। एक अनुमान तो सुझाता है कि औसतन राज्य में आंतरिक प्रवसन अन्तर्राज्यीय प्रवसन की तुलना में चार गुणा अधिक सशक्त है। कोण आदि (2016) ने एक अलग प्रतीपगमन रूपरेखा का प्रयोग कर एक राज्य के साथ लगते जनपदों और उसके परस्पर साथ नहीं लगने वाले जनपदों के लिए इन गुणंकों के मान क्रमश: 8 और 2.8 के बीच पाए हैं।

12.31 साथ ही हम पा रहे हैं कि भाषा के प्रवासी प्रवाहों में बाधक रहने का कोई साक्ष्य नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे विश्लेषण (ग्रोग्गर, 2011) ने भाषा का बड़ा सशक्त प्रभाव पाया गया है। उनका निष्कर्ष रहा है कि समान भाषा-भाषी देशों के बीच प्रवासी प्रवाह अधिक होते हैं। व्यापार में भी सांझी भाषा का प्रभाव 16 से 30 प्रतिशत अधिक (उन देशों की तुलना में जिनसे भाषा नहीं मिलती) प्रबल पाया गया है (सुब्रमण्यम और वी, 2007, रोज, 2003)। किन्तु भारत के भीतर व्यापार और श्रम प्रवाहों में भाषा का कोई प्रभाव नहीं दिखाई पड़ता (अर्थात हिन्दी भाषी राज्यों का तदर्थ चर महत्वहीन रहा है)।

12.32 पारदर्शिता की भावना का अनुसरण करते हुए अब हम विचित्रतापूर्ण बातों की भी चर्चा कर रहे हैं जो हमारे विश्लेषण में उभर कर आई हैं। वर्ष 2011-12 से 2015-16 की अवधि में केरल प्रवासियों का एक निवल निर्यातक रहा है। यह निष्कर्ष पुराने अवलोकन के विपरीत है। छोटे राज्य और संघशासित क्षेत्र (दिल्ली, गोआ, चंडीगढ़, पुड्डुचेरी और नागालैंड) के आंकड़े यहां दोनों दिशाओं में पूर्ववर्ती अध्ययनों से कहीं अधिक सशक्त प्रवाह दिखा रहे हैं। ये राज्य क्षेत्रफल की दृष्टि से छोटे हैं, और पुड्डुचेरी को छोड़ सभी की सीमाएं अनेक अन्य राज्यों से मिलती है। यह भी संभव है कि प्रवासीजन इन राज्यों को आगे किसी अन्य राज्य की ओर बढ़ने से पूर्व रास्ते का पड़ाव ही मानकर चल रहे हों।

IV. निष्कर्ष

12.33 डॉ. अम्बेडकर का कथन था 'गतिशील भारत एक मंथनशील भारत भी है'। ये नवीन अनुमान प्रतिवर्ष 5 से 9 मिलियन व्यक्तियों के आंतरिक प्रवसन की जानकारी दे रहे हैं। यह श्रम गतिशीलता का अनुमान पुराने अनुमानों से बहुत अधिक है। इस अध्ययन की एक और रोचक जानकारी के अनुसार 2000 के दशक में महिलाओं के प्रवासन में बहुत तेजी आई है। इसकी दर पुरूषों की प्रवसन दर से दुगुनी हो गई है।

12.34 हां प्रवसन का मुख्य स्वरूप पहले जैसा ही है कम समृद्ध राज्यों और जनपदों से अधिक लोग काम की तलाश में बाहर निकलते हैं और धनी महानगरों की ओर बहुत से श्रमिक आकर्षित होते है। धीरे-धीरे दक्षिण भारत के नगरों की ओर प्रवासी प्रवाहों में वृद्धि हुई है, इससे पिछले कुछ समय से नए प्रवास मार्गों के खुलने के संकेत मिल रहे हैं। गुरूत्वाकर्षण प्रतिमान के प्रारंभिक साक्ष्यों के अनुसार व्यक्तियों के प्रवास में भाषा कोई महत्वपूर्ण बाधा नहीं है। यह निश्चय ही देश की नींव का निर्माण करने वाले महापुरूषों की आशंकाओं का निवारण करने वाला निष्कर्ष होगा।

12.35 इस अध्ययन ने भावी वर्षों में प्रवसन में वृद्धिमान दर पर संवृद्धि का पूर्वाकलन किया है। आंकड़े बता रहे हैं कि आंतरिक प्रवसन निरंतर वृद्धिमान है। 2000 के प्रथम दशक में यह 1990 के दशक से लगभग दुगुना हो गया है। एक संभावी व्याख्या यही है कि प्रवास से होने वाली आय और रोजगार की अपेक्षाएं अब घरबार छोड़ने की लागतों और जोखिमों से अधिक हो गई है। उच्चतर संवृद्धि और आर्थिक सुअवसरों की बहुलता-प्रचुरता संभवत: प्रवसन की इसी तेजी की उत्प्रेरक रही है।

12.36 यह त्वरण एक ऐसे समय में संभव हुआ है जब अनेक प्रांतों में रोजगार के लिए मूल निवासी प्रमाण पत्रों, की अनिवार्यता की जा रही है, विभिन्न हितलाभों कानूनी और अन्य अधिकारिताओं को स्थानांतरित करने में बाधाएं है। इस प्रकार के जन मंथन को चलाए रखने के लिए इन नीतिगत बाधाओं को हटाना होगा। खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और सामाजिक सुरक्षा की एक आधारिक रूपरेखा प्रवासी कर्मियों के लिए अनिवार्य होती हैं। इन्हें विभिन्न राज्यों के बीच सहमति के माध्यम से एक स्वपंजीकरण प्रणाली द्वारा अन्तर्णीय बनाया जा सकता है। वैसे आज भी प्रवासी श्रमिकों के सेवार्थ

अनेक प्रकार की योजनाएं चल रही जिनका कार्यान्वयन राज्य सरकारों के स्तर पर होता है। इसीलिए प्रवसन की राजकोषीय लागतों के बीच अंतर्राज्यीय स्तर पर एक समन्वय किया जाना आवश्यक हो रहा है। आन्तरिक रूप से घर धन प्रेषण का बाजार आज रू. 1.5 लाख करोड़ का हो चला है और इसका लाभ उठाकर स्रोत प्रदेश में बसे उन प्रवासियों के परिवारों को भी वित्तीय समाहन के साथ जोड़ा जा सकता है।[17] ऐसे कदम प्रवसन के क्षेम हितलाभों में वृद्धि करोंगे और देश का श्रम बाजार और बेहतर रूप से एकीकृत हो पाएगा।

संदर्भ

1. Aajeevika Bureau (2012). Creative Practices and Policies for Better Inclusion of Migrant Workers: The Experience of Aajeevika Bureau. Udaipur.
2. Anderson, James E.(2010). "The Gravity Model" Annual Review of Economics .
3. Anderson, James E. and Eric van Wincoop (2003), "Gravity with Gravitas: A Solution to the Border Puzzle," American Economic Review, March 2003, 93, 170-192.
4. Chandrasekhar, S. (2011). "Workers commuting between the rural and urban: Estimates from NSSO data." Economic & Political Weekly, 46(46), 22-25.
5. Deshingkar, P, and Akter, S. (2009). Migration and Human Development in India, Human Development Research Paper 2009/13. New York: United Nations Development Programme.
6. GoI (2017). Report of the Working Group on Migration in India. Government of India: Ministry of Housing and Urban Poverty Alleviation.
7. Guha, R. (2007), "India After Gandhi: The History of the World's Largest Democracy" Harper Collins.
8. Grogger, J. amd Hansen, G. (2011), "Income Maximization and the Selection and Sorting of Intenational Migrants", Journal of Development Economics, Vol. 95, 42-57.
9. Helliwell, J. F. (1997). National borders, trade and migration. National Bureau of Economic Research Working Paper No. 6027.
10. Kapur, D., Chakravorty, S., Singh, N., "The Other One Percent: Indians in America", Oxford University Press.
11. Kone, Z.L., Liu, M.Y, Mattoo, A., Ozden, C. and S. Sharma (2016). Internal Borders and Migration in India. Mimeo. The World Bank, Washington D.C.
12. Mazumdar, I, Neetha, N and Agnihotri, I. (2013). "Migration and Gender in India", Economic and Political Weekly 48 (10), 54-64.
13. Munshi, K., and Rosenzweig, M. (2016) "Networks and Misallocation: Insurance, Migration, and the Rural-Urban Wage Gap." American Economic Review 106.1 : 46-98.
14. Neidercorn, J. A., Bechdolt, B. V. (1969). "An economic derivation of the 'gravity law' of spatial interaction", Journal of Regional Science, 9, 273-282.
15. Ramos, R. (2016): "Gravity models: a tool for migration analysis", IZA World of Labor.
16. Ravenstein, Ernst G. (1885) "The Laws of Migration." Journal of the Royal Statistical Society, 48(2).
17. Rose, Andrew (2003), "Do We Really

[17] यह आकड़ा वर्ष 2007-08 में अनुमानित 50,000 करोड़ रूपय से है, जो नाममात्र जीडीपी वृद्धि दर के तर्ज पर प्रतिवर्ष 15 प्रतिशत दर पर बढ़ता है। घरेलु अदायगी ग्रामीण भारतीय परिवारों का 10 प्रतिशत बैठती है और अदायगी प्राप्त होने वाले परिवार उपभोग के 30 प्रतिशत से अधिाक को वितपोषित करती है।

Know that WTO Increases Trade?", American Economic Review, 94 (1) , pp.98-114

18. Tobler W., (1970) "A computer movie simulating urban growth in the Detroit region". Economic Geography, 46(2): 234-240.
19. Srivastava, R. (2011). "Labour Migration in India: Recent Trends, Patterns and Policy Issues", Indian Journal of Labour Economics, 54(3), 411-440.
20. Subramanian, Arvind and Shang-Jin Wei (2007), "The WTO Promotes Trade, Strongly but Unevenly", Journal of International Economics, 72 (1), pp. 151-175
21. Tumbe, C. (2011). "Remittances in India: Facts and Issues", Indian Journal of Labour Economics, 54 (3), 479-501.
22. Tumbe, C. (2015). "Missing Men, Migration and Labour Markets: Evidence from India", Indian Journal of Labour Economics, 58(2), 245–267.
23. Tumbe, C. (2016). "Urbanization, Demographic Transition and the Growth of Cities in India, 1870-2020". International Growth Centre Working Paper C-35205-INC-1.

परिशिष्ट I

प्रसमूह आधारित प्रवसन मापक (CMM)

CMM (t) =k 100 x [Population in 20-29 age cohort in Census(t) – Population in 10-19 age cohort in Census(t-10) - Cohort Mortality]/ Population in 10-19 age cohort in Census(t-10)

Cohort Mortality=10 x Age-specific (10-19) mortality rate per year x Population in 10-19 age cohort in Census(t-10)

आंकड़ों के स्रोत : 1991, 2001, 2011 की जनगणनाएं और प्रतिदर्श पंजीकरण प्रणाली सांख्यिकी से 10-19 वर्ष वय प्रसमूह के लिए आयु विशिष्ट मृत्यु दर के प्रांत स्तरीय आंकड़े प्राप्त किए गए हैं। CMM का आंकलन राज्य और जनपद स्तर पर किया गया है। केरल प्रांत की जनसंख्या को अंतर्राष्ट्रीय प्रवसन के लिए समंजित करने के उद्देश्य से CDS, केरल द्वारा किए गए केरल प्रवसन सर्वेक्षण के आंकड़े प्रयोग किए गए हैं।

तालिका 1 : भारत में उच्च गतिशीलता जनपद, CMM विधि के अनुसार

वह जनपद जहां उच्च निवल प्रवासी आग. मन हुआ है (CMM 2001-11 में अंक प्रतिशत से अधिक है)	चंडीगढ़; गुरूग्राम (हरियाण); दिल्ली*; गौतम बुद्ध नगर (उ.प्र.); शौणितपुर (असम); इन्दौर (म.प्र.); सूरत, वल्साड (गुजरात); दमण; दादरा व नगर हवेली; थाणे, मुम्बई उपनगरीय, पुणे (महाराष्ट्र); रंगरेड्डी (तेलंगाना); बंगलौर (कर्णाटक); थिरूवैल्लूर, चेन्नई, कांचिपुरम, इरोड़, कोयम्बटूर (तमिलनाडू); यनम, पुड्डुचेरी (पुड्डुचेरी)।
उच्च प्रवसन के स्रोत जनपद (CMM 2001-11 का अंक (-)15 प्रतिशत से कम)	हमीरपुर (हिमाचल); उत्तर काशी, चमौली, रूद्रप्रयाग; टिहरी गढ़वाल, पिथोरागढ़, बागेश्वर, अल्मोड़ा, चंपावत (उत्तराखंड); चुरू, झुंझनू, पाली (राजस्थान); मुजफ्फरनगर, बिजनौर, मुरादाबाद, रामपुर, ज्योतिबा फुले नगर, मेरठ, बागपत, बुलंद शहर, हाथरस, ऐटा, मैनपुरी, बंदायु, बरेली, शाहजहांपुर, उन्नव, राय बरेली, फर्रूखाबाद, कन्नौज, औरेया, कानपुर देहात, हमीरपुर, फतेहपुर, प्रतापगढ़, कौशांबी, फैजाबाद, अम्बेडकर नगर, सुल्तानपुर, श्रावस्ती, बस्ती, संत कबीर नगर, गोरखपुर, कुशीनगर, देवरिया, आजमगढ़, मऊ, बलिया, जौनपुर, गाजीपुर, संत रवीदास नगर (उ.प्र.); दरभंगा, गोपालगंज, सिवान, सारण, शेखपुरा, भोजपुर, बक्सर, जहानाबाद (बिहार); नलबारी, दार्रांग (असम); बोलनगीर, गंजम (ओडिशा); धनबाद, लोहरडगा, गुमला (झारखंड); झबुआ, बेतुल (म.प्र.); अमरेली (गुजरात); रत्नागिरि, सिंधुदुर्ग (महाराष्ट्र); बीदर (कर्नाटक)।

स्रोत: **कोष्ठकों में राज्यों के नाम हैं। आंकड़े बड़े राज्यों तथा संघशासित प्रदेशों के हैं किन्तु इनमें केरल के जनपद शामिल नहीं किए गए हैं।**
***दिल्ली के 9 जनपदों को विश्लेषण की सुविधा के लिए एक इकाई मान लिया गया है।**

परिशिष्ट II

आंकड़ों का वर्णन और प्राथमिक विश्लेषण परिणाम

वित्त वर्ष 2011-12 से 2015-16 की अवधि के विभिन्न स्टेशन युग्मों के बीच बिना आरक्षण चले यात्रियों के मासिक आंकड़े अनारक्षित टिकट प्रणाली के माध्यम से रेल मंत्रालय के सेंटर फॉर रेलवे इंफोर्मेशन सिस्टम (CRIS) ने सुलभ कराए हैं।

पहले सोपान में स्टेशनों को भौगोलिक कूट प्रदान कर उन्हें विभिन्न राज्यों और जनपदों को मानचित्रित किया गया। मणीपुर, मेघालय, मिजोरम और अरूणाचल प्रदेश के तथा कुछ भौगोलिक कूट रहित स्टेशनों को विश्लेषण में शामिल नहीं किया गया है।[18] देश के 26[19] राज्यों और संघशासित प्रदेशों के आंकड़ों का विश्लेषण हुआ है। दूसरे सोपान में प्रत्येक वित्त वर्ष के लिए आंकड़ों को संकलित कर मूल-गन्तव्य (स्रोत-लक्ष्य) युग्मों के यात्री प्रवाह आव्यूह बनाए गए हैं। वित्त वर्ष के स्तर पर संकलन इसलिए किया गया है कि आंकड़ों पर किसी प्रकार ऋतु चक्रीय प्रभाव नहीं रहे, तुलना की दृष्टि से इन आव्यूहों का कैलेन्डर वर्षानुसार भी निर्माण किया गया है। किन्तु विभिन्न राज्यों के बीच यात्री प्रवाहों के परिमाण, क्रम और दिशाए समान प्राय: ही रही हैं। दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता और बंगलौर जैसे बड़े महानगरों के आसपास दैनिक रेल यात्रियों के प्रवाह भी बहुत विशाल रहते हैं। यही नहीं, इन बड़ी इकाईयों में आने और यहां से जाने वाल यात्री प्रवाहों में सममिति भी नहीं है। बहुत बार इनके आसपास के दैनिक यात्री केवल एक पक्ष की यात्रा रेल से करते हैं, वापसी पर वे कोई और परिवहन/वाहन प्रयोग कर लेते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा सृजित असंतुलन का निवारण करने के लिए दो अंतर निस्पंदक या फिल्टर प्रयोग किए गए हैं। पहले मामले में दो स्टेशनों के बीच 200 किलोमीटर से कम यात्रा करने वालों की संख्या को निकाल दिया गया था।[20] दूसरे मामले में अंतर फिल्टर को 150 किलोमीटर पर नियत किया गया है। 200 किलोमीटर का फिल्टर असंतुलित यात्रा व्यवहार वाली इकाई को विश्लेषण से बाहर रखने में अधिक प्रभावी सिद्ध हुआ है। अत: इसी का विश्लेषण में प्रयोग किया गया है। तालिका 1 में मूल गन्तव्य (स्रोत-लक्ष्य) युग्म आव्यूह वर्ष 2015-16 के लिए 200 किलोमीटर फिल्टर लागू करने के बाद बना स्वरूप दिखाया गया है।

यह मूल-गन्तव्य (स्रोत-लक्ष्य) युग्म आव्यूह प्रयोग कर उन राज्यों के बीच निवल यात्री प्रवाहों[21] का आंकलन किया गया है, जिनके लिए इन पांच वर्षो की जानकारी उपलब्ध थी। यह निवल प्रवाह दो राज्यों के बीच प्रवसन का एक तदर्थ चर माना जा सकता है[22,23]। इस आंकलन में सैर सपाटे और अन्य कार्योवश थोड़े से समय में की गई यात्रा वर्ष भर में ही विपरीत दिशा की यात्रा से केन्सिल हो जाती है। तालिका 2 ने 2015-16 के लिए यह निवल यात्री प्रवाह आव्यूह दिखाया है। इस अवधि में अन्तर्राज्यीय प्रवासियों की कुल संख्या जानने के लिए विभिन्न वर्षो के निवल आंकड़ों को जोड़ लिया गया है। अपने आंकलन की सुदृढ़ता की जांच के लिए आंकड़ों को दो, तीन और फिर पांच वर्षों के लिए जोड़ा गया है। इन सभी में निवल प्रवाह संख्याएं स्थिरतापूर्ण रही हैं। जनपद स्तरीय निवल और सकल यात्री प्रवाह के आंकड़े तैयार करते समय 570 जनपदों को विश्लेषण में रख पांचों वर्षो के लिए एक संतुलित पैनल बनाया गया है। पैनल को संतुलित रखने के लिए ग्यारह जनपदों (अनंतनाग, बड़गाम, बक्सा, बारामूला, गजपति, कुलगाम, नर्मदा, पुलवामा, रामबन, रियासी और डांग्स) को विश्लेषण से बाहर रखा गया है।

---

[18] फासले के मापन राज्यों की राजधानियों के बीच बृहत वृत द्वारा होता है।

[19] इस अध्ययन में बिहार, उ. प्रदेश, म. प्रदेश, छत्तीगढ़, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड और झारखंड को हिन्दी भाषी तथा अन्य राज्यों को अहिंदी भाषी माना गया है।

[20] स्रोत और लक्ष्य राज्य/जनपद स्तरीय अचल प्रभावों का प्रयोग कर प्रवसन की आंचलिक विशेषताएं समाहित की गई हैं। अचल प्रभावों में जीडीपी और राज्यों जनपदों की जनसंख्या के अंतर के प्रभाव भी सम्मिलित हो जाते हैं।

[21] राज्य स्तरीय प्रतीपगमन का आंकलन निवल आयात पर करें या निवल निर्यात पर, परिणाम वहीं रहते हैं। निवल अंक, अपनी रचना के अनुसार ही सममित होते हैं।

[22] नए रेलमार्गो के खुलने, स्थान युग्मों के बीच नई ट्रेनें शुरू होने के प्रभाव इस आंकलन में सम्मिलित नहीं किए गए हैं। युग्मीय अचल प्रभाव भी समाहित नहीं किए गए, क्योंकि उनके बीच का अंतर तो अपरिवर्तित ही रहता है।

[23] सुदृढ़ मानक त्रुटियों का अनुमान लगाने के लिए आयातक जनपदों के बहुस्तरीय संगुच्छ बनाए गए हैं। यह कार्य आयात वर्षों के लिए भी किया गया है।

रेखाचित्र 1 : कार्यशील आयुवर्ग की जनसंख्या के प्रतिशत के रूप में कुल निवल प्रवाह

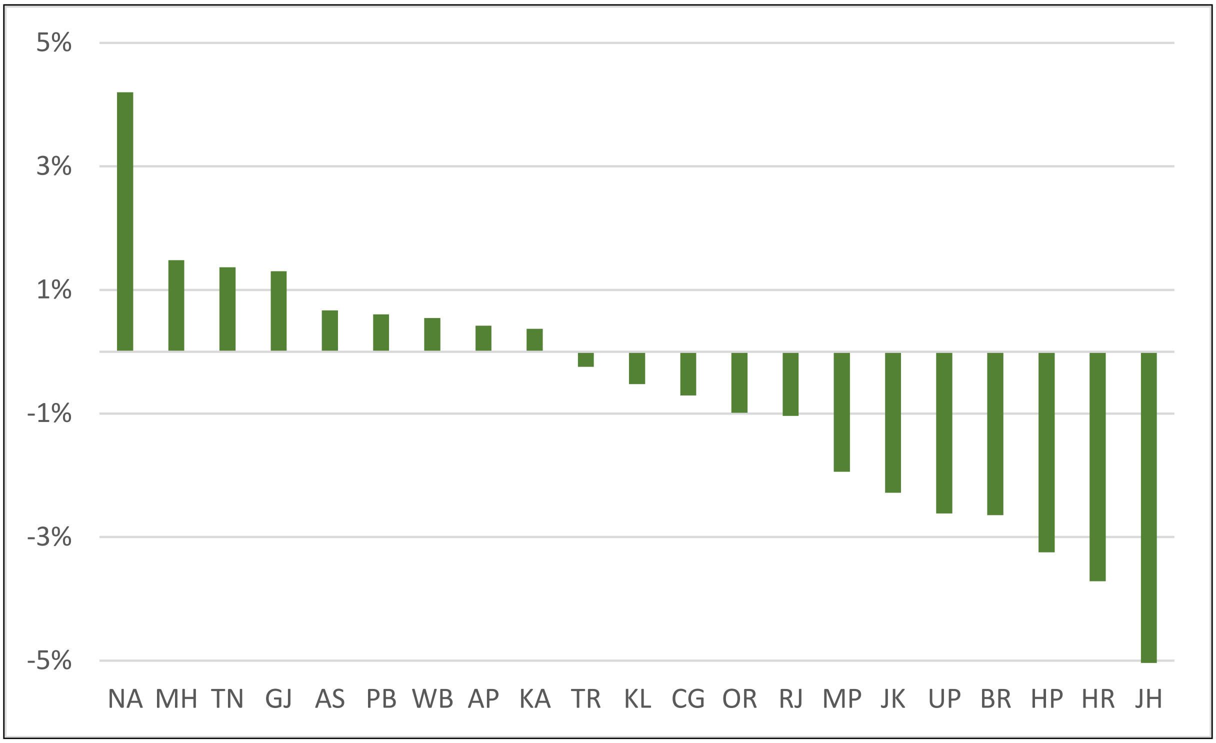

तालिका 1 : राज्यों के शीर्षस्थ प्रवसन मार्ग

Outflow State	Inflow State
उत्तर प्रदेश	दिल्ली
बिहार	दिल्ली
गुजरात	तमिलनाडु
उत्तर प्रदेश	महाराष्ट्र
चंडीगढ़	उत्तर प्रदेश
झारखंड	पश्चिम बंगाल
उत्तर प्रदेश	पंजाब
मध्य प्रदेश	दिल्ली
उत्तर प्रदेश	गुजरात
पंजाब	दिल्ली
महाराष्ट्र	गोआ
उत्तर प्रदेश	बिहार
राजस्थान	दिल्ली
बिहार	महाराष्ट्र
मध्य प्रदेश	उत्तर प्रदेश
हरियाणा	पंजाब
उत्तर प्रदेश	पश्चिम बंगाल
बिहार	गुजरात
झारखंड	उत्तर प्रदेश
झारखंड	बिहार
महाराष्ट्र	गुजरात
मध्य प्रदेश	राजस्थान
उत्तराखंड	दिल्ली
तमिलनाडु	आंध्र प्रदेश
जम्मू–कश्मीर	दिल्ली
राजस्थान	गुजरात
मध्य प्रदेश	गुजरात
पश्चिम बंगाल	दिल्ली
बिहार	तमिलनाडु
पश्चिम बंगाल	असम

सारणी 2. शीर्ष मार्ग वाले जिले

आयातक जिला	निर्यातक जिला
कृष्णा	चित्तूर
रत्नागिरि	मुंबई
चेन्नई	कच्छ
मुंबई उपनगर	गोरखपुर
रत्नागिरि	थाणे
मध्य दिल्ली	गोरखपुर
पटना	पूर्वी दिल्ली
मध्य दिल्ली	ग्वालियर
उत्तरी दिल्ली	शाहजहांपुर
सिन्धु दुर्ग	मुंबई
मुंबई	लखनऊ
ग्वालियर	दक्षिण
सिन्धु दुर्ग	थाणे
हौरा	धनबाद
उत्तरी दिल्ली	आजमगढ़
मुरादाबाद	चंडीगढ़
मध्य दिल्ली	झांसी
बड़ोदरा	मुंबई उपनगर
मध्य	दरभंगा
उत्तरी दिल्ली	बरेली
सहरसा	पूर्वी दिल्ली
झांसी	दक्षिण दिल्ली
मध्य दिल्ली	नालंदा
मध्य दिल्ली	लखनऊ
मध्य दिल्ली	बेगुसराय
मध्य दिल्ली	भोजपुर
रत्नागिरि	रायगढ़
उत्तरी दिल्ली	अररिया
सहरसा	अमृतसर
महबूब नगर	गुंटूर

''दो अलग-अलग भारत'': राज्यों के विकास की दो विश्लेषणात्मक वर्णन पद्धतियां (पुनः वितरणात्मक और प्राकृतिक संसाधन आधारित)

13
अध्याय

''हे महामहिम, कृपया इस बात को समझ लीजिए कि भारत दो देश हैं : एक प्रकाशपूर्ण भारत और दूसरा अंधकारमय भारत। महासागर मेरे देश तक प्रकाश लाता है। महासागर के निकट का भारत के मानचित्र का प्रत्येक स्थान समृद्ध है। किन्तु सरिताएं तो भारत में अंधकार का ही संचार करती हैं।''

-''द व्हाइट टाइगर'', अरविन्द अडिगा

इस अध्याय में हम समीक्षा कर रहे हैं कि क्या विदेशी सहायता और प्राकृतिक संसाधन विषयक रोग-विज्ञान से भारतीय राज्य भी ग्रस्त हैं? यहां केन्द्र से पुनः वितरक संसाधन अंतरणों (RRTs) तथा राज्यों को प्राकृति संसाधनों से प्राप्त राजस्व का आंकलन किया जा रहा है। इन अंतरणों और विभिन्न राज्य स्तरीय परिणामों, जैसे कि प्रतिव्यक्ति उपभोग, जीडीपी संवृद्धि, विनिर्माण का विकास, राज्य के अपने कर प्रयास और संस्थागत गुणवत्ता के स्तरों में किसी सकारात्मक संबंध का साक्ष्य नहीं मिल पा रहा है। RRT को लेकर तो कदाचित् कुछ ऋणात्मक संबंध का ही झलक मिल रही है। प्रश्न यह है कि क्या RRT को अधिक गहराई से राज्यों के राजकोषीय और प्रशासकीय प्रयासों के साथ जोड़ा जा सकता है, जैसा कि 13वें वित्त आयोग ने कहा है? एक अन्य विचार पर भी चर्चा होनी चाहिए, यह अधिक RRT पाने वाले और प्राकृतिक संसाधनों के राजस्व पर अधिक निर्भर राज्यों के गृहस्थों को सीधे सार्वलौकिक आधारिक आय (UBI) प्रदान करने का विचार है।

I. विषय प्रवेश

13.1 वर्ष 1980 के बाद से भारत में संवृद्धि का दौर मुख्यतः भारतीय प्रायःद्वीप से जुड़ा रहा है। उन्हीं राज्यों से, जिन्हें ''द व्हाइट टाइगर'' के सूत्रधार ने बेहतर भौगोलिकता या महासागर से निकटतापूर्ण बताया है। विकास के अनुभव बताते हैं कि ऐसी अवस्थितियों से कुछ विशेष लाभ स्वतः ही प्राप्त हो जाते हैं (सेचेज और वार्नर, 1997)। ये राज्य हैं गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडू, कर्नाटक, केरल और आंध्र प्रदेश। ये सचमुच अधिक तेजी से संवृद्धि कर आर्थिक दृष्टि से विकसित हुए हैं।

13.2 परिणाम स्वरूप उन पर नीति एवं शोध स्तर पर शेष राज्यों अर्थात ''अन्य भारत'' की अपेक्षा अधिक ध्यान भी दिया गया है। इस ''अन्य भारत'' में केवल आंतरिक भारत (सरिता सिंचित भारत) ही नहीं बल्कि वनों और प्राकृति संपदाओं का भारत और 'विशेष श्रेणी राज्यों' का भारत भी सम्मिलित है।[1] यह अध्याय उन राज्यों को समर्पित है जो भारत की विकास गाथा की

[1] यह 'विशेष श्रेणीह का विचार 1969 में अभावग्रस्त राज्यों को (जो अनेक कारणों से विकास के लिए पर्याप्त संसाधन नहीं जुटा पा रहे थे), केन्द्रीय सहायता और कर छूट आदि के माध्यम से विशेष सहायता सुलभ कराने की दृष्टि से प्रतिपादित किया गया था। असम, नागालैंड, अरूणाचल, हिमाचल, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, सिक्किम, त्रिपुरा, उत्तराखंड और जम्मू-कश्मीर को विशेष दर्जा दे दिया गया। इस विशेष दर्जे के निर्धारक कारकों में हैं : (i) पर्वतीय एवं कठिन भौगोलिकता, (ii) निम्न जनसंख्या घनत्व/जनजातीय समाज का जनसंख्या में बड़ा अंश, (iii) अंतर्राष्ट्रीय सीमा के निकट स्थिति, आर्थिक और संरचनात्मक पिछड़ापन और (iv) राज्य वित्त का अधारणीय स्तर।

मुख्य धारा से दूर रह गए हैं। किन्तु उनकी अवस्था का विश्लेषण-आंकलन करते समय बृहतर विकास अनुभवों के प्रकाश में ही चर्चा की जा रही है।

13.3 सफल प्राय:द्वीपीय भारत ने विकास के तीन रोचक एवं भिन्न प्रतिमान हमें प्रदान किए हैं : परंपरागत पूर्वी एशियाई विकास विधि, जो विनिर्माण पर आधारित है, (गुजरात और तमिलनाडू); बाहर से धन प्रेषण आधारित प्रतिमान (मुख्यत: केरल); और विशिष्ट ''विलक्षण भारत'' प्रतिमान जो विशेष कौशल सेवाओं पर आधारित है (कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडू, (इनका कोचर आदि, 2006 ने अध्ययन किया है)।

13.4 अन्य राज्य अपेक्षाकृता कम सफल रहे हैं और संभवत: इसीलिए उनपर ध्यान भी कम दिया गया है। किन्तु उनका भी अपना महत्व है, उन्होंने भी किसी न किसी अन्य प्रतिमान का अनुसरण अवश्य किया है। इस अध्याय में ऐसे दो विकास प्रतिमानों पर विचार किया गया है ये हैं : (i) सहायता या विशेष श्रेणी पर आधारित; और (ii) प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित। प्राकृतिक संसाधनों की परिभाषा में कोयला, भूगर्भीय तेल भंडार, प्राकृतिक गैस तथा मुख्य एवं गौण खनिज शामिल हैं, किन्तु वन आच्छादन नहीं। विशाल वन आच्छादन एक ''वन अभिशाप'' भी हो सकते हैं, किंतु उन पर इस अध्याय में चर्चा नहीं की गई है।

13.5 'सहायता' प्रतिमान उत्तर पूर्वी राज्यों और जम्मू कश्मीर के लिए अधिक मान्य है तो प्राकृतिक संपदा प्रतिमान झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा, गुजरात और राजस्थान में महत्वपूर्ण रहा है। इस अध्याय में इन राज्यों के विकास अनुभवों की विश्लेषणात्मक समीक्षा की जा रही है।

II. पुन:वितरणीय संसाधनों का प्रभाव

13.6 भारत की स्वतंत्रता के समय अधिकांश अर्थशास्त्रियों का विकास संबंधी चिन्तन बहुत सीधा-सरल था। इसके अनुसार गरीब देश इसलिए गरीब थे कि उनके पास पूंजी नहीं थी। वे इस अभाव पर केवल इस कारण से पार नहीं पा रहे थे कि उनके जन समुदाय कुछ भी बचा पाने की दृष्टि से बहुत गरीब थे। अत: विकास का एकमात्र मार्ग, सभी समस्याओं का एकमात्र समाधान ''विदेशी सहायता'' में छिपा था। इस नियम का एक संभव अपवाद भी दिखाई दे रहा था : विशाल खनिज भंडार संपन्न देश उस 'संपदा' का खनन कर विश्व बाजार में बिक्री से प्राप्त राशियों का भौतिक या मानवीय पूंजी में निवेश कर सकते थे। किन्तु शेष सभी देशों को तो ''विदेशी सहायता'' पर निर्भरता के अतिरिक्त कोई चारा नहीं था।

13.7 किन्तु भारत इस विमर्श से कभी भी पूर्णत: सहमत नहीं रह पाया। वर्षों तक इसने सहायता स्वीकार तो की है, किन्तु यह यथा संभव अपने संसाधनों पर भी भरोसा करता रहा है, ताकि शीघ्रतिशीघ्र विदेशी सहायता पर निर्भरता की विवशता का निवारण हो सके। यह विकास युक्ति सफल भी रही है और ईस्टरली (2003), राजन और सुब्रमण्यम आदि से प्रारंभ कर अनेक अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्री इस विधि के सद्गुणों की अनुभूति करने लगे हैं। इस 'हृदय परिवर्तन' का एक बड़ा कारण भी है : शोघकर्ताओं ने पाया है कि सहायता और संवृद्धि के बीच कोई सुदृढ़ धनात्मक संबंध ही नहीं है।

13.8 ऐसा क्यों है? इस विषय में अनेक सिद्धांत प्रतिपादित हुए हैं। एक अवधारणा तो यही है कि सहायता संसाधनों के लिए पर-निर्भरता अर्थात बाहर से धन प्रवाह पर निर्भरता को बढ़ावा देती है। ऐसे सहायता पाने वाले देश न अपने कर आधार को विकसित कर पाते हैं औ न ही अधिक व्यापक स्तर पर संस्थागत संरचना को। आगे आर्थिक विकास के लिए सकल स्तर पर संसाधनों की सुलभता से कहीं अधिक महत्व संस्थाओं, कर राजस्व और संप्रेरणाओं का पाया गया है। ब्रॉटिग्म और नैक (2004); आजम, देवराजन और ऑ कॉनेल (1997) तथा ऐडम और ऑ कॉनेल (1999) ने इन प्रभावों को बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट किया है।

13.9 सहायता का एक संभावित अहितकर प्रभाव 'डच रोग' माना जाता है। उत्तरी सागर में प्राकृतिक गैस भंडार मिलने का नीदरलैंड के आंतरिक अर्थतंत्र पर ऐसा ही प्रभाव हुआ था। इस अनायास प्राप्ति से वास्तविक विनिमय दर में सुधार हुए, अतिरिक्त आय आंतरिक क्षेत्र में खर्च होने लगी और स्थानिक अर्थतंत्र प्रेरित सेवाओं जैसी गैर अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक चीजों के दामों में वृद्धि होने लगी। सेवाओं की उच्च कीमतों से निर्यात और आयात स्पर्धी उद्योगों की लाभप्रदता कुंठित हो गई। परिणाम स्वरूप देश में वि-उद्योगीकरण क्रम प्रारंभ हो गया और अर्थव्यवस्था में विनिर्माण क्षेत्र का अंश घटता

चला गया (कोर्डन और नीयरी, 1982)। ऐसे ही प्रभाव कनाडा, आस्ट्रेलिया, रूस और अफ्रीका में भी देखे गए हैं।

13.10 इन अंतर्राष्ट्रीय उदाहरणों और अपने विकास अनुभवों के बावजूद भारत ने प्रथम विकास अर्थशास्त्रियों के सुझाए पथ का ही अनुसरण किया है। इसने कतिपय गरीब राज्यों को बड़े स्तर पर संसाधन अंतरित कर उनके विकास को उन्नति की ओर अग्रसर करने का प्रयास किया है। क्या जहां अन्य युक्तियां विफल रही हैं वहां यह सफल हो पाई है? कहीं प्रारंभिक विकास संबंधी सर्वानुमति सही तो नहीं थी? यदि नहीं, तो विकल्प क्या हैं?

13.11 इस भाग में हम भारतीय राज्यों के रिकार्ड की, एक उत्तर पाने की दृष्टि से छानबीन कर रहे हैं। इस आशा में कि यह केन्द्र द्वारा कोष संसाधनों के वितरण की रचना की प्रक्रिया को अधिक बेहतर जानकारियों पर आधारित बना पाएगी।

III. पुन:वितरणात्मक संसाधन अंतरण : भारतीय राज्यों से साक्ष्य

13.12 यहां पहला कार्य तो भारत के आंतरिक संदर्भ में सहायता की संकल्पना की परिभाषा करना है। अभी तक राज्य सरकारों को केन्द्र से कई स्रोतों-प्रवाहों के रूप में धन मिलता रहा है : (i) वित्त आयोग के निर्देश पर केंद्रीय करों में अंश; (ii) योजना और गैर-योजना अनुदान; और (iii) योजना और गैर योजना ऋण और अग्रिम। इन कोषों का योगफल 'राज्यों को सकल अन्तरण'' कहलाता है और यह सारी राशियां ''सहायता''[2] नहीं कही जा सकती।

13.13 सकल अन्तरण में एक सशक्त पुन:वितरक तत्व भी है। 'विशेष श्रेणी' ही कुछ राज्य विशिष्ट लक्षणों की ओर संकेत कर देती है। इनके कारणों से कुछ राज्य अन्तरणों, विशेषकर रियायती अनुदानों, पर अधिक निर्भर रह जाते हैं। अन्य राज्यों की तुलना में अपनी विकास आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए भी विशेष श्रेणी वाले राज्य ऐसे अनुदान प्रवाहों पर अधिक ही निर्भर रहते हैं। किन्तु केन्द्र से राज्यों को अंतरित पुन:वितरक संसाधनों का स्वरूप 'सहायता' से दो प्रकार से भिन्न होता है। एक तो ये आंतरिक अंतरण हैं और विदेशी सहायता की भांति देश की निर्वर्त्य आय में वृद्धि नहीं करते; दूसरे, यहां दानी और लाभार्थी संबंध का स्वरूप भी अलग रहता है, क्योंकि जिन अंतरणों से यहां लाभार्थी को धन प्राप्ति होती है उनको निर्धारण करने वाली राष्ट्रीय प्रशासन संस्थाओं में इन राज्यों की भी भागीदारी होती है। इस अध्याय का ध्येय इन अंतरणों के स्थान पर 'कुछ और' सुझाने का नहीं है। यहां तो हम इनके प्रभावों की ही समीक्षा करना चाहते हैं। हम यह परिप्रेक्ष्य स्वीकार करके चल रहे हैं कि ये अन्तरण क्षेत्रीय विषमताओं से बचाव करते हैं और राजकोषीय असंतुलनों का समाधान करते हैं। अत: इनका महत्व अत्यंत निर्णायक है।

13.14 इस जानकारी के संदर्भ में यह अध्याय ''पुन:वितरक संसाधन अन्तरण'' (RRT) की अवधारणा का प्रयोग कर रहा है। किसी राज्य को RRT की परिभाषा उसे देश के सकल घरेलू उत्पाद में अंश का समंजन करने के पश्चात हुए सकल अंतरण[3] द्वारा की जाती है (परिभाषा D1)। अत: RRT सकल अंतरण के समान नहीं है। इस समंजन द्वारा यह सुनिश्चित किया जाता है कि किसी राज्य द्वारा जीडीपी में किए गए योगदान से अधिक अंतरित राशि ही RRT का अंश मानी जाए। एक वैकल्पिक परिभाषा भी है : राज्य के अपने कर राजस्व द्वारा मापित देश व्यापी कर प्रयास में अंश के समंजन के पश्चात राज्य को प्राप्त अतिरिक्त सकल अंतरण पर भी यह जांचने के लिए ध्यान दिया जाता है कि पहली परिभाषा के प्रयोग के परिणाम सटीक हैं या नहीं।

13.15 RRT की परिभाषा राज्य सरकारों द्वारा किए गए व्यय पर इन अंतरणों के प्रभाव को समाहित नहीं कर रही। यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि केन्द्र के अपने व्यय के फलस्वरूप सीधे हो सकने वाले

---

[2] कुछ अन्तरण केन्द्र द्वारा बनाई योजनाओं के लिए है तो कुछ राज्य निर्मित संचालित योजनाओं के लिए। अन्य का ध्येय राज्य की किन्हीं विशेष परिस्थितियों जैसे कि क्षेत्रीय पिछड़ेपन या फिर प्राकृतिक आपदा के बाद पुन:निर्माण में सहायता भी है।

[3] राजकोषीय आंकड़े रिजर्व बैंक के प्रकाशन; राज्य वित्त : एक अध्ययन, 2016 से लिए गए हैं।

रेखाचित्र 1 : सकल अंतरण और RRT प्रति व्यक्ति (रूपए हजार, वार्षिक, 2015)

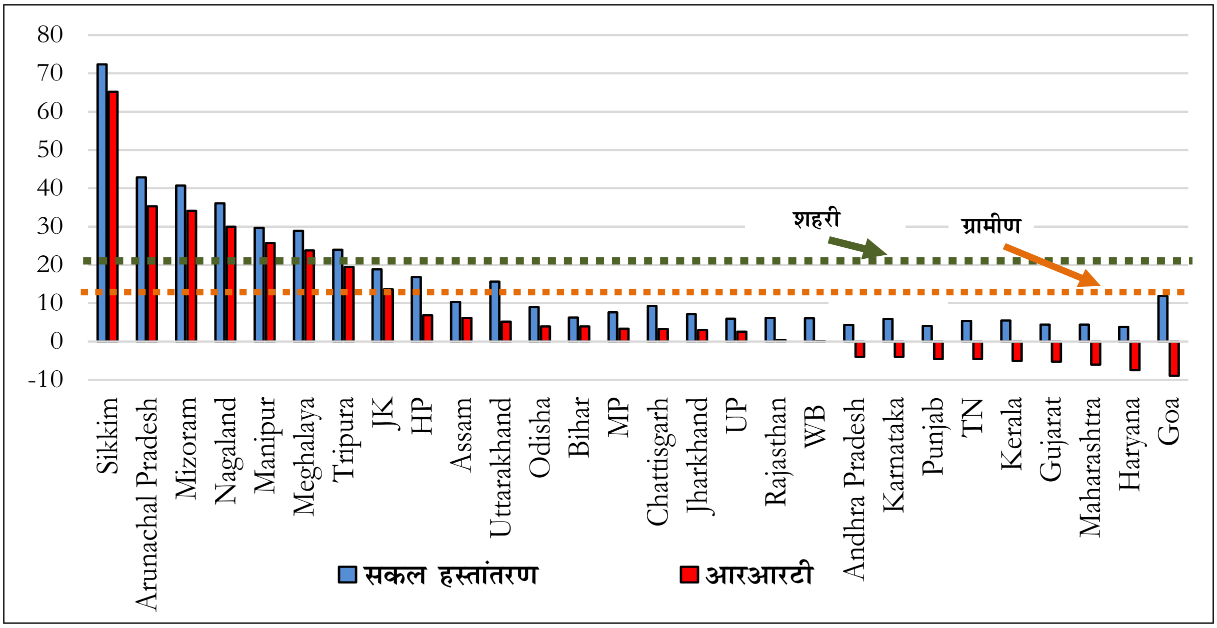

पुन:वितरण भी इससे बाहर ही रखे गए हैं।[4] अत: RRT अंतरणों का एक विशिष्ट मापक है, यह पुन:वितरणों का निश्चयात्मक मापक नहीं है। परिशिष्ट में GSDP के अनुपात के रूप में सकल अंतरणों और RRTs का चित्रांकन किया गया है।

13.16 रेखाचित्र 1 RRT के ह्रासमान स्तरानुसार राज्यों की क्रमिकता दर्शा रहा है। यह राशियां प्रतिव्यक्ति आधार पर उन्हें प्राप्त हुई है। सकल प्रतिव्यक्ति अंतरण भी यहीं अंकित किए गए हैं। सबसे अधिक पाने वाले 10 राज्य हैं : सक्किम, अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम, नागालैंड, मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और असम (ये सभी विशेष श्रेणी वाले राज्य हैं)। इन शीर्षस्थ 10 राज्यों को प्रतिव्यक्ति वार्षिक सकल अंतरण रू. 32000 हैं और इनका 81 प्रतिशत अंश अर्थात रू. 26000, तो 2015 में RRT के रूप में ही मापित हुआ है।

रेखाचित्र 3क : प्रतिव्यक्ति GSDP और प्रति व्यक्ति RRT*

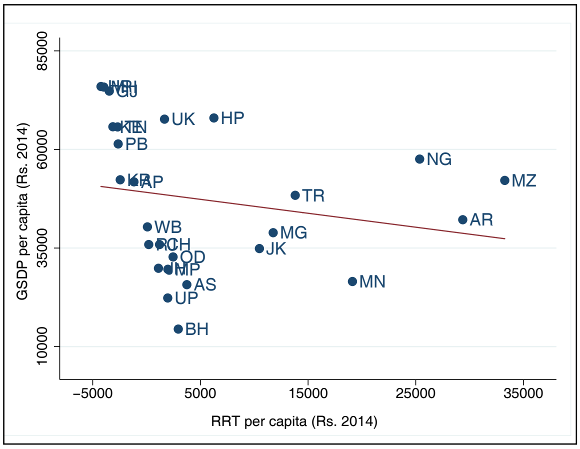

रेखाचित्र 3ख : प्रतिव्यक्ति उपभोग व्यय (MPCE) और प्रतिव्यक्ति RRT

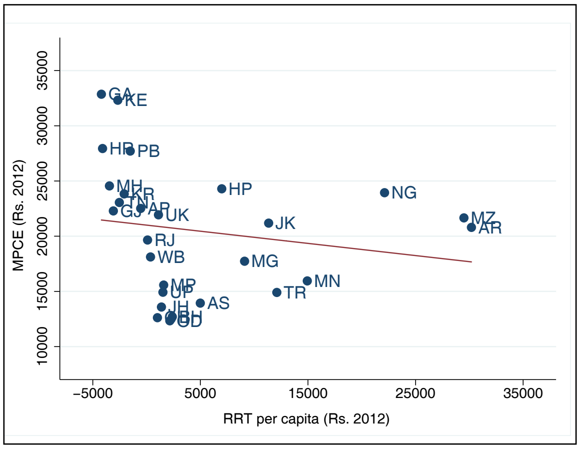

* बहिष्षायी समंजन के बाद। गोवा और सिक्किम यहां नहीं दर्शाए गए हैं। 3ख में गोवा को निकालने के बाद दाहिनि ओर ढाल बना रहता है।

---

4 इस अध्याय में 2005-06 से 2013-14 के बीच मनरेगा, सर्व शिक्षा अभियान आदि के लिए केन्द्र द्वारा सीधे उनके संचालक अधिकरणों (जनपद प्रशासनों) को अंतरित राशियां विश्लेषण में सम्मिलित नहीं हैं।

13.17 रेखाचित्र में पीली और हरी रेखाएं 2015 के लिए अखिल भारतीय ग्रामीण एवं शहरी प्रति व्यक्ति वार्षिकीकृत गरीबी रेखाएं दिखा रही हैं।[5] वार्षिक प्रतिव्यक्ति RRT के प्रवाह असम को छोड़ शेष सभी पूर्वोत्तर राज्यों, और जम्मू कश्मीर के अखिल भारतीय गरीबी रेखा द्वारा (ग्रामीण) परिभाषित वार्षिक प्रति व्यक्ति उपभोग से अधिक है।

13.18 रेखाचित्र 3क तथा 3ख में 2013-14 के प्रति व्यक्ति GSDP के स्तर तथा मासिक प्रतिव्यक्ति उपभोग (NSSO का 68वां दौर, 2011-12) व्यय को प्रतिव्यक्ति RRT (2013-14 और 2011-12) के अनुसार अंकित किया गया है। हमें एक ऋणात्मक संबंध ही दिखाई दे रहा है, जो GSDP प्रतिव्यक्ति के संदर्भ में कुछ अधिक सशक्त है। दूसरे शब्दों में गरीब प्रांतों को, जैसा कि आशा की गई थी, उच्चतम स्तर पर अंतरण प्राप्त हो रहे हैं। किन्तु पिछले कई दशकों से इसी प्रकार उच्च RRT पा रहे राज्यों में से एक, हिमाचल प्रदेश, को छोड़कर सभी प्रतिव्यक्ति GSDP के निम्न स्तरों पर अटके हुए दिखाई देते हैं। इन राज्यों को लाल रेखा द्वारा दर्शाए गए औसत स्तर को छूने के लिए भी गंभीर प्रयास करने की आवश्यकता है। ये राज्य उपभोग पर भी औसतन कम खर्च कर रहे हैं। हां अपवाद भी है : नागालैंड और मिजोरम की GSDP तथा उपभोग के प्रतिव्यक्ति मान औसत से उच्चतर है। साथ

रेखाचित्र 4क : प्रतिव्यक्ति आय की संवृद्धि और RRT

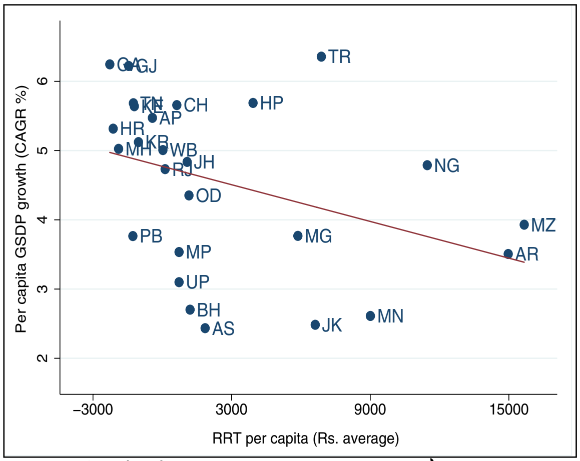

रेखाचित्र 4ख : GSDP में विनिर्माण का अंश और RRT

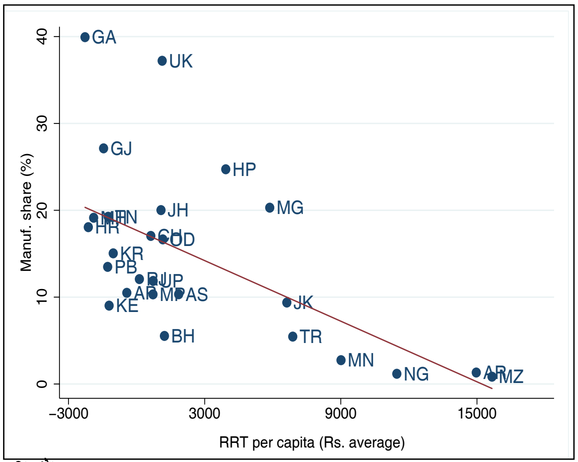

* बहिर्वासियों के प्रति संतुलित। उत्तराखंड और सिक्किम शामिल नहीं हैं।

रेखाचित्र 4ग : राजकोषीय प्रयास और RRT

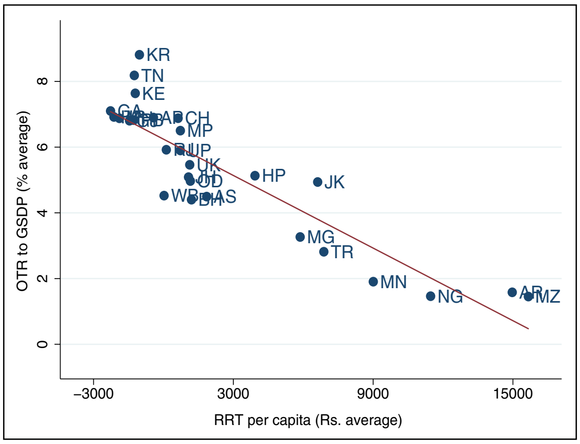

रेखाचित्र 4घ : प्रशासनिक दक्षता और RRT

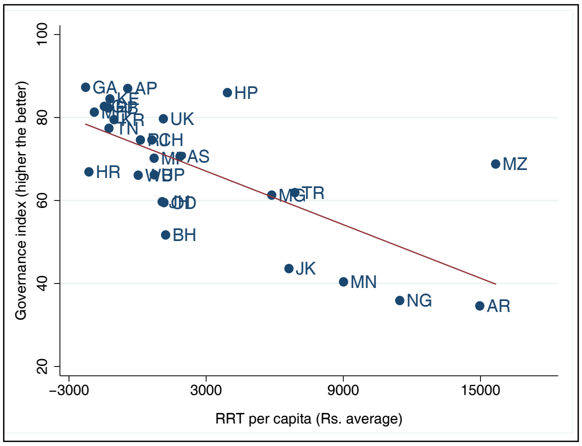

[5] अब भंग हो चुके योजना आयोग ने 2011-12 की गरीबी रेखाओं का आंकलन किया था। उसी रेखा को CPI(IW) तथा CPI (RW) के लिए समंजित कर 2015 की कीमतों के अनुरूप बनाया गया है।

ही जम्मू-कश्मीर भी उच्च स्तर पर RRT पाने वाला एक उच्च उपभोग प्रांत है।[6]

13.19 क्या RRT ने राज्यों को बेहतर निष्पादन में सहायता दी है? रेखाचित्र 4क से 4ग में RRT को प्रतिव्यक्ति GSDP की संवृद्धि, GSDP में विनिर्माण का अंश और राजकोषीय प्रयास (GSDP में निजी कर राजस्व) के अंश के साथ अंकित किया गया है। ये सब आंकड़े 1993-94 से 2014-15 की औसत हैं, (उन राज्यों के लिए जो 2000-01 से पूर्व विद्यमान थे)। इस वर्ष में गठित राज्यों के लिए 2000-01 से 2014-15 की औसत ली गई है।

13.20 परिणाम काफी चौंकाने वाले हैं। यदि RRT अधिक है तो :

- संवृद्धि दर धीमी है।
- GSDP में विनिर्माण का अंश कम है।[7]
- निजी कर राजस्व भी कम है।

13.21 कुल मिलाकर प्रशासन की गुणवत्ता कैसी है? इसे हम RRT प्रवाह को प्रशासन दक्षता के किसी उपयुक्त सूचक के साथ मिलाकर देख सकते हैं। कोचर आदि (2006) का तर्क है कि बिजली की आपूर्ति में प्रेषण एवं वितरण की हानियों को प्रशासनिक दक्षताहीनता का एक अच्छा सटीक सूचक माना जा सकता है। ये हानियां प्रदेश में संरचना और संस्थागत दुर्दशा की झलक देती है। इस भाग में हम इससे कहीं अधिक व्यापक संकल्पना का प्रयोग कर रहे हैं। यह है सकल तकनीकी और वाणिज्यिक हानियां (ATC हानियां)। इसमें तकनीकी हानियों और बिजली की चोरी से आगे बढ़कर अन्य वाणिज्यिक हानियां भी शामिल हो जाती है, जो प्रेषण एवं वितरण को निवल ऊर्जा आदान के प्रतिशत द्वारा मापी जा रही थी। इस सकल हानि को एक सूचक की परिभाषा के लिए प्रयोग किया जा रहा है।[8] रेखाचित्र 4घ में इस सूचक और RRT के मान अंकित किए गए हैं। फिर एक बार यही सिद्ध होता है कि उच्च RRT पाने वाले राज्य प्रशासनिक दक्षता की इस कसौटी पर भी पिछड़ रहे हैं। हां, उत्तरपूर्व में मिजोरम का निष्पादन महत्वपूर्ण रूप से बेहतर रहा है।

13.22 इन सबसे संकेत मिलता है कि एक ''RRT अभिशाप'' विद्यमान है। किन्तु यह सुझाव प्रमाण नहीं है। संकेत से प्रमाण की ओर बढ़ने के लिए यह जानना जरूरी है कि क्या RRT की परिभाषा में बदलाव होने पर भी यही प्रवृत्ति सुदृढ़ बनी रहती है। वास्तव में ऐसा ही है। यदि RRT को सकल राजस्व में राज्य के अंशदान से ऊपर मिलने वाली (अधिक) राशि के रूप में परिभाषित कुल अंतरण माना जाता तो भी परिणाम परिवर्तित नहीं होते। यह भी रोचक बात है कि बिना किसी समंजन के यदि केन्द्र से राज्यों को किए गए सकल अंतरण देखें, तो भी यही प्रवृतियां बनी रहती हैं।

13.23 अगला प्रश्न यह जानना है कि कारण क्या है? आखिर सारा निकृष्ट निष्पादन अधिक RRT का परिणाम तो नहीं होगा। यह कारण की खोज हमें बिल्कुल विपरीत दिशा में ले जा सकती हैं, कहीं अधिक अंतरण इसलिए तो नहीं दिए जा रहे कि राज्य का निष्पादन पर्याप्त रूप से अच्छा नहीं है। औपचारिक सांख्यिकीय प्रतीपगमन द्वारा जांच से पूर्व इस प्रश्न का निपटारा करना आवश्यक है अन्यथा RRT का अनुमानित प्रभाव पूर्वाग्रहगस्त हो जाएगा।

13.24 RRT के प्रभावों का भरोसेमंद अनुमान पाने के लिए अंतरणों के उन अंशों को आंकलन से बाहर रखना आवश्यक है जो इस अध्याय में चर्चित आर्थिक परिणामों से संबंधित नहीं हों (अर्थात संवृद्धि, विनिर्माण अंश, राजकोषीय प्रयास और प्रशासन)। इस प्रश्न का निदान करने की एक विधि तो व्याख्या चर RRT के लिए किसी सहायक/समवर्ती चर की पहचान करना है। यह RRT के साथ तो सशक्त रूप से सह संबंधपूर्ण होगा, किन्तु आर्थिक परिणामों और प्रशासन के साथ नहीं। फिर हम अपनी रूचि के प्रत्येक चर पर RRT के प्रभाव का आंकलन उक्त समवर्ती चर पर प्रतीपगमन द्वारा कर सकते हैं। परिशिष्ट में समवर्ती चर प्रतीपगमन विधि समझाई गई है।

---

[6] ये राज्य हैं झारखंड, छत्तीसगढ़ और उत्तराखंड।

[7] विनिर्माण अंश का GSDP अनुपात 2011-12 से 2014-15 का औसत है। यह CSO की 2011-12 की श्रृंखला के अनुसार है। औसत RRT और GSDP के अनुपात ऋणात्मक संबंध दिखा रहे है (2005-15 को छोड़कर)।

[8] सूचक की परिभाषा ऐसे की गई है : i=k100-[ATC हानि] - यहां सूचक के उच्चतर मान बेहतर प्रशासन दर्शाते है।

रेखाचित्र 5क : प्रतिव्यक्ति GSDP संवृद्धि और प्रतिव्यक्ति RRT, भूपरिवेश्टन के समंजन के बाद

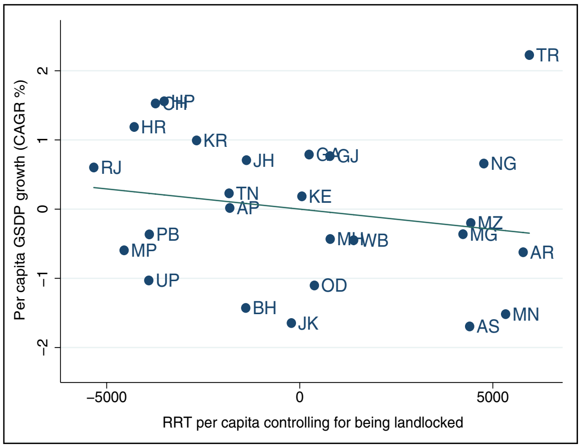

रेखाचित्र 5ख : विनिर्माण और प्रतिव्यक्ति RRT भू-परिवेश्टन के समंजन के बाद

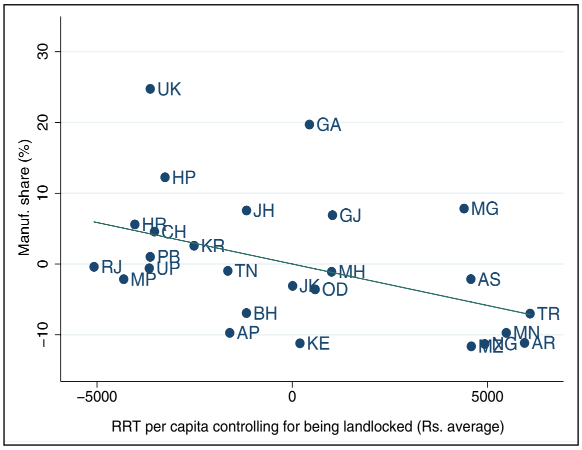

रेखाचित्र 5ग : राजकोषीय प्रयास और प्रति व्यक्ति RRT, भू-परिवेश्टन के समंजन के बाद

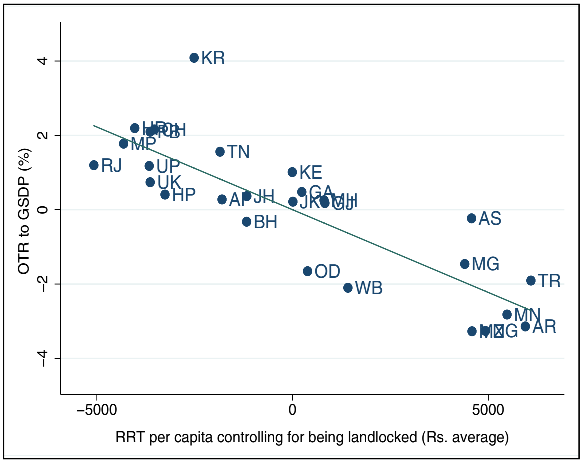

रेखाचित्र 5घ : प्रशासन सूचक और प्रतिव्यक्ति RRT, भू-परिवेश्टन के समंजन के बाद

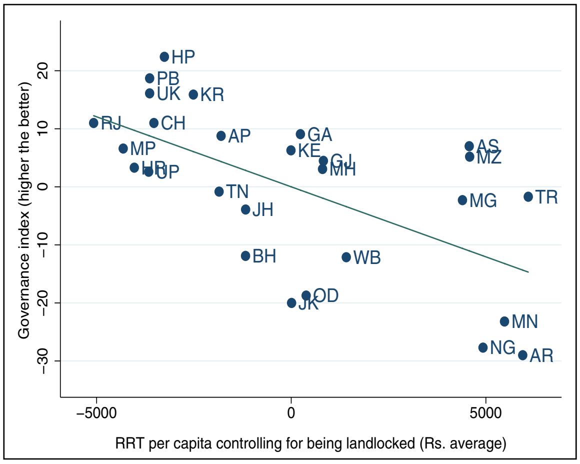

13.25 इस नए प्रतीपगमन से भी हमारे पूर्व उल्लेखित परिणामों/प्रवृतियों की पुष्टि ही हो रही है। रेखाचित्र 5क से 5घ में ये परिणाम चित्रित हैं किसी राज्य के भू-परिवेश्टित होने का प्रावधान करते हुए हम पाते हैं कि RRT के अधिक प्रवाहों के प्रतिव्यक्ति GSDP की संवृद्धि, पर कोई प्रभाव नहीं हैं और इसके विनिर्माण अंश, राजकोषीय प्रयास तथा प्रशासन पर नकारात्मक प्रभाव संभव है।[9]

13.26 एक अन्य रूप में भी परंपरागत विकास दर्शन पलटा जा चुका है। प्रारंभ में प्राकृतिक संसाधन संपन्नता को निम्न बचत-निम्न पूंजी-विकास के पाश से निकल पाने का एक मार्ग मानते थे। किन्तु अब अतीत के अनुभव यही बता रहे हैं कि संसाधन संपन्न अर्थव्यवस्थाएं इनकी दुर्लभता अनुभव कर रहे देशों की अपेक्षा धीमी गति से ही संवृद्धि कर पाती हैं। आर्थिक भूगोलविद् रिचर्ड ऑटी ने ऐसी दशा के लिए "संसाधन अभिशाप" की संज्ञा गढ़ी है। इसके बाद से अनेक अध्येताओं ने इस घटनाक्रम के अध्ययन किए हैं (देखें : सैचेज और वार्नर, 1995, 99; सला-ई-मार्टिन और सुब्रहमण्यम 2003 और रोस, 2014)।

---

9 भू-परिवेश्टित राज्य की अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की लागतें अधिक होती है, यह उसके विनिर्माण विकास और संवृद्धि के प्रयासों को कुछ कुंठित कर देता है। सैन्चेज और वार्नर (1997) का अनुमान था कि एक भू-परिवेश्टित देश की संवृद्धि दर महासागर तट वाल देशों से 0.58 प्रतिशत कम रह जाती है।

13.27 विदेशी सहायता की ही भांति संसाधन प्रचुरता के साथ भी संवृद्धि का ऋणात्मक संबंध एक अवधारणागत चुनौति प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के घटनाक्रम के तीन संभव सूत्रों की चर्चा आर्थिक रचनाओं में की गई है। सबसे पहला तो यही कि प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन लगान भाड़ा सृजक होता है। यह भीषण भाड़ा पाने वाले व्यवहार (भुक्खडता प्रभाव) के माध्यम से भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है। दूसरे, प्राकृतिक संसाधनों का स्वामित्व देशों को वस्तु कीमतों में बड़े उच्चावचनों का सामना करने को विवश कर देता है, उससे जीडीपी संवृद्धि में अस्थिरता आ जाती है। और तीसरे विदेशी सहायता की ही भांति संसाधन स्वामित्व देश को ''डच रोग ग्रस्तता'' की ओर अधिक संवेदनशील बना देता है।

13.28 संसाधन अभिशाप विषयक अधिकतर शोध प्रयास विभिन्न देशों के परिवेशों की तुलनाओं पर आधारित रहे हैं और इसी कारण भारतीय राज्यों के संदर्भ में इस विश्लेषण को लागू करने के प्रयास बहुत विचित्र लग रहे हैं। ये राज्य तो खनिज संपदा संपन्नता को लेकर बहुत ही विविधताओं से परिपूर्ण हैं। वैसे यही विधि कुछ दृष्टियों से बहुत उपयोगी भी हो सकती है, जैसे कि 2000 में मध्य प्रदेश से छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश से उत्तराखंड और बिहार से झारखंड को अलग किया गया है, और इस विभाजन ने संयुक्त प्रांतों की खनिज संपदाएं नवगठित राज्यों को सौंप दी है। यहां अध्ययन का एक बहुत स्वभाविक सा सुअवसर प्रतीत हो रहा है।

V. प्राकृतिक संसाधन और भारतीय राज्यों से प्राप्त साक्ष्य

13.29 उक्त राज्य विभाजनों का ध्यान रखते हुए नवगठित राज्यों पर ''संसाधन अभिशाप'' का आंकलन करने के लिए विश्लेषण अवधि को दो भागों में बांट दिया गया है (1981-2000 तथा 2001-2014)। यहां भी विश्लेषण के उन्हीं चरों का प्रयोग किया गया है, जिनकी पहचान RRT विषयक पूर्ववर्ती भाग में की गई थी। रेखाचित्र 6 में मूल्यानुसार प्रति व्यक्ति खनिजों के अंश दिखाए गए हैं। खनिज मूल्यों में ईंधन (कोयला, लिग्नाइट, कच्चा तेल (केवल धरातलीय) और प्राकृतिक गैस)[10] सभी धात्विक और गैर धात्विक खनिज तथा गौण खनिजों के मूल्य शामिल हैं। इस परिभाषा के अनुसार खनिज संपदा संपन्न राज्य हैं : झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा, राजस्थान और आश्चर्यजनक रूप से गुजरात भी।[11]

13.30 प्राकृतिक संसाधन उपलब्धता के प्रभाव के आंकलन की एक विधि तो यह जानना है कि क्या इन क्षेत्रों के जन समुदाय अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा गरीबी से

रेखाचित्र 6 : प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य (रूपए हजार, 2014)

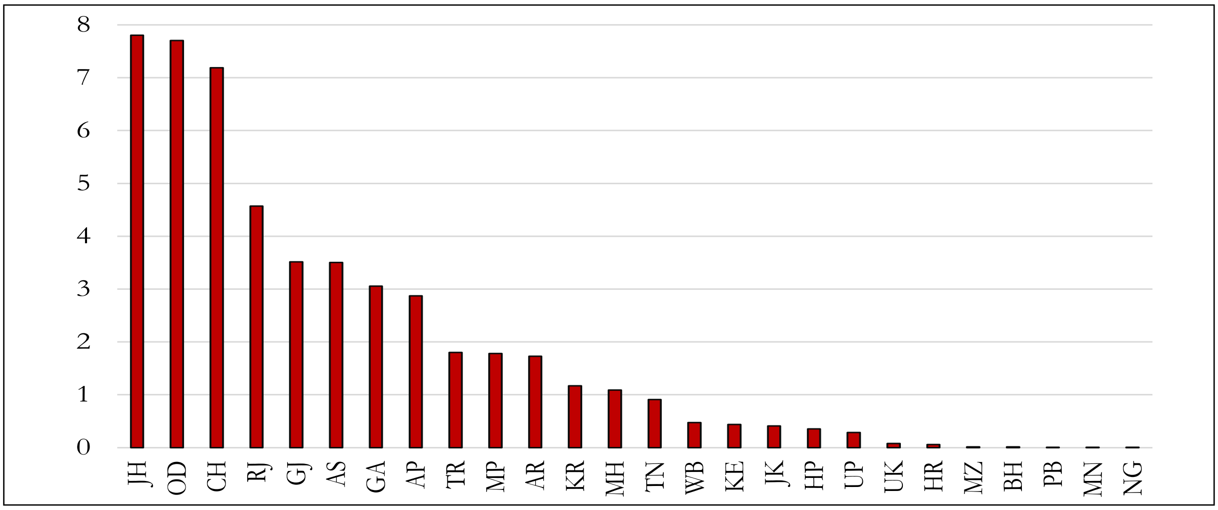

---

10 आंकड़े CSO प्रकाशित आंकड़ा सार के विभिन्न वार्षिक अंकों से लिए गए हैं। रेखाचित्र 6 के आंकड़ों में मेघालय नहीं है।

11 राजस्थान और गुजरात में खनिज मूल्य प्रतिव्यक्ति के स्तर खनिज संपन्न मध्यप्रदेश से अधिक होना हैरान कर सकता है। किन्तु गुजरात के भूगर्भ से कच्चे तेल, प्राकृतिक गैस और लिग्नाइट का बहुत उत्पादन हो रहा है। इसी प्रकार राजस्थान से प्राकृतिक गैस और तांबे, सीसे तथा जिंक के खनिजों का बहुत उत्पादन हो रहा है।

ऊपर उठ पाने में अधिक सफल रहे हैं? इसके लिए हमें गरीबी की प्रवृत्तियों[12] को लेकर खनिज संपन्न तथा अन्य राज्यों की 1993-94 से 2011-12 की अवधि में तुलना की है (NSSO के आंकड़े 2011-12 तक ही सुलभ है)। पहली झलक में तो खनिज संपन्न राज्य सफल लगते हैं। दो दशकों में उनका गरीबी अनुपात 31 प्रतिशत कम हुआ है जबकि अन्य राज्यों में यह कमी 28.5 प्रतिशत रही है।

तालिका 1 : गरीबी में कमी की तुलना

	1993-94		2011-12	
	अजजा	**सभी**	**अजजा**	**सभी**
खनिज संपन्न राज्य	70.5	48.0	53.7	17.1
अन्य राज्य	57.6	39.5	35.1	11.0

स्रोतः गरीबी रेखा एनएसएसओ यूनिट लेवल डाटा से आकलित है। पूर्ववर्ती योजना आयोग व तेंदुलकर समिति की रिपोर्ट से आकलित।

13.31 किन्तु एक अन्य परिप्रेक्ष्य में विचार करें तो खनिज संपन्न प्रांत कम सफल दिखाई पड़ते हैं। तालिका 1 दर्शा रही है कि संवृद्धि सफलता के लाभ समाज के सभी वर्गों को समान रूप से प्रवाहित नहीं हो पाए। इन खनिज संपन्न राज्यों में अनुसूचित जनजातियों की बहुलता है और इन्हीं समुदायों की गरीबी में मात्र 17 प्रतिशत की गिरावट आई है। यह अन्य राज्यों में इन समुदायों की गरीबी में गिरावट (22 प्रतिशत) से भी कम है।

13.32 जब संसाधन मूल्यों का आर्थिक परिणामों के साथ सहसंबंध आंकलित करते है तो उस समय भी यही द्वैध (दोहरापन, दुभांत) दिखाई देता है। एक ओर तो रेखाचित्र 7क, 7ख ऋणात्मक सह संबंध दिखा रहे हैं, इनमें 2012 में प्रतिव्यक्ति मासिक उपभोग और प्रतिव्यक्ति GSDP (2014) में प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य के साथ अंकित किया गया है। यह स्पष्ट हो रहा है कि संसाधन संपन्न राज्य, विशेषकर झारखंड, छत्तीसगढ़ और ओडिशा में प्रतिव्यक्ति GSDP के स्तर निम्न है (यहां गुजराज अपवाद है), और प्रतिव्यक्ति मासिक उपभोग भी कम है। रेखाचित्र 7क यह भी स्पष्ट कर रहा है कि इस ऋणात्मक संबंध का संचालन तो चार शीर्ष खनिज संपन्न राज्य, झारंखड, ओडिशा, छत्तीसगढ़ और राजस्थान कर रहे हैं।

13.33 दूसरी ओर रेखाचित्र 8क और 8ख यह भी दर्शा रहे हैं कि अब (कुछ समय से) यह संबंध बदल रहा है। यहां मध्यप्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश के 2000 में विभाजन का प्रभाव आंकने के लिए सकल अवधि को दो उपअवधियों में विभाजित कर दिया गया है। रेखाचित्र 8क में प्रति व्यक्ति खनिज उत्पादन और प्रतिव्यक्ति

रेखाचित्र 7क : प्रतिव्यक्ति GSDP और प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य, 2014

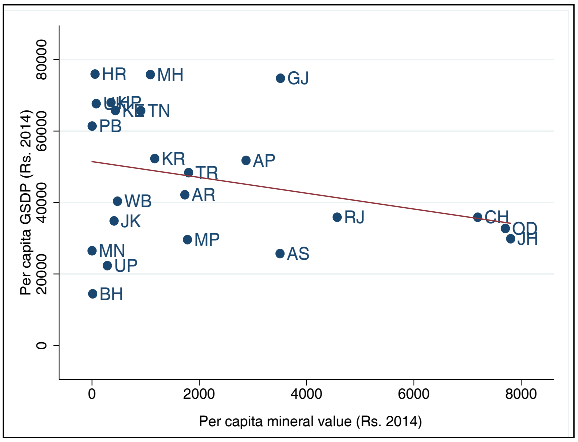

रेखाचित्र 7ख : MPCE और प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य* (2012)

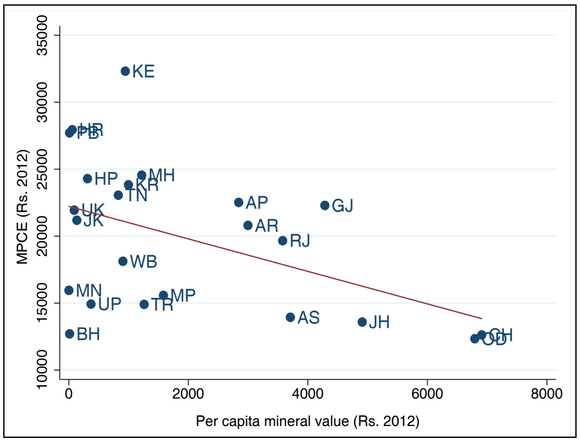

[12] यह गरीबी रेखा से नीचे की जनता के सकल जनसंख्या से अनुपात द्वारा परिभाषित है। गरीबी के विश्लेषण के लिए खनिज संपन्न राज्यों में मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा और पं. बंगाल को सम्मिलित किया गया है।

GSDP की चक्रवर्धी संवृद्धि दरों (AGR)[13] का संबंध दिखाया गया है। यह 1981-2000 तक ऋणात्मक था, किन्तु 2001-14 की अवधि में (रेखाचित्र 8ख) यह निश्चयात्मक नहीं है।

13.34 यदि भारतीय राज्यों के विकास अनुभव को भी ''डच व्याधि'' की भांति ''संसाधन अभिशाप'' का दंश लगा है तो इसका एक सूचक GSDP में विनिर्माण के अंश में गिरावट होगा। रेखाचित्र 9 में संसाधनों के मूल्य और GSDP[14] में विनिर्माण के औसत अंश के बीच संबंध दर्शाया गया है। यहां भी यही प्रतीत हो रहा है कि यह संबंध कमजोर ही है।

रेखाचित्र 8क : प्रतिव्यक्ति GSDP संवृद्धि और प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य (1981-2000)*

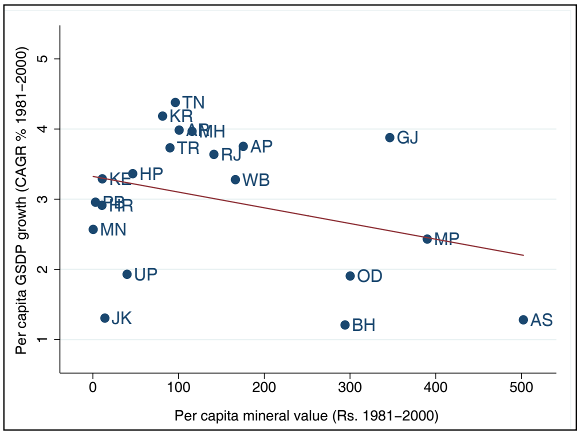

*बहिर्वासियों के प्रति संतुलित। गोवा और मेघालय शामिल नहीं हैं।

रेखाचित्र 9 : विनिर्माण का अंश और प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य (2001-14)

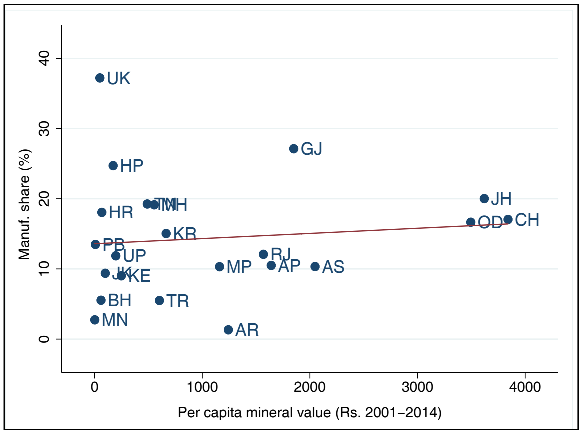

13.35 संबद्ध राज्यों द्वारा किए गए राजकोषीय प्रयासों से भी संसाधन अभिशाप की एक झलक मिल सकती है (जैसे कि हमने एक पूर्ववर्ती अनुच्छेद में GSDP में निजी कर राजस्व के अंश द्वारा जानने का प्रयास किया था)। यह निरंतर घटता दिखाई देगा यदि प्राकृतिक संसाधनों से प्राप्त गैर कर राजस्व पर ही प्रांतीय सरकारें निर्भर रहने लगेंगी। जैसी आशा थी, रेखाचित्र 10क ने 1981-2000 की अवधि में मामूली ऋणात्मक संबंध दर्शाया है। यह संबंध भी अधिक निकट अवधि 2001-14 में स्थिर नहीं रह पाया।

13.36 अंत में, रेखाचित्र 11 में पूर्ववर्ती भाग में परिभाषित प्रशासनिक दक्षता के सूचक को अंकित किया जा रहा

रेखाचित्र 8ख : प्रतिव्यक्ति GSDP संवृद्धि और प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य (2001-2014)

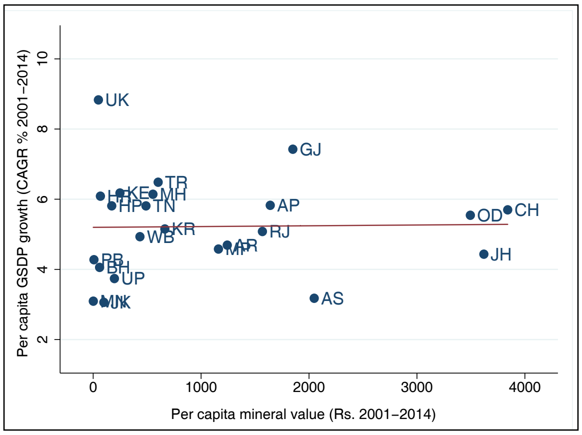

है। यहां भी संसाधन मूल्यों का कोई ऋणात्मक प्रभाव नहीं दिखाई दे रहा। यही नहीं गुजरात के अतिरिक्त एक अन्य संसाधन संपन्न राज्य, छत्तीसगढ़, बहुत अच्छा निष्पादन करता दिखाई दे रहा है। यहां भी प्रशासनिक दक्षता औसत से उच्च है।

13.37 उपर्युक्त चर्चा-विश्लेषण के संदर्भ में हम कह सकते हैं कि भारत के राज्यों में संसाधन अभिशाप के पक्ष या विपक्ष में कोई ठोस साक्ष्य नहीं मिल पा रहा। किन्तु GSDP और उपभोग के संदर्भ में हमारे परिणाम कुछ सशक्त अवश्य रहे हैं। विनिर्माण के अंश और प्रशासनिक दक्षता के साथ कोई ऋणात्मक संबंध नहीं दिखाई पड़ा है तो कोई सशक्त धनात्मक संबंध भी नहीं

[13] इस प्रतीपगमन में गोआ और मेघालय बहिष्शायी होने के कारण शामिल नहीं किए गए हैं।

[14] GSDP में विनिर्माण का अंश 2011-12 से 2013-14 का औसत है। यह बै की 2011-12 की श्रृंखला पर आधारित है।

मिला है। इसका अर्थ है कि संसाधन संपन्न राज्यों को संसाधन अभिशाप से स्वयं को मुक्त रखने के सतत् प्रयासों को और सबल बनाना होगा (ताकि भविष्य में भी यह आशंका दूर ही रहे)। हमारे उपर्युक्त रेखाचित्र बहुत ही स्पष्ट दिखा रहे हैं कि कुछ राज्य, सबसे उत्कृष्ट रूप से गुजरात, महत्वपूर्ण संसाधन संपन्नता के बावजूद भी अनेक सूचकों में औसत से कहीं बेहतर निष्पादन कर रहे हैं।

VI. निष्कर्ष

13.38 हां यह बहुत संभव है कि जहां तक 'RRT अभिशाप' और 'प्राकृतिक संसाधन अभिशाप' वैध हों उनका कारण सम्पर्क की त्रुटियों और विशेषकर भौतिक, वित्तीय और डिजिटल संरचनाओं की त्रुटियों में खोजा जा सकता है। ये राज्य प्राय: इन त्रुटियों से ग्रस्त रहते है। यह उत्तरपूर्वी राज्यों ही नहीं अनेक और संसाधन संपन्न राज्यों के लिए भी सत्य है। युद्ध स्तर पर सम्पर्क-संयोजन का विकास करना (सरकार ने प्रधानमंत्री जनधन योजना के माध्यम से वित्तीय समाहन का बड़ा प्रयास किया भी है), ऑप्टीकल फाइबर तंत्र को और तेजी से विकसित करना ऐसे कार्य हैं जो उक्त अभिशापों की गहनता को कम करेंगे। फिर भी हम अपने सभी अवलोकनों और निष्कर्षों के आधार पर कुछ महत्वपूर्ण नीतिगत सुझाव तो दे ही सकते हैं।

रेखाचित्र 10क : राजकोषीय प्रयास और प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य (1981-2000)

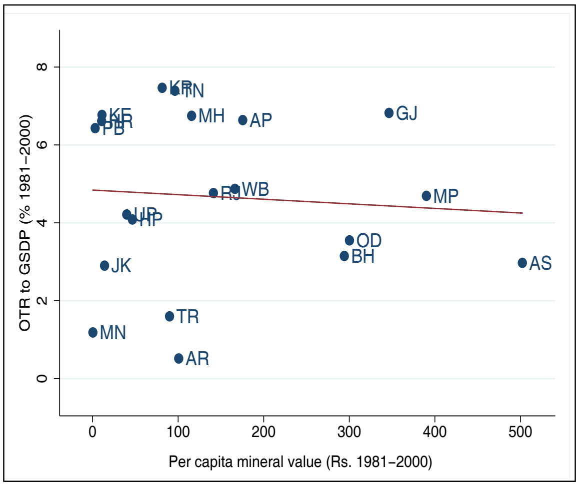

रेखाचित्र 10ख : राजकोषीय प्रयास और प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य (2001-14)

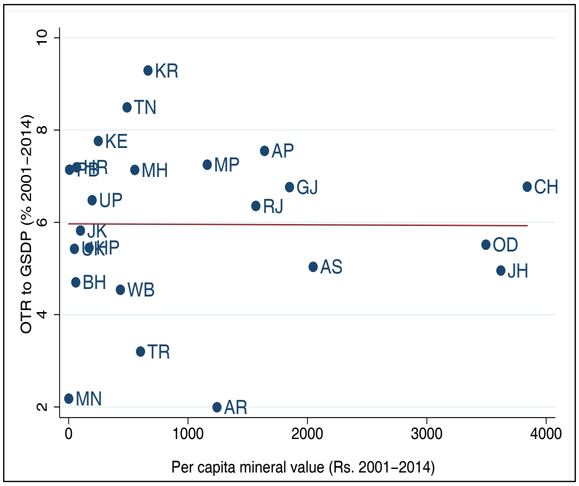

रेखाचित्र 11 : प्रशासनिक दक्षता सूचक और प्रतिव्यक्ति खनिज मूल्य (2013-14)

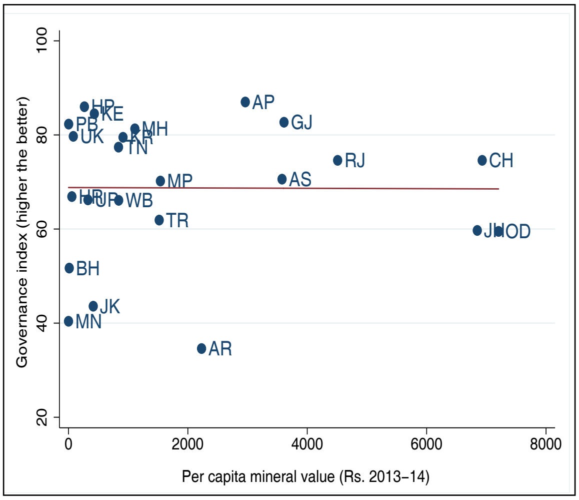

(क) पुन:वितरणात्मक संसाधन अंतरण (RRT)

13.39 कुल मिलाकर लग रहा है कि आर्थिक विकास के प्रति नया दृष्टिकोण सही होना चाहिए। जिसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ''सहायता अभिशाप'' कहा जाता है- उसी का कोई न कोई स्वरूप इन अंतरणों के साथ भी जुड़ा हो सकता है।

13.40 यदि ऐसा है, तो इस दृष्टिकोण से नीतिनिर्माण के लिए क्या सीख मिल सकती है? स्पष्टत: RRT को पूरी तरह बंद करने का सुझाव तो नहीं हो सकता, क्योंकि एक संघीय व्यवस्था केन्द्र से कुछ न कुछ पुन:वितरण करने की अपेक्षा अवश्यक करती है। इसे

सदैव अपेक्षाकृत कम विकसित क्षेत्रों/प्रांतों की ओर संसाधनों के प्रवाह करने ही होंगे। किन्तु केन्द्र को ऐसी विधियां खोज कर निकालनी होंगी कि इस द्वारा दिए गए अंतरणों की राशियों का अधिक उत्पादक रूप में प्रयोग संभव हो सके।

13.41 राज्यों को पुन:वितरणात्मक संसाधन प्रवाहों के परिमाण और रचना का निर्धारण करते समय अनेक कारकों पर ध्यान देना जरूरी होगा। सहकारी संघवाद की भावना के अनुरूप विभिन्न राज्यों के सरोकारों और वरीयताओं पर ध्यान देते हुए हमारे इन सुझावों को संशोधित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए:

संसाधनों को सीधे परिवारों की ओर उन्मुख करना: एक संभावना यह हो सकती है कि RRT का एक अंश सीधे ही किसी UBI जैसे प्रकल्प के माध्यम से परिवारों की ओर मोड़ दिया जाए। हमारे अध्याय 9 के विश्लेषण ने समझाया है कि वर्तमान विकास हस्तक्षेपों में लक्षिता को लेकर अनेक समस्याएं विद्यमान हैं और सीधे परिवारों को संसाधन अंतरण से इनमें से कुछ का समाधान अवश्य हो जाएगा।

अन्तरणों को राजकोषीय निष्पादन में सुधार के साथ जोड़ना : उपर्युक्त विश्लेषण में पाए गए राजकोषीय पूर्व रूझानों को देखते हुए कि उच्चतर अंतरणों से राज्य के अपने कर प्रयास शिथिल हो सकते हैं, यह प्रयास किया जा सकता है कि अंतरण को किसी न किसी रूप से कर राजस्व जुटाने के बेहतर प्रयासों के साथ जोड़ दिया जाए। संभवत: भविष्य में कोई वित्त आयोग 12वें आयोग द्वारा अंतरण कर प्रयास संबंध को पुन: स्थापित कर सकेगा। हम तो यही कहेंगे कि इसका भार मान 12वें आयोग की सिफारिश से भी अधिक होना चाहिए।

प्रशासन दशानुसार अन्तरण : हमने देखा है कि कई संसाधन संपन्न राज्य सरकारों का प्रशासन स्तर पर निष्पादन भी अच्छा रहा है। संभवत: राज्यों की अंतरित संसाधनों को भली प्रकार प्रयोग कर पाने की क्षमता का भी यहां बहुत महत्व हो सकता है। बेहतर प्रशासकीय और अच्छे संस्थागत व्यवहार को बढ़ावा देने के लिए अंतरण की प्रक्रिया में ही कुछ अवलोकनीय संस्थागत सूचकों को ऐसे कोष अंतरण पाने की कसौटी बनाया जा सकता है।

(ख) प्राकृतिक संसाधन से प्राप्त राजस्व

इस अध्याय का विश्लेषण तो यही सुझा रहा है कि भारत में अन्य देशों में दिखाई पड़े ''संसाधन अभिशाप'' को कोई साक्ष्य नहीं मिल रहा। वास्तव में ऋणात्मक सह संबंध का वर्ष 2000 के बाद से भंग हो जाना यही सुझा रहा है कि नवगठित खनिज संपन्न राज्यों ने इनका प्रबंधन पूर्ववर्ती राजनीतिक इकाइयों की अपेक्षा कम दक्षताहीनता के साथ किया है।

13.43 किन्तु खनिज संपदा के वरदान होने का भी कोई साक्ष्य नहीं मिल पा रहा है, जैसा कि पुराने अर्थशास्त्री मानते रहे है। इससे यही सुझाव मिलता है कि संसाधनों के बेहतर प्रयोग के लिए प्रशासनिक व्यवस्था को सुधारने की आवश्यकता है, इन संसाधनों पर अधिक निर्भर रहे प्रांतों में तो ये सुधार विशेषरूप से अनिवार्य हैं।

13.44 अभी तक राजस्व व्यवस्था ऐसी रही है कि राज्य सरकारों को खनिज संसाधनों की निकासी या खनन पर एक रॉयल्टी मिलती है। किन्तु वर्तमान व्यवस्था में भी संसाधन विदोहन के फलों के विभाजन में नागरिकों को भागीदार बनाया जा सकता है। नागरिक भागीदारी की एक ठोस व्यवस्था बड़े स्तर पर भ्रष्टाचार की रोकथाम, और संसाधनों के अतिशय विद्रोहन को रोकने में बहुत सहायक सिद्ध होगी।

13.45 खनिजों से प्राप्त राजस्व का संबद्ध राज्यों के नागरिकों के विकास और हित संवर्धन में प्रयोग सुनिश्चित करने के लिए ही खान एवं खनिज (विकास एवं नियमन) संशोधन अधिनियम, 2015 ने इन बातों को समाहित किया है :

- 'खनन कार्यों' से प्रभावित जनपदों में 'जनपद खनिज संस्थान' (DMF) नाम न्यासों की स्थापना होगी।
- इन DMFs की रचना और कार्यों का निर्धारण राज्य सरकारें करेंगी। यह संस्थान उन व्यक्तियों के हितार्थ कार्य करेंगे जो खनन से प्रभावित हो रहे हों।

13.46 नागरिक भागीदारी बढ़ाने का एक तरीका तो ऐसे कोष की स्थापना हो सकता है, जिसमें सारा खनन

राजस्व जमा हुआ करे। मान्यता यही है कि खनिज संपदा जनगण की वह सांझी संपदा है जिस पर सरकार का अधिकार जन प्रतिनिधि न्यायाधिकारी के रूप में ही है। इस जनगण में भावी पीढ़ियां भी सम्मिलित हैं। अत: प्राकृतिक संसाधनों का राजस्व एक बर्बादी रहित स्थायी कोष में जमा होना चाहिए। इस कोष से सृजित वास्तविक आय का उन नागरिकों में विभाजन होना चाहिए जो खनन विदोहन में पणधारी हो और इससे प्रभावित हुए हों।

13.47 जनपद स्तर पर कोष की रचना का विचार सराहनीय है। यह इस बात का भी प्रमाण है कि राज्य भविष्य में संभावित ''संसाधन अभिशाप'' के प्रभावों के प्रति भी सजग है। फिर भी अन्य अधिक सुगठित एवं सक्रिय खनन प्रभाविता जन भागीदारी के प्रस्तावों-विचारों पर भी चिन्तन-मनन् होना चाहिए।

13.48 एक विकल्प संसाधन विदोहन से प्राप्त राशियों का किसी UBI प्रणाली के माध्यम से संबद्ध व्यक्तियों के खातों में अंतरण हो सकता है। किन्तु इस आय अंतरण को प्रभावी बनाने और व्यक्तियों को संसाधनों के प्रबंधन में अपना हित देखने को विवश करने के लिए UBI पश्चात निर्वर्त्य आय पर कर लगा उसके राजस्व को विकास कार्यों में प्रयोग किया जा सकता है। संभव है UBI और कराधान की यह युति नागरिकों के करों के प्रति दृष्टिकोण को अधिक उदार बना दे क्योंकि उन्हें यहां स्पष्टत: सामाजिक अनुबंध का उनके अपने हित संवर्धन में योगदान दिखाई दे जाएगा।

13.49 भारत में ऐसे उपायों के साथ कभी प्रयोग नहीं हुए हैं। किन्तु अनेक देश स्थायी कोषों का प्रभावी रूप में प्रयोग कर रहे हैं। हां UBI के लिए तो अभी प्रारंभिक अध्ययन प्रकल्पों पर ही काम चल रहा है। भारत में इन प्रक्रियाओं को प्रारंभ करने का विचार किया जा सकता है, शायद इसीलिए कि इनके जोखिम भारत भूमि पर किसी दिन ''संसाधन अभिशाप'' के अवतरित हो जाने की लागतों के समक्ष बहुत तुक्ष्य होंगे (विश्व के अनेक देश इस अभिशाप की विभीषिका को झेल रहे हैं)।

13.50 सारांश के रूप में, पुन: वितरित संसाधनों या प्राकृतिक संसाधनों से अनायास प्राप्त होने वाली समृद्धि लोकतांत्रिक भारत जैसी व्यवस्थाओं में भी आश्चर्यकारी व्याधियों को जन्म दे सकती है। उन्हें पहचान कर सृजनात्मक रूप से प्रतिक्रिया करने पर हम इतिहास की भूलों को दोहराने से बच सकते हैं।

बॉक्स 1 : गोआ में खनन पर सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय

WD 435/2012 (गोआ फाउंडेशन बनाम भारत संघ एवं अन्य गोआ खनन केस) में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय सार्वजनिक कार्यक्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के विषय में अनेक महत्वपूर्ण निर्णयों की एक श्रृंखला की परिणति था। यहां सर्वोच्च न्यायालय ने गोआ में खनन की उच्च सीमा निर्धारित करने और गोआ लोहअस्यक स्थायी कोष की रचना के आदेश दिए हैं, ये दोनों अन्तर्पीढ़ी समता और धारणीय विकास के तकाजों को पूरा करेंगे। जब इस पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पहले प्रतिपादित सार्वजनिक न्याय सिद्धांत, विशेषकर CA 4154/2000 (फोमेंटो रिसोर्ट्स एंड अन्य बनाम भारत संघ एंड अन्य, 2G स्पेक्ट्रम केस) आदि के साथ विचार करते हैं तो खनिजों के संबंध में एक नया ही चित्र उभर कर आता है।

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन के लिए क्या निहितार्थ होंगे?

खनिजों सहित सभी प्राकृतिक संसाधन हमारी सांझी विरासत है, जिसे भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखना हमारी जिम्मेदारी है। भूमिगत खनिजों पर प्राय: राज्य सरकार का अधिकार माना जाता है और सागर तल के खनिजों पर केन्द्र का। अत: राज्य जनता के न्यासी के रूप में इनका प्रबंधन करने वाले अधिकारी हैं। गोआ में खनन पर उच्चतम सीमा लगाने का तात्पर्य यही है कि ये खनिज आगे कई पीढ़ियों को भी सुलभ होते रहें साथ ही सीमित विदोहन की अनुमति पर्यावरण को संभावित क्षति को भी सीमित रखेगी।

गोआ लोह अस्यक स्थायी कोष के गठन के प्रस्ताव पर विचार करने का आग्रह इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि यह न्यायिक आदेश से गठित होने की संभावना से पूर्ण है। नॉर्वे तथा 50 से अधिक अन्य देशों ने तेल और अन्य प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन से प्राप्त आर्थिक लगान भाड़े पर आधारित स्थायी कोषों की स्थापना पहले ही की हुई है। इनमें सबसे पुराना कोष तो टेक्सास में 1876 में स्थापित किया गया था।

संदर्भ

1. Kochhar, K. et. al. (2006),*"India's Pattern of Development: What Happened, What Follows?",* Journal of Monetary Economics, 53(5).

2. Easterly, William (2003), *"Can Foreign Aid Buy Growth?",* The Journal of Economic Perspectives, 17(3).

3. Rajan, Raghuram & A. Subramanian (2007), *"Does Aid Affect Governance?", The American Economic Review AEA Papers and Proceedings, 97(2).*

4. Bräutigam, D. A. & Stephen Knack (2004), *"Foreign Aid, Institutions, and Governance in Sub-Saharan Africa", Economic Development and Cultural Change, 52(2).*

5. Azam, Jean-Paul, S. Devarajan & S. A. O'Connell (1999), *"Aid Dependence Reconsidered", World Bank Policy Paper No. 2144.*

6. Adam, C. S. & S. A. O'Connell (1999), *"Aid, Taxation and Development in Sub-Saharan Africa",* Economics and Politics, II (3).

7. Max Corden, W. & J.P. Neary (1982), *"Booming Sector and Deindustrialization in a Small Open Economy",* Economic Journal, 92.

8. Ross, M. L. (2014), *"What have we Learned about the Resource curse?"* available at https://ssrn.com/ abstract=k2342668.

9. Sachs, J. D. and Andrew M. Warner (1995), *"Natural Resource Abundance and Economic Growth",* NBER Working Paper 5398.

10. Sala-i-Martin, X. and Arvind Subramanian (2003), *"Addressing the Natural Resource Curse: An Illustration from Nigeria",* Journal of African Economies, 22(4).

परिशिष्ट

1. निम्न रेखाचित्र सकल अंतरण और RRT प्रवाह (प्रथम परिभाषा के अनुसार) दर्शा रहा है। ये दोनों संबद्ध राज्यों के GSDP में अंश के रूप में अंकित किए गए हैं और 1993-94 से 2014-15 की अवधि के औसत स्तर है। परिभाषा D1 के अनुसार 10 प्रदेशों में RRT शून्य या ऋणात्मक हैं (पं. बंगाल, आंध्र प्रदेश, गोआ, केरल, कर्नाटक, तमिलनाडू, पंजाब, गुजरात, हरियाण और महाराष्ट्र)।

रेखाचित्र A1 : GSDP के अनुपात के रूप में सकल अन्तरण और RRT

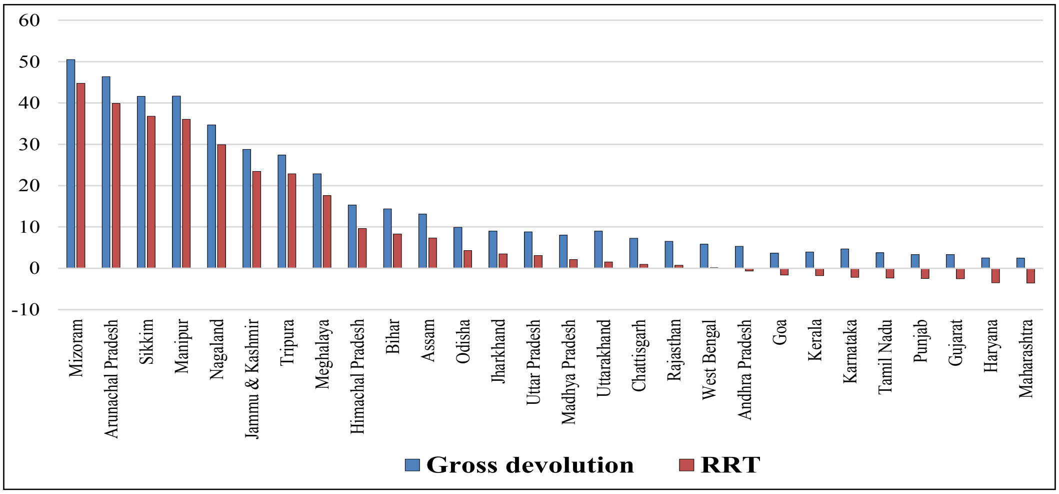

2. सहायक चर (IV) प्रतीपगमन : इस प्रतीपगमन के लिए दो IV सुझाए गए हैं :

(i) राज्यों की राजधानी का नई दिल्ली से अन्तर, और

(ii) राज्य की राजधानी का निकटतम अंतर्राष्ट्रीय सीमा से अंतर।

इन मापकों की शाब्दिक व्याख्या नहीं होनी चाहिए। ये तो संसाधन अंतरण को प्रभावित कर सकने वाले गैर-आर्थिक कारकों के लिए निमित्तमात्र हैं। उदाहरण के लिए अंतर्राष्ट्रीय सीमा से अंतर का तात्पर्य सामरिक कारणों से अन्तरण से हो सकता है। क्या ये चर उपयुक्त ''निमित्त'' हैं? रेखाचित्र A2 और A3 में इन सहायक चरों के अनुसार RRT, को अंकित किया गया है। इसे हम IV प्रतीपगमन का प्रथम सोपान कह सकते हैं। इन चित्रों में एक बहुत सशक्त, सांख्यिकी की दृष्टि से महत्वपूर्ण संबंध दिखाई दे रहा है। उसका चिन्ह भी अपेक्षा के अनुरूप है : निकटतम अंतर्राष्ट्रीय सीमा से जितनी अधिक दूरी उतना ही कम RRT (रेखाचित्र A2)। इन सभी प्रतीपगमनों में सिक्किम को शामिल नहीं किया गया है।

रेखाचित्र A2 : RRT और अंतर्राष्ट्रीय सीमा से अन्तर

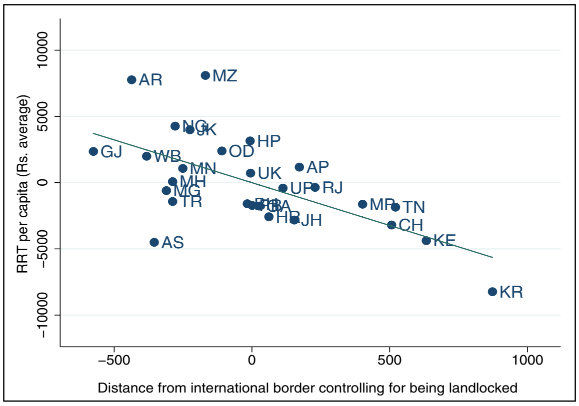

रेखाचित्र A3 : RRT और नई दिल्ली से अंतर

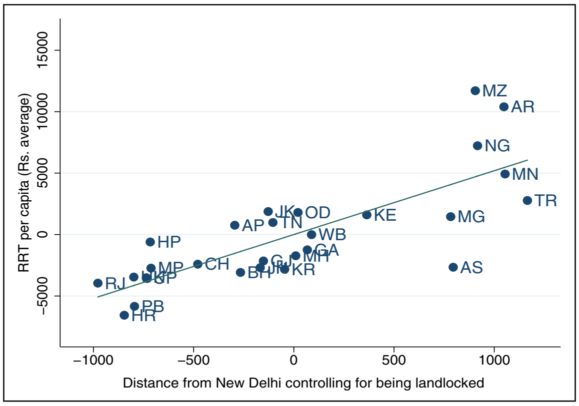

स्पर्धी संघवाद से स्पर्धी अनुसंघवाद नगरः ऊर्जाकेन्द्रों के रूप में

14

अध्याय

''सारे जाने हुए इतिहास से एक ही सीख मिली है : यदि समृद्ध होना चाहते हो तो नगरों का निर्माण करो। नगर वे स्थान है जो नए विचारों वाले नए-नए लोगों को आकर्षित करते हैं''

-जेन जेकब्स, सिटीज एंड वैल्थ ऑफ नेशन्स की रचियता

''हर कोई विकेन्द्रीकरण चाहता है, किन्तु मात्र अपने स्तर तक''

-ये कथन प्रोफेसर राजा चेल्लिहा का माना जाता है।

भारत के शहरों के ताजा आंकड़ों का नवीन विश्लेषण क्षमताओं के बीच एक सशक्त सह संबंध सुझा रह है, ये क्षमताएं हैं : संसाधनों और व्यक्तियों की, शहरी स्थानीय निकायों (UCBs) की और उनकी सेवा प्रदाय व्यवस्थाओं की। उन पर थोंपे गए प्रतिबंधों के बावजूद स्थानीय निकाय स्पष्ट रूप से कहीं अधिक संसाधन जुटाने में समर्थ है। प्रौद्योगिकी, विशेषकर उपग्रह बिम्व सृष्टि यहां एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। नगरों का सशक्तिकरण बहुत निर्णायक हो सकता है, किन्तु राज्य सरकारों से प्राप्त होने वाली राजनीतिक-आर्थिक चुनौतियां भी कम नहीं हैं, ये वित्त आयोगों के लिए बहुत रोचक प्रश्न उठा रही हैं। संभव है सफलता के कुछ उदाहरण आदर्श बनकर कहीं बृहतर स्तर पर परिवर्तन के संप्रेरक बनेंगे। नगरों को भी राज्यों की भांति परस्पर स्पर्धा (होड़ लगाकर) गतिशीलता की शक्तियों को बंधन मुक्त करना होगा। भारत को अपने स्पर्धी संघवाद के साथ स्पर्धी अनुसंघवाद को भी जोड़ लेना चाहिए।

I. विषय प्रवेश

14.1 नगरों की महान प्रतिबोधि लेखिका जेन जेकब्स का तर्क रहा है कि नगर जटिल, सजीव और निरंतर सृजनशील इकाइयां होती है और ये नियोजक तथा वास्तु शास्त्रियों के प्रत्येक नियमन प्रयास का विरोध करती हैं। किन्तु, भारत में तेजी से बढ़ते हुए शहरीकरण के प्रति जेकब्स का कथन स्वीकार कर हम भाग्यवादी दर्शन तो नहीं अपना सकते। अभी 1991 तक ही 220 मिलियन भारतीय नगरों में बसे थे। यह जनसंख्या का एक चौथाई हिस्सा ही थे। किन्तु 20 वर्ष बाद 2011 में ये संख्या 380 मिलियन पर पहुँच गई है जो 8000[1] के लगभग नगरों और कस्बों में बसी है। इन नगरों में से कम से कम 53 तो ऐसे है जिनकी आबादी एक मिलियन से अधिक हो चुकी है। अब शहरी भारतीय देश की एक तिहाई आबादी हैं और ये सकल जीडीपी के 60 प्रतिशत का उत्पादन कर रहे हैं।

14.2 सभी संकेत यही दर्शा रहे हैं कि शहरीकरण ही भारत के विकास पथ की रचना करने जा रहा है। गांवों से शहरों की ओर व्यापक जन पलायन प्रशासनतंत्र, विशेषकर नगरपालिकाओं के लिए बहुत बड़ी चुनौतियां प्रस्तुत करने वाला है, क्योंकि इन्हीं निकायों को वे सुविधाएं प्रदान करनी हैं जो वर्तमान नगरवासियों और नए-नए गांवों से आकर शहर में बसने वाले प्रवासियों के लिए आवश्यक हैं। यदि देश को गतिविधि केन्द्रों की ओर प्रवसन के सुअवसरों का भरपूर लाभ उठाना है तो इन चुनौतियों पर पार पाना बहुत ही आवश्यक रहेगा। किन्तु अभी तक भारतीय शहरी निकायों का निष्पादन

[1] 4041 वैधानिक नगर है और 3892 जनगणना द्वारा नगर माने गए हैं।

प्रदर्शन कैसा रहा है और उनको सफलता के लिए क्या उपाय अपनाने होंगे? यह अध्याय इन्हीं के एक प्रारंभिक आंकलन का प्रयास कर रहा है।

14.3 हां एक बात अवश्य स्पष्ट हो रही है, जिस प्रकार राज्यों के बीच स्पर्धा परिवर्तन और प्रगति की एक सशक्त प्रेरणा बन रही है उसी प्रकार यह स्पर्धा प्रेरणा राज्यों और नगरों तथा नगरों के बीच भी व्याप्त होनी चाहिए। उत्तरदायित्व से सन्नद्ध, संसाधनों से संशक्तिकृत और जबावदेही को बाध्य नगर उन नवीन गत्यात्मकताओं को बन्धनमुक्त कर सकते है जो भारत के स्पर्धी संघवाद में स्पर्धी अनुसंघवादी शक्तियों का भी संचार कर देंगी।

II. पृष्ठभूमी

14.4 सामान्य धारणाओं के विपरीत भारत की शहरीकरण की दर अन्य देशों के समान ही रही है। रेखाचित्र 1 में नवीनतम शहरीकरण दरों को विकासशील एवं नव उदीप्यमान देशों के एक समूह की प्रति व्यक्ति GDP के अनुसार अंकित किया गया है। भारत औसत धनात्मक संबंध रेखा से बहुत दूर नहीं है। इसी प्रकार भारत का शहरीकरण विकासक्रम भी असामान्य नहीं है। रेखाचित्र 2 ने जीडीपी प्रतिव्यक्ति के विभिन्न स्तरों पर तीन देशों की शहरीकरण की दरों को अंकित किया गया है। यह स्पष्ट हो रहा है कि सभी ने ऐसे शहरीकरण प्रतिरूप का अनुसरण किया है जो प्रति व्यक्ति जीडीपी के साथ-साथ बढ़ता गया है। अत: भारत और चीन के बीच शहरीकरण में अन्तर के एक बड़े भाग का दायित्व दोनों के आर्थिक विकास के स्तरों में अंतर पर थौंपा जा सकता है। सामान्य धारणाओं के विपरीत भारत और चीन की शहरीकरण की प्रवृत्तियों में बहुत समानताएं हैं।

14.5 भले ही भारत के शहरीकरण का परिमाण विशेष नहीं हो, किन्तु इसका शहरी क्षेत्रों के आकार का स्वरूप अवश्य विशेष है। यह जिप्फ के नियम का अनुसरण नहीं करता। इस नियम के अनुसार देश का सबसे बड़ी जनसंख्या वाला नगर दूसरे क्रम के नगर से दोगुना, तीसरे क्रमवाले से तीन गुना बड़ा होता है आदि। इस प्रकार 'H' अनुक्रम वाले नगर का आकार सबसे बड़े नगर के 1/H अंश के समान ही होगा। यह नियम अनेक देशों में सत्यापित हुआ है किन्तु भारत में वैध नहीं हो पाया है।

14.6 नगर अनुक्रम और उनकी जनसंख्या के लघुगणकों के चित्रांकन से यह बात स्पष्ट हो जाती है। रेखाचित्र 3क-ग में संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील और भारत की जानकारी को चौविन आदि (2016) द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार अंकित किया गया है। जहां जिप्फ का नियम वैध हो उन देशों में यह रेखाचित्र एक (−1) ढाल वाली सरल रेखा जैसा होना चाहिए। अमेरिका और ब्राजील इस अवधारणा के बहुत निकट है। इनके ढाल गुणंक क्रमश: (−)1.4 और (−)1.2 हैं। साथ ही R^2 का मान दोनों ही मामलों में 0.99 के लगभग है।

रेखाचित्र1: प्रतिव्यक्ति जीडीपी और शहरीकरण (2015)

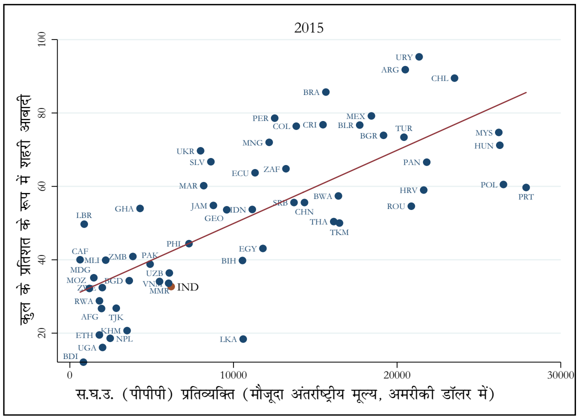

स्रोत: विश्व विकास सूचक और UNO, आर्थिक एवं सामाजिक कार्य विभाग, जनसंख्या प्रभाग (2014), World Urbanization Prospets : The 2014 Revision.

रेखाचित्र 2 : प्रतिव्यक्ति जीडीपी और शहरीकरण (1990)

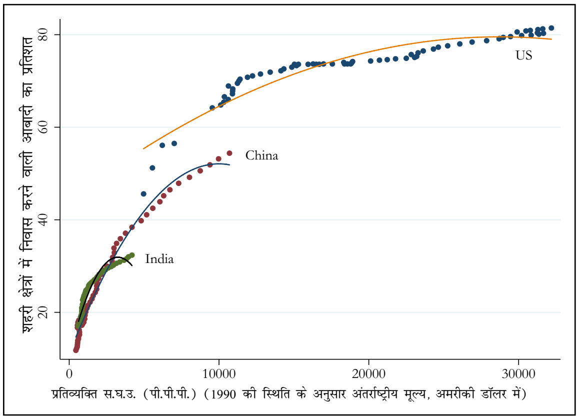

स्रोत: Maddison Project आंकड़ा आधार, Penn World Tables and United Nation's आर्थिक एवं सामाजिक कार्य विभाग, जनसंख्या प्रभाग (2014), World Urbanisation Prospects : The 2014 Revision.

रेखाचित्र 3 : जिप्फ का नियम : नगर/शहरी क्षेत्र की जनसंख्या और नगर/शहरी क्षेत्र जनसंख्या अनुक्रमांक

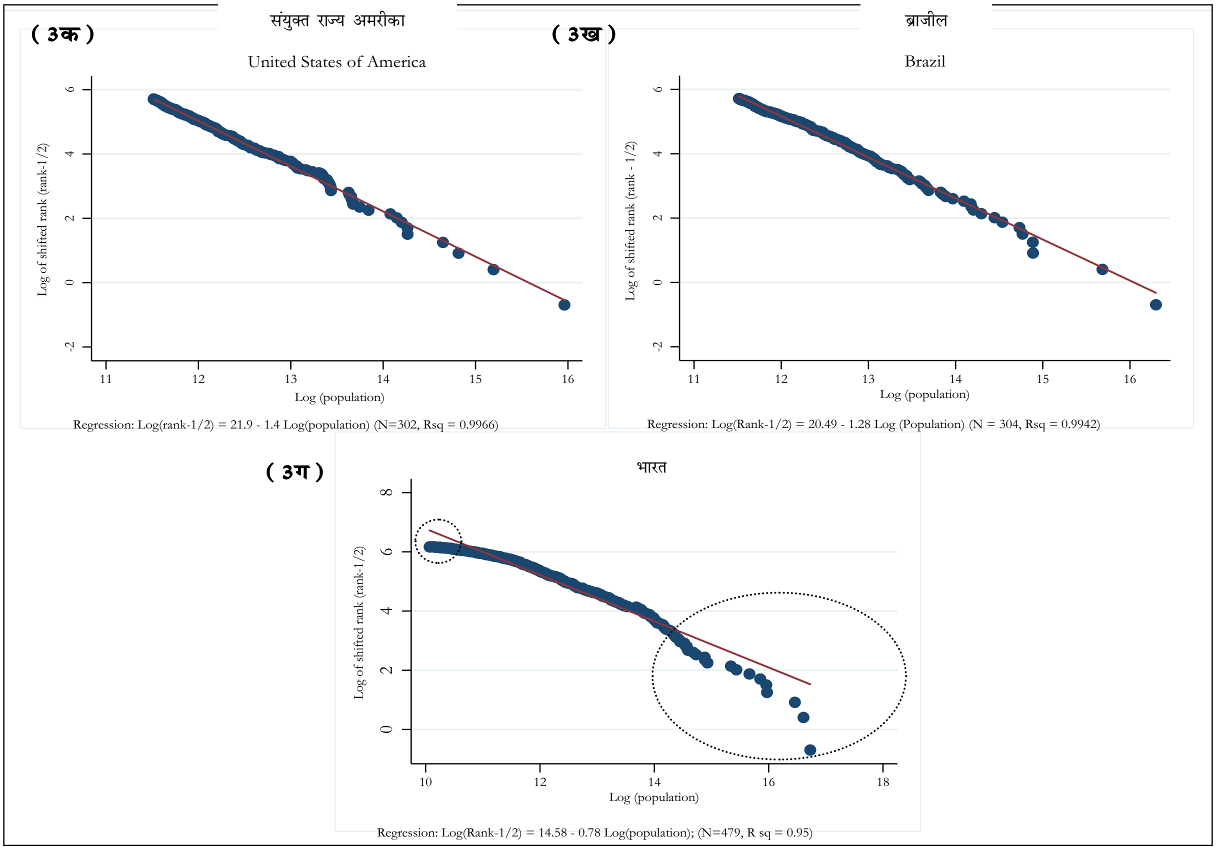

स्रोत : रेखाचित्र (3a से 3c) : शहरी क्षेत्रीय जनसंख्या के भारत के आंकड़े जनगणना 2011 के हैं। संयुक्त राज्य और ब्राजील के आंकड़े United Nations Statistic, Division की Demographic Year Book, 2015 से लिए गए हैं।

किन्तु भारत में रेखाचित्र अवतल है और ढाल गुणंक (–)0.78 तथा R^2 लगभग 0.95 है। इससे यह पता चलता है कि बहुत से छोटे शहर बहुत ही छोटे है। ये 3ग में चित्रित श्रेष्ठतम प्रवृति की सरल रेखा से नीचे रह जाते हैं। और यही बात कुछ बड़े शहरों पर भी लागू हो रही है।

14.7 कई कारण है कि बड़े शहर भी अपेक्षाकृत छोटे क्यों रह गए हैं। एक तो संभावना है कि उनके संरचना तंत्र पर क्षमता से अधिक भार है। दूसरे, भारत अन्य देशों की तुलना में भूमी संसाधन की दुर्लभता वाला देश भी है। यह प्रवसन को हतोत्साहित करता है, क्योंकि विकृत भूमी बाजार में किराए भाड़े असह्य स्तरों तक पहुंचे हुए हैं। 2050 तक इसका भूमी जनसंख्या अनुपात घटकर 1960 से एक चौथाई रह जाएगा। इस प्रकार भारत दुनिया का सबसे भू दुर्लभ देश हो जाएगा (कपूर आदि, 2014)। यही नहीं, भारत में प्रबल स्थानाधारित वरीयताएं भी सामाजिक तंत्रों में बहुत गहरे रची बसी है (चौपिन आदि, 2016)।

14.8 आगामी वर्षों में इन विकृतियों में सुधार होंगे। अर्थात भारत का शहरीकरण भी अन्य उदीप्यमान बाजारों के स्वरूप के अनुरूप होना चाहिए और 2030 तक शहरी जनसंख्या का अनुपात 40 प्रतिशत हो जाना चाहिए। और इस शहरी संवृद्धि का अधिकांश, संभवत:, बड़े नगरों में ही होगा। यह देश को जिप्फ के नियम के निकट ले जाएगा। इससे अनेक सुअवसरों का सृजन होगा, किन्तु साथ ही कुछ जोखिमें भी पैदा होगी।

III. प्रमुख चुनौतियां

14.9 शहरी क्षेत्रों के विकास का प्राथमिक दायित्व राज्य सरकारों और नागरिक निकाय कहलाने वाले नगर निगमों, नगरपालिकाओं और नगर पंचायतों पर होता है। प्रशासन के ये स्तर बहुत ही बड़े और दुरूह समस्या

तंत्र का सामना करते हैं : इनके रचियता हैं क्षीण प्रशासनिक क्षमताएं, संरचनाओं के बड़े अभाव और अपर्याप्त वित्तीय संसाधन।

14.10 नगर निकायों को एक प्रशासनिक चुनौति का भी सामना करना होता है। प्राय: शहरों में एक नगर प्रशासन या स्थानीय स्वशासनतंत्र नहीं होता। इस कारण कार्यकलापों में प्रतिच्छादन आ जाता है। विभिन्न संस्थानों विभागों के बीच उत्तरदायित्वों और कार्यों का बहुत विभाजन और बिखराव हो जाता है : नगरपालिका, राज्य के विभाग (पुलिस, लोक निर्माण विभाग, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास) तथा अर्द्ध नागरिक अर्द्ध सरकारी एजेंसियों जो सीधे राज्य सरकार को उत्तरदायी होती हैं, इस संस्थागत सगुंच्छ निर्माण करती हैं। साथ ही पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के अभाव की समस्या भी है। नगरनिकायों के वित्त और उनकी आधारभूत सेवाओं की गुणवत्ता पर अनेक नगरों में छोटी से छोटी जानकारी भी नहीं मिल पाती। इसका आंशिक कारण यह भी है कि अभी तक ई-प्रशासन प्रयास सारे देश में समान रूप से लागू नहीं हो पाया है।

14.11 दूसरी चुनौती संरचनातंत्र के अभाव की है। उत्पादक एवं स्वस्थ शहरीकरण के लिए दक्षतापूर्ण जन सेवा प्रदाय व्यवस्था होनी चाहिए। किन्तु भारत के प्रत्येक नगर में जल एवं बिजली की आपूर्ति, मल प्रबंधन, सार्वजनिक परिवहन, शिक्षा, स्वास्थ्य परिचर्या, सुरक्षा और प्रदूषण की समस्याएं विद्यमान है। जरा एक उदाहरण पर ही ध्यान दें : WHO/UNICEF के संयुक्त निगरानी कार्यक्रम (2015 की रिपोर्ट और सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्यों (MDG) के आंकलन की स्वच्छता विषयक रिपोर्ट बता रही है कि MDG का निर्धारित लक्ष्य तो 77 प्रतिशत था किन्तु भारत 2015 तक 63 प्रतिशत जनसंख्या को ही स्वच्छता सुविधाएं सुलभ करा पाया है। नागरिक उपरि संरचना सुविधाओं के आधार पर विश्व के नगरों के अनुक्रम में नई दिल्ली और मुम्बई को 47वां और 50वां स्थान ही मिल पाया है (देखें State of World Cities, 2012/13)। रेखाचित्र 4 इन नगरों में विभिन्न संरचना सुविधाओं के सापेक्षरूप से निम्न स्तर दर्शा रहा है।

14.12 शहरी विकास मंत्रालय द्वारा नियुक्त उच्च शक्ति विशेषज्ञ समिति (HPEC) के अनुसार अगले बीस वर्षों में शहरी संरचनाओं की स्थापना के लिए रू. 39 लाख करोड़ की (2009-10 की कीमतों के अनुसार) आवश्यकता होगी। इसमें से रू. 17 लाख करोड़ (44 प्रतिशत) की आवश्यकता सड़कों के लिए, रू. 8 लाख

रेखाचित्र 4 : उपरि संरचना सूचक के अनुसार विश्व के चुने हुए शहरों के अनुक्रम

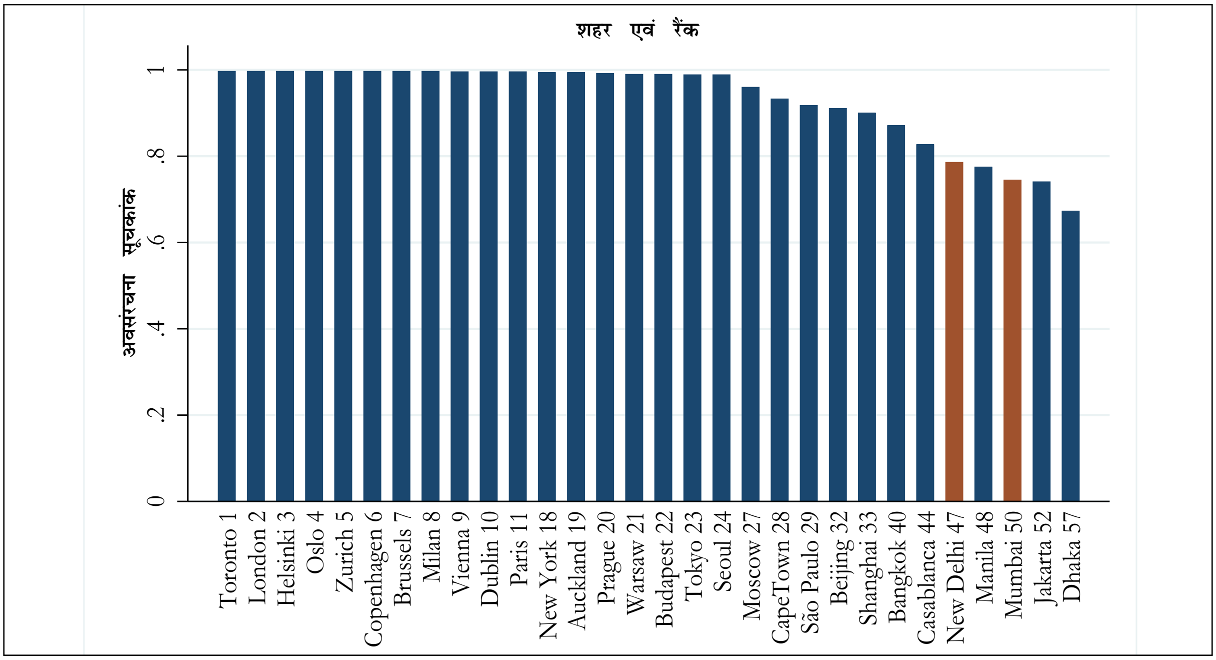

स्रोत : *State of the World's Cities 2012/13 - Prosperity of Cities, UN-Habitat.*

करोड़ (20 प्रतिशत) की आवश्यकता जल आपूर्ति, अवजल और ठोस कचरा प्रबंधन तथा वर्षा-तूफान जल निकासी तंत्रों के लिए होगी। इन निवेशों के अतिरिक्त संचालन और रखरखाव के लिए रू. 20 लाख करोड़ की अतिरिक्त आवश्यकता होगी।

14.13 इस संरचना अभाव को दूर करने के लिए आवश्यक संसाधनों का कुछ अंश केन्द्र और राज्य सरकारों से आ सकता है। 14वें वित्त आयोग ने 2015-20 की अवधि के लिए नगरपालिकाओं के लिए रू. 87000 करोड़ के अनुदान का प्रस्ताव किया है। यह सहायता औसत रूप से रू. 500 प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष बनती है।

14.14 शेष धन राशियां स्थानिक संसाधनों से जुटानी होंगी। किन्तु पर्याप्त संसाधन जुटान कभी सरल नहीं रहा है। 74वें संविधान संशोधन (1992) ने प्रावधान किया है कि नागर स्थानीय निकायों को प्रशासन तंत्र का तीसरा स्तर माना जाए और राज्य सरकारों को 12वीं सूची में से 18 कार्य उन्हें सौंप देने चाहिए। किन्तु इस संशोधन ने भी इन संस्थानों को उक्त कार्य कर पाने हेतु राजस्व अंतरण का कार्य राज्य विधायिका के विवेक के अधीन छोड़ दिया है। आज 25 वर्ष व्यतीत होने के बाद भी स्थानीय निकायों को कार्य और वित्तीय शक्तियां सौंपे जाने में बहुत विशालकाय असमानताएं (राज्य स्तर पर) दिखाई दे रही हैं। कुछ राज्य सरकारों ने तो नगरपालिकाओं को संपत्ति कर लगाने की अनुमति भी नहीं दी है।

14.15 रेखाचित्र 5 यह दर्शा रहा है कि इस व्यवहार ने क्या समस्या पैदा कर दी है। सिद्धांत रूप से तो हम राज्य सरकार और स्थानीय निकायों के बीच एक स्पष्ट संबंध की आशा करते हैं। यदि इनकी भूमिकाएं स्पष्टतः निरूपित हो तो आय में वृद्धि के साथ-साथ दोनों स्तरो पर व्यय में साथ-साथ वृद्धि होनी चाहिए। यदि उनकी भूमिकाएं बदल रही हों तो प्रशासन का एक स्तर दूसरे का स्थान लेता है और जनता को सेवाएं प्रदान करने लगता है। इस दशा में उनके व्यय में ऋणात्मक संबंध होना चाहिए। किन्तु हमारा रेखाचित्र दर्शा रहा है कि दोनों में से कोई भी संबंध चित्रित नहीं हो पा रहा। विभिन्न राज्यों के बीच प्रति व्यक्ति व्यय विविधता विभिन्न नगरों के बीच विविधता से कहीं अधिक है। हां मुम्बई, कानपुर और कोलकाता जैसे अपवाद भी हैं, किन्तु सामान्यतः स्थानीय निकायों के प्रतिव्यक्ति व्यय राज्य सरकारों के स्तर से बहुत कम पाए गए हैं। निष्कर्ष यही है कि या तो राज्य स्थानीय निकायों को पर्याप्त धन अंतरण नहीं कर रहे या ये निकाय स्वयं संसाधन नहीं जुटा रहे।

रेखाचित्र 5 : राज्य प्रतिव्यक्ति व्यय और शहरी स्थानीय निकाय प्रतिव्यक्ति आय

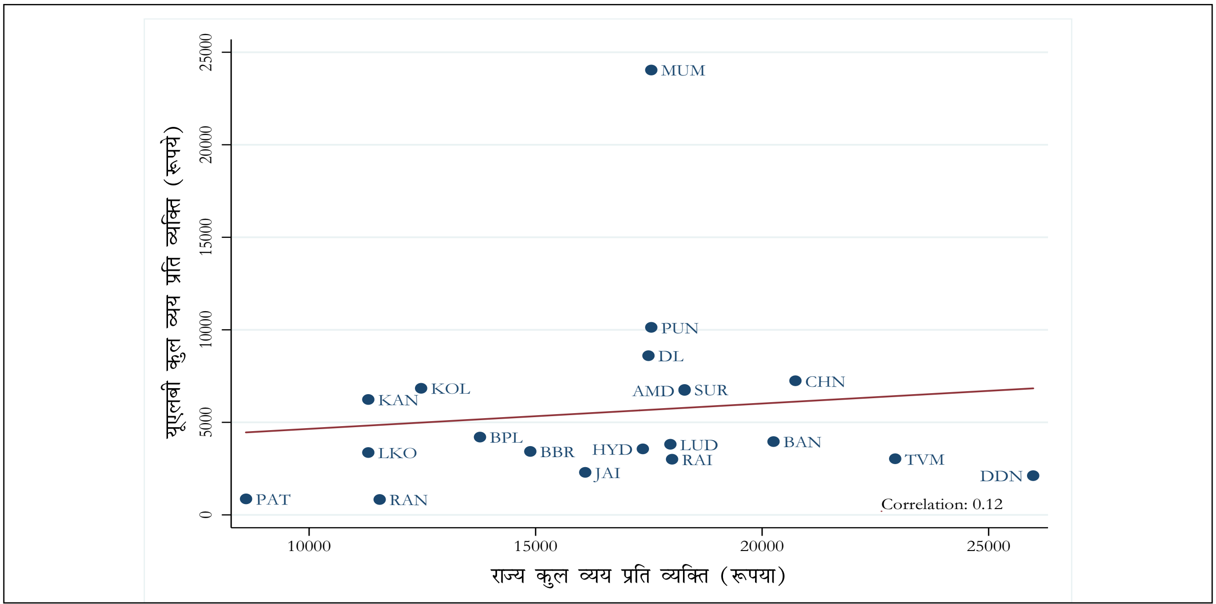

स्रोत : राज्य सरकार बजट, 2016-17 और 'जनाग्रह' का Annual Survey of India's City Systems ASICS 2015.

14.16 यहीं नहीं, जहां शक्तियों का अंतरण हुआ हो वहां उनका प्रयोग कर पाना भी कठिन सिद्ध हुआ है। नगर निकायों की आय करों, प्रयोक्ता शुल्कों और आन्तरिक ऋणों से प्राप्त होती है।

- निकायों के अपने राजस्व का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत संपत्तिकर है। किन्तु इसके निम्न प्रसार वितान, निम्न दरों, निम्न संग्रह दक्षता और इसको संपदा मूल्यों के साथ संबंधित करने के अभाव (या

बॉक्सः 1 सरकार द्वारा अभी उठाए गए कुछ कदम शहरी पुनः नवीकरण के अवसर प्रदान कर रहे हैं

चौदहवें वित्त आयोग द्वारा 2015-20 के लिए स्थानीय निकायों के लिए प्रस्तावित अनुदान पूर्ववर्ती आयोग की सिफारिश से 277 प्रतिशत अधिक है। राज्यों को कर राजस्व के अधिक अन्तरण और स्थानीय निकायों को अनुदान वृद्धि से अब शहरी पुन:विकास के लिए उपलबध सार्वजनिक कोषों में बहुत सुधार हुआ है। केन्द्र ने 2005 में 65 नगरों में जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी पुन:विकास मिशन (JNNURM) प्रारंभ किया था। इसके बाद शहरों में और कई नए सुधार कार्य प्रारंभ किए गए है। इनमें से प्रमुख योजनाएं हैं : स्मार्ट सिटीज मिशन, अमृत, स्वच्छ भारत मिशन, हृदय, डिजिटल भारत, कौशल विकास, सबके लिए आवास, मैट्रो परिवहन आदि। अब क्षेत्र आधारित और प्रकल्प आधारित योजनाओं के बीच अभिसृति पर आग्रह किया जा रहा है ताकि लागतें दोहराने के स्थान पर इस संसृति के माध्यम से लाभों को अधिकतम किया जा सके।

स्मार्ट सिटीज मिशन (SCM)

यह SCM देश के 100 नगरों के लिए बहुमुखी पुन:नवीकरण कार्यक्रम है। प्रारंभिक रूप सेैब्ड पांच वर्ष चलेगा (2015-16 से 2019-20)। आगे इस कार्यक्रम का चलना मूल्यांकन-आंकलन के परिणामों पर निर्भर होगा। SCM के अंतर्गत एक अच्छे नगर के लिए आवश्यक संरचनातंत्र के ये अवयव होंगे : (i) पर्याप्त जल आपूर्ति, (ii) सुनिश्चित बिजली आपूर्ति, (iii) स्वच्छता व्यवस्था, ठोस कचरा प्रबंधन सहित, (iv) दक्षतापूर्ण शहरी आवागमन और सार्वजनिक परिवहन, (v) विशेषकर गरीबों के लिए, व्यय साध्य आवास व्यवस्था, (vi) सुदृढ़ सूचना प्रौद्योगिकीय संपर्कशीलता और डिजिटलाइजेशन, (vii) अच्छा प्रशासन, विशेषकर ई-प्रशासन और जन भागीदारी, (viii) पर्यावरण की धारणीयता, (ix) नागरिकों की सुरक्षा विशेषकर महिलाओं, बच्चों और वरिष्ठ जनों के लिए, तथा (x) स्वास्थ्य और शिक्षा। SCM के अंतर्गत क्षेत्र आधारित विकास के घटक है नगर सुधार (पुरानी व्यवस्थाओं को सुधारना) नगर पुन:विकास और नगर प्रसार (नए क्षेत्र में नगर का प्रसार विकास)। इन सबके साथ-साथ संपूर्ण नगर के लिए ऐसे प्रयास कि नगर के अधिकाधिक भागों में 'स्मार्ट' समाधान लागू हो सकें।

अमृत

अटल मिशन फॉर रिजुवनेशन एंड अर्बन ट्रांस्फोरमेशन अर्थात अटल शहरी पुन:नवीकरण और रूपांतरण मिशन का प्रारंभ 25/06/2015 को किया गया है। इसका लक्ष्य 500 शहरों/कस्बों की आधारभूत नागरिक सुविधाओं में सुधार करना है, इन्हें मिशन नगर/कस्बे कहा जाएगा। यह मिशन पांच वर्ष तक चलेगा (2015-16 से 2019-20) और इसका लक्ष्य एक लाख से अधिक आबादी वाले नगरों/कस्बों, घोषित नगरपालिकाओं, छावनी बोर्डों सहित (केवल नागरिक क्षेत्र) तथा राजधानी नगरों, मुख्य नदी तटों के नगरों, पर्यटन और पर्वतीय स्थानों के नगरों तक इन सुविधाओं का प्रसार विस्तार और सुधार करना है। इस मिशन में ये घटक सम्मिलित होंगे : जल आपूर्ति, अवजल व्ययन व्यवस्था, वर्षा जल निकास, शहरी परिवहन, विशेषकर गैर मोटर वाहनों के लिए सुविधाओं का निर्माण और हरित क्षेत्रों/पार्कों/उद्यानों के विकास। इनमें 500 नगरों/कस्बों में बालोपयोगी सुविधाओं पर विशेष आग्रह रहेगा।

हृदय

सरकार ने राष्ट्रीय धरोहर नगर विकास एवं संवर्धन योजना (हृदय) का आरंभ 21 जनवरी 2015 से किया है। यह धरोहर माने जाने वाले नगरों के बहुमुखी विकास पर केन्द्रित होगी। योजना का लक्ष्य ऐसे नगरों के अंतरस्थ स्वरूप (आत्मा) को पुन:जीवित करते हुए उनके विशिष्ट स्वरूप, का दर्शनीय, सहज गम्य, जानकारी पूर्ण और सुरक्षित पर्यावरण सहित विकास करना है। इसकी अवधि 27 मास नियत की गई है (समापन मार्च 2017) और कुल व्यय रू. 500 करोड़ है। यह योजना 12 निश्चित किए गए नगरों, अजमेर, अमरावती, अमृतसर, बदामी, द्वारका, गया, कांचीपुरम, मथुरा, पुरी, वाराणसी, वेलंकनी और वारांगल में चलाई जा रही है। इस योजना का संचालन एक मिशन की भांति हो रहा है।

स्वच्छ भारत मिशन (SBM)

SBM का प्रारंभ 2 अक्टूबर 2014 को हुआ। इसका लक्ष्य देश को 2 अक्टुबर 2019 तक साफ सुथरा बनाना है। 2011 की जनगणना के अनुसार सभी वैधानिक दृष्टि से स्वीकृत 4041 नगर इसकी परिधि में है। इस कार्य का लक्ष्य खुले में शौच का निवारण, अस्वच्छ शौचालयों को फ्लश वाले शौचालयों में बदलना, मैला ढोने को समाप्त करना, नगरपालिका ठोस कचरा प्रबंधन करना और साथ ही जनमन में अच्छी स्वच्छता आदतों का संचार करना है। ठोस कचरा प्रबंधन के लिए नगरों को नूतन उपाय अपनाने की प्रेरणा दी जा रही है और शहरी विकास मंत्रालय उन्हें तकनीकी एवं वित्तीय सहयोग प्रदान कर रहा है। इस दिशा में उठाए गए कुछ कदम हैं : कचरे से ऊर्जा, कंपोस्ट संयंत्र, ढलावों को ढ़कने की व्यवस्था। ये सब कदम नगर अधिकारियों की अपने कार्य ढंग से कर पाने की क्षमताओं के विकास करने हेतु उनके संशक्तिकरण के माध्यम से उठाए जा रहे हैं।

अरूचि) के कारण यह राजस्व स्रोत उत्प्लवनहीन होकर रह गया है। 14वें वित्त आयोग द्वारा स्थानीय निकायों के वित्त के अध्ययन ने दर्शाया है कि संपत्ति कर से प्रतिव्यक्ति राजस्व हद से हद रू. 1677 था, निम्न स्तर पर तो यह मात्र रू. 42 रह गया था।

- प्राय: ये निकाय पर्याप्त स्तर पर प्रयोक्ता शुल्क लागू करने में विफल रहे हैं, ये तो संचालन और रखरखाव की लागतें भी नहीं उगाह पा रहे।
- स्थानीय निकायों की जर्जर वित्तीय एवं प्रशासनिक अवस्थाओं के कारण नगर निकाय बाँड जारी कर पाना अपने आप में एक चुनौति बन जाता है।

14.17 इन चुनौतियों के कारण नगरों को पर्याप्त राजस्व जुटाने में भारी कठिनाईयां हाती हैं। सकल व्यय में अपने राजस्व का अंशदान बहुत कम रह जाता है। अधिकांश नगर निकायों का प्रतिव्यक्ति व्यय भी बहुत कम है। हां, मुम्बई और पुणे अपवाद हैं जिनके प्रतिव्यक्ति व्यय रू. 1000 से अधिक हो चुके हैं।

IV. देश भर से प्राप्त सीखें

14.18 विभिन्न शहरों के अनुभवों से अधिक कुछ सीख पाने की संभावनाएं कम ही है।, क्योंकि नगरपालिकाओं से जुड़े आंकड़े बहुत कम और निम्न स्तर के ही हैं। फिर भी हम बैंगलुरू स्थित जनाग्रह सेंटर फॉर सिटीजनशिप एंड डैमोक्रेसी तथा जनगणना, 2011 द्वारा सुलभ कराई गई कुछ जानकारियों का प्रयोग कर कुछ सीखें ग्रहण करने का प्रयास कर रहे हैं। जनाग्रह ने अपने एसिकस–2015 (भारत की नगर व्यवस्था के वार्षिक सर्वेक्षण, 2015) में नगर निगम बजटों (2013–16), टाऊन एंड कंट्री प्लैनिंग अधिनियमों, महानगर/नगरपालिका मास्टर प्लैन, नगर निगम अधिनियम, सरकारी रिर्पोट, अन्य अधिनियमों/नियमों तथा नगर निगमों की बेवसाईट आदि से आंकड़ों का संकलन किया है। राजस्व सृजन, ऋण, व्यय, बजट और अंकेक्षण (audit) जैसे नागरिक संसाधन एवं क्षमता सूचकों के साथ-साथ पारदर्शिता, उत्तर दायित्व और सार्वजनिक सूचना प्रकटीकरण कानून और आंतरिक अंकेक्षण जैसे सूचकों के विषय में इन सूचना स्रोतों से आंकड़े एकत्र कर ''शहरी क्षमता और संसाधन'' तथा ''पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और भागीदारी'' के अंक प्रदान किए गए हैं। इनके मान 0 (निकृष्ट) से 10 (उत्कृष्ट) के बीच है। सेवा प्रदान करने के अंकों का निर्धारण जनगणना 2011 से विदोहित जानकारी के आधार पर किया गया है। चार सेवाओं संबंधी आंकड़ों का प्रयोग किया गया है। ये है : उपचारित नल के पानी की व्यवस्था, अवजल पाइपों से जुड़ पाने की सुविधा, सार्वजनिक शौचालय सुविधाएं तथा ढके हुए नालों में अवजल पहुँचा पाने की सुविधा। आंकड़ों से ये बाते स्पष्ट हो रही हैं :

- चेन्नई, पुणे और चंडीगढ़ के आधारभूत सेवा प्रदान करने की कसौटी पर अच्छे अंक है तो भुवनेश्वर, रायपुर और रांची सबसे पिछड़े हुए हैं (रेखाचित्र 6)।
- हैदराबाद ने पारदर्शिता/उत्तरदायित्व, नियम रचने और एक सार्वजनिक प्रकटीकरण कानून का अनुपालन करने तथा आंतरिक अंकेक्षण इकाइयां गठित करने के मामले में बहुत अच्छे अंक प्राप्त किए हैं (रेखाचित्र 7)।
- रेखाचित्र 8 दर्शा रहा है कि पुणे, हैदराबाद और मुम्बई के सकल व्यय में अपने राजस्व अंश पर आधारित अंक उच्चतम हैं वहीं देहरादून और कानपुर के निम्न निजी राजस्व उन्हें निरंतर सरकारी अनुदानों और अन्य वित्त स्रोतों के सहारे अपने खर्च चलाने के लिए विवश रखते हैं।
- प्रति व्यक्ति पूंजी व्यय में दिखाई देता है कि मुम्बई, पुणे और कानपुर ने शेष सभी स्थानीय/शहरी निकायों से अधिक व्यय किए हैं, जबकि पटना, रांची और भुवनेश्वर सबसे पीछे रहे हैं (रेखाचित्र 9)।

14.19 इन सूचकों के आधार पर हम सेवा प्रदाय व्यवस्थाओं और राजकोषीय सामर्थ्य के बीच संबंधों की समीक्षा कर सकते हैं। इस सामर्थ्य का मापन चार अलग-अलग विधियों से किया गया है। अधिक उच्च स्तर पर सेवा प्रदान क्षमता का इनके उच्चतर स्तर के साथ सहसंबंध दिखाई दिया है :

- कर्मचारियों की संख्या (रेखाचित्र 10)

रेखाचित्र 6 : सेवा सुलभता के आधार पर स्थानीय निकायों के अनुक्रम

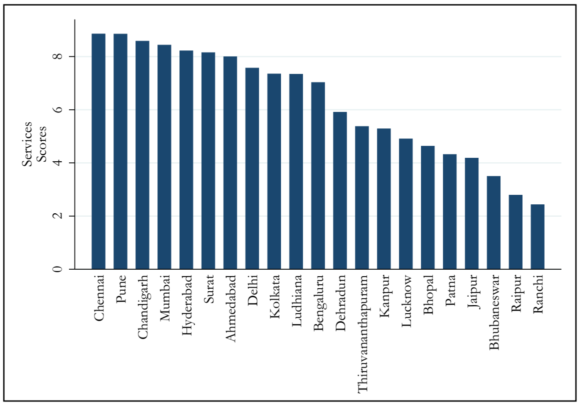

रेखाचित्र 7 : पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और भागीदारी के अनुसार स्थानीय निकायों के अनुक्रम

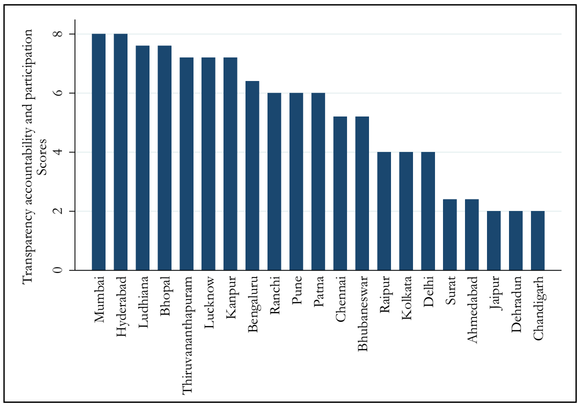

रेखाचित्र 8 : सकल व्यय में निजी राजस्व के आधार पर स्थानीय निकायों के अनुक्रम

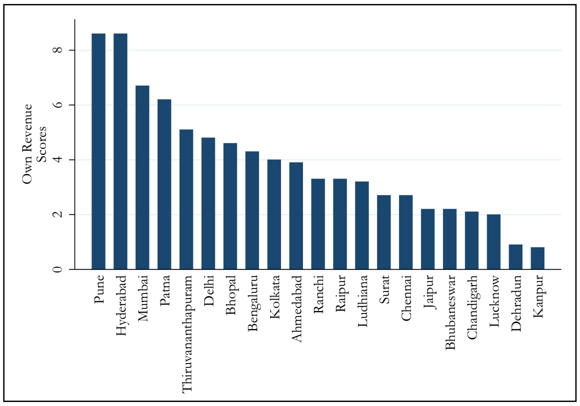

रेखाचित्र 9 : प्रतिव्यक्ति पूंजी व्यय के अनुसार स्थानीय निकायों के अनुक्रम

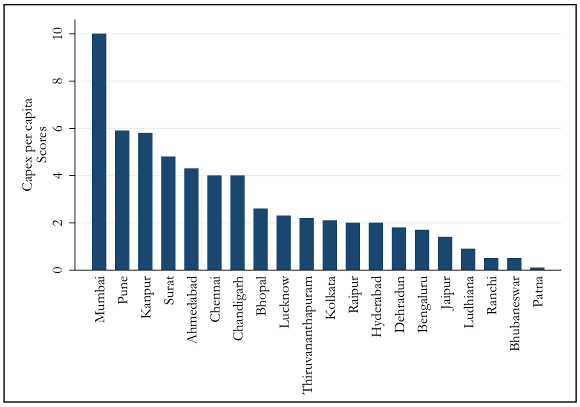

स्रोत : (रेखाचित्र 6 से 9) जनगणना 2011 तथा Annual Survey of India's City Systems, 2015 जनाग्रह

- प्रतिव्यक्ति पूंजी व्यय (रेखाचित्र 11)
- संसाधन (रेखाचित्र 12)
- निजी राजस्व (रेखाचित्र 13)

यह सह संबंध कर्मचारी संख्या तथा व्यय के साथ अधिक प्रबल है। एक स्पष्ट निष्कर्ष यही है कि अधिक संसाधनों की सुलभता बेहतर परिणामों के साथ जुड़ी हुई है।[2]

रेखाचित्र 10 : पर्याप्त कर्मचारी वर्ग और सेवाएं

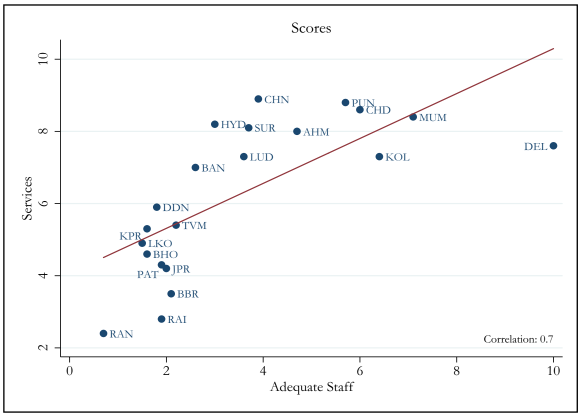

रेखाचित्र 11 : प्रतिव्यक्ति पूंजी व्यय और सेवाएं

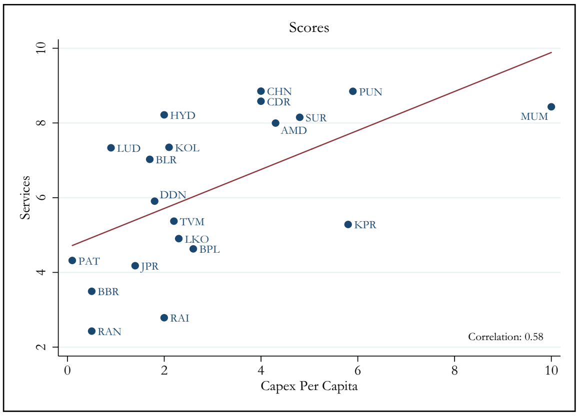

2 दुर्घटना की दिशा स्पस्ट होने के कारण, आंकड़ों की उपलब्धता से आगे जांच नहीं की जा सकती।

रेखाचित्र 12 : शहरी क्षमताएं एवं संसाधन तथा सेवाएं

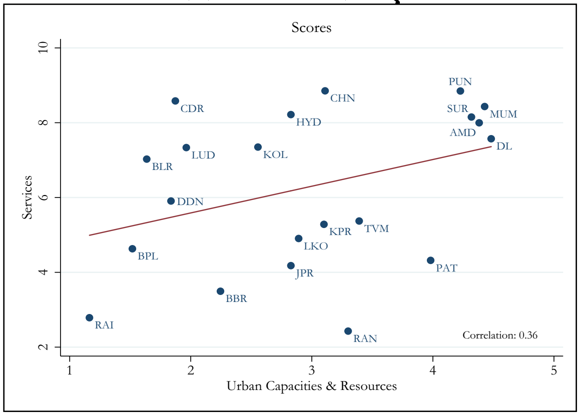

रेखाचित्र 13 : निजी राजस्व और सेवाएं

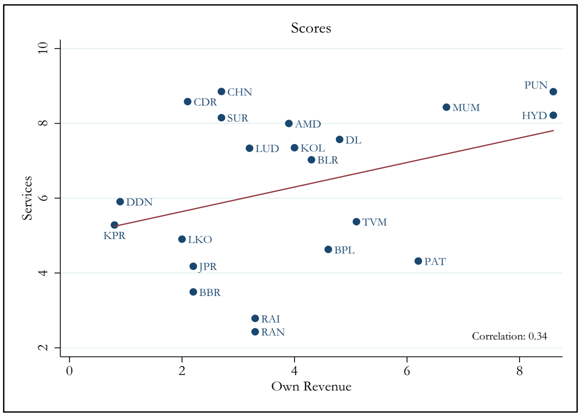

स्रोत : (रेखाचित्र 10 से 13) : जनगणना 2011 तथा ASICS, 2015

14.20 इनके विपरीत सेवा प्रदाय क्षमता और प्रशासनिक कौशल के बीच संबंध पाना कठिन लगता है। रेखाचित्र 14 ने सेवाओं और पारदर्शिता/उत्तरदायित्व के बीच कोई संबंध नहीं दर्शाया है। रेखाचित्र 15 तो वास्तव में प्रत्यक्ष रूप से चुने गए महापौर की उपस्थिति और सेवाओं की उपलब्धता में ऋणात्मक संबंध दर्शा रहा है। महापौर कार्य अवधि और परिणामों के बीच भी कोई संबंध नहीं है (रेखाचित्र 16)। इसकी एक व्याख्या तो यह हो सकती है कि प्रत्यक्ष रूप से चुने गए महापौर को प्रभावी रूप से कार्य करने के लिए निगम के चुने

रेखाचित्र 14 : पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और भागीदारी तथा सेवाएं

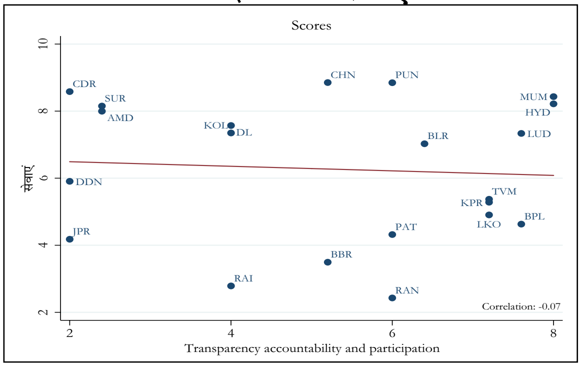

स्रोत : जनगणना 2011 तथा ASICS, 2015

रेखाचित्र 15 : महापौर का प्रत्यक्ष चुनाव और सेवाएं

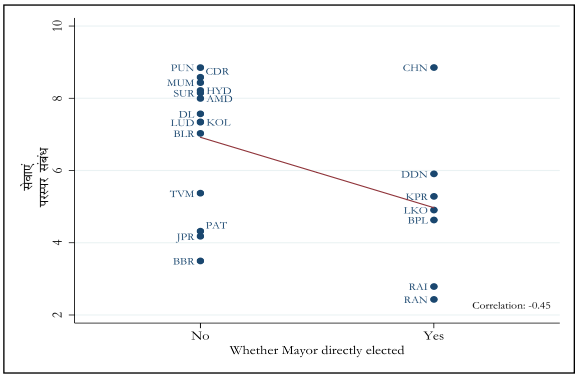

रेखाचित्र 16 : महापौर के कार्यकाल और सेवाएं

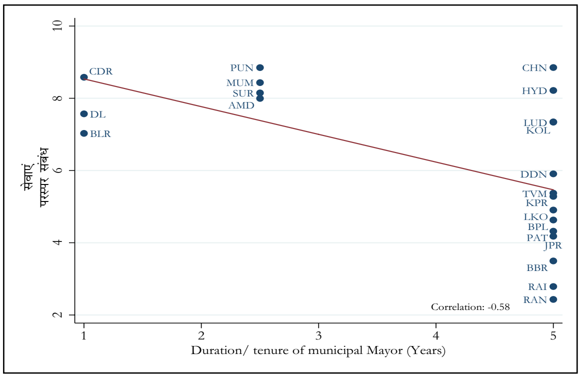

स्रोत : जनगणना 2011 और ASICS, 2015

स्रोत : जनगणना 2011 और नगर निगम

हुए सदस्यों के बहुमत के समर्थन की भी आवश्यकता होती है। यह सदैव संभव नहीं हो पाता। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए राजस्थान और तमिलनाडू सरकारों ने अपने-अपने नगरपालिका/निगम अधिनियमों में संशोधन कर महापौर के अप्रत्यक्ष चुनाव का प्रावधान किया है।

V. संसाधन जुटाना

14.21 एक बहुत ही चौंकाने वाला सहसंबंध (वास्तव में इसका अभाव) भी उभर कर आया है। यह है कराधान की औपचारिक शक्तियों की विद्यमानता और वास्तव में संसाधन जुटाने के बीच (रेखाचित्र 17)। सामान्य आशा तो यही होती है कि स्थानीय निकायों को कराधान की अधिक शक्तियां दिए जाने पर वे अधिक संसाधन जुटा पाएंगे। हम देख रहे हैं कि मुम्बई और पुणे के नगर निगम अधिक कराधान शक्तियां नहीं होने के बावजूद राजस्व संग्रह में बहुत आगे हैं, जबकि कानपुर और देहरादून आदि कहीं अधिक कर लगाने की क्षमताओं के बाद भी निजी राजस्व संग्रह में बहुत पिछड़ गए है। शुरू में ये बातें विचित्र लग सकती हैं, किन्तु सतर्कता से देखें तो ऐसा है नहीं। अधिक प्रकार के कर लगाने की शक्तियों का अर्थ सदा ही स्थानीय निकाय द्वारा अधिक राजस्व की प्राप्ति नहीं हो पाता। अधिक राजस्व एकत्र करने के लिए कई अन्य कारकों के भी महत्व होते हैं, जैसे कि कर आधार का आकार, कर संकलन में दक्षता और नगर क्षेत्र में आर्थिक गतिविधियों का स्तर।

14.22 यदि बेहतर सेवाओं के लिए अधिक संसाधन चाहिए तो वे कहां से प्राप्त होंगे? संभवत: सबसे अधिक तात्कालिक स्रोत तो संपत्ति कर ही हो सकता है। इस कर का निगम के निजी राजस्व में अंश कानपुर और लखनऊ में 50 प्रतिशत है किन्तु भोपाल और रांची में मात्र 15 प्रतिशत (रेखाचित्र 18)। अत: समस्या यह नहीं है कि स्थानीय निकाय इसलिए राजस्व नहीं जुटा पाते कि उन्हें इस काम से रोका जाता है।

14.23 संपत्ति कर से बहुत कम प्राप्ति के ये कारण है : आंकलन दरों का निम्न होना, संग्रह दक्षता का न्यून होना, संपत्ति मूल्यांकन की विधियों का त्रुटिपूर्ण होना, अनेक प्रकार की कर छूट होना और कर प्रशासन की त्रुटियां। समीक्षा के लिए किए गए एक अध्ययन में नवीनतम उपग्रह आधारित चित्रांकन विधि का प्रयोग कर बैंगलुरू और जयपुर की संपत्ति कर संग्रह क्षमताओं का आंकलन किया गया है। यह अध्ययन बता रहा है कि इस समय बैंगलुरू और जयपुर क्रमश: संभावित क्षमता के मात्र 5 और 20 प्रतिशत से अधिक संपत्ति कर नहीं उगाह पा रहे (बॉक्स 2)। दूसरे शब्दों में ये नगर अपने संसाधनों को 5 से बीस गुना मे सुधार सकते हैं। अत: संपत्ति कर की सभी संभावित क्षमताओं का पूरा प्रयोग करने के भरसक प्रयास होने चाहिए।

रेखाचित्र 17 : कराधान की शक्तियां और निजी राजस्व

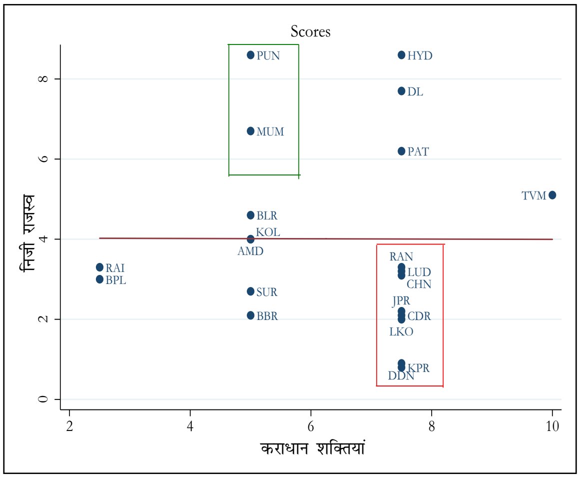

स्रोत: एएसआईसीएस-2015

रेखाचित्र 18 : स्थानीय निकायों के कुल राजस्व में संपत्ति कर का प्रतिशत अंश

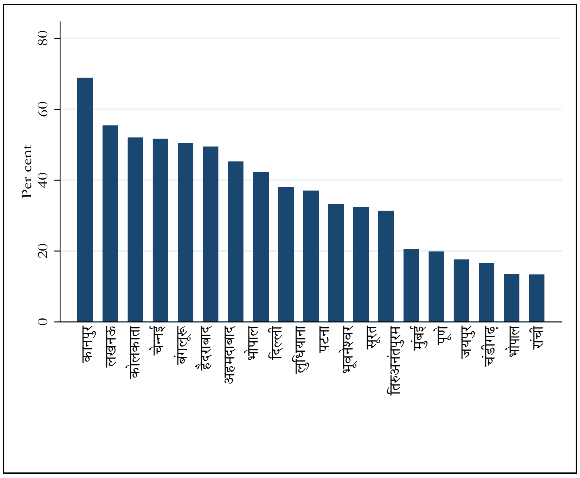

स्रोत: एएसआईसीएस-2015

बॉक्स 2 : उपग्रह चित्रांकन विधि से संपत्ति कर क्षमता का आंकलन

शहरी स्थानीय निकायों के अपने राजस्व का मुख्य स्रोत संपत्ति कर ही है। 36 शहरों के विश्लेषण के आधार पर 13वें वित्त आयोग ने यह स्वीकार किया था कि इस कर का अनुपालन स्तर यदि 80-85 प्रतिशत तक भी पहुंच जाए तो इन निकायों को प्राप्त राजस्व वर्तमान रू. 4400 करोड़ से बढ़कर रू. 22000 करोड़ तक पहुँच सकता है। संपत्ति कर संकलन में सबसे बड़ी चुनौतियां संपत्तियों की अ-सटीक पहचान और न्यून मूल्यांकन की है। अनेक स्थानीय निकायों के राजस्व विभागों में कर्मचारियों की अपर्याप्त संख्या भी इस कर को एकत्र करने में बाधक हो जाती है। भूगौलिक सूचना प्रणाली (GIS) आधारित बृहत सूचना आंकलन विधियां किसी नगर के सकल निर्मित भूक्षेत्र का आंकलन कर उसकी सकल संपत्ति कर क्षमता का अनुमान और मूल्यांकन कर सकती हैं।

उपग्रह चित्रांकन द्वारा भवन घनता का मापन

इस अध्ययन ने बैंगलुरू (रेखाचित्र 2क) तथा जयपुर (रेखचित्र 2ख) की संपत्ति कर क्षमता का आंकलन किया है। इसके लिए अमेरिका के 'नासा' और भूर्गभ सर्वेक्षण की जानकारी LANDSAT प्रणाली के माध्यम से प्राप्त की गई है।

उपग्रह से मिले परिष्कृत आंकड़ों का भू-प्रसंस्कार कर निर्मित क्षेत्रफल का आंकलन किया गया है। इस आंकलन में स्वतंत्र गृह इकाई से लेकर गृहखंड और शहरी मलिन बस्तियां सभी को स्थान मिला है। उपग्रह द्वारा अनुमानित निर्मित क्षेत्र में सड़कों पर चल रहे वाहन आदि की छवियां भी एक विकृति पैदा कर देती हैं, इसका समाधान करने के लिए हमने एक निवल विनिर्मित घनता मापक बनाया है (विवरण परिशिष्ट में दिया गया है)। इस निवल निर्मित घनता की जानकारी का प्रयोग कर बैंगलुरू और जयपुर में शहरों में बने भवन समूहों की जानकारी का योग कर सकल निर्मित क्षेत्रफल (वर्गफुट/किलोमीटर) का आंकलन किया गया है। उसे शहर के क्षेत्रानुसार संपत्ति कर निर्देशक इकाई मूल्यों के साथ गुना करके शहर की संभव संपत्ति कर संकलन क्षमता का अनुमान लगाया गया है। प्राय: निर्माण में प्रयुक्त सामग्री, छत का प्रकार, निवास की प्रकृति (स्व-प्रयुक्त या किराए पर चढ़ाई गई) तथा मूल्यह्रास के आधार पर शहरों को अनेक निर्देशक मूल्यांकन क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है। रेखाचित्र 2क में प्रदर्शित बैंगलुरू के एक आवासीय क्षेत्र कोरामंगल क्षेत्र पर विचार करें। यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि प्रसंस्कृत छाया चित्र विनिर्मित आवासीय और व्यवसायिक क्षेत्रों को हरित और बंजर भूमी से पृथम रूप से पहचान सकता है।

रेखाचित्र 2क

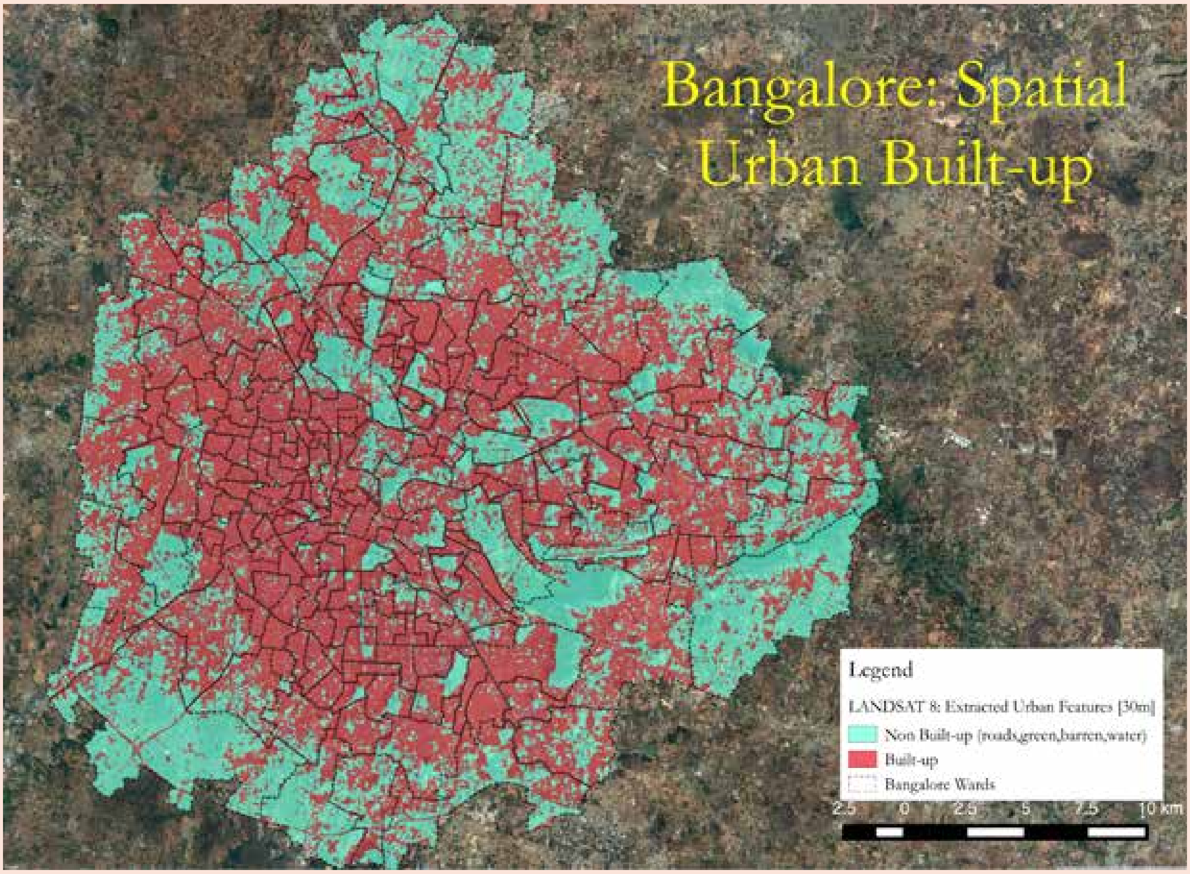

रेखाचित्र 2ख

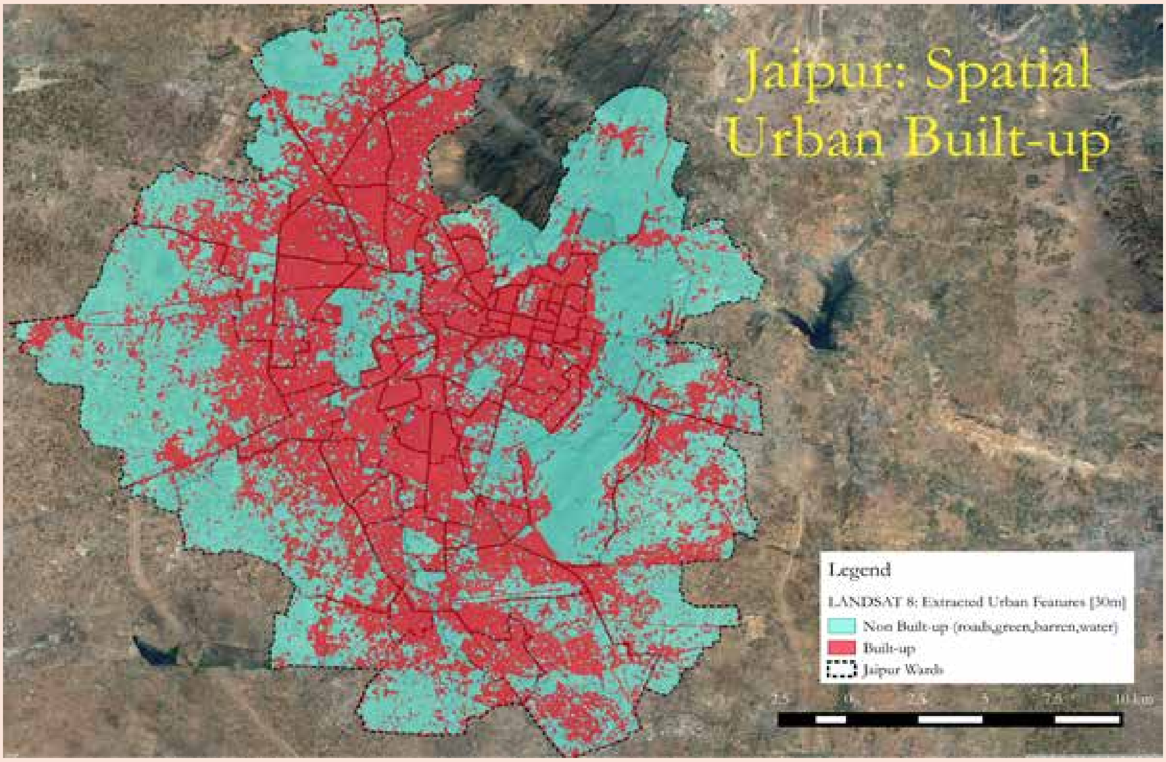

रेखाचित्र 2ग

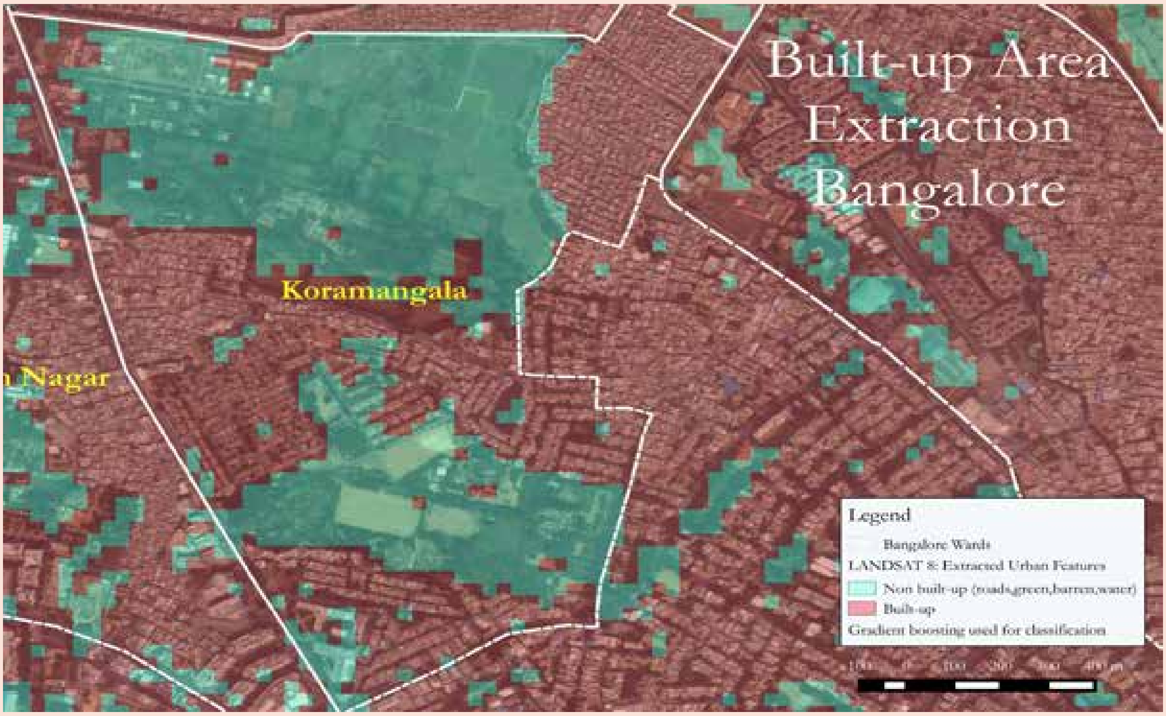

मंजिल फर्श – क्षेत्रफल अनुपात/फर्श क्षेत्रफल सूचक द्वारा भवन की ऊँचाई का मूल्यांकन

लैंडसैट छाया चित्र भवनों की ऊंचाई की जानकारी नहीं दे पाते (अन्य उपग्रह आधारित DEM ऊंचाई प्रतिमान भी औसत सागर तल से ऊंचाई की जानकारी ही दे रहे हैं)। अत: भवनों की संभव ऊंचाई का अनुमान एकीकृत विकास संहिताओं, फर्श-क्षेत्रफल (FAR) अनुपातों और फर्श-क्षेत्र अनुपात (FSI) आदि का प्रयोग करके लगाया गया है। ये दोनों अनुपात एक भवन में अनुमित निर्मित क्षेत्रफल उसके भूखंड

के क्षेत्रफल का अनुपात दिखाते हैं। FSI का उच्चमान अधिक निर्माण घनता दिखाता है। यदि FSI का मान 2 हो तो इसका अर्थ होगा कि सभी निर्मित फर्शों का योगफल भूखंड के क्षेत्रफल से दुगुना है अर्थात भवन में कई मंजिले बनी हैं। विभिन्न राज्यों द्वारा निर्धारित विकास योजनाओं और क्षेत्रीय नियमनों के अनुसार यह अनुपात अलग हो सकते हैं। उदाहरण के लिए बृहद बैंगलुरू महानगरपालिका (BBMP) ने नगर को 12 क्षेत्रों में विभाजित किया है, इनमें शामिल है : आवासीय (मुख्य), आवासीय (मिश्रित), व्यापारिक और औद्योगिक। जयपुर विकास प्राधिकरण की विकास योजना, 2025 ने इसके विपरीत व्यापक स्तरीय FSI नियत किए है, जिनके मान 0.1 (मनोरंजन पार्क), 0.2 (पर्यटन स्थल) से लेकर आवासीय/व्यापारिक के लिए 2.25 नियत किए गए हैं। इन प्रसरणों के आधार पर दोनों नगरों के लिए न्यूनतम, अधिकतम और मध्यम मूल्यमान परिदृश्यों की रचना की गई है (गणनाएं परिशिष्ट में दी गई है)।

बैंगलुरू की संपत्ति कर क्षमता का अनुमान

जैसा कि रेखाचित्र 2क की छवि में दिखाया गया है, बैंगलुरू के 784 वर्ग किलोमीटर के वितान का लगभग 50 प्रतिशत निर्मित क्षेत्रफल है। संभावित संपत्ति कर का आंकलन एक वार्ड को एक आधारिक इकाई मानकर किया जा रहा है और इस आंकलन में निवल निर्मित क्षेत्र, संपत्ति कर इकाई (मूल्यांकन के लिए निर्देशक मान) और FSI अनुपात का प्रयोग किया जा रहा है। BBMP में 198 वार्ड हैं और इनकी संपदाओं को 6 क्षेत्रों में बांटा गया है (A से F)। यह विभाजन इस बात पर निर्भर है कि वे कैसी सड़क पर स्थित हैं, यही निर्देशक मूल्य का निर्धारक भी है। यह वर्गीकरण इकाई क्षेत्र मूल्य (Unit Area Value) नियत करता है, जिसका संपत्ति कर के आंकलन में प्रयोग किया जाता है। संपत्तियों की औसत आयु 10 वर्ष मानी गई है और इस पर 10 प्रतिशत दर से मूल्यह्रास की अनुमति है। सड़क अनुसार निर्देशक मूल्यों को संबद्ध वार्डों के साथ जोड़ा गया है और निवल निर्मित घनता का भी वार्ड की सीमाओं के साथ संयोग किया गया है। सभी संपदाओं के बीच FSI अनुपातों के मान का तालमेल बिठाने के लिए हमने तीन परिदृश्यों की कल्पना की है (न्यूनतम, अधिकतम और मध्यम)। यह तालिका 2क में दिखाए गए 12 क्षेत्रों की संबंद्ध मूल्यमानों पर आधारित हैं। अनुमान है कि बैंगलुरू के पास अपने वर्तमान संपत्ति कर संकलन से 4 से 7 गुना संग्रह कर पाने की क्षमता विद्यमान है।

तालिक 2क : बैंगलुरू नगर की कर संभावना, निर्मित घनता के अनुसार

FSI प्ररिदृश्य (आवासीय/व्यवसायिक)	MIN[1.8|1.5] (Cr.)	MAX[3.3|3.3] (Cr.)	AVG[2.5|2.4] (Cr.)
संकलित	1031.8	1031.8	1031.8
संभावित	4359.5	8693.8	6526.7
अनुपात	23.7%	11.9%	15.8%

***स्रोत :* बजट पत्रक, बृहद बैंगलुरू महानगर पालिका**

जयपुर के लिए संपत्तिकर संभावी क्षमता का आंकलन

बैंगलुरू की संपत्ति कर क्षमता का आंकलन करने के लिए अपनाई विधि का ही जयपुर में भी प्रयोग किया गया है। जयपुर नगर का क्षेत्रफल 384 वर्ग किलोमीटर है और निर्मित क्षेत्र 39 प्रतिशत है। बैंगलुरू के विपरीत यहां निर्देशक मूल्यमान कालोनी स्तर पर निर्धारित हैं। हमने 2534 कालोनियों की निर्मित घनता का योग किया और प्रति वार्ड निर्देशक मूल्यमान आंकलित की (तालिका 2ख), जयपुर के लिए अधिकारिक FSI आंकड़े उपलब्ध नहीं थे, अत: भवन की ऊंचाई/गैर ऊंचाई परिदृश्यों का प्रयोग किया गया। हमारा अनुमान दर्शाता है कि जयपुर वर्तमान कर संग्रह से 10 से 20 गुना अधिक राशियां संग्रहित कर सकता है।

तालिका 2ख : जयपुर नगर की कर संग्रह संभावित क्षमता, निर्मित घनता के अनुसार

FSI प्ररिदृश्य	No Elevation (Cr.)	Min [1.5] (Cr.)	Max [2.0] (Cr.)
संकलित	41.2	41.2	41.2
संभावित	380.0	599.7	799.7
अनुपात	10.8%	6.8%	5.1%

***स्रोत:* बजट दस्तावेज - जयपुर नगर निगम**

निष्कर्ष

बेहतर संपत्ति कर अनुपालन में सहायक होकर उपगृह छाया चित्रांकन विधि शहरी प्रशासन तंत्र को सुधारने में उपयोगी हो सकती है। हमारा यह आंकलन प्रयास दिखा रहा है कि जयपुर और बैंगलुरू अपनी संपत्ति कर संग्रह क्षमता का मात्र 5 से 20 प्रतिशत ही एकत्र कर पा रहे हैं। वे इस दृष्टि से वर्तमान राशियों से पांच से बीस गुना अधिक राशियां जमा कर सकते हैं। राजस्व संग्रह में आत्म निर्भरता शहरी स्थानीय निकायों की अतिआवश्यक संरचनागत निवेश करने की क्षमता को सुधार अपने नगर निवासियों की जीवन की गुणवत्ता का विकास करने में सहायक हो सकती है। आधुनिक तकनीकें अपनाकर, अन्य उपाय भी काम में लाते हुए, ये स्थानीय निकाय अभी तक अछूते रह गए सामर्थ्य को नगरहित में जुटा सकते हैं।

बॉक्स 3: शहरी विकास में निजी क्षेत्र का योगदान : गुरूग्राम और जमशेदपुर से कुछ सबक

गुरूग्राम 2001 तक एक कृषिक बंजर भूमी प्राय: क्षेत्र था, जिसे शहरी क्षेत्र के रूप में मान्यता भी नहीं दी गई थी। हरियाणा सरकार ने भू-अधिग्रहण पर लगे प्रतिबंध हटाने और हरियाणा शहरी विकार प्राधिकरण को कृषि भूमी का नगर विकास के लिए प्रयोग करने के अधिकार प्रदान करने के साथ-साथ भूमी के बड़े-बड़े खंडों पर निजी संपदा विकास फर्मों को भी नगरखंड (टाउनशिप) विकसित करने की अनुमति प्रदान कर दी। उसके समय तक तो वहां शहरी नियोजन और सार्वजनिक पदार्थों (सुविधाओं) का विकास करने वाली नगरपालिका का भी अस्तित्व नहीं था, गुरूग्राम नगर निगम का गठन भी 2008 में हुआ है। यह निगम भी शहर के सीमित से हिस्सों पर नियंत्रण के लिए अधिकृत है। अत: गुरूग्राम के तीन बड़े-बड़े हिस्सों पर क्रमश: हूडा, नगर निगम और निजी विकासकर्ताओं के नियंत्रण हैं।

गुरूग्राम में निजी क्षेत्र ने सार्वजनिक क्षेत्र की अनेक त्रुटियों को दूर करने का बीड़ा उठाया है, किन्तु उसकी सफलता का रिकार्ड मिश्रित सा रहा है। सार्वजनिक क्षेत्र की विफलता पर निजी क्षेत्र ने स्वयं अवजल निकासी, जल एवं विद्युत आपूर्ति, सुरक्षा और अग्निकांड प्रतिरोध संरचनाओं का निर्माण किया है। गुरूग्राम में नई रैपिड मैट्रो सेवा का निर्माण DLF और इन्फ्रास्ट्रक्चर लीजिंग एंड फाइनेन्स सर्विसिज लिमिटेड (IL&FS) ने किया है। इसके लिए भूमी हूडा ने प्रदान की है। निजी रूप से विकसित निर्मित क्षेत्रों में सड़कें बहुत अच्छी हैं। परिवहन सुविधाओं के अभाव की पूर्ति निजी परिवहन सेवाएं कर रही हैं। संक्षेप में, निजी निर्माण फर्मों ने अधिकांश चुनौतियों का भरसक समाधान किया है, किन्तु वे अपनी संपदा सीमाओं से बाहर उन सुविधाओं का प्रसार नहीं कर पाए हैं। इसका कारण उक्त फर्मों में आपसी और अधिकारियों के साथ सहयोग नहीं हो पा रहा है। अधिकारी स्वयं अपने स्तर पर शहर वासियों को आवश्यक विशाल स्तर की सुविधाएं सुलभ कराने में बहुत सीमित सफलता अर्जित कर पाए हैं।

गुरूग्राम नगर की विफलताएं सर्वविदित हैं, किन्तु उन्हें सही प्ररिप्रेक्ष्य में नहीं रखा गया है। शहर ने एक तर्कपूर्ण शहरी योजना के अभाव को झेला है और इसकी विस्फोटक संवृद्धि दर किसी भी अन्य भारतीय नगर की भांति सीमित नियोजन प्रयासों से बहुत अधिक सशक्त सिद्ध हुई है। यही नहीं, विकास क्रम प्रारंभ होने पर स्थानिक एवं उच्च स्तर के अधिकार तंत्रों की बहुलता सामने आ गई है। इसमें अधिकाधिक लगान-भाड़ा उगाहने की शक्तियां तो बहुत हैं। उसके कारण निजी निर्माताओं की लेनदेन की लागतें भी बहुत अधिक हो गई है। विभिन्न निजी निर्माताओं को अनेक प्रकार के राजनीतिक प्रश्रय तलाश करने पड़ते हैं। उसके अभाव में तो वे कुछ कार्य नहीं कर पाएंगे।

सिद्धांत रूप से तो जल, अवजल निकासी, विद्युत सड़कों की आपूर्ति निजी क्षेत्र के स्वभाविक निकायों द्वारा एक अच्छे स्तर पर संभव होती है, किन्तु संभवत: कीमतें अधिक होंगी। किन्तु गुरूग्राम में एकाधिकारी नहीं स्पर्धी निजी आपूर्तिकर्ताओं का तंत्र विकसित हुआ है। निजी आपूर्तिकर्ताओं के बीच स्पर्धा से दो विफलताएं व्युत्पन्न हुई हैं : एक तो जल, विद्युत, अवजल निकासी आदि की कीमतें सीमांत लागतों के बहुत निकट हैं किन्तु वे इनकी औसत लागतों का स्तर बहुत ऊँचा है। ये फर्में बड़े पैमाने पर कार्य करने से संभावित मितव्ययताओं का पूरा लाभ नहीं उठा पा रही हैं। दूसरे, इन स्पर्धी आपूर्तिकर्ताओं ने कई प्रकार की नकारात्मक बाह्यताओं का सृजन केया है : डीजल के धुएं से अतिशय वायु प्रदूषण, अवजल एवं कचरे का सांझी संपदाओं में अंबार तथा भूगर्भ से पानी की अधारणीय स्तर पर निकासी से पैदा हो रही समस्याएं इसी का परिणाम है।

जमशेदपुर भी एक निजी टाउनशिप है और यह भारत में बसे श्रेष्ठ प्रशासित नगरों में से एक है। जमशेदपुर युटिलिटीज एवं सर्विसिज कंपनी लिमिटेड (JUSCO) टाटा स्टील की एक संपूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनी है। यही नगर वासियों को सभी सेवाएं सुविधाएं प्रदान करने के लिए उत्तरदायी है। यह माना जाता है कि जमशेदपुर में देश की बेहतरीन शहरी संरचना सुविधाएं है और JUSCO को एक आदर्श सेवा प्रदाता माना जाता है। ORG-MARG-Network, (एक विश्व स्तरीय मार्केट रिसर्च फर्म) ने जमशेदपुर को देश में दूसरे क्रम का श्रेष्ठ नगर माना है। यह क्रम उसे 2008 में अपने जीवन की गुणवत्ता के सूचक के आधार पर दिया गया था। वर्ष 2010 में शहरी विकास मंत्रालय ने देश के 441 नगरों/कस्बों में जमशेदपुर को सातवें क्रम पर रखा है।

गुरूग्राम और जमशेदपुर के अनुभवों से तीन सबक

(i) संपदा अधिकारी स्पर्धी नगरों की व्यवस्था में निजी विकास की पहलकदमी और ऊर्जस्वता का श्रेष्ठतम शहरी नियोजन की दूरदर्शिता के साथ सहज संयोजन हो सकता है। एक क्षेत्र में कुछ निजी स्वामित्व नगरों का विकास एक स्पर्धी नगर प्रतिमान की रचना कर सकता है, जहां उनके स्वामी निर्माण के साथ-साथ स्पर्धा, नव प्रवर्तन और प्रयोग भी करते हैं।

(ii) निजी क्षेत्र को उच्च लेनदेन की लागत सहन करनी पड़ती है, यदि शहर पर अनेक अधिकारी तंत्रों का शासन हो तो प्रत्येक अपने लिए अधिक से अधिक लगान-भाड़ा वसूलने में जुट जाता है। यदि पूरे नगर के लिए एक समन्वित विकास योजना नहीं बनी हुई हो तो फिर लेनदेन की लागते अधिक हो जाती हैं। एक बार शहर बसने के बाद उसमें ऊपरि संरचना के निर्माण की लागत बहुत अधिक हो जाती है। कई बार इतनी अधिक कि वह निर्माण हो ही नहीं पाता।

(iii) सभ्यनगर समाज की सक्रिय भूमिका संसाधनों के अतिशय विदोहन पर अंकुश लगाकर तीव्र शहरीकरण से जुड़ी नकारात्मक बाह्ययताओं के दुष्प्रभावों का निवारण कर सकती है। गुरूग्राम में ऐसे नागरिक समूहों, पर्यावरण समूहों और सांझा संपदा निगरानी समूहों के उदय का क्रम धीमा रहा है।

नोट: *यह बॉक्स राजगोपलन, एस. एवं तेबर्रोक (2014), ''ए लैसन्स फ्रॉम गुरगांव : इंडियाज प्राइवेट सिटी''। यह डी एंडरसन एवं भौरानी, एस संपादित पुस्तक सिटीज एंड प्राइवेट प्लैनिंग, येल्टनहम, यूके : एडवर्ड एल्गर में संकलित रचना पर आधारित है।*

VI. निष्कर्ष

14.24 आगामी दशकों में शहरीकरण का प्रसार नगरपालिकाओं के लिए एक बड़ी चुनौती बनने वाला है। किन्तु इन चुनौतियों पर काबू पाना संभव भी है और ऐसा करना भी चाहिए। हमारे वर्तमान अध्याय का विश्लेषण कुछ वरीयता बिन्दुओं की ओर संकेत कर रहा है।

14.25 सबसे पहला कार्य तो स्थानीय निकायों को वित्तीय रूप से संशक्तिकृत करना है।

- विश्लेषण दर्शाता है कि जो नगरपालिकाएं अधिक संसाधनों का सृजन करने में सफल रही हैं वही अधिक आधारभूत सेवाएं प्रदान कर पाई हैं। अत: राज्यों को चाहिए कि वह नगर प्रशासनों को हर संभव कर लगाने की शक्तियों दें।

- नगरपालिकाओं को अपने वर्तमान कर आधारों का भी बेहतर प्रयोग करना चाहिए। शहरी संपदाओं के छायांकन के लिए नवीनतम उपग्रह आधारित तकनीकों के प्रयोग की बहुत आवश्यकता है। सरकार को इसरो/राष्ट्रीय रिमोट सेंसिंग एजेंसी को इस बात के लिए सहमत करना चाहिए कि ये स्थानीय निकायों की उनके क्षेत्रों की सभी संपत्तियों के GIS मानचित्र बनाने में सहायता करेंगी। संपत्ति कर का संभावी सामर्थ्य बहुत विशाल है और उसका नगर स्तर पर अतिरिक्त राजस्व जुटाने के लिए प्रयोग होना ही चाहिए।

14.26 यह बार-बार कहना थकाने लगा है कि स्थानीय निकायों की शक्तियों का संवर्धन होना चाहिए, किन्तु उनसे उच्चतर स्तर, राज्य, के सत्ताधीशों को अपनी शक्तियां त्यागने को सहमत बनाना कोई सरल कार्य नहीं है। बड़ा प्रश्न यही है कि क्या इस राजनीतिक आर्थिक चुनौती का सामना करने का दायित्व वित्त आयोगों को उठाना चाहिए? (प्रो. राजा चेल्लिाह ने इस चुनौति को पहचान कर स्थानीय निकायों को अधिक संसाधन आवंटित करने का आग्रह किया था) दूसरा रास्ता यह हो सकता है कि राज्यों की 'संप्रभुता' का सम्मान किया जाए और यह सदाशा की जाए कि वे शहरीकरण की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं ही राजकोष एवं प्रशासन का विकेंद्रीककरण करने का सद्विवेक दर्शाएंगे।

14.27 और अन्त में जानकारी या आंकड़ों का होना तथा उनमें पारदर्शिता भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

- शहरी विकास मंत्रालय को स्थानीय निकायों और नगर क्षेत्रकों पर सर्वांगपूर्ण आंकड़े एकत्र कर उनके प्रकाशन को अधिक वरीयता देनी चाहिए। संभवत: इन निकायों को अनुदान उनके द्वारा नवीनतम और संपूर्ण जानकारी साझा करने तथा पारदर्शितापूर्ण व्यवहार रखने के साथ जोड़ा जाना भी उपयोगी हो सकता है।

- नीति आयोग को वार्षिक आधार पर नगरपालिकाओं के तुलनात्मक निष्पादन के सूचक तैयार करने चाहिए। ये सूचक वास्तविक जवाबदेही तथा मूल जनसेवाएं प्रदान करने की प्रशासकीय क्षमता पर आधारित होने चाहिए।

14.28 राज्यों के बीच स्पर्धा आज परिवर्तन और विकास की एक बड़ी संचालक शक्ति का रूप धारण कर रही है। यह परिवर्तन अब राज्यों और नगरों तथा नगरों के बीच स्पर्धा के पटल पर भी दिखाई देना चाहिए। वे नगर जिन्हें दायित्व सौंपे गए हों और उन्हें पूरा करने के संसाधनों के माध्यम से सशक्त बनाए गए हों तथा जिन पर उत्तर देने का अंकुश भी लगा हो निश्चित रूप से स्पर्धी संघवाद के प्रभावी वाहक बन सकते हैं। ये वास्तव में स्पर्धी अनुसंघवाद की क्षमताओं की शक्तियों को फलीभूत भी कर सकते हैं।

संदर्भ

1. Chauvin, J. P; Glaeser, Edward; *Ma,Yueran and Tobio, Kristina, 2016. Whatis different about urbanisation in richand poor countries? – Cities in Brazil, China, India and the United States.* NBER Working Paper No. 22002.

2. Colmer, Jonathan, 2016. *Urbanisation, Growth, and Development: Evidencefrom India. Available at:* http://urbanisation.econ.ox.ac.uk/materials/papers/24/urbanisationindia.pdf.

3. Jana Urban Space *Foundation and Janaagraha Centre for Centre for Citizenship and Democracy, 2015. Annual Survey of India's City-Systems2015*

(ASICS-2015). Available at http://janaagraha.org/reports/ASICS-2015.pdf.

4. Kapur, Devesh; *Somanathan, T. V.;Subramanian, Arvind, 2014. Land-Shakled-I, Business Standard, July 20,2014.*

5. Kapur, Devesh; Somanathan, *T. V.; Subramanian, Arvind, 2014. Land-Shakled-II,* Business Standard, July 21, 2014.

6. Report of the *Fourteenth Finance Commission, 2015. Available at:* http://finmin.nic.in/14fincomm/14fcreng.pdf

7. The High Powered *Expert Committee (HPEC) for Estimating the Investment Requirements for Urban InfrastructureServices, 2011. Report on Indian UrbanInfrastructure and Services.*

8. UNICEF and *World Health Organization, 2015 Progress onSanitation and Drinking Water, 2015Update and MDG Assessment.*

9. United Nations *Human Settlements Programme (UN-HABITAT), 2013. State of World Cities 2012/13.*

परिशिष्ट : निर्मित घनता का निष्कर्षण और संपत्ति कर मूल्यांकन की विधि

भाग 1 उपग्रह छायंकन से निर्मित घनता का निष्कर्षण

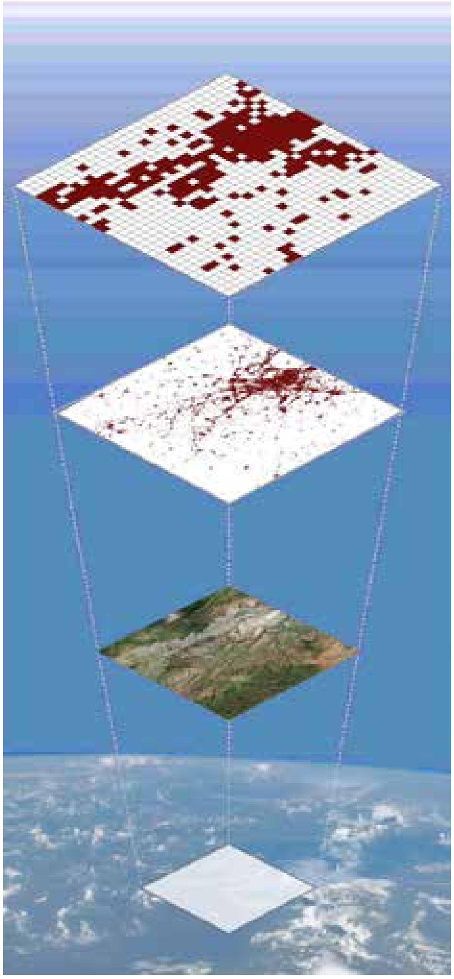

स्रोत: मानव ग्रह जीएचएसएल का एटलस

उपग्रह द्वारा दूर छायांकन शहरी निर्मित क्षेत्रों के प्रसार और संवृद्धि के आंकलन की एक सशक्त विधि है। इसके माध्यम से हम बहुत ही छोटे स्तर की जानकारी प्राप्त कर युक्तियुक्त नियोजन में सहायता पा सकते हैं, क्योंकि यह प्रत्येक निर्मित क्षेत्र की सटीक जानकारी प्रदान कर सकती है। यह छायांकन विधि सारी जानकारी को बिन्दुओं द्वारा अंकित करती है। उसे आगे परिष्कृत और प्रसंस्कृत करने के बाद स्थानिक भूगोल की विशेषताओं के साथ मिलाया जाता है। उपग्रह से प्राप्त आंकड़े प्रत्यावर्तित रश्मि तरंगों के रूप में होते हैं। निर्मित क्षेत्रों और अन्य भूआच्छादनों की वर्ण व्यंजन विशेषताओं का प्रयोग करते हुए इन रश्मि तरंगों को विशेष भूरचनाओं, जैसे कि हरित आच्छादन, बंजर भूक्षेत्रों, जलराशियों, सड़कों और भवनों का प्रतिनिधित्व करने का तार्किक प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

इस अध्ययन में 30m विभेदन वाले LANDSAT-8 की कार्यशील भू-छायांकित अपरिष्कृत छायाएं NASA से प्राप्त की गई हैं (जिस समय आकाश पर बादल बिल्कुल नहीं थे)। इसमें प्रत्येक छायाबिन्दु ने दृश्य, इन्फ्रारेड तथा उष्माधर्मिता की रश्मि तरंगे II बैंड में रिकार्ड की हैं (रेखाचित्र A)। परंपरा से ही निर्मित क्षेत्रों का चित्रांकन परिवर्तित सामान्यीकृत अन्तर (आधारित) जलसूचक (MNDWI) सामान्यीकृत अंतर आधारित निर्मित सूचक (NDBI) और मृदा समंजित वनस्पति सूचक (SAVI) जो OLI छायांकन से प्राप्त हुए हैं, के पुनः कूटित मानों के अंकगणितीय क्रियाकौशल से प्राप्त किया जाता है। किन्तु इनमें अन्य बैंड रश्मियों के 'शौर' या विकृतियों के प्रभाव भी मिल जाते हैं।

निर्मित घनता की पहचान में अभीष्ट सटीकता लाने के लिए विभिन्न रश्मितरंगों और घटकों के वितरणों के गैर गॉसीय स्वरूप का ध्यान रखते हुए हमारी कार्यविधि 'प्रमुख घटक विश्लेषण'' (Principal Component Analysis) को मशीन शिक्षण आधारित ढाल संवर्धी प्रतिमान की गणनाविधि और बहुचर वर्गीकारक प्रतीपगमन विधियों के संयोजन में प्रयोग कर रही है।

अपरिष्कृत रश्मितरंगों को पहले MNDWI, NDBI और SAVI सूचकों में वर्गीकृत किया जाता है। LANSAT TM/ETM+/OLI छायाओं के निकटवर्ती वर्ण व्यंजक पट्टियों से उच्च सहसंबंध होने के कारण इन (उच्च सहसंबंध पट्टियों) को स्वतंत्र उप-समुच्चय में परिवर्तित करने के लिए PCA विधि का प्रयोग किया जाता है। इस PCA के बाद मूल सहसंबंधित पट्टियों को विशिष्ट भूमी प्रयोजन प्रकार भेदों के अनुसार स्वतंत्र घटकों में परिवर्तित कर लिया जाता है।

चित्र क: उपग्रह से प्राप्त चित्र में बैंड परिवर्तन

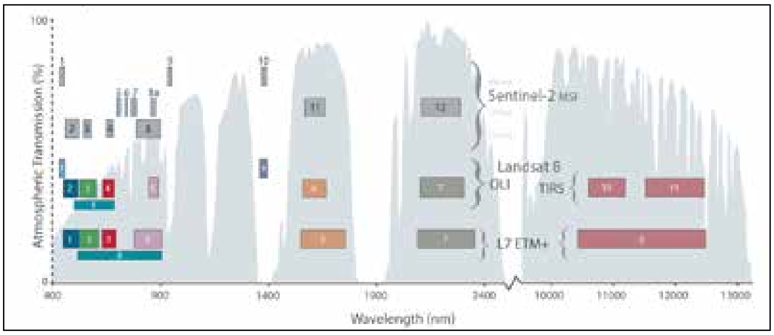

स्रोत: नासा

इसके बाद घटकों के छायाबिन्दु स्तरी अध्ययन से अभीष्ट भूरचना के निर्णायक

स्तर की पहचान की जाती है (बैंगलुरू और जयपुर)। हम जानते हैं कि विशेष भू-प्रयोजन वर्ग से जुड़ी रश्मितरंगे (और घटक) प्रत्येक उपभूक्षेत्र में अलग-अलग होती हैं अतः हम निर्णयवृक्ष, GBM (ग्रग रिजर्व के R पैकेज का प्रयोग कर) बहुचरीय वर्गीकरण में सक्षम एक विशेष रूप से पर्यवेक्षनीय गणना विधि की रचना करते हैं। जब निर्दिष्ट भूप्रयोजन बहुभुजों, वायु से छायांकन और कुछ एक निर्मित इकाइयों से तुलना की गई तो हमारा उपर्युक्त वर्गीकरण काफी सटीक प्रतीत हुआ है।

भाग II: निष्कर्षित निर्मित इकाईयों से संभावित संपत्ति कर का अनुमान

बैंगलुरू

(क) क्षेत्रों में वर्गीकरण : बृहत बैंगलुरू महानगरपालिका (BBMA) के कार्याधिकार क्षेत्र में 198 वार्ड हैं। इन वार्डों में विद्यमान संपत्तियों को 6 क्षेत्रों में वगीकृत किया गया है (A से F तक)। इस वर्गीकरण का आधार उन सड़कों/मार्गों को माना गया है, जिनपर वे संपत्तियां स्थित हैं। उन्हीं से 9 मार्च 2016 की BBMP की विज्ञप्ति के अनुसार संपत्ति कर के आंकलन के लिए निर्देशक मूल्यमान का निर्धारण होता है। ये वर्गीकरण संपत्तियों के क्षेत्र इकाई मूल्य (UAV)[3] को नियत कर देता है। उसी का प्रयोग संपत्ति कर देयता निर्धारण में होता है।

इन 6 क्षेत्रों में आने वाली संपत्तियों को निर्माण सामग्री, छत के स्वरूप, फर्श, स्वप्रयुक्त या किराए पर आदि के अनुसर ही क्षेत्र इकाई मूल्यमान प्रदान किए जाते हैं।

(ख) क्षेत्र इकाई मूल्यमान : एक क्षेत्र की सभी संपत्तियों के मिश्रित UAV का आंकलन करने के लिए इन मान्यताओं का सहारा लिया गया है :

(i) आवासीय संपत्तियों के वर्ग में :

- 100 प्रतिशत संपत्तियों को RCC या मद्रास छत भवन माना गया है
- 70 प्रतिशत संपत्तियों को स्वनिवासाधीन और 30 प्रतिशत[4] को किराए पर माना गया है।

(ii) गैर आवासीय संपत्तियां

- सभी 100 प्रतिशत को उच्चतम (V वर्ग) का UAV दिया गया है, क्योंकि इसके विभिन्न वर्गों में विशेष अंतर नहीं है।
- 75 प्रतिशत संपत्तियों में किराएदार काम कर रहे थे।
- 25 प्रतिशत संपत्तियों में मालिक स्वयं कार्य करते माने गए हैं।

(iii) उपर्यक्त(i) और (ii) का ध्यान रखते हुए भारित औसत के रूप में संयुक्त UAV का इस प्रकार आंकलन किया गया है :

	आवासीय								गैर-आवासीय						
Zone	A	B	C	D	E	F	Mix		Mix	A	B	C	D	E	F
UAV	6	4.8	4.3	3.8	3	2.4	30%	किराये पर	75%	25	18	13	10	7.5	3.8
UAV	3	2.4	2.2	1.9	1.5	1.2	70%	स्वयं के अधिकार में	25%	13	8.8	6.3	5	3.8	1.9
Weighted Average Hybrid Rate	3.9	3.1	2.8	2.5	2.0	1.6				21.9	15.3	10.9	8.8	6.6	3.3

---

3 यह UAV विधि पहले प्रचलित रही वार्षिक दर निर्धारण मूल्य का ही एक स्वरूप है। वह संपदा से संभावित किराए पर निर्भर था जबकि UAV उससे संभव प्रति प्राप्ति दर का उसकी स्थिति और प्रयोग के अनुसार आंकलन करता है। गणना की इकाई (प्रभार) प्रतिवर्ग फुट प्रतिमाह है, इसमें स्थिति, सड़क (AREA) और दर से गुणन (VALUE), तीनों शामिल हैं, इसीलिए इसे UAV कहा जाता है।

4 http://www.livemint.com/Opinion/a5jnMOHiQsHEk47Rr9mUWPI/Five-charts-on-the-state-of-Indias-housing-sector.html

(ग) संपत्ति कर आंकलन : BBMP की संपत्तिकर हैंडबुक के अनुसार इस कर का आंकलन इस प्रकार होता है :

आवासीय संपत्तियों के लिए[5]

निर्मित क्षेत्रफल x UAV x 10 मास = योग$_1$ (T_1)

T_1 – मान्य मूल्यह्रास = T_2 (करयोग्य वार्षिक मूल्य)

T_2 x 20% = T_3 (संपत्ति कर)

T_3 x 24 % = T_4 (अधिभार)

$T_3 + T_4 = T_5$ (सकल देय संपत्ति कर)

T_5 x 5% = T_6 (शीघ्र भुगतान पर छूट)

T_5-T_6= निवल देय संपत्ति करए

जो हैं : {[(Sqft * UAV*10 मास) – मूल्यह्रास] *20%}*1.248

गैर आवासीय संपत्तियों के लिए[6]

निर्मित क्षेत्रफल x UAV x 10 मास = T_1

T_1 – मान्य मूल्यह्रास = T_2

T_2 x 25 % = T_3 (संपत्ति कर)

T_3x 24% = T_4 (अधिभार)

T_3+T_4= कर योग्य

जो हैं : {[(Sqft * UAV*10 मास) – मूल्यह्रास] *25%} *1.31

संपत्ति कर आंकलन के लिए मूल्यह्रास का आधार भवन की आयु है।[7] बैंगलुरू की सभी संपत्तियों की औसत आयु 10 वर्ष मानी गई है और 10 प्रतिशत की दर का प्रयोग किया गया है।

(घ) संपत्ति कर आंकलन के लिए गुणक : उपर्युक्त जानकारी के आधार पर प्रत्येक क्षेत्र की आवासीय और गैर आवासीय संपत्तियों के लिए ये गुणांक आंकलित किए गए हैं :

आवासीय

A	B	C	D	E	F
8.7	6.9	6.2	5.5	4.4	3.5

गैर-आवासीय

A	B	C	D	E	F
61.0	42.7	30.5	24.4	18.3	9.3

[5] http://218.248.45.169/download/ptax/annexure_I.pdf

[6] http://218.248.45.169/download/ptax/annexure_II.pdf

[7] http://218.248.45.169/download/ptax/annexure_III.pdf

अन्य मुख्य अवधारणाएं

(**i**) माना गया है कि प्रत्येक सड़क पर संपत्तियों की संख्याएं समान हैं

(**ii**) बैंगलुरू महानगर क्षेत्र, 2015[8] ने भू–प्रयोजन का अनुपात आवासीय और गैर आवासीय वर्गों के बीच 80:20 निर्धारित किया है।

जयपुर

1. राजस्थान में सामान्यत: गृहकर के नाम से प्रचलित भूमी एवं भवन कर का इतिहास बहुत उतार–चढ़ाव भरा रहा है। राज्य सरकार ने 24.2.2007 की एक विज्ञप्ति द्वारा इस कर को समाप्त कर दिया था। इसकी समाप्ति से पूर्व 60 स्थानीय शहरी निकायों ने ये कर कभी लगाया और उगाहा भी नहीं था। गृहकर निर्मूलन से पूर्व राज्य में स्थिति संतोषजनक नहीं थी। प्राय: स्थानीय निकाय या तो इसे लगाते ही नहीं थे, या फिर इसकी उगाही बहुत अनमनेपन के साथ करते थे। परिणामस्वरूप निर्धारित कर का 40 प्रतिशत अंश भी उगाहा नहीं जाता था। किन्तु यह कर 6 महीने बाद ही 28.8.2007 से वापस आ चुका है। इसे शहरी विकास कर का नया नाम देकर 29.8.2007 से दोबारा लागू किया गया है, किन्तु इसकी संभावित राजस्व उपार्जन क्षमता घटा दी गई है।
   a. (http://www.sfc.rajasthan.gov.in/includes/study_report_24009013.pdf)
2. इस समय भी यह कर केवल 300 वर्ग गज से अधिक की आवासीय और 100 वर्गगज से अधिक के व्यावसायिक/संस्थागत भवनों पर लगता है।
3. वर्ष 2007 से 2015 के सात वर्षों में कर देने वाली संपत्तियों की संख्या में मात्र 2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। अब ये संख्या 2007 की 1,19,680 से बढ़कर 2015 में 1,21,498 हो गई है।
4. अभी तक जयपुर में नागरिकों को ऑनलाईन कर भुगतान पटल उपलब्ध नहीं है।
5. संपत्ति कर निर्धारण के लिए जयपुर में जनपदस्तरीय समिति (DLC) द्वारा नियत दरों का प्रयोग होता है। ये यहां उपलब्ध हैं :
   a. http://epanjiyan.nic.in/FindDlcRate.aspx
6. कर देयता का निर्धारण संपदा के वर्गगज में निर्दिष्ट क्षेत्रफल को क्स्ब की उस क्षेत्र के लिए प्रचलित दर से गुणा करके उस गुणनफल को 2000 से भाग दिया जाता है।
7. DLC की दरें कॉलोनी क्षेत्र आदि के अनुसार नियत है और ये इन पर आधारित हैं :
   (क) क्षेत्र की स्थिति : (i) आन्तरिक हैं या (ii) बाहरी
   (ख) संपत्ति का प्रकार : (i) आवासीय (ii) व्यापारिक (iii) कृषिक (iv) औद्योगिक
8. हमारी सभाव्य राजस्व क्षमता के आंकलन के लिए ये मान्यताएं की गई हैं :
   (i) संपत्ति की स्थिति के लिए प्रत्येक कॉलोनी की बाह्य और आन्तरिक दरों की औसत ली गई है।
   (ii) संपत्ति के प्रकार के लिए कृषिक और औद्योगिक का आंकलन नहीं किया गया है।
   (iii)आन्तरिक और बाह्य दरों की साधारण औसत को पर्याप्त माना गया है।
   (iv)ये देखा गया कि अनेक कॉलोनियों में ये साधारण औसत दरें ही बार–बार प्रयोग हो रहीं थी, इन्हीं दरों को, प्रतिदर अनुसार, कॉलोनियों की संख्या से गुणा कर लिया गया है।

उपर्युक्त गणना–आंकलन को आवासीय और व्यापारिक संपदाओं के अनुसार संकलित कर प्रत्येक क्षेत्र में कॉलोनियों की संख्या से विभाजित किया गया है। इस प्रकार आवासीय और व्यावसायिक संपत्तियों की क्षेत्रानुसार भारित औसत दर प्राप्त हुई है।

---

[8] https://www.scribd.com/document/4993129/Report-of-The-Advisory-Committee; https://www.scribd.com/document/4993118/Cabinet-Note